Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

[illegible]

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

৭/-

বৈদ্য হুল্লাস সংক্ষিপ্তং

[illegible]

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

महामहोपाध्याय श्रीविद्याग्रन्थमालायाः द्वितीयं पुष्पम्—

निर्णयसिन्धुः

[प्रथमद्वितीयतृतीयपरिच्छेदयुतः]

श्रीकमलाकरभट्टनिर्मितः

अस्मत्तातपादमहामहोपाध्यायश्रीविद्याधरगौडपुत्रेण
श्रीदौलतरामगौडेन वेदाचार्येण मीमांसाशास्त्रिणा
कर्मकाण्डशास्त्रिणा पौरोहित्यरत्नेन च विशिष्ट-
भूमिकाग्रन्थकर्तृपरिचयपरिशिष्टयादिना
च समलंकृतः संशोधितश्च

प्रकाशकः—

बाबू ठाकुरप्रसाद गुप्त बुकसेलर,

कचौड़ीगली, बनारस सिटी ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मुद्रक व प्रकाशक—
बाबू ठाकुरप्रसाद गुप्त,
बम्बई प्रेस, राजादरवाजा, बनारस सिटी ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

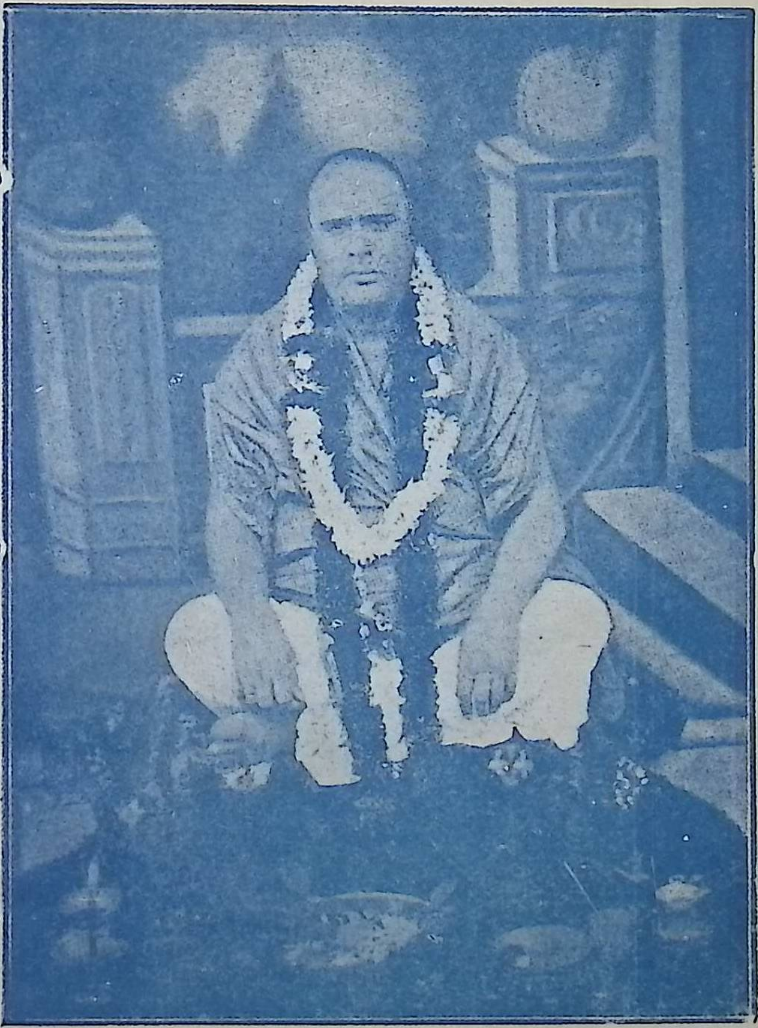

स्व० म० म० श्री विद्याधर गौड

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

१—बड़ा भाई विभक्त (अलग-सम्पत्तिका विभाग हो जाने पर) या अविभक्त (बटवारा न होने पर) गया श्राद्ध कर चुका हो फिर भी उससे छोटे भाई या उससे भी छोटे भाई को गयाश्राद्ध करने का अधिकार शास्त्र संमत है।

जो यह कहते हैं कि मध्यम पुत्रको गयाश्राद्ध का अधिकार नहीं है यह कहना उनका उचित नहीं है। इसकी व्यवस्था धर्मसिन्धुमें स्पष्ट है। इसी प्रकार घर में होने वाले तर्पण श्राद्धादि में समझना चाहिये।

२—जीवत्पितृकको किसीके श्राद्धकरनेका अधिकार नहीं है। माताके उद्देश्यसे भी जीवत्पितृक गया यात्रा नहीं कर सकता। यदि प्रसंगवश गया में गया हो तो मातृपार्वण कर सकता है।

३—हर एक मासमें, गुरु शुक्रके अस्तमें, अधिकमासमें और सिंहके बृहस्पतिमें गयाश्राद्ध करने का विधान मिल जाता है।

४—गयाश्राद्धको अपने ही ग्राम से करे यह नियम नहीं है विदेश से भी कर सकता है।

संपादक

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कुछ आवश्यक बातें—

[स्व० म० म० विद्याधर गौड]

१—शिव और सूर्य पूंजा मे शंख नहीं होता। दो लिंग, दो शालिग्राम, दो चक्र, दो सूर्य, तीन शक्ति, तीन गणेश तथा दो शंख इनकी पूजा नहीं होती है। शालिग्राम सम पूजे जाते हैं, उसमें भी दो नहीं। विसम भी नहीं पूजे जाते। उसमें भी एक की पूजा का विधान है। द्विजेतर स्पर्श रहित शालिग्राम पूजन कर सकते हैं। स्त्रियोंको भी शालिग्राम और शिवलिंग स्पर्श निषिद्ध है।

२—अविभक्त भी देवादि पूजा पृथक् पृथक् करें।

३—सूतक में भी शिवपूजन निषिद्ध नहीं है।

४—पञ्चायतनपूजा में-रवि, गणेश, चण्डी, ईश और विष्णु यह क्रम है। रखने का क्रम दूसरा है—शंभु मध्यमे, हरि, इन, गणेश, और देवी ये ईशानादि कोण से हैं। विष्णु मध्य में हों तो-शंकर, गणेश, सूर्य, और पार्वती यह क्रम है। रवि मध्य में हो तो-हर, गणेश, विष्णु और सूर्य। गणेश मध्यमे हों तो-सूर्य, रुद्र, विष्णु और अम्बिका।

५—शिवनिर्माल्य-पुराण प्रसिद्धलिंग का, वाणलिंग ज्योतिर्लिङ्ग, रसलिंग, रत्नलिंग, सिद्ध प्रतिष्ठित और स्वयंभूलिंग का लेना चाहिये। पञ्चायतनपूजा में तन्त्र से निवेदित भी खाना चाहिये। शालग्राम के सन्निधि में भी खाना चाहिये।

६—शनि, भौम, रवि, भोजनोत्तर, सन्ध्यादि के पूर्व, यात्रादिन, रात्रिको, दोनो सन्ध्यामें, नवमदिन, व्यतीपात, व्रतदित, जन्मदिन, श्राद्धदिन, रिक्ता, भद्रा, प्रतिपद पर्वदिन और देवकार्यदिन (सोमवार पुत्री को) नहीं करना चाहिये, रविवार ब्राह्मण को विहित है।

७—सर्षप तेल, सुगन्धयुत तेल, पुष्पमिश्रित तेल, द्रव्यान्तरयुत तेल, गोघृतयुत तेल और विप्रचरणरजोयुत तेल सर्वदा ग्राह्य है।

८—वाग्दानोत्तर कुलद्वय में मातृपितृमरण में एकवर्ष तक, अन्य मरण में कमसे कम एक मास तक, चारपीढ़ी तक प्रेत क्रिया के समाप्त होजाने पर विवाहादि न करे। आवश्यकता पर बिनायकशान्त्यादि कर करे।

९—विवाह, उपनपन, चौल और यज्ञादिमें, माता रजस्वला हो

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तो विवाह न करे । नान्दीश्राद्धानन्तर ऋतुमती हो तो गोदान तथा कूष्माण्डी हवन कर करे ।

१०—एक मातृज का कोई संस्कार एक साथ नहीं होता है । यमल जात का होता है । पुत्रके विवाहोत्तर छ मास तक पुत्री का विवाह नहीं होता । एवं उपनयन और मुण्डन भी नहीं होता । वर्षभेद से हो सकता है ।

११—एक घर में दो मंगल कार्य नहीं होते । आवश्यकता में मण्डप, द्वार और आचार्यादि भेद से हो सकते हैं ।

१२—विवाहान्तर चतुर्थीकर्म तक कोई श्राद्धतिथि न पड़नी चाहिये ।

१३—एकही वर को दो कन्या नहीं देनी चाहिये ।

१४—कन्या ऋतुमती होतो ऋतुसंख्य गोदान करे । कन्या को उपवास एवं किसी एक कन्या को वस्त्र आभूषणादि दान और कूष्माण्डी हवन विहित है ।

१५—विवाह होते समय कन्या ऋतुमती हो तो 'युञ्जान' इस मन्त्रसे हवन, स्नान, पञ्चगव्यपान विहित है ।

१६—नान्दीश्राद्ध न करने पर भी संभृत संभार होनेपर विवाहादि कार्य आशौच में भी होते हैं ।

१७—व्रत, यज्ञ और विवाहादि में नान्दीश्राद्धानन्तर आशौच नहीं होता ।

१८—विवाहिता का पुनरुद्वाह कालिवर्ज्य है । मातृ सपिण्ड विवाह भी कलिवर्ज्य है ।

१९—द्वितीय विवाह में वर स्वयं नान्दीश्राद्ध करे पिता नहीं ।

२०—विवाहादि में मण्डपोद्वासन तक श्राद्ध, अपसव्य, नित्यश्राद्ध, ब्रह्मयज्ञ, अध्ययन, नद्यतिरिक्त क्रमण और उपवास व्रत सपिण्ड न करें ।

२१—विवाह में स्पर्शास्पर्श दोष नहीं होता ।

२२—विवाहाद्यनन्तर तिलतर्पण, शवानुगमन, नूतन तीर्थगमन, मुण्डनादि एक वर्ष तक न करे ।

२३—मंगलकार्य में गोपी चन्दन धारण निषिद्ध है ।

२४—शूद्र कर्तृक कृत्यमें पौराणिक हो मन्त्र ब्राह्मण पढ़े । एवं स्त्री कर्तृक में भी । वेद मन्त्र नहीं ।

२५—ग्रहण में रजस्वला गंगादिमें उद्धृत जल से स्नान करे ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

२६—ग्रहणादिमें यज्ञोपवीत बदल लेना चाहिये।

२७—ग्रहणमें एक दिन और ग्रस्तास्त में तीन दिन अनध्याय होती है।

२८—अयनद्वय, विसुवद्वय (तुला, मेष,) संक्रान्ति में अपिण्ड पार्वण होता है।

२९—ग्रहण में पुत्र हो तो शान्ति करे।

३०—संक्रान्त्यां पक्षयोरन्ते द्वादश्यां श्राद्धवासरे। सायंसन्ध्या न कुर्वीत कुर्वश्च पितृहा भवेत्॥ यह बचन निर्मूल है।

३१—मलमास में काम्य कर्म नहीं होते। नित्य तथा नैमित्तिक होजाते हैं। सोमयागादि नही होते। दर्शश्राद्ध होता है।

३२—दर्शको वार्षिक और मासिक प्राप्त हो तो देवता भेदसे तन्त्रता नहीं होती। फिर भी प्रथम वैश्वदेव वार्षिकादि पश्चात् दर्श होता है।

३३—अमाश्राद्ध अनुपनीत भी कर सकता है।

३४—साग्निक पद से श्रौत और स्मार्ताग्नि। उच्छिन्नाग्निकादिसे निरग्निक।

३५—तीर्थ और ग्रहण में आमश्राद्ध या हेमश्राद्ध निर्णयसिन्धु-कार मानते हैं। अपरार्ककार पाकाभावमें तीर्थश्राद्धवत् आमश्राद्ध मानते हैं।

३६—ग्रहण निमित्तिकश्राद्ध से अमा और संक्रान्त्यादि श्राद्धकी सिद्धि होती है। ग्रहणदिन सपिण्ड और वार्षिकादि श्राद्ध प्राप्त हो तो अन्न या आमान्न से उसीदिन श्राद्ध करे। 'ग्रहणान्तु द्वितीयेऽह्नि' इत्यादि वाक्य निर्मूल हैं।

३७—मन्वादि युगादि में श्राद्ध हो तो, मलमास होने से दोनो महीने में हो, सो भी अपिण्ड होता है।

३८—वर्षारंभ शुक्रास्तादिवत् मलमास में भी होता है। रामनवमी मलमास में नहीं होती। एवं जन्माष्टमी आदि भी मलमास में नहीं होती। उपाकर्म उत्सर्ग, पवित्रारोपण, और दमनोत्सर्ग भी मलमास में नहीं होते। हव्य, कव्य, और पर्वोत्सव मलमास में नहीं होते शुक्रा-स्तादिमें होते हैं। वैसाख मलमास में हो तो काम्यकर्म मलमास में समाप्त न होने के कारण मासद्वय स्नान और नियमादि होते हैं। मासोपवास तथा चान्द्रायणादि तो मलमास में ही समाप्त होजाते हैं। वैसाख में मलमास हो तो उसीमें ही युगादि करे। दशहरा युगादि मल-मास में होते हैं। ज्येष्ठ में मलमास हो तो उसी में दशहरा करे, शुद्ध

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

में नहीं। प्रथम चातुर्मास्य व्रतारंभ, शुक्रास्त सूतकादि में नहीं होता। द्वितीयाद्यारंभ होता है। शुक्रास्त में उपाकर्म होता है। प्रथमारंभ नहीं होता। अधिकमासमें उपाकर्म नहीं होता। रक्षाबन्धन ग्रहण और संक्रान्ति में भी होता है।

३९—दुग्ध निषेध में पायसादिभी वर्ज्य है। दध्यादि नहीं। दध्यादि व्रत में तक्रादि निषिद्ध नहीं है। वस्तुतः सर्वविकार निषेध है यह निर्णयसिन्धुमत है।

४०—पूर्णिमा को पिण्डदान निषिद्ध है। परन्तु भाद्रपद पूर्णिमा को पिण्डदान होता है। पितृपितामह पार्वण होता है। अन्वष्टका में भी मातामह पार्वण होता है। वार्षिक मे मातामह पार्वण नहीं होता।

४१—ऋतुमती श्रौतकर्म में चतुर्थ दिन शेष दैव पित्र्यकर्म में पञ्चमदिन शुद्ध होती है।

४२—रात्रि को जनन मरण ऋतु हो तो प्रथम दो भाग में पूर्वदिन तृतीयभाग में उत्तर दिन लेना। अर्धरात्रि के या सूर्योदयके पूर्व प्रथम दिन लेना यह भी पक्ष है। यह देशाचार परक है। पञ्चगौड़ों में सूर्योदयके पूर्व ही चलता है।

४३—ज्वरादि में ऋतुमती हो तो अन्य स्त्री उसको दसवार स्पर्श करके दस बार स्नान करे। वस्त्र त्याग करे। इस से शुद्ध होती है। इसी प्रकार आतुरमात्र की शुद्धि होती है।

४४—पुंसवन और सीमन्त संस्कार प्रथम या प्रतिगर्भ में होता है।

४५—सीमन्त और चूडाकरण संस्कारजन्य भोजन में प्रायश्चित्त है।

४६—गर्भिणीपति को—मुण्डन, पिण्डदान, प्रेतकर्म, समुद्रस्नान नखकेशादिकर्तन, छ मास बाद वास्तु, उपनयन, शवानुगमन, अतिदूर गमन, विवाह, पर्वतरोहण, नौकारोहण और यात्रादि निषिद्ध हैं।

४७—जातकर्म सूतकानन्तर भी होता है।

४८—नान्दीश्राद्ध पुत्र या कन्या दोनो की उत्पत्ति में होता है यह कमलाकर मत है। यह श्राद्ध रात्रि को भी आमान्न या सुवर्ण से होता है, पकान्न से नहीं। यह श्राद्ध जन्म-मरणाशौचमें भी होता है। कोई आशौचान्न में भी मानते हैं।

४९—सूतक में सन्ध्यादि कर्म होते हैं।

५०—षष्ठी पूजा में आशौचादि नहीं होता।

५१—कनिष्ठा में प्रथम जात ज्येष्ठ हो, ज्येष्ठा में पश्चाज्जात कनिष्ठ

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

हो तो ज्येष्ठ श्राद्धाधिकारी होता है। यमल जात में प्रथमोत्पन्न ज्येष्ठ होता है।

५२—जिसका कर्णवेध न हुआ हो वह श्राद्धाधिकारी नहीं होता।

५३—वर्षवृद्धिमें—क्षौर, मैथुन, मार्गगमन, कलह, और उष्णोदक स्नान नहीं करना चाहिये।

५४—जन्म तिथि औदयिकी लेवे।

५५—जनन तथा मरणाशौचमें, जन्मतिथि, संक्रान्ति, श्राद्ध, अस्पृश्यस्पर्श में उष्णोदक से स्नान नहीं करना चाहिये। गर्भिणीमाता हो तो पञ्चमास के बाद ज्वर में माता ऋतुमती हो तो विवाह के बाद छ महीने तक एक मातृज का चूडाकर्म नहीं होता। आवश्यकता से शान्ति से होता है

५६—प्रायः मुण्डन में सशिख का विधान नहीं है। शूद्र को शिखा रखने का मुण्डन में विकल्प है।

५७—षण्ढ, बधिर, विकलांग और मूकादियों का भी संस्कार होता है। उसमें सब कार्य आचार्य कर्तृक है। एवं विवाहादि में भी वही व्यवस्था जानना चाहिये।

५८—अनुपनीत भाई को कन्यादानका अधिकार नहीं है। माता ही करे।

५९—महालय में कई पक्ष हैं। चतुर्दशीश्राद्धनिषेध सकृत्महालय में है, षोडशादिपक्ष में नहीं।

६०—संन्यासी का द्वादशी को श्राद्ध होता है।

६१—महालय, सपिण्ड, वार्षिकादि आमान्न से नहीं होते हैं।

६२—विधवा को चार पार्वण का विधान है।

६३—सपत्नी माता का महालय में एकोद्दिष्ट विधान है।

६४—जीवितपितृक भी संन्यासी का महालय में पिण्डरहित श्राद्ध करे।

६५—अन्वष्टका और मातृश्राद्ध में जीवितपितृक भी सपिण्ड करे।

६६—श्राद्धांग तर्पण महालय में सतिल करे। वह भी पर दिन में। पक्ष भर श्राद्ध करे तो उसी दिन ही। मातृ-पितृ निमित्त तर्पण प्रथमाब्द में नहीं होता।

६७—महालय मलमासमें नहीं होता। पितृमातृमरण कार्य प्रथमाब्द में नहीं होता।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

६८—अन्वष्टका में पितृ, मातृ और मातामह पार्वण करे जीवत्पितृक को भी मातृमातामह पार्वण विहित है। यह अनुपनीत भी कर सकता है। जीवत्पितृक भी सपिण्ड करे। गर्भिणीपति भी इसको सपिण्ड करे। इस में सुवासिनी भोजन भी है।

६९—ससन्तान मघायुक्त त्रयोदशी को पिण्डरहित श्राद्ध करे। यह मलमास में भी विहित है। त्रयोदशी श्राद्धनिषेधक वचन पुत्र विषयक है।

७०—चतुर्दशीको शस्त्रादिहत का एकोदिष्ट विहित है, पार्वण नहीं। दिनान्तर में पार्वण ही करना चाहिये। इसी चतुर्दशी को शस्त्रादिहत का दो श्राद्ध नहीं है, किन्तु वार्षिक ही। यह एकोदिष्ट दैवयुक्त होता है।

७१—अश्विन शुक्ल प्रतिपद को मातुल के रहने पर भी जीवत्पितृक को अनुपनीत को भी एक मातामह पार्वण करना चाहिये। यह मलमास में नहीं होता। पिण्डरहित करे यह निर्णयसिन्धु मत है।

७२—महालयमें तिथिह्रास में आवृत्या दो श्राद्ध और वृद्धिमें भी दो श्राद्ध करे। एवं नवरात्रमें भी तिथिह्रास और वृद्धिमें पाठावृत्ति का विधान है।

७३—महालय शुक्रास्तादिमें भी होता है। एवं नवरात्र भी। मलमास में नहीं होता।

७४—आशौच में नवरात्र पूजा दान पूजा सहित होती है। और भी आरब्धव्रत, दानार्चनरहित आशौचमें होते है। मध्यमें आशौच आने पर दोष नहीं होता। आरम्भ स्वयं करे। अनारम्भ परद्वारा करावे। रजस्वला अन्यद्वारा ही करावे। पारणादिन में आशौच प्राप्त हो जाय तो उसी सूतकमध्यमें पारणा करे। त्रिरात्र ज्वरात्रादि व्रतमें भी मध्यमें पारणा। रजोदोषमें भी मध्यमें पारणा। विधवाको त्रिरात्र के वाद पारणा करना यह किसीका मत है। एकादश्यतिरिक्त सकल एकाहोपवासमें आशौन्तमें पारणा विहित है।

७५—कार्तिकादि स्नान सन्ध्योत्तर करे।

७६—नरकचतुर्दशी को यम और भीष्मतर्पण सव्यसे, मघाष्टमी को तर्पण अपसव्यसे। सव्य या अपसव्यमें जीवत्पितृक को भी करना चाहिये।

७७—अष्टका मलमासमें नहीं होता।

७८—माघस्नान मलमास हो तो दोनों महिने में।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

७९—मासोपवास चान्द्रायण की समाप्ति मलमासमें नहीं होती।

८०—माघमें मलमास हो तो मासद्वयमें मन्वादि श्राद्ध करे।

८१– होली मलमास में नहीं होती।

८२—युगादि, मन्वादि, विषुवत् अयन, भरणी, पुत्रोत्पत्ति, व्यतीपात, ग्रहण, वृध्यनन्तर, विवाहमें एक वर्ष तक, उपनयन हो तो ६ मास तक, चूडाकरणमें तीन मास तक, अन्यसंस्कार में एक मासतक, भौम, भानु, को त्रयोदशी, नन्दा, मघा, वैधृति, गण्ड, और संक्रान्तिमें पिण्डरहित श्राद्ध होता है।

८३—वृध्यनन्तर तिलतर्पण भी निषिद्ध है।

८४—साग्निक को श्राद्धादिमें और निरग्निकको अन्तमें वैश्वदेव विहित है। परन्तु साग्निकको एकादशाहमें–अन्तमें वैश्वदेव विहित है। कातीयों को श्राद्धपाक से ही आदि में वैश्वदेव है। अन्तमें सपात्रिकमें पाकैक्य में विकल्प है।

८५—नित्यश्राद्धमें आवाहन, पिण्ड, अग्नौकर और विश्वेदेवा आदि नहीं हैं। नित्यश्राद्ध दिनमें न हुआ हो तो रात्रिमें भी प्रथम प्रहर तक हो सकता है। षड्दैवत पर्वणादि प्रसंगसिद्धि से नित्य श्राद्ध नहीं होता है। षडदैवत से इतरमें तो पृथक् होता है।

८६—एकादशी को भी श्राद्ध होता है और भोजन भी। निषेध यहाँ नहीं लगता है। शिवरात्रि तथा जन्माष्टमी आदि में अवघ्राण होता है।

८७—श्राद्ध कर्ता को दिनमें ही भोजन विहित है रात्रिमें नहीं।

८८—श्राद्ध शिष्टान्न भिन्न गोत्री भी न खायें। श्राद्धशिष्टान्नको घरमें शूद्र को नहीं खिला देना चाहिये।

८९—श्राद्धकर्ता को ताम्बूल निषिद्ध है।

९०—अशक्तिमें आमश्राद्ध, तदशक्तिमें हिरण्य श्राद्ध, तद शक्तिमें संकल्पश्राद्ध, तद शक्तिमें–तिलदर्भैः पितृत्वधि तर्पयेत् स्नानपूर्वकम्।

९१—भोजनके समय एक ब्राह्मण अन्य ब्राह्मणका स्पर्श न करे।

९२—भोजन निःशेष नहीं करना चाहिये।

९३—साग्निक अग्निसमीप में, अनग्निक द्विज समीप में व्याममात्र या अरत्निमात्र भूमि छोड़कर पिण्डदान करे।

९४—पिण्ड में माष नहीं देना चाहिये। परन्तु निर्णयसिन्धुकार इसे निर्मूल मानते हैं।

९५—विकर कपित्थ प्रमाण से पिण्ड के समीप ६ अङ्गुल का देवे।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

एकोद्दिष्ट और सपिण्ड में कपित्थप्रमाण, प्रत्यब्द और मासिक में नारिकेलप्रमाण, तीर्थ तथा दर्श में बृहदामलक प्रमाण एवं महालय, गया श्राद्ध में भी जहाँ अधिक पिण्ड हों वहाँ बिल्व प्रमाण। जहां एक हो तो खजूर प्रमाण देवे। प्रेतपिण्ड बारह अङ्गुल दीर्घ होता है।

९६—पिण्डनिर्माण पत्नी करे।

९७—पृथक् पिण्डदान जहां विहित है वहां पितृमातामह के पश्चिम मात्रादि मातामाह्यादि को अर्घ देना।

९८—दर्भ हस्त लेप लगावे नहीं तो हस्तमात्र ही। एकोद्दिष्ट और वर्षा में दर्भ लेप नहीं होता। सपिण्डनादि में होता है।

९९—मन्त्रैः पिण्डेषु पानीयं निषिञ्चेत्पितृतीर्थतः।
प्रतिपिण्ड में तीन तीन सूत्र अलग २ चढ़ावे। दक्षिणां सर्वभोगांश्च प्रतिपिण्डं प्रदापयेत्। गन्धपुष्पाणि धूपं च दीपं विनिवेदयेत्। एतदपसव्येन अक्षय्य सर्वत्र सव्य से होता है यह निर्णयसिन्धु मत है। कर्क मत से पित्र्यमें अपसव्य से।

१००—पात्राणि चालयेच्छ्राद्धे स्वयं शिष्योथवा सुतः।
न स्त्रीभिर्न च बालेन नासजात्या कथञ्चन॥

१०१—हिरण्यं देवतानां च पितॄणां रजतं तथा।
पित्र्युद्देशेन दक्षिणादानेपसव्यं विप्रोद्देशेन सव्यम्।

१०२—वाजे वाजे इति जपन् कुशाग्रेण विसर्जयेत्। पितॄँन् विसर्जयेत्। आमावाजेति मन्त्रं तु पठित्वा च प्रदक्षिणम्। द्वारोपान्ते ततः कृत्वा संयतः प्रविशेद् गृहम्। ब्राह्मणानथ निर्यातान् परीत्य त्रिः प्रदक्षिणम्। कनिष्ठप्रथमा-ज्येष्ठपरमाः स्युः प्रदक्षिणे। अद्य मे सफलं जन्म इत्यादि।

१०३—तीर्थश्राद्ध में तीर्थ में पिण्ड प्रक्षेप करे। अन्यत्र गो ब्राह्मणादि जल में।

१०४—अविभक्त भाइयोंको द्रव्य साध्य कर्म पृथक् पृथक् निषिद्ध, है, द्रव्यसाध्य मन्त्रजप, उपवास, सन्ध्या, ब्रह्मयज्ञ, परायण, तर्पण, सुरार्चा और अग्निहोत्रादिमें अलग अलग अधिकार है। श्राद्धमें अनुमतिके विना भी ज्येष्ठ को ही अधिकार है। पृथक् पाक हो तो अविभक्तों को भी वैश्वदेव पृथक् पृथक् विहित है। दर्श, ग्रहण श्राद्ध, वार्षिकादि, पार्वणश्राद्धादि विभक्त को अलग अलग विहित है। तीर्थकी युगत्प्राप्ति हो तो अविभक्त में एकको ही अधिकार है। और अविभक्तों

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

को अलग अलग अधिकार है। गया में भी यही व्यवस्था है। संवत्सरमें पूर्व मासिक, सपिण्डीकरणान्त विभक्तमें भी ज्येष्ठ ही करे।

१०५—तीर्थयात्रा के आरम्भसें मुण्डन और उपवास। गयायात्रा के आरम्भ में ही निषेध गयाधिकरणक ही है, यात्रांग नहीं, या मध्य में तीर्थ प्राप्तिमें करे।

१०६—यात्राङ्ग श्राद्ध पार्वण या वृद्धि श्राद्ध होता है।

१०७—यात्रा मध्यमें आशौच या ऋतु होने पर शुद्धिपर्यन्त वहाँ रहे तदन्तमें चले।

१०८—मार्गमें नदी प्राप्तिमें पर पार स्नानादि करे, पर सरस्वती के पूर्वपार ही स्नानादि करे।

१०९—सधवा भी प्रयागमें दो अंगुल केश छेदन कर सकती है।

११०—संन्यासी को ऋतुसन्धिके अतिरिक्त कहीं भी वपन नहीं है।

१११—प्रयाग में जीवत्पितृक को भी क्षौर विहित है। अन्यतीर्थ में भी आद्य यात्रा पर है।

११२—तीर्थमें तर्पण और श्राद्ध का विधान है। आशौच में भी है, या आशौचान्तमें करे। तीर्थ प्राप्ति बुद्धि पूर्वक आशौंच में नहीं है।

११३—मलमास में भी तीर्थ श्राद्ध होता है।

११४—तीर्थमें मामादिकों को षड दैवत में भी पृथक् पिण्डदान है।

११५—तीर्थश्राद्ध अनुपनीत भी करे। जीवत्पितृक भी करे।

११६—पुत्रजन्म, उपनयन, विवाह, देवव्रत, आधान, यज्ञ, पुंसवन, नवान्न, प्रथमरजोदर्शन, समावर्तन, वाप्यादिदेवादिप्रतिष्ठा, राज्याभिषेक, अन्नप्राशन, वानप्रस्थाश्रमान्तरगमन, वृषोत्सर्ग, नामकर्म, चूडा, सीमन्त, निष्क्रमण, श्रौतकर्म, श्रावणी, सप्तसंस्था, गृहप्रवेश, पुत्रमुखाद्यदर्शन, गर्भाधान और तीर्थयात्रा में पूर्वाह्न में नान्दीश्राद्ध होता है तथा आधान में अपराह्न में विहित है। जातकर्मनिमित्त में कातियों को वृद्धिश्राद्ध नहीं है पर पुत्र निमित्तक होता है।

११७—अधानादि स्थालीपाकान्त और विवाहादि चतुर्थीकर्मान्त में एक ही नान्दीश्राद्ध होता है।

११८—श्राद्धदिन में नित्यतर्पण तिलवर्ज्य करे। नित्यतर्पण से श्राद्धांग तर्पण अलग है।

११९—वृद्धिश्राद्ध में, सपिण्डन में, प्रेतश्राद्ध में और अनुमासिक में श्राद्धांग तर्पण नहीं है:

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

१२०—अनेक श्राद्ध की प्राप्ति एक दिन में हो तो सति सामर्थ्य में भिन्न भिन्न पाक से श्राद्ध करे। अन्यथा एक पाक से श्राद्ध होते हैं।

१२१—अनेक श्राद्ध संपात में भी माता और पिता का श्राद्ध प्रथम होता है। इतर का मृत्युक्रम से (यद्येकत्र याताम्) यह वचन एतत्परक है।

१२२—सपिण्डन, आद्य और क्षयाह में केवल पितृपार्वण होता है अन्यत्र तो मातामहपार्वण भी विहित है। क्षयाह में केवल स्त्री का श्राद्ध विहित है। अन्वष्टका, गयादि और क्षयाह में माता का श्राद्ध पृथक् हो सकता है। दर्शादि और महालयादि में पति के साथ अर्थात् सपत्नीकको ही देवतात्व है। मातृ पितामही आदि शब्द स्वजननी पितृ जननी में ही मुख्य है। अतः सापत्न माताओं को नहीं दिया जाता है। कारुण्येन महालादि में दे सकते हैं।

१२३—इष्टि श्राद्ध में, क्रतूदक्ष, नान्दीमुखमे सत्यवसू, नैमित्तिकमें कामकाल, काम्यमें धूरिलोचन और पार्वण में पुरुरवाद्रव विश्वेदेवा है।

१२४—नित्यश्राद्ध, एकोद्दिष्ट और मातृश्राद्ध में विश्वेदेवा नहीं है। नान्दीश्राद्ध में भिन्नप्रयोगपक्षमें मातृश्राद्ध भी विश्वेदेव रहित हो सकता है।

१२५—समानप्रवर, सगानगोत्र, सम्बन्धी, मित्र, मातुलादि, शिष्य शत्रु, दो सहोदर भाई, पिता पुत्र, गर्भिणी पति, स्त्री, रोगी, हीनाधिकांग ज्यौतिषी, वैद्य, भृत्य, देवलक, (पुजारी) खल्वाट, पुत्रहीन, सर्ववि-क्रयी, मागध द्राविडादि, अविद्धकर्ण, कृष्णवर्ण शंखचक्रधारी ब्राह्मण श्राद्धवर्ज्य हैं।

१२६—मातृश्राद्ध में स्त्री भी भोज्य है।

१२७—सकृदभ्यर्चितं लिङ्गं शालग्रामशिलां च यः। पीठे संस्थाप-यित्वा तु श्राद्धं च कुरुते नरः॥ पितरस्तस्य तिष्ठन्ति कल्पकोटिशतैरपि।

१२८—गात्र में रुधिरस्राव होने पर दो या तीन दिन श्राद्ध न करे, यह वचन निर्मूल है।

१२९—श्राद्धेह्नि भोजयेद्वास्तौ न बालानपि यत्नतः। प्राक्पिण्ड-दानाद् गन्धाद्यैर्नालं कुर्याच्च विग्रहम्॥

१३०—ब्रह्मयज्ञ, तर्पण, पिण्डाश्रित, मार्गश्रित और यज्ञभूमि स्तरण आसनकी कुशा त्याज्य है।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

१३१—श्राद्ध में मधु भी कलिवर्ज्य होने के कारण अग्राह्य है, परन्तु कलिवर्ज्य प्रकरण में इसका उल्लेख न होने से देशाचार ही व्यवस्था समझना चाहिये।

१३२—गृह्यानिशिशुदेवानां ब्रह्मचारितपस्विनाम् । तावन्न दीयते किञ्चिद्यावत्पिण्डान्न निर्पवेत् ॥

१३३—विवाहे प्रेतकार्ये च मातापित्रोः क्षये हनि । नव भाण्डानि कुर्वीत यज्ञकाले विशेषतः ॥

१३४—आरभेत नवैः पात्रैरन्नारम्भं च बान्धवैः । निष्पन्नेषु च पाकेषु पुनः स्नानं समाचरेत् ॥

१३५ –न कदाचित्पचेदन्नमयः स्थालीषु पैतृकम् ।

१३६—लोहपात्र में श्राद्धपाक निषिद्ध है। ताम्रमृन्मयस्वर्णादि में विहित है।

१३७—श्राद्धपाक और अग्नौकरण साग्निक को गृह्याग्निमें विहित है। इतर को लौलिकाग्नि में अग्नौकरण इतर को जलादि में।

१३८—दग्ध, स्यूत, काषाय, अनुत्तरीय, मलिन, कौपीनमात्र, द्विकच्छ, अकच्छ, आर्द्र, द्विगुण और रक्तवस्त्र पहिन कर श्राद्धादि न करे।

१३९—एकोद्दिष्ट का आरंभ कुतप में, पार्वण का कुतप से पांच मुहूर्त तक मध्याह्न में श्रद्धारंभ प्रशस्त है।

१४०—गोत्र में काश्यपस ऐसा सकारान्त भी कह सकते हैं। यह जिस शाखा में विधान हो वहां कहे।

१४१—अनुपनीत स्त्री शूद्रादि को उत्तरीय से सव्यापसव्य का विधान है।

१४२—श्राद्धारंभ में, अवसान में, विप्रचरणक्षालन में पूजनान्त में, विकिर में, पिण्डदानानन्तर आचमन का विधान है।

१४३—विष्णुके निवेदित अन्न से श्राद्ध होता है यह कहना निर्मूल है। स्मार्त—अनिवेदित से और वैष्णव निवेदित से करते हैं।

१४४—पादशौच, उच्छिष्ट, पिण्डोत्थान, दक्षिणा और नमस्कार में कुशत्याग का विधान है।

१४५—विश्वेदेव कुश पूर्वाग्र और पित्र्य कुश दक्षिणाग्र रक्खे।

१४६—सपात्रिकमें पादप्रक्षालन बैठाकर ब्राह्मणों का करे खड़े करके नहीं करे।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

१४७—पादप्रक्षालन प्रत्यङ्मुख हो खड़े होकर करे। पादप्रक्षालन के समय पत्नी दक्षिण रहे।

१४८—पित्र्यकर्म में पैर ऊपर से ही धोवे। अर्थात् नीचे के तल्ले में नहीं।

१४९—लोहशंकु विद्ध आसन वर्ज्य है और पलापत्र भी आसन में वर्ज्य है।

१५०—वृद्धिमें वाम में, इतर श्राद्धमें दक्षिण नीविबन्धन होता है।

१५१—प्रोक्षयेदन्नजातं तु शूद्रदृष्ट्यादि शुद्धये।

१५२—आसन के ऊपर चटरूप आसन पित्र्यमें वाम दैवमें दक्षिण तरफ देवे। अर्थात हाथमें न दे।

१५३—अर्घ्यपात्र कांस्यका निषिद्ध है।

१५४—अग्नौकरणहोम—कातीयानां त्वपसव्येनैव पिण्डपितृयज्ञवद् हुत्वा इत्यतिदेशात्। छन्दोगाणां जुहुयु: सव्येनापसव्येन याजुषाः।

१५५—भोज्यपात्रे तिलान् दृष्ट्वा निराशाः पितरो गताः।

१५६—उत्तानं दक्षिणं सव्यं नीचं पात्राण्युपस्पृशेत्।

१५७—परिवेषणं दैवेऽपि सव्यैनैव।

१५८—ब्राह्मणों को भोजनके समय भूमिमें बलिदान नहीं करना चाहिये।

१६९—संक्रान्ति, युगादि, महालय, क्षयाह, वृद्धि, ग्रहण, गजच्छाया, नववापी, कूप्यादि, आर्द्रा वर्षारंभ, नवगृह, नवान्न व्रीहियव, पुत्रजन्म, गया, अयनद्वय, मन्वादि, शंख, पद्म, विषुवत्, व्यतीपात, श्राद्ध के प्रतिरुचि, हर एक कृष्णपक्ष उसमें भी प्रत्यह या पञ्चमी या किसी एक दिन अशक्तिमें निरग्निकको किसी एक दिन साग्निक को अमा न हो सके तो कन्या वृष कुंभ का कृष्णपक्ष महालय कृष्णपक्ष विशेषत:—गृहमें श्रोत्रियके आनेपर यह अपिण्ड और जीवत्पितृक को भी, तीर्थ, पित्र्येष्टि, सोमयाग, अग्न्याधान, इष्ट, पूर्त, महारुद्रादि, महादानादि, आषाढ़ी, भाद्री, माघी, कार्तिकी, श्रावणी, बैसाखी, पूर्णिमा, प्रथमोपाकर्म, मघात्रयोदशी, सप्तविंशतिनक्षत्रयोग, करण, वैधृति, दुस्वप्नदर्शन, जन्मनक्षत्र, ग्रहपीड़ा, उद्यापन, महाशान्त्यादि में श्राद्ध होताहै। संस्कारों में भी वृषोत्सर्ग, ऋतु छ।

१६०—औरस पुत्र, पौत्र, तत्पुत्र, दत्तक, पुत्रिका पुत्र, पत्नी, भ्राता, भ्रातृज, पिता, माता, स्नुसा, भगिनी, भागिनेय, सपिण्ड सोदक, ये क्रम से श्राद्धाधिकारी हैं। उपनीत पौत्र के रहते हुए भी अनुपनीत

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पुत्रही अधिकारी है। अनुपनीत पुत्र को त्र्याह, पार्वण, दर्श, महालय, गया और प्रेतक्रिया में समन्त्रक श्राद्धका अधिकार है, वह कृतचूड हो या अकृतचूड हो। पत्नी को भी समन्त्रक पतिके और्ध्वदेहिक में अधिकार है। अशक्तिमें समन्त्रक अग्निदान करे, इतरक्रिया अन्यद्वारा करावे। दत्तकादि उपनीत ही अधिकारी हैं। सपत्नी पुत्र के रहते हुए पतिको स्त्री का श्राद्धाधिकार नहीं है। पुत्राभाव में पत्नी, पत्न्यभावमें कन्या, तदभावमें सपत्नीपुत्र यह निर्णयसिन्धुकार को अभिमत नहीं है। केवल मैथिल और वंगाली मानते हैं। पत्न्यभावमें अविभक्तका सोदर विभक्तकी कन्या। पत्नी और दौहित्रमें पत्नी अधिकारिणी। दौहित्र और भ्रातृपुत्र विभक्त हो तो दौहित्र अविभक्त हों तो भ्रातृपुत्र। भ्रातृ और भ्रातृपुत्रमें कनिष्ठ भाई हो तो वही अधिकारी है यह दाक्षिणात्य-मत है। पञ्चगौडमत में ज्येष्ठभ्राता ही अधिकारी है। कनिष्ठ हो तो ज्येष्ठ न करे। वहिन और वहिन पुत्रमें वहिनको ही अधिकार है। श्वसुर का जामाता। दत्त अदत्त कन्या का पिता। मातामह का दौहित्र। जामाता का श्वसुर। पुत्रका पिता माता न करें। कनिष्ठका ज्येष्ठ भ्राता नहीं करे तो सपिण्डन के विना करे। गयामें सबका सब करें। अनधिकारीकृत और्ध्वदेहिक की पुनरावृत्ति अधिकारी करे। अनावृत्तिविधायक वचन निर्मूल हैं। विभक्त होने पर भी सपिण्डीकरणान्तकृत्य ज्येष्ठको ही अधिकार है। जनक के पुत्र और पत्न्यादि न हों तो दत्तक दे। अन्यथा पालक को ही दे। श्राद्ध में पालक का गोत्र और विवाहादि में दोनों का गोत्र ग्रहण करे।

१६१—कलिमें औरस और दत्रक दो ही पुत्र हैं।

१६२—म्लेच्छादि श्राद्ध न करें तो द्रव्यदान सजातीय भोजन करावें।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

(ग्रहणविचारः)

यत्र देशे दिने सञ्जातं चन्द्रग्रहणं सूर्यास्तात् द्विपलेभ्यः पूर्वमेव समाप्तं भवति तत्र ग्रहणपुण्यकालस्तत्प्रयुक्तं स्नानादिकं कर्तव्यं नवेति विचारे निर्णयसिन्धुधर्मसिन्धुप्रभृतिषु निबन्धेषु पर्यालोच्यमानेषु अयमेव निर्णयः सञ्जायते यत् मेघाद्यनाच्छादने सति सूर्यग्रहणस्य चन्द्रग्रहणस्य वा यस्य दर्शनयोग्यता (किञ्चित्कालावस्थापिता च) तस्यै व पुण्यप्रयोजकता तत्रैव च स्नानदानाद्यनुष्ठानं नान्यत्र। एवञ्च सूर्यास्ताव्यवहितपूर्वक्षणस्यापि दिवात्वाविशेषात् सूर्यास्ततः—अत्यल्पकालात्पूर्वमपि समाप्तस्य ग्रहणस्य दिवाग्रहणत्वस्याङ्गीकर्तव्यत्वात् (सूर्यग्रहो यदा रात्रौ दिवा चन्द्रग्रहस्तथा। तत्र स्नानं न कुर्वीत दद्याद्दानं न च क्वचित्) इति शास्त्रविषयत्वावगतेः सूर्यास्तपूर्वक्षणे समाप्तस्य ग्रहणस्य पुण्यजनकत्वं स्नानादिप्रयोजकत्वं वा नास्त्येवेति।

(प्रेतशय्याग्रहणादिविचारः)

प्रेतसम्बद्धधनादिग्राहिणो ग्रहणसम्बद्धतुलादिप्रतिग्रहश्चेति द्वयोर्मध्ये—प्रेतशय्यां प्रगृह्णानो न भूयः पुरुषो भवेत्। प्रेतोपभुक्तं यो भुङ्क्ते न तेन सह संवसेत्–इत्यादिवचनेन प्रेतप्रतिग्राहिणो ग्रहणसम्बन्धतुलादिप्रतिग्रहीत्रापेक्षया किञ्चिन्निकृष्टत्वेऽपि 'प्रतिग्रहो दातृवश' इतिन्यायात् तुलादानादिकं ग्रहणनिमित्तं दानं च यस्मै रोचते तस्मै देयम्। प्रेतोपभुक्तवस्तुदानं महापात्रायैवेति।

(देवालयनिमित्तकविचारः)

कस्मिंश्चिद्देवालये भूकम्पादिना निमित्तेनात्यन्तं विशीर्णतां प्राप्य पतनोन्मुखे सति तत्र स्थापिताया देव्या मूर्तेरवैकल्ये च सति तस्या मूर्तेस्तस्मात्स्थानादुत्थापनं विना तत्रैव देशे पुनर्मन्दिरनिर्माणस्याशक्यत्वे च सति तामविकलां मूर्तिं तस्मात्स्थानादुत्थाप्य स्थानान्तरे क्वचित्तन्निकट एव संस्थाप्य तन्मूर्तिनिष्ठां शक्तिं सुवर्णादिपात्रस्थे जले आकृष्य तत्रैव त्वन्यासादिकं कृत्वा यावत्पुनः स्थापनं मूर्तेस्तावत्तज्जलं रक्षेत्।

एवं प्रासादशक्तिमपि कस्मिंश्चिद्खड्गे आकृष्य तत्त्वन्यासादिकं कृत्वा मूर्तिसन्निधौ निधाय खड्गमेव यथाविधि देववत्पूजयेत्। ततो देवालयं नूतनं पूर्वदेशे निर्माय तत्र तामेव मूर्तिं पुनः स्थापयेद्यदि मूर्तिः खण्डिता भवेत्। संस्थाप्य च पुनस्तां तां शक्तिमाकर्षणादिना तत्र

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तत्रैवन्यस्य मूर्तिं प्रसादञ्च यथावत्पूजयेत् इति शास्त्रीयोनिर्णयः प्रतिष्ठात्रैविक्रम्यां विद्यत इति ।

अत्र प्रमाणानि—

'एष एव विधिः प्रोक्तो जीर्णोद्धारसमुद्धृतौ ।
खड्गे मन्त्रगणं न्यस्य कारयेन्मन्दिरान्तरम् ॥' इति ।
'अथातः संप्रवक्ष्यामि मूर्तीनां हरणं शुभम् ।
विधानं स्थापितानां च ग्रामाद्ग्रामान्तरं प्रति ॥
प्रासादरहिता सा च आतपे विजने तथा ।
उपघातैरुपहता श्वभिः काकैस्तथाऽन्त्यजैः ॥
चिरकालस्थिता: चैवं पुनः प्रासादकृन्नरः ।
म्लेच्छोपद्रवसंयुक्ते स्थाने चातीवदूषिते ॥
एवं विधाहि तां मूर्तिं नेतुं ग्रामान्तरं प्रति ।
वाससाऽऽच्छादितां मूर्तिं शिविकायां निवेशयेत् ॥

इत्यभिधाय—सर्वं प्रतिष्ठितं कर्म कुर्यान्न्यासविवर्जितमित्यादि ।

(श्राद्धादिविचारः)

'गोत्ररिक्थे जनयितुर्न भवेद्दत्रिमः सुतः । गोत्ररिक्थानुगः पिण्डो व्यपैति ददतः स्वधा' (मनु० ९।१४२) इतिवचनेन जनयितृपिण्डदानस्य दत्तकपुत्रेणाकर्तव्यतया ग्रहीतुरेव पितुः सांवत्सरिकगयाश्राद्धादीनां कर्तव्यताविधानात् 'एष्टव्या बहवः पुत्रा यद्येकोऽपि गयां व्रजेत्' इत्यनेन गयाश्राद्धस्यावश्यकत्वात् 'पिण्डोदकक्रियाहेतोर्नामसङ्कीर्तनाय च' इति वचनेन पिण्डदानार्थमेव दत्तकस्य ग्रहणाच्च जनयितृपितृसत्त्वेऽपि मृतगृहीतस्वपितृकस्य दत्तकस्य गयाश्राद्धादावधिकारः शास्त्रदृष्ट्या जनयितुः पितुः पितृव्यत्वेन नास्ति किन्तु लोकव्यवहारेणेति ।

(ब्राह्मणादिवधजन्यप्रायश्चित्तकथनम्)

गवां च ब्राह्मणानां वा वधो यत्र च दस्युभिः ।
असावयज्ञियो देशः शोधनीयो द्विजातिभिः ॥
प्रायश्चित्तं विधायादौ वध्यभूमिं खनेत्ततः ।
वह्निना तापनं कुर्यात्पर्जन्येनापि वर्षयेत् ॥
विशुद्धायां मृदा पश्चात्पूरणीया प्रयत्नतः ।
पञ्चरत्नं क्षिपेत्तत्र पञ्चगव्येन शोधयेत् ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

(अग्निहोत्रकर्मविचारः)

केनचित् धार्मिकधौरेयेण राज्यादिकार्यान्तरव्यापृतेन स्वयमग्निहोत्रं कर्तुमवकाशमलभमानेनान्यं कञ्चन श्रौतस्मार्तनित्यकर्मानुष्ठाननिरत-विप्रवरं तत्र नियुज्य तेन कारितेऽग्निहोत्रादिकर्मणि काले च दैवाद्दिष्टं गते तस्मिन् प्रयोजितरि, तत्पुत्रादेश्चानधिकारप्रयोजके वैधुर्यादौ सञ्जाते पूर्वनिर्दिष्टब्राह्मणकर्तृकाग्निहोत्रस्याधिकाराभावप्रयुक्तो लोपो भवेन्नवेति संशये– 'वसन्ते ब्राह्मणोऽग्नीनादधीते' त्यादावात्मनेपदश्रवणेनाग्निसिद्धि-रूपफलस्याधानसामानाधिकरण्यस्यावश्यकतया अनाधातुराहवनीयाद्य-भावप्रतीतेः क्रयादिनाऽन्येन केन चित्प्रकारेणाहिताग्नित्वसम्पादनया-ऽऽधानाधिकरणयो निरस्तत्वात् यद्गतं यादृशं कर्तुं विशेषणमधिकारिता प्रयोजकं तद्गततादृशाभावस्यैव तदभावप्रयोजकतावश्यं भावनैयत्वेन प्रयोजकपुरुषगतवैधुर्यादेस्तत्वाभावेनाऽधिकारनाशकत्वासंभवात्पूर्वनि-र्दिष्टे विप्रवरेऽधिकारपौष्कल्यप्रतिभानात्तेन चाऽग्निहोत्रं यथावदेव रक्ष-णीयम् । 'वीरहा वा एष देवानां चाऽग्निमुद्वासयते' इति श्रुत्या अग्न्यु त्स्रष्टुः । वीरहत्यादोषप्रतिपादनात्तेन ब्राह्मणेनावश्यमेव वीरहत्यादोषा-भावायाऽग्नयसंरक्षणीया अग्निहोत्रं च करणीयम् । यैश्च नियतवृत्तिदा-नादिना प्रवर्तितोऽयं ब्राह्मणोऽस्मिन्धर्मकार्ये, तैः तत्सन्तजैश्च पुरुषैः तादृशदोषप्रयोजकत्वादात्मानं रक्षितुकामैः यथावदेव नियतवृत्तिदानेन संरक्षणीया अग्नयोऽग्निहोत्रं धार्मिकश्चायं पन्था इति ।

(प्रतिष्ठादौ कुण्डविषयकविचारः)

मात्स्ये आग्नेये च प्रतिष्ठाविधिमुपक्रम्य—'वेदीपादान्तरं त्यक्त्वा कुण्डानि नव पञ्च वा' इत्युक्तेः प्रतिष्ठाविधावेव पञ्चकुण्डीकरणं युक्तम्, महारुद्रविष्णुयागादौ तु–'एकं कुण्डं शुभदं मध्ये शान्तौ जपाङ्गहवनेषु । आरभ्यैकादशिनीं लघुमहदतिरुद्रहवनविधौ' इत्याद्यभियुक्तोक्तेरेकस्यैव कु-ण्डस्य विधानादेकमेव कुण्डं कार्यमित्यायाति तथापि पूर्वोक्तवचनात्पञ्चकु-ण्ड्यादिपक्षोऽपि साम्प्रतं प्रचलति । पञ्चकुण्ड्यादिपक्षेऽपि– आचार्यकुण्डं मध्ये कार्यं न प्रतिष्ठादिवत्पूर्वेशानयोर्मध्ये । अत्र होमस्य प्राधान्यात् 'दानो-त्सर्गप्रतिष्ठासु वेदीमध्ये प्रकीर्तिता । प्राच्यामुदीच्यां वा शान्तौ मुकुरोदर-सन्निभा' इत्यादिना दानादिष्वेव मध्ये वेदिविधानात् । नारायणभट्टैरपि-कुण्डं तन्मध्यभागे तु कारयेच्चतुरस्रकम्' मध्ये तु मण्डपस्यापि कुण्डं कुर्याद् विचक्षणः' इत्यादिना मध्ये एव कुण्डं साधितम् । रुद्रकल्पद्रुमेऽपि–ग्रहय-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ज्ञाधिकारे मण्डपमध्यभागे कुण्डविधानात् रुद्रादियज्ञस्य ग्रहयज्ञविकृतित्वात् मध्ये एव कुण्डम् । पूर्वेशानदिशि कुण्डकरणं तु यत्र मण्डपमध्यभागे कुण्डविधिःश्रुतो नास्ति तद्विषयकम् । 'प्रागुत्तरं समासाद्य प्रदेशे मण्डपस्य तु । शोभनं कारयेत्कुण्डम्' इत्यादिवचनस्य त्वयमर्थः—प्राक् पूर्वं मण्डपस्योत्तमं मध्यमं प्रदेशं प्राप्य कुण्डं कुर्यादिति तेन । लक्षहोमवन्मध्ये कुण्डमित्युक्तम् । 'स्थलसङ्कोचे तु मध्ये कुण्डमन्यथेशान्यामिति केचिदित्यपि तत्रैव । तेन हवनप्रधाने मध्ये कुण्डम् । प्रतिष्ठाप्रधाने एककुण्डीपक्षेऽपि न मध्ये कुण्डमिति ।

(मन्दिरादौ चतुःषष्टिवास्तुपूजनविचारः)

चतुःषष्टिपदमारभ्यानेकविधवास्तुपदमुक्तं तत्र कुत्र कस्योपयोग इति प्रश्ने—मन्दिरादौ तु चतुःषष्टिपद एव वास्तुपूजनं कार्यं भवने एकाशीति पदे तथा चोक्तम्—

'दुर्गे देवालये चैव शल्योद्धारे तथैव च ।
विशेषेणैव पूज्याश्च चतुःषष्टिपदं तथा ।
एकाशीतिपदं कुर्याद्रेखाभिः कनकेन च ॥ इत्यादयश्च ।

यद्यपि वास्तुराजवल्लभे अन्यान्यपि पदान्युक्तानि तथापि मन्दिरे चतुःषष्टिपदं भवने एकाशीतिपदं कार्यमित्यत्र तद्ग्रन्थकाराणां सम्मतिः स्पष्टैव ।

तत्रायं श्लोकः—

'ग्रामे भूपतिमन्दिरे च नगरे पूज्यश्चतुषष्टिकै—
रेकाशीतिपदैः सकलभवने जीर्णे नवाब्धशकैः ।
प्रसादे तु शतांशकैस्तु सकले पूज्यस्तथा मण्डपे ।
कूपे षण्नवचन्द्रभागसहिते वाप्यां तडागे वने ॥ इति ॥

(अङ्गहीनस्य कर्मस्वधिकारविचारः)

श्रौतस्मार्तत्वेन विभक्तेषु कर्मसु दर्शपूर्णमासोपनयनश्राद्धादिषु नित्यत्वेनाभिमतेषु द्विजानामधिकारश्शास्त्रतः संप्रतिपन्नः । तत्र जैमिनिना—'अङ्गहीनश्च तद्धर्मा' इति षष्ठप्रथम-नवमे-अङ्गहीनानां दर्शपूर्णमासादिष्वधिकाराभावं पूर्वपक्षीकृत्य तेषामपि यथाशक्तिन्यायेनाधिकारस्साधितः ।

तथाहि—काणस्य—आज्यावेक्षणेन विना पङ्गोश्च विष्णुक्रमणेन

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विना, द्विजश्च मन्त्रवाचनेन विना दर्शपूर्णमासाद्यनुष्ठाने न क्रतोर्वैगुण्यम् । एनमेव विषयं खण्डदेवाचार्यः—'नित्ये तु यथाशक्ति न्यायात् अधिक्रियत एव' इति भाट्टदीपिकायां द्रढयति ।

यदपि कात्यायनाचार्यः—'अङ्गहीनाऽश्रोत्रियषण्ढशूद्रवर्जम्' इति । अङ्गहीनानामधिकारं प्रतिषेधति, तत्तु मन्मतः सिद्धंदोषमङ्गीकृत्य । अन्यथा 'यथाशक्तिन्यायस्य' अवसर एव न स्यात् । अतो नित्येषु तेषामधिकारः सिध्यति ।

सति चैवं श्राद्धादिषु नित्येषु नैमित्तिकेषु वा कर्मस्वधिकारप्रदाने तेषां न शास्त्रतः कश्चन दोषः प्रतीयते ।

'काणाः कूटाश्च कुब्जाश्च दरिद्राः व्याधितास्तथा ।
सर्वे श्राद्धे नियोक्तव्या मिश्रिता वेदपारगैः ॥ इतिव्यासवचनमपि विषयमिममुपोद्बलयति ।

न ब्राह्मणं परीक्षेत दैवे कर्मणि धर्मवित् ।
पित्र्ये कर्मणि तु प्राप्ते परीक्षेत प्रयत्नतः ॥ इति यन्मानववचनं तदसंभवपरमेतदितिमेधातिथिना नीतत्वात न प्रातिकूल्यमावहति ।

एवञ्च यो हि द्विजः सर्वाङ्गाविकलः सन् आधानादिकं कर्मानुष्ठानमध्ये अङ्गविकलोजातस्योत्तरक्रतुषु दर्शपूर्णमासादिषु श्राद्धोपनयनविवाहविष्णुरुद्रादिकर्मस्वधिकारे न क्वापि विप्रतिपत्तिः । एतावताङ्गविकलानामपि कर्मानुष्ठानाधिकारे सिद्धे तदनुष्ठापनेऽपि तेषामधिकारस्वीकर्तव्य एव ।

तत्र मूकबधिरकाणानां सामर्थ्याभावादधिकाराभावेऽपि पङ्गोस्तत्समर्थत्वात् कैश्चिदधिकार इष्यते । अयमधिकारः क्वचन शिष्टाचारतः परिप्राप्त इत्यप्यनुभूयते । अतश्च निमित्तेन केन च न पङ्गुत्वमापन्नस्य, व्याध्यादिदोषरहितस्य समर्थस्य, सत्कुलप्रसूतस्याधीतविद्यस्य कर्मानुष्ठाने तदनुष्ठापने वाधिकारो न शास्त्रतः प्रतिषिध्यत इति ।

(सिंहस्थे गुरौ गुरुशुक्रमौढ्यादौ च विवाहादिनिषेधव्यवस्था)

यस्मिन् वर्षे गुरुः सिंहराशिगतो भवति तस्मिन् वर्षे विवाहादिशुभकर्माणि कर्तव्यानि नवेति जिज्ञासायाम्—मत्स्यः—'सिंहस्थिते सुरगुरावधिमासके च ज्येष्ठे तथाद्यतनयस्य तु शुक्रगुर्वोः । मौढ्ये तथा स्थविरबालकयोश्च कुर्याज्जनस्थिते सुरगुरौ न हि मङ्गलानीति ॥ गर्गः—गुरौ सिंहस्थिते चैव सूर्पे च धनुषि स्थिते । विवाहमपि नेच्छन्ति मुनयः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

काश्यपादय इति । नारदः-गुरौ तु सिंहराशिस्थे भागे भाग्यवती भवेत् । पैत्रेयमर्क्षे सा नारी विवाहे विधवा भवेदिति । एतत्सर्वं नर्मदोत्तरविषयम् । तथाह व्यासः—नर्मदोत्तरदेशे तु सिंहस्थे देवमन्त्रिणि । विवाहं नैव कुर्वीत निषेधो नास्ति दक्षिणे ॥ श्रीधरीये—नर्मदोत्तरभागेषु सिंहस्थेऽमरपूजिते । विवाहादि न कुर्वीत नायं दोषोऽस्ति दक्षिणे ॥ सिंहराशौ सिंहराशौ यावत्तिष्ठति वाक्पतिः । नर्मदायाम्यकोणेषु न दोषो दक्षिणापथ इति । अर्णवे—अन्नप्राशनवैवाहं पुंसो जन्मर्क्ष एव च । जन्ममासे च वर्ज्यं स्यान्नर्मदातीर उत्तरे । नर्मदादक्षिणे भागे विवाहादिषु मङ्गलम् । जन्ममासे शुभं प्रोक्तं वहूनां सम्मतन्त्विदमिति । व्यासः-अन्नप्राशनमातिथ्यं विवाहं वास्तुकर्म च । रात्रावहनि वा कुर्याच्छेषाण्यहनि कारयेत् । आषाढः प्रोष्ठपन्माघौ मार्गशीर्षस्तथैव च । चत्वारो दूषिता मासा वर्णसंस्कारकर्मणि ॥ विवाहं मौञ्जिबन्धनम् । माघफाल्गुनवैशाखजेष्ठमासाश्शुभावहाः । मध्यमाः कार्तिको मार्गशोर्षको निन्दिताः परे । न कदाचिदृक्षशर्क्षेषु भानोरार्द्राप्रवेशनात् । पौषचैत्रो शुभो गार्ग्यो नेति प्राह बृहस्पतिः श्रावणं केचिदिच्छन्ति नेच्छन्त्यन्ये महर्षयः । कन्याकुम्भकुलीरस्थे रवौ क्षौरं विवर्जयेत् । आषाढादि चतुर्मासान् चान्द्रान् पौषञ्च वर्जयेत् । सार्वकालिकमिच्छन्ति विवाहं गौतमादाय इति । आपस्तम्बः- सर्वर्तवो विवाहस्य शैशिरौ मासौ परिहाप्योत्तमञ्च नैदाघमिति । शैशिरौ—माघफाल्गुनौ । निदाघस्य ग्रीष्मस्य । यश्चोत्तमः अन्त्यः आषाडः तानेतान् त्रीन्मासान् परिहाप्य वर्जयित्वा सर्वर्तवो विवाहस्य काल इत्यर्थः । बालभूषायाम्—निद्यो मघास्थः सर्वत्र विशेषाद्गौडगुर्जरे । कलिङ्गवङ्गमगधे सिंहे सिंहांशगोगुरुरिति । मुहूर्तचिन्तामणिकारः—मघादिपञ्चपादेषु गुरुः सर्वत्र निन्दितः । गङ्गागोदान्तरं हिताशेषांघ्रिषु न दोषकृत् । मेषेऽर्के शुभउद्वाहो वङ्गागोदान्तरेऽपि च । सर्वसिंहगुरुर्वर्ज्यः कलिङ्गे गौडगुर्जरे । इति ।

एभिः प्रमाणैरिदं सिद्धम्—सिंहस्थे गुरौ नर्मदातो दक्षिणवासिभिः विवाहादिकं कर्तुं शक्यते, उत्तरवासिभिश्च सर्वैरेव न कर्तुं शक्यते, आपस्तम्बगौतमादिभिस्तथा विधानात । अतश्च तत्तद्देशाचारभेदेन स्मृतीनामपि कल्पसूत्राधिकरणपूर्वपक्षानुसारेण व्यवस्थितप्रामाण्यमङ्गीकृत्य विवाहादिशुभकर्माण्यनुष्ठेयानीति सिद्धम् । यद्यपिकल्पसूत्राधिकरणे ईदृशं प्रामाण्यं स्मृतीनामाचाराणाञ्च न सिद्धान्तितम्, तथापि मीमांसकसरणितो याज्ञिकानां वैदिकानाञ्च सरणिस्तत्र तत्र किन्नैवोप-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

लभ्यत इति देशभेदेन स्मृतीनामाचाराणाञ्च प्रामाण्यव्यवस्था स्वीकार्या इति।

(तन्त्रताविचारः)

अनेकप्रधानानां कालदेशकर्मैक्यादिना सकृदेवानुष्ठानं तन्त्रम्। तत्र द्वयोर्बहूनां वा प्रधानानां देवतैक्ये प्रधानानामपि सकृदेवानुष्ठानम्। तादृशप्रधानोद्देशेनाङ्गानुष्ठानमपि तन्त्रेणैव। (सकृदेव) यत्र तु प्रधानेषु देवताभेदः कालकर्त्रादीनामैक्यं तत्र प्रधानानामेव पृथक् पृथगनुष्ठानम्। अर्थात् तत्तद्देवताकहविषां पृथक् पृथक् प्रक्षेपः त्यागोऽपि पृथगेव। अङ्गानान्तु पूर्वपश्चिमानामारादुपकारकाणां सकृदेवानुष्ठानम्। सन्निपत्योपकारकाणां तद्देवताकहविर्निर्वापादीनां पार्थक्यमेव। सन्निपत्योपकाराणां संस्काररूपत्वेन तेषामावृत्तिं विना तत्स्वरूपस्यैवासिद्धेः। यत्रानेककर्मसन्निपातेषु एकस्यैवोद्देश्यत्वं प्राधान्यं वा इतरेषामर्थादुपकारसिद्धिस्तत्र प्रसङ्गः, प्रसङ्गतन्त्रयोरङ्गानुष्ठानस्थले इयान् भेदो यत् तन्त्रस्थले सर्वेषां प्रधानानामुद्देश्यत्वमनुष्ठानं परमङ्गानां सकृत्। प्रसङ्गस्थलेऽनेकप्रधानमध्ये एकस्यैव प्रधानस्योद्देश्यत्वं कर्तव्यत्वमर्थादितरेषामुपकारसिद्धिः। एवं चानेकदेवताप्रतिष्ठापञ्चदेवयागशान्त्युद्यापनादिषु यत्र कालभेदो देवताभेदाङ्गानामपि भेदस्तत्र कथमपि तन्त्रं प्रसङ्गो वा न भवितुमर्हति।

यत्तु विधानपारिजातशान्तिसारादौ द्वयोः शान्त्योः समुच्चयकथनं तत् यत्रैकदेवताकैककालिकशान्तिद्वयसन्निपातस्तद्विषयम्। एतेन यत्र क्वचित् गोमुखप्रसवमूलशान्त्योः समुच्चय उक्तः सोऽप्रामाणिकः समुच्चयकारणाभावात्।

संस्काराणान्तु अनेकेषामेककालकर्तव्यत्वे प्राप्ते अतीतसंस्काराणामेवोत्तरसंस्कारेण सह तन्त्रता, न तु उत्तरकालिकानां पूर्वेण सह। तन्त्रता नाङ्गानां सकृदनुष्ठान रूपेण, किन्तु सर्वेषामेषामेकदिनकर्तव्यस्वरूपेण। परन्तु नान्दीश्राद्धादेः सर्वोद्देशेन सकृदेवानुष्ठानम्। (गणशः क्रियमाणानामिति वचनं च यमलजातयोर्द्वयोर्युगपद्विहिते उपनयनादिसंस्कारे: अतीतसंस्काराणामुत्तरसंस्कारेण सह युगपदनुष्ठाने च नान्दीश्राद्धस्य तन्त्रता विधायकं न तु भिन्नपितृकाणां तन्त्रेण नान्दीश्राद्धविधायकं संस्कारविधायकं वा, कर्तृभेदात्) एतदभिप्रायेणैव संस्काररत्नमालायां पुंस वनसीमन्तयोः समुच्चयकथनम्। उपनयनवेदारम्भ-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

समावर्तनेषु उपनयनकाले यत्तन्त्रेणानुष्ठानमिदानी क्रियते न तत् प्रमाणपदवीमारोहति । अतीतानामेव संस्काराणामुत्तरसंस्कारेण सहानुष्ठानस्य शास्त्रेण प्राप्तत्वात् ।

किञ्च—उपनयने ब्रह्मचर्यस्थितेनैव माणवकेन सायं होमविधानात तावत्पर्यन्तमुपनयनकर्मानुवृत्तेः, तन्मध्ये वेदारम्भस्यानुष्ठानमशास्त्रीयमेव, कर्ममध्ये कर्मान्तरारम्भस्य निषिद्धत्वात् । पञ्चायतनपूजदौ यत्तन्त्रानुष्ठानं तद्वचनबलात् ।

एवं पञ्चदेवयागोऽपि तन्त्रेणानुष्ठीयमानोऽसङ्गत एव । एवं प्रजापतयागसूर्ययागादिव्यवहारोऽपि—असङ्गत एव प्रमाणपथा नारूढत्वात् । पञ्चायतनात्मकपञ्चदेवप्रतिष्ठात्वेकस्य प्राधान्यादितरेषामङ्गत्वात्पौर्णमासीवैमृधन्यायेनाङ्गानां तंत्रेण संभवति । (एवं पञ्चानामपि देवानां यत्र प्रधान्येनं प्रतिष्ठा तत्र देशकालकर्त्रादीनामैक्यसम्भवे तन्त्रेण कथञ्चिदनुष्ठानं सम्भवति । तत्राप्यङ्गानामेव तन्त्रता । प्रतिष्ठायास्तु संस्काररूपत्वेन सन्निपत्योपकाररूपत्वात् पृथगेवानुष्ठानम्) शतचण्डीरुद्रयागयोर्देवताभेदात् वैदिकत्वेन तान्त्रिकत्वेन च परस्परंविभिन्नरूपत्वात्तन्त्रता न सम्भवत्येव । श्राद्धविषये—'बहूनि च च निमित्तानि जायेरन्नैकबासरे' इति न्यायेन अत्रैकस्मिन्दिने-अनेकनिमित्तानुसारेण नैमित्तकानामुत्सर्गतः पृथगनुष्ठानं प्राप्तं । तत्र यत्र द्रव्यदेवतैक्यमङ्गानाञ्चैक्यं तत्र तन्त्रेणानुष्ठानं भवत्येव । यत्र तु तयोर्भेदः तत्र भेदेनैवाऽनुष्ठानम् । यत्राङ्गेषु महत्वालपत्वकृतो भेदस्तत्र महताल्पस्य कृतार्थत्वात्तत्रापितन्त्रेणैवाऽनुष्ठानम् ।

तर्पणस्थले—'सकृन्महालये श्वः स्यात्' इति वचनेन यत्र श्राद्धाङ्ग तर्पणं परेद्युर्विहितं तत्र श्राद्धाङ्गतर्पणस्य नित्यतर्पणस्य च तन्त्रेणैवानुष्ठाम् । यदि च तत्रापि नित्यतर्पणे जन्मतिथ्यादिपाते तिलतर्पणनिषेधस्तदा तु श्राद्धाङ्गतर्पणं सतिलं नित्यतर्पणमतिलमिति तर्पणद्वयमेव कार्यं न तन्त्रता द्रव्यभेदात् ।

एवं प्रायश्चित्तस्थलेऽपि ज्ञेयम् ।

यत्र तु महता प्रधानेनाल्पानां प्रधानानामुपकारसिद्धिस्तत्रप्रसङ्गः—अत्राप्यङ्गानामननुष्ठानमेव । अतएवान्यत उपकारलाभे सति तेनैव चरितार्थत्वात्स्वार्थं पृथक् अङ्गानुष्ठानमिति प्रसंगलक्षणम् ।

एवं च महतादर्शयागानुष्ठानेनाल्पानां संक्रातियुगादीनां चरितार्थत्वात्ते नैव सिद्धेर्न पृथगनुष्ठानम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

(ब्रह्मशापः)

पाद्मे—एकदा पुष्करे ब्रह्मा यज्ञं व्यरचयत् । यज्ञार्थे पत्नीत्वेन गायत्री इन्द्रमुखाद् ब्रह्मणा पत्नीशालातः समाहूता । अकारणमेवपण्डितो नारदः सन्देशात्पूर्वमेव प्रज्ञापयामास गायत्रीम्। न कोऽपि स्त्रीजनो यज्ञे संप्राप्तस्तदत्र भवती कथं तत्र गमिष्यतीतिब्रह्मसंदेशे प्राप्ते सा स्वागमन मिन्द्रवदना न्यषिधत् । प्राप्तप्रत्युत्तरः प्रजापतिर्मुहूर्तलोपभयात्काञ्चनगोपीं पत्नीत्वेन नियोज्य पूरयामास यज्ञम्। पुनरपि नारदो गायत्रीं बिभेद—यथा ब्रह्मणा भवत्या अलोपगोपीं पत्नीत्वे नियोज्य यज्ञः प्रपूरित इति क्षुब्धा गायत्री ब्रह्माणंशशाप स्वप्रतिकूलाचारतया ब्रह्मणः। ब्रह्मापि त्वमाहूतापि नायाति तवायं दोष इति क्षुब्धः सन् गायत्रीं प्रति शशापेति ।

(वसिष्ठशापः)

महाभारते–वसिष्ठविश्वामित्रयोः संवादः प्रथित एव । वसिष्ठाभ्यर्णमायातो विश्वामित्रः राजर्षिरिति सम्बोध्यते स्म वसिष्ठेन महर्षिणा। ब्रह्मर्षिरिति पर्याये राजर्षिरिति व्यपदेशेन कोपमापन्नो विश्वामित्रो वसिष्ठ पुत्रशतिकां संजघान । एतदेव कर्म नितरां शस्त्रधारणं च वसिष्ठस्य विश्वामित्राय राजर्षिरिति व्यपदेशे निमित्तमभवत् । एकदा च वसिष्ठपत्यरुन्धती मध्ये निशीथं लेभे भर्तारं भो नाथ, कः साम्प्रतमृषि श्रेष्ठ इति । तद् भर्ता वसिष्ठः प्रत्युवाच तां विश्वामित्र इति। विश्वामित्रश्च तदानीमेव रहस्तत्र प्राप्तो वार्तालापं तं श्रुत्वा मनस्यकरोत् एतस्य शतपुत्रहन्ताहमयं मां प्रशंसतीतिजातनिर्वेदो द्वितीये प्रभाते निरस्त्रो वसिष्ठान्तिकमगमत् । वसिष्ठश्च तदर्थे—आगम्यताम् ब्रह्मर्षे, इति स्वागतवाक्यं निजगाद । ब्रह्मर्षित्वेन सम्बोधनस्य च निरस्ततैवासीद्विश्वामित्रस्य । ब्रह्मशापविमुक्तिकारणं पृष्टो विश्वामित्रो वसिष्ठेन गायत्रीजपं कारणत्वेन प्रतिपेदे क्रुद्धश्च गायत्रीं शशाप वसिष्ठ इति ।

(विश्वामित्रशापः)

एकदा विश्वामित्रवसिष्ठयोर्मिथो जन्यमजनि । तत्रच वसिष्ठो युद्धकरणप्रतिनिधित्वेन दण्डमास्थापयत् । विश्वामित्रस्य निखिलशस्त्रास्त्रजाले तस्मिन् दण्डे संक्षुण्णम्। गायत्रीजपकर्ता विश्वामित्रः सञ्जातलज्जः सन् ब्राह्मणसामर्थ्यं प्रशंसन्नपि प्रातिकूल्यान्निन्दाप्रायं मन्वानो गायत्रीं शशाप । गायत्र्युपासनया महत्या अपि निष्फलशास्त्र समता सञ्जानेति । चात्र श्लोकः—

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दृष्ट्वा मोघं स्वशब्दं तु विश्वामित्रो महामुनिः ।
क्रोधं दुर्विसहं कृत्वा शशाप वेदमातरमिति ॥

(परमहंसस्य मरणानन्तरकर्मविचारः)

मृतेन दहनं कार्यं परमहंसस्य सर्वदा ।
कर्तव्यं खननं तस्य नाशौचं नोदकक्रिया ॥
अश्वत्थः स्थापनं कुर्यात्तद्देशेऽध्वर्युराहतः ।
अश्वत्थे स्थापिते तेन स्थापितोऽपि महेश्वरः ॥
दर्शनात्स्पर्शनात्तस्य सर्वं नश्यति पातकम् ।
अथवा स्थापनं कार्यं महादेवस्य धीमता ॥
तन्नाम्ना स्थापितो देवः पूजनीयः प्रयत्नतः ।

(त्रैवर्णिकसन्ध्याकर्मविचारः)

त्रैवर्णिकानां सन्ध्यामनुष्ठानविषये प्रकारभेदः कश्चिदस्ति, उत एक एव प्रकार इति विचारे तत्र तत्र स्मृतिषु निबन्धग्रन्थेषु च एक एव प्रकारः परिदृश्यते। केवलं गायत्र्यां परं छन्दो भेद उक्तः। सोऽप्यनन्तरसूत्रेण 'सर्वेषां वा गायत्रीम्' इत्यनेन विकल्पे पर्यवस्थापितः। अन्यत्सर्वमङ्गजातमात्रमाचमनमार्जनाघमर्षणादिकमेकरीतिकमेव । अतएव त्रयाणामपि वर्णानां सन्ध्यायामेकैवरीतिः समुचिते प्रतिभाति।

(दिवाविवाहविचारः)

आपस्तम्बगृह्यसूत्रे चतुर्थखण्डे विवाहप्रकरणमुपक्रम्य पञ्चमखण्डे अश्मारोहणसप्तपद्यादीनभिधाय लाजहोमान् जयादींश्च विधायानन्तरं वधूवरौ तेनैवाग्निना साकं तस्मिन्नेव अश्वाभ्यामनडुद्भ्यां वा युक्तं रथमारुह्य वरं गृहं गच्छेतामित्यभिहितम्। अनन्तरं षष्ठखण्डे मध्ये मार्गं नदीवाप्यादीनां प्राप्तौ तत्तरणे विशेषधर्मांश्चाभिधाय, वरस्स्वगृहं प्राप्य 'गृहानुचरया सङ्काशयति' इत्यनेन वध्वै (सभार्यार्थै) 'शङ्काशयामी' त्यनया ऋचा स्वगृहं दर्शयेदिति विधायानन्तरं गृहं प्रविश्य तत्र लोहितं वास आस्तीर्य वधूं दक्षिणेन पदा गृहान् प्रपादयन् वध्वामन्वारब्धायां 'आगन् गोष्ठम्' इत्यादि त्रयोदशाहुतीर्हुत्वा पूर्वमास्तीर्णे वस्त्रे उपविशतो वरो वधूश्चेत्यभिधायानन्तरमिदं सूत्रम्—'अथास्याः पुंसोजीवंपुत्रायाः पुत्रमङ्क उत्तरयोपविश्य तस्मै फलान्युत्तरेण यजुषा प्रदायोत्तरे जपित्वा वाचं यच्छत आनक्षत्रेभ्यः' इति प्रवृत्तम्।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अनन्तरम्—'उदितेषु नक्षत्रेषु प्राचीनमुदीचीं वा दिशमुपनिष्क्रम्योत्तराभ्यां यथालिङ्गं ध्रुवमरुन्धतीञ्च दर्शयति' इति सूत्रम्।

अत्र प्रथमसूत्रे विवाह दिन एव 'वाचं यच्छत आनक्षत्रेभ्यः' नक्षत्रोदयपर्यन्तं वधूवराभ्यां वाग्यमः कार्य इत्यभिहितत्वात्, द्वितीयसूत्रे 'उदितेषु नक्षत्रेषु' इत्यभिधानाच्च विवाहो दिवा कर्तव्य इति स्पष्टमवगम्यते।

एवं पारस्करगृह्यसूत्रेऽपि विवाहदिने वरो वधूं 'तच्चक्षु' रिति मन्त्रेण सूर्यमुदीक्षयेदितिविधिरस्ति—'अथैनां सूर्यमुदीक्षयति तच्चक्षुरिति' इति। एवम्—'अस्तमिते ध्रुवं दर्शयति' इत्यपि विधिर्वर्तते। अनयोस्सूत्रयोः दिवाविवाहपक्ष एव सङ्गतिस्स्यात्।

विवाहदिने घटीस्थापनमेवं विहितम्—

'ताम्रपात्रे जलैः पूर्णे मृत्पात्रे वाऽथ वाशुभे।
मण्डलार्धोदयं वीक्ष्य रवेस्तत्र विनिक्षिपेत् इति नारदेन।

अनेनापि प्रमाणेन दिवाविवाहः स्पष्ट एव।

(कूपादिजलेषु स्नानविचारः)

यत्र नदा नद्यस्तडागा वा न सन्ति तत्र अल्पजलोदके कूपे यन्त्रादिविनिःसृतोदके वा स्नानफलप्राप्तिर्भवति न वेति विचारे—

'नद्यां तु विद्यमानायां न स्नायादुष्णवारिणा।
न स्नायादल्पतोये तु विद्यमाने बहूदके॥

इति अत्र नद्यः सन्ति तत्र ताः परित्यज्य तडगादौ न स्नातव्यम्। यत्र तडागाः सन्ति तत्र तान् परित्यज्यज्यान्यत्र न स्नातव्यम्। विशेषतश्च—'नद्या यच्च परिभ्रष्टं नद्या यच्च विनिः सृतम्। गतप्रत्यागतं यच्च तत्तोयं परिवर्जयेत्' इति व्यासवचनेन यन्त्रद्वारा विनिःसृते जले स्नाननिषेधाच्च तडागाम्भस्स्येव स्नानं शास्त्रसंमतं स्नानफलदं न तु यन्त्रोद्धृतनालीद्वाराऽऽगतजलेन स्नाने तादृशं फलम्। तेन दृष्टफलं शरीरमलोद्वासनं कदाचित् भवितुमर्हति न त्वदृष्टरूपं स्नानजं फलम्। अतस्तडागादिसत्वे तत्रैव स्नानं तर्पणं चेति।

(मानसिकगायत्रीपुरश्चरणसङ्कल्पस्यानन्तरविचारः)

केनचित् मानसिकः सङ्कल्पः कृतो गायत्रीपुरश्चरणस्य पूर्वम्। स च मरणावस्थां प्राप्तः, तेन किं कर्तव्यमिति संशये—पुत्रादौ विश्वासयोग्ये प्रतिनिधौ सति तद्द्वाराकारणीयः शुक्रास्तसमयादनन्तरम्। तादृशपुत्राद्यलाभे तु सति वैद्यादिद्वारा मरणनिश्चये स्वयमपि कालाशुद्धावपि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कार्यः । मानससङ्कल्पस्याप्योरम्भरूपत्वात् । आरब्धकर्मणो नित्यत्वात् नित्यानां शुक्रास्तादिदोषाभावादिति ।

(आपत्तौ किं कर्तव्यम्)

यदि कश्चिदार्तः पूर्वं मनसा सङ्कल्पितं गायत्रीपुरश्चरणादिकं कर्म चिकीर्षन् शुक्रास्तादिदोषरहितकालागमनपर्यन्तं जीविते संशयमापन्नः तादृशदोषदूषित एवकाले स्वसङ्कल्पं पूरयितुमभिलषति तदनुष्ठानं शास्त्रीयं न वेति विचारे स्वेन सङ्कल्पितस्य स्वेनैव समापनीयत्वस्य षाष्ठन्यायसिद्धत्वात् दोषापगमं यावत् जीवनस्यानिश्चितत्वेन सङ्कल्पितकर्मणोऽनन्यगतिकत्वात् । 'कालेऽनन्यगतिं नित्यां कुर्यान्नैमित्तिकीं क्रियाम्' तथा—नैमित्तिकं तु कुर्वीत सावकाशं न यद्भवेत्' इत्यादिवचनबलादुत्तरत्र-अतएव 'सावकाशं च संम्भनिरवकाशस्य कर्मणो दोषयुक्तेऽपिकालेऽनुष्ठानं न दोषायेति गम्यते' वत्कालान्तरं कर्म अस्ति निरवकाशस्यानन्यगतिकस्य प्रतिप्रसवोऽर्थात्सिद्धः इति मलमास उक्तम् ।

कर्म कुर्यात्फलावाप्त्यै चन्द्रादिशोभने बुधः ।
स्वस्थकाले त्विदं सर्वं नार्तकालमपेक्षते ॥
स्वस्थकाले त्विदं सर्वं सूतकं परिकीर्तितम् ।
आपद्गतस्य सर्वस्य सूतकेऽपि न सूतकम् ॥
व्यतीपातोऽथ संक्रान्तिस्तथैव ग्रहणं रवेः ।
पुण्यकालास्तदा सर्वे यदामृत्युरुपस्थितः ॥

एवञ्च पूर्वोक्तेन पुरुषेण शुक्रास्तादिदोषयुतेऽपि स्वसङ्कल्पितस्यानुष्ठानं यदि क्रियते कार्येत वा तत् शास्त्रीयमेवेति ।

(पञ्चकदाहः)

धनिष्ठादिषु पञ्चसु नक्षत्रेषु यदि कश्चिन्म्रियेत तदा पञ्चकमरणजनितवंशारिष्टपरिहारार्थं दर्भमयीः पञ्चप्रतिमाः कृत्वा ऊर्णासूत्रेण वेष्टयित्वा यवपिष्टेनानुलिप्य ॐ प्रेतवाहाय नमः । प्रेतसखाय नमः। प्रेतपाय नमः। प्रेतभूमिपाय नमः । प्रेतहर्त्रे नमः । इति ताः सम्पूज्य दाहसमये प्रेतस्योपरि प्रथमां शिरसि, द्वितीयां नेत्रयोः, तृतीयां वामकुक्षौ, चतुर्थीं नाभौ, पञ्चमीं पादयोः निधाय पूर्वोक्तैरेव मन्त्रैः स्वाहान्तैः पञ्चघृताहुतीर्हुत्वा वह्निं प्रदानं कृत्वा दहेत् । अयं पञ्चकदाह इत्युच्यते । सूतकान्ते विशेषशान्तिः कर्तव्या ।

पञ्चके मरणं दाहश्च निषिद्धौ ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

(पर्णनरः)

पर्णनिर्मितो नर इवेति पर्णनरः। अस्थ्यलाभे मृतस्य दाहार्थं पर्णनिर्मितो नराकृतिः पुत्तलकः।

'अस्थिनाशे पलाशानां त्रीणि षष्टिशतानि च।
पुरुषप्रकृतिं कृत्वा दहेत मन्त्रपूर्वकम्।
अशीत्यद्‌र्धं तु शिरसि ग्रीवायां दश योजयेत्।
उरसि त्रिशतं दद्याद्विंशतिं जठरे तथा।
बाहुभ्यां च शतं दद्याद् दद्यादङ्गुलिभिर्दश।
द्वादशाद्‌र्धं वृषणयोरष्टाद्‌र्धं शिश्न एव च।
ऊरुभ्यां च शतं दद्यात्त्रिशतं जानुजङ्घयोः।
पादाङ्गुलीषु च दश एतत्प्रेतस्य लक्षणम्।
ऊर्णासूत्रेण संवेष्ट्य यवपिष्टेन लेपयेत्।

(महालयपक्षश्राद्धम्)

श्राद्रशुक्लपूर्णिमाद्यारभ्याश्विनामान्तं पितुः समातामहस्य पार्वणश्राद्धं महालयपक्षश्राद्धमिति हेमाद्रिमते।

निर्णयसिन्धुकारादीनां सर्वेषां मते आश्विनकृष्णप्रतिपदमारभ्य आश्विनशुक्लप्रतिपदं यावत् श्राद्धषोडशकं महालयपदवाच्यम्। तिथिवृद्धौ षोडश पञ्चदशेति माधवः।

'अहः षोडशकं यत्तु शुक्लप्रतिपदा सह।
चन्द्रक्षयानि शेषेण साऽपि दर्शात्मिका स्मृता'

तेन पूर्णिमायां मृतस्य पूर्णिमायामेकोद्दिष्टं कृत्वा अमादौ पार्वणमिति निर्णयसिन्धुकारादिमतम्। अत्र समर्थस्य द्वादशदैवत्यं, तदशक्तौ नव दैवत्यमिति श्राद्धमयूखादौ सर्वत्र। षडदैवत्यमिति रुद्रधरवाचस्पत्यादयः। इदमधिमासे न भवति।

(कार्पटीवेषः)

गयाश्राद्धार्थं यात्रायाः समारम्भे ताम्रमुद्रा-ताम्रकङ्कणकाषायवस्त्रधारणम्।

इदं च यात्रायामेव न तु कर्मकाले 'न नग्नः श्राद्धमाचरेत्' इति निषेधात्। 'नग्नः काषायवस्त्रः स्यात्' इत्यनेन काषायधारिणो नग्नत्वावगमात्।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

(पञ्चकमरणशान्तिः)

पञ्चके मृतस्य पञ्चकानन्तरं दाहे एकादशे सपिण्डीकरणानन्तरं त्रयोदशेऽहनि वा पुण्याहं वाचयित्वा मध्ये होमवेदिं निर्माय तदीशाने कलशे ग्रहान्सम्पूज्याग्निं संस्थाप्य कलशादुत्तरतश्चतुर्दिक्षुमध्ये पञ्चकलशेषु पञ्च-सौवर्णीषु धनिष्ठादिनक्षत्रप्रतिमासु तदधिष्ठातृ देवान् वसु-वरुण-अजैकपत्-अहिर्बुध्न्य—पूष्णः सम्पूज्य तत्पार्श्वे यमान् मृत्युञ्जयं च संपूज्य पञ्चसु कलशेषु 'कृणुष्वपाजः' (१३ । ९ – १२) विभ्राट् (३३ । ३०–४३) आशुः (१७ । ३३ – ४९) नमस्ते (१६ – ६३) ऋचंवाचम् (१–२४) इति सूत्रपञ्चकजपार्थं पञ्चब्राह्मणान् एकं वा वृत्वाऽग्निं संस्थाप्य समिद्घृततिलैः प्रत्येकं प्रतिद्रव्यं १०८, २८, ८, वा हुत्वा षड् ब्राह्मणान् संभोज्य यजमानमभिषिञ्चेत् । इयं शान्तिः पञ्चकशान्तिरित्युच्यते । पञ्चकात्पूर्वं मृतस्य पञ्चके दाहप्राप्तौ पुत्तलविधिरेव, न शान्तिकर्म । पञ्चके मृतस्य पञ्चकानन्तरं दाहे शान्तिकमेव, न पुत्तलविधिरिति विवेको धर्मसिन्धौ । पञ्चके मृतस्य पञ्चके दाहे उभयमिति सांप्रदायिकाः ।

(नारायणबलिः)

यस्य आत्मघातादिना दुर्मरणं जातं तस्य पुत्रादिशुक्लैकादश्यां तदीयात्मघातादिपापानुसारेण प्रायश्चित्तं कृत्वा दुर्मरणदोषनिवारणार्थं कलशद्वये हैमप्रतिमयोर्विष्णुं च संपूज्य तत्पूर्वभागे दशवेदीः कृत्वा तत्रावनिज्य यमंदश ओदनपिण्डान् दक्षिणसंस्थान् अपसव्येन श्राद्धविधिना दक्षिणामुखो दद्यात् । ततोऽपरेऽह्नि मध्याह्ने विष्णुं सम्पूज्य उदङ्मुखान् प्राक्संस्थान् पञ्चदर्भवटून् संस्थाप्य स्वयं दक्षिणामुखः आसनचतुष्टये सव्येन विष्णु-ब्रह्म-शिव-सानुचरयमान् पञ्चमे आसने च विष्णुरूपं प्रेतं चापसव्येनावाह्य एकोद्दिष्टविधिना पादप्रक्षालनादितृप्तिप्रश्नान्तं कृत्वा पञ्चवेदीः कृत्वा सव्येन चतुर्भ्यः अपसव्येन विष्णुरूपाय प्रेताय पिण्डं दत्वा श्राद्धं समापयेत् । इदमेव दिनद्वयसाध्यं श्राद्धद्वयं नारायणबलिरित्युच्यते । अद्यत्वे एकस्मिन्नहनि अनुष्ठीयते । (मिताक्षरा)

अयं नारायणबलिर्दुर्मरणे एव कार्यो नान्यथा ।

आत्मघातादौ पुत्रादिः सद्यःस्नानेन शुद्धिं सम्पाद्य प्रायश्चित्तं कृत्वा नारायणबलिमनुष्ठाय पर्णशरदाहं कृत्वा दाहसारभ्याशौचं कृत्वौर्ध्वदेहिकं कुर्यात् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

(जीवच्छ्राद्धम्)

कर्त्रन्तराभावे स्वयमेवापरपक्षीय त्रयोदश्यां विष्णुं संपूज्य जलधेनूः पित्र्यूद्देशेन विधिना दत्वा चतुर्दश्यां नदीतीरेऽग्निं प्रज्वाल्य पञ्चाशदात्मप्रतिकृतिं दाहयित्वा स्नात्वा सप्ताञ्जलीन्दत्वा दशपिण्डान्दत्वा पञ्चाशत् जलाञ्जलींश्च दत्वा स्नात्वा गृहे आगत्य पात्रद्वये क्षीरं जलं च द्वारोपान्ते निवेदयेत् तस्मिन्दिने आशौचम्। 'प्रातरमायां जीवच्छ्राद्धं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य सपिण्डकं स्वस्यैकोद्दिष्टं कुर्यात्। जीवच्छ्राद्धे प्रेतशब्दोच्चारणं कुत्रापि नास्ति।

(संन्यासाधिकारविचारः)

'आत्मन्यग्नीन्समारोप्य ब्राह्मणः प्रव्रजेद् गृहात्'। 'चत्वारो ब्राह्मणस्योक्ता आश्रमाः श्रुतिचोदिताः। क्षत्रियस्य त्रयः प्रोक्ता द्वावेको वैश्यशूद्रयोः। 'चत्वार आश्रमाश्चेते ब्राह्मणस्य प्रकीर्तिताः। गार्हस्थ्यं ब्रह्मचर्यं च वानप्रस्थं त्रयश्च ते। क्षत्रियस्यापि कथिता य आचारा द्विजस्य हि। ब्रह्मचर्यं च गार्हस्थ्यमाश्रमद्वितयं विशः। गार्हस्थ्यमुचितं त्वेकं शूद्रस्य क्षणदाचर (वायु पु०) इत्यादिवचनेषु ब्राह्मणश्रवणात् ब्राह्मणस्यैव चतुर्विधेऽपि संन्यासेऽधिकारः।

केवलं माधवाचार्यास्तु—'सन्नियम्येन्द्रियग्रामं रागद्वेषौ प्रहाय च। भयं हत्वा च भूतानाममृती भवति द्विजः॥ (या० स्मृ०) ऋणत्रयमपाकृत्य निर्ममोनिरहंकृतिः। ब्राह्मणः क्षत्रियो वाऽथ वैश्यो वा प्रव्रजेद् गृहात्। 'अग्नीनात्मनि संस्थाप्य द्विजः प्रव्राजितो भवेत्। इत्यादिवचनेषु द्विजशब्दप्रयोगात् त्रैवर्णिकाधिकारे संन्यासमिच्छन्ति। तत्रापि—'मुखजातानामयं धर्मो यद्विष्णोर्लिङ्गधारणम्। बहुजातोरुजातानां नायं धर्मः प्रशस्यते। ब्राह्मणानामय धर्मो यद् विष्णोर्लिङ्गधारणम्। राजन्यवैश्ययोर्नेति दत्तात्रेयमुनेर्वचः। इत्यादिवचनबलात् 'कषायदण्डादिलिङ्गधारणं क्षत्रियवैश्ययोर्निषिद्धम्' 'ब्रह्मणः प्रव्रजेद् गृहात्' इत्यादीनि पूर्वोक्तवचनानि क्षत्रियवैश्ययोः कषायदण्डनिषेधपराणि' इति माधवाचार्याः। एवं च ब्राह्मण एव संन्यासऽधिकारीतिमुख्यः पक्षः। यदि पक्षान्तरपरिग्रहेण तयोरप्यधिकारः स्वीक्रियते तदा केवलं संन्यासग्रहणे तयोरधिकारः। कषायवस्त्रधारणे तु नाधिकारः। शूद्रस्य तु न संन्यासेऽधिकारो नापि कषायवस्त्रधारणे।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

(दुर्गापाठक्रमः)

कवचार्गलाकीलकानां पौर्वापर्यक्रमविचारे इदानीमुपलभ्यमानपुस्तकेषु यः पाठक्रमस्तस्यादरणीयत्वेन मार्कण्डेयपुराणे कवचार्गलयोः पौर्वापर्येण पाठात् 'कृत्वा तु कवचं पुरा' इति विधिबलात् कवचस्य प्रथमपठनीयत्वेन तत्सहचरितस्यार्गलास्तोत्रस्य तदनन्तरमेव पठितत्वात् 'इदं स्तोत्रं पठित्वा तु' इति बलाच्च अर्गलास्तोत्रस्य महास्तोत्रपूर्वभावित्वश्रणात् योनिष्कीलां विधायैनामिति कीलकं विना स्तोत्रपाठस्य निषेधश्रवणाच्च कीलकस्यापि महास्तोत्रपूर्वभावित्वमिति प्रथमः कवचं ततोऽर्गला ततः कीलकमित्ययमेव पाठक्रमः साधीयानिति ।

(कुम्भपर्वनिर्णयः)

मकरे च दिवानाथे मेषगे च बृहस्पतौ ।
कुम्भयोगो भवेत्तत्र प्रयागेतीर्थनामके ॥ १ ॥
माघे मेषगते जीवे मकरे चन्द्रभास्करौ ।
अमावास्या तदा योगः कुम्भाख्यस्तीर्थनामके ॥ २ ॥
प्रयागे भास्करक्षेत्रे मकरस्थे रवौ सति ।
मेषे जीवे मृगे चन्द्रे कुम्भाख्यो योग उच्यते ॥ ३ ॥
मेषराशिगते जीवे मृगस्थौ चन्द्रभास्करौ ।
माघेऽमायां रविक्षेत्रे कुम्भपर्व तदोच्यते ॥ ४ ॥

मेषस्थे जीवे कुम्भपर्व—इत्येतत्साधकानि पूर्वोक्तवचनानि ।

अथ वृषगे गुरौ कुम्भपर्व इत्येतत्साधकानि वचनानि—

मकरे च दिवानाथे वृषराशिगते गुरौ ।
प्रयागे कुम्भयोगो वै माघमासे विधुक्षये ॥ १ ॥
मकरे च दिवानाथे वृषगे च बृहस्पतौ ।
कुम्भयोगो भवेत्तत्र प्रयागे चातिदुर्लभः ॥ २ ॥

सं० १९५०, सं० १९६२, सं० १९७४ और १९८६ में प्रयाग में कुम्भ हुआ । इन संवतों में १९५० को छोड़ सभी में (माघ में) वृष के बृहस्पति थे । केवल ५० में मेष का था परन्तु ५० में भी आषाढ से पौष तक वृष का बृहस्पति होता हुआ फिर वक्री हो मेष में चलागया था ।

सं० १९३८ में मेष में कुम्भ था । यह भी कार्तिक में वृष का था । फिर वक्री होकर मेष में गुरु गया था । इस प्रकार उभयथा वचन मिलनेपर विकल्प ही शरण होती है । फिर भी अधिक शिष्टसंप्रदाय से बृहस्पति जब वृष के हों तभी कुम्भ मानना ठीक है । इसी को लेकर

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

सं० १९९८ में कुम्भ हुआ। और बारह वर्ष भी उसी साल पूरे हुए। यह कुम्भ बारह बारह वर्ष पर होता भी है।

(कुशकण्डिका)

विवाहादिकर्मसु विवाहहोमेनुष्ठिते पुनः कुशकण्डिकानुष्ठानं विना होमादिकर्तुं न शक्यते। कुशकण्डिकाकरणस्याग्निसंस्काररूपत्वेन यत्कर्मोद्देशेन ये संस्कारास्तस्मिन्नग्नावनुष्ठितास्तादृशकर्मसमाप्त्यनन्तरमेव तेषामपि संस्काराणां नाशात्पुनः कर्मान्तरानुष्ठानार्थं कुशकण्डिकान्तरमवश्यमनुष्ठेयमेवेति।

(देशानुसारकर्मकरणे न क्वापि हानिः)

'येषु स्थानेषु यच्छौचं धर्माचारश्च यादृशः। तत्र तत्रावमन्येत धर्मस्तत्रैव तादृशः' इति वचनेन स्वकुलपरम्परायातं वैश्यः पञ्चदशाहेनेति स्मृत्यनुमोदितं पञ्चदशाहाशौचमेव कर्तव्यम्। दशाहाशौचस्य पक्षान्तरपरिगृहीतत्वेऽपि स्वकुलपरम्परायातशास्त्रीयमर्यादापरित्यागस्य सर्वथा निषिद्धत्वात्। येषां कुले दशाहाशौचं प्रवर्तते तैर्दशाहाशौचमेवानुष्ठेयमिति।

(शिखास्थापननिर्णयः)

चूडाकरणे सशिखं वपनं कार्यमुत शिखां वर्जयित्वा इति सन्देहे— यद्यपि सामान्यतो गृह्यसूत्राद्यवलोकनेन आपततः इदं प्रतिभाति यत् शिखां वर्जयित्वैव वपनं कार्यमिति, तथापि यथर्षिशिखां निदधाति यथैवैषां कुलधर्मः स्यात्' इति सर्वैरपि गृह्यकारैः चौलकर्मणि स्वस्वकुलधर्मानुसरणस्यावश्यकर्तव्यत्वबोधनात् 'येषां परंपराप्राप्ताः पूर्वजैरप्यनुष्ठिताः त एव तैर्नदुष्येयुराचारैः' इति स्मृतिवचनेनापि स्वस्य परम्पराप्राप्ताचारस्य परिपालनीयत्वबोधनाच्च येषां कुलपरंपरायां सशिखवपनमुण्डनमेव चौलकर्मणि अद्यावधि अनुष्ठितमासीत् ते इतोऽपि सशिखवपनमेवानुष्ठेयुः। तथानुष्ठानमेव तेषां कल्याणकरं स्वकुलाचारपरिरक्षणानि भवन्ति येषां तु शिखां वर्जयित्वा वपनं कुलपरम्पराप्राप्तं तैस्तदेवानुष्ठातव्यमिति प्रतीमः।

(शान्त्यनुष्ठानकालः)

शान्त्यनुष्ठानयोग्येषु मूलज्येष्ठाश्लेषाश्विन्येकनक्षत्रादिषु जातानां शान्त्यनुष्ठानकालः क इति विचारे संप्रवृत्ते शान्तेर्नैमित्तिकत्वात् निमित्तानन्तरमनुष्ठेयत्वमिति प्रतीयते तस्य च कालस्याशुचिग्रस्तत्वात् आशौचापगमानन्तरमेवानुष्ठानं प्राप्तम्। आशौचापगमश्च एकादशेऽहन्येव

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भवतीतितदहरेव जातेष्टिन्यायेन शान्त्यनुष्ठानं प्राप्तं वचनैरपेक्ष्येण । एवं चैकादशेऽहनि शान्तिविधायकं वचनमनुवाद इति मन्तव्यम् ।

किञ्च-सर्वासां शान्तीनां नामधेयात्पूर्वमेवानुष्ठानम् ।

'दुष्टनक्षत्रजातानां शान्तिं कृत्वा विधानतः ।

द्वादशैकादशे वाऽह्निनामकुर्यात्ततः परम्' इत्यादिना विहितम् । नामधेयं चैकादशेऽहनि सर्वशाखासु विहितम् । अत आदौ शान्तिस्ततो नामकर्म । पारस्करगृह्यसूत्रपरिशिष्टे—'मूलनक्षत्रे मूलविधानं कुर्यात्' इति मूलनक्षत्ररूपःकाल उक्तः सोऽपि मुख्यः कालो भवतु तच्छाखिनां न तु सर्वेषाम् । यच्च—'मुख्यकालं प्रवक्ष्यामि शान्तिहोमस्य यत्नतः । जातस्य द्वादशाहे तु जन्मर्क्षे च शुभे दिने' इत्यनेन प्रथमतो द्वादशाहो मुख्यकाल उक्तः स यस्य शाखिनो द्वादशाहे नामकरणविधिरुक्तस्तद्विषयः। अन्यथा सर्वत्रापि सामान्यतः शान्त्युत्तरनामधेये एकादशानुष्ठेयत्वस्य शान्त्युत्तरकालानुष्ठेयत्वस्य वा बाधापत्तेः । तद्बाधे प्रमाणाभावात् ।

हिरण्यकेशिगृह्यपरिशिष्टे-'अभुक्तमूलोत्पत्तावव्यवहितागामिमूलर्क्षे एकादशे द्वादशाहे वाऽन्यत्रे वा शुभनक्षत्रे गोमुखप्रसवशान्तिं विधाय मूलशान्तिमारभते' इत्युपक्रम्य 'एवं ज्येष्ठाश्लेषैकनक्षत्रजनने च शान्तिं मूलवत्कुर्यात्' इत्युपसंहारेणाऽपि-एकादशाहस्यापि मुख्यकालत्वमेवेति तत्रापि शान्तिः कर्तुं शक्यत इति ।

(होलिकादाहविचारः)

महाविपत्तिवशेन फाल्गुनशुक्लपूर्णिमायामनुष्ठेयस्य होलिकादाहस्य तदनन्तरदिने—अनुष्ठेयस्य वसन्तोत्सवस्य चानुष्ठानं न सञ्जातम् । तयोश्च मुख्यकाले व्यतीतेऽपि कालान्तरेऽनुष्ठानं भवितुमर्हति न वेति विचारे—अस्य कालादुत्तरः कालो गौणः सर्वस्य कर्मणः । मुख्यकालेऽपि कर्तव्यं गौणोऽप्यत्रेदृशो भवेत्' इत्यादिना पूर्णिमायां विहितस्योपाकरणादि-कर्मणः । पञ्चम्यादौ सिद्धत्वेन मथुरादिस्थले चैत्रकृष्णपञ्चम्यां धूलिका-ऽनुष्ठानस्य दृष्टत्वेनानन्तरमपि होलिकादाहः कर्तुं शक्यते ।

(आवश्यके किं कर्तव्यम्)

पराशरमाधवीये—आवश्यके शूद्रस्यापि केचित्पदार्था भोज्याः ।

अङ्गिराः—'गोरसं चैव सक्तूंश्च तैलं पिण्याकमेव च ।

अपूपान् भक्षयेच्छूद्राद्यच्चान्यत्पयसाकृतम् ॥

घृतं विना दुग्धमात्रेण साधितो गोधूमविकारः अपूपः । 'यच्चान्यत्प-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पसा कृतम्' इति चतुर्थचरणे अन्यत्पदस्य व्यर्थस्तमाभूदतोऽत्रापूपेऽपि-पयसाकृतमिति सम्बध्यते।

हारीतः—'कन्दुपक्वं स्नेहपक्वं पायसं दधिसक्तवः।

एतानि शूद्रान्नभुजो भोज्यानि मनुरब्रवीत्। कन्दुपक्वमपूपादि। कन्दुः स्वेदनी। कन्दुर्नास्वेदनी स्त्रियाम्'। अर्थात् अपूपादिसाधनं लोहपात्रं कढाई तई तावा इत्यादि प्रसिद्धम्। अत एव कान्दविक-इत्यस्यापूपिक इति पर्यायत्वेन कोशे उक्तः-आपूपिकः कान्दविक इति। एतदपि ये शूद्रान्नं भुञ्जते तैरेव भोज्यं न सर्वैः।

वीरमित्रोदये—'अशूद्रान्नभुज' इति पाठं स्वीकृत्य ये शूद्रस्य जलेन अग्निना च पक्वमन्नं न भुञ्जन्ति तैरपि—एतत् भोज्यमिति व्याख्यातम्। (घृतं तैलं तथा क्षीरं तथा स्नेहेन पाचितम्। (पराशरमाधवीय अ० ११ (पृ० २२३-२२६ एशियाटिक सोसाइटी) चतुर्विंशतिमते—'आरनालं तथा क्षीरं कान्दकं (वं) दधि सक्तवः। स्नेहपक्वं च तक्रं च शूद्रस्यापि न दुष्यति। 'अशृतं चारनालं च कान्दका दधिसक्तवः। फलानि माध्वीकमथो ग्राह्यमौषधमेव च॥ (पराशरमाधव-प्राय० अ० ११ श्लो० १३ पृ० २२६)। स्मार्तोल्लासे—'एकेनान्नं फलं द्वाभ्यां त्रिभिः कन्दं न दुष्यति। जलमग्निः लवणमेतैस्त्रिभिः सबद्धमन्नं दुष्यति, अन्यतरसवद्धं तु नैव दुष्यति।

हारीतवनानुसारेण पूरी आदि अपि पक्वान्नम्। स्मार्तोल्लासवचनानुसारेण जलं विना पक्वमन्नं पक्वान्नम्। अतो देशाचारेण व्यवस्थित विकल्पः। क्षीर [खीर] आदावप्यङ्गिरोवचने अपूपादिपदसमभिव्याहारात्तण्डुलादिवर्जं गोधूम एव पायसा साधितः पायस इत्युच्यते। अतस्तन्मने खीरादिकं न पक्वान्नम्।

'क्षत्रियश्चापि वैश्यश्च क्रियावन्तौ शुचिव्रतौ।
तद्गृहेषु द्विजैर्भोज्यं हव्यकव्येषु नित्यसः॥ (पारा० स्मृ० प्राय० अ० ११ श्लो० ९२)

मनुः—नदद्याच्छूद्रस्य पक्यान्नं विद्वान् श्राद्धिनो द्विजः।
आददीताममेवास्यास्मादवृत्तावेकरात्रिकम्॥
ततश्च श्रपयामास तदर्थं जनकोद्भवा।
रामादेशात्स्वयं साध्वी विनयेन समन्विता॥
तीर्थं चापि समागत्य श्राद्धं प्रारब्धवांस्तु सः।
आयाता ऋषयः सर्वे ये रामेण निमन्त्रिताः॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तान्मुनीनागतान् दृष्ट्वा वैदेही जनकात्मजा ।
रामाज्ञयान्नमादाय परिवेष्टुमुपागता ॥

(अन्नकूटोत्सवः)

अमाविद्धायां प्रतिपदि (पूर्वेद्युः) कर्तव्यः । उत द्वितीयाविद्धायां प्रतिपदि (परेद्युः) कर्तव्य इति संशये—स्मृतिपुराणादिषु कार्तिकशुक्लप्रतिपदि गोवर्धनगोपालपूजा विहिता, तत्र मुख्यगोवर्द्धनासम्भवे गोमयेनान्नकूटेन वा गोवर्द्धनं सम्पाद्य तत्र तयोः पूजा कर्तव्या, इदमेव पूजनमन्नकूटोत्सव इत्यप्यभिधीयते । तथा च धर्मसिन्धौ—'मुख्यगोवर्द्धनासम्भवे तस्यैवपूजा, तदसान्निध्ये गोमयेनान्नकूटेन वा गोवर्द्धनं कृत्वा तत्सहितगोपालपूजा कार्या' इति । स्मृतिकौस्तुऽभेपि—'इदमेव गोवर्द्धनपूजात्मकं कर्म अन्नकूटोत्सवत्वेन पाद्मे उक्तम्' इति । तच्च 'पूर्वविद्धा प्रकर्तव्या शिवरात्रिर्बलेर्दिनम्' इत्यादिवचनात्पूर्वविद्धप्रतिपद्येव कर्तव्यम् । एवं च सति यत्र गोवर्द्धनपूजा क्रियते गोपालमन्दिरादौ तत्रान्नकूटोऽपि पूर्वविद्धायामेव कर्तव्यः । यत्र त्वन्नकूटः कल्पितो न वा गोवर्द्धनगोपालपूजनादिकं क्रियते, केवलं भक्तानां प्रसादप्रदानार्थं बहोः कालात्संप्रदायवलम्ब्य क्रियते यथाऽन्नपूर्णाविश्वनाथमन्दिरादौ । तत्र पूर्वोक्तवचनस्याप्रवृत्तेः । तत्र च क्रियमाणस्यान्नकूटस्य दुर्गापूजादिरूपत्वेन तत्र पूर्वाह्णव्यापिन्या एव तिथेर्ग्राह्यत्वात्तथैवाचाराच्च द्वितीयदिने उदयव्यापिन्यां प्रतिपद्येवान्नकूटः । यदि च विश्वनाथमन्दिरादावपि गोपालपूजादिकं क्रियते तर्हि तत्रापि पूर्वदिने तत्कर्तव्यता । तत्रत्वेवमाचाराभावात्केवलस्यान्नकूटस्यान्नपूर्णाविश्वेश्वरपूजाङ्गत्वेनैव सम्पादनात्तस्य च गोवर्द्धनपूजात्वाभावाद् द्वितीयदिने एव तदनुष्ठानम् । 'प्रतिपद्दर्शसंयोगे क्रीडनं तु गवां मतम् । परविद्धेषु यः कुर्यात्पुत्रदारधनक्षयः' इत्यादि निषेधस्तु गोवर्द्धनगोपालपूजात्मकान्नकूटविषयक एव, न त्वन्नकूटसामान्यविषयकः । अतश्च द्वितीयदिनकरणे विरोधाभावात् आचाराच्च द्वितीयदिनमेवेति निर्णयः ।

[सिंहे गवादिप्रसूतानां शान्ति विचारः]

भानौ सिंहगते चैव यस्य गौः संप्रसूयते । मरणं तस्य निर्दिष्टं षड्भिर्मासैर्न संशयः । तथा सिंहराशौ गते सूर्ये गोप्रसूतिर्यदा भवेत् । पौषे च महिषी सूते दिवैवाश्वतरीतथा । एवम्, माघे बुधे च महिषी श्रावणे वडवा दिवा । सिंहे गावः प्रसूयन्ते स्वामिनो मृत्युदायकाः ॥' इत्यादिवचनेषु

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अनर्थकरगवादिप्रसूत्यधिकरणकत्वेन निर्दिष्टोमासः सौरश्चान्द्रो वा विवक्षित इति विशये गोःप्रसवाधारः सौरः, महिष्यादेस्तु चान्द्रोमासो विवक्षित इत्युत्तरं धर्म्यम्। गोप्रसवनिबन्धनानिष्टप्रदर्शनपरवचनत्रये सिंहशब्दसमुल्लेखदर्शनात् सौरमासस्यैव सूचनात्। महिष्यादिप्रसवभूतानिष्टप्रतिपादनपरके उक्तत्रये चान्द्रमासस्यैव जिघृक्षया पौषमाघादिपदोपादानात्। न च सर्वत्र एकविध एवमासो ग्राह्य इति निर्बन्धोयुक्तः। अनर्थौपयिकनिमित्तानामलौकिकत्वेन शास्त्रैकसमधिगम्यत्वात् तानि यथाशास्त्रमेव प्रतिपत्तव्यानि न त्वप्रतिष्ठिततर्कानुसारेणान्यथयितव्यानि। नचोभयोः पर्यायत्वं भिन्नार्थकत्वेनैव व्यवस्थापितत्वात् गोप्रसूतौ महिष्यादिप्रसूताविव चान्द्रोमासोनर्थकात्वेन विवक्षितः स्यात् तर्हि भाद्रे गावः इत्येवनिर्दिशेत्। एवं गोप्रसूताविव महिष्यादिप्रसूतावपि सौरश्चेद्विवक्षितः स्यात्तर्हि मकरे महषी सौम्ये कर्कटे वडवा दिवा इत्येवाभिदध्यात्। क्वचिद्राशेरभिधानं क्वचिच्चान्द्रमासाभिधानं च न तात्पर्यविशेषमन्तरास्वसरसतः सङ्गच्छते। एवं च गोप्रसूतौ सौरोमासः सिंहोऽनभिमतः। महिष्यादिप्रसूतौ च चान्द्रो माघादिमासस्तथेति चतुरः शास्त्रार्थः प्रतीयते। अतएव चान्द्रे भाद्रे सत्यपि सौरमासाभावे गोप्रसूतौ न दोषः असत्यपि चान्द्रे भाद्रे सति च सौरे तस्मिन् तत्प्रसूतौ दोष एव। एवं महिष्यादिप्रसूतावपि चान्द्रसौरमासादिव्यवस्था बोध्या। तत्रोक्तरीत्या चान्द्रे एव दोषो न सौरे मासे। देशाचारोपीदृशीमेव व्यवस्थां स्वहस्तयति। न च माघादिशब्दाः सौरचान्द्रादिमासानामविशेषण वाचकाः किन्तु—मघादिपरिगणितनक्षत्राणामन्यतमनक्षत्रयुक्तपौर्णमासीयुक्तमासवचनाः व्याकरणादिना तत्रैव तत्तत्पदव्युत्तिग्रहात्। तथाहि नक्षत्रेण युक्तः कालः सास्मिन्पौर्णमासीति संज्ञायाम् इति पाणिनेः सूत्रद्वयम्। एतदर्थश्च नक्षत्रेण मघादिना युक्ता पौर्णमासी माघी नक्षत्रयोगश्च न कार्त्स्न्येन विवक्षितः किन्तु एकदेशेनापि वर्तमानः स तद्व्यवहारहेतुः। अतएव "आदिपादार्थमात्रेण नक्षत्रस्यान्वये ह्यसौ। तिथिरर्धेऽपि संयुक्ता विपरीता न सा पुनः-इति शङ्करगीतापि संगच्छते। सा पौर्णमासी यस्मिन् मासे स माघादिपदवाच्यः संज्ञायामिति ब्रुवन् सूत्रकारः माघादिशब्दाश्चान्द्रमासे रूढ इति स्फुटं व्यानक्। अहो माघादिशब्दाः तत्र नक्षत्रान्वितपौर्णमासीमध्यशुक्लप्रतिपदादिदर्शान्तचान्द्रमास वंचनात् इति सिद्धम् नन्वेवं सौरमासेऽपि माघादिपदप्रयोगो बौधायनादिकृतो दृश्यते स कथं संग-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

च्छतामिति चेदत्र केचित्। यथा नित्याग्निहोत्रवाचकोऽग्निहोत्रशब्दो नैयमिकाग्निहोत्रे गौण्यावृत्त्या प्रयुज्यते यथा वा तैलशब्दस्तिलप्रभवस्नेहस्य वाचको गौण्यावृत्त्या तैलान्तरेऽपि प्रयुज्यते तद्वत् माघादिशब्दः सौरेमासे प्रयुज्यते इति न ततस्तत्र स मुख्यार्थक इति भ्रमितव्यम्। अनेकशक्तिकल्पनापेक्षया गौणवृत्तिस्वीकारे लाघवम्। सत्यांगतौ अनेकार्थत्वस्यान्याय्यत्वात्। अन्ये तु माघादिशब्दः चान्द्रेमासे एव मुख्यया वृत्त्या शास्त्रे प्रयुज्यते इति तत्र तच्छास्त्रस्था प्रसिद्धिः। सौरे मासे तु लौकिकः-प्रयोग इति तत्र तल्लौकिकीप्रसिद्धिः। सा च गौणत्वेनाप्युपपद्यते इति। तत्र। उभयत्र शास्त्रस्य प्रसिद्धेः समत्वात्। तथाहि सौरो मासो विवाहादौ यज्ञादौ सावनः स्मृतः। आब्दिके पितृकार्ये च चान्द्रो मासः प्रशस्यते। बौधायनोऽप्याह—कर्कटे तु हरौ सुप्ते शक्रध्वजक्रियान्विते॥ इति। तुलायां बोधयेद्देवीं वृश्चिके तु जनार्दनम्। द्विराषाढः स विज्ञेयः शेते च श्रावणे च्युतः- इति अच्युतशयनम्। क्वचित् कर्कटे क्वचित् श्रावणे उक्तम्। उभाभ्यां शब्दाभ्यामेकएवार्थोऽभिधीयते-इति चान्द्रे सौरे च मासे माघादिशब्दप्रयोगः स्फुट एवेति न शास्त्रप्रसिद्धिश्चान्द्रे एव किन्तु उभयत्र समेति न सौरे मासे गौण्यावृत्त्या तत्प्रयोगसमर्थनं युज्यते विनिगमनाविरहात्। किन्तु उभयत्रैव मुख्यावृत्तिर्माघादिपदस्य मासशब्दस्यापि ईदृश्येव व्यवस्था सङ्कल्पवाक्ये मासपक्षतिथ्युल्लेखस्यावश्यकत्त्वेन दैवपितृकार्यानुसारेण माघादिमासे इत्यादियोजनाया आवश्यकत्वेन माघादिवन्मासस्याप्युभयत्र शक्तिः स्वीकार्या। गवादिपदवदनेकशक्तिस्वीकारे बाधकाभावात्। पक्षौ पूर्वोत्तरौ शुक्लयोगे मासस्तु तावुभौ-इत्यसरोक्तिर्यद्यपि चान्द्रमास एवानुकूला तथापि उभयत्र अथवा सौरसावननक्षत्रचान्द्रमासेषु रूढ एव मासशब्दः स्वीकार्य इत्याहुः। वस्तुतस्तु माघादिशब्दानां चान्द्रे मासे एव मुख्यावृत्तिः उक्तपाणिनिसूत्रानुरोधेन तत्र संज्ञायामिति रूढिं तेषां तत्र स्फोटयति गौण्यावृत्त्यान्यत्र प्रयुज्यमानो न शास्त्रार्थमाखिलयतीतिसंक्षेपार्थः।

[श्वेतयवाङ्कुरशान्तिप्रकारः]

शंखः—इषे चैत्रे जनाः सर्वे कुर्वन्ति शक्तिपूजनम्। तस्याग्रे शुद्धदेशात्तु गृहीता मृत्तिकास्तरेत्॥१॥ सेतुस्तस्या दृढां कृत्वा तत्र बीजानि निर्वपेत्। यवान्पुष्टान् गृहीत्वाथ विविधान्नं न निर्वपेत्॥२॥ शुद्धा यवानवाणैश्च मन्त्रयित्वा विकीरयेत्। असितः तद्दिने चेत्प्ररोहन्ति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

धनमायुर्हराभवेत् ॥ ३ ॥ द्वितीये दृश्यते शस्यं धनदं कीर्त्तिदं भवेत् । तृतीये दृश्यते धान्यं सर्वसिद्धिविधायकम् ॥ ४ ॥

देवलः—हरिताः कीर्त्तिदा शस्याः पीता लक्ष्मीः प्रदायका ॥ कृष्णाश्च पाटलाः श्वेता धनमायुर्हरा स्मृताः ॥

कात्यायनः—दुर्गायाः पुरतः शस्यं ज्वालारूपेण ते स्मृताः। ज्वालायां यवमध्ये तु पृथक्श्वेतो भवेद् यदा । अग्न्यादिस्तेयतो दुःखं विदेशाद् स्वजनाद् भयम् ।

मार्कण्डेयः—यवांकुराश्च ज्वालाया शिरःकेशाः प्रकीर्त्तिताः । तच्छ्वेतत्वनिवृत्त्यर्थं शान्तिं वैराजिकं चरेत् ॥

१ इदं विष्णुर्विचक्रमेत्रेधानिदधे पदम् । समूढमस्य पा सुरे स्वाहा ॥
२ त्रीणिपदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः । अतो धर्माणि धारयन् ॥
३ विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पसे। इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥
४ तद् विष्णोः परमंपद सदा पश्यन्ति सूरयः । दिवीव चक्षुराततम् ॥
५ जातवेदसे सुनवामसोममरातीयतो निदहातिवेदः। सनः पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिंधुः दुरितात्यग्निः ॥

मंत्रान्ते च नमो ब्रूयाद् स्वाहान्ते च निगद्यते । शंखः-वैराजं नामशान्तिश्च ग्रहयज्ञसमन्विता । सप्तशती समायुक्ता कृत्वा विघ्नानि नाशयेत् । देवलः— शान्तिं कृत्वाथ वैराजं पश्चात् शस्यं खनेद् बुधः ॥ गंधादिभिश्च सम्पूज्य सुवर्णस्य शलाकया । खनेद् वा राजवैन्यैः देव्यास्तं केशस्वरूपिणम् । स्वर्णैर्वा राजते केशे वेष्टयित्वा तु धूपयेत् । मार्कण्डेयः-भुजे कण्ठे शिरोदेशे यो धारयति चादृतः । तस्य दर्शनमात्रेण भूता वै ब्रह्मराक्षसाः । वेतालाप्रेतडाकिन्यः शाकिन्यस्तस्करादयः । विषभूतज्वराग्न्यादि विनश्यति न संशयः । जृंभणं दुष्टदमनं भूतप्रेतनिवारणम् । इति रुद्रयामलोक्तशान्तिपटले श्वेतयवोत्पत्तिशान्तिसंपूर्णम् ।

[अभिषेके विचारः]

बिवाहमध्ये वरकर्तृकवधूमूर्द्धाभिषेकाङ्गकः आपः शिवा इत्यादिको मन्त्रो वरेणैव पठनीयः। यद्यपि विशेषेण सूत्रकारैरेवं न स्वकण्ठत उक्तं तथापि विवाहप्रकरणपठितानां मंत्राणां वधूवरान्यतरपाठ्यत्वमेव सर्वसूत्रकारसम्मतम् । भाष्यकारैरपि तथैवभाषितं पद्धतिकारैश्च तथैवोक्तम् । प्रकृतमन्त्रविषयेऽपि- आपः शिवा इत्यादि मन्त्रेण वरो मूर्द्धन्यभिसिञ्चति इत्येव कर्कादिभिरुक्तम् । लाजहोमे मन्त्रत्रयं यसू स्या-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वेक्षणे सकृत्। भगाय चैकमंत्रश्च कन्या पठति पञ्चकम्॥ ध्रुवदर्शनकाले च षष्ठश्चैव उदाहृतः। कन्यावस्त्रपरीधाने तथा चैवोत्तरीयके॥ तथा समीक्षाकालेऽपि चतुर्निष्क्रमणे गृहात्। अश्मन्यारोहणे चैव हस्तग्राहे तथैव च॥ सप्तपद्यां तथा चैव वरमूर्द्ध न्यभिषेचने। हृदयालंभने चैव तथैव चाभिमंत्रणे। दृढपुरुषे क्रमेणैव एतान्मन्त्रान्वरः पठेत्। इति रेणुदीक्षितोऽपि। तथापि सर्वोऽयं विषयोऽधीतब्राह्मणविषयः नानधीतब्राह्मणस्य क्षत्रियवैश्ययोश्च विषयः सामर्थ्यात्। अद्यत्वे प्रायः क्षत्रियादीनामध्ययनाभावात्। यदि तु दैवान्मानुषाद्वा प्रतिबलात् अनुपनीतयोः क्षत्रियवैश्ययोर्विवाहो भवेत् तत्र विवाहे तु सुतरां मंत्रपाठेऽनधिकारात् मंत्राणामृत्विजामपि पाठो भवितुमर्हति। अतोऽनुपनीतत्वात् अनधीतत्वात् शिष्टसमाचारात्। 'विवाहे यो विधिः प्रोक्तो मन्त्रादाम्पत्यवाचकाः। परन्तु तान् जपेत् सर्वान् ऋत्विग्राजन्यवैश्ययोः॥ इति गृह्यासङ्ग्रह वचनबलाच्च वैवाहिकानां मंत्राणामृत्विजाऽपि पाठकरणप्रतीतेः प्रकृतस्याप्यभिषेकमंत्रस्य वरातिरिक्तेन ऋत्विजादिनापि पाठे न कमपि दोषं पश्याम इति।

(मूर्ति के पुनः स्थापनपर विचार)

दारवीं दाहयेद्वह्नौ शैलजां प्रक्षिपेज्जले।
धातुजां रत्नजां वाऽपि अगाधे वा जलेऽम्बुजौ॥
यानमारोप्य जीर्णाङ्गं छाद्य वस्त्रादिना ददेत्।
वादित्रैः प्रक्षिपेत्तोये गुरवे दक्षिणां दहेत्॥
यत्प्रमाणा च यद्द्रव्या तन्मनां स्थापयेत्तद्दिने।

(पूजनारम्भमें जानने योग्य आवश्यक बातें)

ईश्वरसंहितायाम्—

देवाश्रमार्चनादीनां प्रायश्चित्तं तु लोपतः।
पूजालोपे चाष्टशतं जपे द्विगुणपूजनम्॥
पञ्चोपनिषदैर्मन्त्रैर्हुत्वा ब्राह्मणभोजनम्।
सूतिकान्त्यजकोदक्या स्पृष्टे देवं शतं जपेत्॥
पञ्चोपनिषदैः पूजां द्विगुणं स्नानमेव च।
विप्रभोज्यं होमलोपे होमस्नानं तथाऽर्चनम्॥
होमद्रव्ये मूषिकाद्यैर्भक्षिते कीटसंयुते।
तावन्मात्रं परित्यज्य प्रोक्ष्य देवादिपूजयेत्॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अङ्कुरार्पणमात्रन्तु च्छिन्नं भिन्नं परित्यजेत् ।
अस्पृश्यैश्चैव संस्पृष्टे अन्यपात्रे तदर्पणम् ॥
दैवमानुषविघ्नघ्नं पूजाकाले तथैव च ।
मन्त्रद्रव्यादिव्यत्यासे मूलं जप्त्वा पुनर्जपेत् ॥
कुम्भे नष्टे शतजपो देवे तु पतिते करात् ।
भिन्ने नष्टे चोपवासः शतं होमाच्छुभं भवेत् ॥
कृते पापेऽनुतापो वै यस्य पुंसः प्रजायते ।
प्रायश्चित्तं तु तस्यैकं हरिसंस्मरणं परम् ।
'परित्यक्तानि बिम्बानि धातुद्रव्योद्भवं विना ।
जलाशये ह्यगाधे वा समुद्रे विधिना क्षिपेत् ॥
भूमौ वा निखनेद्विप्रा देशकालानुसारतः ।
उत्कृष्टानां हेमरजताभ्रजानां विशेषतः ॥
नोचितःस्यात्परित्यागः तस्मात्सन्धानमाचरेत् ।
प्रयत्नेनाप्ययोग्यत्वे परित्यागं समाचरेत् ॥
परित्यक्तं तु वा द्रव्यं द्रवीकृत्य यथाविधि ।
तत् द्रव्येण यथापूर्वं बिम्बकर्म समापयेत् ॥
'अतीते प्रार्थिते काले कर्त्रा प्रासादबेरयोः ।
निर्माणे स्नपनं कुर्यादुत्तमं शास्त्रचोदितम् ॥
पश्चादभ्यर्थयेत्कालं वाञ्छितं तत्समापने ।
पीठभङ्गे तथान्यस्मिन्कल्पिते योजयेद्दृढम् ।
प्रतिमा पीठयोरष्टबन्धविश्लेषणेऽपि च ।
अष्टबन्धं पुनः कृत्वा संप्रोक्षणमथाचरेत् ॥ इत्यादि ।
'चौरनद्यादिवेगाद्यैरतिनष्टे तु मानुषे ।
बिम्बे पश्चात्प्रकुर्वीत पूर्ववद्वान्यथा तु वा ॥
ततस्तु बिम्बस्यास्पृश्यस्पर्शादौ मुनिपुङ्गवाः ।
प्रायश्चित्तं प्रवक्ष्यामि शृणुध्वमवधानतः ॥
अस्नातो देशिकश्चैवं चाण्डालाद्युपघातितः ।
केशास्थ्यद्यशुचिस्पृष्टस्त्रियं गत्वा ह्यनाप्लुतः ॥
स्पृशचेद्भगवद्बिम्बं स्नपयेन्नवभिर्घटैः ।
आचरेच्छान्तिहोमं च शतवारं जपेन्मनुम् ॥
'मार्जारमूषिकासर्पमण्डूकसरटादिभिः ।
गोलीभिश्चापि खद्योतैः बिम्बसंस्पर्शने सति ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्नपयेन्नवभिः कुम्भैर्देवदेवं मुनीश्वराः ।
पिपीलिकाद्यैर्बिम्बस्य स्पर्शदोषो न विद्यते ॥
बिम्बे गोमुखसंस्पृष्टे तथा वै वर्षबिन्दुभिः ।
अधमाधममार्गेण स्नाप्य शान्तिं समाचरेत् ॥
स्नानैश्च गर्दभै रुष्ट्रैर्वराहैश्च शिवाशशैः ।
बिम्बे स्पृष्टे स्नापयेत्तमुत्तमोत्तममार्गतः ॥
सहस्रसंख्यया शान्तिहोमं च जपमाचरेत् ।
एतैर्गर्भगृहाभ्यन्तः प्रवेशे स्पर्शनेऽपि वा ॥
'अकृत्वैव गते पश्चात्काले द्वादशवार्षिके ।
पुनः प्रतिष्ठां कुर्वीत मूले बालाप्रये तु वा ॥
बिम्बे चौरादिभिर्नष्टे बालगेहे प्रमादतः ।
तदेवापाद्य तामर्चां प्रतिष्ठाप्य यथाविधि ॥
उत्तमं स्नपनं कृत्वा शान्तिहोमं समाचरेत् ।
चौरैरपहृतं बिम्बं पुनः प्राप्तं यदि द्विजाः ॥
पुनः प्रतिष्ठां कुर्वीत नयनोन्मीलनं विना ।
स्वस्थानाच्चलिते तस्मिन् हेतुना येन केन चित् ॥
यथापूर्वं प्रतिष्ठाप्य स्थापयेत्पुरुषोत्तमम् ।
सर्वं बालगृहे कार्यं नित्यनैमित्तिकादिकम् ॥
'जीर्णोद्धारेऽपि कर्तव्यं पूर्ववन्मुनिपुङ्गवाः ।
व्यत्यासं नैव कुर्वीत बहुबेरैकबेरयोः ॥
'शालग्रामशिलाबिम्बं भिन्नं भग्नं बृहत् त्वनम् ।
अल्पक्षतं च सौवर्णैः पट्टैर्दृढतरं यथा ॥
बन्धयेच्च तथैवैषु स्वयं व्यक्तादिकेष्वपि ।
शिलामयेषु बिम्बेषु भिन्नं भग्नं च भोजयेत् ॥
सुवर्णनिर्मितैः पट्टैर्यथा दृढतरं भवेत् ।
यद्वा तदङ्गं हैमेन कृत्वा सम्यङ् नियोजयेत् ।
दारुजे लोहजेष्वेवं स्वयं व्यक्तादिकेष्वपि ।
भेदे ह्यङ्गे समाधिः स्यात्स्वयं व्यक्तादिकेष्वपि ॥
रत्नजेऽपि समाधानमेवमेव समाचरेत् ।
मृन्मये मूलबिम्बे तु जीर्णे वाथ जलादिभिः ॥
हीनाङ्गे वा तथा कुर्यात्सन्धानन्तु प्रयत्नतः ।
एवं वर्णविहीनेऽपि सन्धानन्तु समाचरेत् ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मृत्तिका शूलरज्वादीन्न कदाचित्परित्यजेत् । इत्यादि ।
'स्वयं व्यक्तादिबिम्बानि यादृशानि भवन्ति हि ।
लक्षणैश्च प्रमाणैश्च युक्तानि रहितानि वा ॥
उत्कृष्टलोहजातानि अपकृष्टोस्थितानि वा ।
तादृशानि भवन्त्येव न कुर्यादन्यथा पुनः ॥
न लक्षणान्तरं कुर्यान्न प्रमाणान्तरं पुनः ।
न तु द्रव्यान्तरं चैव न तु कुर्यात्क्रियान्तरम् ॥
मन्त्रान्तरं न कुर्वीत सर्वं कुर्याद्यथापुरम् ।
कुर्याच्चेल्लक्षणादीनां विपर्यासं मुनीश्वराः ॥
राज्ञो राष्ट्रस्य सर्वेषां प्रत्यवायो महान्भवेत् ।

(प्रतिष्ठाकर्ममध्यमें आचार्य यजमान आदि के कलहोत्पन्न में शान्तिकथन)

प्रतिष्ठाकर्मकालादावाचार्ययजमानयोः ।
ऋत्विगाचार्ययोर्वापि सञ्जाते कलहे द्विजाः ॥
कर्म निष्फलतां याति शान्तिहोमं समाचरेत् ।
नमस्कृत्याभ्यर्च्य गुरुं क्षम्यतामिति चोच्चरेत् ॥
दोषाणामेवमादीनां संभवेऽपि मुनीश्वराः ।
तत्तच्छान्तिं प्रकुर्वीत शान्तिहोमजपादिभिः ॥

(कलहोत्पन्नमें शान्ति कथन)

अद्भुतसागरे—

कलहाकलहं गेहे करोत्यविरतं नृणाम् ।
कुटुम्बनाशहेतुं च तत्प्रशान्तिं निबोध मे ॥
कुटुम्बस्यक्षये विद्वान् शुभकर्म समारभे ।
आग्नेयीं कारयेच्छान्तिं विशेषः श्रूयतामिह । इत्यादि ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

(अस्पृश्यस्पर्शने शिवमन्दिरादौ मूर्तिस्पर्शने च कर्तव्याकर्तव्यविचारः)

अस्पृश्या द्विविधाः—शुचयः अशुचयश्च। तत्र 'स्नात्वा शुचिः कर्माणि कुर्वीत' इतिस्मृतिबलात् ये स्नानादिकमनुष्ठाय शुचयः सन्ध्यातर्पणदेवपूजादिकमनुतिष्ठन्ति ते परैरशुचिभिरस्पृश्याः।

यदि मोहादन्येन वा कारणेन तेऽशुचयस्तान् स्पृशेयुस्तदा ते अशुचिसंस्पृष्टाः सन्तः स्वयमप्यशुचयो भवन्ति। अशुचिसम्बन्धेन शुचिनोऽप्यशुचित्वस्मरणात्। 'शुचिमध्वरं देवा जुषन्ते, शुचिकामा हि देवाश्शुचयश्च, तदेषाऽभिवदति,—"शुची वो हव्या मरुतश्शुचीनां शुचिं हिनोम्यध्वरं शुचिभ्यः। ऋतेन सत्यमृतसाप आयछुचिजन्मानश्शुचयः पावका इति" (बौ० ध० प्र० १ अध्या० ६ खं० १३ सू० १-३)

एवञ्च देवपूजादिकं कुर्वन्तो न कैरप्यस्पृश्यैरशुचिर्वा पुरुषैरशुचिर्वा वस्तुभिः स्पर्शमर्हन्ति।

अशुचयोऽस्पृश्या अपि द्विविधाः—केचिद् ब्रह्महत्यादिनिषिद्धपापकर्तारः स्वकर्मभिरस्पृश्याः, अन्ये च प्रतिलोमजाः चाण्डालादयो जन्मना अस्पृश्याः।

तत्र प्रथमे तावत् यावत्प्रायश्चित्तानुष्ठाने न शुध्यन्ति तावत्पर्यन्तमस्पृश्या एव। कृतप्रायश्चित्तानामपि येषां व्यवहार्यता स्मृतिषूक्ता तैः स्पर्शनादिसंव्यवहारो भवितुमर्हति।

येषां कृतप्रायश्चित्तानामपि संव्यवहारो निषिद्धः। यथा ब्रह्मघ्नः—"अथ भ्रूणहा श्वाजिनं खराजिनं वा बहिर्लोम परिधाय पुरुषशिरः प्रतीपानार्थमादाय, खट्वाङ्गं दण्डार्थे कर्मनामधेयं प्रब्रुवाणश्चङ्क्रम्येत को भ्रूणघ्ने भिक्षामिति, ग्रामे प्राणवृत्तिं प्रतिलभ्य शून्यागारं वृक्षमूलं वाऽभ्युपाश्रयेन्नहिम आर्यैः संप्रयोगो विद्यते, एतेनैव विधिनोत्तमादुच्छ्वासाच्चरेत्। नाऽस्यास्मिँल्लोके प्रत्यापत्तिर्विद्यते, कल्मषं तु निर्हण्यते' (आप० ध० प० १ क० २८,२९ सू० २१,१) इत्यादिना पापनिर्वृत्तिरेवोक्ता। तैरपि सह संस्पर्शादिव्यवहारो न कर्तुं शक्यते। परन्तु ते 'अथाभिशस्ताः समवसाय चरेयुर्धार्म्यमिति सांशित्येतरेतरयाजका इतरेतराध्यापका मिथो विवहमानाः' (आप० धर्म० प० १ कं० २९ सू० ८) इति शास्त्रात्परस्परं विवाहादिकं संव्यवहारं च कुर्युः। द्वितीये च ये प्रतिलोमजाश्चाण्डालादयस्ते चतुर्भिरपि वर्णैरस्पृश्या एव। तेषां स्पर्शने तु

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'स्पृष्ट्वैवाशुचिर्भवति' इति स्पृष्ट्वा यावत्सचैलं न स्नाति तावदशुचिरेव। अतश्च एतेषां स्पर्शने स्प्रष्टुरेव कर्मानुष्ठानयोग्यताऽपैति। पूर्वापेक्षया इदमत्र वैलक्षण्यम्। पूर्वत्र स्पृश्योऽशुचिर्भवति, अत्र स्प्रष्टा अशुचिर्भवति। सत्यप्येषामस्पृश्यत्वे पूर्वत्रोत्तमत्वबुद्ध्या स्पर्शो निषिद्धध्यते।

ते चास्पृश्याः चण्डाल-श्वपाक-मागध वेणु-पुक्कसप्रभृतयो बोधायनोक्ताः- शूद्राद्वैश्यायां मागधो ब्राह्मण्यां चण्डालः अग्राज्जातः क्षत्र्यांश्वपाकः, वैदेहका दम्बष्ठायां वैणः, निषादाच्छूद्रायां पुल्कसः, शूद्रान्निषादायां कुक्कुटः, वर्णसङ्करादुत्पन्नान्व्रात्यानाहुर्मनीषिणः (बौ० ध०१, ९, ५-१५)

'ते चापि बाह्यान्सुबहूंस्ततोऽध्यधिकदूषितान्।
परस्परेण दारेषु जनयन्ति विगर्हितान्॥
यथैव शूद्रो ब्राह्मण्यां बाह्यं जन्तुं प्रसूयते।
तथा बाह्यतरं बाह्यश्चातुर्वर्ण्ये प्रसूयते॥
प्रतिकूलं वर्तमाना बाह्या बाह्यतरान् पुनः।
हीना हीनान्प्रसूयन्ते वर्णान्पञ्चदशैव तु॥
चैत्यद्रुमश्मशानेषु शैलेषूपवनेषु च।
वसेयुरेते विज्ञाना वर्तयन्तः स्वकर्मभिः॥
चण्डालश्वपचानान्तु बहिर्ग्रामात्प्रतिश्रयः।
अपपात्राश्च कर्तव्या धनमेषां श्वगर्दभम्॥
वासांसि मृतचेलानि भिन्नभाण्डेषु भोजनम्।
कार्ष्णायसमलङ्कारः परिव्रज्या च नित्यसः॥
न तैः समयमन्विच्छेत्पुरुषो धर्ममाचरन्।
व्यवहारो मिथस्तेषां विवाहः सदृशैः सह॥
अन्नमेषां पराधीनं देयं स्याद्भिन्नभाजने।
रात्रौ न विचरेयुस्ते ग्रामेषु नगरेषु च॥
दिवा चरेयुः कार्यार्थं चिह्निता राजशासनैः।
अबान्धवं शवं चैव निर्हरेयुरितिस्थितिः॥
बन्ध्यांश्च हन्युः सततं यथाशास्त्रं नृपाज्ञया।
बध्यवासांसि गृह्णीयुः शय्याश्चाभरणानि च॥

(मनुस्मृ० अध्याय १०) इत्यादिवचनैस्तेषां सर्वबाह्यत्वमेवावगम्यते।

एभिरेववचनैः तज्जातानां तत्पुत्रपौत्रप्रभृतीनां सर्वेषामपि तद्बाह्यत्वं, क्वचित् ततोऽपि बाह्यतरत्वं हीनतरत्वं चावगम्यते। अत एव

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ये इदानीमस्माभिरुपलभ्यन्ते चाण्डालादयस्ते तत्सन्तिजा एवेत्यस्माभिः परम्परयाऽवगम्यमानत्वादेतेषामपि बाह्यत्वमधमत्वं चेति सिद्ध्यति ।

एतेन ये कथयन्ति यत् अद्यत्वे परिदृश्यमाना न तादृशाश्चण्डाला इति न तेषां बाह्यत्वं सिध्यति ते प्रत्युक्ताः । यद्येतेषां न चाण्डालादावन्तर्भावस्तर्हि कुत्रान्तर्भावः । इमे तु न सच्छूद्रकोटौ परिगण्यन्ते न तैः सह व्यवहारः क्रियते पारस्परिक इति तु विदितमेव । अतश्च एतेषां सच्छूद्रेऽनन्तर्भावः सिद्ध्यति । अत एव चैतेषां बहिर्भाव एव ततोऽवगन्तव्यः । तत्र च प्रमाणं व्यवहार एव । यद्येवं नाङ्गीक्रियते तर्हि भवदुक्तौ वा किं प्रमाणम् । किं चास्माभिः पारस्परिकं शिष्टाचाररूपं व्यवहारं प्रमाणीकृत्य अद्यतनानां चण्डालानां चण्डालत्वमुच्यते । तैस्तु निर्मूलं यथेष्टं प्रमाणलेशं विनैव स्वबुद्ध्या किञ्चित्परिकल्प्यते ।

किञ्च स्मृतिकाराः आ च मनो आचनिबन्धकारेभ्यः सर्वेऽप्यद्यपरिदृश्यमानां जातिमेव परम्परया कृतप्रत्यभिज्ञां चण्डालजातिं व्यवहरन्ति । अतो मूलभूता यश्चण्डालजातेरुत्पन्नेयमपि सङ्करजातिश्चण्डालजातिरेवेत्यत्र नास्ति संशयः ।

एवं श्रुतिस्मृतिसिद्धचण्डालजातीयानां पुरुषाणां मन्वादिभिः सर्वत्र बाह्यत्वश्रवणात् वेदवैदिकविद्यासु चतुर्दशसंख्यास्वष्टादशसङ्ख्यासु वा सर्वथा न तेषामधिकारः, अतस्ता विद्या न तेभ्यो देयाः । यदि मोहाल्लोभाद्वा कश्चिदध्यापयति तेनाध्यापयिताऽपि पतति ।

"संवत्सरेण पतति पतितेन सहाचरन् ।
याजनाध्यापनाद्यौनात् न तु यानासनाशनात् ॥

(बौ० ध० प्र० २ ख० २ सू० २३) इति ।

अत्र गोविन्दस्वामी व्याख्या—यानासनाशनैः संवत्सरेण पतति, न तु याजनादिभिः संवत्सरेण, किन्तु सम्बन्धमात्रेण सद्य एव पततीत्यर्थः, अन्तरङ्गत्वाद्यजनादीनां, बहिरङ्गत्वाच्च यानादीनाम्, इति ।

एवमध्येताऽपि चाण्डालादिः स्वानधिकृतविद्याध्ययनात् न केवलं तज्जन्यैहिकामुष्मिकफलं प्राप्नोति किन्तु महादोषभागमपि भवति । अतो ये नाम कथयन्ति एतद्विद्याध्ययनेन तेषामुपकारो जायत इति न तद्युक्तियुक्तं शास्त्रीयं च । तेषां नरकपतनं विना कश्चन ऐहिकामुष्मिको वा उपकारो भवतीति न वयं विजानीमः ।

अतश्च येऽध्यापयितारस्तेषां न केवलमध्यापनजन्यं पातित्यं किन्तु

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

चाण्डालादीनामनर्हकर्मप्रवर्तनरूपोऽपि दोष एतान् स्पृशतीति पापद्वयभागिनस्ते।

पूर्वोक्तवचनबलादेव चाण्डालादिभिः साकं ये नाम अस्मदीया बालका एकस्मिन् आसनादावुपविश्याध्ययनादिकं कुर्वन्ति पाठशालासु तेऽपि संवत्सरेण पतन्त्येव।

"एकशय्यासनं पङ्क्तिर्भाण्डपङ्क्त्यन्नमिश्रणम्।
याजनाध्यापने योनिस्तथा च सहभोजनम्॥
नवधा सङ्करः प्रोक्तो न कर्तव्योऽधमैः सह।
संलापस्पर्शनिःश्वाससहयानासनाशनात्॥
याजनाध्यापनाद्यौनात्पापं संक्रमते नृणाम्।
सवंत्सरेण पतति पतितेन सहाचरन्॥

अतोऽस्मदीयबालकानां चण्डालबालकानां चात्यन्तहिंसाकरं कार्यमिदं कूटहिंसेत्यत्र कः सन्देहः। अनेनैव न्यायेन एतेषां मन्दिरप्रवेशनपि कूटहिंसैव। यतः प्राचीनमन्दिरेषु महर्षिभिः सिद्धकल्पैः प्रत्यक्षीकृतधर्मभिर्मन्त्रेण देवीः कला आकृष्य मूर्तिषु प्रतिष्ठापिताः।

अधुनाऽपि वैदिकैर्वेदोक्तमार्गेण यथाविधि मन्त्रैरेव सर्वत्र देवता आकृष्य स्थाप्यन्ते। अतो मन्त्रा कृष्टा देवता कलाः पतितादि चण्डालादिसम्बन्धेऽवश्यमपसरन्त्येवेति।

क्वचिन्मन्दिरे यदि चण्डालादिर्गच्छेत् तर्हि अवश्यं तदुचितं प्रायश्चित्तं कर्तव्यम्। स्पर्शने तु पुनः प्रतिष्ठैव समुचिता।
अतो मन्दिरादौ चण्डालप्रवेशनादिकमिति यत्तत् तत्रत्यदेवतोपरोधकं, पूजकानां पूजायामधिकृतानामशुचित्वापादनद्वाराऽनधिकारित्वापादकं, चण्डालादीनामप्यनधिकारिणामकार्यकरणे प्रवर्तनमिति सर्वथा कूटहिंसारूपेयं चेष्टा। इति।

(राजकार्ये यज्ञादौ चावश्यकतानुसारेण पुरोहितादीनां वरणम्)

कुलीनस्य स्वकुलपरम्पराप्राप्तं राज्यं निर्वोढुः क्षत्रियपुङ्गवस्य प्राचीनधर्मपरिपालने बद्धश्रद्धस्य राज्यकार्ये निरतिशयगौरवप्राप्त्यर्थं निर्विघ्नमनेकपुरुषीपर्यन्तं राज्यनिर्वहणानुवृत्तिसिध्यर्थं स्वदेशनिवासिनां जनानामानन्दप्रीतिद्वारा राजनि प्रीत्युत्कर्षसम्पत्त्यर्थमस्मदीयनीतिशास्त्रधर्मशास्त्राद्यनुसारेण गुरुपुरोहितान्वृत्वा यथा शास्त्रं तेषां मते स्थित्वा तद्द्वारा शान्ति-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कपोष्टिकादीनात्मरक्षार्थान्देशरक्षार्थांश्च धर्माननुष्ठाप्य शास्त्रानुसारेणैव तत्तत्काले तदुक्तयुक्तायुक्तविचारपूर्वकं राज्यनिर्वहणं परमो धर्मः।

एवं कुर्वता राज्ञो जनप्रीतिसम्पादनद्वारा स्वीयराज्यकार्यस्य सुखेन सञ्चालनं सिद्ध्यत्याचन्द्रार्कञ्च राज्यस्थितिस्तदभिवृद्धिश्च भवति तेन च महती श्रेयःप्राप्तिः कीर्तिलाभश्च भवति।

एवञ्च यदा राज्ञः श्रेयः परम्परालाभ ऐहिकामुष्मिकसुखप्राप्तिरूपः तादृशानां राज्ञा वरणीयानां गुर्वादीनां लक्षणं तेषां सङ्ख्या ये पूर्वं वृतास्तेषां यथासम्भवमपरित्याज्यता तेषामिति कर्तव्या च यथाशास्त्रं सप्रमाणमधोनिर्दिष्टा अवगन्तव्याः—

गुरुसेवनम्—'तद्विज्ञानार्थं सद्गुरुमभिगच्छेत्समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्' (मुण्ड० १।१२) 'तस्माद् गुरुं प्रपद्येत जिज्ञासुः श्रेय (आत्मवान्) उत्तमम्। शाब्दे परे च निष्णातं ब्रह्मण्युप समाश्रयन्। (श्रीमद्भाग०) वर्द्धयन्निह धर्मार्थौ सेवितौ सद्भिरादरात्। निगृहीतेन्द्रियः ग्रामः कुर्वीत गुरुसेवनम् (शुक्रनी० १।४६) इत्यादिना गुरुसेवनं विहितम्।

गुरुलक्षणञ्च—'सगुरुर्यः क्रियाः (या० स्म० १।३४) निषेकादीनि कर्माणि यः करोति यथाविधि। सम्भावयति चान्नेन सविप्रो गुरुरुच्यते, (मनु० २।१४२) इत्यादिवचनबलेन निषेकादिसंस्कारान् कृत्वा योऽध्यापयति स पित्रादिर्गुरुर्भवति ब्राह्मणानाम्। इतरेषां तु ब्राह्मण एव एतादृशकर्म कारयिता गुरुर्भवति।

गुरोरितिकर्तव्यता- इति कर्तव्यतात्वस्यगुरुलक्षणकथने नैव कथिता भवतीति तत एवावगन्तव्या।

गुरुसङ्ख्या—गुरुमेवाभिगच्छेदित्यादावेकवचनान्तस्यैव श्रवणात् अधिकसङ्ख्यायाः कुत्राप्यनुपलब्धेः प्रथमश्रुतसङ्ख्यायाः परित्यागे मानाभावाच्च एक एव गुरुर्भवति।

पुरोहितः—'वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः' शु० य० ९।२३) 'न वा अपुरोहितस्य राज्ञो देवा अन्नमदन्ति तस्माद्राजा यक्ष्यमाणं ब्राह्मणं पुरो दधीत देवा मे अन्नमदन्(ऐ० ब्रा० ८।५।१) 'नैनं पुरायुषः प्राणो जहाति आजरसं जीवति सर्वमायुरेति न पुनर्म्रियते यस्यैवं विद्वान् ब्राह्मणो राष्ट्रगोपः पुरोहितः) (ऐ० ब्रा० ८।५।३) 'ब्राह्मणञ्च पुरोदधीत विद्याभिजनवाग्रूपपवित्रः इति शीलसम्पन्नं न्यायवृत्तं तपस्विनं तत्प्रसूतः कर्माणि कुर्वीत ब्रह्मप्रसूतं हि क्षत्रमृद्ध्यते न व्यथत इति विज्ञायते'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

(गौ० ध० सू० ११।११) राजा पुरोहितं धर्मार्थकुशलं स ब्राह्मणान् नियुञ्ज्यात् (आ० धर्म० ५।१०।१६।१७) तस्माद् गार्हस्थ्ये नैयमिकेषु पुरोहितं दध्यात् विज्ञायते ब्रह्मपुरोहितं राष्ट्रमृद्ध्नोति' (वा० स्मि० ध० १९।३।१-४) 'पुरोहितं च कुर्वीत दैवज्ञमुदितोदितम्' (या० स्मृ०) पुरोहितमुदितोदितकुलशीलं कुर्वीत' (कौ० अ० ९) 'पुरोहितप्रधानो हि राजाराज्यमवाप्नुयात्' (म० भा०) इत्यादि श्रुतिस्मृतिपुराणवाक्यैः पुरोहितस्यावश्यकत्वम् । उक्तवचनेषु पुरोहितमित्येकत्वसंख्याश्रुतेर्मुख्य-तया एक एव पुरोहितः । अयं पुरोहित एव आचार्य इत्यभिधीयते । 'नीतिशास्त्रास्त्रव्यूहादिकुशलस्तु पुरोहितः । सैवाचार्यः पुरोधाय शापानुग्रहयोः क्षमः । (शु० नी० १।७९) इति वचनात् एतदपेक्षया अन्याचार्यो मन्वामन्वादावुक्तः । 'उपनीय तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेत् द्विजः । सकल्पं स रहस्यञ्च तमाचार्यं प्रचक्षते' (मनु० १।१४१) उपनीयदद्वेदमाचार्यः स उदाहृतः' (या० स्मृ० १।३४) इति निषेकादीन् संस्कारान्कृत्वा यो वेदमध्यापयति स गुरुः) उपनयनमात्रं कृत्वा योऽ-ध्यापयति स आचार्य इति गुर्वाचार्ययोर्भेदः प्रदर्शितः स्मृतिषु । अय-मपि ब्राह्मण एव भवितुमर्हति । उदाहृतवचनेन पुरोहिताचार्ययोरेकत्वं प्रतीयते तथापि-एतदतिरिक्तोऽन्योऽपि कश्चिदाचार्यः श्रौतस्मार्तादिकर्म सम्पादनाय नियोज्यः । पुराणादौ तथा बहुत्र दर्शनात् । 'ऋत्विक्पुरो-हिताचार्यैः' (इति मनुस्मृतौ १।३३३) पृथक् तया निर्देशाच्च ।

ऋत्विक्—'यथोक्तमृत्विजोऽन्यानि' (गौ० ध० १८।१८) 'श्रौत-स्मार्तक्रियाहेतोर्वृणुयादेव चर्त्विजः । यज्ञाँश्चैव प्रकुर्वीत विधिवद्भू-रिदक्षिणान्' (याज्ञ० स्मृ० १।३१२) । 'अग्न्याधेयं पाकयज्ञानग्निष्टो-मादिकान् मखान् । यः करोति वृतो यस्य स तस्यर्त्विगिहोच्यते । (मनु) इत्यादिवचनैर्यस्य यस्य कर्मणो यावन्त ऋत्विजो विहितास्तावतस्तल्ल-क्षणलक्षितान् तत्तत्कर्मकाले वृणुयात् । यावत्संभवं तेषां परित्यागोऽपि न कार्यः । 'ऋत्विगाचार्यौ नाति चरितव्यौ' (शास्त्रदीपिका) ऋत्विगाचार्यो-त्रयाजकानध्यापकौ हेयावन्यत्र हानात् पतति (वा० ध० १९।३,४) इति ।

ऋत्विक्संख्या— 'तस्यै तस्याग्निहोत्रस्य यज्ञक्रतोरेक ऋत्विक्' 'दर्शपूर्णमासयोश्चत्वार ऋत्विजः' (तै० सं० २।३।६) 'चातुर्मास्यानां पञ्च, निरूढपशोः षट्, ज्योतिष्टोमे षोडश, सौत्रामण्यां पञ्च इति सोम-विकारेषु-अश्वमेधादिषु च ज्योतिष्टोमवत् ।

ग्रहशान्त्यादौ —'नवग्रहमखे कुर्यात् ऋत्विजश्चतुरः शुभान् । 'तद्वच्च

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दश वाष्टौ वा लक्षहोमे तु ऋत्विजः। कोटिहोमे सहस्रन्तु ऋत्विजो वा विमत्सराः॥ (मत्स्यपु०) इति। देवप्रतिष्ठातुलादानादौ तु–'द्वात्रिंशत् षोडशावापि ह्यष्टौ वा श्रुतिपारगाः। ज्येष्ठमध्यकनिष्ठेषु लोकपालाः प्रकीर्तिताः (मत्स्यपु०)। एवं वृतैराचार्यादिभिः शान्तिपौष्टिकादिकं श्रेयस्कामेन राज्ञाऽवश्यमनुष्ठेयम्। गौतमधर्मसूत्रादौ तथा दर्शनात्।

ज्योतिर्वित्—यानि च दैवोत्पातचिन्तका ब्रूयुस्तान्याद्रियेत (गौ० ध० ११।१५) इति बहुत्वश्रवणात्। 'न चैकाकिना शक्यतेऽहर्निशमधारयितुं निमित्तानि तस्मात्सुभृतेनैव दैवज्ञेनान्येऽपि तद्विदश्चत्वारः कर्तव्या' (वारा०) इति वचनाच्चावश्यकप्रधानज्योतिर्विदतिरिक्ता-अन्येऽपि ज्योतिर्विदसंख्यायां यथासंभवं स्थापयितुं युज्यन्ते।

पण्डितः—'वर्तमानाश्च प्राचीना धर्माः के लोकसंश्रिताः। शास्त्रेषु के समुद्दिष्टा विरुध्यन्ते च केऽधुना॥ लोकशास्त्रविरुद्धाः के पण्डितास्तान् विचिन्त्य च। नृपं सम्बोधयेत्तैश्च परत्रेह सुखप्रदैः॥ (शु० नी०) इति वचनात् 'चत्वारो वेदधर्मज्ञाः पर्षत्त्रैविद्यमेव वा। सा ब्रूते यं सधर्मः स्यादेकोवाध्यात्मवित्तमः॥ (या. स्मृ. १।९) इत्यादिस्मृतेश्च यथा सम्भवं पण्डितसंख्या ज्ञेया। एवञ्च एको गुरुः, एक आचार्यः, एकः पुरोहितः, एको ज्योतिर्वित, एकश्च पण्डितः, इत्येते पञ्चराज्यकार्यं निर्वहणाय राज्ञावश्यं राज्याङ्गत्वेन स्थापनीयाः। एतेषां संख्यावृद्धिस्तु कार्यानुरोधेन भवितुमर्हति। ऋत्विजां वरणन्तु तत्तद्यज्ञेष्वेव भवति। 'यक्ष्यमाणास्त्वृत्विजः' (पा० १।३) इति पारस्करगृह्यवचनात्। इति।

[शूद्रस्य सप्रणवसहितमन्त्रे वेदश्रवणे चाधिकारविचारः]

शूद्रस्य प्रणवरहित एव मन्त्रेऽधिकारो न तु प्रणवसहिते—
'प्रणवेन विना मन्त्रः सोऽयं पञ्चाक्षरः स्मृतः।
स्त्रीभिः शूद्रैश्च सङ्कीर्णैर्ध्यायते मुक्तिकांक्षिभिः॥
इति सिद्धान्तलेशसंग्रहे शूद्रस्य विद्याधिकारप्रकरणे
उद्धृतेन ब्रह्मोत्तरखण्डवचनेनान्यैश्च प्रमाणैरवगम्यते।
'श्रावयेच्चतुरो वर्णान् कृत्वा ब्राह्मणमग्रतः। इति।

इतिहासपुराणश्रवणे चातुर्वर्ण्याधिकारस्मरणे न शूद्राणामवगतविद्यामहात्म्यस्य तस्यापि तदर्थित्वसम्भवात्। 'न शूद्राय मतिं दद्यात्' इति स्मृतेश्च तदनुष्ठानानुपयोगितया निषेधपरत्वादिति तदीयवाक्येनेतिहासपुराणादिश्रवणमात्रे शूद्राणामधिकारावगमात्।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वेदश्रवणे तु शूद्राणां सर्वथा नाधिकारः। अथ हास्य वेदमुपशृण्वतस्त्रपुजतुभ्यां श्रोत्रप्रतिपूरणमुदाहरणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीरभेदः' इति गौतमेन (२।४) सर्वथा तेषां वेदश्रवणनिषेधात् ।

आपस्तम्बेनापि–'ग्रामेणाऽध्यवसिते क्षेत्रे वा सर्वानाऽध्यायः। 'ज्ञायमाने तु तस्मिन्नेव देशे नाऽधीयीत'। 'समानागार इत्येके'। 'शूद्रायां तु प्रेक्षणप्रतिप्रेक्षणयोरेवाऽनध्यायः'। 'अन्तश्शवम्'। सन्दर्शने चाऽरण्ये'। प्रश्न १ कण्डिका ९ इति सूत्रजातेन।

शूद्रचाण्डालादिसमीपेऽप्यध्ययननिषेधादुक्तसूत्राणामाशयः। शम्या (पात्रविशेषो दार्शपौर्णमासिकः) क्षिप्तासती यावति देशे पतति तावत्पर्यन्तं श्मशानदेशे नाध्येतव्यम्। एवमेव शूद्रसमीपेऽपि ।

अत्र सूत्रकारेण शूद्रे श्मशानधर्मातिदेशात्। यद्धु वा एतत् श्मशानं यच्छूद्रः तस्माच्छूद्रसमीपे नाध्येतव्यम्' (मी० द० ६।१।३८) इति शबरस्वाम्युदाहृतं वैदिकवाक्यमेवास्यास्मृतेर्मूलमित्यवगम्यते । एकस्मिन् गृहे नाध्येतव्यमिति केषांचिन्मतम्। 'अन्तर्गतशवे ग्रामे वृषलस्य च सन्निधौ। अनध्यायः' (मनु० श्लो० १०८ अ० ४)।

चाण्डालविषये तु—यस्मिन् ग्रामे चाण्डालो वर्तते तस्मिन् नाध्येतव्यम्। अरण्ये यावति देशे सन्दृश्यते तावति नाध्येतव्यम्। एवञ्च सति देवालय-यज्ञमण्डपादौ देवमग्निं वा साक्षीकृत्य यत्पारायणादिकं स्तोत्रं शस्त्रं वा पठ्यते तत्र तस्य तथैव कर्तव्यत्वेन विहितत्वात् तत्र दर्शनार्थमागतैः शूद्रैः कदाचिद्वेदमन्त्रश्रवणप्रसक्तावपि पठितृणां शृण्वतां वा दोषो न भवितुमर्हति। परन्तु ग्रहणधारणाध्ययनकाले अन्यमन्त्रेषु आपस्तम्बगौतमादि कृतो निषेधः समानागरेऽपि प्रवर्तत्त एव। सति चैवं रात्रिजागरणा (वसन्तपूजा) दौं वेदाध्यनस्य काम्यत्वेन तत्रापि निषेधस्य प्रवृत्त्यवश्यंभावात्। यदधुनातनैस्तत्र परिचर्याद्यर्थं शूद्रः सन्निधाप्यते तत्रानौचित्यमेव पश्यामीति ।

(दत्तकविषये विचारः)

अपुत्रस्य सन्तत्यविच्छेदार्थं सत्यां दत्तकविधानेन पुत्रजिघृक्षायां कीदृशो दत्तको ग्रहीतव्य इति विचारणायामयं निर्णयः—

'माता पिता वा दद्यात्तां यमद्भिः पुत्रमापदि।
सदृशं प्रीतिसंयुक्तं स ज्ञेयो दत्रिमः सुतः॥
'दद्यान्माता पिता वा यं स पुत्रो दत्तको भवेत्।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'ब्राह्मणानां सपिण्डेषु कर्तव्यः पुत्रसंग्रहः ॥
तदभावेऽसपिण्डो वाऽन्यत्र तु न कारयेत् ।
'अदूरबान्धवं बन्धुसन्निकृष्टमेव प्रतिगृह्णीयात् ।

इत्यादि मनु— याज्ञवल्क्य-शौनक-वसिष्ठादिवचनात् 'सतिसम्भवे बन्धुसन्निकृष्टस्य जातिकुलगुणादिभिः सदृशस्य मातापितृभ्यां प्रीतिपूर्वकं दत्तस्य दत्तकहोमाद्यनुष्ठानपूर्वकं गृहीतस्य सपिण्डसगोत्रस्य जातिकर्मादिभिः संस्कृतस्य च पुत्रत्वं सिध्यतीत्यवगम्यते । तस्यैव च मुख्यं दत्तकत्वम्, अन्येषां तु गौणत्वमिति गम्यते । सगोत्रसपिण्डाभावे तु— असगोत्रसपिण्डस्य दत्तकरूपेण ग्राह्यत्वम् ।' 'ब्राह्मणानां सपिण्डेस्वि'ति शौनकवचने समानासमानगोत्रजसपिण्डमात्रवाचिपदप्रयोगात् ।

तच्च सपिण्ड्यं द्विविधम्—एकपिण्डान्वयित्वेन एकशरीरान्वयित्वेन च । 'अवश्यं चैकशरीरावयवान्वयेन सापिण्ड्यं वर्णनीयम्' इत्यादिना मिताक्षरादौ एकशरीरान्वयित्वरूपसापिण्डस्याप्यभ्युपगमात् ।

एवं चैकपिण्डान्वयिपुरुषालाभे एकशरीरान्वयिरूपसपिण्डस्यैव ग्रहणं कर्तव्यम् ।

न चैवं शङ्कनीयम्—एकशरीरान्वयिरूपसापिण्डस्य विवाहमात्रविषयत्वान्न दत्तकविषये प्रवृत्तिरिति ।

'दत्तक्रीतादिपुत्राणां बीजवप्तुः सपिण्डता ।
पञ्चमीसप्तमीतद्वद् गोत्रं तत्पालकस्य च ॥

इति दत्तकमीमांसाकारधृतेन बृहन्मनुवचनेन तस्य दत्तकविषयेऽप्यतिदेशदर्शनात् । अत एव च प्रतिग्राह्यपुत्रक्रमनिरूपणावसरे 'तत्रायं सपिण्डसगोत्रो मुख्यः, उभयथाऽपि प्रत्यासत्तेः । तदभावेऽसगोत्रः सपिण्डः, सापिण्ड्यप्रत्यासत्तेः' इति, यथा समानगोत्रः सपिण्डो मुख्यः, तदभावेऽसमानगोत्रः सपिण्डः । यद्यप्य समानगोत्रः सपिण्डः समानगोत्रोऽसपिण्डश्चेत्युभावपि तुल्यकक्ष्यौ, एकैकविशेषणराहित्यादुभयोः, तथापि गोत्रप्रवर्तकपुरुषात्सापिण्ड्यप्रवर्तकपुरुषस्य सन्निहितत्वेनाभ्यर्हितत्वात् । तेन चासमानगोत्रोऽपि सपिण्ड एव ग्राह्य इति च वीरमित्रोदये—दत्तकमीमांसायां च कण्ठरवेणोक्तम् ।

एवं च सगोत्रसपिण्डाभावे तदनन्तरमसगोत्रसपिण्डस्य दत्तकविधया ग्राह्यत्वं शास्त्रतः सिद्ध्यति । इति ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

(विवाहे आशौचे प्राप्ते विचारः)

विवाहकर्मणि आरब्धे मृतकसूतकयोराशौचयोरागमने वधूवरयोर्विवाहसमाप्तिं यावदाशौचाभावः ।

"दाने विवाहे यज्ञे च संग्रामे देशविप्लवे ।
आपद्यपि च कष्टायां सद्यः शौचं विधीयते ॥ (या० स्मृ०)
"व्रतयज्ञविवाहेषु श्राद्धे होमेऽर्चनेजपे ।
प्रारब्धे सूतकं न स्यादनारब्धे तु सूतकम्" (वि० स्मृ०) इति च स्मरणात् ।

आरम्भपदार्थस्तु—"आरम्भो वरणं यज्ञे सङ्कल्पो व्रतसत्रयोः ।
नान्दीश्राद्धं विवाहादौ श्राद्धे पाकपरिक्रिया ॥

इति स्मृतिबलात् विवाहे नान्दीश्राद्धसङ्कल्पकरणमेव । ततः पूर्वं तु तयोः सन्निपाते "आरब्धे सूतकं न स्यादनारब्धे तु सूतकम्" इति वचनबलात् सूतकं भवत्येव ।

आरम्भाभावेऽपि विवाहार्थं संभारेषु संभृतेषु संभृतानां तेषां यावदाशौचापगमं रक्षणाशक्तौ चाशौचमध्येऽपि प्रायश्चित्तं कृत्वा साङ्गं विवाहाद्यनुष्ठानमनुज्ञायते—

"न देवप्रतिष्ठा-विवाहयोः पूर्वसंभृतसंभारयोः ॥ इति (विष्णुस्मृ०)
"विवाहोत्सवयज्ञेषु आरब्धे सूतकं यदि ।
साङ्गं तत्कर्म कर्तव्यमन्नदानादिकं परैः" इति वचनात् ।

प्रायश्चित्तं तु—"अनारब्धविशुद्ध्यर्थं कूष्माण्डैर्जुहुयात् घृतम् ।
गां दद्यात्पञ्चगव्याशी ततः शुध्यति सूतकी ॥ इति विष्णूक्तं कर्तव्यम् ।

एवं कन्यादातुः तत्पन्याः कन्यायाश्च यावद्दानमाशौचाभावः ।
'दातुः प्रतिग्रहीतुश्च कन्यादाने च नो भवेत् ।
विवाहयिष्णोः कन्याया लाजहोमादिकर्माणि ॥ इति ब्रह्मपुराणात् । एवं च दाता तत्पत्नी विवाह्यकन्या तत्प्रतिग्रहीता चेति चतुर्णामेवाशौचाभावः । तत्रापि कन्यावरयोर्यावद्विवाहसमाप्ति पर्यन्तम् आशौचाभावः । इतरयोस्तु दानकालपर्यन्तमेवेति विशेषः । अतश्च दाता कन्यादानं, तदङ्गभूतं स्वस्तिवाचनमाभ्युदयिकं ग्रहयज्ञादिकं च सर्वं कर्तुं शक्नोत्याशौचमध्ये ।

एवं सूतकिभिः कृतप्रायश्चित्तैरनुष्ठीयमाने विवाहे पूर्वसङ्कल्पि-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तान्नस्योभयपक्षीयैरन्यैरपि भोजने न दोषः। परन्तु तदन्नमेतदुभयपक्षीयासगोत्रैः परिवेषणीयम्।

'विवाहोत्सवयज्ञेषु त्वन्तरामृतसूतके।
परैरन्नं प्रदातव्यं भोक्तव्यं च द्विजोत्तमैः॥ इति षट्त्रिंशन्मतात्।

(एकोदरप्रसूतानामेकस्मिन्काले विवाहादिशोभनकर्मानुष्ठानविचारः)

एकस्मिन् वर्षे ऋतुत्रयात्पूर्वमेकमातुः प्रसूतयोर्भ्रात्रोः स्वस्त्रोः स्वभ्रात्रोर्वा विवाहादिशोभनं न कर्तव्यम्। पुत्रीविवाहानन्तरमृतुत्रयमतीत्य पुत्रविवाहः कर्तुं शक्यते। पुत्रविवाहानन्तरमृतुत्रयानन्तरमपि दुहितुर्विवाहं न कुर्यात्। पुत्रीविवाहानन्तरं पुत्रोद्वाहस्तु ऋतुत्रयमध्येऽपि कर्तुं शक्यते। एवमेकस्मिन्वत्सरे विवाहानन्तरं षण्मासाभ्यन्तरे चौलोपनयने न कर्तव्ये। चौलोपनयनानन्तरं विवाहः कर्तुं शक्यत एव। तथा चाङ्गिराः—

'एकोदरप्रसूतानामेकस्मिन्नेव वत्सरे।
विवाहो नैव कर्तव्यः शुभद्वयमृतुत्रये।
न कुर्याद् द्वर्षभेदे तु त्रिमासादूर्ध्वमाचरेत्॥ इति।

मदनरत्ने नारदः—पुत्रोद्वाहात्परं पुत्री विवाहो न ऋतुत्रये।
न कार्यं व्रतमुद्वाहान्मङ्गले नाप्यमङ्गलम्॥

मदनरत्ने वसिष्ठः—

"न पुंविवाहोर्ध्वमृतुत्रयेऽपि विवाहकार्यं दुहितुः प्रकुर्यात्।
न मण्डनाच्चापि हि मुण्डनं हि गोत्रैकतायां यदि नाब्दभेदः॥ इति।

फाल्गुने चैत्रमासे तु पुत्रोद्वाहोपनायने। भेदादब्दस्य कुर्वीत नर्तुत्रयविलङ्घनम्" इति वचनात् ऋतुत्रयमध्ये फाल्गुनचैत्रमध्ये पुत्रस्योद्वाहोपनयने कुर्यात्।

सङ्कटे तु—पुत्रीपरिणयादूर्ध्वं यावद्दिनचतुष्टयम्। पुत्रस्यन्तरस्य कुर्वीत नोद्वाहमिति सूरयः॥ इति वचनात् एकस्याः कन्याया वैवाहिकं कृत्यं समाप्य पुत्र्यन्तरस्य कुर्यान्न तु सह।

एवं सादेरयोरपि विवाहोऽतिसङ्कटे—"द्विशोभनं त्वेकगृहेपि नेष्टं शुभं तु पश्चान्नवभिर्दिनैस्तु। आवश्यकं शोभनमुत्सवो वा द्वारेऽथवाऽऽचार्यविभेदतो वा" इति वचनात् गृहभेदेन मण्डपभेदेनाचार्यभेदेन कर्तुं शक्यते। एवमुपनयनादिकमपि।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पृथङ्मातृजयोरपि विवाहोपनयनादिकमेकस्मिन्मण्डपे कर्तृभेदात् पृथग्वेद्यां भवितुमर्हम् ।

"पृथङ्मातृजयोः कार्यो विवाहस्त्वेकवासरे । एकस्मिन्मण्डपे कार्यं पृथग्वेदिकयोस्तथा ॥ इति वचनादिति ।

(कन्यादाने दातृक्रमः)

आदौ पिता, ततः पितामहः, उपनीतः कन्याभ्राता, मातामहः, मातुलः, सकुल्यः जननी इति क्रमः कन्यादाने द्रष्टव्यः । अत्र पूर्वपूर्वाभावे उत्तर उत्तरोऽधिकारी—मूलवचनानि निबन्धेषु द्रष्टव्यानीति ।

(प्रतिकूलनिर्णयः)

विवाहे वाग्दानानन्तरं कुलद्वयेऽपि यदि कश्चिन्म्रियेत तदा तेन वरेण साकं तस्या विवाहो न कर्तव्यः ।

'वधूवरार्थे घटिते सुनिश्चित्ते वरस्य गेहेऽप्यथ कन्यकायाः । म्रियेत कश्चिन्मनुजोऽथ नारी तदा न कुर्युः खलु मण्डनं ते ॥ इति स्मृत्यन्तरवचनात् ।

सङ्कटे तेनैव वरेण साकं विवाहे इयं व्यवस्था–वरवध्वोः पितृमरणे मातृमरणे च संवत्सरं यावदविवाहः, भार्यामरणे मासत्रयः, भ्रातृपुत्रमरणे सार्धोमासः । पितामहपितामह्यादिसपिण्डान्तरमरणे मासम् । तदनन्तरं विनायकशान्तिं गोदानं च कृत्वा विवाहं समाचरेत् ।

मेधातिथिः—वाग्दानानन्तरं यत्र कुलयोः कस्य चिन्मृतिः ।
तदा संवत्सरादूर्ध्वं विवाहः शुभदो भवेत् ।
पित्रोरब्दमशौचं स्यात्तदर्धं मातुरेव च ।
मासत्रयं तु भार्यायास्तदर्धं भ्रातृपुत्रयोः ॥
अन्येषां तु सपिण्डानामाशौचं माससम्मितम् ।
तदन्ते शान्तिकं कृत्वा ततो लग्नं विधीयते ॥ इति ।

एवं वरस्य कन्याया वा चतुष्पुरुषपर्यन्तेषु कस्य चिन्मृतिः स्याच्चेत् अर्थात् वरस्य प्रपितामहप्रपितामहीमरणेऽपि विवाहो न कर्तव्यः—ततः परं तु कर्तव्यः—प्रेतकर्माण्यनिर्वर्त्त्य चरेन्नाभ्युदयक्रियाम् । आचतुर्थं ततः पुंसि पञ्चमे शुभदं भवेत् । इति वचनात् ।

यदा तु पूर्वोक्तेषु निमित्तेषु—अतिसंकटवशात् वर्षादिकालप्रतीक्षाया असंभवस्तदा किञ्चित्कालं प्रतीक्ष्य प्रथमाब्देऽप्यनुमासिकानामपकर्षं कृत्वा वृद्धिश्राद्धानुष्ठानपूर्वकं विवाहो भवत्येव—

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

"सपिण्डीकरणादर्वागपकृष्य कृतान्यपि ।
पुनरप्यपकृष्यन्ते वृद्ध्युत्तरनिषेधनात् ॥ इति शाट्यायनवचनात् ।

(विवाहे रजोदर्शने विचारः)

विवाहे—आरम्भात्पूर्वं वधूवरयोर्मातरि रजस्वलायां पूर्वं नान्दीश्राद्धे अकृते विवाहो नैव कर्तव्यः । नान्दीश्राद्धे कृते तु कर्तव्यः ।

'प्रारम्भात्प्राग् विवाहस्य माता यदि रजस्वला ।
निवृतिस्तस्य कर्तव्या सहत्वश्रुतिचोदनात् ॥ इति माधवीयवचनात् ।

प्रारम्भपदार्थस्तु विष्णुनोक्तः—

प्रारम्भो वरणं यज्ञे सङ्कल्पो व्रतसत्रयोः ।
नान्दीश्राद्धं विवाहादौ श्राद्धे पाकपरिक्रिया ॥ इति ।

अत एव रजोदर्शनादिसम्भावनायां नान्दीश्राद्धमकृष्याऽप्यनुष्ठातुं शक्यते । तत्र विवाहे दशभ्यो वासरेभ्यः पूर्वमपकर्षः ।

एकविंशत्यहर्यज्ञे विवाहे दशवासराः ।
त्रिषट् चौलोपनयने नान्दीश्राद्धं विधीयते ॥

नान्दीश्राद्धे-अकृते सङ्कटविषयेऽनन्तरं मुहूर्तालाभविषये वा विवाहप्रारम्भोत्तरं प्राग् वा रजसि सञ्जाते चतुर्थदिवसेऽधिकारसिद्धयर्थं कूष्माण्डहोमं गोदानं च प्रायश्चित्तं कृत्वा श्रीशान्तिं विधाय विवाहोऽनुष्ठातव्यः, पञ्चमेऽहनि तु प्रायश्चित्तं विनैवानुष्ठानम् । एवं वरवध्वोर्मातरि सूतिकायां जातायामपि वेदितव्यम् ।

सूतिकोदक्ययोः शुद्धौ गां दद्याद्धोमपूर्वकम् ।
प्राप्ते कर्मणि शुद्धधा स्यात् इतरस्मिन् न शुद्धयति ।
अलाभे सुमुहूर्तस्य रजोदोष उपस्थिते ॥
श्रियं संपूज्य ततः कुर्यात् पाणिग्रहणमङ्गलम् ॥
हैमीं माषमितां पद्मां श्रीसूक्तविधिनाऽर्चयेत् ।
प्रत्यर्चं पायसं हुत्वाऽभिषिच्य शुभमाचरेत् ॥ इति ।
'दैवे कर्मणि पित्र्ये च पञ्चमेऽहनि शुध्यति ॥ इति चेति ।

यदि तु कन्यापिता महता सङ्कटेन कन्याया रजोदर्शनात्पूर्वं कन्यां दातुं न शक्नोति स्म । अथ च कन्या रजस्वला भवति तदा स आत्मनो निष्कृतिं कृत्वा कन्यां प्रायश्चित्तेन शुद्धां कृत्वा वराय दद्यात् । स्वनिष्कृतिरियम्—दानात्पूर्वं यावन्त ऋतवः संवृत्ताः—तावतीर्गा दद्यात् । तत्राऽशक्तौ—एकाऽपि दातव्या । तत्राऽप्यशक्तौ ब्राह्मणेभ्य सद्-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

क्षिणमन्नं यथाशक्ति दद्यात्। अदृष्टरजसे कुमार्यै सरत्नभूषणं च दद्यात्। कन्या च दिनत्रयमुपोष्य तन्निष्क्रयं वा कृत्वा तृतीयरात्रौ गोपयः पीत्वा पादकृच्छ्रं समाचरेत्। अथ च विवाहयोग्या भवति वरोऽपि तामुद्वहन् कूष्माण्डैर्जुहुयात्। तदाह शौनकः—

कन्यामृतुमतीं शुद्धां कृत्वा निष्कृतिमात्मनः।
पिता ऋतून् स्वपुत्र्यास्तु गणयेदादितः सुधीः॥
दानावधि गृहे यत्नात् पालयेच्च रजोवतीम्।
दद्यात्तदृतुसंख्या गाः शक्तः कन्या पिता यदि॥
दातव्यैकाऽपि यत्तेन दाने तस्या यथाविधि।
दद्याद्वा ब्राह्मणेष्वन्नमतिनिःस्वसदक्षिणम्॥
तस्याऽतीततुसंख्येषु वराय प्रतिपादयेत्।
उपोष्य त्रिदिनं कन्या रात्रौ पीत्वा गवां पयः॥
अदृष्टरजसे दद्यात् कन्यायै रत्नभूषणम्।
तामुद्वहन् वरश्चापि कूष्माण्डैर्जुहुयाद् घृतम्॥ इति।

(अनाथकन्यादानम्)

अनाथां कन्यां धर्मार्थं सदृशाय वरायात्मीयद्रव्यव्ययेन यो दद्यात्तस्यापि कन्यादानद्विगुणं फलं भवति।

"अनाथां कन्यकां दृष्ट्वा यो दद्यात्सदृशे वरे।
द्विगुणं फलमाप्नोति कन्यादाने यदीरितम्॥ इति संस्काररत्नमालाधृतं वचनम्।

(परकीयकन्यामात्मीकृत्य दानम्)

परकीयां कन्यां तत्पित्रोः सुवर्णादिकं दत्वाऽऽत्मीकृत्य कश्चिदसगोत्रोऽपि धर्मार्थं दानं कर्तुं प्रभवति।

आत्मीकृत्य सुवर्णेन परकीयां तु कन्यकाम्।
धर्म्येण विधिना दातुमसगोत्रोऽपि युज्यते॥ इति।

एवम्-वैवाहिकप्रदानं हि यो ददाति दया परः।
विमानेनार्कवर्णेन किङ्किणीजालमालिना।
महेन्द्रभवनं याति सेव्यते ह्यप्सरोगणैः॥ (स्क० पु०)
ज्ञात्वा स्ववित्तसामर्थ्यमेकमुद्वाहयेद् द्विजम्।
तेनाप्याप्नोति तत्स्थानं शिवभक्तो नरो ध्रुवम्॥ (म० भा०)

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अपरार्के दक्षः—"मातापितृविहीनं तु संस्कारोद्वाहनादिभिः ।
यः स्थापयति तस्येह पुण्यसंख्या न विद्यते ॥
इत्यादिवचनानि द्रष्टव्यानीति ।

(होमकाले कन्याया रजोदर्शने)

विवाहमध्ये विवाहाङ्गहोमकाले कन्याया रजोदर्शने तां कन्यां स्नापयित्वा 'युञ्जान' इति मन्त्रेणाहुतिं दत्वाऽवशिष्टं कर्म समापयेत् ।

यज्ञपार्श्वे—विवाहे वितते तन्त्रे होमकाल उपस्थिते ।
कन्यामृतुमतीं दृष्ट्वा कथं कुर्वन्ति याज्ञिकाः ।
स्नापयित्वा तु तां कन्यामर्चयित्वा यथाविधि ।
युञ्जानामाहुतिं हुत्वा ततस्तन्त्रं प्रवर्तयेत् ॥ इति ।

(परिवित्तिनिर्णयः)

ज्येष्ठे भ्रातरि अकृतविवाहे कनिष्ठेन भ्रात्रा विवाहो न कर्तव्यः, यदि कुर्यात्तदा ज्येष्ठः परिवित्तिः कनिष्ठश्च परिवेत्ता भवति ।

मनुः—दाराग्निहोत्रसंयोगं कुरुते योऽग्रजे स्थिते ।
परिवेत्ता स विज्ञेयः परिवित्तिस्तु पूर्वजः ॥ इति ।

गर्गः—सोदर्ये तिष्ठति ज्येष्ठे न कुर्याद्दारसंग्रहम् ।
आवसथ्यं तथाऽऽधानं पतितस्त्वन्यथा भवेत् ॥ इति ।

एवं ज्येष्ठायामविवाहितायां कनिष्ठा यदि विवाहिता भवेत्तदा कनिष्ठा अग्रेदिधिषूर्भवति ज्येष्ठा च दिधिषूर्भवति यो दाता सोऽपि तद्दोषभाग्भवति ।

ज्येष्ठायां यद्यनूढायां कन्यायामुह्यतेऽनुजा ।
या साऽग्रे दिधिषूर्ज्ञेया पूर्वा तु दिधिषूः स्मृता ॥ इति देवलोक्तेः ।

एवं विवाहे केनचित्कारणेन संवृत्ते दाता परिवित्तिः परिवेत्ता अग्रेदिधिषूपतिः दिधीषूपतिश्च कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ चरित्वा शुद्ध्येयुरिति वसिष्ठस्मृतिः ।

भिन्नमातृप्रसूतेषु नायं दोषः । एकमातृप्रसूतेष्वपि देशान्तरस्थक्लीवादिषु सत्सु किञ्चित्कालं प्रतिद्यानन्तरं विवाहे न दोषः । एतत्सर्वं कात्यायनस्मृतौ स्पष्टम् ।

यदि कन्याया वैधव्ययोगस्तदा तत्परिहाराय पलतदर्धतदर्धान्यतमपरिमाणां सौवर्णीं विष्णुप्रतिमां निर्माय बहुसौभाग्यलब्धये ब्राह्मणाय दद्यात् । अथवा वैधव्यपरिहाराय कुम्भविवाहः कर्तव्यः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कर्मविपाके—ब्राह्मणं साधुमामन्त्र्य संपूज्य च यथाविधि ।
तस्मै दद्याद्विधानेन विष्णुमूर्तिं चतुर्भुजाम् ।
शुद्धवर्णां सुवर्णेन वित्तशतयाऽथवा कृताम् ।
सदक्षिणां च तां दद्यान्मन्त्रमेतदुदीरयेत् । इत्यादि ।

तत्रैव—"विवाहात्पूर्वदिवसे चन्द्रताराबलान्विते ।
विवाहोक्ते तथा लग्ने कन्यां कुम्भेन चोद्वहेत् ॥ इत्यादि ।

तृतीयभार्योद्वाहः शास्त्रेषु निसिद्धः कर्तुर्हानिकरश्च । अतः तृतीयास्थानेऽर्कं विवाह्य ततश्चतुर्थीमुद्वहयेत् । अत्रार्कवृक्षोऽर्ककन्यात्वेनाभिमतः । अतश्च वरोऽर्कीमुद्वाह्य पञ्चमदिने मानुषीमुद्वहेत । अत्र वृक्षे स्त्रीपुंसयोर्भेदादर्शनादर्कविवाह इत्येव व्यवहारः ।
'चतुर्थादिविवाहार्थं तृतीयेऽर्कं समुद्वहेत् ॥ इति ब्रह्मपुराणम् ।

[विवाहानन्तरमेकवर्षपर्यन्तमिमानि कर्माणि वर्जयेत्]

कार्ष्णाजिनिः—विवाहव्रतचूडासु वर्षमर्धं तदर्धकम् ।
पिण्डदानं मृदा स्नानं न कुर्यात्तिलतर्पणम्" इति ।

एवं निषेधे प्राप्ते क्वचित्तस्यापवादो हेमाद्रौ—
महालये गयाश्राद्धे मातापित्रोः क्षयेऽहनि ।
कृतोद्वाहोऽपि कुर्वीत पिण्डनिर्वपणं सदा ॥ इति ।

अत्र महालये पिण्डदानं श्रुतं तथापि विवाहाब्दे महालयं शिष्टा नानुतिष्ठन्ति सर्वदेशेष्वयमेवाचारः । गयाश्राद्धेप्रतिप्रसवस्तु प्रासङ्गिक गयायात्रापरः । तादर्थ्येन गमनस्य विवाहाब्दे निषेधात् ।

कृत्वा विवाहं व्रतवन्धनं च वर्षं तदर्धं न च तीर्थयात्राम् ।
क्षौरं च पिण्डांस्तिलयुक्तकर्म न चैव कुर्युर्हि नराः सपिण्डाः ॥
"स्नानं सचैलं तिलमिश्रकर्म प्रेतानुयानं कलशप्रदानम् ।
अपूर्वतीर्थामरदर्शनं च विवर्जयेन्मङ्गलतोऽब्दमेकम् ॥ इति ।
वर्षमध्ये क्षयाहे तु पिण्डनिर्वपणं कर्तव्यमेव ।

ज्योतिर्निबन्धे—अभ्यङ्गे सूतके चैव विवाहे पुत्रजन्मनि ।
माङ्गल्येषु च सर्वेषु न धार्यं गोपिचन्दनम् ॥ इति ।
"व्रतस्योद्यापनं नैव नैव कुर्यादुपोषणम् ।
जीर्णभाण्डादि न त्याज्यं गृहसंमार्जनं तथा । इत्यादीनि ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

[प्रतिष्ठादौ प्रायश्चित्तादिकथनम्]

ईश्वरसंहितायाम्—

[१]

ताम्रपात्रेऽथवाऽन्यस्मिन्समादाय हुताशनम् ।
आरण्यं लौकिकं वाऽथ मणिजं दर्पणोद्भवम् ॥
निधाय कुण्डस्यैशान्ये संस्कारार्थं च साम्प्रतम् ।
'ततोऽग्निपात्रमादाय निधूममतिदीप्तिमत् ॥
दक्षिणेन करेणैव पाणिभ्यामथवा द्विजाः ।
भ्रामयित्वा चतुर्धा वै ततः कुण्डान्तरे क्षिपेत् ॥

[२]

रक्तं श्वेतं तथा नीलं कृष्णं पीतं तथाऽरुणम् ।
सौदामिनीनिभं ध्यायेज्जिह्वानां सप्तकं क्रमात् ॥

[३]

विधिनानेन वै नित्यमथ यज्ञे तु वैष्णवे ।
संविभागः पितृणां च कार्यस्तद्द्रविणैर्नरैः ॥
रथे वा कुञ्जरे याने ध्वजमारोप्य यत्नतः ।
प्रभया चित्रकुसुमैः कृतया भूषयेत् ध्वजम् ॥
वासोभिर्भूषणैः स्रग्भिर्विचित्राभिश्च भूषयेत् ।
'ध्वजस्य शिखरं विप्राः ! बन्धयेत्सुदृढं ततः ॥
'पूर्वाह्णे वाथ मध्याह्ने ध्वजस्यारोहणं महत् ।
'विभवे सति वस्त्रेण संवेष्ट्य ध्वजदण्डकम् ॥

[४]

यागस्तु दक्षिणाहीनो निष्फलः स्यान्न संशयः ।
तस्माद्वित्तानुगुण्येन देया स्वल्पापि दक्षिणा ॥

[५]

अग्नौ निवेदयेद्विप्राः भूषणं न तु होमयेत् ।

[६]

आचार्यांश्चतुरो विप्राः ! षडष्टौ द्वादशापि वा ।
यजमानस्तु वरयेच्छास्त्रज्ञान् गुरुणा सह ॥
प्रवीणांश्च बहुत्वे तु तत्संख्या नियतिः कृता ।
तेषां यथोक्तसंख्यानामभिज्ञानामसन्निधौ ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तादृशान् वरयेद्विप्रांश्चतुस्त्रिद्येकमेव वा ।
साधकांश्चतुरः षड वा ह्यष्टौ द्वादश षोडश ॥ वरयेच्छात्रकुशलान् ।
एवं सर्वेषु यागेषु नित्यनैमित्तिकात्मसु ।
आचार्याणां साधकानां सङ्ख्यानियमईरितः ॥
संख्याहीनं न गृह्णीयाद्भयं स्याद्राजराष्ट्रयोः॥

[७]

वेदिं प्रक्षाल्य तोयेन वस्त्रैः संवेष्ट्य नूतनैः ।
प्रतिकुम्भं तु वसनैर्वेष्टयेद्विभवे सति ॥

[८]

कुण्डे तु सकलं होममाचार्यः स्वयमाचरेत् ।
मन्त्रांश्च पाठयेद्विप्रांस्तत्प्रतिष्ठां नयेत्तु वै ॥

[९]

नदीषु दीर्घिकायां वा तटाके निर्झरे ह्रदे ।
संभवे सति कुर्वीत जलवासं यथाविधि ॥
असंभवे जलद्रोण्यां कटाहे धातुनिर्मिते ।
यथासंभवमन्यस्मिन्पात्रे वा मृन्मयादिके ॥
'अल्पतोये श्मशानान्ते लवणोदपरिप्लुते ।
कटुके च कषाये च रिक्ते फेनैश्च दूषिते ॥
चैत्यवृक्षसमीपे च नीचावाससमीपके ।
वर्णान्तरयुते स्वल्पे ऊषरे शैवलान्विते ॥
एवमादिषु दुष्टेषु जलवासं न कारयेत् ।
'एकत्रिपञ्चरात्रं वा जलमध्येधिवासयेत् ॥
देशकालानुसारेण सद्यो वा जलवासनम् ।

[१०]

अष्टाङ्गुला च सौवर्णी शलाका राजती तथा ।
केवला वापि सौवर्णी शलाका स्यात् द्विजोत्तमाः ॥

[११]

प्रतिष्ठामारभेत्पश्चाद् देशिकः शास्त्रवित्तमः ।
प्रबुद्धं यजमानं तु स्वप्नं पृच्छेच्छुभाशुभम् ॥
तत्राशुभोपशान्त्यर्थं तदानीं जुहुयाद् गुरुः ।
शतं सहस्रं साष्टं वा यथाशक्त्याथ वा द्विजाः ॥
मध्वाज्यक्षीरसंमिश्रान् सफलांश्च तिलानपि ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अस्त्रसम्पुटितेनैव नाम्ना स्वाहान्वितेन तु ।
दोषं जहि जहीत्येवं पदं नामावसानकम् ।
केवलेनाथ वाक्येन सिंहमन्त्रेण होमयेत् ॥
एवं दुस्स्वप्नशान्तिं तु कृत्वा स्थापनमाचरेत् ।

[१२]

चाण्डालैश्श्वपचैर्वापि प्रमादाद्विष्णुमन्दिरे ।
निरन्तरं कृते वासे मासमेकं मुनीश्वराः ! ॥
मृत्पात्राणि परित्यज्य सम्मार्ज्य भगवद् गृहम् ।
गोमयेनोपलिप्याथ पर्यग्निकरणं चरेत् ॥
पुण्याहं वाचयित्वाथ प्रोक्षयेत्पञ्चगव्यकैः ।
गोगणं वासयेत्तत्र सर्वदोषप्रशान्तये ॥
वाचयित्वा महाशान्तिं ब्राह्मणैर्वेदपारगैः ।
भोजयित्वा द्विजांस्तत्र तेभ्यो दद्यात्तु दक्षिणा ॥
एवं मासं तु मासार्द्धं सप्तपञ्चत्र्यहन्तु वा ।
कृत्वाभिषेचनं प्राग्वत्संप्रोक्षणमथाचरेत् ॥
मानुषं मृन्मयं बिम्बं तथा चित्रमयं द्विजाः ।
नवींकृत्य यथापूर्वं प्रतिष्ठां पुनरारभेत् ॥
'चण्डालश्वपचाद्यास्तु प्रमादाद् भगवद् गृहे ।
कर्मण्यधिकृताश्चेतैः सहवासेति च द्विजाः ॥
स्नात्वा सर्वे कुशाम्भश्च पीत्वा चान्द्रायणादिकम् ।
कृत्वा चालय संशुद्धिं द्विजभोजनपश्चिमम् ॥
संप्रोक्षणादिकं सर्वं प्राग्वदेव समाचरेत् ।
अन्ते महोत्सवं कुर्यात्सर्वदोषप्रशान्तये ॥
एवं महानसे वापि यागमण्डप एव वा ।
चण्डालादिप्रवेशे वा शवाद्यैर्वापि दूषिते ॥
मृत्पात्राणि परित्यज्य खननाद्यैर्महीतलम् ।
संशोध्य कुण्डचुल्लीस्थमग्निं त्यक्त्वा यथाविधि ॥
पुनरग्निं प्रतिष्ठाप्य शान्तिहोमादिकं चरेत् ।

[१३]

अकस्माद्दीपनिर्वाणे पूजामध्ये मुनीश्वराः ।
पुनरुद्दीप्य शान्त्यर्थं हुत्वा नेत्रमनुं जपेत् ॥
अनिर्वाणस्य दीपस्य नाशे तु मुनिपुङ्गवाः ! ।
क्षीरेण स्नाप्य देवेशं शान्तिहोमं समाचरेत् ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पुनरारोप्य तद्दीपं जपेन्मूलसहस्रकम् ।
'पूजाकाले धूपपात्रे दीपपात्रे तु वा द्विजाः ।
नीराजनार्थकुम्भे वा प्रमादात्पतिते सति ।
घण्टायाश्चार्घ्यपात्रादेश्छत्रादीनां तु वा द्विजाः ! ॥
पतने प्रजपेन्मन्त्रमष्टोत्तरसहस्रकम् ।
धूपपात्रादिभग्ने पुनः सन्ध्याय पूर्ववत् ॥

[१४]

पञ्चगव्यैस्तु सम्प्रोक्ष्य पूजनादौ नियोजयेत् ।
स्रुक्स्रुवस्य प्रणीताया अभावे लक्षणोज्झिते ।
एतेषां भेदने छेदे वह्निदाहादिके सति ॥
पुनरन्यं समासाद्य शान्तिहोमं समाचरेत् ।

[१५]

अभावे काष्ठसमिधामाज्येन चरुणा हुनेत् ।
समिद्भिराज्याभावे तु तिलैर्वा होममाचरेत् ॥
अभावे हविषान्येषामाज्येन जुहुयात्सुधीः ।
सर्वथा होमकर्मार्थे तिलमाज्यं न लोपयेत् ॥
तिलाज्ययोरभावे तु हवनं स्यान्निरर्थकम् ।
शान्तिहोमं प्रकुर्वीत तद्दोषस्यापनुत्तये ॥

[१६]

सङ्कल्प्य यागं होमान्तं हवनं न कृतं यदि ।
द्विगुणं हवनं कुर्यात्पूर्णान्तं मन्त्रवित्तमः ॥

[१७]

पतने बलिवस्तूनां तत्त्यक्त्वान्येन देशिकः ।
बलिं दत्वाथ तच्छान्त्यै शान्तिहोमं समाचरेत् ॥

[१८]

बलिकाले दीपनाशे पुनरारोप्य दीपकम् ।
कृत्वा चोत्सवशेषं तु शान्तिहोमं समाचरेत् ॥

[१९]

बलिबिम्बस्य मूर्द्धस्थपुष्पादिपतने तु वा ।
किरीटपतने चापि तद्दोषस्य प्रशान्तये ॥
स्नपनं नवभिः कुम्भैश्शान्तिहोमं समाचरेत् ।

[२०]

एकत्र दीक्षितस्तन्त्रे सिद्धान्ते वा मुनीश्वराः ।
न कुर्याद् देशिकोऽन्यत्र पूजनादीनपि द्विजाः ॥
तन्त्रभेदे च सिद्धान्तभेदे वाप्युत्सवादिषु ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

आचार्यत्वं तथार्त्विज्यं न कार्यं मोहतः कृते ॥
दोषाय कल्पते राजराष्ट्रधामद्वयात्मने।

[२१]

देवताव्यत्यये जाते पालिकादौ मुनीश्वराः ।
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा शान्तिहोमं समाचरेत् ॥

[२२]

तण्डुलांस्तु प्रगृह्णीयाद्विधिक्षुण्णांस्तु देशिकः ।
अकणानतुषानेव क्रिमिहीनानपि क्रमात् ॥
केशपाषाणहीनांस्तु प्राण्यङ्गरहितांस्तथा ।
भस्माङ्गारविहीनांस्तु अभग्नानलघूनपि ॥
कणैस्तु भवति व्याधिस्तुषैर्दारिद्र्यकं भवेत् ।
क्रिमिभिः पुत्रनाशः स्यात्केशैर्दारविनाशनम् ॥
पाषाणैर्मरणं विद्धि अशन्या वह्निना जलैः ।
प्राण्यङ्गैर्व्याधयः प्रोक्ता भस्मना कलहो ध्रुवः ।
अङ्गारैर्वह्निना बाधो भग्नैर्भङ्गस्तु विग्रहे ।
प्रवासो लघुभिश्चैव तस्मात्तान्परिवर्जयेत् ॥

[२३]

प्रपामण्डपपात्राणामन्येषां वा मुनीश्वराः ।
अग्निदाहे समुत्पन्ने पुनरुत्पाद्य तानपि ॥
शान्तिहोमं प्रकुर्वीत मूलमन्त्रजपं तथा ।
प्रमादादुत्सवाग्नेस्तु नाशे जाते मुनीश्वराः ॥
पुनरग्निं प्रतिष्ठाप्य देवमावाह्य पूर्ववत् ।
शान्तिहोमं प्रकुर्वीत शतब्राह्मणभोजनम् ॥
यागशाला कुम्भदीपनिर्वाणे मुनिपुङ्गवाः ।
शान्तिहोमपुरस्कृत्य दीपमुद्दीप्य पूर्ववत् ॥
जपेदष्टोत्तरशतं नेत्रमन्त्रं द्विजोत्तमाः ।
चण्डालसूतिकोदक्यागर्दभश्वानसूकरैः ॥
उष्ट्रादिभिः सूतकिभिस्तथैव प्रतिलोमजैः ।
प्रविष्टे यागगेहान्तः कुम्भमण्डलवह्निषु ॥
स्थितान् देवान् स्वहृदये समावाह्य यथाविधि ।
कुम्भमण्डलवन्ह्यादीन् त्यक्त्वा लोहमयानि चेत् ॥
पात्राणि तानि संशोध्य मार्जनोल्लेखनादिभिः ।
यागगेहं शोधयित्वा सेचयेत्पञ्चगव्यकैः ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पुनः कुम्भादिकान् स्थाप्य हृदयस्थास्तु देवताः ।
यथापूर्वं समावाह्य शान्तिहोमं समाचरेत् ।
मूलमन्त्रायुतं जप्त्वा भोजयेद् ब्राह्मणान् शतम् ॥

[२४]

अस्नातोनूर्ध्वपुण्ड्रश्चापवित्रोनुपवीतकः ।
नग्नो वा ह्येकवस्त्रो वा जीर्णवस्त्रधरस्तु वा ॥
तथा पर्युषितं वासो दधानो नीलवस्त्रधृक् ।
दग्धवस्त्रधरो वापि ह्यार्द्रवस्त्रधरस्तु वा ।
अनाचान्तो ध्यानहीनो मुक्तकेशस्तथा द्विजाः ।
खिन्नाङ्गश्च हसन् कुप्यन् श्वसंश्च प्रलपन् द्विजाः ॥
निष्ठीवादियुतश्चापि देवं सम्पूजयेद्यदि ।
तद्दोषशान्तये विप्रा अष्टाक्षरमनुत्तमम् ॥
जपेत्सहस्रवारं तु शतवारं तु वा द्विजाः ।
पुनः संपूजनं कुर्याद्देवस्य विधिपूर्वकम् ॥

[२५]

काकगृद्ध्रादिभिः स्पृष्टः श्वानैर्वा गर्दभादिभिः ।
पाषण्डप्रतिलोमाद्यैः पतितैर्हीनवृत्तिभिः ॥
चैत्यवृक्षादिभिश्चापि संस्पृष्टः पूजयेद्यदि ।
अधमाधममार्गेण स्नापयेत्पुरुषोत्तमम् ॥

[२६]

आचार्यदक्षिणाहीने निष्फलः स्यात्स उत्सवः ।
आचार्यदक्षिणाहीनं ऋत्विजां च तथैव च ॥
यत्कर्म क्रियते सर्वमभिचाराय कल्पते ।
तच्छान्त्यै शान्तिहोमं तु कारयेद् गुरुणा ततः ॥
प्रणम्य दण्डवद् भूमौ यजमानः स्वयं गुरोः ।
सन्तोषं कारयेत् धीमान् वस्त्रहेमांगुलीयकैः ॥
दक्षिणां द्विगुणां दद्यात्तेन शान्तिर्भविष्यति ।
द्विजभोजनलोपेऽपि ह्येवं शान्ति समाचरेत् ।
अतुष्टेषु ब्राह्मणेषु न प्रीणाति हरिः सदा ॥
यत्र विप्रास्तु सन्तुष्टास्तत्र देवः प्रसीदति ।
ततस्तद्दोषशान्त्यर्थं द्विगुणं भोजयेत् द्विजान् ॥ इत्यादि ।

कार्तिकी पूर्णिमा,
सम्वत् २०२६ } दौलतरामगौडः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

श्रीः

विषय-सूची

अथ प्रथमः परिच्छेदः

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
मङ्गलाचरणम्	१
कालनिर्णयः	२
संवत्सरनामानि	,,
संवत्सरनिर्णयः	३
अयननिर्णयः	,,
दक्षिणायणे उत्तरायणे च देवादिप्रतिष्ठास्थापनविचारः	,,
काश्यामुत्तरायणविचारः	,,
ऋतुनिर्णयः	,,
मासनिर्णयः	४
संक्रान्तिनिर्णयः	,,
सर्वसंक्रान्तिषु दानानि	५
सर्वसंक्रान्तावुपवासदानम्	,,
संक्रान्तौ श्राद्धम्	६
विष्णुपदादिस्वरूपम्	,,
अत्र पिण्डरहितं श्राद्धम्	,,
मङ्गलकृत्येषु विशेषः	७
कुत्रचिद्रात्रौ स्नानम्	,,
जन्मर्क्षे संक्रान्तौ स्नाने विशेषः	,,
सायंसन्ध्यानिषेधः	,,
चान्द्रादिमासकथनम्	८
सावनादिमासव्यवस्था	,,
मलमास-क्षयमासनिर्णयः	९
अधिकमासकालनिर्णयः	१०
क्षयमासस्यागमनकालनिर्णयः	१०
मलमासे कार्याकार्यनिर्णयः	,,
मलमासे वर्ज्यानि	१४
अयं निर्णयः क्षयमासेऽपि ज्ञेयः	,,
यन्मलमासे वर्ज्यं तच्छुक्रगुर्वस्तादावपि	,,
अस्यापवादः	१५
सिंहस्थे कन्यागते वा गुरौ गोदावरीकृष्णास्नानम्	,,
गुरुशुक्रयोर्बाल्यवृद्धत्वविचारः	,,
एषां च पक्षाणां व्यवस्थामाह	,,
विश्वेश्वरालयादौ-अस्तादेरपवादः	१६
मलमासे च व्रतविशेषः	,,
पक्षनिर्णयः	,,
तिथिवेधादिनिर्णयः	१७
सायं प्रातर्वेधलक्षणम्	,,
तिथिविशेषे वेधनिर्णयः	,,
कर्मकालव्यापिनीतिथिः	,,
युग्मतिथिविचारः	,,
सामान्यतो दशमी	१८
त्रयोदशी	,,
प्रतिपदादितिथीनां पुण्यकालः	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषया:	पृष्ठाङ्का:
खर्वदर्पहिंसालक्षणम्	,,
अथैकभक्तम्	,,
नक्तप्रदोषयोर्विचार:	१६
सायंकाले वर्ज्यकर्माणि	,,
सन्ध्यालक्षणम्	,,
यत्यादीनां नक्तम्	२०
हरिनक्ते विशेष:	,,
नक्तभोजी षडाचरेत्	,,
अयाचिते विशेष:	,,
नक्षत्रव्रतकालनिर्णय:	,,
व्रतपरिभाषा	,,
उपवासाधिकारिनिर्णय:	२१
सर्वव्रतेषु सङ्कल्पविधि:	,,
व्रतारम्भकाल:	२२
भद्रानिर्णय:	,,
भद्रापुच्छनिर्णय:	,,
सर्पिणीवृश्चिकीभद्रा	,,
दिन-रात्रिभद्रा	,,
व्रतारम्भे विशेष:	,,
व्रतारम्भे धर्मा:	,,
व्रतस्थधर्मा:	२३
व्रते ब्राह्मणभोजनसंख्या	,,
सहस्रभोजनादौ पुमांस एव भोज्या	,,
द्वित्रि यजमानकर्तृके	,,
शूद्रस्य व्याहृतिहोम: विप्रद्वारा	,,
प्रतिमास्वरूपनिर्णय:	,,
अनादेशे आज्यं द्रव्यम्	२४
अनादेशे समस्तव्याहृति:	,,
अनादेशे देवता प्रजापति:	,,
ग्रहादिपूजायां होमसंख्या	,,

विषया:	पृष्ठाङ्का:
अनुक्तसंख्यायां संख्याकथनम्	,,
व्रतोद्यापनानुक्तौ	,,
व्रतोद्यापनाशक्तौ निर्णय:	,,
दक्षिणानिर्णय:	,,
देवकार्ये रजतदक्षिणाविचार:	,,
व्रतादिषु परान्नभोजननिर्णय:	,,
क्षारा हविष्यगणश्च	२५
व्रते ग्राह्याग्राह्यविचार:	,,
गृहीतव्रतत्यागे प्रत्यवाय:	,,
अशक्तौ व्रते नियमा:	,,
स्त्रीव्रतेषु विशेषनिर्णय:	२६
विधवा सदा शुक्लवस्त्रधारणम्	,,
एकादश्यां ताम्बूलादिनिषेध:	,,
दन्तधावनादिनियम:	,,
व्रते अश्रुपातादिनिषेध:	२७
सूतकादौ निर्णय:	,,
गौडमते क्षतजाशौचे निर्णय:	,,
जाताशौचे मृताशौचे च निर्णय:	,,
गर्भिण्यादीनां व्रते विशेष:	,,
बहुकालिकसङ्कल्पगृहीतव्रते मध्ये सूतकादिप्राप्तविचार:	,,
पूर्वसङ्कल्पितव्रते	,,
शूद्रस्य प्रतिनिधिविचार:	२८
मन्त्रस्वामिदेवाग्निकर्मसु	,,
प्रतिनिधिविचार:	२९
व्रतादिसन्निपाते निर्णय:	,,
शिवरात्रौ प्रात: पारणम्	,,
भूताष्टम्यादौ दिवाभोजननिषेध:	,,
संक्रान्त्यादौ रात्रिभोजननिषेध:	,,
प्रतिपदविचार:	३

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
चान्द्रायणमध्ये एकादश्यादितिथौ भोजनं कार्यम्	,,
सर्वतिथिषु वर्ज्यानि	,,
द्वितीयानिर्णयः	,,
तृतीयानिर्णयः	,,
चतुर्थीनिर्णयः	३१
संकष्टी चतुर्थी निर्णयः	,,
पञ्चमीनिर्णयः	३२
षष्ठीनिर्णयः	,,
सप्तमीनिर्णयः	३३
अष्टमीनिर्णयः	,,
बुधाष्टमीनिर्णयः	,,
नवमीनिर्णयः	,,
दशमीनिर्णयः	,,
एकादशीनिर्णयः	,,
वेधो द्वेधा	३४
उभयैकादश्योः साम्यम्	३५
उपवासनिषेधे विशेषः	,,
अरुणोदयनिर्णयः	३६
अन्ये वेधाः	३६
एकादशीव्रताकरणे प्रायश्चित्तम्	३८
तत्रारुणोदयवेधो वैष्णव विषयः	४२
अत्रोपयुक्तं किञ्चिदुच्यते	,,
एकादशीव्रते-अधिकारिणः	,,
उपवासासामर्थ्ये निर्णयः	,,
व्रताकरणे प्रायश्चित्तम्	,,
काम्यव्रतविधिः	४३
व्रतघ्नान्याह	,,
अशक्तौ विशेषमाह	४३
प्रायश्चित्तनिर्णयः	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
एकादश्यां श्राद्धप्राप्तौ निर्णयः	४४
अत्रव्रतघ्नानि	,,
सर्वव्रतेषु निर्णयः	४५
व्रतसङ्कल्पः	,,
द्वादश्यां निवेदनमन्त्रः	४६
द्वादश्यां वर्ज्यानि	,,
व्रतादिमध्ये पतितादि सह संभाषणे प्रायश्चित्तकथनम्	,,
आशौचे द्वादशीव्रते दानादि निर्णयः	,,
रजस्वलाया एकादशी	४७
अष्टौ महाद्वादश्यः	,,
एकस्मिन्दिने-एकादशीद्वादशीव्रते	,,
प्रदोषादिसंकटे निर्णयः	४८
हरिवासरलक्षणम्	,,
पारणासमयः	,,
प्रमादेन एकादश्युपवासातिक्रमे	,,
द्वादशीनिर्णयः	४९
त्रयोदशीनिर्णयः	,,
चतुर्दशीनिर्णयः	,,
पौर्णमासी-अमावास्यानिर्णयः	,,
अमायां योगविशेषः	,,
अमायां विशेषयोगे व्यतीपातादिकथनम्	,,
इष्टिकालः	५०
पौर्णमास्यां विशेषः	५१
मलमासादौ प्रथमारंभनिर्णयः	५२
विकृतीष्टिः	,,
पशुसोमयागकालः	५३
आधानकालः	,,
अधाननक्षत्राणि	५४

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अमावास्यायां श्राद्धनिर्णयः	,,
पिण्डपितृयज्ञनिर्णयः	५५
पिण्डपितृयज्ञाकरणे प्रायश्चित्तम्	५८
वैश्वदेवाकरणे प्रायश्चित्तम्	,,
पतितभोजने प्रायश्चितम्	,,
निरग्निकस्यामानिर्णयः	,,
साग्निकस्यामानिर्णयः	,,
सिनीवालीलक्षणम्	,,
कुहूलक्षणम्	,,
कुतुपकाललक्षणम्	,,
दर्शश्राद्धेऽन्यश्राद्धसंपाते	५९
एतच्चानुपनीतोऽपि	,,
मत्र भार्यासान्निध्यादिकथनविचारः	,,
अमाश्राद्धातिक्रमे प्रायश्चित्तम्	,,
अग्नौकरणहोमे व्यवस्था	,,
ग्रहणनिर्णयः	६०
वेधनिर्णयः	,,
चन्द्रग्रहणे विशेषः	,,
चन्द्रग्रस्तोदये	६१
चन्द्रसूर्यग्रस्तास्ते	,,
ग्रहणे सन्ध्याहोमादौ	,,
बालवृद्धातुराणाम्	,,
शृताऩ्ननिषेधः	,,
तक्रघृतपाचितानां निर्णयः	,,
वेधे ग्रहणे वा भोजने प्रायश्चित्तम्	,,
ग्रहणकाले भोजने प्रायश्चित्तम्	,,
उपवासो ग्रहणे कैः कार्यः	,,
पुत्रवत उपवासनिषेधः	,,
ग्रहणे चूडामणियोगे	६२

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
स्नानादिकालनिर्णयः	६२
मुक्तिस्नानाकरणे दोषः	,,
ग्रहणस्नाने तीर्थादौ विशेषः	,,
उष्णोदकस्नाने तारतम्यम्	,,
तीर्थविशेषे दानविशेषः	६३
ग्रहणे श्राद्धविधिः	,,
ग्रहणे श्राद्धभोजने दोषः	,,
सूतके ग्रहणे च कर्तव्यविशेषः	६४
ग्रहणे रजस्वलास्नानम्	,,
ग्रहणे रात्रावपि श्राद्धविधिः	,,
चन्द्रग्रहणं दिवा चेत्	,,
ग्रहणदिने प्रतिसांवत्सरिकश्राद्धप्राप्तौ तन्निर्णयः	६५
ग्रहणे मन्त्रादिग्रहणप्रकारः	,,
जन्मराश्यादौ ग्रहणं न शुभम्	६६
तत्परिहारार्थं दानादि	,,
नागबिम्बविधिः	,,
नागबिम्बदाने मन्त्रः	६७
ग्रहणशान्तिकथनम्	,,
सप्तमृत्तिकानामानि	,,
गर्भिण्या ग्रहणावलोकननिषेधः	६८
मङ्गलकृत्येषु विशेषो वेधः	,,
मन्त्रदीक्षाहोमतर्पणम्	६९
कुरुक्षेत्रे प्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम्	,,
पूर्वसङ्कल्पितद्रव्योपग्रहणे	,,
मतान्तरखण्डनम्	,,
मेघाच्छादने अन्धादीनाम्	७०
समुद्रास्नानविधिस्तत्कालश्च	७२
भौमभृगुवारे च स्नाननिषेधः	,,
पर्वणि स्नानम्	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

बिषयाः	पृष्ठाङ्का
पसमुद्रार्घ्यमन्त्रः	७३
अत्र तर्पणविधिः	,,
एकादशीनिर्णयपट्टः	७४

*** अथ द्वितीयः परिच्छेदः ***

(अथ चैत्रमासः)

तत्रादौ तिथिकृत्ये विवाहादौ च शुक्लकृष्णमासादिनिर्णयः	८३
मीनसंक्रान्तिनिर्णयः	,,
शुक्लप्रतिपत् निर्णयः	,,
अधिकश्चेत्तदा निर्णयः	८४
तैलाभ्यङ्गः	,,
नवरात्रारम्भः	,,
प्रपादानम्	८५
प्रत्यहं धर्मकुम्भदानम्	,,
शुक्लद्वितीयानिर्णयः	,,
शुक्लतृतीयानिर्णयः	८६
सौभाग्यशयनव्रतम्	,,
मन्वादिनिर्णयः	,,
श्राद्धमुक्तम्	८७
मलमासेऽपि मन्वादिश्राद्धम्	,,
तत्र कर्तव्यतानिर्णयः	,,
अकरणे प्रायश्चित्तम्	,,
शुक्लतृतीया मत्स्यजयन्ती	,,
दशावतारजयन्त्यः	,,
शुक्लपञ्चमीनिर्णयः	८८
शुक्लपञ्चम्यां लक्ष्मीपूजनम्	,,
शुक्लाष्टमीनिर्णयः	,,
अत्रैव भवानीयात्रा	८९
अशोककलिकाप्राशनम्	,,
चैत्रशुक्लनवमीनिर्णयः	,,

विषयाः	पृष्ठांका
अकरणे प्रत्यवायः	९०
रामपूजाविधिः	९१
मलमासे रामनवमीनिर्णयः	९२
चैत्रशुक्लैकादश्यां दोलोत्सवः	,,
दमनोत्सवः	९३
तिथिविशेषे दमनारोपणम्	,,
आगमोक्तदीक्षावतां दमनारोपणम्	,,
शुक्लत्रयोदशी	९५
शुक्रास्तादावपि दमनारोपणविचारः	,,
अनङ्गव्रतम्	,,
शुक्लचतुर्दशी	,,
पूर्णिमानिर्णयः	९६
अत्र विशेषयोगे सति चित्रवस्त्रदानान्नदानश्राद्धाद्युक्तम्	,,
सर्वदेवानां दमनकपूजा	
इयं मन्वादिः	,,
कृष्णत्रयोदश्यां महावारुणीसंज्ञकयोगः	
विशेषयोगे प्राप्ते महमहावारुणीयोगः	,,
कृष्णचतुर्दशीनिर्णयः	,,
कृष्णचतुर्दश्यां गङ्गास्नाने कृते प्रेतत्वविमुक्तिकथनम्	९७

(अथ वैशाखमासः)

मेषसंक्रान्तिनिर्णयः	९७
धर्मघटदानम्	,,
वैशाखस्नाने विशेषः	,,
वैशाखस्नानमन्त्राः	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
स्नाने जलाशयादीनां नाम कथनम्	९७
तीर्थानामज्ञानविषये	९८
तुलस्यादिपुष्पैर्विष्णुपूजा	,,
अश्वत्थमूलसेचने स्वकुलस्थ-रक्षा	,,
प्रपागलन्तिका	,,
उपानत्-छत्र-चन्दनाक्षतजल-पात्रान्नदानम्	,,
मलमासे सति निर्णयः	,,
वैशाखे सर्वस्नानाशक्तौ निर्णयः	,,
दानविशेषस्तु कथनम्	९९
वैशाखव्रतोद्यापनविधिकथनम्	,,
उद्यापनाशक्तौ निर्णयः	१००
अक्षय्यतृतीयानिर्णयः	,,
अत्र विशेषयोगप्राप्ते महत्फलम्	,,
युगादिनिर्णयः	,,
अत्र श्राद्धनिर्णयः	१०१
यवैरेव विष्णुपूजननादि	,,
पिण्डरहितश्राद्धनिर्णयः	१०२
रात्रिभोजने प्रायश्चित्तम्	,,
वैशाखे मलमासे सति तदैव युगादिः कार्या	१०३
अत्र श्राद्धाकरणे प्रायश्चित्तम्	१०३
अत्र समुद्रस्नानं प्रशस्तम्	,,
परशुरामजयन्तीनिर्णयः	,,
शुक्लसप्तम्यां गङ्गोत्पत्तिनिर्णयः	,,
शुक्लद्वादश्यां यागविशेषः	१०५
शुक्लचतुर्दशी नृसिंहजयन्ती	,,
पौर्णमायामुदकुम्भसुवर्ण-तिलादीनां दानम्	१०६

*** अथ ज्येष्ठमासः ***

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
वृषसंक्रान्तिनिर्णयः	१०७
शुक्लतृतीयायां रम्भाव्रतम्	,,
ज्येष्ठशुक्लदशहरानिर्णयः	,,
दशयोगनामानि	,,
अत्र बुधभौमयोः कल्पभेदेन व्यवस्था	
योगबाहुल्ये फलाधिक्यम्	,,
मलमासेऽपि कार्यम्	,,
दशाश्वमेधिकलिंगदर्शने महत्फलम्	१०८
गङ्गापूजनविधिः	,,
मूर्तीनां पूजनम्	,,
प्रस्थपरिमाणम्	,,
हंसकारण्डबकनिर्माणकथनम्	,,
स्तोत्रपाठक्रमनिर्णयः	१०९
शुक्लैकादशीनिर्णयः	११०
शर्करादिसहितकुम्भदानम्	,,
पूर्णिमायां सावित्रीव्रतम्	,,
पाश्चात्यमते व्रतममायाम्	१११
हेमाद्रिसमयोद्योतमते भाद्रपूर्णिमायाम्	,,
गौडमते ज्येष्ठकृष्ण चतुर्दश्याम्	,,
अत्र पूर्णिमामावास्यानिर्णयः	,,
अत्र पारणानिर्णयः	,,
स्त्रीव्रते विशेषः	,,
पूर्णिमायां तिलादिदानम्	११२
पूर्णिमा महाज्येष्ठी	,,
इयं मन्वादिः	,,
पूर्णिमानिर्णयः	,,
विशेषस्तु चैत्रे उक्तः	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
ज्येष्ठमासे त्रिविक्रमप्रीत्यर्थं दाननिर्णयः	,,
❀ अथाषाढमासः ❀	
मिथुनसंक्रान्तिनिर्णयः	११२
शुक्लद्वितीयायां रथोत्सवः	,,
शुक्लदशमीपौर्णमासी च मन्वादिः	,,
सा पूर्वाह्णव्यापिनी ग्राह्या	,,
शुक्लद्वादश्यां पारणानिर्णयः	,,
विष्णुशयनोत्सवः	११३
एकादशीद्वादश्योर्देशभेदेन व्यवस्था	,,
इदं मलमासे न कार्यम्	,,
चातुर्मास्यव्रतारम्भः	११४
अस्यारम्भः शुक्रास्तादावपि	,,
सूतके प्राप्ते विचारः	,,
इदं शिवभक्त्यादिभिरपि कार्यम्	,,
व्रतग्रहणप्रकारः	,,
गृहीतेऽस्मिन् व्रते यदि मरणं	११५
चातुर्मास्ये भक्ष्याभक्ष्यनिर्णयः	,,
अत्र मञ्चखट्वादिशयनवर्जनम्	,,
शाकं दशविधम्	११६
आमिषपरिगणनम्	,,
हविषः परिसंख्यानम्	११७
व्रतभेदेन फलविशेषः	,,
व्रतविशेषेण दानानि	११८
शयनीबोधनीमध्ये दूर्वा-अपामार्ग-भृङ्गराजेन देवपूजाविचारः	,,
आषाढादिचतुरमासपर्यन्तम-भ्यङ्गनखकृन्तनादिवर्जनम्	,,
समाप्तौ मधुसर्पिर्घटादिदानम्	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
व्रतमध्ये फलाहारादिविचारः	,,
तप्तमुद्राधारणविधिः	११९
पूर्णिमायां कोकिलाव्रतम्	१२०
शिवशयनोत्सवः	,,
अत्रैव व्यासपूजा	,,
❋ अथ श्रावणमासः ❋	
कर्कसंक्रान्तिनिर्णयः	१२१
कुम्भे कर्कटादौ विचारः	,,
नदीनां रजोदोषः	,,
नदीसंज्ञा	१२२
सिंहकर्कटयोः क्षुद्रनदीषु स्नाननिषेधः	,,
महानद्यः	,,
सप्त नदाः	,,
रजोदुष्टमपि जलं गङ्गाजलयोगेन पावनम्	,,
नूतनकूपादौ विशेषः	१२३
कुत्र चिद्रजोदोषाभावः	,,
शुक्लतृतीया मधुश्रवा	,,
शुक्लचतुर्थी	,,
शुक्लपञ्चमी	,,
अत्र विशेषो हेमाद्रौ	,,
शुक्लद्वादश्यां दधिव्रतपवित्रारोपणादिविधिः	,,
विष्णुपवित्रारोपणम्	१२४
देवतापरत्वेन पवित्रारोपणम्	,,
पवित्रारोपणे गौणकालः	,,
सुवर्णादिपवित्रनिर्माणप्रकारः	,,
देवतापरत्वे अधमादिसंज्ञा	,,
पवित्रारोपणेऽधिकारिणः	१२५
देवताभेदेन तिथयः	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्क
पवित्रारोपणविधिः	,,
पवित्रारोपणाकरणे	
प्रायश्चित्तम्	१२६
शुक्लचतुर्दशी	,,
उपाकर्मनिर्णयः	,,
उपाकर्मोत्सर्जनविषये कालः	१२७
प्रथमश्रावणीनिर्णयः	१२९
प्रथमारम्भे वृद्धिश्राद्धनिर्णयः	,,
कर्मकालमाह	१३२
उपाकर्मोत्सर्जनलोप्रायश्चित्तम्	१३३
पौषमासे उत्सर्जनं कार्यम्	,,
उपाकर्मोत्सर्जनयोर्ऋषिपूजनम्	१३३
उपाकर्मण्युत्सर्गे अनध्यायः	,,
अत्र नदीनां रजोदोषो नास्ति	,,
पौर्णमायां रक्षाबन्धनम्	,,
शूद्राणां मन्त्ररहितस्नानं दानम्	,,
भद्रायां रक्षाबन्धनविचारः	,,
प्रतिपद्युतापूर्णिमा रक्षाबन्धने	,,
रक्षाबन्धनमन्त्रः	१३४
अत्रैव हयग्रीवोत्पत्तिः	,,
श्रवणाकर्म	,,
श्रावणादिमासे कृष्णद्वितीयायाम् अशून्यव्रतम्	,,
*** अथ भाद्रपदमासः ***	
सिंहसंक्रान्तिः	१३५
सिंहसंक्रान्तौ गोः प्रसवे	,,
महिष्यादिप्रशवशान्तिः	,,
निशीथे मध्यरात्रौ वागो क्रन्दने	,,
अष्टमीव्रताकरणे प्रत्यवायः	,,
जयन्तीव्रतं नित्यं काम्यं च	१३७

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
जयन्तीव्रताकरणे दोषः	,,
योगबाहुल्ये फलाधिक्यम्	,,
कज्जलीबहुलाव्रतनिर्णयः	,,
अत्र गोपूजा यवान्नाशनं च	,,
कृष्णषष्ठी हलषष्ठी	,,
शीतलाव्रतविधिः	,,
जन्माष्टमीव्रतम्	१३६
अष्टमी द्वेधा	,,
अत्र रोहिणीयुतापि चतुर्धा	,,
अष्टम्यां निशीथवेध एव मुख्यः	१३९
अष्टम्यां रोहिणीराहित्यतत्सत्त्वादिभेदेन निर्णयः	१४१
पारणानिर्णयः	१४२
महानिशालक्षणम्	,,
अष्टम्यां कृष्णादिपूजनम्	१४३
इदं प्रतिमासकृष्णाष्टम्यां कार्यम्	,,
अमायां कुशग्रहणम्	१४४
हरितालिकाव्रतम्	,,
शुक्लचतुर्थी वरदचतुर्थी	१४५
तत्र गणेशस्वरूपम्	,,
इयं रविभौमयोरतिप्रशस्ता	,,
अत्र चन्द्रदर्शनं निषिद्धम्	,,
ऋषिपञ्चमीनिर्णयः	,,
सूर्यषष्ठीनिर्णयः	१४६
अत्र स्नानादिनियमः	,,
मुक्ताभरणसप्तमी	,,
दूर्वाष्टमी	,,
इदं स्त्रीणां नित्यम्	१४७
दूर्वापूजाविधिः	,,
अत्राग्निपक्व भक्षणम्	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
ज्येष्ठापूजा	१४७
इयं योगविशेषे निर्णयः	,,
शुक्लद्वादश्यां पारणानिर्णयः	१४८
विष्णुपरिवर्तनोत्सवः	,,
अत्रैव शक्रध्वजोत्थापनम्	,,
श्रावणद्वादशी	,,
इयं बुधवारेऽति प्रशस्ता	१४९
अत्र पारणानिर्णयः	१५०
श्रावणद्वादश्यां संगमे स्नानविधिः	१५१
अत्रैव जलपूर्णसवस्त्र-छत्रोपानह-दानम्	,,
वामनद्वादशीनिर्णयः	१५२
अत्र कल्पभेदाद्व्यवस्था	,,
वामनपूजाविधिः	,,
अत्र पूजनसमयनिर्णयः	,,
दुग्धव्रतम्	१५३
अत्रेदं चिन्त्यते	,,
शुक्लचतुर्दश्यामनन्तव्रतम्	,,
अत्रैवागस्त्यार्घ्यदानम्	१५४
शुक्लपौर्णमायां श्राद्धनिर्णयः	१५६

❀ अथाश्विनमासः ❀

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
कन्यासंक्रान्तिः	१५६
महालयः	,,
षोडशमहालयनिर्णयः	१५७
महालये विधवायाः पार्वणचतुष्टयम्	१५८
महालये वर्ज्यतिथिनक्षत्रादि	,,
एषामपवादः	१५९
संन्यासिनां महालयः	१६०
कालातिक्रमे वृश्चिकपर्यन्तं गौणकालः	१६०
महालयादिश्राद्धमन्नेनैवकार्यम्	१६१
महालये पितृदेवतानिर्णयः	,,
अनेकसापत्नमातृषु पिण्डदानम्	,,
बहुब्राह्मणाभावे	१६२
एकोद्दिष्टस्वरूपम्	,,
पाणिहोमः	,,
अत्र धूरिलोचनौ देवौ	,,
संन्यस्तपितृकेण जीवत्पितृकेणापि महालयः कार्यः	,,
जीवत्पितृके निषेधः	१६३
महालये तर्पणनिर्णयः	,,
निषिद्धदिने तर्पणम्	,,
अधिकमासे महालयादिनिषेधः	,,
प्रथमाब्दे महालयकृताकृतः	,,
इदं नित्यं काम्यं च	१६४
अकरणे प्रायश्चित्तकथनम्	,,
भरणीश्राद्धम्	,,
कपिलाषष्ठी	,,
अत्र विशेषो हेमाद्रौ स्कान्दे	१६५
चन्द्रषष्ठीनिर्णयः	,,
मघावर्षश्राद्धम्	,,
महालक्ष्मीव्रतनिर्णयः	१६६
नवम्यामन्वष्टका	१६७
अत्र शाखाभेदेन व्यवस्था	,,
इदं जीवत्पितृकेणापि कार्यम्	,,
अत्र देशाचाराद्व्यवस्था	,,
अन्वष्टकाश्राद्धमनुपनीतेनापि कार्यम्	१६
भाद्रकृष्णनवम्यां सुवासिनीभोजनम्	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अत्राशक्तावनुकल्पमाह	१६६
एतदकरणे प्रायश्चित्तम्	,,
द्वादश्यां संन्यासिनः श्राद्धम्	,,
मघात्रयोदशीश्राद्धम्	,,
एतच्चाविभक्तैरपि पृथक्कार्यम्	,,
गजच्छायोक्ता	,,
मघात्रयोदशीमहालयः	,,
युगादिश्राद्धानां तन्त्रेण प्रयोगः	,,
अत्र सुवासिनीभोजनम्	,,
स्त्रीश्राद्धे अलङ्काराः देयाः	१६९
अमाव्यतीपातादौ श्राद्धाकरणे प्रत्यवायकथनम्	,,
अकरणे प्रायश्चित्तम्	,,
संन्यासिनोप्याब्दिकादिकथनम्	,,
त्रयोदशीश्राद्धम्	,,
एतच्चाविभक्तैरपि कार्यम्	१७०
इदं मलमासेऽपि कार्यम्	,,
अकरणे महद्धानिः	,,
अत्र मतमतान्तरम्	,,
शस्त्रविषाद्युपघातविपन्नानां	,,
चतुर्दश्यां श्राद्धम्	१७१
इदं प्रसवादिमृतानां न	,,
चतुर्दश्यां मृते निर्णयः	१७२
दौहित्रश्राद्धं जीवत्पितृकेणापि कार्यम्	१७३
अत्र मूलं विमृश्यम्	,,
मलमासे न कार्यम्	१७४
नवरात्रारम्भे प्रतिपन्निर्णयः	,,
अत्र देवीपूजायाःप्राधान्यात्फलम्	१७६
अत्र उपवासादिरात्रिपूजाविचारः	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
वैधृत्यादिदुष्टयोगे प्रतिपन्न ग्राह्या	१७८
चित्रादिनिषेधे मूलं चिन्त्यम्	,,
अत्र कलशस्थापनविचारः	१७९
अथ पूजाविधि	,,
कुमारीपूजा	,,
अङ्गहीनकुमारीपूजने दोषः	१८०
कामनापरत्वे कुमारीपूजने	,,
वेदपारायणविधिः	,,
चण्डीपाठं जपेत्	,,
पुस्तकस्थापनफलम्	,,
स्वहस्तलिखिते पाठफलम्	१८१
वृद्धिपाठक्रमादिनिर्णयः	,,
तिथिह्रासे वृद्धौवाश्राद्धादिविचारः	,,
स्वस्याशक्तावन्येन अन्यद्वारापूजा	,,
इदं शुक्रास्तादावपि कार्यम्	,,
मलमासे न भवति	,,
अत्राश्वपूजनम्	,,
प्रतिपदादिषु विशेषपूजाविधिः	,,
अत्र स्त्रीव्रते विशेषः	,,
अत्राशौचे निर्णयः	१८२
सधवास्त्रीणां नवरात्रे ताम्बूलादिचर्वणम्	१८३
उपाङ्गललिताव्रतम्	,,
सरस्वतीस्थापनपूजनादिविचारः	,,
षष्ठ्यां बिल्वाभिमन्त्रणम्	,,
पत्रिकापूजा	१८४
अस्यामेव देवीत्रिरात्रम्	,,
देवीगृहप्रतिमाकरणविधिः	१८६
मूर्तिस्थापने विशेषः	,,
हेमाद्रिप्रतिमाकरणम्	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः पृष्ठाङ्काः

प्रतिमाभावे विशेषः १८६
सप्तमीपूजाविधिः १८७
अत्र शस्त्रादिपूजा ,,
दुर्गास्तुतिमन्त्राः १९९
महाष्टमीव्रतनिर्णयः ,,
महानवमी ,,
पुत्रवतोऽष्टम्यामुपवासनिषेधः ,,
लौहाभिसारिकं कर्म १९१
राजचिह्नानां पृथक्पूजामन्त्राः ,,
अष्टमीरात्रौ जागरणम् १९४
अमुकसंख्यासुरासवद्वारा परमेश्वरीम् ,,
नवम्यामपराह्णे कर्तव्यविशेषः ,,
बलिदानविधिः ,,
महानवमीनिर्णयः ,,
होमे विशेषः १९५
बलिदाने विशेषः १९६
शतचण्डीविधानम् १९८
सहस्रचण्डीप्रकारः १९९
नवरात्रपारणानिर्णयः २००
स्त्रीणां रजोदर्शने पारणनिर्णयः २०१
दशम्यां देवीविसर्जनविधिः २०२
विजयादशमी ,,
पौर्णमासीनिर्णयः २०४
पौर्णमास्यां लक्ष्मीपूजनादि ,,
आश्वयुजीकर्म ,,
आग्रयणनिर्णयः ,,
तस्याकरणे प्रायश्चित्तम् २०५
आपदि मलमासे कर्त्तव्यता विचारः ,,
देशविशेषे स्नानमाहात्म्यम् २०६

विषयाः पृष्ठाङ्काः

इदं स्नानं काशीपञ्चनदेऽप्यति प्रशस्तम् २०६

❀ अथ कार्तिकमासः ❀

तुलासंक्रान्तिः २०६
कार्तिकस्नानम् ,,
प्रातःस्नाने नियमः ,,
तत्र मन्त्रः २०७
अर्घ्यमन्त्रौ ,,
अशक्तौ विकल्पः ,,
मालाधारणविचारः ,,
यात्राविधिः ,,
पूजने नियमः ,,
द्विदलादिवर्जनम् २०८
धात्रीच्छाये पिण्डदानम् ,,
अत्र पूजने फलम् ,,
होमादौ विशेषः ,,
ग्राह्यहविः ,,
आकाशदीपदानप्रकारः २०९
तद्विधिश्च ,,
करकचतुर्थीनिर्णयः २१०
गोवत्सद्वादशी ,,
तत्र गोप्रदानादिविधिः ,,
द्वादश्यादिपञ्चदिनेषु-नीराजनविधिः ,,
कृष्णत्रयोदश्यां यमदीपदानम् ,,
नरकचतुर्दश्यामभ्यङ्गस्नानम् २११
अस्यामेव दीपोत्सवः २१२
अस्यां माषपत्रशाकभोजनम् २१३
अत्र यमतर्पणम् ,,
तर्पणप्रकारः ,,
अत्र मुखे नियमः ,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
देवतीर्थेन नियमः	२१३
यज्ञोपवीतिना प्राचीनावीतिना कर्तव्यता	,,
इदं जीवत्पितृकेणापि	,,
अत्र भीष्मतर्पणम्	,,
तत्प्रकारस्तु माघे मासे	,,
अमावास्यायामभ्यङ्गः	,,
लक्ष्मीपूजनम्	२१४
अत्र पार्वणश्राद्धम्	,,
अत्र दीपप्रज्वालनसमयः	,,
अलक्ष्मीर्निस्सारणम्	,,
अत्र बलिपूजा	२१५
शुक्लप्रतिपदि गोक्रीडनम्	,,
अत्रैव द्यूतं कर्तव्यम्	,,
अस्यां गोवर्धनपूजा	,,
अत्र मार्गपालीबन्धनम्	२१७
यमद्वितीयानिर्णयः	,,
यमपूजनं यमुनास्नानञ्च	,,
अस्यां भगिनीहस्ताद्भोजनम्	,,
शुक्लनवमी युगादिः	२१८
शुक्लैकादश्यां भीष्मपञ्चकव्रतम्	,,
अत्र पारणादिविधिः	२१९
अस्यामेव रात्रौ देवोत्थापनम्	,,
अत्र देशाचारतो व्यवस्था	२२०
विष्णुप्रबोधोत्सवः	,,
चातुर्मास्यव्रतसमाप्तिः	,,
वाराहोक्तो बोधनीविधिः	,,
इदं शुक्रास्तादावपि कार्यम्	२२१
आशौचे तु पूजामन्यद्वारा कारयेत्	,,
शुक्लद्वादशीपौर्णमासी च मन्वादिः	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
सा पौर्वाह्णिकी ग्राह्या	२२१
वैकुण्ठचतुर्दशीनिर्णयः	,,
अस्यामेव विश्वेश्वरप्रतिष्ठादिनम्	,,
मासव्रतोद्यापनम्	,,
पौर्णमासी	२२२
अत्र योगविशेषः	,,
अस्यां पद्मकयोगः	,,
अस्यामेव प्रयागादिस्नानम्	,,
अस्यामेव मत्स्यावतारः	,,
त्रिपुरोत्सवः	,,
वृषोत्सर्गः	,,
कृत्तिकायोगे कार्तिकेयदर्शनम्	२२३
*** अथ मार्गशीर्षमासः ***	
वृश्चिकसंक्रान्तिः	,,
कृष्णाष्टमीकालाष्टमी	,,
तत्रोपवासादिविधिः	,,
शुक्लपञ्चमीनागपञ्चमी	,,
शुक्लषष्ठी चम्पाषष्ठी	२२४
इदमेव स्कन्दषष्ठी	,,
शुक्लचतुर्दश्यां पिशाचमोचनश्राद्धम्	,,
पूर्णिमानन्तराष्टमी अष्टका	२२५
अष्टकानिर्णयः	,,
अन्वष्टकातिथयः	,,
अत्र कामकालौ देवौ	२२६
अष्टकाकरणे प्रायश्चित्तम्	,,
अष्टकामलमासे सति निर्णयः	,,
मार्गमासादिषुरविवारेकाम्यव्रतम्	,,
*** अथ पौषमासः ***	
धनुःसंक्रान्तिः	,,
शुक्लाष्टम्यां योगविशेषे	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषया:	पृष्ठाङ्का:
जपहोमादिविधि:	२२६
अत्रैव रोहिण्यार्द्रायोगे विशेषफलम्	,,
शुक्लैकादशीमन्वादि:	,,
पौर्णिमासीनिर्णय:	,,
सप्तम्यष्टमीनवम्योऽष्टका	,,
अमायामर्धोदयनिर्णय:	२२७
अत्र दानादिविशेष:	,,
❀ अथ माघमास: ❀	
माघस्नानविधि:	२२८
अत्राधिकारिण:	,,
अशक्तौ उष्णोदकस्नानम्	,,
मलमासे सति निर्णय:	२२९
देवानां पितॄणां च मूलीदाने	,,
माघस्नाने मन्त्र:	,,
सूयार्घ्यदानमन्त्र:	,,
माघस्नानकाल:	,,
इदं स्नानं प्रयागेऽतिप्रशस्तम्	२३०
विस्तरस्तु प्रयोगसेतौ	,,
स्नानसमये प्रयागमरणे फलम्	,,
समुद्रेप्यतिप्रशस्तम्	,,
मासस्नानाशक्तौ	,,
प्रयागं विनापि स्नाने नियमा:	,,
प्रयागासंभवे काश्यां दशाश्वमेधस्थप्रयागतीर्थस्नानम्	,,
स्नानोत्तरकृत्यम्	२३१
अत्र भोज्यकम्बलादिदानम्	,,
अत्रैकादशीवत् व्रतोद्यापनम्	,,
मकरसंक्रान्तिनिर्णय:	२३२
तत्र कालनिर्णय:	,,
मकरे दानविशेष:	२३३

विषया:	पृष्ठाङ्का:
अत्र रात्रावपि श्राद्धम्	२३४
अमायामर्धोदय:	,,
कृष्णचतुर्दश्यां यमतर्पणम्	,,
शुक्लचतुर्थ्यां तिलचतुर्थी	,,
इदमेव कुन्दचतुर्थी	,,
श्रीपञ्चमी	,,
अत्र चैत्रशुक्ले श्रीपञ्चमी	,,
रथसप्तमी	२३५
अस्यां स्नानमुक्तम्	,,
प्रयागे स्नाने महत्पुण्यम्	,,
अत्र दानादि	,,
सूर्ययन्त्रम्	,,
स्नानमन्त्रा:	,,
अर्घ्यमन्त्र:	,,
दानमन्त्र:	,,
इयं मन्वादि:	[illegible]३
मलमासस्यागमने	,,
भीमाष्टमी	,,
अत्र श्राद्धमुक्तम्	,,
भीष्मतर्पणमन्त्रा:	,,
एतज्जीवत्पितृकस्यापि भवति	२३७
एतच्चापसव्येन कार्यम्दिवोदासीये	,,
भीष्मद्वादशी	,,
पौर्णिमानिर्णय:	,,
अत्र वैशाखी-कार्तिकी माघीपूर्णिमा	,,
माघीपूर्णिमान्तरा अष्टका	,,
मलमासे न भवति	,,
❋ अथ फाल्गुनमास: ❋	
कुम्भसंक्रान्ति:	२३८
सीताष्टमी	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
महाशिवरात्रिनिर्णयः	२३८
इदं रविभौमादिवारे शिवयोगे वा	,,
चातिप्रशस्ता	२४०
शिवरात्रिपारणानिर्णयः	,,
कृष्णचतुर्दश्यां कृत्तिवासेश्वरपूजा	,,
इदं व्रतं नित्यं काम्यं च	२४१
अस्यां व्रतारंभे हेमाद्रौ	२४२
उद्यापनविधिः	,,
माघी-अमावास्ययां युगादिः	,,
तथान्योऽपि योगविशेषः	,,
होलिकानिर्णयः	२४३
भद्रानिर्णयः	,,
भद्रामुखं तु	२४४
अत्र ग्रहणे होलिकानिर्णयः	,,
मलमासे सति निर्णयः	२४५
इयं मन्वादिः	,,
मलमासे सति मन्वादिश्राद्धम्	,,
गोविन्ददोलोत्सवः	,,
चैत्रकृष्णप्रतिपदि वसन्तोत्सवः	,,
चैत्रकृष्णप्रतिपदायां श्वपचस्पर्शने विशेषः	,,
होलिकाविभूतिबन्दनम्	,,
तत्र मन्त्रः	,,
आम्रकुसुमप्राशनविधिः	,,
चैत्रामावास्यां-मन्वादिः	,,
ग्रन्थकर्तुरभ्यर्थना	२४६
अथ तृतीयपरिच्छेदस्य पूर्वार्द्धम्	
(तत्रादौ संस्कारप्रकरणम्)	
प्रथमरजोदर्शने तिथिफलम्	२४७
वारफलम्	,,
योगफलम्	२४७
नक्षत्रफलम्	,,
राशिफलम्	,,
वस्त्रफलम्	,,
रक्तबिन्दुफलम्	,,
संमार्जनीकाष्ठादिहस्ते दधाना फलम्	२४८
प्रभूतदोषे स्त्रीसंसर्गवर्जनम्	,,
योगादौ फलम्	,,
भुवनेश्वरीशान्तिः	,,
द्वात्रिंशदौषधीसंख्या	२४९
प्रथमर्त्तौ कर्तव्यविशेषः	२५०
द्वितीयाद्यृतुषु नियममाह	,,
प्रथमर्तौ पूर्वं स्त्रीगमने प्रायश्चित्तम्	,,
ऋतौ गमनमाह	,,
अनृतावपि गमनम्	,,
ऋतौ रात्रिसंख्या	२५१
तत्र निन्द्यरात्रयः	,,
तत्र तिथ्यादीनाह	,,
समविषमरात्रिफलम्	,,
चतुर्थ्यादिरात्रिफलानि	२५२
श्राद्धादौ स्त्रीगमने निर्णयः	,,
अनेकभार्यस्यतु यौगपद्ये	२५३
ऋतावगमने दोषः	,,
अस्यापवादः	,,
गर्भाधानाङ्गहोमाकरणे प्रायश्चित्तम्	,,
गर्भाधानमलमासगुरुशुक्रास्तादिनिर्णयः	,,
ऋतुगमने शुद्धिमाह	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
ऋतौ स्त्रिया अस्पृश्यत्व-निर्णयः	२५४
रात्रौ रजसि जननादौ च निर्णयः	,,
सप्तदशदिनादिसंख्याके रजोदर्शने निर्णयः	,,
कर्माधिकारस्तु रजोनिवृत्त्या वेव	,,
रजस्वलानां परस्परस्पर्शे निर्णयः	,,
नैमित्तिके प्राप्ते रजस्वला नियमः	२५५
ज्वरे रजस्वलास्नानम्	
रजसोऽज्ञाने तु विचारः	,,
पुंसवनविधिः	२५६
प्रतिगर्भे विचारः	,,
पुंनक्षत्राणि	,,
पुंसवने तिथ्यादि	,,
अनवलोभनम्	२५७
सीमन्तोनयनविधिः	,,
प्रतिगर्भेतिकर्तव्यतानिर्णयः	,,
सीमन्तोन्नयनाभावे	,,
सीमन्तोन्नयने भोजने	,,
गर्भिणीपतिधर्माः	,,
गर्भिणीसामिषभोजने नियमः	२५९
सूतिकागृहप्रवेशः	,,
जातकर्मविधिः	,,
अत्र श्राद्धविचारः	२६०
मृद्वादिलक्षणम्	,,
जातकर्मनामकर्मादावतिवर्जम्	,,
जननमरणाशौचयोर्जातकर्मप्राप्तौ	,,
जन्मनि दुष्टफलम्	२६१

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
दुष्टजन्मनि दानम्	२६१
आश्लेषाजननफलम्	,,
ज्येष्ठाफलम्	,,
मूलफलम्	,,
अमुक्तमूलजन्मनि शिशोः त्यागे निर्णयः	२६२
मूलवृक्षः	,,
वृषादिपरत्वेन मूलवासस्तत्फलं च	,,
विशाखादिनक्षत्रजननफलम्	,,
चित्रादिफलम्	२६३
व्यतीपातादिफलम्	,,
विकृताङ्गजनने फलम्	,,
सदन्तजातपादजातफलम्	,,
कृष्णचतुर्दशीजनने	,,
पित्राद्येकनक्षत्रजनने	,,
ग्रहणे प्रसूतिफलम्	,,
ग्रहणजननशान्तिः	,,
अकालादिप्रसूतौ देशनाशाद्यनिष्टफलम्	२६४
युग्मप्रसवादिफलम्	,,
विकृतप्रसवादिफलम्	,,
उपरिदन्तजनने फलम्	,,
द्वितीयादिमासे दन्तजनने फलम्	,,
तच्छान्तिविधिः	,,
प्रथमोर्ध्वदन्तजनने फलम्	,,
तच्छान्तिविधिः	,,
त्रिकप्रसवशान्तिः	२६५
षष्ठीजन्मदादिदेवतापूजनम्	,,
दत्तकग्रहणविधिः	२६६
स्त्रीद्रयोर्दत्तकविचारः	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
शूद्रकर्तृकहोमे विशेषः	२६७
दत्तके विशेषः	,,
यमलसंस्कारे ज्येष्ठकनिष्ठत्वम्	२६८
अत्र कमलाकरमतम्	,,
सूतिकास्नानम्	,,
नामकर्मविधिः	,,
दोलारोहणविधिः	२६९
दुग्धपानम्	२७०
कर्णवेधः	,,
ताम्बूलभक्षणम्	,,
निष्क्रमणम्	,,
उपवेशनम्	२७१
अन्नप्राशनम्	,,
अब्दपूर्तिः	२७२
अत्र वर्ज्यम्	२७३
उष्णोदकस्नानमुक्तम्	,,
कटिसूत्रम्	,,
चौलम	,,
उपनीत्या सह चौलविचारः	,,
मातरि गर्भिण्यां विचारः	२७४
ज्वरोत्पत्तौ विचारः	,,
मातरि रजस्वलायां विचारः	,,
संकटे विचारः	२७५
मण्डनमुण्डनविचारः	,,
सोदरयोःसमानक्रियानिषेधविचारः	
आशौचादौ प्राप्ते निर्णयः	,,
षष्ठाब्दादौ मुण्डननिषेधः	,,
शिखाधारणविचारः	,,
स्त्रीशूद्रयोः शिखाविचारः	,,
अत्र भोजने प्रायश्चित्तम्	२७६
स्त्रीणां संस्काराः	,,
विद्यारम्भः	४७६
धनुर्विद्याप्रदानम्	,,
अनुपनीतस्य विशेषः	,,
शिशुलक्षणम्	,,
उपनयनम्	२७७
अत्र विशेषफलत्वम्	,,
जन्ममासादिनिर्णयः	,,
उपनयने गुरुबलम्	२७८
गलग्रहाः	२७९
नैमित्तिकानध्यायाः	,,
प्रथमपुत्रादौज्येष्ठमासादिनिर्णयः	,,
सोपपदास्तिथयः	,,
प्रदोषस्वरूपम	,,
अक्षय्यतृतीयादौ उपनयनम्	,,
भूकम्पादौ	,,
उपनयने नक्षत्राणि	,,
पुनरुपनयनम्	२८०
शाखाधिपाः	,,
प्रातःसंध्यागर्जने	,,
गर्जितादिशान्तिः	२८१
उपनयनेऽधिकारिणः	,,
षण्ढमूकादीनां विशेषः	,,
कुण्डगोलकयोर्गायत्र्युपदेशः	,,
भिक्षायां विचारः	२८२
संस्कारलोपे प्रायश्चित्तम्	,,
अतीतसंस्काराणां युगपत्करणम्	,,
उपनीत्या सह चौलकरणे	,,
उपनयनदिने मध्याह्नसंध्या	,,
ब्रह्मयज्ञारम्भः	,,
ब्रह्मचारिधर्माः	२८३
गुरूच्छिष्टम्	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
यतिब्रह्मचारिणो वर्जनम्	२८३
ब्राह्मणादिभेदेन मेखलाभेदाः	,,
दण्डग्रहणे विशेषः	,,
अजिनग्रहणनिर्णयः	२८४
यज्ञोपवीतधारणविधिः	,,
यज्ञोपवीतं तन्निर्माणप्रकारश्च	,,
यज्ञोपवीतधारणसंख्या	,,
ब्रह्मचारिधर्मलोपे प्रायश्चित्तम्	,,
यज्ञोपवीतलोपे प्रायश्चित्तम्	२८५
अग्निकार्यलोपे	,,
संध्यालोपे	,,
मधुमांसभक्षणे कर्तव्यता	,,
स्त्रीसङ्गे तु विशेषः	,,
यज्ञोपवीतं विना भोजनादिकरणे प्रायश्चित्तम्	,,
पुनरुपनयनं तन्निमित्तानि च	२८६
मृतवार्तां श्रुत्वा कृतौर्ध्वदेहिकः पुनरागच्छति चेत्	,,
प्रव्रजितः पुनर्गृहस्थाश्रमं कर्तुमिच्छति चेत्	,,
पित्रादिव्यतिरेके प्रेतकर्मकरणे	२८७
एकं वेदमधीत्य द्वितीयमध्येतुमिच्छति चेत्	,,
पुनरुपनयने कृत्यविचारः	,,
स्त्रीणामुपनयनम्	,,
अनध्यायाः	,,
नैमित्तिकानध्यायाः	,,
प्रौढपादलक्षणम्	२८८
प्रदोषलक्षणम्	२८९
पुराणादावनध्यायः	,,
महानाम्न्यादिव्रतम्	२९०

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
समावर्तनम्	२९०
बटोः पूर्वमृतानां त्र्यहाशौचम्	,,
स्नातकव्रतानि	,,
छुरिकाबन्धः	२९१
कन्यापरीक्षणम्	,,
सापिण्डनिर्णयः	,,
त्रिगोत्रापत्ये विशेषः	२९३
मातुलकन्यापरिणयनिर्णयः	२९४
जीवत्पित्रादित्रिकसपिण्डाः	२९५
कन्यासापिण्ड्यम्	२९६
सापत्नमातामहकुले सापिण्ड्यम्	,,
दत्तकस्य सापिण्ड्यम्	२९७
गोत्रप्रवरनिर्णयः	२९९
प्रवरविर्णयः	३००
गोत्रप्रवरकोष्ठानि	,,
द्विगोत्राः	३१०
स्वगोत्राज्ञानेविचारः	३११
मातृगोत्रवर्जनम्	,,
सगोत्रसपिण्ड्यादिप्रायश्चित्तम्	३१२
कन्याविवाहकालः	,,
गुर्वर्कबलम्	३१३
बृहस्पतिशान्तिः	३१४
सिंहस्थे निर्णयः	,,
शुक्रास्तादिनिमित्तो	,,
कन्यादाने दातृक्रममाह	,,
भ्रातॄणां संस्कृतानामेवाधिकारः	३१५
असंस्कृतभ्रातॄणां सत्वे मातुरधिकारः	,,
स्वयम्बरे नान्दीश्राद्धम्	,,
मातृदातृत्वे नान्दीश्राद्धम्	,,
रजस्वलादिदाने फलम्	१६३

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
मासनिर्णयः	३१६
ज्येष्ठमासे विवाहे कृते	,,
दशदोषाः	३१७
अतिचारे गुरौ	,,
घातचन्द्रविचारः	,,
अकालवृष्ट्यादौ	,,
अकालवृष्टिस्वरूपम्	,,
भूकम्पादौ	,,
तत्र नान्दीश्राद्धे कृते सति	,,
कन्यावैधव्ययोगे	,,
कुम्भविवाहः	३१८
तत्र मूर्तिदाने	,,
प्रतिकूलादि	३१९
संकटे तु	,,
रजोदोषे निर्णयः	३२०
नान्दीश्राद्धोत्तरं तु रजसि	,,
संकटे सूतकादौ	,,
एकमातृजकन्यापुत्रयोरेक विवाहादि	,,
एतदपवादस्तत्रैव	३२१
मण्डनमुण्डनविचारः	,,
संकटे तु	,,
विवाहमध्ये श्राद्धपाते	,,
मासिकश्राद्धापकर्षः	,,
यमलयोः सहोदरयोश्च विशेषः	३२२
भिन्नमातृजयोर्विवाहे	,,
प्रत्युद्वाहे विधिनिषेधः	,,
विवाहात्प्राक्कन्यारजोदर्शने	३२३
स्वतः कन्यावरस्य वरणम्	,,
कन्यारजोदोषनिवृत्तये प्रायश्चित्तम्	,,
तद्विवाहे वरस्य प्रायश्चित्तम्	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
गान्धर्वाद्यष्टौ विवाहाः	३२३
बलादपहरणे कन्यायाः	३२४
आशौचे तु	,,
नान्दीमुखदिनावधिः	,,
सूतके प्राप्ते प्रायश्चित्तम्	,,
अन्नादौ विशेषः	३२५
भुञ्जानेषु विप्रेषु विशेषः	,,
धर्मार्थविवाहे	,,
कन्यागृहभोजने कृते	,,
जामातरं प्रति क्रोधवर्जनम्	,,
नूतनवस्त्रधारणेनियमः	,,
विवाहादिमध्ये स्त्रिया सह भोजन-निर्णयः	,,
विवाहे नक्षत्राणि	,,
वर्ज्यवाराः	३२६
अनिष्टनक्षत्रादौ दानम्	,,
विवाहे मण्डपादिप्रमाणम्	,,
तैलहारिद्रालेपनादि	,,
विवाहवेदिका	,,
मृदाहरणम्	,,
अङ्कुरार्पणम्	,,
कन्यावरयोर्वरणं वाग्दानं च	३२७
वाग्दानोत्तरं वरमरणे	,,
उद्वाहिता कन्या मैथुनं न प्राप्ता-चेन्निर्णयः	,,
स्वगोत्रा सपिण्ड्यादिविवाहे	,,
देशान्तरगमने तु	,,
शुक्लदाने तु	,,
नान्दीश्राद्धे विशेषः	३२८
लग्नघटीस्थापनम्	,,
मधुपर्कविधिः	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अत्र विशेषनिर्णयः	३२८
विष्टरलक्षणम्	,,
कन्यादाने दानप्रकारः	,,
गृहप्रवेशनीयहोमे	३२९
देवकोत्थापनम्	,,
नान्दीश्राद्धोत्तरं निषेधादि	,,
विवाहे स्पृष्टास्पृष्टिदोषाभावः	,,
मङ्गलोत्तरं निषेधादि	,,
मङ्गलोत्तरं वर्षपर्यन्तं निषिद्ध-कर्माणि	,,
विवाहोपनयनोर्ध्वं-मुण्डननिषेधः	,,
गोपीचन्दनधारणनिषेधः	,,
विवाहात्प्रथमे वर्षे कन्यानिवास-विचारः	३३०
विवाहव्रतोर्ध्वं पिण्डदानादि	,,
वधूप्रवेशः	,,
माङ्गलिके प्राग्नश्राद्धादिकर्तव्यता	,,
द्विरागमननिर्णयः	,,
पुनर्विवाहविचारः	३३१
बहुभार्यात्वे ज्येष्ठायाधर्माधिकारः	,,
द्वितीयाविवाहहोमेऽग्निमाह	,,
अग्निद्वयसंसर्गविधिः	,,
द्वितीयविवाहे कालः	३३२
तृतीयविवाहनिषेधादर्कविवाहः	,,
तद्विधिस्तु	,,
अग्न्याधानकालः	३३३
अग्निहोत्रकालः	,,
आवसथ्याधानः	३३४
पितर्युपरतेऽवश्यमग्निग्रहणम्	,,
अगृहीताग्नेरन्ननिषेधः	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
ज्येष्ठ भ्रातरि पितरि च सत्यपि	३३४
गृहस्थस्याप्यध्ययनम्	,,
ज्येष्ठे भ्रातर्यकृताधाने कनिष्ठस्या-नधिकारः	,,
परिवेत्त्रादिनिर्णयः	,,
ज्येष्ठे सोदरे तिष्ठति निषेधः	,,
तदाज्ञया दोषाभावः	,,
क्लीवादावप्यदोषमाह	,,
शूद्रसंस्काराः	३३५
❀ अथ क्षुद्रकालाः ❀	
वापीकूपादिनिर्माणकालः	३३६
कूपदेशस्तत्फलं च	,,
वापीकूपाद्युत्सर्गविधिः	३३७
कूपादेरुत्सर्गाकरणे दोषः	,,
वृक्षारोपणम्	,,
मूर्तिप्रतिष्ठाकालः	,,
प्रतिष्ठानक्षत्राणि	,,
मासनिर्णयः	,,
प्रतिष्ठातिथयस्तत्फलानि च	,,
वारफलानि	,,
अयनतुफलानि	,,
लिङ्गप्रतिष्ठायां विशेषः	३३८
अत्राधिकारिनिर्णयः	३३९
शूद्रस्थापितलिङ्गादौ निर्णयः	,,
स्त्रीशूद्राणां शिवविष्णुपूजन-निषेधः	,,
प्रतिमापूजने दिङ् नियमः	,,
प्रतिमानिर्णयः	,,
गृहे प्रतिमामानम्	३४०
प्राणप्रतिष्ठादिविधिः	,,
प्रतिमापट्टयन्त्रादौ स्नाने विशेषः	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
मृदादिद्रव्यभेदेन लिङ्गे फलम्	३४०
पञ्चसूत्रीविधिः	,,
गृहे शङ्खशालग्रामादिपूजनम्	३४१
स्त्रीभिः शिवविष्णुस्पर्शो न कार्यः	,,
ब्राह्मणादिभिः कतिसंख्या प्रतिमा पूज्याः	,,
नवधा द्रव्यस्य प्रतिप्रसवः	३४१
शालग्रामशिवनाभिपरीक्षा	,,
पार्थिवपूजनम्	,,
अत्र पूजने प्राचीनियमः	,,
लिङ्गपूजने विशेषः	३४२
तत्रामुकवाद्यनिषेधकथनम्	,,
शिवस्य निर्माल्यस्पर्शने प्रायश्चित्तम्	,,
शिवस्य पुष्पाद्यर्पणम्	,,
अशून्यमस्तकं पूजयेत्	,,
सूतकेऽपि शिवपूजनम्	,,
त्रिपुण्ड्धारणम्	,,
रुद्राक्षधारणम्	,,
रुद्राक्षधारणे विशेषः	,,
रुद्राक्षमालाधारणे मणिसंख्या	,,
शिवस्य महास्नानम्	३४४
विष्णवादौ तु	,,
विष्वक्सेनादीनां नैवेद्यविभागः	,,
पञ्चायतनस्थापनप्रकारः	,,
अत्रापि प्राचीनियमः	,,
केशवादिमूर्तयः	,,
लिङ्गार्चा	३४५
ब्रह्मादिमण्डदेवताः	३४७
न्यासाः	,,
मण्डलशय्ययोरन्तारागमन-	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
विचारः	३४९
प्राणप्रतिष्ठा	,,
पुनः प्रतिष्ठा	३५०
बुद्धिपूर्वन्तु विच्छेदे	३५२
इदं मलमासशुक्रास्तादावपि	,,
देवार्चाप्रसादभङ्गे तु	,,
जीर्णोद्धारः	३५३
अयं चानादिसिद्धप्रतिष्ठित-लिङ्गादौ तु	,,
हेमादिरत्नमयं दग्धं तु	,,
तुलसीग्रहणम्	,,
क्वचित् निषेधमाह	,,
पुष्पादीनां पर्युषितत्वम्	३५४
शिवनिर्माल्यग्रहणाग्रहणानिर्णयः	,,
कृषिकर्मनिर्णयः	,,
वस्त्रपरिधाननिर्णयः	३५५
अलङ्कारवलयादि	३५६
सूचीकर्म	,,
शय्यासनारंभः	,,
शस्त्रधारणम्	,,
स्वामिसेवा	,,
गजाश्वदोलारोहणम्	३५७
नृत्यारम्भः	,,
राजदर्शनम्	,,
क्रयविक्रयौ	,,
सेतुबन्धनम्	,,
पशुकृत्यम्	,,
गजदन्तच्छेदः	,,
धननिक्षेपः	,,
ऋणमोक्षः	,,
राजमुद्रानिर्माणम्	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
नौकानिर्माणम्	३५७
भोगनिर्णयः	३५८
श्मश्रुकर्म	,,
काष्ठसंग्रहः	,,
नवान्नमुहूर्तः	,,
नवभोजनपात्रम्	,,
नवपर्णफलभक्षणादि-भक्षणम्	३५९
होमे आहुतिनिर्णयः	,,
अत्र शान्तिनिर्णयः	,,
अस्यापवादः	,,
ज्वरादौ फलं परिहारश्च	
भेषजग्रहणम्	,,
आरोग्यस्नानम्	३६०
दन्तधावनम्	,,
प्रोसितभर्तृकानियमाः	,,
अमलकस्नानम्	,,
तत्र स्नाननिषेधः	,,
अस्यापवादः	,,
गृहारंभमुहूर्तः	३६१
गृहप्रवेशः	३६३
कलिवर्ज्यानि	,,

तृतीयपरिच्छेदस्योत्तरार्धम्

(तत्रादौ श्राद्धप्रकरणम्)

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
श्राद्धनिर्णयः	३६७
श्राद्धकरणे फलम्	३६८
तद् भेदाः	,,
युगपत्तीर्थप्राप्तौ निर्णयः	,,
देशान्तरगमने श्राद्धम्	
श्राद्धदेशाः	३६९
गयाश्राद्धम्	,,
गयाशिरः प्रमाणम्	३६९
गयाशिरे पिण्डप्रमाणम्	,,
सप्तगोत्राणि तु	,,
एकोत्तरशतं कुलम्	,,
निषिद्धदेशाः	,,
परगृहे श्राद्धं निषिद्धम्	३७०
नवान्नश्राद्धम्	३७१
शङ्खपद्मादियोगाः	,,
प्रतिकृष्णपक्षश्राद्धम्	,,
व्यतीपाते विशेषमाह	,,
वेदविदागमने निर्णयः	३७२
तिथिविशेषे फलाधिक्यम्	,,
ग्रहपीडाद्यासु श्राद्धधिकारिणः	,,
द्वादशपुत्रभेदाः	३७३
अनुपनीतश्च पुत्रोऽधिकारी	३७४
अपुत्रस्य क्रियादि	३७५
भगनीतत्सुतयोर्निर्णयः	,,
ब्राह्मणस्यान्यक्रियानिषेधः	,,
दत्तकीतकृत्रिमपुत्राणां श्राद्धादि	३७६
पत्न्यादेः सपिण्डनादावधिकारः	३७७
सपिण्डनाधिकारः	३७८
पुत्रक्रियाकरणे पित्रादेरनधिकारः	,,
ब्रह्मचारिणः पित्रोः श्राद्धाधिकारः	,,
अविभक्तानां भ्रातॄणां विचारः	३७९
जारजानां विशेषः	३८०
धर्मार्थश्राद्धकरणे	,,
गयायामपि तत्रैव	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
द्विस्त्रिर्वा गयाश्राद्धकरणे तु	२८०
स्त्रीशूद्रयोर्मन्त्रादिपाठविचारः	,,
द्विजस्त्रीणां विशेषः	
शूद्राणां सदा आमश्राद्धम्	,,
शूद्राणां गोत्राभावे काश्यपगोत्रम्	३८२
शूद्रस्तु गृहपाकेन न श्राद्धम्	,,
राजकार्येनियुक्तादीनां श्राद्धनिर्णयः	,,
यवनादीनां श्राद्धनिर्णयः	,,
श्राद्धे पितरः	,,
पितॄणां श्राद्धान्नं यथोपतिष्ठति	,,
वसुरुद्रादित्यानां स्वरूपम्	३८३
ब्राह्मणादिवर्णानां पितरः	,,
केवलपितृपार्वणनिषेधोत्रापवादश्च	,,
दर्शादौ सपत्नीनां श्राद्धनिर्णयः	,,
विश्वेदेवनिर्णयः	३८४
इष्टिश्राद्धे क्रतुदक्षौ	,,
नान्दीश्राद्धे सत्यवसू	,,
नैमित्तकश्राद्धादौ कामकालौ	,,
काम्यश्राद्धे धूरिलोचनौ	,,
पार्वणश्राद्धे पुरूरवाद्रवौ	,,
श्राद्धे उत्तमविप्राः	
विना मांसादिना श्राद्धफलम्	,,
श्राद्धेऽरिमित्रौ वर्ज्यौ	३८५
पितापुत्रौ, भ्रातरौ, गुर्वणीपतिं समानगोत्रं च वर्जयेत्	,,
मध्यमाविप्राः	,,
अत्र विशेषः	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
श्राद्धे वर्ज्या विप्राः	३८६
काण्डपृष्ठविप्रलक्षणम्	,,
अन्येऽपि विप्रा वर्ज्याः	३८७
द्विर्नग्नादयो वर्ज्याः	,,
तत्र द्विर्नग्नलक्षणम्	,,
लम्बकर्णलक्षणम्	,,
षण्ढः सप्तविधः	,,
अग्निष्टोमादियज्ञे स्वल्पदक्षिणादाने	,,
प्रतिमाविक्रये	३८८
मातुलोद्वाही	,,
वृषलीपतिः	,,
पितापुत्रौ, भ्रातरौ, निराग्निम्	,,
गुर्वणीपतिम्, समानगोत्रं च वर्जयेत्	,,
तप्तमुद्राङ्कितविप्रनिषेधः	,,
कुष्ठिकाणादेरपवादः	,,
गयास्थविप्रप्राशस्त्यम्	,,
तीर्थेषु ब्राह्मणविचारः	,,
दैवे पित्र्ये च कर्मणि विप्रविचारः	,,
श्राद्धे विप्रनिमन्त्रणम्	३८९
ब्राह्मणादीनां निमन्त्रणप्रकारः	,,
सवर्णेनैव विप्रा निमन्त्र्याः	,,
निमन्त्रणे शूद्रनिषेधः	,,
राजकार्यादौ सल्लग्ने सति-विप्रद्वाराश्राद्धम्	,,
श्राद्धे ब्राह्मणसंख्या	,,
अशक्तौ एकविप्रभोजने निर्णयः	,,
एकविप्रे साग्नेर्विशेषः	३९०
सर्वथा विप्रालाभे चटश्राद्धम्	,,
तत्र दक्षिणादाने विचारः	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
दर्भबटौ दर्भग्रहणे विशेषः	३९०
मातृश्राद्धे विप्रालाभे सुवासिन्यः	,,
लिङ्गशालिग्रामसन्निधौ श्राद्धम्	,,
श्राद्धकर्तृभोक्तृनियमाः	,,
निमन्त्रितब्राह्मणातिक्रमे	,,
ब्राह्मणेन गृहीतामन्त्रत्यागे	,,
मार्गगमने	३९१
हिंसाकरणे	,,
भारोद्वहने	,,
कलहे	,,
मैथुने	,,
पुनर्भोजने	,,
स्वाध्यायकरणे	,,
दिवाशयने	,,
रुधिरस्रावे तु विशेषः	,,
सन्ध्याकरणे विचारः	,,
अमायां निषेधवस्तूनि	,,
श्राद्धभोजने होमादिनिषेधः	,,
वनस्पतिगतस्वरूपम्	३९२
श्राद्धे भार्याताडननिषेधः	,,
दन्तधावनताम्बूल-तैलाभ्यङ्ग-भोजन-रति-औषध-परान्नादि निषेधकथनम्	,,
वनस्पतिगते सोमे हिंसा फलम्	,,
श्राद्धे क्षौरवर्जनम्	,,
क्रोधवर्जनम्	,,
मिथ्याभाषणनिषेधः	,,
केचिन्निमन्त्रणा तदूर्ध्वं क्षौरं कुर्वन्ति	,,
अशक्तौ पुत्रादिप्रतिनिधयः	,,
स्त्रिया नियमाः	,,
पिण्डदानात्प्राक्गृहे बालानपि-भोजननिषेधः	३९२
गन्धधारणादिनिषेधः	,,
श्राद्धवस्तूनि	,,
दर्भग्रहणम्	,,
पवित्रे दर्भसंख्या	,,
पवित्रधारणे अङ्गुलिनिर्देशः	३९३
पवित्रधारणे तु	,,
दर्भग्रहणे मन्त्रः	,,
प्रेतक्रियादौ दर्भग्रहणे विशेषः	,,
दशदर्भाः	,,
काशादौ विशेषः	,,
निषिद्धदर्भाः	,,
सुवर्णपवित्रम्	,,
श्राद्धे हविर्निर्णयः	,,
शाकादिवस्तूनि	३९४
श्राद्धे मांसमधुग्रहणम्	,,
कलौ मांसादिनिषेधानां देशाचाद् व्यवस्था	३९७
क्षीरादौ विशेषमाह	३९६
कालशाकादिग्रहणम्	,,
श्राद्धवर्ज्यवस्तूनि	,,
क्षीरादौ लवणादिसंमेलने सुरासमानम्	४००
श्राद्धे जलनिर्णयः	,,
कुतपाअष्टविधा	४०१
दौहित्रलक्षणम्	,,
श्राद्धे सप्तपवित्राणि	,,
तिलनिर्णयः	,,
श्राद्धकाले वर्ज्यानि	,,
श्राद्धदिनकृत्यम्	४०२

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
श्राद्धदिने काञ्चिकादिदाने	४०२
पिण्डदानात्प्राककिञ्चिन्न देयम्	,,
पाककार्यनियमः	,,
निष्पन्नेषु पाकेषु पुनः स्नानम्	,,
चतुर्थदिने रजस्वलादौ स्नाने कृतेऽपि नियमः	,,
शूद्रस्य आमश्राद्धम्	,,
आमश्राद्धादेः कालः	
हिरण्यश्राद्धम्	,,
श्राद्धे पाकाधिकारिणः	,,
पाकभाण्डानि	,,
पाकाग्निनिर्णयः	४०३
श्राद्धकृत्यनिर्णयः	,,
निमन्त्रितविप्रकृत्यम्	४०४
श्राद्धकर्तृ नियमाः	,,
वस्त्रे विशेषः	,,
पुण्ड्रनिर्णयः	,,
वामहस्ते दर्भधारणनिषेधः	,,
गृहे रङ्गवल्लीनिषेधः	,,
अत्राचाराद् व्यवस्था	,,
सदर्भतिलकरणे निषेधः	,,
श्राद्धारम्भकालः	४०५
श्राद्धपरिभाषा	,,
तत्र जानुपातनम्	,,
गोत्रनामोच्चारणनिर्णयः	,,
गोत्रस्यापरिज्ञाने	,,
नामोच्चारणे विशेषः	,,
पित्रादिनामाज्ञाने	,,
स्त्रीणां नामोच्चारे विशेषः	४०६
संकल्पादौ विभक्तिविचारः	,,
अत्र शाखाभेदाद् व्यवस्था	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
तत्र मातुर्विशेषः	४०६
अनुपनीतस्त्रीशूद्रादेः सव्यापसव्यनिर्णयः	,,
सूक्तस्तोत्रजपादौ सव्यापसव्यम्	,,
आचमनविचारः	,,
विसर्जनात्प्राक्दानादिनिषेधः	,,
श्राद्धे नैवेद्यनिर्णयः	४०७
देवाद्यर्चाक्रमः	,,
श्राद्धे दर्भत्यागविचारः	,,
श्राद्धे मन्त्रादौ ऊहः	,,
सङ्कल्पात्पूर्वं प्रायश्चित्तादि	४०८
सङ्कल्पविचारः	,,
निमन्त्रणप्रकारः	,,
पाद्यार्थमण्डलविचारः	,,
तत्र गोमयग्रहणे विचारः	,,
ब्राह्मणभोजने दिङ्नियमः	४०९
भिक्षुकब्रह्मचारीणां भोजनम्	,,
भोजनसमये ब्राह्मणनियमाः	,,
आसनानि	,,
निषिद्धासनानि	,,
नीवीबन्धः	,,
अत्र देशाचाराद् व्यवस्था	४१०
गृहे तिलादीनां विकिरणम्	,,
श्राद्धभूमौ गयादीनां ध्यानम्	,,
ध्याने नियमः	,,
पाकादिप्रोक्षणे मन्त्राः	,,
देवार्चनम्	,,
अर्घ्यपात्रनिर्णयः	४११
विप्रकर्तृवदित्वादौ अर्घ्यपात्रम्	,,
अर्घ्यपात्रासादनादि	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
आवाहनविधिः	४११
अर्घ्यदानम्	,,
गन्धपुष्पाद्यर्चनम्	,,
तत्र गन्धाः	,,
आसनादिदाने प्रतिवचनम्	,,
विप्राणामूर्ध्वपुण्ड्रनिषेधः	४१२
श्राद्धे तुलसीग्रहणविचारः	४१३
श्राद्धे कस्तूरी विकल्पः	,,
श्राद्धे योग्यवर्ज्यपुष्पाणि	,,
बिल्वपत्रे विचारः	४१४
कदलीपत्रग्रहणविचारः	,,
धूपः	,,
दीपः	,,
वस्त्रम्	,,
यज्ञोपवीतम्	,,
श्राद्धे देयवस्तूनि	,,
कञ्चुकादिदेयवस्तु	,,
स्त्रीणां श्राद्धे सिन्दूरादि	,,
कृष्णवर्णादिनिषेधः	,,
यज्ञोपवीतदानावश्यकता	,,
कमण्डल्वादिपात्रदानम्	,,
उपानच्छत्रादिदानम्	
अलङ्कारादिदानम्	४१५
स्वर्णादिभोजनपात्रदानम्	,,
बन्दीकृतमोचनफलम्	,,
देवाज्ञया पित्रर्चा	,,
पित्रर्चायां विशेषः	,,
तत्रार्घ्यकल्पना	,,
एकब्राह्मणपक्षे अर्घ्यपात्रासादने निर्णयः	,,
अर्घ्ये सव्यापसव्यम्	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अर्घ्यानुमन्त्रणादिविशेषः	४१५
पित्रादीनामावाहनप्रकारः	,,
अर्घ्यनिवेदनादि	,,
संस्रवशेषविचारः	,,
पितृपात्रस्थापनविचारः	,,
गन्धपुष्पादिदानम्	४१६
मण्डलानि	,,
श्राद्धे भोजनपात्राणि	,,
कांस्यादिभोजनपात्रमानम्	,,
कांस्यपात्रनिषेधः	,,
श्राद्धे पालाशादिपत्राणि	,,
अभावे कदल्यादीनि ग्राह्याणि	,,
कदलीपात्रनिषेधः	,,
भस्ममर्यादाऽकरणे दोषः	४१९
अग्नौकरणनिर्णयः	,,
पाणिहोमनिर्णयः	,,
बह्वृचातिरिक्तानामग्निके निर्णयः	४२१
तीर्थश्राद्धे पाणिहोमनिर्णयः	,,
अनग्निकस्य पाणिहोमः	,,
विधुरस्य पाणिहोमः	,,
देवविप्रानेकत्वे	,,
मृतभार्यस्य निर्णयः	,,
सभार्यनष्टाग्नेर्निर्णयः	,,
अनुपनीतब्रह्मचर्यादेः	,,
दैवे पित्र्ये च होमे सव्यापसव्यनिर्णयः	,,
साग्नेर्विदेशादौ पाणिहोमः	,,
अनग्निदूरभार्ययोः पाणिहोमः	,,
पाणिहोमविधिः	,,
तत्र वर्ज्यकर्माणि	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
पाणिहोमे प्रश्नादि	४२२
पाणिहुतान्नस्य विनियोगः	"
हुतशेषं पितृपात्रेषु देयम्	"
आपस्तम्बानामग्नौकरणम्	"
छन्दोगादीनां पाणिहोमः	"
परिवेषणम्	४२३
तत्रोपवीत्यैव देवपूर्वम्	"
स्वयं भार्यया वा परिवेषणं कार्यम्	४२४
तत्रपवित्रेणैकहस्तेननपरिवेषणम्	"
आयसादिपात्रेण परिवेषणे दोषः	४२४
परिवेषणे पवित्रपात्राणि	"
दर्व्या घृतादि देयम्	"
दर्व्यान्नोदकदाने निषेधः	"
पंक्त्यां विषमदाने दोषः	"
भोज्यपात्रे तिलनिषेधः	"
हस्तदत्तस्नेहलवणादिभोजने दोषः	"
घृतपात्रे विशेषः	"
अपक्वं तैलपक्वं च हस्तदत्तं ग्राह्यम्	"
पात्रालम्भननिर्णयः	"
अङ्गुष्ठनिवेशने विशेषः	"
अन्नदानविधिः	"
सङ्कल्पादिकर्मक्रमः	"
असंकल्पितान्नभोजने निषेधः	४२५
आपोशने विशेषः	"
चित्राहुतिनिषेधः	४२६
भोजने लवलादि न पृच्छेत्	"
अधिश्रवणीयमन्त्राः	"

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अश्नत्सु विप्रेषु गायत्र्यादिदिसूक्तजपः	४२६
भोजनकाले विप्रनियमाः	"
अपेक्षितायाचने दोषः	"
पङ्क्तौ परस्परस्पर्शे प्रायश्चित्तम्	"
अश्रुपातादिवर्ज्यम्	"
उपघातनिमित्ते प्रायश्चित्तम्	"
विप्राणां गुदस्रावे प्रायश्चित्तम्	४२७
विप्रवमने प्रायश्चितम्	"
श्राद्धविघ्ने प्रायश्चित्तादि	"
श्राद्धविघ्ने पुनः श्राद्धम्	"
पिण्डदानोत्तरं वान्तौ	"
पिण्डदानात्प्राग्वान्तौ	"
दर्शादौ वमने आमश्राद्धम्	"
श्राद्धविघ्ने पुनरावृत्तिनिर्णयः	"
तृप्तिप्रश्नादि	४२८
श्राद्धविशेषे प्रश्नभेदः	"
विकिरदानम्	"
आचमनदाननिर्णयः	४२९
हस्तक्षालननिर्णयः	"
गण्डूषादिकरणेकांस्यपात्रंवर्ज्यम्	"
पिण्डदाननिर्णयः	"
शाखाभेदेन व्यवस्था	"
पिण्डदानं कुत्र कर्तव्यम्	"
पिण्डदाने कुशादयः	"
अष्टाङ्गः पिण्डः	४३०
पिण्डादौ माषनिषेधः	"
पिण्डार्थमन्त्रग्रहणविचारः	"
पिण्डप्रमाणम्	"
तत्रैकोद्दिष्टश्राद्धे पिण्डप्रमाणम्	"

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
प्रत्यब्दे तीर्थे दर्शे च पिण्डप्रमाणम्	४३०
महालये गयायां च पिण्डप्रमाणम्	,,
प्रेतपिण्डप्रमाणम्	,,
महालयादौ पिण्डशब्दप्रयोगः कथं कर्तव्यः	४३१
पत्न्या पिण्डाः करणीयाः	,,
पित्रादिनामाज्ञाने पिण्डदाने ऊहः	,,
पित्रादिपिण्डेभ्यः पश्चिमे मात्रादिपिण्डा देयाः	,,
अन्वष्टकादौ स्त्रीणां पृथक् श्राद्धम्	
दर्भमूले हस्तलेपादिनिर्णयः	,,
नीवीविसर्जनम्	४३२
अञ्जनाभ्यञ्जने	,,
वासोदानादि	,,
पिण्डपूजनम्	,,
पिण्डानां सर्वान्ननैवेद्यं देयम्	,,
अत्र सव्यापसव्ययोर्विकल्पः	,,
पिण्डावघ्राणम्	,,
पिण्डोपस्थापनम्	,,
आचान्तेषु उदकादिदानम्	,,
अत्र पारिभाषोक्तवचनात्सव्यम्	,,
द्विजेभ्य आशीर्ग्रहणम्	,,
स्वस्तिवाचनात्प्राक् पात्रचालनं न कार्यम्	४३३
पात्रचालनं केन कार्यम्	,,
स्वस्तिवानम्	,,
अक्षय्योदकदानम्	,,
दक्षिणादानम्	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अत्र विकल्पः	४३३
स्वधावाचनम्	,,
पिण्डप्रवाहणम्	,,
विप्रविसर्जनम्	,,
विप्रप्रार्थना	,,
विप्रप्रदक्षिणा	,,
पिण्डप्रतिपत्तिः	४३४
मध्यमपिण्डप्राशननिर्णयः	,,
तीर्थश्राद्धे तीर्थ एव पिण्डप्रक्षेपः	,,
गवादिभ्यः पिण्डा देयाः	,,
पत्न्यां रोगादियुक्तायां भक्षणे निर्णयः	,,
पिण्डोपघातप्रायश्चित्तम्	,,
काकस्पर्शने दोषः	,,
पुनः पिण्डदाननिर्णयः	,,
पिण्डदाननिषिद्धकालः	,,
विवाहादौ कृते पिण्डनिषेधे माससंख्या	४३५
कृतोद्वाहेनापि पित्रोः पिण्डदानं कार्यम्	,,
पुत्रेप्सुभिर्नन्दादितिथ्यादौ पिण्डवर्ज्याः	,,
उच्छिष्टोद्वासननिर्णयः	,,
श्राद्धोच्छिष्टं शूद्रादिभ्यो न देयम्	४३६
द्विजोच्छिष्टं भूमौ निखानयेत्	,,
श्राद्धदिने वैश्वदेवनिर्णयः	,,
नित्यश्राद्धम्	४३७
नित्यश्राद्धे पात्राभावे	,,
नित्यश्राद्धस्य प्रसंगसिद्धिः	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
श्राद्धे एकादश्यादौ भोजन-निर्णयः	४३८
श्राद्धे कृते दिवैव भोक्तव्यम्	,,
तद्दिने परपाकसेवननिषेधः	,,
श्राद्धशेषभोजनस्य क्वचिन्निषेधः	,,
श्राद्धावशिष्टभोजने निषेधः	,,
अस्यापवादः	,,
श्राद्धकर्त्रा ताम्बूलादिवर्ज्यम्	,,
श्राद्धदिने गृहे शूद्रं न भोजयेत्	,,
श्राद्धानुल्पाः	,,
तत्र विप्रालाभे दर्भबटुः	,,
आमश्राद्धम्	,,
आमश्राद्धं कुत्र कार्यम्	४३८
शूद्रस्य श्राद्धे पक्वनिषेधः	४३९
मृताहादौ आमश्राद्धं न कार्यम्	,,
आमं कियत्परिमितं देयम्	,,
आमश्राद्धविधिः	,,
आमश्राद्धे पिण्डदाननिर्णयः	,,
आमश्राद्धे ऊहविचारः	४४०
आमश्राद्धे वर्ज्यकर्माणि	,,
शूद्रस्य आमश्राद्धविधिः	,
आमश्राद्धादेः कालः	,,
हिरण्यश्राद्धम्	,,
हेमश्राद्धे पिण्डदानपदार्थाः	४४१
पिण्डदाने विकल्पः	,,
हेमश्राद्धं शूद्रैः कथं कार्यम्	,,
हेमश्राद्धे वर्ज्यकर्माणि	,,
हेमश्राद्धे मन्त्रोहः कालश्च पूर्ववत्	,,
श्राद्धीयस्य हेमादेर्लब्धस्य विनियोगः	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
आमादौ शूद्राल्लब्धे निर्णयः	४४१
शूद्रात्प्राप्तान्नादेर्ग्राह्याग्राह्यनिर्णयः	,,
साङ्कल्पिकश्राद्धम्	,,
साङ्कल्पविधौ वर्ज्यकर्माणि	,,
मघादिश्राद्धेषु साङ्कल्पविधिरेव	४४२
विवाहाद्यूर्ध्वं सपिण्डानां पिण्डनिषेधः	,,
अस्यापवादः पूर्वमुक्तः	,,
अनग्निकादिभिः साङ्कल्पिकविधिः	,,
श्राद्धेत्यन्ताशक्तौ अनुकल्पाः	,,
श्राद्धभोजने प्रायश्चित्तम्	४४३
संस्कारेषु भोजने प्रायश्चित्तम्	,,
नवश्राद्धैकाशाहादौ भोजने प्रायश्चित्तम्	,,
आमहेमसङ्कल्पश्राद्धेषुभोजने प्रायश्चित्तम्	,,
यत्यादीनां श्राद्ध भोजने निषेधः	,,
दर्शादौ भोजने प्रायश्चित्तम्	,,
त्र्याहश्राद्धम्	,,
मृततिथिनिर्णयः	,,
अत्र चान्द्रमानं ज्ञेयम्	,,
मलमासमृते सौरं मानम्	,,
प्रतिसांवत्सरिकं केन कार्यम्	,,
सांवत्सरिकाकरणे दोषः	,,
तत्र पार्वणैकोद्दिष्टयोर्विचारः	४४४
अत्र देशाचारवंशधर्मव्यवस्था	,,
संन्यासिनां श्राद्धनिर्णयः	,,
संग्राममृतानां श्राद्धनिर्णयः	,,
ज्येष्ठभ्रातुः कनिष्ठेन कर्तव्यम्	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
कनिष्ठस्य च ज्येष्ठेनैकोद्दिष्टं कार्यम्	४४४
अपुत्रपितृव्यस्य श्राद्धे निर्णयः	,,
पत्न्याः कर्तृत्वे श्राद्धनिर्णयः	,,
अपुत्रमृतानां किं कार्यम्	४४५
एकोद्दिष्टं केषां कार्यं तन्निर्णयः	,,
क्षयाहद्वैधे निर्णयः	४४६
तत्रैकोद्दिष्टे तिथिनिर्णयः	,,
पार्वणश्राद्धे तिथिनिर्णयः	,,
प्रत्याब्दिकश्राद्धे तिथिनिर्णयः	,,
दिवा विघ्ने रात्रावपि श्राद्धम्	४४७
श्राद्धं विना मृताहातिक्रमे दोषः	४४८
ग्रहणदिने श्राद्धप्राप्तौ	४४८
मलमासे प्रत्याब्दिकनिर्णयः	,,
दर्शे वार्षिकं चेत्तन्निर्णयः	,,
एवं मासिकादिश्राद्धमपि	,,
मृताहे वृषोत्सर्ग उक्तः	,,
शुद्धश्राद्धनिर्णयः	,,
वर्षत्रयपर्यन्तं श्राद्धभोजन निषेधः	,,
क्षयाहाज्ञाने निर्णयः	४४९
श्राद्धविघ्ने निर्णयः	,,
तत्र निमन्त्रितविप्रस्याशौचे प्राप्ते निर्णयः	४५०
श्राद्धकर्तुराशौचप्राप्तौ निर्णयः	,,
श्राद्धारम्भनिर्णयः	,,
दातुर्गृहे मरणादौ निर्णयः	,,
विप्रेषु भुञ्जानेषु सूतके प्राप्ते	,,
दातुर्भोक्तुश्चाशौचे प्राप्ते	,,
तत्र भोक्तुरेव प्रायश्चित्तम्	,,
आशौचमध्ये श्राद्धं प्राप्तं चेत्	४५१
दर्शादिदिनित्यकर्मलोपे उपवासप्रायश्चित्तम्	४५१
सूतकादिविघ्नं चेच्छ्राद्धं कदा कर्तव्यम्	,,
भार्यारजोदर्शने	,,
तत्र दर्शश्राद्धनिर्णयः	,,
महालययुगादिश्राद्धनिर्णयः	,,
आब्दिकश्राद्धनिर्णयः	,,
अपुत्रस्य भार्यारजोदर्शने	४५२
गर्भिणीसूतिकादीनां निर्णयः	,,
अनुपनीतादेः श्राद्धाधिकारः	,,
अन्वारोहणे निर्णयः	४५३
एककाले मृतानां कर्तव्यम्	,,
स्वामिसेवकानामेकसमयमरणे	,,
पत्यासह स्त्रीमरणे	,,
भर्तुराशौचमध्येऽन्यदिने स्त्रीमरणे	४५४
भर्त्राशौचोत्तरमन्वारोहणे	,,
देशान्तरमृतमन्वारोहणे	४५५
भर्त्राशौचमध्ये पृथक्चितौ वा	,,
भर्त्राशौचोत्तरं मृतौ तु	,,
अन्यसपिण्डाशौचमध्ये विदेशमृतान्वारोहणे	,,
अन्यकालेऽन्यतिथावन्वारोहणे निर्णयः	,,
सहगमनश्राद्धे पाकनिर्णयः	,,
अत्र श्राद्धे सुवासिनीभोजनम्	,,
श्राद्धसंपाते निर्णयः	४५६
तत्र पित्रोर्मृततिथ्येकत्वे	,,
पार्वणैकोद्दिष्टयोः संपाते	,,
एककालमृतानां श्राद्धनिर्णयः	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
एकस्मिन् दिनेऽनेकश्राद्धप्राप्तौ कर्तृनिर्णयः	४५६
युगपन्मरणे निर्णयः	,,
नित्यनैमित्तिकदर्शादिप्राप्तौ निर्णयः	,,
अस्य देवताभेदादपवादः	४५७
श्राद्धाङ्गतर्पणनिर्णयः	,,
परेद्युस्तर्पणेऽकृते दोषः	,,
तिलतर्पणे निषिद्धकालः	,,
श्राद्धदिने नित्यतर्पणे तिल-निर्णयः	,,
प्रत्यब्दे श्राद्धे परेद्युस्तर्पण-मुक्तम्	,,
महालये परेद्युस्तर्पणम्	४५७
मन्वष्टक्ये सद्यस्तर्पणम्	,,
तीर्थश्राद्धे दर्शवत्	४५७
माघ्याद्यन्वष्टकादावन्ते तपणम्	,,
अनेकश्राद्धसंपाते तर्पणम्	,,
श्राद्धाङ्गतर्पणविधिः	,,
मन्वाद्यादौ तर्पणम्	,,
तिलतर्पणादिषेधः	४५९
अत्रापवादः	,,
तिलाभावे तर्पणे सुवर्णादि	,,
वृद्धिश्राद्धनिर्णयः	,,
वृद्धिश्राद्धनिमित्तानि	,,
वृषोत्सर्गादौ वृद्धिश्राद्धं वर्ज्यम्	,,
वृद्धिश्राद्धकालमाह	,,
अत्राधिकारिणः	४६३
जातकर्मादौ वृद्धिश्राद्ध-निर्णयः	,,
अग्निकस्यजीवत्पितुरधिकारः	४६४

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
समावर्तनादौ वृद्धिश्राद्धम्	४६७
प्रथमोद्वाहे वृद्धिश्राद्धम्	,,
पितुरभावे वृद्धिश्राद्धाधिकारः	,,
जीवत्पितृकस्य विशेषः	,,
कर्माङ्गवृद्धिश्राद्धनिर्णयः	४६५
नान्दीश्राद्धे कर्तव्यम्	,,
वृद्धौ कुशस्थाने दूर्वाः	,,
वृद्धिश्राद्धे विप्रसंख्या	,,
अत्र विप्रालाभे स्त्रियो भोज्याः	,,
वृद्धिश्राद्धे पिण्डाग्नौकरणे	,,
अत्र सङ्कल्पे विशेषः	४६६
वृद्धिश्राद्धप्रयोगक्रमः	,,
वृद्धिश्राद्धे वैश्वदेवनिर्णयः	,,
अत्र श्राद्धाङ्गतर्पणं वर्ज्यम्	४६७
जीवत्पितृकश्राद्धम्	,,
पितामहे जीवति सति	४६९
जीवत्पित्राऽन्वष्टकादौ श्राद्धं न कर्तव्यम्	४७०
विभक्ताविभक्तनिर्णयः	,,
अविभक्तानां वैश्वदेवनिर्णयः	,,
विभक्ताविभक्तानां ब्रह्मयज्ञादि निर्णयः	४७१
देवपूजायां विकल्पः	,,
दर्शग्रहणादिश्राद्धादौ निर्णयः	,,
अविभक्तानां युगपत्तीर्थप्राप्तौ	४७२
काम्यदानादि अनुमत्या	,,
विभक्तैः पृथक् सांवत्सरिकं कार्यम्	,,
विभक्तानां पित्रोर्वर्षपर्यन्तं श्राद्धादिक्रियानिर्णयः	,,
(अथ तीर्थश्राद्धम्)	
तीर्थश्राद्धनिर्णयः	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
तत्र यात्रायां सपत्नीकेनैव गन्तव्यम्	४७२
प्रायश्चित्तार्थयात्रायां पत्नीरहितो गच्छेत्	,,
विधवायाः पुत्राद्यनुज्ञया	,,
तीर्थयात्राविधिः	,,
यात्राकाले वपनविचारः	,,
गमनादौ घृतश्राद्धनिर्णयः	४७३
तीर्थप्रत्यागमने घृतश्राद्धम्	,,
श्राद्धोत्तरं गमनविकारः	,,
अन्यद्वारा यात्राकरणे फलम्	,,
यात्रामध्ये आशौचे रजसि वा प्राप्ते	,,
यात्रामध्येऽन्यतीर्थ प्राप्तौ	,,
वाणिज्यार्थं गते तीर्थप्राप्तौ	,,
मार्गान्तरे तीर्थप्राप्तौ	,,
यात्रायां द्विर्भोजने निर्णयः	,,
यानादिना यात्राकरणे	,,
मार्गान्तरा नदीप्राप्तौ	,,
तीर्थप्राप्तौ लुण्ठनं कार्यम्	,,
तीर्थप्रार्थनामन्त्राः	४७४
तीर्थे उपवासमुण्डननिर्णयः	,,
कुरुक्षेत्रादिषु मुण्डनोपवासनिषेधः	,,
दशमासोर्ध्वं पुनस्तीर्थप्राप्तौ	,,
तीर्थे निषिद्धदिनेऽपि क्षौरम्	,,
वपने दिङ्नियमः	,,
सधवानां प्रयागे वपननिर्णयः	,,
यतीनां तीर्थे वपननिर्णयः	,,
जीवत्पितृकस्य वपननिर्णयः	,,
परार्थयात्रायां फलम्	४७५
प्रतिनिधिद्वारा तीर्थे स्नानम्	,,
तीर्थेऽविलम्बेन श्राद्धं तर्पणं च	,,
तीर्थविधौ कालनियमो न	४७२
आशौचेऽपि तीर्थप्राप्तौ	,,
मलमासे तीर्थश्राद्धादिनिर्णयः	,,
आकस्मिकतीर्थप्राप्तौ	,,
तीर्थश्राद्धे वर्ज्यकर्माणि	,,
तीर्थश्राद्धं पक्वान्नादिना	४७६
पिण्डद्रव्याणि	,,
पिण्डानां तीर्थे प्रक्षेपः	,,
सपुत्रविधवायाः तीर्थविधिर्न	,,
संन्यासिनां तीर्थविधिः	,,
तीर्थे प्रतिग्रहादिनिर्णयः	,,

अथ तृतीयपरिच्छेदस्योत्तरार्द्धम्
(आशौचप्रकरणम्)

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
शावाशौचम्	,,
पाताशौचम्	४७७
सप्तममासादिजननात् पूर्णाशौचम्	,,
जाताशौचे विप्रादीनां दिनसंख्या	,,
पुत्रे जाते मातापित्रोः स्नानम्	,,
कन्योत्पत्तौ स्नानम्	,,
सर्ववर्णानां सूतिकाशुद्धिः	,,
सूतके संसर्गानिर्णयः	४७८
सूतिकायाः कर्माधिकारनिर्णयः	,,
प्रथमषष्ठदशमदिनेषु जातकर्माद्यधिकारः	,,
सपिण्डादीनां मृतके निर्णयः	,,
मृताशौचम्	४७९
जातमृते मृतजाते वा	,,
नालच्छेदनात्प्राक्शिशुमरणे	,,
नालच्छेदनोर्ध्वं दशाहमध्ये शिशुमरणे निर्णयः	,,
नामकरणात्प्राक् शिशुमरणे	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
नामोच्चारं दन्तोत्पत्तेः प्राक्	४७९
शिशुमरणे	,,
दन्तोत्पत्त्यनन्तरं त्रिवर्षात्प्राङ्मरणे	४८०
त्रिवर्षोर्ध्वं कृतचूडे मृते	,,
प्रथमवर्षादौ कृतचूडे मृते	४८१
शूद्रशिशुमरणे	,,
त्रिवर्षोर्ध्वं शूद्रशिशौ मृते	,,
अनूढाभार्ये शूद्रे मृते	,,
कन्यामरणाशौचनिर्णयः	,,
पितृगृहेऽनूढाकन्यारजस्वलामरणे	,,
अनुपनीतमृतानां दाहाधिनिर्णयः	४८२
त्र्यहाशौचे पिण्डदानविधिः	४८३
शिशुलक्षणम्	,,
बाललक्षणम्	,,
कुमारलक्षणम्	,,
पौगण्डलक्षणम्	,,
एतेषां मृतानां क्रियाविधिः	,,
स्त्रीणामुद्वाहात्प्राङ्मृतानां पिण्डदाने	४८४
जात्याशौचम्	,,
तत्र विप्रादीनां दशाहादिनिर्णयः	,,
पित्रादयो महागुरवः	,,
स्त्रीणां पतिरेव गुरुः	,,
सपिण्डानां लक्षणम्	,,
समानोदकलक्षणम्	,,
सगोत्रलक्षणम्	,,
स्त्रीशूद्रयोर्विवाहोर्ध्वंजात्याशौचम्	,,
आशौचसंकोचे निर्णयः	४८५
सर्ववर्णानां दशाहादेव शुद्धिः	,,
पूर्णाशौचे स्पर्शनिर्णयः	४८५
दत्तक्रीतादिपुत्राणामाशौचम्	,,
व्यभिचारिणीषु सपिण्डत्वादिनिर्णयः	४८६
अनौरसेषु पुत्रेषु	४८७
पुनर्भूषु स्त्रीषु	,,
अन्याश्रितस्त्रीणामाशौचम्	,,
परपत्नीसुतानामाशौचम्	,,
दत्तके मृते पूर्वापरपित्रोराशौचनिर्णयः	,,
दत्तकसापिण्ड्यम्	,,
पूर्वापरभर्त्रोरुत्पन्नपुत्रयोः	,,
ऊढकन्यानामाशौचम्	,,
ऊढकन्यायाः पितृगृहे प्रसवे	,,
मरणे च	,,
मातापित्रोराशौचम्	,,
भ्रातुराशौचम्	४८८
परस्परं भ्रातृभगिन्योः	,,
भ्रातृभिन्नानामाशौचम्	,,
पतिगृहे प्रसवे	,,
कन्यामृतौ पित्रोः	,,
ग्रामान्तरे कन्यामृतौ पित्रोः	,,
श्वश्रूश्वशुरयोर्मरणे	,,
भगिनीमरणे	,,
मातुलमातुलान्योर्मरणे	,,
पित्रोः स्वसरि मृतायाम्	,,
सोदरमरणे	,,
पित्रोर्मरणे स्त्रीणामाशौचनिर्णयः	,,
तत्र पित्रोर्मरणे ऊढकन्यायाः	,,
भ्रातृभगिन्योरन्योन्यगृहे मरणे	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
भ्रातृभगिन्योः परस्परमरणे	४८८
पुत्र्याः पितृव्याशौचम्	,,
मातामहादीनां मरणे	,,
स्वगृहे परमरणे	,,
बन्धुत्रयमरणे	,,
स्वल्पसम्बन्धयुक्ते मृते	,,
दौहित्रभागिनेययोराशौचम्	,,
मातुलादौ संनिधिविदेशायोर्मृते	,,
श्रोत्रिये स्वगृहे मृते	,,
ऋत्विग्विषये	,,
बन्धुत्रयनिर्णयः	४८९
पितृष्वस्रादिकन्यानाम्	,,
जामातृमरणे	,,
शालकमरणे	,,
असपिण्डे स्ववेश्मनि मृते	,,
द्विजगृहे श्वशूद्रपतितादिषु मृतेषु	,,
शवदूषितगृहशुद्धिः	,,
ग्राममध्ये शवस्तिष्ठति चेत्	,,
गृहे पश्वादौ मृते	,,
क्रियाकर्तुराशौचम्	४९१
युद्धे मृतस्याशौचम्	,,
शृङ्गिदंष्ट्र्यादिभिर्हतानाम्	,,
गोविप्रपालने मृतानाम्	,,
शस्त्रं विना पराङ्मुखहते	,,
राज्ञा वध्ये हते	,,
क्षतेन मृते	,,
शस्त्राघाते त्र्यहोर्ध्वं मृते	,,
शवस्य स्पर्शे आशौचम्	,,
संसर्गाशौचे कर्माधिकारः	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
निर्हरणाद्याशौचम्	४९१
निर्हरणं विना तदन्नाशने	,,
तद्गृहवासे च	,,
भृतिग्रहणेन निर्हारे	४९२
विजातीयनिर्हारे	,,
सोदकनिर्हरणे	,,
प्रेतालङ्करणे	,,
धर्मार्थमनाथाहरणे क्रियाकरणे च	,,
ब्रह्मचारिणा शववाहादिकृते प्रायश्चित्तम्	,,
समोत्कृष्टवर्णानुगमने	,,
हीनवर्णस्य दाहादिकरणे	,,
रोदने आशौचनिर्णयः	४९३
तत्र समोत्तमवर्णयोः	,,
हीनवर्णेषु	,,
विप्रस्य क्षत्रियविषये	,,
क्षत्रस्य वैश्येऽपि	,,
विप्रादीनां शूद्रे	,,
शूद्रस्य शूद्रे	,,
सपिण्डानां रोदने निर्हरणे च	,,
आशौच्यन्नभक्षणे	,,
आशौचान्नभक्षणे प्रायश्चित्तम्	,,
दासाद्याशौचम्	,,
दत्तदासादीनां स्वामिसपिण्डमरणादौ	४९४
पञ्चदश दासभेदाः	,,
रात्रौ जनने मरणे वा निर्णयः	,,
आहिताग्नेर्दाहादिनिर्णयः	,,
अतिक्रान्ताशौचम्	,,
तत्राशौचमध्ये जननादौ ज्ञाते	४९५
देशान्तरे अतिक्रान्ताशौचे	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
दशदिनमध्ये श्रुतं चेत्	४९५
दशाहोर्ध्वं मासत्रयपर्यन्तंश्रुतं चेत्	,,
षण्मासपर्यन्तं श्रुतं चेत्	,,
नवमासपर्यन्तं श्रुतं चेत्	,,
तदूर्ध्वं श्रुतं चेत्	,,
जननेऽतिक्रान्ताशौचनिर्णयः	,,
अतिक्रान्ते आपदनापद्व्यवस्था	,,
देशान्तरे क्लीबादिमृतौ	,,
देशान्तरलक्षणम्	,,
देशान्तरे मातापित्रोर्मरणे	,,
स्त्रीपुंसयोः परस्परमरणे	,,
सापत्नमातुराशौचम्	४९६
हीनवर्णसापत्नमातृषु मृतासु	,,
अशौचसंपाते निर्णयः	,,
तत्र जनने जननाशौचे	,,
शावे शावाशौचे	,,
सूतके शावाशौचम्	४९७
शावे सूतकम्	,,
एकदिने समंन्यूनमधिकं वा प्राप्तं चेत्	,,
स्वल्पाशौचे दीर्घाशौचम्	,,
दीर्घाशौचे स्वल्पाशौचम्	,,
जननमरणाशौचस्य गुरुत्वम्	४९८
दशमे हनि आशौचान्तरपाते	,,
पित्राशौचे मात्राशौचम्	४९९
मात्राशौचे पित्राशौचम्	,,
अन्वारोहणे विशेषः	,,
भर्तुराशौचोत्तरमन्वारोहणे	५००
आशौचापवादः पञ्चधा	,,
तत्र कर्मतः	,,
सत्यादीनामाशौचाभावः	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
ब्रह्मचारिणा पित्रोरन्त्यकर्म कार्यम्	५०१
सन्ध्यादिलोपाभावः	,,
ब्रह्मचारिणोऽन्त्यकर्मकरणे आशौचाभावः	,,
समावर्तनोत्तरं त्र्यहाशौचम्	,,
दुर्भिक्षाद्यापद्गतानामाशौचाभावः	५०२
कर्मत अशौचम्	,,
तत्र सत्रिव्रत्यादीनामाशौचम्	,,
कार्वादीनामाशौचाभावः	,,
राजादीनाम्	,,
व्रतयज्ञविवाहादिषु आरम्भोत्तरं नाशौचम्	,,
आशौचे आकस्मिकतीर्थप्राप्तौ	,,
दीक्षावतां जपपूजानुष्ठानादावाशौचाभावः	,,
सूतकिनः पूजाधिकारः	५०३
श्रौतकर्मणि विशेषः	,,
ऋत्विजामाशौचाभावः	,,
तुलापुरुषदानादौ दोषाभावः	,,
अत्रापवदान्तरम्	,,
श्राद्धादौ विशेषः	,,
स्मार्ताग्निहोमे सूतकाभावः	,,
आशौचे पञ्चमहायज्ञनिषेधः	५०४
सन्ध्यादीनामपवादः	,,
सूतके सन्ध्याविधिः	,,
ग्रहणे आशौचापवादः	५०५
भोजनके अशुचिश्चेत्	,,
द्रव्यतः शुद्धिनिर्णयः	,,
तत्र लवणादिद्रव्ये	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
पण्यद्रव्येषु नाशौचम्	,,
सत्रे आमान्नादौ दोषाभावः	,,
उभाभ्यामपरिज्ञाते सूतके	,,
विवाहोत्सवादिषु सूतके	,,
पुस्तकशुद्धिः	५०६
मृतदोषतः शुद्धिनिर्णयः	,,
तत्रात्मघाते	,,
पतितानां मृतानां दाहादिः	,,
चाण्डालादि मरणे	,,
पतितानामन्त्यकर्मकरणे	५०७
आत्मत्यागिनां क्रियाकरणे	,,
आहिताग्नेर्विशेषः	,,
प्रमादमरणे त्वाशौचं न	,,
सर्पहते मृते	,,
दुर्मरणनिमित्तदानादि	,,
तत्र व्याघ्रेण निहिते	,,
सर्पदष्टे मृते	,,
राज्ञा निहिते	,,
चौरेण निहिते	,,
शय्यामृते	,,
शौचहीने मृते	,,
संस्कारहीने मृते	५०८
अश्वहते	,,
शुनाहते	,,
सूकरेण हते	,,
कृमिभिर्मृते	,,
वृक्षहते	,,
शृङ्गिणा हते	,,
शकटेन हते	,,
भृगुपातमृते	,,
अग्निना निहिते	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
दारुणा निहिते	५०८
शस्त्रेण निहिते	,,
अश्मना निहिते	,
विषेण मृते	,,
उद्बन्धनेन मृते	,,
जलेन मृते	,,
विषूचिकामृते	,,
कण्ठान्नकवले मृते	,,
कासरोगेण मृते	,,
अतिसारमृते	,,
शाकिन्यादिग्रहैर्मृते	,,
विद्युत्पातेन मृते	,,
अन्तरिक्षमृते	,,
अस्पृश्यस्पर्शिनो मृते	,,
पतितेमृते	,,
अपत्यरहिते मृते	,,
स्त्रिया अन्वारोहणे	,,
वैधमरणे	,,
तीर्थमरणे	,,
कलौ स्त्रीणां सहगमनम्	५१०
गङ्गायमुनसंगमे मृते सति	,,
प्रयागस्थवटमूले मरणे फलम्	,,
प्रयागमण्डलम्	,,
विष्णुसंनिधौ माघे मरणे फलम्	,,
अत्र विशेषः	,,
प्रयागादौ मरणे दशाहाशौचम्	,,
अनशनादिमृतानाम्	,,
मरणान्तप्रायश्चित्तो	५११
गोब्राह्मणहतानां पतितानां च वत्सरान्ते और्ध्वदेहिकम्	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
एवं म्लेच्छादीनां गयाश्राद्धम्	५११
नारायणबलिनिर्णयः	,,
तत्रात्मघातिप्रायश्चित्तपूर्वं कार्यः	,,
अनर्हादीनां नारायणबलिर्गयाश्राद्धं च	५१२
पतितोदकविधिः	
नारायणबलिप्रयोगः	५१३
तत्र विष्णवादिपञ्चदेवानां निर्माणे नियमः	५१४
प्रेतस्य रूपम्	,,
अत्र सर्पहते तु विशेषः	,,
उदकमृते विशेषः	,,
नारायणबलिकर्तुराशौचम्	,,
व्युच्छिन्नसन्ततिमृते विशेषः	,,
अपुत्रस्य नारायणबलिः	,,
विधानादाशौचाभावः	,,
ब्रह्मीभूतयतिसंस्कारनिर्णयः	५१५
यतेर्नारायणबलिः	,,
कृतजीवच्छ्राद्धे मृते निर्णयः	,,
आहिताग्नौ प्रोषितमृते	,,
अस्थ्याद्यलाभे पालाशादिना दाहः	५१६
पालाशविधिद्रव्याणि	,,
इदं निरग्नेरपि	,,
प्रोषितस्य द्वादशाब्दातिक्रमे	,,
देशान्तरमृतस्य दिनाज्ञाने संस्कारकालः	५१७
आहिताग्न्यादिनामाशौचनिर्णयः	,,
तत्र गृहीताशौचानां निर्णयः	,,
अगृहीताशौचानां निर्णयः	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अतीतसंस्कारे आशौचम्	५१७
प्रेतसंस्कारकालः	,,
प्रत्यक्षशवसंस्कारे	,,
आशौचमध्ये शवसंस्कारे	,,
अस्यापवादमाह	५१८
साक्षात्संस्कारे	,,
अतीते अस्तादि वर्ज्यम्	,,
धनिष्ठादि	,,
निषिद्धकाले दाहे दानादि	,,
कृतौर्ध्वदेहिके जीवन्नागच्छति चेत्	,,
अमृतस्य दाहादौ स्त्रिया सहयो गमने	,,
सर्पसंस्कारे त्रिरात्रमाशौचम्	,,
सर्पसंस्कारविधिः	,,
नागबलिविधिः	,,
जीवतोऽन्त्यकर्माशौचम्	५१९
घटस्फोटविधिः	,,
पतितसंग्रहविधिः	५२०
कृतघटस्फोटस्य पुनः संग्रहविधिः	,,
पतितानां चरितव्रतानां परिग्रहः	,,
अन्त्यकर्मसाधारणविधिः	,,
तत्राधिकारिणः प्रागुक्ताः	५२१
सर्वाभावे धर्मपुत्रः	,,
योऽग्निदः स दशाहं कुर्यात्	,,
आसन्नमरणे दानानि	,,
तत्र मोक्षधेनुदानम्	,,
ऋणधेनुदानम्	,,
पापधेनुदानम्	,,
मरणस्य पुण्यकालः	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषया:	पृष्ठाङ्का:
वैतरणीधेनुदानम्	५२२
उत्क्रान्तिधेनुदानम्	,,
दश दानानि	,,
तिलपात्रदानम्	,,
मरणे पुण्यमन्त्रश्रवणम्	,,
अष्टौ दानानि	,,
कर्तुरधिकारप्रायश्चित्तम्	,,
मुमूर्षोर्मधुपर्कदानम्	,,
दुर्मरणे निर्णय:	,,
शूद्रेण दग्धे प्रायश्चित्तम्	,,
अस्पृश्यस्पर्शे प्रायश्चित्तम्	,,
ऊर्ध्वोच्छिष्टे मरणे प्रायश्चित्तम्	,,
खट्वायां मरणे प्रायश्चित्तम्	,,
रात्रौ प्रेतदाहे निर्णय:	५२३
रात्रौ वपननिर्णय:	,,
प्रेतस्य वपननिर्णयः	,,
आशौचान्ते पुनर्वपनम्	,,
रात्र्युषिते प्रेते प्रायश्चित्तम्	,,
साग्नेर्मरणे विशेष:	,,
विच्छिन्नश्रौताग्ने:प्रेताधानम्	५२४
अग्न्यरणीनां नाशे	,,
वृष्ट्यादिनाऽग्निनाशे	,,
पत्नीमरणेऽप्येवम्	,,
प्रथमायां जीवन्त्यां द्वितीयायां मृतायां दाहनिर्णय:	,,
दम्पत्योर्मध्ये प्रथममृतस्य दाहनिर्णय:	,,
पश्चान्मृतस्य दाहनिर्णय:	,,
अपत्नीकस्याधानम्	५२५
विधुरस्य दाहाग्निनिर्णय:	,,
विधवाया दाहाग्निनिर्णयः	,,

विषया:	पृष्ठाङ्का:
ब्रह्मचारिणो दाहे निर्णय:	,,
उत्तापनाग्निलक्षणम्	,,
दाहे निषिद्धाग्नि:	५२६
शवनिर्हरणे दिङ्नियम:	,,
निर्हरणप्रकार:	,,
शवसंस्कारविधानम्	,,
आहिताग्नौ विदेशमृते दाहनिर्णय:	,,
साग्नेदाहे पात्रन्यासादि	५२७
शवेऽग्निदानमन्त्र:	,,
उत्क्रान्तिकाले षटपिण्डदानम्	,,
प्रेतस्य स्नानवस्त्रालङ्करणम्	५२८
प्रेतस्य वपनम्	,,
नलदानुलेपनादि	,,
नग्न: प्रेतो न दग्धव्य:	,,
सशेष: प्रेतो दाह्य:	,,
दाहकालेऽग्निनाशे	,,
पर्णशरदाहाग्निनाशे	,,
पर्णशरदग्धे तद्देहलाभे	,,
दम्पत्योरेकदा मृतौ	,,
उदकदानम्	५२९
प्रेतस्नाने	,,
अञ्जलिदानम्	,,
क्लीबाद्यैर्नोदकं देयम्	५३०
आशौचे नियमा:	,,
प्रेतं दग्ध्वा गृहमागत्य निम्बभक्षणादि कार्यम्	,,
तद्दिनेक्रीतलब्धमन्नादिभक्षणीयम्	,,
उपवासाशक्तौ अशननिर्णय:	,,
अध:शय्यासनादिनियमा:	५३१
दशाहमध्ये ज्ञातिभोजनम्	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
आशौचे दानप्रतिग्रहादि-वर्ज्यम्	५३१
मृत्युस्नाने प्रत्यहं बलिर्देयः	,,
नग्नप्रच्छादनश्राद्धे वस्त्रादि-दानानि	,,
प्रेतपिण्डनिर्णयः	,,
वर्णभेदेन व्यवस्था	५३२
सद्यःशौचे पिण्डदाननिर्णयः	,,
त्र्यहाशौचे पिण्डदाननिर्णयः	,,
उत्तरीयशिलापात्रकर्तृद्रव्य-विपर्यये	,,
क्रियाकर्तुर्नाशे	,,
भार्यायाः कर्तृत्वे रजोदर्शने	,,
आशौचमध्ये कर्तुरस्वास्थ्ये	,,
असंस्कृतानां पिण्डः कुत्र देयः	,,
फलमूलादिद्रव्यमिश्रितः पिण्डो देयः	,,
एकमेव पिण्डद्रव्यम्	,,
पिण्डान्नं लौकिकाग्नौ पचेत्	५३३
येन केनापि दाहादिक्रिया-रब्धा चेत्	,,
पुत्रेण पुनः करणे निषेधः	,,
प्रेतपिण्डदाने पितृशब्दस्वधा-शब्दादिनोच्चारणीयम्	,,
एकादशाहपर्यन्तं रात्रौ जलं दुग्धं च देयम्	,,
दशाहे तैलदीपः स्थाप्यः	५३४
भोजनकाले भक्तमुष्टिदानम्	,,
दशाहमध्ये दर्शपाते निर्णयः	,,
मातापित्रोस्तु विशेषः	,,
अत्र देशाचाराद्व्यवस्था	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अस्थिसञ्चयः	५३५
तत्र कालनिर्णयः	,,
सञ्चयने श्राद्धत्रयम्	,,
सद्यःशौचे सञ्चयनम्	,,
त्र्यहाशौचे सञ्चयनम्	,,
संचयने श्मशानदेवताः	,,
सञ्चयनविधिः	,,
प्रेतस्य प्रधानाङ्गास्थिग्रहणम्	५३६
तीर्थेऽस्थिक्षेपविधिः	,,
अन्यकुलस्यास्थिनयने दोषः	,,
अस्थिक्षेपाङ्गहेमश्राद्धम्	५३७
अस्थिक्षेपाङ्गहोमः	,,
अस्थ्नां शुद्धिकरणे पदार्थाः	,,
सञ्चयनोत्तरश्राद्धम्	,,
अनुपनीतस्यास्थिसंचयनिर्णयः	,,
नवश्राद्धनिर्णयः	,,
नवश्राद्धाकरणे दोषः	,,
अत्र शाखाभेदाद्व्यवस्था	५३८
प्रेतश्राद्धेऽष्टादशपदार्था वर्ज्याः	,,
प्रेतश्राद्धानि लौकिकाग्नौ गृहे कार्याणि	,,
प्रेतश्राद्धं संभवेऽन्नेन कार्यम्	,,
नवश्राद्धशेषभोजने प्रायश्चित्तम्	,,
नवश्राद्धे विघ्ने प्राप्ते निर्णयः	,,
अन्वारोहणे विशेषः	,,
आशौचान्त्यदिनकृत्यम्	५३९
दशमदिने वपननिर्णयः	,,
एकादशाहविचारः	५४०
विप्रादीनामाशौचशुद्धिः	,,
आद्यश्राद्धमेकादशेऽह्नि कार्यम्	५४१

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अस्य विघ्ने गौणकालः	५४१
आद्यमासिकाद्याब्दिकयोर्निर्णयः	,,
विप्राभावे अग्नौ महैकोद्दिष्टम्	,,
वृषोत्सर्गनिर्णयः	५४२
वृषोत्सर्गाकरणे दोषः	,,
नीलवृषोत्सर्गफलम्	,,
वृषोत्सर्गकालः	,,
अयं गृहे न कार्यः	,,
नीलवृषलक्षणम्	५४३
वृषाभावे मृदादिना कार्यः	,,
तदभावे होमः कार्यः	,,
वृषोत्सर्गविधिः	,,
पतिपुत्रवत्या वृषोत्सर्गो न कार्यः	,,
तत्स्थाने सवत्सा पयस्विनी देयाः	,,
आशौचान्तरेऽपि वृषोत्सर्गादिकर्म कार्यमेव	,,
पददानम्	,,
पददानवस्तूनि	,,
चतुर्दशोपदानानि	,,
शय्यादानम्	,,
शय्यादानसामग्री	५४४
शय्यादानमन्त्रः	,,
मृतकशय्यादाने विशेषः	,,
लालाटिकास्थिभोजनम्	,,
उदकुम्भदानम्	,,
अन्नदानम्	,,
प्रथमाब्दे प्रत्यहं दीपो देयः	,,
मासिकश्राद्धानि	५४५
तत्र षोडशश्राद्धनिर्णयः	,,
ऊनमासिकनिर्णयः	५४६
ऊनेषु वर्ज्यदिनानि	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
त्रिपुष्करलक्षणम्	,,
प्रतिमासं श्राद्धकरणाशक्तौ निर्णयः	,,
एतेषां युगपत्करणे निर्णयः	,,
वृद्धिं विनापकर्षे पुनःकरणम्	,,
वृद्धिनिमित्तापकर्षे पुनःकरणाभावः	५४७
सपिण्डनापकर्षे दोषः	५४८
अन्तरितानां नवश्राद्धमासिकादीनां सह तन्त्रम्	,,
सपिण्डीकरणम्	५४९
तत्रसाग्निकनिरग्निकयोर्निर्णयः	,,
सपिण्डीकरणकालः	,,
सपिण्डीकरणापकर्षनिर्णयः	५५०
वृद्धिश्राद्धस्यावश्यकानावश्यकतानिर्णयः	५५१
अन्तरितसपिण्डीकरणे नक्षत्रादि	,,
सपिण्डीकरणेऽष्टौ कालाः	,,
सपिण्डीकरणे ज्येष्ठस्यैवाधिकारः	५५२
आहिताग्नेः कनिष्ठस्याप्यधिकारः	,,
वृद्ध्यनन्तरं प्रथमाब्दमध्येऽपि	,,
वृद्ध्यभावे वर्षान्ते सपिण्डीकरणम्	५५३
ज्येष्ठे देशान्तरे सति	,,
देशान्तरे पितरि मृते पुत्रैः किं कार्यम्	,,
अत्र दत्तकस्यविशेषः प्रागुक्तः	,,
क्वचित्कनिष्ठस्याप्यधिकारोयुक्तः	,,
पुनः सपिण्डीकरणे विशेषः	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषया	पृष्ठाङ्काः
व्युत्क्रममृतौ सपिण्डीकरण-निर्णयः	५५१
गोत्रादेः सपिण्डनाधिकारः	,,
स्त्रीणां सपिण्डीकरणनिर्णयः	,,
अपुत्रायाः सपिण्डनम्	,,
आसुरादिविवाहितायाः सपिण्डीनिर्णयः	,,
सर्वत्र देशभेदाद्विकल्पः	,,
कोकिलमतानुसारिणः	,,
अपुत्राणां सपिण्डनम्	
ब्रह्मचारिणां सपिण्डनम्	
अपुत्रे व्युत्क्रममृते विधिः	
यतीनां सपिण्डनं नास्ति	
सपिण्डने कामकालौ देवौ	
सपिण्डीकरणे पक्वान्नेनैव कर्तव्यम्	
सपिण्डनानन्तरं पाथेय-श्राद्धम्	
ततो वृद्धिश्राद्धं कर्तव्यम्	
एतन्मलमासेऽपि कर्तव्यम्	
प्रथमाब्दे निषिद्धानि	
दैवपित्र्यकर्मणि अशुचित्वम्	
पत्न्यादौ अपवादः	
संघातमरणे निर्णयः	
पितरि मृते अन्यस्य श्राद्धं न कार्यम्	
पित्रादीनामाशौचनिर्णयः	
तत्र पितर्युपरते अब्दपर्यन्त-माशौचम्	
मातुः षण्मासपर्यन्तमाशौचम्	

विषयाः	पृष्ठाङ्का
भार्यायास्त्रिमासपर्यन्तमा-शौचम्	
भ्रातृपुत्रयोः सार्धमासमाशौचम्	
प्रथमेऽब्दे गयाश्राद्धादिनिषेधः	
अस्यापवादः	
विधानानि	
तत्र पञ्चकमृते निर्णयः	
त्रिपाद्दशे मृतौ विशेषः	
त्रिपुष्करे मृतौ विशेषः	
पञ्च रत्नानि	
रत्नानामभावे	५६१
सुवर्णस्याप्यभावे	,,
कांस्यदाने पलादिमानम्	,,
त्रिपादभलक्षणम्	,,
मृतःश्मशानाज्जीवन्पुनरागच्छेत्	,,
ब्रह्मचारिमृतौ	,,
तत्रावकीर्णिदोषप्रायश्चित्तम्	,,
येषांकुले ब्रह्मचारिमृते सति	,,
कुष्ठिमृतौ प्रायश्चित्तम्	५६२
कुष्ठिभेदः	,,
प्रायश्चित्तं विना कुष्ठिदाहे	,,
कुष्ठिनो मरणानामाशौचम्	,,
अष्टौ महारोगाः	,,
रजस्वलामरणे	,,
सूतिकामरणे विशेषः	,,
अत्र प्रायश्चित्तम्	५६३
सूतिकायास्तु	,,
गर्भिणीमरणे	,,
तत्रैवषडशीतिमते	,,
गर्भयुक्तदहने	५६४

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अन्वारोहणे फलम्	५६४
अन्वारोहणप्रयोगः	
तत्र हरिद्राकुङ्कुमाञ्जनयुते-शूर्पवायनदानम्	,,
अग्निप्रार्थना	
आज्यहोमः	,,
दृषदुपलपूजनम्	,,
पुनरग्निप्रार्थना	,,
कातराया पुनरुत्थापनम्	,,
सहगमनमहिमा	५६५
ब्राह्मणीचितारोहणे विशेषः	,,
क्षत्रियादिस्त्रीणां पृथक्चितिः	,,
पत्यौ देशान्तरे मृते गमने	,,
अस्थिदाहे पर्णशरदाहे पृथक्चितिदोषः	,,
ग्रामान्तरस्थायाः सहगमन-निर्णयः	,,
उदक्याया अन्वारोहणम्	,,
चितिभ्रष्टायाः प्रायश्चित्तम्	,,
अन्वारोहणे रजस्वला-दिनिर्णयः	,,
इदं गर्भिणीबालापत्या-सूतिकारजस्वलाब्रह्मचारि-भिर्न कार्यम्	,,
अन्वारोहणे रजस्वलाशुद्धिः	५६६
अत्र श्राद्धादिनिर्णयः पूर्वमुक्तः	,,
अग्निप्रवेशाशक्तौ	,,
विधवाधर्माः	५६७
विधवायास्तर्पणम्	,,
श्राद्धादौ विशेषः प्रागुक्तः	,,
संन्यासनिर्णयः	
तत्रातुरसंन्यासविधिः	५६७
अत्र विप्रस्यैवाधिकारः	,,
वर्णक्रमेणाश्रमा उक्ताः	,,
संन्यासश्चतुर्धा	५६८
तत्र कुटीचकलक्षणम्	,,
बहूदकलक्षणम्	,,
हंसलक्षणम्	,,
परमहंसलक्षणम्	,,
त्रिदण्डीलक्षणम्	,,
वैराग्यं विना संन्यासे दोषः	,,
यतेः पूज्यत्वकथनम्	,,
संन्यासविधिः	,,
तत्रादौ प्रायश्चित्तम्	,,
अष्टौ श्राद्धानि	५६९
तत्र प्रतिश्राद्धं देवता क्रमः	,,
देवौ दत्तक्रतुसत्यवसू वा	,,
दण्डादिसामग्री	,,
पूर्वेद्युर्नान्दीश्राद्धम्	,,
दण्डस्य प्रमाणं लक्षणं च	,,
साग्नेर्निरग्नेश्च विधिः	,,
संन्यासग्रहणक्रमः	५७०
तत्राधिकारार्थं स्वयं नव श्राद्धानि कर्तव्यानि	,,
अनाश्रमीचेत्प्रायश्चित्तम्	,,
संन्यासग्रहणकालः	,,
संन्याससङ्कल्पादि	,,
होमे अग्निसिद्धिः	,,
तत्राहिताग्नेर्गार्हपत्ये	,,
विधुरोऽग्निहोत्री चेत ब्रह्मचारी चेल्लौकिके	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
वपनपूर्वकं सावित्रीप्रवेशादिकं कर्म	,,
अत्र विरजाहोमः केचिन्मते	५७१
अत्र केचिन्मते पूर्णाहुत्यादि	,,
सूर्यगायत्री	५७२
भिक्षाकालः	,,
भोजनविधिः	५७३
भिक्षादाने फलम्	,,
ग्रामादौ वासदिनानि	,,
निषिद्धवासस्थानानि	,,
निषिद्धकर्माणि षट्	,,
पतनहेतूनि कर्माणि षट्	,,
बन्धकषट् कर्माणि	,,
यतिपात्राणि	,,
निषिद्धभिक्षा	,,
निषिद्धकर्माणि	,,
पितृपुत्रादिमरणे स्नानमात्रम्	,,
यतिसंस्कारः	,,
आतुरसंन्यासः	,,
आतुरसंन्यासप्रयोगः	५७४
संन्यासग्रहणे फलम्	,,
कृच्छ्रनान्दीश्राद्ध—विरजाहोमाशक्तौ	,,
आतुरसंन्यासविधिः	,,
तत्र अप्सुहोमः	,,
आतुरसंन्यासिनि मृते निर्णयः	५७५
विरक्तस्यातुरस्य निर्णयः	,,
समाधिसंस्कारादिनिर्णयः	,,
आतुरसंन्यासानन्तरं जीवितश्चेन्निर्णयः	,,
कुटीचकस्य दहनम्	,,
बहूदकं पूरयेत्	,,
हंसस्य जले निक्षेपः	,,
परमहंसं पूरयेत्	,,
पलाशमूले नदीतीरे वा पूरणम्	,,
शवस्य स्नानालङ्करणादि पूजनम्	,,
यथास्थानं दण्डादिदानम्	,,
ततः प्रोक्षणम्	,,
अवटे प्रोक्षणं प्रेतनिक्षेपश्च	,,
शंखेन मूर्धभेदनम्	,,
ततो लवणेन गर्तपूरणम्	,,
कुटीचकस्य दहनविधिः	
अस्थ्नां तीर्थे निक्षेपः	,,
अस्याशौचं नास्ति	,,
एकादशेऽह्नि पार्वणम्	,,
हंसपरमहंसानां न पार्वणम्	,,
द्वादशेऽह्नि नारायणबलिः	,,
तद्विधिरन्यश्च विशेषः	,,
ग्रन्थकर्तुः श्लोकाः	,,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

❀ श्रीः ❀

(ग्रन्थकर्ता–परिचय)

श्रीनागनाथभट्ट

प्रतिष्ठान (पैठन) नगर ही इनके वंशजों की जन्मभूमि है। जो दक्षिण हैदराबाद गोदावरी के तटपर है। इनकी शाखा आश्वलायन है। इनके परिवार में मीमांसाशास्त्रका अधिक महत्व था।

अङ्गदेवभट्ट

गोविन्दभट्ट

दिवाकरभट्ट — **अनन्तभट्ट**

रामेश्वरभट्ट

इन्होंने वृद्धावस्था में सपत्नीक काशी के लिए पैदल यात्रा की उस समय तक इनके कोई सन्तान न थी। यहाँ आकर रामघाट पर इन्होंने डेरा डाला, उससमय काशी की बड़ी विचित्र दशा थी। उन दिनों यवनों का बोलबाला और मन्दिरों आदि के हीनावस्था का साम्राज्य था। इनको तीन पुत्र हुए। इनकी विद्वत्तासे समस्त भारतवर्ष के छात्र पढ़ने आते थे।

श्रीधरभट्ट **नारायणभट्ट** **माधवभट्ट**

उस समय औरंगजेबने काशी विश्वनाथ मन्दिर को ध्वस्त कराया था।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

इससे बारह वर्ष तक अवर्षण होने से राज्य सहित कर्मचारी बड़े दुःखित हुए। इनके चमत्कार से काशीपति विश्वनाथ मन्दिर की पुनः स्थापना हुई और इन्हें 'जगद्गुरु' की उपाधि और 'अग्रपूजा' से विभूषित किया गया। बनारस के चुने हुए भट्टपरिवार में सर्व प्रमुख थे। इन्हों ने अपने पिता से ही पढ़ा था। दाक्षिणात्यों के अभ्युदय के यही कारण थे। उससमय के विद्वान् इनको अपना 'नेता' मानते थे।

रामकृष्णभट्ट — शंकरभट्ट

रामकृष्णभट्ट

(धर्मपत्नी उमा) इनकी माता सती हुईं यह भी सुना जाता है। काणे ने इस विषय पर 'हिष्ट्रीऑफ धर्मशास्त्र' पृ० ६३४ में लिखा है।

दिनकरभट्ट — कमलाकरभट्ट — लक्ष्मणभट्ट

दिनकरभट्ट (दिवाकरभट्ट)

विश्वेश्वरभट्ट (गागाभट्ट) इन्होंने १६७४ में श्री छत्रपतीशिवाजी का राज्याभिषेक कराया था।

कमलाकरभट्ट

इन्हों ने हेमाद्रि और माधव के विचारों का बड़ी गम्भीरता से मनन किया। नीलकण्ठ तथा मित्रमिश्र के ग्रन्थों से कुछ ही बातें इनकी मिलती जुलती हैं। इनका मकान अभीतक दुर्गाघाट काशी में है। इनकी मृत्यु का ठीक-ठीक पता नहीं लग रहा है। गागा भट्ट (विश्वेश्वर भट्ट) कमलाकर के भानजे और नीलकण्ठ चाचा थे। इनका और नीलकण्ठभट्ट का आपस में निबन्ध रचना में बड़ी प्रतिद्वन्द्विता थी। मालूम होता है कि वे समय २ पर इस ग्रन्थको बढ़ाते ही चले गये। लेकिन हमारी समझसे यह ग्रन्थ

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अधुरा सा ही लगता है। इन्होंने १६६८
रौद्र संवत् बीस फरवरी माघकृष्ण
चतुर्दशी तिथि को समाप्त किया। यह
लिखा मिलता है।

वसुऋतुभूमिते गतेऽब्दे नरपतिविक्रमतोऽथ याति रौद्रे।
तपसि शिवतिथौ समापितोऽयं रघुप-
तिपादसरोरुहेऽर्पितश्च ॥

(स्व० पूज्य पिताजी ८ महामहोपाध्याय पं० विद्याधर गौड) ने श्राद्धसार की भूमिका में कमलाकरभट्ट और नारायणभट्ट के समय का उल्लेख सा किया है।

अनन्तभट्ट — प्रभाकरभट्ट — सामभट्ट

श्रीकमलाकरभट्ट के लिखित ग्रन्थ—

(कैटलॉग कैटलॉगॉरम ऐन—अल्फाबेटिकल रजिष्टर संस्कृत वर्क्स ऐण्ड ऑथर्स लिप्जिग (जर्मन) और हिष्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र नामक पुस्तकसे उद्धृत—)

आदौ निर्णयसिन्धुस्तु वार्तिके टिप्पणी पुनः।
काव्यप्रकाशजा व्याख्या दाने च कमलाकरः ॥ १ ॥
शान्तिरत्नं ततः पूर्तव्रतयोः कमलाकरः।
ग्रन्थो वेदान्तरत्नं च सभादर्शकुतूहलम् ॥ २ ॥
प्रायश्चित्ते रत्नमेकं व्यवहारे तथापरम्।
बह्वचाह्निकमन्यच्च गोत्रप्रवरदर्पणः ॥ ३ ॥
रत्नं कर्मविपाकाख्यं कार्तवीर्यस्य पद्धतिः।
सोमः प्रयोगः शूद्राणां धर्मो रुद्रस्य पद्धतिः ॥ ४ ॥
टिप्पणी च तथा शास्त्रदीपिकालोकसंज्ञिता।
मीमांसायां तथा शास्त्रं तत्त्वस्य कमलाकरः ॥ ५ ॥
सर्वतीर्थविधिश्चैव भक्तिरत्नं तथोत्तमम्।
रामकृष्णसुतेनेत्थं कमलाकरशर्मणा ॥ ६ ॥
द्व्यधिकविंशतीनां च ग्रन्थानां रत्नमालिका।
सेवां कर्तुमशक्तेन ह्यर्पिता रामपादयोः ॥ ७ ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

१ निर्णयसिन्धु
२ अग्निनिर्णय
३ आचारदीप या आचारदीपिका
४ आश्वलायनशाखा श्राद्धप्रयोग
५ आह्निकप्रयोग
६ आह्निकविधि
७ उत्तरपाद
८ ऐन्द्रीमहाशान्ति सहित राजाभिषेकप्रयोग
९ कर्मविपाकरत्न
१० कल्पलतादानप्रयोग
११ कार्तवीर्यार्जुनदीपदानप्रयोग
१२ काव्यप्रकाशव्याख्या
१३ क्रियापाद
१४ गयाकृत्य
१५ गीतगोविन्द भाष्यरत्नमाला
१६ गोत्रप्रवरनिर्णय या गोत्र-प्रवरदर्पण
१७ ग्रहयाग
१८ चण्डीविधानपद्धति
१९ जलाशयोत्सर्गविधि
२० जीर्णोद्धारविधि
२१ तन्त्रवार्तिकटीका
२२ तिलगर्भदानप्रयोग
२३ तीर्थयात्रा
२४ तुलापद्धति
२५ त्रिपद्मदानविधि
२६ सहस्रचण्ड्यादिप्रयोगपद्धति
२७ सुवर्णपृथ्वीदानविधि
२८ स्थालीपाकप्रयोग
२९ हिरण्यगर्भदानविधि
३० कमलाकरभट्टीय
३१ त्रिस्थलीसेतु
३२ दानकमलाकर
३३ दानदिनकर
३४ दायविभाग
३५ धर्मतत्त्व
३६ नारायणबलिप्रयोग
३७ नीतिकमलाकर
३८ पाशुबन्ध
३९ पशुलांगलदानविधि
४० पितृभक्तितरङ्गिणी
४१ पूर्त (कमलाकर)
४२ प्रतिष्ठाविधि
४३ प्रवरदर्पण
४४ प्रायश्चित्तरत्न
४५ बह्वृचान्हिक
४६ भक्तिरत्न
४७ भाषापाद
४८ मन्त्रकमलाकर
४९ रजतदानप्रयोग
५० रथदानविधि
५१ रामकल्पद्रुम
५२ रामकौतुकमहाकाव्य
५३ लक्षहोमविधि
५४ लिङ्गार्चाप्रतिष्ठाविधि
५५ विघ्नेशदानविधि
५६ विवादताण्डव
५७ विश्वचक्रदानविधि
५८ व्यवहार [कमलाकर]
५९ व्रतकमलाकर
६० व्रतार्क [?]
६१ शतचण्डीसहस्रचण्डीप्रयोग
६२ शतमानदानविधि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

६३ शान्तिरत्न या शान्तिरत्नाकर
६४ शास्त्रदीपिकालोक
६५ शास्त्रमाला
६६ शिवप्रतिष्ठा
६७ शूद्रधर्मतत्व
६८ श्राद्धनिर्णय (निर्णयसिन्धु से)
६९ श्राद्धसार
७० श्रावणीप्रयोग
७१ श्वेताश्वदानविधि
७२ षोडशसंस्कार
७३ संस्कारपद्धति
७४ समयकमलाकर
७५ सरस्वतीदानविधि
७६ सर्वशास्त्रार्थनिर्णय
७७ तिथिनिर्णय
७८ पशुप्रयोग
७९ ऐन्द्रीशान्ति
८० और्ध्वदेहिकपद्धति
८१ मीमांसाकुतूहल (?)
८२ राज्याभिषेकप्रयोग
८३ षोडशमहादानविधि

—❋—

माधवभट्ट (रामेश्वरभट्ट पुत्र के ग्रन्थ)

१ आशौचनिर्णय
२ सूर्यार्घ्यदानपद्धति

श्रीधरभट्ट (रामेश्वरभट्ट पुत्र नारायणभट्ट के सबसे छोटे भाई) के ग्रन्थ-

१ सापिण्ड्यदीपिका या सापिण्ड्य निर्णय

लक्ष्मणभट्ट के ग्रन्थ--

१ आचाररत्न
२ आचारसार
३ गुरुशतक टिप्पण
४ गोत्रप्रवररत्न

—❋—

दिनकरभट्ट के ग्रन्थ—

१ शान्तिसार
२ कर्मविपाकसार
३ दिनकरोद्योत (छत्रपति-शिवाजी के समय का)
४ भाट्टदिनकर
५ प्रायश्चित्तसार

—❋—

विश्वेश्वरभट्ट —

(गागाभट्ट) के ग्रन्थ —

१ आशौचदीपिका
२ कायस्थधर्मदीप या कायस्थ-धर्मप्रकाश या कायस्थपद्धति
३ जातिविवेक (कायस्थपद्धति का प्रथम भाग)
४ दिनकरोद्योत (दिनकरभट्ट ने प्रारंभ किया, समाप्ति गागाभट्ट द्वारा)
५ निरूढपशुबन्धनप्रयोगबोध (आपस्तम्बपद्धतिसहित)
६ पिण्डपितृयज्ञप्रयोग
७ प्रयोगसार
८ भाट्टचिन्तामणि-जैमिनीसूत्रटीका
९ मीमांसाकुसुमाञ्जलि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

१० राकागम चन्द्रालोक टीका
११ शिवार्कोदयश्लोक वार्तिक टीका
१२ सुज्ञानदुर्गोदय
१३ आपस्तम्बपद्धति
१४ तुलादानप्रयोग
१५ समयनय
१६ सापिण्डविचार

—※—

(नारायणभट्ट के पुत्र) शंकरभट्ट के ग्रन्थ—

१ धर्मद्वैत निर्णय (इनके पौत्र इसी नामवाले शंकरभट्ट ने अपनी कर्मविपाक पुस्तक में उद्धृत किया है)
२ निर्णयचन्द्रिका
३ मीमांसाबालप्रकाश
४ विधिरसायनदूषण
५ व्रतमयूख
६ शास्त्रदीपिकाप्रकाश
७ सर्वधर्मप्रकाश
८ श्राद्धकल्पसार
९ द्वैतनिर्णय
१० धर्मप्रकाश

—o—

रामकृष्णभट्ट के ग्रन्थ—

१ अनन्तव्रतोद्यापनप्रयोग
२ जीवत्पितृककर्तव्यनिर्णय
३ मासिकश्राद्धनिर्णय
४ शिवलिङ्गप्रतिष्ठाविधि
५ अशिवस्तुतिव्याख्यान
६ रुद्रस्नानपद्धति
७ वास्तुशान्तिप्रयोग
८ उत्सर्गोपाकर्मप्रयोग
९ कोटिहोमप्रयोग
१० विभागतत्व या तत्वविचार

—o—

नारायणभट्ट के ग्रन्थ—

१ अन्त्येष्टिपद्धति या औध्र्व-देहिकप ति
२ अन्येष्टिप्रयोग
३ अयननिर्णय
४ आतुरसंन्यासविधि
५ आहिताग्निमरणदाहादि
६ आह्निकविधि
७ उत्सर्गप्रयोग
८ कालनिर्णय (?) (माध्वसंप्र-दायका-कालनिर्णयश्लोक-संग्रह पर)
९ काशीमरणान्मुक्तिविचार
१० गयाकार्यानुष्ठानपद्धति (त्रिस्थलीसेतु का एक भाग)
११ गयायात्राप्रयोग
१२ गोत्रप्रवरनिर्णय
१३ जलाशयारामोत्सर्गविधि
१४ तडागोत्सर्ग
१५ तिथिनिर्णय
१६ तुलापुरुषमहादानप्रयोगः
१७ त्रिस्थलीसेतु
१८ त्रिस्थलीसेतुमाहात्म्य
१९ दिव्यानुष्ठानपद्धति
२० प्रयोगसेतु

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

२१ प्रयोगरत्न
२२ मांसमीमांसा (निर्णयसिन्धु में भी उद्धृत)
२३ रुद्रपद्धति या रुद्रानुष्ठानपद्धति
२४ लिङ्गादिप्रतिष्ठाविधि
२५ वास्तुपुरुषविधि
२६ वृषोत्सर्गपद्धति
२७ वापीकूपतडागारामोद्यापनपद्धति
२८ लक्षहोमपद्धति
२९ विष्णुश्राद्धपद्धति

कमलाकरभट्ट के पुत्र—
अनन्तभट्ट के ग्रन्थ—

१ त्रिंशत्श्लोकी व्याख्या सुबोधिनी
२ रामकल्पद्रुम
३ शास्त्रार्थमालावृत्ति (जैमिनी-सूत्र पर)

—०—

(दिवाकर भट्ट)

१ त्रिवेणीपद्धति

(कमलाकरभट्ट के पितृव्य वंशज)

भट्ट शंकर

रंगनाथ | दामोदर | नृसिंह | भट्ट नीलकण्ठ (कमलाकरभट्ट के चाचा)

भट्ट नीलकण्ठ → भानुभट्ट | भट्ट शंकर

भट्टनीलकण्ठके लड़की का लड़का दिवाकर

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भट्ट नीलकण्ठ के ग्रन्थ—

१ धर्मप्रकाश
२ श्राद्धप्रकाश
३ भगवन्तभास्कर
[१ श्राद्धमयूख
२ शुद्धिमयूख
३ प्रायश्चित्तमयूख
४ दानमयूख
५ राजनीतिमयूख
६ व्यवहारमयूख
७ समयमयूख
८ आचारमयूख
९ शान्तिविवेकमयूख
१० प्रतिष्ठामयूख
११ विवादमयूख
१२ उत्सर्गमयूख]
या स्मृतिभास्कर (राजा भगवन्तदेव की आज्ञा से निर्मित)

नीलकण्ठ-कन्या पुत्र के ग्रन्थ—

१ प्रायश्चित्तमुक्तावली

भट्ट नीलकण्ठ पुत्र—भट्ट शंकर के ग्रन्थ—

१ कर्मविपाक
२ कुण्डार्क
३ कुण्डोद्योतदर्शन
४ व्रतार्क
५ संस्कारमयूख
६ कुण्डमण्डपनिर्णय
७ कुण्डोद्योतटीका कुण्डभास्कर
८ सदाचारसंग्रह

भानुभट्ट के ग्रन्थ—

१ एकवस्त्रस्नानविधि
२ द्वैतनिर्णयसिद्धान्तसंग्रह
(द्वैतनिर्णय के आधार पर)
३ होमनिर्णय

दामोदरभट्ट (शंकर भट्ट के लड़के नीलकण्ठ के सबसे बड़े भाई) के ग्रन्थ—

१ कलिवर्ज्यनिर्णय
२ द्वैतनिर्णय परिशिष्ट

बहुत अन्वेषण करने पर यह वंश परिचय संक्षिप्त में ही प्राप्त हो सका।

दौलतरामगौड

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

श्रीमत्कमलाकरभट्टप्रणीतो

निर्णयसिन्धुः ।

मङ्गलाचरणम् ।

कारुण्यैकनिकेतं रामं सीतालतासमायुक्तम् ।
विश्वामित्रान्ववायव्रततिसमालम्बिशाखिनं वन्दे ॥ १ ॥
लक्ष्मीसहायं कल्पद्रुतलरञ्जितगोकुलम् ।
बर्हापीड घनश्यामं महः किञ्चिदुपास्महे ॥ २ ॥
वेदार्थधर्मरक्षायै मायामानुषरूपिणम् ।
पितामहं हरिं वन्दे भट्टनारायणाह्वयम् ॥ ३ ॥
यत्पादसंस्मृतिः सर्वमङ्गलप्रतिभूर्मता ।
तान् भट्टरामकृष्णाख्यान् श्रीतातचरणान्नुमः ॥ ४ ॥
सर्वकल्याणसन्दोहनिदानं यत्पदद्वयम् ।
द्युनन्दीसोदरीमम्बामुमाख्यां नौमि सादरम् ॥ ५ ॥
बिन्दुमाधवपादाब्जरोलम्बीकृतविग्रहम् ।
ज्यायांसं भ्रातरं भट्टदिवाकरमुपास्महे ॥ ६ ॥
हेमाद्रिमाधवमते प्रविचार्य सम्यगालोच्य तत्त्वमथ तीर्थकृतां परेषाम् ।
श्रीरामकृष्णतनयःकमलाकराख्यःकाले यथामति विनिर्णयमातनोति ॥७॥
सन्ति यद्यपि विद्वांसस्तन्निबन्धाश्च कोटिशः ।
तथाप्यमुष्य वैदग्धीं केचिद्विज्ञातुमीशते ॥ ८ ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

(क)

संक्षेपतः कालनिर्णयः

तत्र संक्षेपतः कालः षोढा । अब्दोऽयनमृतुर्मासः पक्षो दिवस इति । तत्राब्दो माधवमते पञ्चधा । सावनः सौरश्चान्द्रो नाक्षत्रो बार्हस्पत्य इति । गुरोर्मध्यमराशिभोगेन बार्हस्पत्यः, स च ज्योतिः-शास्त्रे प्रसिद्धः । हेमाद्रिस्त्वन्त्ययोर्धर्मशास्त्रेऽनुपयोगात्त्रिस्र एव विधा आह । तत्र वक्ष्यमाणैः सावनादिद्वादशमासैस्तत्तदब्दम् । मलमासे तु सति षष्टिदिनात्मक एको मास इति द्वादशमासत्वमविरुद्धम् । तथाच व्यासः—'षष्ट्या तु दिवसैर्मासः कथितो बादरायणैः' इति ॥

संवत्सरनामानि ।

तत्र चान्द्रोऽब्दः षष्टिभेदः । तदाह गार्ग्यः—'प्रभवो विभवः शुक्लः प्रमोदोऽथ प्रजापतिः । अङ्गिरा श्रीमुखो भावो युवा धातेश्वर-स्तथा ॥ बहुधान्यः प्रमाथी च विक्रमोऽथ वृषस्तथा । चित्रभानुः सुभानुश्च तारणः पार्थिवोऽव्ययः ॥ सर्वजित्सर्वधारी च विरोधी विकृतिः खरः । नन्दनो विजयश्चैव जयो मन्मथदुर्मुखौ ॥ हेमलम्बो विलम्बोऽथ विकारी शार्वरी प्लवः । शुभकृच्छोभनः क्रोधी विश्वाव-सुपराभवौ ॥ प्लवङ्गः कीलकः सौम्यः साधारणविरोधकृत् । परिधावी प्रमादी च आनन्दो राक्षसोऽनलः ॥ पिङ्गलः कालयुक्तश्च सिद्धार्थी रौद्रदुर्मती । दुन्दुभी रुधिरोद्गारी रक्ताक्षी क्रोधनः क्षयः ॥' इति ।

(क) सूर्यसिद्धान्ते—कालभेदः

लोकानामन्तकृत् कालः कालोऽन्यः कलनात्मकः । स द्विधा स्थूलसूक्ष्मत्वान्मूर्त्तश्चामूर्त्त उच्यते ॥
प्राणादिः कथितो मूर्त्तस्त्रुट्याद्योऽमूर्त्तसंज्ञकः । सूच्या भिन्ने पद्मपत्रे त्रुटिरित्यभिधीयते ॥
तत् षष्ट्या तु भवेद्रेणू रेणुषष्ट्या लवः स्मृतः । षड्भिः प्राणैर्विनाडी स्यात् तत्षष्ट्या नाडिका स्मृता ॥

विष्णुधर्मोत्तरेऽपि—

अनादिनिधनः कालो रुद्रः सङ्कर्षणः स्मृतः । कलनात्सर्वभूतानां स कालः परिकीर्तितः ॥
अनादिनिधनत्वेन स महान्परमेश्वरः । निमेषादपि सूक्ष्मत्वात्सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरो ह्यति ॥
तस्य सूक्ष्मातिसूक्ष्मस्य कालस्य परमेष्ठिनः । दुर्विभाव्या महाभाग योगिनामपि सूक्ष्मता ॥
पद्मपत्रसहस्रं तु सूच्या वै भिद्यते यथा । समकालं तु तद्भिन्नमबुधो मन्यते जनः ॥
कालक्रमेण तद्भिन्नं सा तस्य द्विज सूक्ष्मता । तस्य सूक्ष्मातिसूक्ष्मस्य तथाऽतिमहतो द्विजाः ॥
मानं संख्या बुधैर्ज्ञेया ग्रहगत्यनुसारतः ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

संवत्सरनिर्णयः ।

यद्यपि ज्योतिषे गुरोर्मध्यमराशिभोगेन प्रभवादीनां माघादौ प्रवृत्तिरुक्ता, तथापि प्रभवादीनां चान्द्रत्वमप्यस्ति। 'चान्द्राणां प्रभवादीनां पञ्चके पञ्चके युगे' इति माधवोक्तेः । तेन चान्द्रः प्रभवादिश्चैत्रसिते प्रवर्तते, बार्हस्पत्यस्तु माघादौ । तयोर्विनियोगो ज्योतिर्निबन्धे ब्रह्मसिद्धान्ते—'व्यावहारिकसंज्ञोऽयं कालः स्मृत्यादिकर्मसु । योज्यः सर्वत्र तत्रापि जैवो वा नर्मदोत्तरे ॥' इति । आर्ष्टिषेणः—'स्मरेत्सर्वत्र कर्मादौ चान्द्रं संवत्सरं सदा । नान्यं यस्माद्वत्सरादौ प्रवृत्तिस्तस्य कीर्तिता ॥' इति ॥

अयननिर्णयः ।

अयनं तु सौरर्तुत्रयात्मकम् । 'सौरर्तुत्रितयं प्रदिष्टमयनम्' इति दीपिकोक्तेः । तद्द्विविधम् । दक्षिणमुत्तरं चेति । कर्कसंक्रान्तिर्दक्षिणायनं मकरोऽन्त्यम् । अयनयोर्विनियोगमाह मदनरत्ने सत्यव्रतः—'देवतारामवाप्यादि प्रतिष्ठोदङ्मुखे रवौ । दक्षिणाशामुखे कुर्वन्न तत्फलमवाप्नुयात् ॥' वैखानसः—'मातृभैरववाराहनरसिंहत्रिविक्रमाः । महिषासुरहन्त्र्यश्च स्थाप्या वै दक्षिणायने ॥' वैशब्दोऽप्यर्थे, न तु दक्षिणायन एवेति नियमः । पूर्ववचने दक्षिणायने निषिद्धाया देवप्रतिष्ठाया देवविषये प्रतिप्रसवमात्रात् । रत्नमालायाम्—'गृहप्रवेशत्रिदशप्रतिष्ठाविवाहचौलव्रतबन्धपूर्वम् । सौम्यायने कर्म शुभं विधेयं यद्गर्हितं तत्खलु दक्षिणे च ॥' इति ।

अस्य काश्यामपवादः ।

अस्यापवादः काशीखण्डे—'सदा कृतयुगं चास्तु सदा चास्तूत्तरायणम् । सदा महोदयश्चास्तु काश्यां निवसतां सताम् ॥'इत्ययनम् ॥

ऋतुनिर्णयः ।

ऋतुर्मासद्वयात्मा । मलमासे तु मासद्वयात्मक एको मासस्तेन मासद्वयात्मकत्वमविरुद्धम् । स द्वेधा । चान्द्रः सौरश्च । 'चैत्रारम्भो

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वसन्तादिश्चान्द्रः, मीनारम्भो मेषारम्भो वा सौरः, मीनमेषयोर्मेष-वृषयोर्वा वसन्तः' इति बौधयानोक्तेः। अनयोर्विनियोगमाह त्रिकाण्ड-मण्डनः—'श्रौतस्मार्तक्रियाः सर्वाः कुर्याच्चान्द्रमासर्तुषु। तदभावे तु सौरर्तुष्विति ज्योतिर्विदां मतम्॥' स द्विविधोऽपि षोढा "वसन्तो ग्रीष्मो वर्षाः शरद्धेमन्तः शिशिरः"। इत्यृतुः॥

मासनिर्णयः।

मासश्चतुर्धा। सावनः सौरश्चान्द्रो नाक्षत्र (ख) इति। त्रिंशद्दिनः सावनः, अर्कसंक्रान्तेः संक्रान्त्यवधिः सौरः। यद्यपि हेमाद्रिमाधवका-लादर्शाद्यालोचनेन मेषसंक्रान्त्यां समाप्तामावास्यकत्वं चैत्रत्वमिति लक्षणाच्च मेषसंक्रान्तेश्चैत्रत्वं प्रतीयते, तथापि मेषसंक्रमे दर्शद्वये सति वैशाखस्यैवाधिक्यात्तत्पूर्वभावित्वेन मीनस्यैव चैत्रत्वं युक्तम्। एवं मेषादयो वैशाखाद्याः। अतो मीनसंक्रान्त्यामधिगतपौर्णमासिकत्वं आद्यतिथिकत्वं वा चैत्रत्वमिति लक्षणात् मीन एव सौरश्चैत्रः। एवं वैशाखादयोपि मेषाद्या ज्ञेयाः॥

सौरमासप्रसङ्गात्संक्रान्तिनिर्णयः।

तत्र पूर्वतोपि परतोपि संक्रमात्पुण्यकालघटिकास्तु षोडशेति सामान्यतः पुण्यकालः सर्वैरुक्तः। विशेषस्तूच्यते। अत्र मामकाः संग्रहश्लोकाः—'प्रागूर्ध्वा दश पूर्वतः षडवनिस्तद्वत्पराः पूर्वतस्त्रिंशत्षोडश पूर्वतोऽथ परतः पूर्वाः पराः स्युर्दश। पूर्वाः षोडश चोत्तरा ऋतुभुवः पश्चात्खवेदाः पुनः पूर्वाः षोडश चोत्तराः पुनरथो पुण्यास्तु मेषादितः॥' अस्यार्थः—मेषे प्रागूर्ध्वं च दश घटिकाः पुण्यकालः, वृषे पूर्वाः षोडष, मिथुने पराः षोडश, कर्के पूर्वास्त्रिंशत्, सिंहे पूर्वाः षोडश, कन्यायां पराः षोडश, तुलायां प्रागूर्ध्वा दश, वृश्चिके पूर्वाः षोडश, धनुषि पराः षोडश, मकरे चत्वारिंशत्पराः। इदं च हेमाद्रिमतेनोक्तम्। माधवमते त्वत्र परा विंशतिः पुण्याः,

---

(ख) तिथिनैकेन दिवसश्चान्द्रमाने प्रकीर्तितः। अहोरात्रेण चैकेन सावनो दिवसः स्मृतः॥
आदित्यभागभोगेन सौरो दिवस उच्यते। चन्द्रनक्षत्रभोगेन नाक्षत्रो दिवसः स्मृतः॥
माने मासस्तु नाक्षत्रे सप्तविंशतिभिर्दिनैः। परिशेषेषु मानेषु मासस्त्रिंशद्दिनः स्मृतः॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कुम्भे पूर्वाः षोडश, मीने पराः षोडशेति । 'याप्युत्तरा पुण्यतमा मयोक्ता सायं भवेत्सा यदि सापि पूर्वा। पूर्वा तु योक्ता यदि सा विभाते साप्युत्तरा रात्रिनिषेधतः स्यात् ॥ अर्वाङ् निशीथाद्यदि संक्रमः स्यात्पूर्वेऽह्नि पुण्यं परतः परेऽह्नि। आसन्नयामद्वयमेव पुण्यं निशीथमध्ये तु दिनद्वयं स्यात् ॥ कर्के झषेऽप्येवमिति ह्यवाच हेमाद्रिसूरिश्च तथाऽपरार्कः। झषः प्रदोषे यदि वार्धरात्रे परेऽह्नि पुण्यं त्वथ कर्कटश्चेत् ॥ प्रभातकाले यदि वा निशीथे पूर्वेऽह्नि पुण्यं त्विति माधवार्यः ॥' अत्र मूलवचनानि माधवापरार्कहेमाद्र्यादिषु द्रष्टव्यानि।

सर्वसंक्रान्तिषु दानानि ।

सर्वासु संक्रान्तिषु दानविशेषो हेमाद्रौ दानकाण्डे उक्तः। विश्वामित्रः—'मेषसंक्रमणे भानोर्मेषदानं महाफलम्। वृषसंक्रमणे दानं गवां प्रोक्तं तथैव च ॥ वस्त्रान्नपानदानानि मिथुने विहितानि तु। घृतधेनुप्रदानं च कर्कटेऽपि विशिष्यते ॥ ससुवर्णं छत्रदानं सिंहेऽपि विहितं सदा। कन्याप्रवेशे वस्त्राणां वेश्मनां दानमेव च ॥ तुलाप्रवेशे तिलानां गोरसानामपीष्टदम्। अन्नकीचलिते भानौ दीपदानं महाफलम् ॥ (अन्नकी वृश्चिकः) धनुःप्रवेशे वस्त्राणां यानानां च महाफलम्। झषप्रवेशे दारूणां दानमग्नेस्तथैव च ॥ कुम्भप्रवेशे दानं तु गवामम्बुतृणस्य च । मीनप्रवेशे स्थानानां मालानामपि चोत्तमम् ॥' इति ।

सर्वसंक्रान्तावुपवासदाननिर्णयः ।

अत्रोपवासमाह हेमाद्रावापस्तम्बः—'अयने विषुवे चैव त्रिरात्रोपोषितो नरः। स्नात्वा यस्त्वर्चयेद्भानुं सर्वकामफलं लभेत् ॥' अशक्तौ तु वृद्धवसिष्ठः—'अयने संक्रमे चैव ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः । अहोरात्रोषितः स्नात्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥' अत्रोपवासः संक्रमदिने, दानादि तु पुण्यकालदिन इत्याचार्यचूडामणिः । विधिलाघवात्पुण्यकालदिन एवोभयमिति वृद्धाः। इदं च पुत्रिगृहस्थातिरिक्तविषयम् । 'आदित्येऽहनि संक्रान्तौ ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः। उपवासो न कर्तव्यः पुत्रिणा गृहिणा तथा ॥' इति जैमिनिवचनात् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

संक्रान्तौ श्राद्धम् ।

अत्र श्राद्धमुक्तं हेमाद्रौ विष्णुधर्मे—'श्राद्धं संक्रमणे भानोः प्रशस्तं पृथिवीपते'। अपरार्केऽपि विष्णुः—'आदित्यसंक्रमश्चैव विशेषेणायनद्वयम्। व्यतीपातोऽथ जन्मर्क्षं चन्द्रसूर्यग्रहस्तथा ॥ एतांस्तु श्राद्धकालान्वै काम्यानाह प्रजापतिः ।' इति । द्वादशादिदिनैरर्वागयनांशप्रवृत्तावपि पुण्यं वक्तुमयनग्रहणम् । अन्यथा संक्रमेण सिद्धेरयनग्रहणं व्यर्थं स्यादित्यपरार्कः । हेमाद्रावपि गालवः—'अयनांशकतुल्येन कालेनैव स्फुटं भवेत् । मृगकर्कादिगे सूर्ये याम्योदगयने सति ॥ तदा संक्रान्तिकाले स्युरुक्ता विष्णुपदादयः ॥' इति । अयनांशच्युतिरूपे संक्रान्तिकालेऽपि विष्णुपदादयः प्रवर्तन्ते । तेन तत्प्रयुक्तं पुण्यकालादि तत्रापि ज्ञेयमिति स एव व्याचख्यौ । तच्च मेषायनं वृषायनमित्यादि सर्वत्र ज्ञेयम् । माधवीयेऽपि जाबालिः—'संक्रान्तिषु यथा कालस्तदीयेऽप्ययने तथा । अयने विंशतिः पूर्वा मकरे विंशतिः पराः॥' इति । मकरायने पूर्वाः विंशतिघटिकाः पुण्याः, मकरसंक्रान्तौ तु पश्चाद्विंशतिः पुण्याः । अन्यत्रायने तत्संक्रान्तिवदित्यर्थः ।

विष्णुपदादिस्वरूपं ।

च दीपिकायामुक्तम्—'हर्यङ्घ्रिर्वृषसिंहवृश्चिकघटेष्वर्कस्य यः संक्रमः कन्यामीनधनुर्नृयुक्षु षडशीत्याख्यं तुलामेषयोः । प्रोक्तं तद्विषुवं झषेऽयनमुदक्कर्कटके दक्षिणम्' इति । हर्यङ्घ्रिर्विष्णुपदं, नृयुक् मिथुनम् । अत्र च पिण्डरहितं श्राद्धं कुर्यात् । तथा चापरार्के मात्स्ये—'अयनद्वितये श्राद्धं विषुवद्वितये तथा । संक्रान्तिषु च सर्वासु पिण्डनिर्वपणादृते ॥' इति । श्राद्धशूलपाणिस्त्वस्य निर्मूलत्वात्, समूलत्वेऽपि 'ततः प्रभृति संक्रान्तावुपरागादिपर्वसु । त्रिपिण्डमाचरेच्छ्राद्धमेकोद्दिष्टं मृताहनि ॥' इति मात्स्योक्तेर्ग्रहणाग्रहणवद्विकल्प एवेत्याह । तन्न । अस्य पार्वणानुवादकत्वेन पिण्डाविधायकत्वात् । पिण्डोक्तिः । अन्यथैकपदे पिण्डानुवादे त्रित्वविधौ वषट्कर्तुः प्रथमभक्षवद्वैरूप्यापत्तेः । तथा चोभयसमूलत्वे पिण्डरहितं पार्वणं कर्तव्यमित्युभयवचनयोरर्थः । त्रिपिण्डशब्देनैकोद्दिष्टव्यावर्तनमात्रम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मङ्गलकृत्येषु विशेषमाह ज्योतिर्निबन्धे नारदः—'त्याज्याः सूर्यस्य संक्रान्तेः पूर्वतः परतस्तथा । विवाहादिषु कार्येषु नाड्यः षोडश षोडश ॥' इति । एतत्पुण्यकालोपलक्षणम् । 'भानोः संक्रान्तिभोगश्च कुलिकश्चार्धयामकः ।' इति ज्योतिःप्रकाशे वर्ज्येषु परिगणनात् ।

अयनव्यतिरिक्तासु दशसु संक्रान्तिषु रात्रौ स्नानश्राद्धादि न कार्यम् । 'अह्नि संक्रमणे कृत्स्नमहः पुण्यं प्रकीर्तितम् । रात्रौ संक्रमणे भानोर्दिनार्धे स्नानदानयोः ॥ अर्धरात्रादधस्तस्मिन्मध्याह्नस्योपरि क्रिया । ऊर्ध्वं संक्रमणे चोर्ध्वमुदयात्प्रहरद्वयम् ॥ पूर्णे चेदर्धरात्रे तु यदा संक्रमते रविः । प्राहुर्दिनद्वयं पुण्यं मुक्त्वा मकरकर्कटौ ॥' इति वृद्धवसिष्ठादिवचनैरहःपुण्यत्वोक्त्वा 'रात्रौ संक्रमणे भानोर्दिवा कुर्यात्तु तत्क्रियाम् । पूर्वस्मात्परतो वापि प्रत्यासन्नस्य तत्फलम् ॥' इति वसिष्ठवचनाच्चार्थाद्रात्रौ स्नानादिनिषेधप्रतीतेः । यानि तु-'विवाहव्रतसंक्रान्तिप्रतिष्ठाऋतुजन्मसु । तथोपरागपातादौ स्नाने दाने निशा शुभा ॥' इति, 'राहुदर्शनसंक्रान्तिविवाहात्ययवृद्धिषु । स्नानदानादिकं कुर्युर्निशि काम्यव्रतेषु च ॥' इत्यादीनि विष्णुगोभिलादिवचनानि तानि मकरकर्कसंक्रान्तिविषयाणि । 'मुक्त्वा मकरकर्कटौ' इति तयोर्दिवानुष्ठानस्य पर्युदस्तत्वादिति हेमाद्रिमाधवादयः । वस्तुतस्तु प्रागुक्तवचनेन तयोर्दिनद्वयपुण्यत्वादेरेव पर्युदासान्मकरकर्कटयोरपि 'स्नानं दानं परेऽहनि' इत्यादिभिरहःपुण्यत्वोक्तेः । अहःपुण्यत्वानुपपत्त्या कल्प्यरात्रिनिषेधस्य च प्रत्यक्षरात्रिविधिना बाधात्सर्वसंक्रान्तिषु रात्रावनुष्ठानविकल्पः, स च देशाचाराद्व्यवतिष्ठत इति युक्तः पन्थाः । अयनयोस्तु वक्तव्यो विशेषः श्रावणे माघे च वक्ष्यते । ज्योतिर्निबन्धे गर्गः—'यस्य जन्मर्क्षमासाद्य रविसंक्रमणं भवेत् । तन्मासाभ्यन्तरे तस्य वैरक्लेशधनक्षयाः ॥ तगरसरोरुहपत्रै रजनीसिद्धार्थलोध्रसंयुक्तैः । स्नानं जन्मर्क्षगते रविसंक्रमणे नृणां शुभदम् ॥' हेमाद्रौ—'अह्नि चेद्रात्रियुग्मं स्याद्रात्रौ चेद्वासरद्वयम् । संक्रान्तिः पक्षिणी ज्ञेया दानाध्ययनकर्मसु ॥'

सायंसन्ध्यानिषेधः ।

यत्तु गौडाः—'संक्रान्त्यां पक्षयोरन्ते द्वादश्यां श्राद्धवासरे ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

सायंसंध्यां न कुर्वीत कुर्वंश्च पितृहा भवेत् ॥' इति कर्मोपदेशिन्यां व्यासोक्तेः सायं पुण्यकाले संध्यानिषेधमाहुस्तन्निर्मूलम् । अन्यच्च बहु वक्तव्यं विस्तरभीतेर्नोच्यते ॥ इति संक्रान्तिनिर्णयः ॥

(ग)

चान्द्रादिमासकथनम् ।

पक्षयुगजश्चान्द्रो मासः । स द्वेधा । शुक्लादिरमान्तः कृष्णादिः पूर्णिमान्तश्चेति । तथा च त्रिकाण्डमण्डनः—'चान्द्रोऽपि शुक्लपक्षादिः कृष्णादिर्वेति च द्विधा ।' इत्युक्त्वा देशभेदेन तद्व्यवस्थामाह—'कृष्णपक्षादिकं मासं नाङ्गीकुर्वन्ति केचन । येपीच्छन्ति न तेषामपीष्टो विन्ध्यस्य दक्षिणे ॥' इति विन्ध्यस्य दक्षिणे कृष्णादिनिषेधादुत्तरतो द्वयोरभ्यनुज्ञा गम्यते । तत्रापि शुक्लादिर्मुख्यः कृष्णादिर्गौणः । शास्त्रेषु चैत्रशुक्लप्रतिपद्येव चान्द्रसंवत्सरारम्भोक्तेः । तदुक्तं दीपिकायाम्—'चान्द्रोऽब्दो मधुशुक्लगप्रतिपदारम्भः' इति । नहि ये कृष्णादिं मन्यन्ते तेषां वत्सरारम्भो भिद्यते । अतः शुक्लादिर्मुख्यः कृष्णादिना मलमासासंभवाच्च ।

सावनादिमासव्यवस्था ।

चन्द्रस्य सर्वनक्षत्रभोगेननाक्षत्रोमासः । सावनादीनां व्यवस्थोक्ता हेमाद्रौ ब्रह्मसिद्धान्ते—' अमावास्यापरिच्छिन्नो मासः स्याद्ब्राह्मणस्य तु । संक्रान्तिपौर्णमासीभ्यां तथैव नृपवैश्ययोः ॥'

(ग) हेमाद्रौ—

प्रथमः सावनो मासा द्वितीयश्चान्द्र उच्यते । नाक्षत्रस्तु तृतीयः स्यात सौरो मासश्चतुर्थकः ॥ इति । विष्णुधर्मोत्तरेऽपि—

चन्द्रमाः पौर्णमास्यन्ते भास्करादतिरिच्यते । राशिषट्कं तथा राम मासार्धेन न संशयः ॥
भागद्वादशकेनैव तिथ्यां तिथ्यां क्रमेण तु । चन्द्रमाः कृष्णपक्षान्ते सूर्येण सह युज्यते ॥
संनिकर्षादनाऽऽरभ्य संनिकर्षस्तथापरः । चन्द्रार्कयोर्बुधैर्मासश्चान्द्र इत्यभिधीयते ॥
सावने तु यथा मासि त्रिंशत्सूर्योदयाः स्मृताः । आदित्यराशिभोगेन सौरो मासः प्रकीर्तितः ॥
सर्वर्क्षपरिवर्तैस्तु नाक्षत्रो मास उच्यते ।
हेमाद्रौ—चान्द्रोऽपि शुक्लपक्षादिः कृष्णादिर्वेति च द्विधा ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अत्र ब्राह्मणादीनां यत्र कर्मविशेषे वचनान्तरेण 'वसन्ते ब्राह्मणोऽग्नीनादधीत' इत्यादिवन्मास उक्तस्तत्र दर्शान्तत्वमात्रं नियम्यते, न तु सर्वकर्मसु दर्शान्त एवेति । वृद्ध्याद्यर्थसौभरेहीषादिनिधननियमवद्विधिलाघवात् । त्रैवर्णिकानां सर्वकर्मसु मासविशेषविधेः सावनादीनां शूद्रानुलोमादिपरत्वापत्तेश्चेति गुरुचरणाः ॥ ज्योतिर्गर्गः—'सौरो मासो विवाहादौ यागादौ सावनः स्मृतः । आब्दिके पितृकार्ये च चान्द्रो मासः प्रशस्यते ॥' ऋष्यशृङ्गः—'विवाहव्रतयज्ञेषु सौरं मानं प्रशस्यते । पार्वणे त्वष्टकाश्राद्धे चान्द्रमिष्टं तथाब्दिके ॥' स्मृत्यन्तरे—'एकोद्दिष्टविवाहादौ ऋणादौ सौरसावनौ ।' ज्योतिर्गर्गः—'आयुर्दायविभागश्च प्रायश्चित्तक्रिया तथा । सावने नैव कर्तव्या शत्रूणां चाप्युपासना ॥' विष्णुधर्मे—'नक्षत्रसत्राण्ययनानि चेन्दोर्मासेन कुर्याद्भगणात्मकेन ।' इति । ब्राह्मे—'तिथिकृत्ये च कृष्णादिं व्रते शुक्लादिमेव च । विवाहादौ च सौरादिं मासं कृत्ये विनिर्दिशेत् ॥

अथ मलमास निर्णयः ।

तत्रैकमात्रसंक्रान्तिरहितः सितादिश्चान्द्रो मासो मलमासः । एकमात्रसंक्रान्तिराहित्यमसंक्रान्तत्वेन संक्रान्तिद्वयवत्त्वेन च भवतीति मलमासो द्वेधा । अधिमासः क्षयमासश्चेति । तदुक्तं काठकगृह्ये—'यस्मिन्मासे न संक्रान्तिः संक्रान्तिद्वयमेव वा । मलमासः स विज्ञेयो मासः स्यात्तु त्रयोदशः ॥' इति । सत्यव्रतोऽपि—'राशिद्वयं यत्र मासे संक्रमेत दिवाकरः । नाधिमासो भवेदेष मलमासस्तु केवलम् ॥' इति । अधिकमासस्य कालनियममाह वसिष्ठः—'द्वात्रिंशद्भिर्मितैर्मासैर्दिनैः षोडशभिस्तथा । घटिकानां चतुष्केण पतत्यधिकमासकः ॥' इति । एतच्च सावनादिमानेन संभवार्थं न तु नियमार्थम् । अन्यथा षोडशदिनाधिकद्वात्रिंशन्मासानन्तरं कृष्णपक्षनियमेन शुक्लादित्वभङ्गापत्तेः । तेन न्यूनाधिककाले मलमासपातेऽपि न दोषः । अत एवोक्तं माधवीये—'मासे त्रिंशत्तमे भवेत्' इति ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

क्षयस्यापि ज्योतिःशास्त्रे—'असंक्रान्तिमासोऽधिमासः स्फुटं स्यात् द्विसंक्रान्तिमासः क्षयाख्यः कदाचित्। क्षयः कार्तिकादित्रये नान्यतः स्यात्तदा वर्षमध्येऽधिमासद्वयं च॥' एकः क्षयात्पूर्वं परतश्चैक इत्यधिमासद्वयं भवतीत्यर्थः।

अत्र विशेषमाह जाबालिः—'मासद्वयेऽब्दमध्ये तु संक्रान्तिर्न यदा भवेत्। प्राकृतस्तत्र पूर्वः स्यादधिमासस्तथोत्तरः॥' इति। उत्तर एव कालाधिक्यं न पूर्वस्मिन्नित्यर्थः। यत्तु ब्रह्मसिद्धान्ते—'चैत्रादर्वाङ् नाधिमासः परतस्त्वधिको भवेत्।' इति। तत्र चैत्रात्पूर्वमसंक्रान्तद्वये पूर्वो नाधिकः, किंतु पर इत्यर्थः। यच्चज्योतिःसिद्धान्ते—'घटकन्यागते सूर्ये वृश्चिके वाथ धन्विनि। मकरे वाथ कुम्भे वा नाधिमासो विधीयते॥' इति तद्वृश्चिकादिचतुष्टये मलमासे सति पूर्वम्। तुलाकन्यागे सूर्ये क्षयपूर्वभाव्यधिमासस्य कालाधिक्यनिषेधार्थं, न त्वधिकमात्रस्य। 'दशानां फाल्गुनादीनां प्रायो माघस्य च क्वचित्। नपुंसकत्वं भवतीत्येष शास्त्रविनिश्चयः॥' इति हेमाद्रौ विष्णुधर्मविरोधात्। मलमासेऽष्टकादिनिषेधानुपपत्तेश्च॥

क्षयस्यागमनकाल उक्तः सिद्धान्तशिरोमणौ—'गतोऽब्ध्यद्रिनन्दैर्मिते शाककाले तिथीशैर्भविष्यत्यथाङ्गाक्षसूर्यैः। गजाद्र्यग्निभूमिस्तथा प्रायशोयं कुवेदेन्दुवर्षैः क्वचिद् गोकुभिश्च॥' इति। अब्धयश्चत्वारः ४, अद्रयः सप्त ७, नन्दा नव ९, एषां प्रातिलोम्येन पाते ९७४। तैर्मिते वर्षे कश्चित् क्षयमासः पूर्वं जात इत्यर्थः। तिथयः पञ्चदश १५, ईशा एकादश, १११५। एवं मिते याते कश्चिद्भविष्यतीत्यर्थः। अङ्गा ६ क्ष ५ सूर्याः १२ एकत्र १२५६। गजाः ८, अद्रयः ७, अग्नयः ३, भूः १ एकत्र १३७८। कुः १, वेदाः ४, इन्दुः १, एकत्र १४१। गावः ९, कुः १, एकत्र १९। एतैर्मिते वर्षे याते कश्चिद्भविष्यतीत्यर्थः॥

अथ मलमासे कार्याकार्यं निरूप्यते।

तत्र जाबालिः—'नित्यनैमित्तिके कुर्याच्छ्राद्धं कुर्यान्मलिम्लुचे। तिथिनक्षत्रवारोक्तं काम्यं नैव कदाचन॥' अयं च काम्यनिषेध आरम्भसमाप्तिविषयः। 'असूर्या नाम ये मासा न तेषु मम संमतः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

व्रतानां चैव यज्ञानामारम्भश्च समापनम् ॥' इति तेनैवोक्तत्वात् । असूर्या अधिकमासा इत्यर्थः । तत्र 'मण्डलं तपते रविः' इति वचनात् कारीर्यादेः काम्यस्य त्वारम्भसमाप्ती भवत एवेत्यादिरित्यन्यत्र विस्तरः । काठकगृह्येऽपि–'मलेनन्यगतिं कुर्यान्नित्यां नैमित्तिकीं क्रियाम् ।' इति । तानि नैमित्तिकानि दीपिकायामुक्तानि—'यन्नैमित्तिकमग्निनष्ट्यनुगताग्न्याधानमर्चासु वा संस्कारादिविलोपने सति पुनः प्रोक्तं प्रतिष्ठादिकम् ।' इति गत्यन्तरयुतं तु सोमादि हेयमेव ॥

तत्र कर्तव्यान्युक्तानि कालादर्शे–'द्वादशाहसपिण्डान्तं कर्म ग्रहणजन्मनोः । सीमन्ते पुंसवे श्राद्धं द्वावेतौ जातकर्म च ॥ रोगे शान्तिरलभ्ये च योगे श्राद्धव्रतानि च । प्रायश्चित्तनिमित्तस्य वशात्पूर्वं परत्र च ॥ अब्दोदकुम्भमन्वादिमहालययुगादिषु । श्राद्धं दर्शेऽप्यहरहः श्राद्धमूनादिमासिकम् ॥ मलिम्लुचान्यमासेषु मृतानां श्राद्धमाब्दिकम् । श्राद्धं तु पूर्वदृष्टेषु तीर्थेष्वेव युगादिषु ॥ मन्वादिषु च यद्दानं दानं दैनंदिनं च यत् । तिलगोभूहिरण्यानां संध्योपासनयोः क्रिया ॥ पर्वहोमश्चाग्रयणं साग्नेरिष्टिश्च पर्वणि । नित्याग्निहोत्रहोमश्च देवतातिथिपूजनम् ॥ स्नानं च स्नानविधिनाप्यभक्ष्यापेयवर्जनम् । तर्पणं वा निमित्तस्य नित्यत्वादुभयत्र च ॥' इति । एतौ पुंसवनसीमन्तौ । एतच्च गर्भाधानाद्यन्नप्राशनान्तसंस्कारोपलक्षणम् । तदुक्तं दीपिकायाम्–'गर्भाधानमुखं च चौलविधितः प्राग्जातयागं विना कृच्छ्रेष्वाग्रयणं गजेन्द्रपुरतश्छाया मघानङ्ग्योः । तीर्थेन्दुक्षययोश्च पित्र्यमधिके मास्येवमाद्याचरेत्' इति । अलभ्ययोगेऽर्धोदयपद्मकादौ काम्यान्यपि व्रतादीनि कार्याणीत्यर्थः । पूर्वं परत्र मले शुद्धे चेत्यर्थः । महालयशब्देन मघात्रयोदश्युच्यत इति माधवः । दर्शश्राद्धं मलेऽपि कार्यम् । यत्तु ऋष्यशृङ्गः–'संवत्सरातिरेकेण मासो यः स्यान्मलिम्लुचः । तस्मिंस्त्रयोदशे श्राद्धं, न कुर्यादिन्दुसंक्षये ॥' इति । तत् काम्यदर्शश्राद्धविषयम् । 'काम्यं नैव कदाचन' इति वचनात् । दर्शे च काम्यं श्राद्धं 'कन्यां कन्यावेदिनश्च' इत्यादिना याज्ञवल्क्येनोक्तम् । नित्यं तु मलेपि भवत्येव । दर्शेऽप्यहरहः श्राद्धं दानं च प्रतिवासरम् । गोभूतिलहिरण्यानां मासेऽपि स्यान्मलिम्लुचे ॥' इति मात्स्योक्तेरिति हेमाद्र्यादयः । दिवोदासीयेऽपि–'अनिन्दुरिन्दुपूर्णा च हरिवारो बुधा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ष्टमी । नाधिमासे परित्याज्याः सीमन्तान्नाशने शिशोः ॥' इति । अनिन्दुर्दर्शः । द्विविधमप्यामश्राद्धं न कार्यमित्यपरार्कः । 'अत्र यद्विहितं कर्म उत्तरे मासि कारयेत् ।' इत्युक्तेः 'षष्ट्या तु दिवसैर्मासः' इति शुद्धमासकरणेपि शास्त्रार्थोपपत्तेर्दर्शश्राद्धं मले न कार्यमिति प्राचीनगौडाः शूलपाणिश्च । संवत्सरप्रदीपेपि—'एकराशिस्थिते सूर्ये यदा दर्शद्वयं भवेत् । दर्शश्राद्धं तदादौ स्यान्न परत्र मलिम्लुचे ॥' अत्रापि प्राग्वद्व्यवस्था । यद्यपि कालादर्शे सर्वं वार्षिकं मासद्वये कार्यमित्युक्तं, तथापि हेमाद्रिमाधवापरार्कादिमतात् प्रथमाब्दिकं त्रयोदशे मलमासे । द्वितीयाद्याब्दिकं तु शुद्धमास एव कार्यम् । 'असंक्रान्तेऽपि कर्तव्यमाब्दिकं प्रथमं द्विजैः । तथैव मासिकं श्राद्धं सपिण्डीकरणं तथा ॥' इति हारीतोक्तेः । 'आब्दिकं प्रथमं यत्स्यात्तत्कुर्वीत मलिम्लुचे । चतुर्दशे तु संप्राप्ते कुर्वीत पुनराब्दिकम् ॥' इति स्मृत्यन्तरोक्तेश्च पुनराब्दिकं द्वितीयादिवार्षिकं त्रयोदशे मासेऽतीते चतुर्दशाद्यदिने कुर्यादित्यर्थः । यत्तु सत्यव्रतः—'वर्षे वर्षे तु यच्छ्राद्धं मातापित्रोर्मृतेऽहनि । मलमासे न तत्कार्यं व्याघ्रस्य वचनं यथा ॥' इति, तद्द्वितीयादिवार्षिकविषयम् । 'आब्दिकं प्रथमं यत्स्यात्तत्कुर्वीत मलिम्लुचे ॥' इति पूर्वोक्तवचनात् । यत्र द्वादशं मासिकं शुद्धमासे भवति तत्र त्रयोदशेऽधिक एवाद्याब्दिकं कार्यम् । यत्र त्वधिकमध्ये द्वादशं मासिकं तत्र तस्य द्विरावृत्तिं कृत्वा चतुर्दशे शुद्ध एव प्रथमाब्दिकमिति निष्कर्षः । तेन द्वितीयादिशुद्धमास एव । पृथ्वीचन्द्रोदये दिवोदासीये मदनपारिजाते चैवम् । मलमासमृतानां तु यदा स एवाधिकः स्यात्तदा तत्रैव प्रतिसांवत्सरिकं कार्यम् । यथा पैठीनसिः—'मलमासे मृतानां तु श्राद्धं यत्प्रतिवत्सरम् । मलमासेपि कर्तव्यं नान्येषां तु कथंचन ॥' इति । हेमाद्रौ व्यासोपि—'मलमासमृतानां तु सौरं मानं समाश्रयेत् । स एव दिवसस्तस्य श्राद्धपिण्डोदकादिषु ॥' अत्राधिकमृतस्य न द्वितीयाद्यब्देपि सौरविधिः । द्वितीयादावन्याधिके वा पूर्वनियमविधिवैरूप्यात् । किंतु प्रथमाब्दिकस्य मले नियमात् । सत्यव्रतेन तद्भिन्नस्य सर्वस्याधिके निषेधे प्राप्ते प्रतिप्रसवमात्रं लाघवात् । अतो न द्वितीयादौ सौरमा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

सप्रसङ्गः । 'चान्द्रमिष्टं तथाब्दिके । मासपक्षतिथिस्पष्टे' इत्यादिविरोधाच्च । यत्तु वृद्धवसिष्ठः–'श्राद्धीयाहनि संप्राप्ते अधिमासो भवेद्यदि । मासद्वयेपि कुर्वीत श्राद्धमेवं न मुह्यति ॥' यच्च व्यासः–'उत्तरे देवकार्याणि पितृकार्याणि चोभयोः' इति, तन्मासिकादिविषयम् । 'यौगादिकं मासिकं च श्राद्धं चापरपक्षिकम् । मन्वादिकं तैर्थिकं च कुर्यान्मासद्वयेपि च ॥' इति स्मृतिचन्द्रिकोक्तेः । तैर्थिकं तीर्थश्राद्धं, तच्च मासद्वयेपि कार्यमिति त्रिस्थलीसेतौ भट्टाः । केचित्तु—'प्रतिमासं मृताहे च श्राद्धं यत्प्रतिवत्सरम् । मन्वादौ च युगादौ च तन्मासोरुभयोरपि ॥' इति मरीचिवचनात्, 'वर्षे वर्षे तु यच्छ्राद्धं मातापित्रोर्मृतेऽहनि । मासद्वयेपि तत्कुर्याद्व्याघ्रस्य वचनं यथा ॥' इति गालवोक्तेश्च प्रत्याब्दिकं मासद्वये कार्यमित्याहुः । तत्तुच्छम्, प्रतिमासं मृताहे क्रियमाणं मासिकम्, प्रतिसंवत्सरं क्रियमाणं कल्पादिश्राद्धमिति मरीचिवचसो मदनरत्नेन व्याख्यानात् । गालवीयस्य च मासद्वयात्मके क्षयमास इति माधवेन व्याख्यानात् । यच्च कैश्चिदुक्तं प्रथमाब्दिकं मासद्वये कार्यम्–'आब्दिकं प्रथमं यत्स्यात्तत्कुर्वीत मलिम्लुचे । त्रयोदशे च संप्राप्ते कुर्वीत पुनराब्दिकम् ॥' इति यमोक्तेरिति । तदपि चिन्त्यम् । पुनराब्दिकं द्वितीयादिवार्षिकं त्रयोदशेऽतीते चतुर्दशे कुर्यात् । अन्यथा–'सांवत्सरं न वर्धेत श्राद्धं तत्र मृतेऽहनि ।' इति पैठीनसिविरोधः स्यादिति हेमाद्रौ पृथ्वीचन्द्रोदये च—'एतेन न वर्धेत न च्छिन्द्याच्छुद्धेपि कुर्यादेव' इत्यनन्तभट्टव्याख्या मानाभावात्परास्ता । पूर्वव्याख्यायां तु हारीतीये प्रथमग्रहणमेव मानम् । यदपि निर्णयामृते पूर्वोक्तकालादर्शवचनात् मलमासे श्राद्धदिनस्य वन्ध्यत्वनिरासार्थं पित्रुद्देशेन ब्राह्मणान् भोजयित्वा शुद्धमासे सपिण्डकं श्राद्धं कुर्यात् । 'पिण्डवर्जमसंक्रान्ते संक्रान्तौ पिण्डसंयुतम् । प्रतिसंवत्सरं श्राद्धमेवं मासद्वयेऽपि च ॥' इति वृद्धपराशरोक्तेः इति । तदपि चिन्त्यम् । पूर्वोक्तवचनस्य क्षयपूर्वभाव्यधिकमासविषयत्वात् । तत्र हि मासद्वये श्राद्धमुक्तम् । तदाह सत्यतपाः–'एक एव यदा मासः संक्रान्तिद्वयसंयुतः । मासद्वयगतं श्राद्धं मलमासेपि शस्यते ॥' इति । मासद्वयगतं पूर्वासंक्रातगतं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

क्षयगतं च। मलमासे क्षयमासे। अपिशब्दात् पूर्वाधिमासे चेति हेमाद्रिः। दीपिकायामपि—'तत्प्राक्सङ्ग्यधिमासको यदि भवेत्तत्र्यसांवत्सरं तस्मिञ्शुद्धतया क्षये च वचनात्कुर्याद्वयोः कोविदः। इति कालादर्शेऽप्येतद्विषय एवेत्यलं बहुना॥

मलमासे वर्ज्यान्युक्तानि कालादर्शे—अनित्यमनिमित्तं च दानं च महदादिकम्। अग्न्याधानाध्वरापूर्वतीर्थयात्रामरेक्षणम्॥ देवारामतडागादिप्रतिष्ठा मौञ्जिबन्धनम्। आश्रमस्वीकृतिः काम्यवृषोत्सर्गश्च निष्क्रमः॥ राजाभिषेकः प्रथमश्चूडाकर्म व्रतानि च। अन्नप्राशनमारम्भो गृहाणां च प्रवेशनम्॥ स्नानं विवाहो नामातिपन्नं देवमहोत्सवः। व्रतारम्भसमाप्ती चाकाम्यं काम्यं च पाप्मनाम्॥ प्रायश्चित्तं तु सर्वस्य मलमासे विवर्जयेत्। उपाकर्मोत्सर्जनं च पवित्रदमनार्पणम्॥ अवरोहश्च हैमन्तः सर्पाणां बलिरष्टकाः। ईशानस्य बलिर्विष्णोः शयनं परिवर्तनम्॥ दुर्गेन्द्रस्थापनोत्थाने ध्वजोत्थानं च वज्रिणः। पूर्वत्र प्रतिषिद्धानि परत्रान्यच्च दैविकम्॥' इति। अत्र मूलवचनानि हेमाद्रिमाधवादिभ्यो ज्ञेयानि। दिवोदासीयेऽपि—'यात्रोत्सवं च देवादिशपथं दिव्यमेव च। मलमासे न कुर्वीत व्याघ्रस्य वचनं यथा॥' इति॥

यन्मलमासे वर्ज्यं तच्छुक्रगुर्वस्तादावपि।

अयं निर्णयः क्षयमासेऽपि ज्ञेयः। 'रविसंक्रमहीने यो वर्ज्यावर्ज्यविधिः स्मृतः। स एव तु द्विसंक्रान्ते मलमासेऽप्युदीरितः॥' इति काठकगृह्योक्तेः। क्षयमासमृतानां प्रत्याब्दिके विशेषो हेमाद्रौ—'तिथ्यर्धे प्रथमे पूर्वो द्वितीयेऽर्धे तथोत्तरः। मासाविति बुधैश्चिन्त्यौ क्षयमासस्य मध्यगौ॥' आब्दिकवर्धापनेऽपि ज्ञेयम्। यन्मलमासे वर्ज्यमुक्तं तच्छुक्रगुर्वोरस्तादिष्वपि ज्ञेयम्। तदाह बृहस्पतिः—'बाले वा यदि वा वृद्धे शुक्रे वास्तं गते गुरौ। मलमास इवैतानि वर्जयेद्देवदर्शनम्॥' इति। 'अनादिदेवतां दृष्ट्वा शुचः स्युर्नष्टभार्गवे। मलमासेऽप्यनावृत्ततीर्थयात्रां विवर्जयेत्॥' आवृत्ततीर्थे दोषाभावमात्रं न तु फलमिति वाचस्पतिमिश्राः। तन्न। असति बाधके फल-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

हेतुत्वाक्षतेः। लल्लोपि–'नीचस्थे वक्रसंस्थेप्यतिचरणगते बालवृद्धास्तगे वा संन्यासो देवयात्रा व्रतनियमविधिः कर्णवेधस्तु दीक्षा । मौञ्जीबन्धोऽङ्गनानां परिणयनविधिर्वास्तुदेवप्रतिष्ठा वर्ज्याः सद्भिः प्रयत्नात्त्रिदशपतिगुरौ सिंहराशिस्थिते च ॥' इति। दीक्षा यागदीक्षा, आगमदीक्षा च। तथा–'उद्यानचूडाव्रतबन्धदीक्षा विवाहयात्रा च वधूप्रवेशः। तडागकूपत्रिदशप्रतिष्ठा बृहस्पतौ सिंहगते न कुर्यात् ॥' दीवोदासीये–'गुर्वादित्ये गुरौ सिंहे नष्टे शुक्रे मलिम्लुचे । गृहकर्म व्रतं यात्रां मनसापि न चिन्तयेत् ॥' अस्यापवादस्तत्रैव ब्राह्मे–'मुण्डनं चोपवासश्च गौतम्यां सिंहगे गुरौ । कन्यागते तु कृष्णायां न तु तत्तीरवासिनाम् ॥'

सिंहस्थे कन्यागते वा गुरौ गोदावरी-कृष्णास्नानम् ।

तथा—'आद्यासौ गौतमी गङ्गा द्वितीया जाह्नवी स्मृता । सर्वतीर्थफलं स्नानाद् गौतम्यां सिंहगे गुरौ ॥'

गुरु शुक्रयोर्बाल्य वृद्धत्व विचारः ।

संहिताप्रदीपे–'स्यात्सप्तरात्रं गुरुशुक्रयोश्च बालत्वमह्नां दशकं च वार्धम्। वृद्धौ सितेज्या वसुभौ शिशुत्वे शस्तौ यतस्तावुपचीयमानौ॥' वसिष्ठः-'अतिचारगते जीवे वर्जयेत्तदनन्तरम्।व्रतोद्वाहादिकार्येषु अष्टाविंशतिवासरान्॥'बाल्यादिलक्षणमुक्तंब्रह्मसिद्धान्ते-'रश्मिनाशस्तिरन्येषां ग्रहाणामस्तउच्यते।ततोऽर्वाग्वार्धकं प्रोक्तंमूर्ध्वं बाल्यं प्रकीर्तितम्॥'इति बाल्यादिपरिमाणं च वृत्तशये–'बालः शुक्रो दिवसदशकं पञ्चकं चैव वृद्धः पश्चादह्नां त्रितयमुदितः पक्षमैन्द्र्यां क्रमेण। जीवो वृद्धः शिशुरपि तथा पक्षमन्यैः शिशू तौ वृद्धौ प्रोक्तौ दिवसदशकं चापरैः सप्तरात्रम् ॥' पश्चिमत उदये दशदिनानि बालः, अस्ते पञ्चदिनानि वृद्धः, पूर्वतो दिनत्रयं बालः, पक्षं च वृद्ध इत्यर्थः। जीवो गुरुः। अन्यत्र त्वन्यथोक्तम्—'प्राक्पश्चादुदितः शुक्रः पञ्चसप्तदिनं शिशुः। विपरीतं तु वृद्धत्वं तद्वदेव गुरोरपि ॥' इति। एषां च पक्षाणां व्यवस्थामाह मिहिरः–'बहवो दर्शिताः काला ये बाल्ये वार्धकेपि वा। ग्राह्यास्तत्रा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

धिकाः शेषा देशभेदादुतापदि ॥' इति। देशभेदश्च मदनरत्ने गार्ग्यः–शुक्रो गुरुः प्राक्च पराक्च बालो विन्ध्ये दशावन्तिषु सप्तरात्रम्। वङ्गेषु हूणेषु च षट् च पञ्च शेषे च देशे त्रिदिनं वदन्ति ॥' इति। अस्तादेरपवादः काशीखण्डे–'न ग्रहास्तोदयकृतो दोषो विश्वेश्वरालये।' त्रिस्थलीसेतौ वायवीये–'गोदावर्यां गयायां च श्रीशैले ग्रहणद्वये। सुरासुरगुरूणां च मौढयदोषो न विद्यते ॥' ग्रहणद्वये तन्निमित्तककुरुक्षेत्रयात्रादानादावित्यर्थः। तदाह त्रिस्थलीसेतौ लल्लः–उपप्लवे शीतलभानुभान्वोरर्धोदये वै कपिलाख्यषष्ठ्याम्। सुरासुरेज्यास्तमयेपि तीर्थे यात्राविधिः संक्रमणे च शस्तः ॥ न मूढदोषो न च रात्रिदोषो न चाधिमासे न मृतिर्न सूतिः ॥' एवमप्युत्तरार्धं पठन्ति। इत्यलं बहुना।

मलमासे च व्रतविशेषः

उक्तो हेमाद्रौ पाद्मे–'अधिमासे तु संप्राप्ते गुडसर्पिर्युतानि च। त्रयस्त्रिंशदपूपानि दातव्यानि दिने दिने ॥ साज्यानि गुडमिश्राणि अधिमासे नृपोत्तम। अधिमासे तु संप्राप्ते त्रयस्त्रिंशत्तु देवताः। उद्दिश्यापूपदानेन पृथ्वीदानफलं लभेत्। त्रयस्त्रिंशदपूपान्नं कांस्यपात्रे निधाय च ॥ सघृतं सहिरण्यं च ब्राह्मणाय निवेदयेत्। विष्णुरूपी सहस्रांशुः सर्वपापप्रणाशनः ॥ अपूपान्नप्रदानेन मम पापं व्यपोहतु। नारायण जगद्बीज भास्करप्रतिरूपक ॥ व्रतेनानेन पुत्रांश्च संपदं चाभिवर्धय। यस्य हस्ते गदाचक्रे गरुडो यस्य वाहनम्। शङ्खः करतले यस्य स मे विष्णुः प्रसीदतु ॥ कालाकाष्ठादिरूपेण निमेषघटिकादिना। यो वञ्चयति भूतानि तस्मै कलात्मने नमः ॥ कुरुक्षेत्रमयं देशः कालः पर्व द्विजो हरिः। पृथ्वीसममिदं दानं गृहाण पुरुषोत्तम ॥ मलानां च विशुद्ध्यर्थं पापप्रशमनाय च। पुत्रपौत्राभिवृद्ध्यर्थं तव दास्यामि भास्कर ॥ मन्त्रेणानेन यो दद्यात्त्रयस्त्रिंशदपूपकान्। प्राप्नोति विपुलां लक्ष्मीं पुत्रपौत्रादिसंपदः ॥' इति। इति निर्णयसिन्धौ मलमासनिर्णयः ॥

पक्षनिर्णयस्तु

'दैवे मुख्यः शुक्लपक्षः कृष्णः पित्र्ये विशिष्यते।' इति माधवेनोक्तः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ तिथिनिर्णयः ।

तत्र तिथिर्द्वेधा । शुद्धा विद्धा च । दिने तिथ्यन्तरसंबन्धरहिता शुद्धा । तद्वहिता विद्धा ॥ तत्र शुद्धायामसंदेहाद्विद्धा निर्णीयते ।

तिथिवेधादिनिर्णयः ।

तत्र सामान्यतो वेधमाह माधवीये पैठीनसिः—'पक्षद्वयेपि तिथयस्तिथिं पूर्वां तथोत्तराम् । त्रिभिर्मुहूर्तैर्विध्यन्ति सामान्योयं विधिः स्मृतः ॥' इति । हेमाद्रिमदनरत्नादौ तु द्विमुहूर्तोप्युक्तः—'उदिते दैवतं भानौ पित्र्यं चास्तमिते रवौ । द्विमुहूर्ता त्रिरह्नश्च सा तिथिर्हव्यकव्ययोः ॥' इति विष्णुधर्मोक्तेः । द्विमुहूर्तत्वं चानुकल्पः । 'द्विमुहूर्तापि कर्तव्या या तिथिर्वृद्धिगामिनी ।' इति दक्षेणापिशब्दोक्तेः । अयं वेधः प्रातरेव । सायं तु द्विमुहूर्तो वेध एव । 'यां तिथिं समनुप्राप्य यात्यस्तं पद्मिनीपतिः । सा तिथिस्तद्दिने प्रोक्ता त्रिमुहूर्तैव या भवेत् ॥' इतिस्कान्दोक्तेः । दीपिकापि—'त्रिमुहूर्तगा तु सकला सायं' इति । यानि तु—'व्रतोपवासस्नानादौ घटिकैकापि या भवेत् । उदये सा तिथिर्ग्राह्या विपरीता तु पैतृके ॥' इत्यादीनि स्कान्दादिवचनानि तानि वैश्वानराधिकरणन्यायेनावयवस्तुत्या त्रिमुहूर्तप्रशंसापराणि । तिथिविशेषे वेधविशेषः स्कान्दे—'नागोद्वादशनाडीभिर्दिक्पञ्चदशभिस्तथा । भूतोऽष्टादशनाडीभिर्दूषयत्युत्तरां तिथिम् ॥' इति । अयं चोपवासातिरिक्तविषय इति वक्ष्यते ॥ इति वेधः ॥

तत्र सर्वा तिथिर्यदहः कर्मकालव्यापिनी सैव ग्राह्या । 'कर्मणो यस्य यः कालस्तत्कालव्यापिनी तिथिः । तया कर्माणि कुर्वीत ह्रासवृद्धी न कारणम् ॥' इति विष्णुधर्मोक्तेः । दिनद्वये तद्व्याप्तावेकदेशव्याप्तौ वा युग्मवाक्यान्निर्णयः । तस्य पूर्वाबाधेनोपपत्तेः । कर्मकालस्य प्रधानाङ्गत्वाच्च । युग्मवाक्यं तु निगमः । 'युग्माग्नियुगभूतानां षण्मुन्योर्वसुरन्ध्रयोः । रुद्रेण द्वादशी युक्ता चतुर्दश्या च पूर्णिमा ॥ प्रतिपद्यप्यमावास्या तिथ्योर्युग्मं महाफलम् । एतद्व्यस्तं महादोषं हन्ति पुण्यं पुरा कृतम् ॥' इति । अत्र रन्ध्रान्ताः शब्दा द्वितीयादिन-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वस्यन्ततिथिवाचकाः। रुद्र एकादशी। द्वितीया तृतीयायुता। सा च द्वितीयायुतेति सप्त युग्मानीत्यर्थः। इदं च शुक्लपक्षे। अमाप्रतिपद्युग्मस्य पूर्णिमायाश्च तत्रैव सत्त्वादिति केचित्। तत्त्वं त्वमावास्याप्रतिपद्युग्मात् कृष्णपक्षलिङ्गात् पक्षद्वयपरमिदं तत्तद्विशेषवाक्यैः कृष्णे तिथिविशेषपोह्यत इति। दशमी तूक्ता पुराणसमुच्चये–'संपूर्णे दशमी कार्या मिश्रिता पूर्वयाथवा।' इति संपूर्णं शुक्लपक्षे। त्रयोदशी तु सुमन्तुनोक्ता–'त्रयोदशी तु कर्तव्या द्वादशीसहिता मुने।' इति। कृष्णपक्षे त्वापस्तम्बः–'प्रतिपत्सद्वितीया स्यात् द्वितीया प्रतिपद्युता। चतुर्थीसंयुता या च सा तृतीया फलप्रदा॥ पञ्चमी च प्रकर्तव्या षष्ठ्या युक्ता तु नारद। कृष्णपक्षेऽष्टमी चैव कृष्णपक्षे चतुर्दशी॥ पूर्वविद्धा प्रकर्तव्या परविद्धा न कुत्रचित्। दशमी च प्रकर्तव्या सदुर्गा द्विजसत्तम॥ षष्ठ्यष्टमी अमावास्या कृष्णपक्षे त्रयोदशी। एताः परयुताः पूज्याः पराः पूर्वेण संयुताः॥' इति। यत्तु व्याघ्रः–खर्वो दर्पस्तथा हिंसा त्रिविधं तिथिलक्षणम्। खर्वदर्पौ परौ पूज्यौ हिंसा स्यात् पूर्वकालिकी॥' इति। खर्वः साम्यं, दर्पो वृद्धिः, तयोः परा हिंसा क्षयस्तत्र पूर्वेत्यर्थः। एतच्छ्राद्धादिविषयम्। 'द्वितीयादिषु युग्मानां पूज्यता नियमादिषु। एकोद्दिष्टादिवृद्ध्यादौ ह्रासवृद्ध्यादि चोदना॥' इति व्यासोक्तेः। नियमादिषु व्रतदानादिकर्मसु। एकोद्दिष्टादितिथेर्वृद्ध्यादावित्यर्थः। कर्मकालव्याप्त्यभावे तु कर्मोपक्रमकालगेव ग्राह्या। 'कर्मोपक्रमकालगा तु कृतिभिर्ग्राह्या न युग्मादरः' इति दीपिकोक्तेः। यानि तु–'यां तिथिं समनुप्राप्य उदयं याति भास्करः। सा तिथिः सकला ज्ञेया दानाध्ययनकर्मसु॥' इत्यादीनि, तानि त्रिमुहूर्तादिस्तुतिरिति निर्णयशैली॥

अथैकभक्तम्।

तत्कालः पाद्मे–'मध्याह्नव्यापिनी ग्राह्या एकभक्ते सदा तिथिः।' इति। मध्याह्नश्च पञ्चधाविभक्तदिनतृतीयांशः। तेन यद्यपि द्वादशदण्डानन्तरं प्राप्यते तथापि–'दिनार्धसमयेतीते भुज्यते नियमेन यत्। एकभक्तमिति प्रोक्तमतस्तत्स्याद्दिवैवहि॥' इति स्कान्दोक्तेः षोडशसप्तदशादिदण्डा मुख्यः कालः। दीपिकायां तु–

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'मध्याह्नान्त्यदले त्रिभागदिवसे स्यादेकभक्तम्' इति । ततः सूर्यास्तपर्यन्तं गौणः । 'दिवैव हि' इत्यस्य वैयर्थ्यापत्त्यैतत्परत्वात् । अत्र पूर्वेद्युरेवव्याप्तिः परेद्युरेवोभयेद्युर्व्याप्तिस्तदभावोंशव्याप्तिस्तत्रापि साम्यं वैषम्यं चेति षट् पक्षाः । 'तत्राद्ययोरसंदेह एव, तृतीये तु पूर्वेऽह्नि गौणमुख्यव्याप्तेः सत्त्वात् पूर्वा' इति माधवः । युग्मवाक्यान्निर्णय इति हेमाद्रिः । चतुर्थपक्षे पूर्वैव । गौणकालव्याप्तेः सत्त्वात् । वैषम्येणांशव्याप्तौ याधिका सा ग्राह्या, साम्ये पूर्वा । अयं च स्वतन्त्रैकभक्तनिर्णयः । अन्याङ्गे उपवासप्रतिनिधौ तदनुसारेण निर्णयः ॥

अथ नक्तम् ।

तच्च दिनानशनपूर्वं रात्रिभोजनम् । तत्र प्रदोष व्यापिनी ग्राह्या । 'प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या तिथिर्नक्तव्रते सदा ।' इति वत्सोक्तेः ।

नक्त-प्रदोषयोर्विचारः ।

प्रदोषस्तु—'त्रिमुहूर्तं प्रदोषः स्याद्भानावस्तं गते सति । नक्तं तत्र तु कर्तव्यमिति शास्त्रविनिश्चयः ॥' इति मदनरत्ने व्यासोक्तेः । तत्रापि त्रिदण्डोत्तरं कार्यम् । 'सायंसंध्या त्रिघटिका अस्तादुपरि भास्वतः ।' इति स्कान्दोक्तेर्दण्डत्रयस्य संध्यात्वात्तत्र—'चत्वारीमानि कर्माणि संध्यायां परिवर्जयेत् । आहारं मैथुनं निद्रां स्वाध्यायं च चतुर्थकम् ॥' इति मार्कण्डेयेन भोजननिषेधात् । 'मुहूर्तोनं दिनं नक्तं प्रवदन्ति मनीषिणः । नक्षत्रदर्शनान्नक्तमहं मन्ये गणाधिप ॥' इति माधवीये भविष्योक्तेश्च । गौडास्तु—'प्रदोषोस्तमयादूर्ध्वं घटिकाद्वयमिष्यते ॥' इति वत्सोक्तः प्रदोषः । संध्या च दिनरात्र्योः संधौ मुहूर्तः । 'अर्धास्तमयात्संध्या व्यक्तीभूता न तारका यावत् । तेजःपरिहानिवशाद्भानोरर्धोदयं यावत् ॥' इति वराहोक्तेरित्याहुः । तन्न । अस्य संध्यावन्दनानध्यायादिपरत्वात् । अतएव तत्र खण्डमण्डलस्य संध्यात्वमुक्तं विज्ञानेश्वरेण । यच्च मदनरत्ने—'नक्तस्य वैधत्वाद्रागप्राप्तभोजनगोचरो निषेधः' इत्युक्तम् । तन्न । विधेर्निषेधाविरोधात् । अन्यथा कपिञ्जलानित्यत्र त्रिभ्योधिकानां हिंसनं स्यात् । सायंकाले नक्तं तु दिनद्वये प्रदोषस्पर्शे

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ज्ञेयम् । 'अतथात्वे परत्र स्यादस्तादर्वाग्यतो हि सा ।' इति जाबालिवचनात् । 'प्रदोषव्यापिनी न स्याद्दिवा नक्तं विधीयते । आत्मनो द्विगुणा छाया मन्दीभवति भास्करे ॥ तन्नक्तं नक्तमित्याहुर्न नक्तं निशि भोजनम् ॥' इति स्कान्दाच्च । यत्यादीनामपि सायाह्ने— 'नक्तं निशायां कुर्वीत गृहस्थो विधिसंयुतः । यतिश्च विधवा चैव कुर्यात्तत्सदिवाकरम् ॥' इति तत्रैव स्मृत्यन्तरात् । इदमपुत्रविधुरोपलक्षणम् । पुत्रवतस्तु रात्रावेव । 'अनाश्रमोऽप्याश्रमी स्यादपत्नीकोऽपि पुत्रवान् ।' इति संग्रहोक्तेः । सौरनक्तं तु दिवैव । 'त्रिमुहूर्तस्पृगेवाह्नि निशि चैतावती तिथिः । तस्यां सौरं भवेन्नक्तमहन्येव तु भोजनम् ॥' इति सुमन्तूक्तेः ।

हरिनक्ते विशेषः ।

हरिनक्ते विशेषः कालादर्शे स्कान्दे—'उदयस्था सदा पूज्या हरिनक्तव्रते तिथिः ।' इति । अन्यनक्तं तु संक्रान्त्यादावपि रात्रावेव । निषेधस्य रागप्राप्तभोजनगोचरत्वेन वैधाबाधकत्वात् । दिनद्वयव्याप्तौ परा । 'उभयोर्यदि वा तिथ्योः प्रदोषव्यापिनी तिथिः । तत्रोत्तरत्र नक्तं स्यादुभयत्रापि सा यतः ॥' इति कालादर्शे जाबालिवचनात् । अन्यपक्षेषु एकभक्तवन्निर्णयः । अत्र विशेषो मदनरत्ने गारुडे—'हविष्यभोजनं स्नानं सत्यमाहारलाघवम् । अग्निकार्यमधःशय्यां नक्तभोजी षडाचरेत् ॥' अग्निकार्यं व्याहृतिहोमः ॥ इति नक्तम् ॥ अयाचिते तु विशेषवचनाभावात्पक्षे उपवासे प्राप्ते उपवासवन्निर्णयः ॥

अथ नक्षत्रव्रतकालनिर्णयः ।

विष्णुधर्मे—'उपोषितव्यं नक्षत्रं यस्मिन्नस्तमियाद्रविः । युज्यते यत्र वा तारा निशीथे शशिना सह ॥' इति । माधवीये स्कान्दे—'तत्रैवोपवसेदृक्षे यन्निशीथादधो भवेत् । उपवासे यदृक्षं स्यात्तद्धि नक्तैकभक्तयोः ॥'

अथ व्रतपरिभाषा ।

तत्राधिकारिणो मदनरत्ने भविष्ये—'अनग्नयस्तु ये विप्रास्तेषां

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

श्रेयो विधीयते । व्रतोपवासनियमैर्नानादानैस्तथा नृप ॥' अनग्निग्रहणमुपवासविषयम् । अत एव देवलः—'आहिताग्निरनड्वांश्च ब्रह्मचारी च ते त्रयः । अश्नन्त एव सिध्यन्ति नैषां सिद्धिरनश्नताम् ॥' एकादश्यादौ तु वचनाद्भवतीति वक्ष्यामः । शूद्रस्याप्यधिकारः । शूद्रो वर्णश्चतुर्थोऽपि वर्णत्वाद्धर्ममर्हति । वेदमन्त्रस्वधास्वाहावषट्कारादिभिर्विना ॥' इति व्यासोक्तेः । प्राच्यास्तु वैश्यशूद्रयोर्द्विरात्राधिकोपवासनिषेधः । 'वैश्याः शूद्राश्च ये मोहादुपवासं प्रकुर्वते । त्रिरात्रं पञ्चरात्रं वा तेषां व्युष्टिर्न विद्यते ॥ चतुर्थभक्तः क्षपणं वैश्ये शूद्रे विधीयते । त्रिरात्रं तु न धर्मज्ञैर्विहितं ब्रह्मवादिभिः ॥' इति हेमाद्रौ वचनादित्याहुः ।

उपवासाधिकारिनिर्णयः ।

यावदुक्तनिषेध इत्यन्ते । तत्त्वं तु प्रकरणान्महातपोविषय इति युक्तम् । एवं स्त्रीणामपि । यत्तु स्कान्दे—'नास्ति स्त्रीणां पृथग्यज्ञो न व्रतं नाप्युपोषणम् । भर्तृशुश्रूषयैवैता लोकानिष्टान्व्रजन्ति हि ॥ यद्देवेभ्यो यच्च पित्रादिकेभ्यः कुर्याद्भर्ताभ्यर्चनं सत्क्रियां च । तस्यार्धं वै सा फलं नान्यचित्ता नारी भुङ्क्ते भर्तृशुश्रूषयैव ॥' आदित्यपुराणे—'नारी खल्वननुज्ञाता भर्त्रा वापि सुतेन वा । विफलं तद्भवेत्तस्या यत्करोत्यौर्ध्वदेहिकं ॥' इति । और्ध्वदेहिकं पारलौकिकं तद्भर्त्रननुज्ञाविषयम् । 'भार्या पत्युर्मतेनैव व्रतादीनाचरेत्सदा ।' इति कात्यायनोक्तेः अत्र विशेषो हरिवंशे—'स्नानं च कार्यं शिरसस्ततः फलमवाप्नुयात् । स्नात्वा स्त्री प्रातरुत्थाय पतिं विज्ञापयेत्सती॥' तथा—'गृहीत्वौदुम्बरं पात्रं सकुशं साक्षतं तथा । गोश्रृङ्गं दक्षिणं सिंच्य प्रगृह्णीयाच्च तज्जलम् ॥' औदुम्बरं ताम्रमयम् । 'ततो भर्तुः सती दद्यात्स्नातस्य प्रयतस्य च । आत्मनश्चाभिषेक्तव्यं ततः शिरसि तज्जलम् । उपवासेषु कर्तव्यमेतद्धि व्रतकेषु च ॥' इति । सर्वत्रतेषु संकल्पविधिश्च भारते—'गृहीत्वौदुम्बरं पात्रं वारिपूर्णमुदङ्मुखः । उपवासं तु गृह्णीयाद्यद्वा संकल्पयेद्बुधः ॥' हस्तेनैवेत्यर्थः ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ व्रतारम्भकालः ।

मदनरत्ने गार्ग्यः—'अस्तगे च गुरौ शुक्रे बाले वृद्धे मलिम्लुचे । उद्यापनमथारम्भं व्रतानां नैव कारयेत् ॥ रत्नमालायाम्—'सोमसौम्यगुरुशुक्रवासराः सर्वकर्मसु भवन्ति सिद्धिदाः । भानुभौमशनिवासरेषु च प्रोक्तमेव खलु कर्म सिध्यति ॥' तथा—'विरुद्धसंज्ञा इह ये च योगास्तेषामनिष्टः खलु पाद आद्यः । स वैधृतिस्तु व्यतिपातनामा सर्वोऽप्यनिष्टः परिघस्य चार्धम् ॥ तिस्रस्तु योगे प्रथमे सवज्रे व्याघातसंज्ञे नवपञ्च शूले । गण्डेऽतिगण्डे च षडेव नाड्यः शुभेषु कार्येषु विवर्जनीयाः ॥' संग्रहे—'कृष्णेऽग्निदिशयोरूर्ध्वं सप्तमीभूतयोरधः । शुक्ले वेदेशयोरूर्ध्वं भद्रा प्राग्वसुपूर्णयोः ॥' श्रीपतिः—'न सिद्धिमायाति कृतं च विष्ट्यां विषारिघातादिकमत्र सिद्धम् ।' व्यवहारसमुच्चये—'दशम्यामष्टम्यां प्रथमघटिकापञ्चकपरं हरिद्युः सप्तम्यां द्विदशघटिकान्ते त्रिघटिकम् । तृतीया राकायां खयम २० घटिकाभ्यः परभवं शुभं विष्टेः पुच्छं शिवतिथिचतुर्थ्योस्तु विरमे ॥' तत्रैव—'सर्पिणी तु सिते पक्षे कृष्णे चैव तु वृश्चिकी । सर्पिण्यास्तु मुखं त्याज्यं वृश्चिक्याः पुच्छमेव च ॥' माधवीये—'विष्टिर्यदाहनि तिथेरपरार्धजाता पूर्वार्धजा निशि तदा शुभदा च पुच्छे ।' ब्रह्मयामले—'दिनभद्रा यदा रात्रौ रात्रिभद्रा यदा दिवा । न त्याज्या शुभकार्येषु प्राहुरेवं पुरातनाः ॥' श्रीपतिः—'षट् पौष्णतो द्वादश शांकराच्च पौरंदराद्धानि नव क्रमेण । पूर्वार्धमध्यापरभागयुञ्जि चिरंतनज्यौतिषिकैः स्मृतानि ॥''

व्रतारम्भे विशेषः ।

व्रतारम्भे विशेषो मदनरत्ने सत्यव्रतेनोक्तः—'उदयस्था तिथिर्या हि न भवेद्दिनमध्यभाक् । सा खण्डा न व्रतानां स्यादारम्भश्च समापनम् ॥' इति ।

व्रतारम्भे धर्माः ।

देवलः—'अभुक्त्वा प्रातराहारं स्नात्वाचम्य समाहितः । सूर्याय देवताभ्यश्च निवेद्य व्रतमाचरेत् ॥' मदनरत्ने भविष्ये—'क्षमा सत्यं दया दानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः । देवपूजाग्निहवनं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

संतोषः स्तेयवर्जनम् ॥ सर्वव्रतेष्वयं धर्मः सामान्यो दशधा स्मृतः ॥ अग्निहोमस्तद्दैवत्यः व्याहृतिहोमो वेति वर्धमानः । यत्तु तेनोक्तम्—'सर्वपदमेतत् पुराणोक्तप्रकृतव्रतपरम् । व्रतान्तरे तु विध्यन्तरसत्त्वे होमोऽन्यथा न । अत एवैकादश्यां शिष्टानां होमानाचरणम्' इति । तन्न । 'जपो होमश्च' इति वक्ष्यमाणैकवाक्यत्वेनास्य काम्यव्रतसमाप्तिपरत्वात् । तत्त्वं तु साप्तदश्यस्य पशुमित्रविन्दादिप्रकरणस्थेनेव तत्तद्व्रतविशेषहोमविधिभिरस्योपसंहार इति ।

उपवासकृता गुणाः ।

विष्णुधर्मे—'तज्जप्यजपनं ध्यानं तत्कथाश्रवणादिकम् । तदर्चनं च तन्नामकीर्तनश्रवणादयः ॥ उपवासकृतामेते गुणाः प्रोक्ता मनीषिभिः ॥' कौर्मे—'बहिर्ग्रामान्त्यजान्सूतिं पतितं च रजस्वलाम् । न स्पृशेन्नाभिभाषेत नेक्षेत व्रतवासरे ॥' पृथ्वीचन्द्रोदये अग्निपुराणे—'स्नात्वा व्रतवता सर्वव्रतेषु व्रतमूर्तयः । पूज्याः सुवर्णमय्याद्याः शक्त्या वै भूमिशायिना । जपो होमश्च सामान्यं व्रतान्ते दानमेव च ॥

व्रते ब्राह्मणभोजनम् ।

चतुर्विंशा द्वादश वा पञ्च वा त्रय एव च । विप्रा भोज्या यथाशक्ति तेभ्यो दद्याच्च दक्षिणाम् ॥' अत्र विप्रा इति पुंलिङ्गनिर्देशात् पुमांस एव भोज्याः, न तु स्त्रियः । एवं सहस्रभोजनादावपि । विरूपैकशेषस्य प्रमाणान्तरं विनाऽयुक्तत्वात् । अत एव 'द्वयोर्यजमानयोः प्रतिपदं कुर्यात् बहुभ्यो यजमानेभ्यः' इत्यादौ विरूपैकशेषायोगात् पत्न्यभिप्रायं द्वित्वं बहुत्वं वा न भवति' इत्युक्तमाचार्यैः । पार्थसारथिना च—'एतेनैकस्य ब्राह्मणस्यावृत्त्या भोजनं परास्तम् । बहुत्वस्यैकपदश्रुत्या ब्राह्मणान्वितत्वेन भोजनान्वयाभावात्' इत्यन्यत्र विस्तरः । शूद्रस्य विप्रद्वारा व्याहृतिहोमः 'शूद्रस्य तु प्रतिष्ठादिवद्विप्रद्वारा व्याहृतिहोमः' इति वर्धमानः ।

प्रतिमास्वरूपनिर्णयः ।

व्रतमूर्तयो व्रतदेवताप्रतिमाः । प्रतिमास्वरूपं च मदनरत्ने भविष्ये—'अनुक्तद्रव्यतत्संख्या देवताप्रतिमा नृप । सौवर्णी राजती ताम्री वृक्षजा मार्तिकी तथा ॥ चित्रजा पिष्टलेखोत्था निजवित्तानुरूपतः । आ माषात्पलपर्यन्तं कर्तव्या शाठ्यवर्जितैः ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अनादेशे द्रव्यादिनिर्णयः ।

तत्रैव ब्राह्मे—'आज्यं द्रव्यमनादेशे जुहोतिषु विधीयते । मन्त्रस्य देवतायाश्च प्रजापतिरिति स्थितिः ॥' मन्त्रानुक्तौ समस्तव्याहृतिरूपो मन्त्रः प्रजापतिश्च देवतेति कल्पतरुः ।

ग्रहादिपूजायां होमसंख्या ।

वर्धमानधृतदेवीपुराणे—'होमो ग्रहादिपूजायां शतमष्टाधिकं भवेत् । अष्टाविंशतिरष्टौ वा यथाप्राप्ति विधीयते ॥' मदनरत्ने—'अनुक्तसंख्या यत्र स्याच्छतमष्टोत्तरं स्मृतम् ।' वर्धमानधृतवृद्धशातातपः—'उपवासं द्विजः कृत्वा ततो ब्राह्मणभोजनम् । कुर्यात्तेनास्य सगुण उपवासोऽभिजायते ॥'

व्रतोद्यापनानुक्तौ—

पृथ्वीचन्द्रोदये नन्दिपुराणे—'कुर्यादुद्यापनं तस्य समाप्तौ यदुदीरितम् । उद्यापनं विना यत्तु तद्व्रतं निष्फलं भवेत् ॥ यदि चोद्यापनं नोक्तं व्रतानुगुणतश्चरेत् । वित्तानुसारतो दद्यादनुक्तोद्यापने व्रते ॥ गाश्चैव काञ्चनं दद्याद्व्रतस्य परिपूर्तये ॥'

अशक्तौ—

नारदीये—'सर्वेषामप्यलाभे तु यथोक्तकरणं विना । विप्रवाक्यं स्मृतं शुद्धं व्रतस्य परिपूर्तये ॥ वृथा ब्राह्मणवचनग्रहणे "यथा विप्रवचो यस्तु गृह्णाति मनुजः शुभम् । अदत्त्वा दक्षिणां पापः स याति नरकं ध्रुवम् ॥'

दक्षिणा निर्णयः ।

भारते—'वेदोपनिषदे चैव सर्वकर्मसु दक्षिणा । सर्वत्र तु मयोद्दिष्टा भूमिर्गावोऽथ काञ्चनम् ॥' बैजवापः—'शिवनेत्रोद्भवं यस्माद्रजतं पितृवल्लभम् । अमङ्गलं तद्यत्नेन देवकार्येषु वर्जयेत् ॥' परान्न भोजननिषेधादि टोडरानन्दे देवीपुराणे—'व्रते च तीर्थेऽध्ययने श्राद्धेऽपि च विशेषतः । परान्नभोजनाद्देवि यस्यान्नं तस्य तत्फलम् ॥' पृथ्वीचन्द्रोदयेऽग्निपुराणे—'नित्यस्नायी मिताहारो गुरुदेवद्विजार्चकः । क्षारं क्षौरं च लवणं मधु मांसं च वर्जयेत् ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

क्षारा हविष्यगणश्च ।

क्षारास्तु तत्रैवोक्ताः—'तिलमुद्गादृते शैम्ब्यं सस्ये गोधूमकोद्रवौ । धान्यकं देवधान्यं च शमीधान्यं तथैक्षवम् ॥ स्विन्नधान्यं तथा पण्यं मूलं क्षारगणः स्मृतः ॥'

व्रते ग्राह्याग्राह्यनिर्णयः ।

गोधूमानां तु तत्रैव प्रतिप्रसवः—'व्रीहिषष्टिकमुद्गाश्च कलायः सतिलं पयः । श्यामाकाश्चैव नीवारा गोधूमाद्या व्रते हिताः ॥ कूष्माण्डालाबुवार्ताकपालङ्कीज्योत्स्निकास्त्यजेत् । चतुर्भैक्षं सक्तुकणाः शाकं दधि घृतं मधु । श्यामाकाः शालिनीवारा यावकं मूलतन्दुलम् ॥ हविष्यव्रतनक्तादावग्निकार्यादिके हितम् । मधु मांसं विहायान्यद्व्रते वा हितमीरितम् ॥' इति । शमीधान्यं माषादि । पालङ्की मध्यदेशे 'पोई' इति प्रसिद्धा । ज्योत्स्निका कोशातकी । मिताक्षरायां गौतमः— 'चतुर्भैक्षसक्तुकणयावकशाकपयोदधिघृतमूलफलोदकानि हवींष्युत्तरोत्तरं प्रशस्तानि । पयो दधि घृतं च गव्यम्' इति । अन्ये च विशेषा एकादशीचातुर्मास्यादिप्रकरणे वक्ष्यन्ते ।

गृहीतव्रतत्यागे प्रत्यवायः ।

मदनरत्ने छागलेयः—'पूर्वं व्रतं गृहीत्वा यो न चरेत्काममोहितः । जीवन् भवति चाण्डालो मृतः श्वा चाभिजायते ॥' तत्र प्रायश्चित्तमुक्तं पृथ्वीचन्द्रोदये अग्निगारुडपुराणयोः—'क्रोधात्प्रमादाल्लोभाद्वा व्रतभङ्गो भवेद्यदि । दिनत्रयं न भुञ्जीत मुण्डनं शिरसोऽथवा ॥' इति प्रायश्चित्ताम्नानादतिक्रान्तव्रतानुष्ठानं नास्तीति गम्यते । यत्तु—'प्रायश्चित्तं ततः कृत्वा पुनरेव व्रती भवेत् ।' इति वचनात् यच्चातिक्रान्तमपि व्रतं कार्यमेवेति शूलपाणिः । तन्मध्ये लोपे व्रतशेषसत्त्वे ज्ञेयम् । एतच्च शक्तविषयम् ॥

अशक्तौ तु व्रते नियमाः ।

कालहेमाद्रौ पुराणान्तरे—'उपवासासमर्थश्चेदेकं विप्रं तु भोजयेत् । तावद्धनादि वा दद्याद्भुक्तस्य द्विगुणं तथा ॥' भुक्तः कृतभोजनः । ब्राह्मणभोजनं विनेति शेषः । 'सहस्रसंमितां देवीं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

जपेद्वा प्राणसंयमान् । कुर्याद्द्वादशसंख्याकान्यथाशक्त्यातुरो नरः ॥' इति । शुद्धितत्त्वे मात्स्ये—'उपवासे त्वशक्तानां नक्तं भोजनमिष्यते ।' मदनरत्ने वायवीये—'द्रव्यदातोपवासस्य फलं प्राप्नोत्यसंशयम् ।' तथा—परार्के देवलः—'ब्रह्मचर्यं[१] तथा शौचं सत्यमामिषवर्जनम्[२] । व्रतेष्वेतानि चत्वारि वरिष्ठानीति निश्चयः ॥' मात्स्ये—'तस्मात्कृतोपवासेन स्नानमभ्यङ्गपूर्वकम् । वर्जनीयं प्रयत्नेन रूपघ्नं तत्परं नृप ॥' अन्ये च नियमास्तत्रतत्रान्वेषणीयाः ॥

अथ स्त्रीव्रतेषु विशेषनिर्णयः ।

उच्यते । तत्र हेमाद्रौ व्रतकाण्डे गारुडे—'गन्धालंकारताम्बूलपुष्पमालानुलेपनम् । उपवासे न दुष्यन्ति दन्तधावनमञ्जनम् ॥' इति । इदं च सभर्तृकोपवासविषयम् । 'अञ्जनं च सताम्बूलं कुङ्कुमं रक्तवाससी । धारयेत्सोपवासापि अवैधव्यकरं यतः ॥

विधवाया विशेषः ।

विधवा यतिमार्गेण कुमारी वा यदृच्छया ॥' इति तत्रैव भविष्योक्तेः । तथा विष्णुधर्मे—'सर्वेषु तूपवासेषु पुमान्वाथ सुवासिनी । धारयेद्रक्तवस्त्राणि कुसुमानि सितानि च ॥ विधवा शुक्लवसनमेकमेव हि धारयेत् ॥' मनुरपि—'पुष्पालंकारवस्त्राणि गन्धधूपानुलेपनम् । उपवासे न दुष्यन्ति दन्तधावनमञ्जनम् ॥' मदनरत्ने व्यासः—'दन्तधावनपुष्पादि व्रतेऽप्यस्या न दुष्यति ।' इति यद्यपीदं सर्वोपवासविषयं प्रतीयते, तथापि शिष्टाचारात्सौभाग्याद्यर्थं क्रियमाणनवरात्रत्रिरात्राद्युपवासविषयमेव, न त्वेकादश्यादिविषयम् । 'असकृज्जलपानाच्च सकृत्ताम्बूलचर्वणात् । उपवासः

१—ब्रह्मचर्यं स्त्रीसङ्गादिराहित्यम् । यथा—'स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम् । संकल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिर्वृत्तिरेव च ॥ एतन्मैथुनमष्टाङ्गं प्रवदन्ति मनीषिणः ।' इति । तस्मादेतत्सर्वं वर्जनीयमेव । अन्यथा—'स्त्रीणां तु प्रेक्षणात्स्पर्शात्ताभिः संकथनादपि । विपद्यते ब्रह्मचर्यं स्वदारेष्वृतुसंगमात् ॥' इति ब्रह्मचर्यभङ्गापत्तिः ।

२—'आमिषं दृतिपानीयं गोवर्जं क्षीरमामिषम् । मसूरमामिषं सस्ये फले जम्बीरमामिषम् ॥ आमिषं शुक्तिकाचूर्णमारनालं तथामिषम् ।' इति स्मृत्युदितं ज्ञेयम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्रणश्येत दिवास्वापाच्च मैथुनात् ॥' इत्यपरार्के देवलेन तन्निषेधात् । न चास्य पुंविषयत्वेन सावकाशत्वात् स्त्रीणां ताम्बूलादि प्राप्नोतीति वाच्यम् । ताम्बूलादिप्रापकस्यै-वै कादशीतरविषयत्वेन वैपरीत्यस्यापि सुवचत्वात् । यत्तु हरिवंशे-'अञ्जनं रोचनं चैव गन्धान्सुमनसस्तथा । व्रते चैवोपवासे च नित्यमेव विवर्जयेत् ॥ शिरसोऽभ्यञ्जनं सौम्ये नैवमेतत्प्रशस्यते । न पादयोर्न गात्रस्य स्नेहेनेति स्थितिः स्मृता ॥' इति, तत्तत्रैवोक्तपुण्यकव्रतविषयं न तु सर्वत्र । पूर्वोक्तविरोधादिति मदनरत्ने उक्तम् ।

अश्रुपातादिनिषेधः ।

तत्रैव-'अश्रुप्रपातो रोषश्च कलहस्य कृतिस्तथा ॥ उपवासाद्व्रताद्वापि सद्यो भ्रंशयति स्त्रियम् ॥' स्त्रियमित्युपलक्षणम् । मदनरत्ने शिवधर्मे-'दानव्रतानि नियमा ज्ञानं ध्यानं हुतं जपः । यत्नेनापि कृतं सर्वं क्रोधितस्य वृथा भवेत् ॥'

अथ सूतकादौ निर्णयः ।

'तत्र शावसूत्याशौचयोः सर्वस्मार्तकर्मनिवृत्तिर्निबन्धेषु स्पष्टैव । गौडास्तु क्षताशौचादावपि तामाहुः—'जानूर्ध्वं क्षतजे जाते नित्यकर्म न चाचरेत् । नैमित्तिकं च तदधः स्रवद्रक्तो न वाचरेत् ॥ लोतके च समुत्पन्ने ज्वरकर्मणि मैथुने । धूमोद्गारे तथा वान्तौ नित्यकर्माणि संत्यजेत् ॥ द्रव्ये भुक्ते त्वजीर्णे च नैव भुक्त्वापि किंचन । कर्म कुर्यान्नरो नित्यं सूतके मृतके तथा ॥' इति कालिकापुराणात् । वस्तुतस्तु पूर्वं देवीपूजोपक्रमात्तन्मात्रविषयत्वमस्येति युक्तं प्रतीमः । तथा हेमाद्रौ पाद्मे-'गर्भिणी सूतिकादिश्च कुमारी वाथ रोगिणी । यदाशुद्धा तदान्येन कारयेत्प्रयता स्वयम् ॥' इति । पुंसोऽप्येष विधिः लिङ्गस्याविवक्षितत्वात् । तेन 'यस्मिन्व्रते यत्पूजाद्युक्तं तदन्येन कारयेत् । शारीरनियमान्स्वयं कुर्यात्' इति हेमाद्रिर्व्याचख्यौ । 'न व्रतिनां व्रते' इतिविष्णूक्तेश्च । आरम्भस्तु न भवत्येव शुद्धितत्त्वे विष्णुः—'बहुकालिकसंकल्पो गृहीतश्च पुरा यदि । सूतके मृतके चैव व्रतं तन्नैव दुष्यति ॥' एतत्काम्यपरम् । नित्यं त्वनारब्धमपि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कार्यमिति गौडाः । मदनरत्ने—'पूर्वसंकल्पितं यच्च व्रतं सुनियतव्रतैः । तत्कर्तव्यं नरैः शुद्धं दानार्चनविवर्जितम् ॥' माधवीये कौर्मे—काम्योपवासे प्रक्रान्ते त्वन्तरा मृतसूतके । तत्र काम्यव्रतं कुर्याद्दानार्चनविवर्जितम् ॥' इति । एतेन साङ्गेऽधिकाराद्व्रताङ्गदेवपूजादि कार्यमिति वर्धमानोक्तिः परास्ता । प्रारब्धं पूजादि कार्यमेव । नवरात्रे तु तत्रैव विशेषं वक्ष्यामः । एवं रजस्वलापि । यत्तु सत्यव्रतः प्रारब्धदीर्घतपसां नारीणां यद्रजो भवेत् । न तत्रापि व्रतस्य स्यादुपरोधः कथंचन ॥' इति, तत्प्रतिनिधिना कारयेदित्येतत्परम् । तदुक्तं मदनरत्ने मात्स्ये—'अन्तरा तु रजोयोगे पूजामन्येन कारयेत् ।' इति ॥

पूर्वसंकल्पितव्रते रजस्वलासु प्रतिनिधयः ।

प्रतिनिधयश्च निर्णयामृते पैठीनसिः—'भार्या पत्युर्व्रतं कुर्याद्भार्यायाश्च पतिर्व्रतम् । असामर्थ्ये परस्ताभ्यां व्रतभङ्गो न जायते ॥' स्कान्देपि—'पुत्रं वा विनयोपेतं भगिनीं भ्रातरं तथा । एषामभाव एवान्यं ब्राह्मणं वा नियोजयेत् ॥' कात्यायनः—'पितृमातृभ्रातृपतिगुर्वर्थे च विशेषतः । उपवासं प्रकुर्वाणः पुण्यं शतगुणं लभेत् ॥ मातामहादीनुद्दिश्य एकादश्यामुपोषणे । कृते ते तु फलं विप्राः समग्रं समवाप्नुयुः ॥' मदनरत्ने प्रभासखण्डे—'भर्ता पुत्रः पुरोधाश्च भ्राता पत्नी सखापि च । यात्रायां धर्मकार्येषु जायन्ते प्रतिहस्तकाः । एभिः कृतं महादेवि स्वयमेव कृतं भवेत् ॥' तत्रैव वायवीये—'स्वयं कर्तुमशक्तश्चेत्कारयीत पुरोधसा ।' इदं च सर्ववर्णसाधारणम् । अविशेषात् । यत्तु कश्चिदाह—'शूद्रस्य ब्राह्मणादिरेव प्रतिनिधिर्युक्तो न शूद्रः । जपस्तपस्तीर्थसेवा प्रव्रज्या मन्त्रसाधनम् । विप्रैः संपादितं यस्य संपन्नं तस्य तत्फलम् ॥' इति मरीचिवचनात् इति । तत्तुच्छम् । प्रव्रज्यादीनां शूद्रेऽसंभवात्, 'विशये प्रायदर्शनात्' इति न्यायेनास्य ब्राह्मणादिगोचरत्वात् । यदापि-'उपवासो व्रतं होमस्तीर्थस्नानजपादिकम् ।' इति पूर्वार्धे पाठस्तदापि स एव दोषः । 'स्त्रीशूद्रपतनानि षट्' इति मानवीये जपनिषेधात् । वस्तुतस्तु संपूर्णतावाचनमात्रमत्रोच्यत इति प्रतिनिधेः का वार्तेत्यलम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अत्र विशेषः ।

अत्र विशेषमाह त्रिकाण्डमण्डनः—'काम्ये प्रतिनिधिर्नास्ति नित्ये नैमित्तिके च सः । काम्येऽप्युपक्रमादूर्ध्वं केचित्प्रतिनिधिं विदुः ॥ न स्यात्प्रतिनिधिर्मन्त्रस्वामिदेवाग्निकर्मसु । स देशकालयोर्नास्ति नारणेरग्निरेव सा ॥ नापि प्रतिनिधातव्यं निषिद्धं वस्तु कुत्रचित् ॥' हिरण्यकेशिसूत्रेपि—'न स्वामित्वस्य भार्यायाः पुत्रस्य देशस्य कालस्याग्नेर्देवतायाः कर्मणः शब्दस्य च प्रतिनिधिर्विद्यते' इति ॥

अथ व्रतादिसन्निपाते निर्णयः ।

तत्र तिथिद्वयसन्निपाते तत्रोक्तं दानहोमादि क्रमेणानुष्ठेयम्, अविरोधात् । इदं पूर्वारब्धेष्वेव । एकमध्येऽन्यकाम्यकर्मारम्भस्तु न भवत्येव । 'गुणफलादृते यस्य यज्ञे प्रततेऽन्तरा यज्ञस्तायते तं यज्ञं निर्ऋतिर्गृह्णाति' इति शाणकधृतश्रुतेः । यज्ञः व्रतादिकर्ममात्रम् । अनङ्गेन व्यवधानदोषस्य सर्वत्र साम्यात् । शिष्टास्तु माघकार्तिकस्नानादिमध्ये लक्षहोमतुलाभारतश्रवणाद्याचरन्ति तन्नित्यमध्येऽस्तु, काम्यमध्ये चिन्त्यम् । यत्र तु नक्तैकभक्तादौ विरोधस्तत्र प्राथम्यादेकभक्तं कार्यम् । नक्तं तु परेद्युस्तत्तिथौ गौणकाले कार्यम् । समकालीनविरुद्धव्रतादौ तु 'एकं स्वयं कृत्वान्यद्भार्यादिना कारयेत्' इति माधवः । यत्र तु शिवरात्र्यादौ तिथिमध्ये पारणयाऽह्नि भोजनं प्राप्तम्, 'भूताष्टम्योर्दिवा भुक्त्वा रात्रौ भुक्त्वा च पर्वणि । एकादश्यामहोरात्रं भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥' इति तन्निषेधश्च, तत्र पारणाया वैधत्वाद्दिवैव भोजनम् । निषेधस्तु रागप्राप्तभोजनविषयः । एवमष्टम्यादिनक्तव्रते संक्रान्त्यादौ रवौ संकष्टचतुर्थ्यां च रात्रौ भोजनम् । यत्र त्वष्टम्यादौ दिवा भुजिनिषेधः संक्रमे च रात्राविति निषेधद्वयं तत्रोपवास एव कार्यः । यद्यपि पुत्रिण उपवासो निषिद्धस्तथापि—'उपवासनिषेधे तु भक्ष्यं किंचित्प्रकल्पयेत् ।' इति वचनात्किंचिद्भक्षयित्वोपवासः कार्यः । चान्द्रायणमध्ये एकादश्यादौ तु ग्राससंख्यानियमेन भोजनं कार्यमेव । चान्द्रायणस्य काम्यत्वेन नित्यबाधकत्वात् । अबाधेन गत्यसंभवाच्च । एकादश्यामेकान्तरोपवासादिपारणायां जलपारणां कृत्वोपवसेत । 'आपो वा अशितमनशितं च'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

इति श्रुतेः । एवं द्वादश्यां मासोपवासश्राद्धप्रदोषादिषु ज्ञेयम् । एवं काम्यनैमित्तिकनित्यत्वादिकृतं बलाबलं स्वयमूह्यमिति दिक् ॥ इति कमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ व्रतपरिभाषा समाप्ता ॥

प्रतिपन्निर्णयः ।

अथ प्रतिपदादिनिर्णयः ॥ शुक्लप्रतिपदपराह्णव्यापित्वे पूर्वा ग्राह्या । युग्मवाक्यात् । 'प्रतिपत्संमुखी कार्या या भवेदापराह्णिकी ।' इति स्कान्दोक्तेः । 'शुक्ला स्यात्प्रतिपत्तिथिः प्रथमतश्चेत्सापराह्णे भवेत्' इति दीपिकोक्तेश्च । अपराह्णश्च पञ्चधा विभक्ते दिने चतुर्थो भागः । तदभावे सायाह्नव्यापिनी ग्राह्या । 'तदभावे तु सायाह्नव्यापिनी परिगृह्यताम् ।' इति माधवोक्तेः । कृष्णा तु परा । 'कृष्णा तूत्तरतोऽखिला' इति दीपिकोक्तेः । कृष्णापि पूर्वैवेत्यनन्तभट्टाः ।

सर्वतिथिषु वर्ज्यान्युक्तानि ।

मुहूर्तदीपिकायाम्—'कूष्माण्डं बृहतीफलानि लवणं वर्ज्यं तिलाम्लं तथा तैलं चामलकं दिवं प्रवसता शीर्षं कपालान्त्रकम् । निष्पावांश्च मसूरिकान् फलमथो वृन्ताकसंज्ञं मधु द्यूतं स्त्रीगमनं क्रमात्प्रतिपदादिष्वेवमाषोडश ॥' शीर्षं नारिकेलम्, कपालं अलाबु, अन्त्रं पटोलकम् । भूपालः—'कूष्माण्डं बृहती क्षारं मूलकं पनसं फलम् । धात्रीं शिरः कपालान्त्रं नखचर्मतिलानि च ॥ क्षुरकर्माङ्गनासेवां प्रतिपत्प्रभृति त्यजेत् ॥' नखं शिम्बी, चर्म मसूरिका ॥

द्वितीयानिर्णयः ।

'द्वितीया तु कृष्णा पूर्वा शुक्लोत्तरा' इति हेमाद्रिः । 'कृष्णा द्वितीयाऽऽदिमा पूर्वाह्णे यदि सा सिता तु परतः सर्वा' इति दीपिकोक्तेः । माधवानन्तभट्टमते तु सर्वापि द्वितीया परा । तथा च माधवः—'पूर्वेद्युरसती प्रातः परेद्युस्त्रिमुहूर्तगा । सा द्वितीया परोपोष्या पूर्वविद्धा ततोऽन्यथा ॥' इति ॥

तृतीयानिर्णयः ।

तृतीया तु सर्वमते रम्भाव्यतिरिक्ता परैव । तेन युग्मवाक्यं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

रम्भाव्रतविषयम् । 'रम्भाख्यां वर्जयित्वा तु तृतीयां द्विजसत्तम । अन्येषु सर्वकार्येषु गणयुक्ता प्रशस्यते ॥' इति ब्रह्मवैवर्तात् । गौरीव्रते तु विशेषमाह माधवः—'मुहूर्तमात्रसत्त्वेपि दिने गौरीव्रतं परे । शुद्धाधिकायामप्येवं गणयोगप्रशंसनात् ॥' इति ॥

चतुर्थीनिर्णयः ।

चतुर्थ्यपि सर्वमते गणेशव्रतातिरिक्ता परैव । युग्मवाक्यात् । 'एकादशी तथा षष्ठी अमावास्या चतुर्थिका । उपोष्याः परसंयुक्ताः पराः पूर्वेण संयुताः ॥' इति माधवीये बृहद्वसिष्ठोक्तेश्च । 'नागचतुर्थी तु मध्याह्नव्यापिनी पञ्चमीयुता च ग्राह्या' इति निर्णयामृते माधवीये चोक्तम् । 'युगं मध्यंदिने यत्र तत्रोपोष्य फणीश्वरान् । क्षीरेणाप्याय्य पञ्चम्यां पूजयेत्प्रयतो नरः ॥ विषाणि तस्य नश्यन्ति न तान् हिंसन्ति पन्नगाः ॥' इति माधवीये देवलोक्तेः । युगं चतुर्थी । पूर्वत्र मध्याह्नव्याप्तौ पूर्वा, अन्यपक्षेषु परैव; पञ्चम्यां पूजोक्तेः । गणेशव्रते तृतीयायुतैव चतुर्थी । 'चतुर्थी तु तृतीयायां महापुण्यफलप्रदा । कर्तव्या व्रतिभिर्वत्स गणनाथसुतोषिणी ॥' इति हेमाद्रौ ब्रह्मवैवर्तात् । माधवीये तु गणेशव्रते मध्याह्नव्यापिनी मुख्या । 'चतुर्थी गणनाथस्य मातृविद्धा प्रशस्यते । मध्याह्नव्यापिनी चेत्स्यात्परतश्चेत्परेऽहनि ॥' इति बृहस्पतिवचनात् । 'प्रातः शुक्लतिलैः स्नात्वा मध्याह्ने पूजयेन्नृप ।' इति तत्कल्पेऽभिधानाच्च । तेन 'परदिने तत्त्वे परा, अन्यथा पूर्वा' इत्युक्तम् । वस्तुतस्तु यत्र भाद्रशुक्लचतुर्थ्यादौ गणेशव्रतविशेषे मध्याह्नपूजोक्ता तद्विषयाण्येव प्रागुक्तवचनानि न तु सार्वत्रिकाणि । संकष्टचतुर्थ्यादौ बहूनां कर्मकालानां बाधापत्तेः । तेन सर्वत्र गणेशव्रते पूर्वैवेति सिद्धम् ।

संकष्टीनिर्णयः ।

संकष्टचतुर्थी तु चन्द्रोदयव्यापिनी ग्राह्या । दिनद्वये तत्त्वे मातृयोगस्य सत्त्वात्पूर्वेति केचित् । अन्ये तु दिने मुहूर्तत्रयादिरूपस्य तृतीयायोगस्याभावात् परदिने माधवोक्तमध्याह्नव्याप्तिसत्त्वात्संपूर्ण-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

त्वाच्च परेत्याचक्षते । दिनद्वये तदभावे तु परैव । गौरीव्रते तु पूर्वैव । 'गणेशगौरीबहुलाव्यतिरिक्ताः प्रकीर्तिताः । चतुर्थ्यः पञ्चमी-विद्धा देवतान्तरयोगतः ॥' इति मदनरत्ने ब्रह्मवैवर्तात् ॥

पञ्चमीनिर्णयः ।

पञ्चमी तु माधवमते सर्वापि पूर्वा । 'चतुर्थीसंयुता कार्या पञ्चमी परया न तु । दैवे कर्मणि पित्र्ये च शुक्लपक्षे तथा सिता ॥' इति हारीतोक्तेः । हेमाद्रिमते तु कृष्णा पूर्वा सिता परा । 'कृष्णा पूर्वयुता सिता परयुता स्यात्पञ्चमी' इति दीपिकोक्तेः । वस्तुतस्तु हारीतोक्तिरुपवासविषया । 'प्रतिपत्पञ्चमी चैव सावित्री भूतपूर्णिमा । नवमी दशमी चैव नोपोष्याः परसंयुताः ॥' इति ब्रह्मवैवर्तात् । यत्तु-'पञ्चमी तु प्रकर्तव्या षष्ठ्या युक्ता तु नारद ॥' इत्यापस्तम्बोर्य तत्स्कन्दव्रतपरम् । 'स्कन्दोपवासे स्वीकार्या पञ्चमी परसंयुता ।' इति वाक्यशेषादिति माधवः । तन्नागपूजाविषयमित्यनन्तभट्टनिर्णयामृतादयः । चमत्कारचिन्तामणौ च-'पञ्चमी नागपूजायां कार्या षष्ठीसमन्विता । तस्यां तु तुषिता नागा इतरा सचतुर्थिका ॥' इति । तेन नागपूजादौ परैव । यत्तु मदनरत्नदिवोदासीययोः श्रावण-पञ्चम्यतिरिक्ता पूर्वेत्युक्तम् । 'श्रावणे पञ्चमी शुक्ला संप्रोक्ता नाग-पञ्चमी । तां परित्यज्य पञ्चम्यश्चतुर्थीसहिता हिताः ॥' इति संग्रहोक्तेः । 'गणेशस्कन्दयोगाभ्यां क्रमान्नागः शुभाशुभः । मित्रा-मित्रे तयोः पत्रे नागानामाखुबर्हिणौ ॥' इति षट्त्रिंशन्मताच्च श्रावण-पञ्चम्यतिरिक्ताया नागपञ्चम्याश्चतुर्थीयुतत्वमुक्तं तदुपवासादि-विषयम् । पत्रे वाहने ॥

षष्ठीनिर्णयः ।

षष्ठी सर्वमते स्कन्दव्रतातिरिक्ता परैव । युग्मवाक्यात् । 'नाग-विद्धा न कर्तव्या षष्ठी चैव कदाचन ।' इति स्कान्दात् । निर्णयामृते-'षष्ठी च सप्तमी चैव वारश्चेदंशुमालिनः । योगोऽयं पद्मको नाम सूर्यकोटिग्रहैः समः ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

सप्तमीनिर्णयः ।

सप्तमी पूर्वैव युग्मवाक्यात्। 'षष्ठ्या युता सप्तमी च कर्तव्या तात सर्वदा ।' इति स्कान्दाच्च ॥

अष्टमीनिर्णयः ।

अष्टमी तु सर्वमते कृष्णा पूर्वा, सिता परा। 'व्रतमात्रेऽष्टमी कृष्णा पूर्वा शुक्लाष्टमी परा।' इति माधवोक्तेः। 'परयुक् शुक्लाष्टमी पूर्वयुक् कृष्णा' इति दीपिकोक्तेश्च । शिवशक्त्युत्सवे च कृष्णाप्युत्तरा। 'पक्षद्वयेऽप्युत्तरैव शिवशक्तिमहोत्सवे ।' इति माधवोक्तेः ।

बुधाष्टमीनिर्णयः ।

दिवोदासीये भविष्ये—'यदा यदा सिताष्टम्यां बुधवारो भवेत्क्वचित्। तदा तदा हि सा ग्राह्या एकभक्ताशने नृप ॥ संध्याकाले तथा चैत्रे प्रसुप्ते च जनार्दने। बुधाष्टमी न कर्तव्या हन्ति पुण्यं पुरातनम् ॥' अन्त्यं पद्यं हेमाद्रौ न धृतम् ॥

नवमीनिर्णयः ।

नवमी तु सर्वमते पूर्वा युग्मवाक्यात्। 'न कुर्यान्नवमीं तात दशम्यां तु कदाचन।' इति स्कान्दाच्च ॥

दशमीनिर्णयः ।

दशमी तु पूर्वा परा वेति हेमाद्रिः। 'कृष्णा पूर्वोत्तरा शुक्ला दशम्येवं व्यवस्थिता'। इति माधवः। वस्तुतस्तु मुख्या नवमीयुतैव ग्राह्या। 'दशमी तु प्रकर्तव्या सदुर्गा द्विजसत्तम ।' इत्यापस्तम्बोक्तेः। यत्तु-'संपूर्णा दशमी कार्या पूर्वया परयाथवा ।' इत्यङ्गिरसोक्तं, तन्नवमीयुक्तालाभे औदयिकी ग्राह्येत्येवं ज्ञेयम् ॥

अथैकादशी ।

तत्रैकादश्युपवासो द्वेधा, निषेधपरिपालनात्मको व्रतरूपश्च। तत्राद्यः—'न शङ्खेन पिबेत्तोयं न खादेत्कूर्मसूकरौ। एकादश्यां न

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भुञ्जीत पक्षयोरुभयोरपि ॥' इति कौर्मदेवलाद्युक्तेः। अग्निपुराणेपि—'गृहस्थो ब्रह्मचारी च आहिताग्निस्तथैव च। एकादश्यां न भुञ्जीत पक्षयोरुभयोरपि ॥' इति। न चात्र पर्युदासेन व्रतविधिः तद्धेतुव्रतादिशब्दाभावात्। व्रतरूपस्तु ब्रह्मवैवर्ते—'प्राप्ते हरिदिने सम्यग्विधाय नियमं निशि। दशम्यामुपवासस्य प्रकुर्याद्वैष्णवव्रतम् ॥' इति। इदं च शिवभक्तादिभिरपि कार्यम्। 'वैष्णवो वाथ शैवो वा कुर्यादेकादशीव्रतम्।' इति शिवधर्मोक्तेः। 'वैष्णवो वाथ शैवो वा सौरोऽप्येतत्समाचरेत्।' इति सौरपुराणाच्च।

वेधो द्वेधा।

सोपि द्वेधा, नित्यः काम्यश्च। 'उपोष्यैकादशीं नित्यं पक्षयोरुभयोरपि।' इति गारुडोक्तेः। 'पक्षे पक्षे च कर्तव्यमेकादश्यामुपोषणम्।' इति नारदोक्तेश्च नित्यता। 'यदीच्छेद्विष्णुसायुज्यं श्रियं संततिमात्मनः। एकादश्यां न भुञ्जीत पक्षयोरुभयोरपि ॥ इति कौर्मादिषु फलश्रुतेश्च काम्यता। उभयैकादशीव्रतं गृहस्थातिरिक्तानामेव नित्यम्। गृहस्थस्य तु शुक्लायामेव व्रतं नित्यं न कृष्णायाम्। एकादश्यां न भुञ्जीत पक्षयोरुभयोरपि। वनस्थयतिधर्मोऽयं शुक्लामेव सदा गृही ॥' इति देवलोक्तेः। नचानेन निषेधपालनमेव वनस्थयतिविषये उपसंह्रियते नतु व्रतमिति वाच्यम्। अस्य पर्युदासेन व्रतविधिपरत्वात्। अन्यथा पूर्वोक्ताग्निपुराणवचने निषेधपालने गृहस्थस्याधिकारोक्त्या विरोधः स्यात्। निषेधस्य निवृत्तिमात्रफलत्वेन विशेषानपेक्षणादुपसंहारायोगात्। अभावस्य धर्मत्वाभावाच्च। तस्मादनेन सर्वेषामेकादशीव्रतविधायिनां सामान्यवाक्यानां वनस्थयतिविषये उपसंहारान्न गृहस्थस्य कृष्णायां नित्यव्रतप्राप्तिः। कथं तर्हि—'संक्रान्त्यामुपवासं च कृष्णैकादशिवासरे। चन्द्रसूर्यग्रहे चैव न कुर्यात्पुत्रवान् गृही ॥' इति नारदादिवचनेषु कृष्णानिषेधः प्राप्त्यभावादिति चेच्छ्रूयताम्—शयनीबोधिनीमध्ये या कृष्णैकादशी भवेत्। सैवोपोष्या गृहस्थेन नान्या कृष्णा कदाचन ॥' इति पाद्मे।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

उभयैकादश्योः साम्यम् ।

गृहस्थस्य आषाढीकार्तिकीमध्यस्था या कृष्णा विहिता सा पुत्रवतो निषिध्यते । अन्यकृष्णायां तु न विधिः, सर्वविधीनां वनस्थयतिषूपसंहारात् । न निषेधः, प्राप्त्यभावात् । शयन्यादिवाक्यं त्वपुत्रगृहिगोचरमित्यनन्तभट्टहेमाद्र्यादिग्रन्थाः । दीपिकापि–'असिता तु शयनीबोधान्तरस्थाप्यथो न स्यात्सात्मवतोपि' इति । मदनरत्ने भविष्ये–'यथा शुक्ला तथा कृष्णा द्वादशी मे सदा प्रिया । शुक्ला गृहस्थैः कर्तव्या भोगसंतानवर्धिनी । मुमुक्षुभिस्तथा कृष्णा न ते तेनोपदर्शिता ॥' इति । निषेधपालनं काम्यव्रतं च सर्वकृष्णायां सर्वगृहिणां भवत्येव । 'पुत्रवांश्च सभार्यश्च बन्धुयुक्तस्तथैव च । उभयोः पक्षयोः काम्यव्रतं कुर्यात्तु वैष्णवम् ॥' इति नारदोक्तेः । एतच्च सर्वं कालादर्शे उक्तम्-'विधवाया वनस्थस्य यतेश्चैकादशीद्वये । उपवासो गृहस्थस्य शुक्लायामेव पुत्रिणः । भुजेर्निषेधः कृष्णायां सिद्धिस्तस्य ततो व्रते ॥' इति । प्राच्यास्तु वैष्णवगृहस्थानां कृष्णापि नित्या । नित्यं भक्तिसमायुक्तैर्नरैर्विष्णुपरायणैः । पक्षे पक्षे च कर्तव्यमेकादश्यामुपोषणम् ॥ सपुत्रश्च सभार्यश्च सुजनो भक्तिसंयुतः । एकादश्यामुपवसेत्पक्षयोरुभयोरपि ॥' इति नारदोक्तेरित्याहुः । पुत्रशब्दश्चापत्यमात्रवचनः । नारायणवृत्तौ–'पुमांस एव मे पुत्रा जायेरन्' इत्यत्रापत्यमात्रवाचित्वोक्तेः । 'जनयद्बहुपुत्राणि' इति लिङ्गात् । 'पौत्री मातामहस्तेन' इति मनूक्तेः । पुत्र्या अपत्यमित्यर्थे तु 'स्त्रीभ्यो ढक्' इति पौत्रेय इत्यापत्तेः । 'पुमान् पुत्रो जायते' इति च ॥

उपवासनिषेधे विशेषो–

वायवीये उक्तः–'उपवासनिषेधे तु भक्ष्यं किंचित् प्रकल्पयेत् । न दुष्यत्युपवासेन उपवासफलं लभेत् ॥' भक्ष्यं च तत्रैवोक्तम्–'नक्तं हविष्यान्नमनोदनं वा फलं तिलाः क्षीरमथाम्बु चाज्यम् । यत्पञ्चगव्यं यदि वापि वायुः प्रशस्तमत्रोत्तरमुत्तरं च ॥' इत्यलम् । तत्र दशमी-

---

१—आत्मवतः पुत्रवतः । 'आत्मा वै पुत्रनामासि' इति श्रुतेः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वेधो द्वेधा । अरुणोदयवेधः सूर्योदयवेधश्चेति । आद्यो गारुडे–'दशमीशेषसंयुक्तो यदि स्यादरुणोदयः । नैवोपोष्यं वैष्णवेन तद्दिनैकादशीव्रतम् ॥' इति ।

अरुणोदयनिर्णयः ।

अरुणोदयस्वरूपं च माधवीये स्कान्दे–उदयात् प्राक् चतस्रस्तु घटिका अरुणोदयः । इति । यदपि–'उदयात्प्राग्यदा विप्र मुहूर्तद्वयसंयुता । संपूर्णैकादशी नाम तत्रैवोपवसेद् गृही ॥' इति गारुडसौरधर्मादिवचनम् । यच्च भविष्ये–'आदित्योदयवेलायाः प्राङ्मुहूर्तद्वयान्विता । एकादशी तु संपूर्णा विद्धान्या परिकीर्तिता ॥' इति तदप्युपसंहारन्यायेन दण्डचतुष्टयपरमेव । हेमाद्रावप्येवम् । यत्तु ब्रह्मवैवर्ते–'चतस्रो घटिकाः प्रातररुणोदयनिश्चयः । चतुष्टयविभागोत्र वेधादीनां किलोदितः ॥ अरुणोदयवेधः स्यात्सार्धं तु घटिकात्रयम् ॥ अतिवेधो द्विघटिकः प्रभासंदर्शनाद्रवेः । महावेधोपि तत्रैव दृश्यतेऽर्को न दृश्यते । तुरीयस्तत्र विहितो योगः सूर्योदये बुधैः ॥' इति, तदप्यवयवद्वारारुणोदयवेधविशेषपरमेवेति माधवीये मदनरत्ने च अन्त्यस्तूदयवेधः ।

अन्ये वेधाः ।

तथान्येपि वेधाः हेमाद्रौ माधवीये च गारुडे–'उदयात् प्राक्

१—उदयात् प्राक् चतुर्दण्डत्वमरुणोदयशब्दप्रवृत्तिनिमित्तम्, अतएव काम्योपवासवर्ज्यवेधवाक्ये घटिकाशब्दोपादानमित्यस्योपोद्घलकमाह—तथेत्यादि । एकादशी त्रेधा पूर्णा, खण्डा, विद्धा चेति । तत्र या द्वात्रिंशन्मुहूर्तव्यापिनी सा पूर्णा । 'प्रतिपत्प्रभृतिः सर्वा उदयादोदयाद्रवेः संपूर्णा इति विख्याता हरिवासरवर्जिता ॥' इति स्कान्दे हरिवासरपर्युदासात् । तत्र-'उदयात्प्राग् यदा विप्र मुहूर्तद्वयसंयुता । संपूर्णैकादशी नाम तत्रैवोपवसेद्गृही ॥' इति गारुडात् अत्राप्यधिकजिज्ञासायां–'आदित्योदय वेलायामारभ्यषष्टि नाडिकाः । संपूर्णैकादशी नाम कार्या धर्मफलेप्सुभिः ॥' इति गारुडं विज्ञेयम् । खण्डा त्वारुणोदयव्यापिन्याः परदिने न्यूनत्वे सति भवति । विद्धा त्वरुणोदयव्याप्त्यभाववती । 'आदित्योदयवेलायाः प्राङ् मुहूर्तद्वयान्विता । एकादशी तु संपूर्णा विद्धान्या परिकीर्तिता ॥' इतिभविष्यपुराणात् । संदिग्धा संयुक्ता चेति विद्धापि द्वेधा । तत्र–'पुत्रराज्यप्रसिध्यर्थं द्वादश्यामुपवासयेत् । तत्र क्रतुशतं पुण्यं त्रयोदश्यां तु पारणम् ॥' इति विहितं काम्योपवासं संदिग्धां लक्षयित्वा निषेधयति—उदयादिति । एतच्च वाक्यद्वयं वैष्णवेतरविषयम् । तान् प्रति तन्निषेधवैयर्थ्यात् । 'नैवोपोष्य इति सामान्यत एव निवृत्त्यसाधारण्येन निषिद्धत्वात् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

त्रिघटिकाव्यापिन्येकादशी यदा । संदिग्धैकादशी नाम वर्ज्येयं धर्मकाङ्क्षिभिः ॥ उदयात्प्राङ् मुहूर्तेन व्यापिन्येकादशी यदा । संयुक्तैकादशी नाम वर्ज्येयं धर्मवृद्धये ॥' हेमाद्रौ रात्रेरन्त्योऽष्टमो भागोऽप्यरुणोदय उक्तः—'निशः प्रान्ते तु यामार्धे देववादित्रवादने । सारस्वतानध्ययने चारुणोदय उच्यते ॥' इति स्मृतेः । अत्रैके—'एषां सर्वपक्षाणां मुहूर्तद्वयेन क्रोडीकारात्' 'निशः प्रान्ते' इति वचनाच्च रात्रिमानवशात्सार्धत्रिदण्डादयोऽनेकेऽरुणोदयाः । तदाह हेमाद्रिः—'सार्धघटिकात्रयोक्तिरष्टाविंशतिघटीमितरात्रिविषया । महत्तरास्तु रात्रीरपेक्ष्य चतस्रो घटिका इत्युक्तमिति' इत्याहुः । तन्न । अरुणोदयशब्दस्याऽनेकार्थत्वापत्तेः । न च मुहूर्तद्वयमर्थः । दण्डद्वयैकमुहूर्तादिवेधानां तथाप्यनुपपत्तेः । नहि तेषां यामार्धत्वमरुणोदयत्वं चास्ति । मुहूर्तद्वयस्य यामार्धस्य च 'चतस्रो घटिकाः' इत्यनेनोपसंहाराच्च न तदर्थः । 'न च सार्धं तु घटिकात्रयम्' इत्यनेनापि तदापत्तिः शङ्क्या । तेन चतुर्दण्डवेधस्यैवोक्तेः । चतुर्दण्डेऽर्धघटीदशमीसत्त्वे हि वेधस्तदर्थः । द्विघटिकादौ तदयोगाच्च । यत्तु मतम्—कियतारुणोदयवेध इत्यपेक्षायां सार्धघटिकात्रयनियमादरुणोदयेऽर्धघटिकातो न्यूनदशमीसत्त्वे न दोषः' इति । तत्तुच्छम् । द्विदण्डादावपि तदापत्तेः । 'दशमीशेषसंयुक्तो यदि स्यादरुणोदयः । नैवोपोष्यं वैष्णवेन तद्धि नैकादशीव्रतम् ॥' इति गारुडे भविष्ये च योगमात्रनिषेधात् । नारदीयेऽपि—'लववेधेऽपि विप्रेन्द्र दशम्यैकादशीं त्यजेत् । सुराया बिन्दुना स्पृष्टं गङ्गाम्भ इव निर्मलम् ॥' स्कान्देऽपि—'कलाकाष्ठादिगत्यैव दृश्यते दशमी विभो । एकादश्यां न कर्तव्यं व्रतं राजन्कदाचन ॥' इति । माधवोऽप्याह—'सोऽयं कलादिवेधोऽरुणोदयवेधे सूर्योदयवेधे च समानः' इति । निगमेऽपि—'सर्वप्रकारवेधोऽयमुपवासस्य दूषकः ।' इति । अत एव माधवेन—'अरुणोदयाद्यदण्डेऽल्पदशमीस्पर्शे संपृक्ता कृत्स्नघटीयोगे संदिग्धा । मुहूर्तव्याप्तौ संयुक्ता उदये संकीर्णा' इत्युक्त्वा 'अरुणोदयवेलायां दशमी यदि संगता । संपृक्तैकादशीं तां तु मोहिन्यै दत्तवान्प्रभुः ॥' इति गोभिलाद्युक्तेः पूर्वोक्तगारुडादेश्च सामान्यतो विशेषतश्चारुणोदयवेधो निषिद्धः । यत्तु—'अष्टमभागोरु-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

णोदयः' इति हेमाद्रिणोक्तम्, यच्च महत्तरा रात्रीरिति तत्परमतं स्वयमेव दूषितम्, अन्तेप्युक्तम्—'वेधतारतम्यं च दोषतारतम्यादुपपद्यते' इति । दोषतारतम्यं च प्रायश्चित्ततारतम्यादवगम्यते । तच्चोक्तं हेमाद्रौ स्मृत्यन्तरे—'अज्ञानाद्यदि वा मोहात्कुर्वन्नेकादशीं नरः । दशमीशेषसंयुक्तां प्रायश्चित्तमिदं चरेत् । कृच्छ्रपादं नरश्चीर्त्वा गां च दद्यात्सवत्सकाम् । सुवर्णस्यार्धकं देयं तिलद्रोणसमन्वितम् ॥' विधानान्तरं तत्रैव—'ब्राह्मणान्भोजयेत्त्रिंशद्गां च दद्यात्सवत्सकाम् । धरणस्यार्धकं देयं तिलद्रोणमथापि वा ॥' इति । अत्र वेधतारतम्याद्व्यवस्थेति हेमाद्रिः । 'निशः प्रान्ते' इत्यपि दोषाधिक्यार्थमेव । तस्माच्चतुर्घटिकात्मक एवारुणोदय इति सिद्धम् । तेन षट्पञ्चाशद्दण्डानन्तरं दशमीप्रवेशेऽरुणोदयवेध उक्तो भवति । अन्त्योपि तत्रव कण्वेनोक्तः—'उदयोपरि विद्धा तु दशम्यैकादशी यदि । दानवेभ्यः प्रीणनार्थं दत्तवान्पाकशासनः ॥' इति । स्मृत्यन्तरेपि—'दशम्याः प्रान्तमादाय यदोदेति दिवाकरः । तेन स्पृष्टं हरिदिनं दत्तं जम्भासुराय तत् ॥' इति ॥

तत्रारुणोदयवेधो वैष्णवविषयः

तद्वाक्येषु वैष्णवग्रहणात् । तत्स्वरूपं तु माधवीये स्कान्दे—'परमापदमापन्नो हर्षे वा समुपस्थिते । नैकादशीं त्यजेद्यस्तु यस्य दीक्षास्ति विष्णवी ॥ विष्णवर्पिताखिलाचारः स हि वैष्णव उच्यते ॥' इति । यद्यपि पित्रादेरागमदीक्षायां तन्मात्रस्य वैष्णवत्वं नतु पुत्रादेस्तथापि स्वपारम्पर्यप्रसिद्धमेव वैष्णवत्वं च मन्यन्ते वृद्धाः । तत्त्वसागरे भविष्ये—'यथा शुक्ला तथा कृष्णा यथा कृष्णा तथेतरा । तुल्ये ते मन्यते यस्तु स वै वैष्णव उच्यते ॥' केचित्तु दशम्यां नवमीवेधमपि त्यजन्ति, तत्र मूलं मृग्यम् । उदयवेधस्तु परिशेषात् स्मार्तगोचरः । तदाह माधवः—'अरुणोदयवेधोत्र वेधः सूर्योदये तथा । उक्तौ द्वौ दशमीवेधौ वैष्णवस्मार्तयोः क्रमात् ॥' हेमाद्रिस्तु केषांचिदर्धरात्रेपि दशमीवेधमाह—'अर्धरात्रे तु केषांचिद्दशम्या वेध उच्यते । कपालवेध इत्याहुराचार्या ये हरिप्रियाः ॥ न

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तन्मम मतं यस्मात्त्रियामा रात्रिरिष्यते ॥' इति ब्रह्मवैवर्तात् । अस्यार्थः—'अनद्यतने लङ्' इत्यत्र 'अतीताया रात्रेः पश्चिमयामद्वयमागामिन्या रात्रेः पूर्वयामद्वयं दिवसश्च स काल एषोऽद्यतनः सकलः' इत्युक्तं महाभाष्ये । स एष वर्तमानः काल एकादश्यहोरात्र उपोष्यः । तन्मध्ये दशमीप्रवेशे विद्धा, सा त्याज्या । अत एव हेमाद्रौ—'दशम्याः सङ्गदोषेण अर्धरात्रात्परेण तु । वर्जयेच्चतुरो यामान्संकल्पार्चनयोः सदा ॥' इति दोष उक्तः । चतुरो यामान् दिवसस्येत्यर्थः । स्वमते तु रात्रेस्त्रियामत्वात् प्रहरत्रयं पूर्वशेषः । तेन चतुर्थप्रहर एव वेधो युक्तः । सोप्यरुणोदय एव । 'सूर्योदयं विना नैव स्नानदानादिकः क्रमः ।' इति मार्कण्डेयपुराणात् । 'प्रत्यूषोऽहर्मुखं कल्यः' इति कोशादरुणोदयमारभ्य सूर्यांशुप्रवृत्तेस्तत्रैव निषेधः । तेन मतभेदाद्व्यवस्थेति केचित् । कैमुतिकन्यायेनारुणोदयवेधस्यैवेषं स्तुतिरिति तु माधवः । यस्तु—'दिक्पञ्चदशभिस्तथा-इति वेधः, स उपवासातिरिक्तविषय इति माधवः । 'सर्वप्रकारवे' धोयमुपवासस्य दूषकः । सार्धसप्तमुहूर्तस्तु योगोयं बाधते व्रतम् ॥' इति निगमादित्यलम् । अत्र माधवमते वैष्णवैररुणोदयविद्धा त्याज्या । यदा त्वेकादश्येव शुद्धा सती वर्धते द्वादशी वा उभयं वा तदा परोपोष्या । 'एकादशी द्वादशी वाधिका चेत्त्यज्यतां दिनम् । पूर्वं ग्राह्यं तूत्तरं स्यादिति वैष्णवनिर्णयः ॥ इति माधवोक्तेः । स्मार्तैस्तु सूर्योदयविद्धा त्याज्या । यदा त्वेकादशी शुद्धा सती वर्धते द्वादशी च समा न्यूना वा तदा गृहस्थैः पूर्वा यतिभिरुत्तरा कार्या । 'प्रथमेऽहनि संपूर्णा व्याप्याहोरात्रसंयुता । द्वादश्यां च तथा तात दृश्यते पुनरेव च ॥ पूर्वा कार्या गृहस्थैश्च यतिभिश्चोत्तरा विभो ॥' इति स्कान्दोक्तेः । वर्धमानोप्येवमेवाह । उभयवृद्धौ तु शुद्धा विद्धा वा सर्वेषां परैव । 'संपूर्णैकादशी यत्र प्रभाते पुनरेव सा । सर्वैरेवोत्तरा कार्या परतो द्वादशी यदि ॥' इति नारदोक्तेः । द्वादशीमात्रवृद्धौ तु शुद्धायां पूर्वैव । 'न चेदेकादशी विष्णौ द्वादशी परतः स्थिता । उपोष्यैकादशी तत्र यदी-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

च्छेत्परमं पदम् ॥' इति नारदोक्तेः । 'द्वादशीमात्रवृद्धौ तु शुद्धाविद्धे व्यवस्थिते । शुद्धा पूर्वोत्तरा विद्धा स्मार्तनिर्णय ईदृशः ॥' इति माधवोक्तेश्च । मदनरत्नेऽप्येवम् । यत्तु—'विद्धाप्यविद्धा विज्ञेया परतो द्वादशी न चेत् । अविद्धापि च विद्धा स्यात्परतो द्वादशी यदि ॥' इति हेमाद्रौ पाद्मवचनं, तदेकादश्या वृद्धौ ज्ञेयम् । तदुक्तं माधवेन—एकादशी द्वादशी चेत्युभयं वर्धते यदा । तदा पूर्वं दिनं त्याज्यं स्मार्तैर्ग्राह्यं परं दिनम् ॥' इति । विद्धैकादश्यां द्वादशीमात्रवृद्धौ च सर्वेषां परैव । तत्रैवैकादशीमात्रवृद्धौ गृहिणः पूर्वा यतेरुत्तरा । पूर्वोक्तपाद्मोक्तेः । 'एकादशी विवृद्धा चेच्छुक्ले कृष्णे विशेषतः । उत्तरां तु यतिः कुर्यात् पूर्वामुपवसेद् गृही ॥' इति प्रचेतसोक्तेः । एतच्छुद्धाविद्धातुल्यमिति माधवः । 'त्रयोदश्यां न लभ्येत द्वादशी यदि किञ्चन । उपोष्यैकादशी तत्र दशमीमिश्रितापि च ॥' इति स्कान्दात् । 'अविद्धानि निषिद्धैश्च न लभ्यन्ते दिनानि तु । मुहूर्तैः पञ्चभिर्विद्धा ग्राह्यैवैकादशी तिथिः ॥' इत्यृष्यशृङ्गोक्तेश्च । मुहूर्तपञ्चकमरुणोदयमारभ्य ज्ञेयम् । अन्यथोत्तरेऽह्नि एकादश्यभावासम्भवात् । यदपि हेमाद्रिणा—'शुद्धसमा शुद्धन्यूना वा अधिकद्वादशिका चेत्सर्वेषां परैव' इत्युक्तं, तदपि वैष्णवविषयम् । स्मार्तानां तु पूर्वैवेत्यविरोधः ।

हेमाद्रिमते तूच्यते । तत्र—'शुद्धा विद्धा द्वयी नन्दा त्रेधा न्यूनसमाधिकैः । षट्प्रकाराः पुनस्त्रेधा द्वादश्यूनसमाधिकैः ॥' इत्यष्टादशैकादशीभेदाः । तत्र शुद्धाधिकन्यूनद्वादशिका शुद्धाधिकसमद्वादशिका च सकामैः पूर्वा निष्कामैरुत्तरा कार्या । 'प्रथमेहनि संपूर्णा' इति पूर्वोक्तस्कान्दात् । ऊनद्वादशिकायां तु विष्णुप्रीतिकामैरुपवासद्वयं कार्यम् । 'संपूर्णैकादशी यत्र प्रभाते पुनरेव सा । लुप्यते द्वादशी तस्मिन्नुपवासः कथं भवेत् ॥ उपोष्ये द्वे तिथी तत्र विष्णुप्रीणनतत्परैः ॥" इति वृद्धवसिष्ठोक्तेः । शुद्धन्यूना शुद्धाधिका शुद्धसमा विद्धन्यूना विद्धसमा वाधिकद्वादशिका चेत्सर्वेषां परैवेति हेमाद्रिः । मदनरत्ने तु शुद्धाधिका परा । 'संपूर्णैकादशी यत्र'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

इति पूर्वोक्तेः । अन्या पूर्वा । 'शुद्धा यदा समा हीना समा हीनाधिकोत्तरा । एकादशीमुपवसेन्न शुद्धां वैष्णवीमपि ॥' इति स्कान्दात् । शुद्धा एकादशी उत्तरा द्वादशी 'न चेदेकादशी विष्णौ' इति नारदोक्तेश्च । यत्तु–'अविद्धापि च विद्धा स्यात्' इति' पाद्मं तच्छुद्धाधिकापरम् । यत्तु–'संपूर्णैकादशी त्याज्या परतो द्वादशी यदि । उपोष्या द्वादशी शुद्धा द्वादश्यामेव पारणम् ॥' इत्यादि तद्वैष्णवपरम् । स्मार्तानां तु पूर्वैवेत्युक्तम । विद्धन्यूना समद्वादशिका तु मुमुक्षूणां पुत्रवतां च परा । अन्येषां पूर्वा । पुत्रवतोपि पूर्वेति मदनरत्ने । विद्धन्यूना न्यूनद्वादशिका सैव सर्वैः कार्येति हेमाद्रिः । मुमुक्षूणां परान्येषां पूर्वेति मदनरत्ने । विद्धसमा समद्वादशिकोनद्वादशिका च मुमुक्षुभिः पराऽन्यैः पूर्वाः कार्या। 'दशमीमिश्रिता पूर्वा द्वादशी यदि लुप्यते। शुद्धैव द्वादशी राजन्नुपोष्या मोक्षकांक्षिभिः ॥' इति व्यासोक्तेः । मोक्षकांक्षिग्रहणादन्येषां पूर्वैव । 'सर्वत्रैकादशी कार्या द्वादशीमिश्रिता नरैः । प्रातर्भवतु वा मा वा यतो नित्यमुपोषणम् ॥' इति पाद्मोक्तेः । विद्धाधिका समद्वादशिका च सर्वेषां पूर्वैव । 'पारणाहे न लभ्येत द्वादशी कलयापि चेत् । तदानीं दशमीविद्धाप्युपोष्यैकादशी तिथिः ॥' इति ऋष्यश्रृङ्गोक्तेश्च । माधवमते तु अत्र गृहिणः पूर्वा, यतेरुत्तरा । विद्धाधिका न्यूनद्वादशिका मोक्षपापक्षयविष्णुप्रीतिकामैः परा कार्या । गृहस्थेन तु नक्तं कार्यम् । एकादशी द्वादशी च रात्रिशेषे त्रयोदशी । उपवासं न कुर्वीत पुत्रपौत्रसमन्वितः ॥' इति कौर्मे दिनक्षये उपवासनिषेधात् । 'दशम्यैकादशी विद्धा द्वादशी च क्षयं गता । क्षीणा सा द्वादशी ज्ञेया नक्तं तु गृहिणः स्मृतम् ॥' इति वृद्धशातातपोक्तेश्च गृहिणः पूर्वत्रोपपवासः । एकादश्याः शुद्धन्यूनत्वे शुद्धसमत्वे वा द्वादश्या न्यूनसमत्वयोरेकादश्यामुपवासः । यानितु–'दशम्यनुगता हन्ति द्वादश द्वादशीफलम् । धर्मापत्यधनायूंषि त्रयोदश्यां तु पारणम् ॥' इति कौर्मादीनि दशमीवेधत्रयोदशीपारणयोर्निषेधकानि तानि विहितभिन्नपराणि । अत्र मूलवचनानि तद्व्यवस्था चाकरे ज्ञेया । यत्तु

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कालहेमाद्रौ—'बहुवाक्यविरोधेन संदेहो जायते यदा। द्वादशी तु तदा ग्राह्या त्रयोदश्यां तु पारणम् ॥' इति मार्कण्डेयोक्तेः। 'संदिग्धेषु च वाक्येषु द्वादशीं समुपोषयेत्।' तथा—'विवादेषु च सर्वेषु द्वादश्यां समुपोषणम्। पारणं च त्रयोदश्यामाज्ञेयं मामकी मुने॥' इति पाद्मोक्तेश्च। वेधसंदेहे ज्योतिर्विदां विप्रतिपत्तौ वा परा कार्येत्युक्तम्, तद्वैष्णवविषयमित्यलं बहुना।

किंचिदुपयुक्तम्।

अथात्रोपयुक्तं किंचिदुच्यते। तत्र दशम्यामेकादशीयोगे दशमीमध्ये एव भोजनं कार्यम्। 'एकादश्यां न भुञ्जीत' इति तस्या एव निमित्तत्वात्। 'निषेधस्तु निवृत्त्यात्मा कालमात्रमपेक्षते।' इति देवलोक्तेश्च। केचित्तु एकादशीव्रताङ्गत्वेन पूर्वेद्युरेकभक्तविधानाद्विधिस्पृष्टे च निषेधानवकाशान्न काम्यव्रताङ्गे भोजननिषेधः प्रवर्तते, तेनैकादशीमध्येऽपि पूर्वदिने भोजनमित्याहुः।

अधिकारी।

अत्राधिकारी माधवीये कात्यायनेनोक्तः—'अष्टवर्षाधिको मर्त्यो ह्यशीतिन्यूनवत्सरः। एकादश्यामुपवसेत्पक्षयोरुभयोरपि ॥' इति। भविष्ये—'ब्रह्मचारी च नारी च शुक्लामेव सदा गृही।' इति। यत्तु विष्णुः—'पत्यौ जीवति या नारी उपोष्य व्रतमाचरेत्। आयुष्यं हरते भर्तुर्नरकं चैव गच्छति॥' इति तद्भर्त्रननुज्ञाविषयमिति प्रागुक्तम्।

निर्णये उपवासासामर्थ्ये

तु मार्कण्डेयकौर्मयोः—'एकभक्तेन नक्तेन तथैवायाचितेन च। उपवासेन दानेन न निर्द्वादशिको भवेत्॥' अत्र—'एकभक्तेन यो मर्त्य उपवासव्रतं चरेत्।' इत्येकभक्तादिषूपवासशब्दस्तद्धर्मातिदेशार्थः। ते तत्प्रयुक्ताः सर्वे धर्माः संकल्पमन्त्रे चैकभक्तादिपदेनोहः कार्य इति मदनरत्ने। तथाऽसामर्थ्ये प्रतिनिधिना कारयेदिति प्रागुक्तम्। व्रताकरणे प्रायश्चित्तमाह माधवीये कात्यायनः—'अर्के पर्वद्वये रात्रौ

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

चतुर्दश्यष्टमीदिवा । एकादश्यामहोरात्रं भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥' इति ।

अथ काम्यव्रतविधिः ।

लघुनारदीये—'दशम्यादि महीपाल त्रिदिनं परिवर्जयेत् । गन्धताम्बूलपुष्पादि स्त्रीसंभोगं महायशाः ॥' तत्र दशम्यां विधिः कौर्मे—'कांस्यं मांसं मसूरांश्च चणकान् कोरदूषकान् । शाकं मधु परान्नं च त्यजेदुपवसन् स्त्रियम् ॥' तथा—'शाकं मांसं मसूरांश्च पुनर्भोजनमैथुने । द्यूतमत्यम्बुपानं च दशम्यां वैष्णवस्त्यजेत् ॥' मदनरत्ने नारदीये—'अक्षारलवणाः सर्वे हविष्यान्ननिषेविणः । अवनीतल्पशयनाः प्रियासंगमवर्जिताः ॥'

व्रतघ्नान्याह—

हेमाद्रौ देवलः—'असकृज्जलपानाच्च सकृत्ताम्बूलचर्वणात् । उपवासः प्रणश्येत दिवास्वापाच्च मैथुनात् ॥' अशक्तौ तु मदनरत्ने देवलः—'अत्यये चाम्बुपानेन नोपवासः प्रणश्यति ।' अत्यये कष्टे । विष्णुरहस्ये—'गात्राभ्यङ्गं शिरोभ्यङ्गं ताम्बूलं चानुलेपनम् । व्रतस्थो वर्जयेत्सर्वं यच्चान्यत्र निराकृतम् ॥'

एषु प्रायश्चित्तमुक्तं निर्णयामृते संग्रहे—

'स्तेनहिंसकयोः सख्यं कृत्वा स्तैन्यं च हिंसनम् । प्रायश्चित्तं व्रती कुर्याज्जपेन्नाम शतत्रयम् ॥ मिथ्यावादे दिवास्वापे बहुशोम्बुनिषेवणे । अष्टाक्षरं व्रती जप्त्वा शतमष्टोत्तरं शुचिः ॥' 'ॐनमो नारायणाय' इत्यष्टाक्षरः । तत्रैव पैठीनसिः—'ताम्बूलचर्वणे स्त्रीसंभोगे मांसनिषेवणे । व्रतलोपो न चेत्कुर्यात्कृष्णावद्धुजिवर्जनम् ॥' इति । कृष्णैकादशीवद्भोजननिषेधमात्रपरिपालने तु ताम्बूलचर्वणादावपि न दोष इत्यर्थः । संभोगो ऋतुकालादन्यत्र—'रेतः सेकात्मसंभोगमृतेऽन्यत्र क्षयः स्मृतः ।' इति कात्यायनोक्तेः । हेमाद्रौ वसिष्ठः—उपवासे तथा श्राद्धे न कुर्याद्दन्तधावनम् । दन्तानां काष्ठसंयोगो दहत्यासप्तमं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कुलम् ॥' काष्ठग्रहणान्मृल्लोष्ठाद्यनिषेध इति हेमाद्रिः। विष्णुरहस्ये—'श्राद्धोपवासदिवसे खादित्वा दन्तधावनम्। गायत्र्या शतसंपूतमम्बु प्राश्य विशुध्यति ॥' निर्णयामृते व्यासः—'वर्जयेत्पारणे मांसं व्रताहेप्यौषधं सदा।' इति ॥

एकादश्यां श्राद्धप्राप्तौ तन्निर्णयः।

माधवीये कात्यायन आह—'उपवासो यदा नित्यः श्राद्धं नैमित्तिकं भवेत्। उपवासं तदा कुर्यादाघ्राय पितृसेवितम् ॥ मातापित्रोः क्षये प्राप्ते भवेदेकादशी यदि। अभ्यर्च्य पितृदेवांश्च आजिघ्रेत्पितृसेवितम् ॥' इति। हेमाद्र्यादिसर्वनिबन्धेष्वप्येवम्। एतेनैकादशीनिमित्तकं श्राद्धं द्वादश्यां कार्यमिति वदन्तः परास्ताः। किंच महालये—'स पक्षः सकलः पूज्यः श्राद्धषोडशकं प्रति।' इति श्रुतं षोडशत्वं पौषैकादश्यां च मन्वादिश्राद्धं क्षयाहापरिज्ञाने च तत्पक्षैकादश्यां विहितं श्राद्धं वाधितमेव स्यात्। यदपि स्मृतिचन्द्रिकास्थं पठन्ति—'अन्नाश्रितानि पापानि तद्भोक्तुर्दातुरेव च। मज्जन्ति पितरस्तस्य नरके शाश्वतीः समाः ॥' इति। तस्यापि रागप्राप्तभुजिगोचरस्य वैधं श्राद्धं गोचरयतां महत्साहसमित्यलम्। योपि—'अकृतश्राद्धनिचया जलपिण्डं विना कृताः।' इति लघुनारदीये एकादश्यां श्राद्धादिनिषेधः स मातापितृभिन्नविषयः। पूर्ववाक्ये तद्ग्रहणात्। निचयः प्रतिग्रहः ॥

व्रतघ्नानि।

अव्रतघ्नान्याह मदनरत्ने देवलः—सर्वभूतभयं व्याधिः प्रमादो गुरुशासनम्। अव्रतघ्नानि पठ्यन्ते सकृदेतानि शास्त्रतः ॥' स्कान्देपि—'अष्टौ तान्यव्रतघ्नानि आपो मूलं फलं पयः। हविर्ब्राह्मणकाम्या च गुरोर्वचनमौषधम् ॥' इदं चातिसंकटविषयम्। नारदीये—अनुकल्पो नृणां प्रोक्तः क्षीणानां वरवर्णिनि। मूलं फलं पयस्तोयमुपभोग्यं भवे-

१—दन्तधावननिषेधे तत्प्रतिनिधिरूपतया व्यासवचनमुक्तं मयूखे—'अलाभे दन्तकाष्ठानां निषिद्धायां तिथौ तथा। अपां द्वादशगण्डूषैर्विदध्याद्दन्तधावनम् ॥' इति। तथा पैठीनसिः—'अलाभे वा निषेधे वा काष्ठानां दन्तधावने। पर्णादिना विशुद्धयेत जिह्वोल्लेखं सदैव च ॥' इति।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

च्छुभे ॥ नत्वेव भोजनं कैश्चिदेकादश्यां बुधैः स्मृतम् ॥' इति । अस्यापवादः—'शयने च मदुत्थाने मत्पार्श्वपरिवर्तने । नरो मूलफलाहारी हृदि शल्यं ममार्पयेत् ॥' एते चाविरोधिनो निर्णयाः सर्वव्रतेषु ज्ञेयाः ।

व्रतसंकल्पः ।

तत्रैकादश्यां संकल्पः-'गृहीत्वौदुम्बरं पात्रं वारिपूर्णमुदङ्मुखः । उपवासं तु गृह्णीयाद्यद्वा वार्येव धारयेत् ॥' इति माधवीये वाराहोक्तेः । मन्त्रस्तु विष्णूक्तः—'एकादश्यां निराहारः स्थित्वाहमपरेऽहनि । भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत ॥' इति शैवादीनां तु हेमाद्रौ सौरपुराणे—'सावित्र्याप्यथवा नाम्ना संकल्पं तु समाचरेत् । शिवादिगायत्र्यो यजुर्वेदे प्रसिद्धाः । वाराहे—'इत्युच्चार्य ततो विद्वान् पुष्पाञ्जलिमथार्पयेत् । ततस्तज्जलं पिबेत् । 'अष्टाक्षरेण मन्त्रेण त्रिर्जप्तेनाभिमन्त्रितम् । उपवासफलं प्रेप्सुः पिबेत्पात्रगतं जलम् ॥' इति कात्यायनोक्तेः । मध्यरात्रे उदये वा दशमीविधे रात्रौ संकल्प इति माधवः । 'दशम्याः सङ्गदोषेण अर्धरात्रात्परेण तु । वर्जयेच्चतुरो यामान्संकल्पार्चनयोस्तदा ॥ विद्धोपवासेऽनश्नंस्तु दिनं त्यक्त्वा समाहितः । रात्रौ संपूजयेद्विष्णुं संकल्पं च तदाचरेत् ॥ इति नारदीयोक्तेः । तत्रैव पूजामभिधाय—'देवस्य पुरतः कुर्याज्जागरं नियतो व्रती ।'

१—शिवादिगायत्र्यो यथा—'ॐ पुरुषस्य विद्महे सहस्राक्षस्य महादेवस्य धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥ १ ॥ ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥ २॥ ॐ तत्पुपाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि । तन्नो दन्तिः प्रचोदयात् ॥ ३ ॥ ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महासेनाय धीमहि । तन्नः षण्मुखः प्रचोदयात् ॥ ४ ॥ ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि । तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥ ५ ॥ ॐ वज्रनखाय विद्महे तीक्ष्ण दंष्ट्राय धीमहि । तन्नो नारसिंहः प्रचोदयात् ॥ ६ ॥ ॐ भास्कराय विद्महे महद्द्युतिकराय धीमहि । तन्नो आदित्यः प्रचोदयात् ॥ ७ ॥ ॐ वैश्वानराय विद्महे लालीलाय धीमहि । तन्नो अग्निः प्रचोदयात् ॥ ८ ॥ ॐ कात्यायनाय विद्महे कन्यकुमारि धीमहि । तन्नो दुर्गिः प्रचोदयात् ॥ ९ ॥' इति क्रमेण शिव-गणपति-षडानन-विष्णु-नृसिंह-भास्कर-अग्नि-दुर्गाणां ज्ञेयाः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

द्वादश्यां व्रतनिवेदनमन्त्रः ।

द्वादश्यां निवेदनमन्त्र उक्तः कात्यायनेन–'अज्ञानतिमिरान्धस्य व्रतेनानेन केशव । प्रसीद सुमुखो नाथ ज्ञानदृष्टिप्रदो भव ॥' इति नारदीये–'ब्राह्मणान् भोजयेच्छक्त्या दद्याद्वै दक्षिणां ततः' स्कान्देपि–'कृत्वा चैवोपवासं तु योऽश्नीयाद्द्वादशीदिने । नैवेद्यं तुलसीमिश्रं हत्याकोटिविनाशनम् ॥'

द्वादश्यां वर्ज्यपदार्थाः ।

द्वादश्यां च वर्ज्यान्याह बृहस्पतिः–'दिवा निद्रा परान्नं च पुनर्भोजनमैथुने । क्षौद्रं कांस्यामिषं तैलं द्वादश्यामष्ट वर्जयेत् ॥' हेमाद्रौ ब्रह्माण्डपुराणे–'पुनर्भोजनमध्यायो भार आयासमैथुने । उपवासफलं हन्युर्दिवा निद्रा च पञ्चमी ॥' स्कान्दे–'परान्नं कांस्यताम्बूले लोभं वितथभाषणम् ।' वर्जयेदिति शेषः । विष्णुधर्मे–'असंभाष्यान्हि संभाष्य तुलस्यतसिकादलम् । आमलक्याः फलं चापि पारणे प्राश्य शुध्यति ॥' बृहन्नारदीये–रजस्वलां च चाण्डालं महापातकिनं तथा । सूतिकां पतितं चैव उच्छिष्टं रजकादिकम् ॥ व्रतादिमध्ये शृणुयाद्येषां ध्वनिमुत्तमः । अष्टोत्तरसहस्रं तु जपेद्वै वेदमातरम् ॥'

आशौचे द्वादशीव्रतम् ।

एतद्व्रतं सूतकेऽपि कार्यम् । 'सूतके मृतके चैव न त्याज्यं द्वादशी व्रतम्' इति विष्णूक्तेः । तत्र त्यक्तं दानादि सूतकान्ते कार्यम् । सूतकान्ते नरः स्नात्वा पूजयित्वा जनार्दनम् । दानं दत्वा विधानेन व्रतस्य फलमश्नुते ॥' इति मात्स्योक्तेः ।

१—कांस्यं मांसं सुरां क्षौद्रं लोभं वितथ भाषणम् । व्यायामश्च व्यवायश्च दिवास्वप्नं तथाञ्जनम् । शिलापिष्टं मसूरांश्च द्वादशैतानि वैष्णवः । द्वादश्यां वर्जयेन्नित्यं सर्वपापैः प्रमुच्यते । पुनर्भोजनमध्वानम् यानमायासमैथुने । उपवासफलं हन्युर्दिवानिद्रा च पञ्चमी ॥ इति स्मृतितत्वे ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

रजस्वलाया एकादशी ।

रजोदर्शनेऽपि कार्यम् । 'एकादश्यां न भुञ्जीत नारी दृष्टे रजस्यपि ।' इति पुलस्त्योक्तेः । यदा द्वादश्यां श्रवणर्क्षं तदा शुद्धामप्येकादशीं त्यक्त्वा तत्रैवोपवासः कार्यः । 'शुक्ला वा यदि वा कृष्णा द्वादशी श्रवणान्विता । तयोरेवोपवासश्च त्रयोदश्यां च पारणम् ॥' इति नारदीयोक्तेः । एते च नियमाः काम्यव्रते नियताः, नित्यव्रते सति संभवे कार्याः । 'शक्तिमांस्तु पुमान्कुर्यान्नियमं सविशेषणम् ।' इति कात्यायनोक्तेः । अशक्तौ तु माधवीये ब्रह्मवैवर्ते—'इति विज्ञाय कुर्वीतावश्यमेकादशीव्रतम् । विशेषनियमाशक्तोऽहोरात्रं भुजिवर्जितः ॥' इति ॥

अथाष्टौ महाद्वादश्यः ।

तत्र शुद्धाधिकैकादशीयुता द्वादशी उन्मीलिनीसंज्ञा । द्वादश्येव शुद्धाधिका वर्धते चेत्सा वञ्जुली । वासरत्रयस्पर्शिनी त्रिस्पृशा । अग्रे पर्वणः संपूर्णाधिकत्वे पक्षवर्धिनी । पुष्यर्क्षयुता जया । श्रवणयुता विजया । पुनर्वसुयुता जयन्ती । रोहिणीयुता पापनाशिनी । एताः पापक्षयमुक्तिकाम उपवसेत् । अत्र मूलं हेमाद्रौ ज्ञेयम् । एकादशीद्वादश्योरेकत्वे तन्त्रेणोपवासः । पार्थक्ये तु शक्तस्योपवासद्वयम् । 'एकादशीमुपोष्यैव द्वादशीं समुपोषयेत् ।' इति विष्णुरहस्यात् । अशक्तौ तु द्वादश्यामेव । 'एवमेकादशीं त्यक्त्वा द्वादशीं समुपोषयेत् पूर्ववासरजं पुण्यं सर्वं प्राप्नोत्यसंशयम् ॥' इति तत्रैवोक्तेः । यदा स्वल्पा द्वादशी तदोक्तं मात्स्ये—'यदा भवति चाल्पापि द्वादशी पारणादिने । उषःकाले द्वयं कुर्यात्प्रातर्माध्याह्निकं तदा ॥' नारदीयेपि

१—नारी विधवा । सधवाया निषेधात् । तथा च विष्णुः—पत्यौ जीवति या नारी उपोष्य व्रतमाचरेत् । आयुष्यं हरते पत्युर्नरकं चैव गच्छति । तथा च । बहुकालिकसंकल्पो गृहीतश्च पुरा यदि । मृतके सूतके चैव व्रतं तन्नैव दुष्यति । एतेन काम्यव्रतारम्भोऽशौचे न कार्य्यः । मत्स्यपुराणे—गर्भिणी सूतिका नक्तं कुमारी च रजस्वला । यदा शुद्धा तदान्येन कारयेत् क्रियते सदा ॥ उपवासाचरणे गर्भादिपीडा संभावनायाम् । नक्तं भोजनं कुर्य्यात् । "उपवासेष्वशक्तानां नक्तं भोजनमिष्यते, इति स्वयमशुद्धा शुद्धद्वारा कारयेत । इति । अस्मद्गुरुचरणाः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'अल्पायामथ विप्रेन्द्र द्वादश्यामरुणोदये । स्नानार्चनक्रियाः कार्या दानहोमादिसंयुताः ॥' इति ।

प्रदोषादिसंकटे निर्णयः ।

संकटे तु माधवीये देवलः—संकटे विषमे प्राप्ते द्वादश्यां पारयेत्कथम् । अद्भिस्तु पारणां कुर्यात्पुनर्भुक्तं न दोषकृत् ॥ ' इति । संकटे त्रयोदशीश्राद्धप्रदोषादौ । अत्र केचिदाहुः—'अपकर्षवाक्यान्यनाहिताग्निविषयाणि । अग्निहोत्रादीनां श्रौतत्वेनापकर्षायोगात्' इति ।

हरिवासरलक्षणम् ।

द्वादश्यां च प्रथमपादमतिक्रम्य पारणं कार्यम् । 'द्वादश्यां प्रथमः पादो हरिवासर संज्ञितः । तमतिक्रम्य कुर्वीत पारणं विष्णुतत्परः ॥' इति निर्णयामृते मदनरत्ने च विष्णुधर्मोक्तेः । अत्र केचित्संगिरन्ते—'यदा भूयसी द्वादशी तदापि प्रातर्मुहूर्तत्रये पारणं कार्यम् । 'सर्वेषामुपवासानां प्रातरेव हि पारणम् ।' इति वचनात् इति । अस्मद्गुरवस्तु—'बहूनां कर्मकालानां विना कारणं बाधापत्तेः प्रागुक्तवचनैश्च अल्पद्वादश्यामेवापकर्षविधानादपराह्ण एव कार्यम् । प्रातःशब्दस्तु—'सायंप्रातर्द्विजातीनामशनं श्रुतिचोदितम् ।' इतिवदपराह्णवाचित्वेप्युपपन्नः । नच वाक्यवैयर्थ्यं, पुनर्भोजनसायंपारणनिवृत्त्यर्थत्वात्तस्या' इत्याहुः ।

उपवासातिक्रमे ।

प्रमादेन एकादश्युपवासातिक्रमे अपरार्के वाराहे—'एकादशी विप्लुता चेद् द्वादशी परतः स्थिता । उपोष्या द्वादशी तत्र यदीच्छेत्परमं पदम् ॥' इति । कैश्चित्तु विष्णुना चेदिति पठितम् । अत्राविरोधिनो नियमाः सर्वव्रतेषु बोद्धव्याः । अन्ये च नवरात्रे वक्ष्यन्ते इति दिक् ॥ इति श्रीरामकृष्णभट्टात्मजकमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ एकादशीनिर्णयः ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

द्वादशीनिर्णयः ।

द्वादशी तु पूर्वैव युग्मवाक्यात्—'द्वादशी तु प्रकर्तव्या एकादश्या युता प्रभो ।' इति स्कान्दाच्च ॥

त्रयोदशीनिर्णयः ।

त्रयोदशी तु सर्वमते शुक्ला पूर्वा कृष्णोत्तरा । 'त्रयोदशतिथिः पूर्वः सितोत्थोथाऽसितः पश्चात्' इति दीपिकोक्तेः । 'शुक्ला त्रयोदशी पूर्वा परा कृष्णा त्रयोदशी ।' इति माधवाच्च ॥

चतुर्दशीनिर्णयः ।

चतुर्दशी सर्वमते कृष्णा पूर्वा शुक्लोत्तरा । उपवासे तु द्वय्यपि परेति मदनरत्ने ॥

पूर्णिमामावास्यानिर्णयः ।

पौर्णमास्यमावास्ये तु सावित्रीव्रतं विना परे ग्राह्ये । 'भूतविद्धे न कर्तव्ये दर्शपूर्णे कदाचन । वर्जयित्वा मुनिश्रेष्ठ सावित्रीव्रतमुत्तमम् ॥' इति ब्रह्मवैवर्तात् । अमायां सोमवारादियोगे संयोगलक्षणो व्यतीपातः । अमायां योगविशेषमाहाऽपरार्के शातातपः—'अमावास्यां भवेद्वारो यदा भूमिसुतस्य वै । जाह्नवीस्नानमात्रेण गोसहस्रफलं लभेत् ॥ अमा वै सोमवारेण रविवारेण सप्तमी । चतुर्थी भौमवारेण विषुवत्सदृशं फलम् ॥' तत्रैव व्यासः—'सिनीवाली कुहूर्वापि यदि सोमदिने भवेत् । गोसहस्रफलं दद्यात्स्नानं वै मौनिना कृतम् ॥' हेमाद्रौ बृहन्मनुः—'श्रवणाश्विधनिष्ठार्द्रा नागदैवतमस्तके । यद्यमा रविवारेण व्यतीपातः स उच्यते ॥' नागदैवतं आश्लेषा, मस्तको मृगशिरः, प्रथमपाद इत्यन्ये स च सर्वेषाम् ॥

१—तदाह हेमाद्रौ गार्ग्यः—एकादशी तथा षष्ठी अमावस्या चतुर्थिका । उपोष्याः परसंयुक्ताः परा पूर्वेण संयुताः ॥ इति । द्वितीया पञ्चमी वेधाद्दशमी च त्रयोदशी । चतुर्दशी चोपवासे हन्युः पूर्वोत्तरे तिथी ॥—इति वचनैः परिविद्धा निषेधात् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथेष्टिकालः ।

गोभिलः—'पक्षान्ता उपवस्तव्याः पक्षादयोऽभियष्टव्याः' इति । उपवासोऽन्वाधानम् । तत्र मध्याह्ने तत्पूर्वं वा पर्वप्रतिपत्संधौ तद्दिने यागः । पूर्वाह्णे वाथ मध्याह्ने यदि पर्व समाप्यते । उपोष्य तत्र पूर्वेद्युस्तदहर्याग इष्यते ॥' इति लौगाक्षिवचनात् । तत्र च द्वेधा विभागः—'आवर्तनात्तु पूर्वाह्णो ह्यपराह्णस्ततः परः । मध्याह्नस्तु तयोः संधिर्यदावर्तनमुच्यते ॥' इति मदनरत्ने वचनात् । मध्याह्ना-दूर्ध्वसंधौ माधवमते परेऽह्नि यागः । "अपराह्णेऽथवा रात्रौ यदि पर्व समाप्यते । उपोष्य तस्मिन्नहनि श्वोभूते याग इष्यते ॥' इति लौगाक्षिणोक्तेः । हेमाद्रिस्त्वपराह्णसंधावपि परदिने प्रतिपच्चतुर्थांशे चन्द्रोदये च सति द्वितीयादिष्वत्यन्तक्षये सति पूर्वेद्युर्यागः । 'पर्वणोंऽशे द्वितीये तु यष्टव्यं तु द्विजातिभिः । द्वितीयासहितं यस्माद्दूषयन्त्याश्वलायनाः ।' इति । द्वितीये त्विति कैमुतिकन्यायेन तुर्यांशपरम् । तुरीये त्विति शूलपाणौ पाठः स्पष्टार्थ एव । तथा—'भूता पञ्चदशी पूर्णा द्वितीया क्षयगामिनी । चरुरिष्टिरमायां स्याद्भूते कव्यादिकी क्रिया ॥' इति बौधायनवचनाच्चेत्यूचिवान् । मदनरत्नेपि—'चतुर्दशी चतुर्यामा अमावास्या न दृश्यते । श्वोभूते प्रतिपच्चेत्स्यात्पूर्वा तत्रैव कारयेत् ॥'—इति । यत्तु माधवः—'यस्तु वाजसनेयी स्यात्तस्य संधिदिनात्पुरा । न काप्यन्वाहितिः किं तु सदा संधिदिने हि सा ॥' इत्याह । यच्च कालादर्शेप्युक्तम्—'आवर्तनादधः संधिर्यद्यन्वाधाय तद्दिने । परेद्युरिष्टिरित्याहुर्विप्रा वाजसनेयिनः ॥' इति । यच्च मदनरत्ने—'मध्यंदिनात्स्यादहनीह यस्मिन् प्राक्पर्वणः संधिरियं तृतीया । सा खर्विका वाजसनेयिमत्या तस्यामुपोष्याथ परेद्युरिष्टिः ॥' इति । एतत्पौर्णमासीपरमिति तत्रैव । आवर्तनोर्ध्वमर्वागस्ताद्रात्रौ वा समाप्तौ द्वे मध्याह्नादर्वाक् समाप्तौ तृतीयेत्यर्थः । तत्कर्कभाष्यदेवजानिश्रीअनन्तभाष्यादिसकलतच्छाखीयग्रन्थविरोधाद् वृद्धानादराच्चोपेक्ष्यम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पौर्णमास्यां विशेषमाह ।

कात्यायनः-'संधिश्चेत्संगवादूर्ध्वं प्राक्पर्यावर्तनाद्रवेः । सा पौर्णमासी विज्ञेया सद्यस्कालविधौ नरैः ॥' अमायां विशेषमाह बौधायनः- 'द्वितीया त्रिमुहूर्ता चेत्प्रतिपद्यापराह्णिकी । अन्वाधानं चतुर्दश्यां परतः सोमदर्शनात्॥कात्यायनश्च-'यजनीयेऽह्निसोमश्चेद्वारुण्यांदिशि दृश्यते । तत्र व्याहृतिभिर्हुत्वा दण्डं दद्याद्विजातये ॥' इति । एतच्च बौधायनवाजसनेयिविषयम् । तैत्तिरीयश्रुतौ तु चन्द्रदर्शनेऽपि याग उक्तः- 'एषा वै सुमनानामेष्टिर्यमद्यजानन् । पश्चाच्चन्द्रमा अभ्युदेत्यस्मिन्नैवास्मै लोकेऽर्धुकं भवति' इति । श्रुत्यन्तरेऽपि-'यदहः पश्चाच्चन्द्रमा अभ्युदेति तदहर्यजन्निमाँल्लोकानभ्युदेति ।' इति । इदं बह्वृचापस्तम्बविषयम् । मदनरत्नेप्येवम् । आपस्तम्बभा-ष्यार्थसंग्रहेप्येवम् । अतः पक्षद्वयस्य स्वस्वसूत्राद्व्यवस्थेति तत्त्वम् । 'दूषयन्त्याश्वलायनाः' इति तु पूर्वाह्णसंधिविषयमिति माधवः ।

शेषपर्वणीष्टौ विशेषमाह माधवीये गार्ग्यः-'प्रतिपद्यप्रविष्टायां यदि चेष्टिः समाप्यते । पुनः प्रणीय कृत्स्नेष्टिः कर्तव्या यागवित्तमैः॥ गृह्याग्नेर्नायं नियम इति मदनपारिजातः । एवं पर्वान्त्यांशः प्रतिपदश्च त्रयोंऽशा यागकाल उक्तः ः क्वचित्प्रतिपत्तुर्यांशेऽपि यागः । 'संधिर्यद्यपराह्णे स्याद्यागं प्राप्तः परेहनि । कुर्वाणः प्रतिपद्भागे चतुर्थेपि न दुष्यति ॥' इति वृद्धशातातपोक्तेः । एतत् पूर्णिमापरमिति मदनरत्ने । पर्वणि प्रतिपदः क्षयस्य वृद्धेश्चार्धं प्रक्षिप्य संधिर्ज्ञेयः। तदाह माधवः- 'वृद्धिः प्रतिपदो यास्ति तदर्धं पर्वणि क्षिपेत् । क्षयस्यार्धं तथा क्षिप्त्वा संधिर्निर्णीयतां सदा ॥' इति । कात्यायनोपि-'परेह्नि घटिकान्यूनास्तथैवाभ्यधिकाश्च याः । तदर्थक्लृप्त्या पूर्वस्मिन् ह्रासवृद्धी प्रकल्पयेत् ॥' इति । एवं स्मार्तस्थालीपाकेपि ज्ञेयम् । तत्रेष्टिस्थालीपाकाधानगृहप्रवेशनीयहोमानन्तरभाविन्यां पौर्णमास्यां प्रारम्भणीयौ न तु दर्शे ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मलमासादौ प्रथमारम्भनिर्णयः ।

यद्यारम्भे मलमासपौषमासगुरुशुक्रास्तेतादि भवति, तदाप्याारम्भः कार्यः । यानि तु—"उपरागोऽधिमासश्च यदि प्रथमपर्वणि । तथा मलिम्लुचे पौषे नान्वारम्भणमिष्यते ॥ गुरुभार्गवयोर्मौढ्ये चन्द्रसूर्यग्रहे तथा ॥' इति संग्रहवचनानि, तानि आलस्यादिनातिक्रान्तशुद्धकालप्रारम्भविषयाणि । 'नामकर्म च दर्शेष्टिं यथाकालं समाचरेत् । अतिपाते सति तयोः प्रशस्ते मासि पुण्यभे ॥' इत्यपरार्के गर्गवचनादिति प्रयोगपारिजाते । उक्तं चैतत् प्रयोगरत्ने भट्टैः । कालादर्शे तु—'नामकर्म च जातेष्टिम्' इति पाठः । याज्ञिकास्तु—'आधानानन्तरा पौर्णमासी चेन्मलमासगा । तस्यामारम्भणीयादीन्न कुर्वीत कदाचन ॥' इति त्रिकाण्डमण्डनवचनाच्छुद्धकाल एव विभ्रष्टेष्टिं कृत्वारम्भं कुर्यादित्याहुः । कालादर्शे स्मृतिसंग्रहेपि—'आरम्भं दर्शपूर्णेष्ट्योरग्निहोत्रस्य चादिमम् । प्रतिष्ठाः पञ्च कूर्माद्या मलमासे विवर्जयेत् ॥' इति ।

अथ विकृतीष्टिः ।

तत्रापस्तम्बः—'यदीष्ट्या यदि पशुना यदि सोमेन यजेत सोमावास्यायां पौर्णमास्यां च' इति । अत्र प्रकृतितः काले सिद्धेपि सद्यस्कालता विधेया । तृतीयया साङ्गत्वेनोक्तेः । अत्र पौर्णमास्यमावास्याशब्दाभ्यां तदन्त्यक्षणो गृह्यते । तेन तद्वत्यहोरात्र इत्यर्थमाह रामाण्डारः । माधवोपि—'इष्ट्यादिविकृतिः सर्वा पर्वण्येवेति निर्णयः ।' इति । अत्र विशेषमाह त्रिकाण्डमण्डनः कात्यायनश्च—'आवर्तनात्प्राग्यदि पर्वसंधिः कृत्वा तु तस्मिन्प्रकृतिं विकृत्याः । तदैव यागः परतो यदि स्यात्तस्मिन्विकृत्याः प्रकृतेः परेद्युः ॥' इति । धूर्तस्वाम्यादयोप्येवमाहुः । 'यदीष्ट्या' इति साङ्गाया विकृतेः पर्वकालत्वादावर्तनात् प्राक्संधौ संधिमभितो यजेतेति प्रकृतेः प्रतिपदि समाप्तिनियमात् । प्रकृत्यनन्तरं प्रतिपदि विकृत्ययोगात् पूर्वेद्युर्विकृतिरित्युक्तम् । तन्त्ररत्ने पार्थसारथिना—'यद्यपि प्रकृतेः पूर्वत्वादपूर्वमन्ते स्यादि'त्यापस्तम्बेनो-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

क्तम्, तथापि हेतुवादेन श्रुतिमूलत्वाभावादङ्गं वा समभिव्याहारादितिवदप्रामाण्यमिति तदाशयः । आग्रयणे तु विशेषं वक्ष्यामः । 'अन्वारम्भणीया तु चतुर्दश्यां कार्या' इति हिरण्यकेशिवृत्तौ मातृदत्तीये । अन्येषां पर्वण्येव ।

पशुसोमयागकालः ।

पशौ सोमे च कालान्तरमप्याह बौधायनः—'अमावास्येन वा हविषेष्ट्वा नक्षत्रे च' इति शुक्लपक्षे कृत्तिकादिविशाखान्तेषु देवनक्षत्रेष्विति केशवस्वामी व्याचख्यौ । चातुर्मास्येष्वपि द्वादशाहयथाप्रयोगपक्षयोर्नक्षत्रेष्वप्यारम्भः । यावज्जीविसांवत्सरप्रयोगयोस्तु फाल्गुन्यां चैत्र्यां वारम्भः । पशौ तु विशेषमाह कात्यायनः—'अर्थादह्नो भवति नियतं पर्वसंधिः परस्तात्कृत्वा तस्मिन्नहनि तु पशुं सद्य एव द्व्यहं वा । आरभ्याथ प्रकृतिरथ चेत्पर्वसंधिः पुरस्तात्कृत्वा तस्मिन् प्रकृतिमथ तु स्यात्पशुः सद्य एव ॥' 'अधिकारपशुस्त्वग्नीषोमीयेण सवनीयेन वा समानतन्त्रो वा कार्यः' इति त्रिकाण्डमण्डनः । सोमे त्वाहापस्तम्बः—'अमावास्यायां दीक्षायजनीये वामावास्यायां यजनीये वा सुत्यमहः पौर्णमास्यां दीक्षायजनीये वा पौर्णमास्यां यजनीये वा सुत्यमहः' इति । लाट्यायनसूत्रेपि—'पूर्वपक्षस्य प्रथमेहनि दीक्षेत दृष्ट्वा वा नक्षत्रयोगे च' इति । पूर्वपक्षः शुक्लपक्षः । नक्षत्रयोगे चेत्ययमर्थः । चैत्र्यादिपूर्णिमायाश्चित्रानक्षत्रयोगे दीक्षेतेति ।

आधानकालः ।

आधानं तु पर्वणि नक्षत्रेषु चोक्तम् । तत्र पर्व नक्तं 'गार्हपत्यमादधीत' इत्यादि कर्मकालव्यापि ग्राह्यम् । दिनद्वये तत्त्वे परं ग्राह्यम् । संकल्पस्य पर्वणि लाभात् । पूर्वं नक्षत्रयोगे तदेव ग्राह्यम् । 'यत्र त्रीणि सन्निपतितान्यृतुर्नक्षत्रं च पर्व तत्समृद्धं विप्रतिषेधे ऋतुर्नक्षत्रं च बलीयः' इति हिरण्यकेशिसूत्रात् । ऋतुः 'वसन्ते ब्राह्मणोऽग्नीनादधीत' इत्यादिः । रेणुकारिकायां तु—'माघादिपञ्चमासेषु श्रावणे वाश्विने तथा । मार्गशीर्षे शुक्लपक्षे आधानमथ कारयेत् ॥' इत्युक्तम् । अत्र मूलं मृग्यम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

आधाननक्षत्राणि ।

आपस्तम्बसूत्रे 'कृत्तिका-रोहिणी-मृगशीर्ष-पुनर्वसु-पुष्य-पूर्वोत्तरा-पूर्वाषाढो-त्तराषाढा-हस्त-चित्रा-विशाखाऽनुराधा-श्रवणो-त्तरा-भाद्रपदा' इति । सोमपूर्वाधाने विशेषमाहापस्तम्बः—'सोमेन यक्ष्यमाणा आदधानो नर्तून्सूर्क्षेन्न नक्षत्रम्' इति । अत्र प्रकरणादाधानकालबाधः । तेन सोमस्य वसन्तकालता न बाध्यत इति रुद्रदत्तवृत्तौ नारायणवृत्तौ चोक्तम् । तन्त्ररत्ने वार्तिके च—'ते वा एते उभये अपहतपाप्मानो ऋतवः । एष वा उद्यन्नादित्य एषां पाप्मनोपहन्ता । यदैवैनं कदाचन यज्ञमुपनमेदथादधीत' इत्यत्रोत्तरायणरूपं च पित्र्यमित्युभयमृतुत्रयं सोमाधाने शतपथे विशिष्य विहितम् । तदेकवाक्यतया शाखान्तरेपि 'नर्तून् सूर्क्षेत्' इत्यत्र सोमकालबाध एव । आधानकालबाधस्य 'यदैवैनं श्रद्धोपनमेत्तदादधीत' इत्यस्यां शाखायां वाक्यान्तरेण सिद्धत्वात्सोमकालबाधार्थमेवेदमित्युक्तम् । धूर्तस्वामी तु सोमस्यापि य ऋतुस्तस्यापि न सूर्क्षेदिति लिखनादुभयकालबाधं मन्यते । श्रीरामाण्डारस्तु कालान्तरविधानं वा सर्वकालानादरो वेति पक्षद्वयमुक्तवान् । तत्राद्ये कृत्तिकादिकालान्तरस्य यथाधाने वसन्ताद्यबाधेन विधानम्, तथा 'सोमेप्युदगयनपूर्वपक्षपुण्याहसन्निपाते यज्ञकालानादेशः' इति छन्दोगसूत्रोक्तोदगयनाबाधेन सोमाभिसंधिरूपकालान्तरविधानादुदगयनं त्वपेक्षत इत्युक्तम् । द्वितीयपक्षे तु 'यदैवैनं यज्ञ उपनमेत्' इति सर्वकालानादर उक्त इति भारद्वाजसूत्रात्सर्वशब्दस्य च विश्वजित्सर्वपृष्ठ इतिवद् द्वयोरप्रयोगात् सर्वकालबाध इति तेन दक्षिणायनेपि भवतीत्युक्तम् । षड्गुरुभाष्ये देवत्रातभाष्ये तन्त्ररत्ने च षट्स्वपि ऋतुषु भवतीत्युक्तमिति दिक् ॥

अमावास्यायां श्राद्धनिर्णयः ।

श्राद्धे त्वमावास्या त्रेधा विभक्तदिनतृतीयांशे योऽपराह्णभागस्तद्व्यापिनी साग्निकैर्ग्राह्या । 'पिण्डान्वाहार्यकं श्राद्धं क्षीणे राजनि शस्यते । वासरस्य तृतीयेंशे नातिसंध्यासमीपतः ॥' इति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कात्यायनोक्तेः । 'दर्शश्राद्धं तु यत्प्रोक्तं पार्वणं तत्प्रकीर्तितम् । अपराह्ने पितृणां च तत्र दानं प्रशस्यते ॥' इति शातातपोक्तेश्च । दिनद्वये तत्र सत्त्वे सर्वापराह्णव्यापी दर्शो ग्राह्यः । 'यद्युभयेद्युरेव विहितः सर्वाऽपराह्णस्थितः' इति दीपिकोक्तेः । यत्तु कार्ष्णाजिनिः— 'भूतविद्धाममावास्यां मोहादजानतोपि वा । श्राद्धकर्मणि ये कुर्युस्तेषामायुः प्रहीयते ॥' इति । तदपराह्णे चतुर्दशीवेधपरमिति श्राद्धहेमाद्रिः । अपराह्णव्याप्तिपरमिति माधवः । दिनद्वयेऽपराह्णव्याप्त्यभावेंऽशतो व्याप्तौ च तिथिक्षये पूर्वेति हेमाद्रिः । 'यदा चतुर्दशी यामं तुरीयमनुपूरयेत् । अमावास्या क्षीयमाणा तदैव श्राद्धमिष्यते ॥' इति कात्यायनोक्तेः । चतुर्दश्याश्चतुर्थं यामं दर्शः पूरयेत् । चतुर्दशी यामत्रयं स्यादित्यर्थः । क्षीयमाणापरदिनेऽपराह्णव्यापिनी नेत्यर्थः । व्यतिरेकमाह—'वर्धमानाममावास्यां लक्षयेदपरेऽहनि । यामांस्त्रीनधिकान्वापि पितृयज्ञस्ततो भवेत् ॥' ततः श्राद्धं च । दिनद्वयेऽपराह्णव्याप्त्यादौ च हारीतः—'त्रिमुहूर्ता च कर्तव्या पूर्वा खर्वा च बह्वृचैः । कुहूरध्वर्युभिः कार्या यथेष्टं सामगीतिभिः ॥' त्रिमुहूर्ताभावे तु पूर्वा नेत्यर्थः ॥

पिण्डपितृयज्ञनिर्णयः ।

पिण्डपितृयज्ञस्तु कात्यायनैर्यागदिनात्पूर्वेद्युः कार्यः । 'पूर्वो वाङ्गत्वात् पिण्डपितृयज्ञः' इति तत्सूत्रात् । व्याख्यातं चैतत् कर्काचार्यैः—पूर्व एव दर्शात् पिण्डपितृयज्ञो न पश्चात् । कुतः अङ्गत्वात् । तथा च श्रुतिः—'तस्मात् पूर्वेद्युः पितृभ्यः क्रियत उत्तरमहर्देवान्यजन्ते' इति । 'पूर्वेद्युः पितृभ्यो यज्ञं निपृणीय प्रातर्देवेभ्यः प्रतनुते' इति च । तेन तन्मते अङ्गमेवासौ । तदुक्तम्—'अङ्गं वा समभिव्याहारात्' इति । तेन कर्कमते चतुर्दशीयुक्तदर्शे पिण्डपितृयज्ञ इति । श्रीअनन्तभाष्ये तु परेद्युरित्युक्तम् । अत्र द्वेधाप्याचारो दृश्यते ।

आपस्तम्बानां तु परदिने मुहूर्तमपि दर्शसत्त्वे तत्रैव पितृयज्ञः । तदाह आपस्तम्बः—'अमावास्यायां यदहश्चन्द्रमसं न पश्यति तदहः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पिण्डपितृयज्ञं कुरुते' इति अस्य रुद्रदत्तीया व्याख्या—'पिण्डैर्युक्तः पितृयज्ञः पिण्डपितृयज्ञः । स च कर्मान्तरं न तु दर्शशेषः । यथा वक्ष्यति—'पितृयज्ञः स्वकालविधानादनङ्गं स्यात्' इति । तं च 'यदहश्चन्द्रमसं न पश्यति पञ्चदश्यां प्रतिपदि वा तदहः कुरुते । यदहस्तयोः संधिस्तदहरित्यर्थः ।' इति । रामाण्डारोप्याह—'पिण्डपितृयज्ञस्तु पर्वसंधिमदहोरात्रापराह्णे' इति । अतः पर्वसंधिदिने पितृयज्ञः । शतपथश्रुतिरपि—'यदैवैष न पुरस्तान्न पश्चाद् दृश्यतेथ पितृभ्यो ददाति' इति । पर्वसंधिदिने हि पूर्वतः पश्चाद्वा चन्द्रो न दृश्यत एवेत्यर्थः । सत्याषाढोपि पितृयज्ञं प्रक्रम्य 'दृश्यमाने तूपोष्य श्वोभूते यजते' इत्याह । हेमाद्रिस्तु—'अमावास्याशब्दस्तिथिवचन एव । पूर्वोक्तापस्तम्बसूत्रे यदुक्तं न पश्यतीति तत्र क्षयोऽभिप्रेतः । अतश्चतुर्दश्यां चन्द्रमसश्च क्षीणत्वात्तद्युक्तदर्शे पितृयज्ञः । 'पितृयज्ञं तु निर्वर्त्य विप्रश्चन्द्रक्षयेऽग्निमान् ।' इति मनूक्तेः । 'यदुक्तं यदहस्त्वेव दर्शनं नैति चन्द्रमाः तत्क्षयापेक्षया ज्ञेयं क्षीणे राजनि चेत्यपि' इति, 'यदुक्तं दृश्यमानेपि तच्चतुर्दश्यपेक्षया' इति च कात्यायनोक्तेः । 'दृश्यमानेप्येके' इति गोभिलोक्तेः, यस्यां संध्यागतः सोमो मृणालमिव दृश्यते। अपराह्णे क्षयस्तस्यां पिण्डानां करणं ध्रुवम् ॥' इति हारीतोक्तेश्च । चन्द्रक्षयकालश्चोक्तः कात्यायनेन—'अष्टमेंशे चतुर्दश्याः क्षीणो भवति चन्द्रमाः । अमावास्याष्टमेंशे तु पुनः किल भवेदणुः ॥' इति । तेन पूर्वेद्युरेव पितृयज्ञ इत्यूचिवान् । कर्काचार्यैरपि—'अपराह्णे पिण्डपितृयज्ञश्चन्द्रादर्शनेऽमावास्यायाम्' इति कात्यायनसूत्रेऽदर्शनेन क्षय एवोक्तः । 'तस्मिन्क्षीणे ददाति' इति श्रुतेः । अतस्तन्मते चतुर्दशीयुक्तदर्शे पितृयज्ञे सति परदिने यागोऽर्थात्सिद्धः । तदेतत्सर्वोत्कृष्टमपि हेमाद्रिकर्कादिव्याख्यानमापस्तम्बैरनभ्युपगमात्कातीयबौधायनादिविषयम् ।

आश्वलायनानामपि शेषपर्वणि पिण्डपितृयज्ञः । तथा च सूत्रम्—'अमावास्यायामपराह्णे पिण्डपितृयज्ञः' इति । अत्र नारायणवृत्तिः—'अमावास्याशब्दः प्रतिपत्पञ्चदश्योः सन्धिवचनोऽप्यत्रापराह्णशब्द-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

समन्वयात्तद्वत्यहोरात्रे वर्तते । तस्यापराह्णेऽह्नश्चतुर्थभागे पिण्डपितृयज्ञः कार्यः । औपवसथ्ये यजनीये वाहनि यदा त्वहोरात्रसंधौ तिथिसंधिः स्यात्तदौपवसथ्ये एवाहनि क्रियते' इति । अत एव 'मुहूर्तमप्यमावास्या प्रतिपद्यपि चेद्भवेत् । तद्दत्तमक्षयं ज्ञेयं पर्वशेषं तु पर्ववत् ॥' इति हेमाद्रौ वचनं पिण्डपितृयज्ञपरमुक्तं प्रयोगपारिजाते । अयं च स्मार्ताग्निमता सम्पूर्णे दर्शे श्राद्धव्यतिषङ्गेण कार्यः । व्यतिषङ्गो नामोभयोः सहानुष्ठानम् । एतच्च 'स्थालीपाकेन सह पिण्डार्थमुद्धृत्य' इति सूत्रे वृत्तिकृतोक्तम् । खण्डपर्वणि तु केचिदाहुः । पूर्वेह्नि पिण्डपितृयज्ञव्यतिषङ्गेण श्राद्धं कृत्वा परेह्नि केवलः पिण्डपितृयज्ञः कार्यः । वृत्तिकृता तु-'अन्वष्टक्यं च पूर्वेद्युर्मासि मास्यथ पार्वणम् । काम्यमाभ्युदयेऽष्टम्यामेकोद्दिष्टमथाष्टमम् ॥' इत्युदाहृत्य पूर्वेषु चतुर्षु स्थालीपाकादुद्धृत्याग्नौकरणमित्युक्तेर्दर्शश्राद्धे स्थालीपाको नियत इति गम्यते । स्थालीपाकश्च पितृयज्ञ एवेति पूर्वदिने व्यतिषङ्गः सिद्धः । प्रयोगपारिजाते तु वार्षिकश्राद्धादेरपि व्यतिषङ्गः उक्तः, किमुत दर्शश्राद्धस्य ।

न्यायविदस्त्वाहुः–'सूत्रस्य वृत्तेश्च सम्पूर्णदर्शविषयत्वात् खण्डपर्वणि पूर्वदिने केवलं श्राद्धं परदिने च केवलः पितृयज्ञः कार्यः ।' अत एवोक्तं वृत्तिकृता–'नात्र पूर्वस्थालीपाकश्चोद्यते, सर्वश्राद्धेषु प्रसङ्गात्' इति । प्रयोगपारिजातोक्तिरप्येतद्विषयैव । पूर्वदिने च श्राद्धेऽग्नौकरणमेव न पाणिहोमः । 'चतुर्ष्वाद्येषु साग्नीनां वह्नौ होमो विधीयते । पित्र्यब्राह्मणहस्ते स्यादुत्तरेषु चतुर्ष्वपि ॥' इति परिशिष्टे नियमात् । न च लौकिकाग्नौ पक्वस्य कथं गृह्याग्नौ होमः । 'नान्याग्नौ पक्वमन्याग्नौ जुहुयात्' इति निषेधात् । नैवम् । श्राद्धस्य गृह्यत्वेन स्मार्ताग्नौ पचनाग्नौ वा कर्तव्यत्वात् । तस्मात् पूर्वेद्युः केवलं श्राद्धं न व्यतिषङ्गः । इदमेव च युक्तम् । आहिताग्निना तु सर्वाधानिनार्धाधानिना वा सम्पूर्णे खण्डे वा दर्शे श्रौताग्नौ पृथगेव पितृयज्ञः कार्यो न तु दर्शश्राद्धव्यतिषङ्गेणेति विस्तरभीतेर्विरमामः । सम्पूर्णे दर्शे च विशेषमाह लौगाक्षिः–'पक्षान्तं कर्म निर्वर्त्य वैश्वदेवं च साग्निकः । पिण्डयज्ञं ततः कुर्यात्ततोऽन्वाहार्यकं बुधः ॥' इति । पक्षान्तं कर्मान्वा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

धानम्। अन्वाहार्यकं दर्शश्राद्धम्। अयमेव साग्नेर्जीवत्पितृकस्य पिण्डपितृयज्ञकालो ज्ञेयः। तस्यापि कात्यायनेन होमान्तमनारम्भो वेत्याम्नानात्। पिण्डपितृयज्ञाकरणे प्रायश्चित्तमाह पराशरमाधवीये कात्यायनः—'पितृयज्ञात्यये चैव वैश्वदेवात्ययेऽपि च। भोजने पतितान्नस्य चरुर्वैश्वानरो भवेत्॥' इत्यलम्।

निरग्निकस्यामानिर्णयः।

प्रकृतमनुसरामः। निरग्निकादिभिस्त्वमावास्यापराह्णव्याप्त्यभावे तु कुतुपकालव्यापिनी ग्राह्या। 'भूतविद्धाप्यमावास्या प्रतिपन्मिश्रितापि वा। पित्र्ये कर्मणि विद्वद्भिर्ग्राह्या कुतुपकालिकी॥' इति हारीतोक्तेः। इदं च निरग्निकादिविषयम्।

साग्निकस्यामानिर्णयः।

'सिनीवाली द्विजैः॥' इति लौगाक्षिवचनात्। अत्र साग्निरौपासनाग्निरपीति मदनपारिजाते उक्तम्। कुतुपश्चापराह्णव्याप्त्यलाभेऽनुकल्पः। 'अपराह्णद्वयाव्यापी यदि दर्शस्तिथिक्षयः। आहिताग्नेः सिनीवाली निरग्न्यादेः कुहूर्मता॥' इति जाबालिना भावे विधानात्। तेन साग्नीनां निरग्नीनां वापराह्णव्यापिन्येव मुख्या। तिथिसाम्यवृद्धिक्षयैः समव्याप्तौ खर्वादिना निर्णयः। वैषम्येऽधिका। दिनद्वयेऽपराह्णस्पर्शे कुतुपव्यापिनीति माधवः। इदमेव युक्तम्। हेमाद्यादिमते कुतुपव्यापिन्येव निरग्न्यादेर्मुख्या।

कुहूलक्षणम्। कुतुपकाललक्षणम्। सिनीवालीलक्षणम्।

सिनीवाली दृष्टचन्द्रा। तथा च व्यासः—'दृष्टचन्द्रा सिनीवाली नष्टचन्द्रा कुहूः स्मृता।' इति। पूर्वदिने परदिन एव वा तद्व्यापित्वे सैव ग्राह्या। अंशव्यापित्वे वैषम्येऽधिकालव्यापिनी ग्राह्या। दिनद्वयेंशतः समव्याप्तौ तिथिक्षये पूर्वा, वृद्धौ साम्ये च परा। 'तिथिक्षये सिनीवाली तिथिवृद्धौ कुहूः स्मृता। साम्येपि च कुहूर्ज्ञेया वेदवेदाङ्ग-

१—'रौद्रः श्वेतस्तथा मैत्रः सारभद्रस्तथा स्मृतः। सावित्रो वैश्वदेवश्च गान्धर्वः कुतुपस्तथा। रौहिणस्तिलकश्चैव विभवो निर्ऋतिर्जयः। शंबरो विजयश्चैव भेदाः पञ्चदश स्मृताः॥' एषूक्तेष्वष्टमः कुतुपः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वेदिभिः ॥' इति प्रचेतोवचनात् । दिनद्वये सम्पूर्णकुतुपव्याप्तिस्तु तिथिवृद्धावेवं भवतीत्यनन्तरवचनात् परैवेति । कुतुपस्तु—'अह्नो मुहूर्ता विज्ञेया दश पञ्च च सर्वदा । तत्राष्टमो मुहूर्तो यः स कालः कुतुपः स्मृतः ॥' इति मात्स्योक्तेः । तुलादानपितृदेवप्रीत्यर्थोपवासादौ तु परा ग्राह्येत्यन्यत्र विस्तरः ॥

दर्शश्राद्धेऽन्यश्राद्धसम्पाते निर्णयः ।

दर्शे च मासिकवार्षिकादिश्राद्धप्राप्तौ कालादर्शे विशेष उक्तः—'दर्शस्य चोदकुम्भस्य दर्शमासिकयोरपि । नित्यस्य चाब्दिकस्यापि दार्शिकाब्दिकयोरपि ॥' इत्युक्त्वा 'सम्पाते देवताभेदाच्छ्राद्धयुग्मं समाचरेत् । निमित्ता नियतिश्चात्र पूर्वानुष्ठानकारणम् ॥' इति । अत्र क्रमो निर्णयदीपे उक्तः—'नष्टचन्द्रे यदा काले क्षयाहदिवसो भवेत् । वैश्वदेवं क्षयश्राद्धं कुर्यात्प्राग्दर्शकर्मणः ' अमाश्राद्धं चानुपनीतोऽपि कुर्यात् । श्राद्धशूलपाणौ—'अमावास्याष्टकाकृष्णपक्षपञ्चदशीषु च ।' इत्युपक्रम्य 'एतच्चानुपनीतोऽपि कुर्यात्सर्वेषु पर्वसु । श्राद्धं साधारणं नाम सर्वकर्मफलप्रदम् ॥ भार्याविरहितोप्येतत्प्रवासस्थोपि नित्यशः । शूद्रोऽप्यमन्त्रवत्कुर्यादनेन विधिना बुधः ॥' इति मात्स्योक्तेः । अमाश्राद्धातिक्रमे प्रायश्चित्तमुक्तमृग्विधाने—'न्यूषु वाचं जपेन्मन्त्रं शतवारं दिने दिने । अमाश्राद्धं यदा नास्ति तदा संपूर्णमेति तत् ॥' अत्र पूर्वोक्तसाग्निकपदेनाहिताग्निः स्मार्ताग्निमांश्च गृह्यते । विच्छिन्नाग्निकादिश्च निरग्निभकः तथा च हेमाद्रिरग्नौकरणप्रकरणे—'साग्निरग्नावनग्निस्तु द्विजपाणावथाप्सु वा । कुर्यादग्नौ क्रियां नित्यं लौकिकेनेति निश्चितम् ॥' इति स्मृतिवाक्यमुदाहृत्य । 'यस्त्वस्वीकृतौपासनतया समुच्छिन्नाग्नितया भार्याविधुरतया

---

१ मनुरपि—'पितृयज्ञं तु निर्वर्त्य विप्रश्चेन्दुक्षयेऽग्निमान् । पिण्डान्वाहार्यकं श्राद्धं कुर्यान्मासानुमासिकम् ॥' अत्र मन्वर्थमुक्तावली—'साग्निरमावास्यायां पिण्डपितृयज्ञाख्यं कर्म कृत्वा श्राद्धं कुर्यात् । पितृयज्ञपिण्डानामनु पश्चादाहियत इति पिण्डान्वाहार्यकं श्राद्धम् । मासानुमासिकं मासश्चानुमासश्च तयोर्भवं प्रतिमासं कर्तव्यमित्यर्थः । अनेनास्य नित्यत्वमुक्तम । विप्रग्रहणं द्विजातिपरम् । त्रयाणां प्रकृतत्वात् ।' इत्याह ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वाग्निरहितस्तस्य द्विजपाणौ जलादौ वा होमः' इति व्याचचक्षे। मदनपारिजातेप्येवम्। इदमेव साग्निकानग्निकस्वरूपं सर्वत्र ज्ञेयम्॥

अथ ग्रहणं निर्णीयते।

तत्र चन्द्रग्रहणे यस्मिन्यामे ग्रहणं तस्मात्पूर्वं प्रहरत्रयं न भुञ्जीत। सूर्यग्रहे तु प्रहरचतुष्टयं न भुञ्जीत। 'सूर्यग्रहे तु नाश्नीयात्पूर्वं यामचतुष्टयम्। चन्द्रग्रहे तु यामांस्त्रीन्बालवृद्धातुरैर्विना॥' इति माधवीये वृद्धगौतमोक्तेः। 'ग्रहणं तु भवेदिन्दोः प्रथमादधियामतः। भुञ्जीतावर्तनात्पूर्वं प्रथमे प्रथमादधः॥' इति मार्कण्डेयोक्तेश्च। अधि ऊर्ध्वम्। ननु चन्द्रग्रहे यामचतुष्टयनिषेध उचितो नतु सूर्यग्रहे, सूर्योदयात्प्राग्भोजनाप्राप्तेः। मैवम्। वचनस्य प्रथमयामे सूर्यग्रहे सति पूर्वद्युः पूर्वरात्रे भोजननिषेधपरत्वात्। चन्द्रग्रहे विशेषमाह माधवीये वृद्धवसिष्ठः—'ग्रस्तोदये विधोः पूर्वं नाहर्भोजनमाचरेत्।' इति द्वयोर्ग्रस्तास्ते तु माधवीये व्यासः—'अमुक्तयोरस्तगयोरद्याद्दृष्ट्वा परेहनि।' इति। विष्णुधर्मेपि—'अहोरात्रं न भोक्तव्यं चन्द्रसूर्यग्रहो यदा। मुक्तिं दृष्ट्वा तु भोक्तव्यं स्नानं कृत्वा ततः परम्॥' अहोरात्रनिषेधः सूर्यग्रस्तास्ते। मदनरत्ने गार्ग्यः—'संध्याकाले यदा राहुर्ग्रसते शशिभास्करौ। तदहर्नैव भुञ्जीत रात्रावपि कदाचन॥' सायंसंध्यायां सूर्यग्रस्तास्ते पूर्वेह्नि रात्रौ च न भोक्तव्यम्। प्रातःसंध्यायां चन्द्रस्य ग्रस्तास्ते पूर्वरात्रावुत्तरेह्नि च न भोक्तव्यमित्यर्थः। चन्द्रग्रस्तास्ते उत्तरदिने संध्याहोमादौ न दोषः। तदा होशनाः—'ग्रस्ते चास्तंगते त्विन्दौ ज्ञात्वा मुक्त्यवधारणम्। स्नानहोमादिकं कार्यं भुञ्जीतेन्दूदये पुनः॥' एतदनाहिताग्निविषयम्। 'अपराह्णे व्रतोपायनीयमश्नीत' इति कात्यायनोक्तेर्व्रतस्य श्रौतत्वेन विहितत्वेन च प्रबलत्वात्। अद्भिर्व्रतं कुर्यादिति निर्णयदीपः।

१—तथाहि–'सूर्येन्दुग्रहणं यावत्तावत्कुर्याज्जपादिकम्। न स्वपेन्न च भुञ्जीत स्नात्वा भुञ्जीत मुक्तयोः॥' इति। किंच तत्र निद्राद्याचरिते दोषोऽपि–'निद्रायां जायते रोगो मूत्रे दारिद्र्यमाप्नुयात्। पुरीषे कृमियोनिः स्यान्मैथुने ग्रामसूकरः॥ अभ्यङ्गे च भवेत्कुष्ठी भोजने स्यादधोगतिः। वञ्चने च भवेत्सर्पो वधे च नरकं व्रजेत्॥' इति निगदोक्तेः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

रागप्राप्तभोजने कालनियमोऽयम् । तेन ज्वरादाविव न भोजनमिति कर्कानुसारिणः । बालवृद्धातुराणां तु ग्रहणयामात्पूर्वमेकयामो निषिद्धः । 'सायाह्ने ग्रहणं चेत्स्यादपराह्णे न भोजनम् । अपराह्णे न मध्याह्ने मध्याह्ने न तु सङ्गवे ॥ भुञ्जीत सङ्गवे चेत्स्यान्न पूर्वं भोजनक्रिया ॥' इति मार्कण्डेयोक्तेः । इदं च बालादिविषयम् । 'बालवृद्धातुरैर्विना' इति पूर्वोक्तेः । वेधकाले ग्रहणे वा पक्वमन्नं त्याज्यम् । 'सर्वेषामेव वर्णानां सूतकं राहुदर्शने । स्नात्वा कर्माणि कुर्वीत शृतमन्नं विवर्जयेत् ॥' इति हेमाद्रौ षट्त्रिंशन्मतात् । शृतमिति तदन्तरितस्योपलक्षणम् । 'नवश्राद्धेषु यच्छिष्टं ग्रहपर्युषितं च यत् ।' इति मिताक्षरायां वचनात् । भार्गवार्चनदीपिकायां ज्योतिर्निबन्धे मेधातिथिः—'आरनालं पयस्तक्रं दधि स्नेहाज्यपाचितम् । मणिकस्थोदकं चैव न दुष्येद्राहुसूतके ॥'[1] मन्वर्थमुक्तावल्याम्—'अन्नं पक्वमिह त्याज्यं स्नानं सवसनं ग्रहे । वारि तक्रारनालादि तिलदर्भैन दुष्यति ॥' जले त्वदोषो गाङ्गविषयः—ग्रहोषितं जलं पीत्वा पादकृच्छ्रं समाचरेत् ।' इति तत्रैव चतुर्विंशतिमतेऽन्यजलस्य दोषोक्तेः । वेधकाले ग्रहणे वा भोजने प्रायश्चित्तमुक्तं माधवीये कात्यायनेन—'चन्द्रसूर्यग्रहे भुक्त्वा प्राजापत्येन शुद्ध्यति । तस्मिन्नेव दिने भुक्त्वा त्रिरात्रेणैव शुध्यति ॥' इति । ग्रहणे च त्रिरात्रमेकरात्रं वोपवासः श्रेयोर्थिना कार्यः । 'एकरात्रमुपोष्यैव स्नात्वा दत्वा च शक्तितः । कञ्चुकादिव सर्पस्य निवृत्तिः पापकोशतः ॥ त्रिरात्रं समुपोष्यैव ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः । स्नात्वा दत्वा च विधिवन्मोदते ब्रह्मणा सह ॥' इति हेमाद्रौ लैङ्गोक्तेः । इदं च पुत्र्यतिरिक्तविषयम् । 'आदित्येहनि संक्रान्तौ ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः । पारणं चोपवासं च न कुर्यात्पुत्रवान् गृही ॥' इति जैमिनिवचनात् । यदा तु रवेर्ग्रस्तास्तस्तदा पुत्रिणः प्रहरद्वयं हित्वा बालादिवद्भोजनं न तूपवासः । 'सायाह्ने ग्रहणं चेत्स्यात्' इति पूर्वोक्तमार्कण्डेयवचनात् । 'सायाह्ने सङ्गवेऽश्नीयाच्छारदे सङ्गवादधः । मध्याह्ने परतोऽश्नीयान्नोपवासो रविग्रहे ॥' इति स्मृतेश्चेति हेमाद्रिः । शारदोऽपराह्णः । माधवमते तु पुत्रिणोपि तत्रोपवास एव । 'अहोरात्रं न

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भोक्तव्यम्' इति पूर्वोक्तनिषेधस्य तेनापि पालनीयत्वात् । उपवासनिषेधस्तु व्रतरूपोपवासपरः कृष्णैकादशीनिषेधवदिति । मदनरत्नेप्येवम् । इदमेव च युक्तम् । वर्धमानस्तु 'अहोरात्रं न भोक्तव्यम्' इति शातातपीयाग्रे 'सूर्याचन्द्रमसोर्लोकानक्षयान्याति मानवः ।' इति फलश्रुतेर्मुक्त्यदर्शने उपवासः काम्यः न त्वयं निषेधः' इत्याह । तन्न । तत्र व्रतत्वेपि प्रागुक्तविष्णुधर्मे निषेधावश्यंभावात् । तथा च व्यासः—'रविग्रहः सूर्यवारे सोमे सोमग्रहस्तथा । चूडामणिरिति ख्यातस्तत्र दत्तमनन्तकम् ॥ वारेष्वन्येषु यत्पुण्यं ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः । तत्पुण्यं कोटिगुणितं योगे चूडामणौ स्मृतम् ॥'

अत्र चाद्यन्तयोः स्नानं कुर्यात् । 'ग्रस्यमाने भवेत्स्नानं ग्रस्ते होमो विधीयते । मुच्यमाने भवेद्दानं मुक्ते स्नानं विधीयते ॥' इति हेमाद्रौ वचनात् । 'स्नानं स्यादुपरागादौ मध्ये होमः सुरार्चनम् ।' इति ब्रह्मवैवर्ताच्च । 'सर्वेषामेव वर्णानां सूतकं राहुदर्शने । सचैलं तु भवेत्स्नानं सूतकान्नं च वर्जयेत् ॥' इति वृद्धवसिष्ठोक्तेश्च । सचैलं मुक्तिस्नानपरमिति मदनरत्ने उक्तम् । भार्गवार्चनदीपिकायां चतुर्विंशतिमते—'मुक्तौ यस्तु न कुर्वीत स्नानं ग्रहणसूतके । स सूतकी भवेत्तावद्यावत्स्यादपरो ग्रहः ॥' इदं च स्नानममन्त्रकं कार्यमिति स्मृतिरत्नावल्याम् । तत्र तीर्थविशेषो भारते 'गङ्गास्नानं तु कुर्वीत ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः । महानदीषु चान्यासु स्नानं कुर्याद्यथाविधि ॥' महानदीष्वपि मासविशेषे काश्चिच्छ्रेष्ठाः । 'प्रयागं देविका रेवा सन्निहत्या च वारणम् । सरस्वती चन्द्रभागा कौशिकी तापिका तथा ॥ सिन्धुर्गण्डकिका चैव सरयूः कार्तिकादितः ॥' मूलं हेमाद्रौ स्पष्टम् । व्यासः—'इन्दोर्लक्षगुणं पुण्यं रवेर्दशगुणं ततः ॥ गङ्गातोये तु संप्राप्त इन्दोः कोटी रवेर्दश ॥ गवां कोटिसहस्रस्य यत्फलं लभते नरः । तत्फलं लभते मर्त्यो ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ॥' असंभवे तु माधवीये शङ्खः—'वापीकूपतडागेषु गिरिप्रस्रवणेषु च । नद्यां नदे देवखाते सरसीषूद्धृताम्बुनि । उष्णोदकेन वा स्नायाद् ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ॥' अत्र तारतम्यमाह मार्कण्डेयः—'शीतमुष्णोदकात्पुण्यमपारक्यं परोदकात् । भूमिष्ठमुद्धृतात्पुण्यं ततः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्रस्रवणोदकम् ॥ ततोऽपि सारसं पुण्यं ततः पुण्यं नदीजलम् । तीर्थतोयं ततः पुण्यं महानद्यम्बु पावनम् ॥ ततस्ततोपि गङ्गाम्बु पुण्यं पुण्यस्ततोम्बुधिः ॥' इति । उष्णोदकमातुरविषयम् । तथा—'गोदावरी महापुण्या चन्द्रे राहुसमन्विते । सूर्ये च राहुणा ग्रस्ते तमोभूते महामुने ॥ नर्मदातोयसंस्पर्शे कृतकृत्या भवन्ति हि ॥' पृथ्वीचन्द्रोदये प्रभासखण्डे—'गावो नागास्तिला धान्यं रत्नानि कनकं मही । संप्रदाय कुरुक्षेत्रे यत्फलं लभते नरः ॥ तदिन्दुग्रहणेऽम्भोधौ स्नानाद्भवति षड्गुणम् ॥' तत्रैव सौरपुराणेम्बुधिस्नानमुपक्रम्य—'दानानि यानि लोकेषु विख्यातानि मनीषिभिः । तेषां फलमवाप्नोति ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ॥' देवीपुराणे—'गङ्गा कनखलं पुण्यं प्रयागः पुष्करं तथा । कुरुक्षेत्रं महापुण्यं राहुग्रस्ते दिवाकरे ॥' स्नानासंभवे स्मरणं वा कार्यम् । 'स्मृत्वा शतक्रतुफलं दृष्ट्वा सर्वाघनाशनम् । स्पृष्ट्वा गोमेधपुण्यं तु पीत्वा सौत्रामणेर्लभेत् ॥ स्नात्वा वाजिमखं पुण्यं प्राप्नुयादविचारतः ॥ रविचन्द्रोपरागे च अयने चोत्तरे तथा ॥' इति मार्कण्डेयोक्तेः । अत्र श्राद्धमाह ऋष्यशृङ्गः । 'चन्द्रसूर्यग्रहे यस्तु श्राद्धं विधिवदाचरेत् । तेनैव सकला पृथ्वी दत्ता विप्रस्य वै करे ॥ भारते—'सर्वस्वेनापि कर्तव्यं श्राद्धं वै राहुदर्शने । अकुर्वाणस्तु नास्तिक्यात्पङ्के गौरिव सीदति ॥' विष्णुः—'राहुदर्शनदत्तं हि श्राद्धमाचन्द्रतारकम् । इदं चामान्नेन हेम्ना वा कार्यं न त्वन्नेन । 'आपद्यनग्नौ तीर्थे च चन्द्रसूर्यग्रहे तथा । आमश्राद्धं प्रकुर्वीत हेमश्राद्धमथापि वा ॥' इति शातातपोक्तेरिति हेमाद्रिमाधवादयः । अपरार्कस्तु—'एतद्द्विजातीनां पाकाभावे द्रष्टव्यं तीर्थश्राद्धवत् । 'पाकाभावे द्विजातीनामामश्राद्धं विधीयते ।' इति सुमन्तूक्तेः । 'सैंहिकेयो यदा सूर्यं ग्रसते पर्वसंधिषु । गजच्छाया तु सा प्रोक्ता तस्यां श्राद्धं प्रकल्पयेत् । घृतेन भोजयेद्विप्रान्घृतं भूमौ समुत्सृजेत् ॥' इति वायवीयोक्तेश्चेत्याह । विज्ञानेश्वरोप्याह—'ग्रहणश्राद्धे भोक्तुर्दोषो दातुस्त्वभ्युदयः' इति । 'सूतके मृतके भुङ्क्ते गृहीते शशिभास्करे । छायायां हस्तिनश्चैव न भूयः पुरुषो भवेत् ॥' इत्यापस्तम्बेन भोजननिषेधात् । अयं च निषेधः श्राद्धभोक्तुर्हस्तिच्छायासाहचर्यात् । अत्र ग्रहणनिमित्तक-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

श्राद्धेनैवामासंक्रान्त्यादिनैमित्तिकानां सिद्धिः। 'दार्शिकालभ्ययोरपि' इति कालादर्शोक्तेः।

सूतके ग्रहणे च कर्तव्यविशेषः।

अत्राशौचमध्येपि स्नानश्राद्धादि कार्यमेव। 'सूतके मृतके चैव न दोषो राहुदर्शने। तावदेव भवेच्छुद्धिर्यावन्मुक्तिर्न दृश्यते॥' इति माधवीये वृद्धवसिष्ठोक्तेः। 'स्मार्तकर्मपरित्यागो राहोरन्यत्र सूतके।' इति व्याघ्रपादोक्तेश्च। कालादर्शे अङ्गिराः—'सर्वे वर्णाः सूतकेपि मृतके राहुदर्शने। स्नात्वा श्राद्धं प्रकुर्वीरन्दानं शाठ्यविवर्जितम्॥' मदनपारिजातेऽप्येवम्। तेन 'स्नानमात्रं प्रकुर्वीत दानश्राद्धविवर्जितम्।' इति निर्मूलं वदन्तो गौडाः परास्ताः। इयं च शुद्धिरविशेषान्मन्त्रदीक्षापुरश्चरणादिसर्वस्मार्तकर्मविषया। मदनरत्नेप्येवम्।

ग्रहे रजस्वलाकर्तव्यम्।

रजस्वलायास्तु भार्गवार्चनदीपिकायां सूर्योदयनिबन्धे—'न सूतकादिदोषोऽस्ति ग्रहे होमजपादिषु। ग्रस्ते स्नायादुदक्यापि तीर्थादुद्धृतवारिणा॥' इति। अत्र च—'स्नाने नैमित्तिके प्राप्ते नारी यदि रजस्वला। पात्रान्तरिततोयेन स्नानं कृत्वा व्रतं चरेत्॥' इत्यादिमिताक्षरोक्तो विधिर्ज्ञेयः।

ग्रहणे रात्रावपि श्राद्धविधिः।

तथा ग्रहणे रात्रावपि श्राद्धादि कार्यम्। 'ग्रहणोद्वाहसंक्रान्तियात्रार्तिप्रसवेषु च। दानं नैमित्तिकं ज्ञेयं रात्रावपि तदिष्यते॥' इत्यपरार्के व्यासोक्तेः। 'चन्द्रग्रहे तथा रात्रौ स्नानं दानं प्रशस्यते।' इति देवलोक्तेश्च। यदा तु ज्योतिःशास्त्रगम्ये दिने चन्द्रग्रहो रात्रौ

१—सर्वस्वेनापि कर्तव्यं श्राद्धं वै राहुदर्शने। अकुर्वाणस्तु नास्तिक्यात्पङ्के गौरिव सीदति। माधवे महाभारते—चन्द्रसूर्यग्रहे यस्तु श्राद्धं विधिवदाचरेत्। तेनैव सकला पृथ्वीदत्ता विप्रस्य वै करे। ऋष्यश्रृङ्गः राहुदर्शनदत्तं हि श्राद्धमाचन्द्रतारकम्। पुण्यं च कामीयं पितृणामुपतिष्ठते॥ विष्णुः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

च सूर्यग्रहस्तदा स्नानादि न कार्यम्। 'सूर्यग्रहो यदा रात्रौ दिवा चन्द्रग्रहस्तथा। तत्र स्नानं न कुर्वीत दद्याद्दानं न च क्वचित्॥' इति षट्त्रिंशन्मतात्।

ग्रहणे श्राद्धप्राप्तौ।

ग्रहणदिने वार्षिकश्राद्धप्राप्तौ तु प्रयोगपारिजाते गोभिलः-'दर्शे रविग्रहे पित्रोः प्रत्याब्दिकमुपस्थितम्। अन्नेनासंभवे हेम्ना कुर्यादामेन वा सुतः॥' इति। अत्र दर्शरविपितृसुतशब्दाः प्रदर्शनार्थाः, न्यायसाम्यात्। तेन चन्द्रग्रहेपि सपिण्डादिवार्षिकमन्नादिना तद्दिन एव कार्यमिति मदनपारिजाते व्याख्यातम्। पृथ्वीचन्द्रोदयेप्येवम्। तेन यानि—'आमश्राद्धं प्रकुर्वीत माससंवत्सरादृते।' इति। 'अन्नेनैवाब्दिकं कुर्याद्धेम्ना वामेन न क्वचित्॥' इति मरीचिलौगाक्ष्यादिवचनानि तानि ग्रहणदिनातिरिक्तविषयाणि। निर्णयामृतेप्येवम्। यानि तु—'ग्रहणात्तु द्वितीयेह्नि रजोदोषात्तु पञ्चमे।' तथा-'ग्रस्तोदये यदा चन्द्रे प्रत्यब्दं समुपस्थितम्। तद्दिने चोपवासः स्यात्प्रत्यब्दं तु परेहनि॥' तथा-'ग्रस्तावेवास्तमानं तु रवीन्दू प्राप्नुतो यदि। प्रत्यब्दं तु तदा कार्यं परेऽहन्येव सर्वदा॥ चन्द्रसूर्योपरागे च तथा श्राद्धं परेहनि॥' इत्यादीनि वचनानि, तानि महानिबन्धेषु क्वाप्यनुपलम्भान्निर्मूलानि, प्रत्युत पूर्वोक्तनिबन्धेषु तद्दिन एव श्राद्धमुक्तमित्यलम्।

ग्रहणे मन्त्रादिग्रहणप्रकारः।

ग्रहणादिसप्तदिनपर्यन्तं रामगोपालाद्यागमदीक्षोक्ता शिवार्चनचन्द्रिकायां ज्ञानार्णवे-'मन्त्राद्यारम्भणं कुर्याद्ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः। ग्रहणाद्वापि देवेशि कालः सप्तदिनावधि॥' इति। रत्नसागरे-'सत्तीर्थेऽर्कविधुग्रासे तन्तुदामनपर्वणि। मन्त्रदीक्षां प्रकुर्वाणो मासर्क्षादीन्न शोधयेत्॥' अत्र सूर्यग्रहणमेव मुख्यम्। 'सूर्यग्रहकाले तु नान्यदन्वेषितं भवेत्। सूर्यग्रहणकालेन समो नान्यः कदाचन॥ न मास-

२—रामार्चनचन्द्रिकायाम्—चन्द्रसूर्यग्रहे तीर्थे सिद्धक्षेत्रे शिवालये। मन्त्रमात्रप्रकथनमुपदेशः स उच्यते। सत्तीर्थेऽर्कविधुग्रासे तन्तुदामनपर्वणोः। सारसंग्रहे।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तिथिवारादिशोधनं सूर्यपर्वणि ॥' इति तत्रैव कालोत्तरवचनात्। 'चन्द्रग्रहे तु या दीक्षा या दीक्षा व्रतचारिणाम्। वनस्थस्य च या दीक्षा दारिद्र्यं सप्तजन्मसु ॥' इति तत्रैव योगिनीतन्त्रे निषेधाच्च ॥

जन्मराश्यादौ ग्रहणं न शुभम् ।

ग्रहणं च जन्मराश्यादौ निषिद्धम् । तदुक्तं ज्योतिषे-'त्रिषट्द्शायोपगतं नराणां शुभप्रदं स्याद्ग्रहणं रवीन्द्वोः। द्विसप्तनन्देषु मध्यमं स्याच्छेषेष्वनिष्टं कथितं मुनीन्द्रैः ॥' इति। आय एकादश, नन्दा नव इषुः पञ्च। मदनरत्ने गर्गः-'जन्मसप्ताष्टरिःफाङ्कदशमस्थे निशाकरे। दृष्टोरिष्टप्रदो राहुर्जन्मर्क्षे निधनेपि च ॥' रिःफं द्वादशम्, अङ्का नव, निधनं सप्तमतारा। पृथ्वीचन्द्रोदये विष्णुधर्मे-'यन्नक्षत्रगतो राहुर्ग्रसते शशिभास्करौ। तज्जातानां भवेत्पीडा ये नराः शान्तिवर्जिताः ॥' तत्रैव पुराणान्तरे-'सूर्यस्य संक्रमो वापि ग्रहणं चन्द्रसूर्ययोः। यस्य त्रिजन्मनक्षत्रे तस्य रोगोऽथवा मृतिः ॥

अशुभग्रहणपरिहारार्थं दानादि ।

तस्य दानं च होमं च देवार्चनजपौ तथा। उपरागाभिषेकं च कुर्याच्छान्तिर्भविष्यति ॥ स्वर्णेन वाथ पिष्टेन कृत्वा सर्पस्य चाकृतिम्। ब्राह्मणाय ददेत्तस्य न रोगादिश्च तत्कृतः ॥' जन्मनक्षत्रं तत्पूर्वोत्तरे च त्रिजन्मनक्षत्रमित्युच्यते। जन्मदशमैकोनविंशतितारा इति केचित्। सर्पस्य तदाकारस्य राहोरित्यर्थः। अद्भुतसागरे भार्गवः-'यस्य राज्यस्य नक्षत्रे स्वर्भानुरुपरज्यते। राज्यभङ्गं सुहृन्नाशं मरणं चात्र निर्दिशेत् ॥ राज्यस्य नक्षत्रं अभिषेकनक्षत्रमिति तत्रैव व्याख्यातम्।

नागबिंबविधिः ।

भार्गवार्चनदीपिकायां ज्योतिःसागरे—'सौवर्णं कारयेन्नागं पलेनाथ पलार्धतः। तदर्धेन तदर्धेन फणायां मौक्तिकं न्यसेत् ॥ ताम्रपात्रे निधायाथ घृतपूर्णे विशेषतः। कांस्ये वा कान्तलोहे वा न्यस्य दद्यात्सदक्षिणम् ॥ चन्द्रग्रहे तु रूप्यस्य बिम्बं दद्यात्सदक्षि-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

णम् । नागं रुक्ममयं सूर्यग्रहे विम्बं च हेमजम् । तुरङ्गरथगोभूमितिलसर्पिश्च काञ्चनम् ॥' कालविवेकेऽपि–'सुवर्णनिर्मित्तं नागं सतिलं कांस्यभाजनम् । सदक्षिणं सवस्त्रं च ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥ सौवर्णं राजतं वापि बिम्बं कृत्वा स्वशक्तितः । उपरागभवक्लेशच्छिदे विप्राय कल्पयेत् ॥'

नागनिवेदान मन्त्रः ।

मन्त्रस्तु–'तमोमय महाभीम सोमसूर्यविमर्दन । हेमतारप्रदानेन मम शान्तिप्रदो भव ॥ विधुंतुद नमस्तुभ्यं सिंहिकानन्दनाच्युत । दानेनानेन नागस्य रक्ष मां वेधजाद्भयात् ॥' इति ।

ग्रहण शान्तिः ।

अत्र शान्तिरप्युक्ता हेमाद्रौ मात्स्ये–'यस्य राशिं समासाद्य भवेद्ग्रहणसंभवः । स्नानं तस्य प्रवक्ष्यामि मन्त्रौषधिसमन्वितम् ॥ चन्द्रोपरागं संप्राप्य कृत्वा ब्राह्मणवाचनम् । संपूज्य चतुरो विप्राञ्छुक्लमाल्यानुलेपनैः ॥ पूर्वमेवोपरागस्य समानीयौषधादिकम् । स्थापयेच्चतुरः कुम्भानव्रणान्सलिलान्वितान् ॥ गजाश्वरथ्यावल्मीकसंगमाद्ध्रदगोकुलात् । राजद्वारप्रदेशाच्च मृदमानीय निक्षिपेत् ॥ पञ्चगव्यं पञ्चरत्नं पञ्चत्वक् पञ्चपल्लवम् ॥ रोचनं पद्मकं शङ्खं कुङ्कुमं रक्तचन्दनम् । शुक्तिस्फटिकतीर्थाम्बुसितसर्षपगुग्गुलून् ॥ मधुकं देवदारुं च विष्णुक्रान्तां शतावरीम् । बलां च सहदेवीं च निशाद्वितयमेव च ॥ गजदन्तं कुङ्कुमं च तथैवोशीरचन्दनम् । एतत्सर्वं विनिक्षिप्य कुम्भेष्वावाहयेत्सुरान् ॥ सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः । आयान्तु यजमानस्य दुरितक्षयकारकाः ॥ योऽसौ वज्रधरो देव आदित्यानां प्रभुर्मतः । सहस्रनयनः शक्रो ग्रहपीडां व्यपोहतु ॥ मुखं यः सर्वदेवानां सप्तार्चिरमितद्युतिः । चन्द्रोपरागसंभूतामग्निः पीडां व्यपोहतु ॥ यः कर्मसाक्षी लोकानां धर्मो महिषवाहनः । यमश्चन्द्रोपरागोत्थां ग्रहपीडां व्यपोहतु ॥ रक्षोगणाधिपः साक्षान्नीलाञ्जनसमप्रभः । खड्गहस्तोऽतिभीमश्च ग्रहपीडां व्यपोहतु ॥ नागपाशधरो देवः सदा मकरवाहनः । स जलाधिपतिर्देवो ग्रहपीडां व्यपोहतु ॥ प्राणरूपो हि लोकानां सदा कृष्णमृगप्रियः । वायुश्चन्द्रो-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

परागोत्थां ग्रहपीडां व्यपोहतु ॥ योऽसौ निधिपतिर्देवः खड्गशूल-गदाधरः। चन्द्रोपरागकलुषं धनदोऽत्र व्यपोहतु ॥ योऽसाविन्दुधरो देवः पिनाकी वृषवाहनः। चन्द्रोपरागपापानि स नाशयतु शंकरः ॥ त्रैलोक्ये यानि भूतानि स्थावराणि चराणि च ॥ ब्रह्मविष्णवर्करुद्राश्च दहन्तु मम पातकम् ॥ एवमावाहयेद्देवान्मन्त्रैरेभिश्च वारुणैः । एतानेव तथा मन्त्रान्स्वर्णपट्टे विलेखयेत् ॥ ताम्रपट्टेऽथवालिख्य नववस्त्रे तथैव च। मस्तके यजमानस्य निदध्युस्ते द्विजोत्तमाः ॥ कलशान्द्रव्यसंयुक्तान्नानारूपसमन्वितान् । गृहीत्वा स्नापयेद्गूढं भद्रपीठोपरिस्थितम् ॥ पूर्वैरेव तु मन्त्रैश्च यजमानं द्विजोत्तमः। अभिषेकं ततः कुर्यान्मन्त्रैर्वारुणसूक्तकैः ॥ आचार्यं वरयेत्पश्चात्स्वर्ण-पट्टं निवेदयेत्। आचार्यदक्षिणां दद्याद्गोदानं च स्वशक्तितः। होमं वापि प्रकुर्वीत तिलैर्व्याहृतिभिस्तथा। दानं च शक्तितो दद्याद्यदी-च्छेदात्मनो हितम् ॥ सूर्यग्रहे सूर्यनामयुक्तान्मन्त्रांश्च कीर्तयेत् । अनेन विधिना यस्तु ग्रहणे स्नानमाचरेत् ॥ न तस्य ग्रहणे दोषः कदाचिदपि जायते ॥' इति ग्रहणशान्तिः ॥

गर्भिण्या ग्रहणावलोकननिषेधः

भार्गवार्चनदीपिकायां ब्रह्मसिद्धान्ते—'सर्वैः पटस्थितं वीक्ष्य स्वस्थं तैलाम्बुदर्पणैः। ग्रहणं गुर्विणी जातु न पश्येत पटं विना ॥

मङ्गलकृत्येषु विशेषो वेधः

तथा मङ्गलकृत्येषु वेधे विशेषो हेमाद्रौ—'त्रयोदश्यादितो वर्ज्यं दिनानां नवकं ध्रुवम्। माङ्गल्येषु समस्तेषु ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ॥' प्रकारान्तरं तत्रैवोक्तम्—'द्वादश्यादितृतीयान्तो वेध इन्दुग्रहे स्मृतः । एकादश्यादिकः सौरे चतुर्थ्यन्तः प्रकीर्तितः ॥' इदं च पूर्णग्रासे। 'त्र्यहं खण्डग्रहे तयोः' इति तत्रैवोक्तेः। इदं च 'ग्रस्तास्ते त्रिदिनं पूर्वम्' इति नारदेन ग्रस्तास्ते विशेषोक्तेर्ग्रस्तास्तभिन्नग्रहण-परम्। ज्योतिर्निबन्धे च्यवनः—'ग्रहणोत्पातभं त्याज्यं मङ्गलेषु ऋतुत्रयम्। यावच्च रविणा भुक्त्वा मुक्तं भं दग्धकाष्ठवत् ॥' अन्यानि चाग्नेयादिमण्डलानि तत्फलं वर्णविकारादिफलं च दैवज्ञेभ्यो ज्ञेयम्।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ग्रहणे मन्त्रदीक्षा होमतर्पणम्

पुरश्चरणचन्द्रिकायाम्—'चन्द्रसूर्योपरागे च स्नात्वा प्रयतमानसः । स्पर्शादिमोक्षपर्यन्तं जपेन्मन्त्रं समाहितः ॥ जपाद्दशांशतो होमस्तथा होमात्तु तर्पणम् । तर्पणस्य दशांशेन मार्जनं कथितं किल ॥ तत्रैव देवतारूपं ध्यात्वात्मानं प्रपूज्य च । नमोन्तं मन्त्रमुच्चार्य तदन्ते देवताभिधाम् ॥ द्वितीयान्तामहं पश्चादभिषिञ्चाम्यनेन तु । तोयैरञ्जलिना शुद्धैरेभिः सिञ्चेत्स्वमूर्धनि ॥ मार्जनस्य दशांशेन ब्राह्मणानपि भोजयेत् । जपोऽर्चापूर्वको होमस्तर्पणं चाभिषेचनम् ॥ भूदेवपूजनं पञ्चप्रकारोक्ता पुरस्क्रिया ॥' तथा-'होमाशक्तौ जपं कुर्याद्धोमसंख्याचतुर्गुणम् । एवं कृते तु मन्त्रस्य जायते सिद्धिरुत्तमा ॥'

कुरुक्षेत्रे प्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् ।

ग्रहणप्रसङ्गा त्कुरुक्षेत्रप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तमुच्यते । तत्रारुणस्मृतौ—'प्रतिग्रही कुरुक्षेत्रे न भूयः पुरुषो भवेत् । तथापि मनसः शुद्ध्यै प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥ तप्तकृच्छ्रद्वयं कुर्यादैन्दवेन समन्वितम् । सत्रेण वा यजेताथ जपेद्वा लक्षसप्तकम् ॥ वापीकूपतडागादिखननैर्विसृजेद्धनम् ॥' इति । एतच्च 'यद्गर्हितेनार्जयन्ति कर्मणा ब्राह्मणा धनम् । तस्योत्सर्गेण शुद्ध्यन्ति दानेन तपसैव च ॥' इति मनूक्तेरुत्सर्गोत्तरं ज्ञेयमिति दिक् ॥

पूर्व संकल्पितद्रव्योपग्रहणे विशेषः

ग्रहणान्तरितस्य पूर्वसंकल्पितद्रव्यस्य द्वैगुण्यं भवतीति शिष्टाः पठन्ति च । लघुब्रह्मवैवर्ते—'दातव्यमिति नो कार्यं वक्तव्यं कुत्रचित्कचित् । अहोरात्रमतिक्रम्य तद्दानं द्विगुणं भवेत् ॥ दशोत्तरं पर्वसु स्याच्छतं चन्द्रग्रहे भवेत् । सूर्यग्रहे सहस्रं तन्मरणेऽनन्तकं स्मृतम् ॥' इति । अत्र मूलं चिन्त्यम् ॥

मतान्तरखण्डनम् ।

अत्र केचिद्बौद्धतुल्या आहुः । ग्रहणस्य निमित्तत्वेन तन्निश्चयस्य प्रयोजकत्वात् ज्योतिःशास्त्रादिना ज्ञानस्य निमित्तत्वे प्राप्तेपि—

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'स्नानं दानं तपः श्राद्धमनन्तं राहुदर्शने । चन्द्रसूर्योपरागे तु यावद्दर्शनगोचरः ॥' इति जाबाल्यादिवचनेषु दृशिप्रयोगाच्चाक्षुषज्ञानस्यैवोपसंहारन्यायेन निमित्तत्वम् । अन्यथा दृशौ लक्षणा स्यात् । तेन मेघाच्छादनेन्धादीनां जन्मसप्ताष्टेत्यादिनिषिद्धदर्शनानां च स्नानश्राद्धादौ नाधिकार इति । कल्पतरुरप्याह–'दर्शनशब्देन चाक्षुषज्ञानं गृह्यते न ज्ञानमात्रम् । अज्ञातस्य निमित्तत्वासंभवान्निमित्तमहिम्नैव ज्ञानलाभेन दर्शनपदवैयर्थ्यापत्तेः । तेन चाक्षुषधीयोग्यः कालः पुण्यः । योग्यत्वं च प्रयत्नानपनेयचाक्षुषज्ञानप्रतिबन्धकराहित्यं, तेन मेघच्छन्ने योग्यताभावान्न स्नानादि' इति । निर्णयामृतेप्येवम् । तदेतत्तुच्छम् । यदि चाक्षुषज्ञानं निमित्तं स्यात्तदा 'सूर्यग्रहो यदा रात्रौ दिवा चन्द्रग्रहस्तथा । तत्र स्नानं न कुर्वीत दद्याद्दानं नच क्वचित् ॥' इति वाक्यं व्यर्थं स्यात् । चाक्षुषज्ञानाभावेन प्राप्त्यभावात् तत्पूर्वकत्वाच्च निषेधस्य । न चेदं ग्रस्तास्तपरम् । रविचन्द्रयोरस्तानन्तरं रात्रिदिवाग्रहत्वादिति वाच्यम् । तत्रपदस्य ग्रहपरत्वेऽधिकरणत्वायोगान्निमित्तपरत्वे च तद्ग्रहनिमित्तकस्नानादेरस्तात्प्रागप्यभावापत्तेः । अथ तत्रेति रात्रिदिने उच्येते सा वैश्वदेवीतिवद्गुणभूते अपि । तन्न । तादृशमन्त्रलिङ्गाभावात् । तयोर्निमित्तत्वेऽधिकरणत्वे वाऽन्यप्रयुक्तस्नानाद्यभावापत्तेश्च । किंच 'नेक्षेतोद्यन्तमादित्यं नास्तं यन्तं कदाचन । नोपरक्तं न वारिस्थं न मध्यं नभसो गतम् ॥' इति मनुवचनं बाध्येत । 'दृष्टोरिष्टप्रदो राहुः' इत्यादि च । न चात्र विहिते दर्शने निषेधाप्रवृत्तिवत्पर्युदसनीयतापि न युक्तेति वाच्यम् । दर्शनस्यानुवादेन विधेयत्वाभावात् । एतच्चाग्रे वक्ष्यामः । तत्त्वे वा विरुद्धत्रिकद्वयापत्तेः । अस्तु सकृद्दर्शनविधानेन संकोच इति चेन्न । 'मुक्तिं दृष्ट्वा ततः स्नायात्' इति मुक्तिस्नानेपि चाक्षुषज्ञानस्य निमित्तत्वापत्तेः । अस्तु किं नश्छिन्नमिति चेत् । न । ग्रस्तास्ते 'तयोः परेद्युरुदये दृष्ट्वाभ्यावहरेच्छुचिः' इति दर्शनोत्तरं भोजानविधानादन्धस्य पूर्ववेधकाल इव यावद्दर्शनं भोजननिषेधापत्तिः । मध्येन्धीभूतस्य सुतरां यावच्चक्षुःप्राप्त्युपवासप्रसङ्गश्च । अथान्नलोलुपतया तत्र ज्ञानमात्रं विवक्ष्येत । तत् पूर्वमपि निर्लज्जेन स्वीक्रियताम् । एतेन यत्केनचिदुक्तं 'स्पर्शस्नानं मुक्तिस्नानं च यस्य दर्शनं तेनैव कार्यं नान्येन,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

•Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

क्त्वाप्रत्ययेन समानकर्तृकत्वावगतेरिति तन्निरस्तम् । का तर्हि तस्य गतिः । दृशोरुद्देश्यविशेषणत्वात् ग्रहैकत्ववदविवक्षयार्थतः सिद्धज्ञानमात्रानुवादत्वे सर्वं सुस्थम् । अङ्गुलाद्यन्नादेश्यग्रहव्यावृत्त्या वा दर्शनस्यार्थवत्त्वम् । न चोक्तयोग्यतापि साध्वी, दर्शनोत्तरं मेघच्छन्ने योग्यताभावापत्त्या दानाद्यभावापत्तेः । तेन तत्त द्रेखावच्छेदेन ज्योतिःशास्त्रावेद्यत्वमेव योग्यता । किंच 'रजसो दर्शने नारी त्रिरात्रमशुचिर्भवेत्' इत्यत्राप्यन्धस्त्रीणामाशौचाभावप्रसङ्ग । यत्तु वर्धमानेनोक्तम् । ज्ञानोत्तरं त्वधिकारो न ज्ञानकाले । स्नानकाले ज्ञानाभावात् । एवं दर्शनोत्तरं मुक्तिपर्यन्तमस्त्येव योग्यतेति तदपि प्रतिज्ञामात्रम् । किंच ग्रस्तास्ते 'तयोः परेद्युरुदये दृष्ट्वाऽभ्यवहरेच्छुचिः ।' इत्यादिवाक्यवैयर्थ्यापत्तिः । चाक्षुषज्ञानान्यथानुपपत्त्यैवार्थादुदये स्नानसिद्धेः । ननु मुक्तिस्नाने शास्त्रीयमेव ज्ञानं निमित्तं न चाक्षुषं 'चन्द्रसूर्यग्रहे नाद्यात्तस्मिन्नहनि पूर्वतः । राहोर्विमुक्तिं विज्ञाय स्नात्वा कुर्वीत भोजनम् ॥' इति वृद्धगौतमेन विज्ञायेति ज्ञानमात्रोक्तः । यत्तु—'मुक्तिं दृष्ट्वा तु भोक्तव्यं स्नानं कृत्वा ततः परम् ।' तदपि ज्ञानमात्रपरम् । 'मेघमालादिदोषेण यदि मुक्तिर्न दृश्यते । आकलय्य तु तं कालं स्नात्वा भुञ्जीत वाग्यतः ॥' इति गौडनिबन्धे वचनात् । मैवम् । अज्ञातस्य निमित्तत्वाभावेन निमित्तमहिम्नैव ज्ञानलाभे वाक्यवैर्थ्यात् । ग्रस्तस्तेपि तदापत्तेश्च । किंच दर्शनं पुंसो विशेषणमुपलक्षणं वा । नाद्यः । दर्शनावच्छिन्ने काले स्नानतुलादानादेर्बाधात् । दर्शनविच्छेदे कृतमपि स्नानादि न ग्रहणनिमित्तं स्यात् । नान्त्यः । 'यावद्दर्शनगोचरः' इति यावत्पदवैयर्थ्यप्रसङ्गात् । दृष्टग्रहस्य ग्रहणोत्तरमपि स्नानाद्यापत्तेश्च । ज्ञानपक्षेप्येष दोषस्तुल्य इति चेत् मूर्खोऽसि । यदि ज्ञानवाचकं पदं श्रूयेत, ततस्तस्यान्वयो विचार्येत । दृशिस्तु श्रूयत इति वैषम्यम् । कथं तर्हि ज्ञानं लभ्यते । संक्रान्तौ स्नायादितिवदर्थादित्यवेहि । अश्रुतत्वादेव नोद्देश्यविशेषणविवक्षाकृतो वाक्यभेदोपि । अस्तु । तर्हि दृष्टं ग्रहणं निमित्तमिति चेत् । ग्रस्तास्तेऽस्तोत्तरं स्नानापत्ते । विशिष्टोद्देशे वाक्यभेदाच्च । तवाप्येतत्तुल्यमिति चेत् 'यावद्दर्शनगोचरः' इति वचनेन तन्निषेधात् । तवन्यग्रह इव ग्रस्तस्तेपि स्यात् । किंच दर्शनस्य विधिरनुवादो वा । आद्ये गहणो-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

द्देशेन दर्शनविधिरुत दर्शनविशिष्टस्नानविधिरुत स्नानोद्देशेन दर्शन विधि। नाद्यः ग्रहोद्देशेन स्नानविधाने दर्शनविधाने च वाक्यभेदात्। एतेन द्वितीयोऽपि परास्तः। न तृतीयः। स्नानस्याप्राप्तेः। दर्शनस्य निमित्तत्वेनाविधेयत्वाच्च अन्यथा सोमवमनादौ प्रसञ्जनविधिः केन वार्येत। अथ नानावाक्येषु क्वचिद्दर्शनविशिष्टस्नानविधिः। क्वचिच्च प्राप्तं दर्शनं निमित्तीकृत्य स्नानमात्रविधिः। तन्न। स्नानस्य प्रधानस्य प्राप्तौ तदङ्गदर्शनप्राप्तिः। तस्यां च निमित्ते सति स्नानमित्यन्योन्याश्रयात। एवं दर्शनविधौ सति तन्निमित्तकस्नानविधिः। सति च प्रधानस्नानविधौ तदङ्गदर्शनविधिः। एवमधिकारे प्रयोजकत्वे च योज्यम्। क्त्वार्थपूर्वकालत्वविधौ चास्त्येव वाक्यभेदः। अन्यथा स्नानोत्तरमपि दर्शनमङ्गं स्यात्। न द्वितीयः। तत्रापि दर्शनग्रहयोर्निमित्तत्वे स्नानद्वयापत्तेः। दर्शनावृत्तौ नैमित्तिकावृत्तिप्रसङ्गाद्दर्शनविशिष्टग्रहस्य विशिष्टस्यानुवादे वाक्यभेदापत्तेः। न च हविरार्तिवद्विशिष्टं निमित्तमिति वाच्यम्। आर्तिमात्रस्य हि निमित्तत्वे निमेषाद्यार्तेरपि तत्त्वापत्तेर्नैमित्तिकत्वभङ्गाद्युक्तं विशिष्टोद्देश्यत्वम्। इह तु ग्रहणमात्रस्य निमित्तत्वे न काचित्क्षतिः। तस्माद्दर्शनवाक्यानां ग्रस्तास्तविषयत्वादनादेश्यग्रहपरत्वाद्वा ज्ञानस्य चार्थतः प्राप्तेस्तदेव निमित्तम्। तेन मेघाद्याच्छादनेऽन्धादेश्च स्नानादि भवत्येवेत्यलं वेदबाह्यैः सँल्लापेन॥ इति ग्रहणनिर्णयः॥

अथ समुद्रस्नानविधिस्तत्कालश्च।

आश्वलायनः—'समुद्रे पर्वसु स्नायादमायां च विशेषतः। पापैर्विमुच्यते सर्वैरमायां स्नानमाचरन्॥ भृगौ भौमदिने स्नानं नित्यमेव विवर्जयेत्॥' भारते—'अश्वत्थसागरौ सेव्यौ न स्प्रष्टव्यौ कदाचन। अश्वत्थं मन्दवारे तु सागरं पर्वणि स्पृशेत॥' पृथ्वीचन्द्रोदये स्कान्दे—'पुनाति पर्वणि स्नानात्तर्पणैः सरितां पतिः। कदाचिदपि नैवात्र स्नानं कुर्यादपर्वणि॥' अस्यापवादस्तत्रैव प्रभासखण्डे—'पर्वकाले च संप्राप्ते नदीनां च समागमे। सेतुबन्धे तथा सिन्धौ तीर्थेष्वन्येषु संयुतः। एवमादिषु सर्वेषु मेध्योऽन्ये तु स्वकर्मणि॥' तथा—'विना मन्त्रं विना पर्व

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

क्षुरकर्म विना नरैः । कुशाग्रेणापि देवेशि न स्प्रष्टव्यो महोदधिः ॥' तथा–'न कालनियमः सेतौ समुद्रस्नानकर्मणि ।' तद्विधिश्च तत्रैव–'पिप्पलादसमुत्पन्ने कृत्ये लोकभयंकरे । पाषाणस्ते मया दत्त आहारार्थं प्रकल्प्यताम् ॥' इति पाषाणं प्रक्षिप्य–'विश्वाची च घृताची च विश्वयोने विशांपते । सान्निध्यं कुरु मे देव सागरे लवणाम्भसि ॥ नमस्ते विश्वगुप्ताय नमो विष्णो अपांपते । नमो जलधिरूपाय नदीनां पतये नमः ॥ समस्तजगदाधार शङ्खचक्र-गदाधर । देव देहि ममानुज्ञां तव तीर्थनिषेवणे ॥ त्रितत्त्वात्मकमी-शानं नमो विष्णुमुमापतिम् । सान्निध्यं कुरु देवेश सागरे लवणा-म्भसि ॥ अग्निश्च योनिरनिलश्च देहे रेतोधा विष्णुरमृतस्य नाभिः । एतद्ब्रुवन्पाण्डव सत्यवाक्यं ततोऽवगाहेत पतिं नदी-नाम् ॥' इति भारतोक्तमन्त्रान्पठित्वा विधिवत्स्नात्वा–'सर्वरत्नो भवान् श्रीमान् सर्वरत्नाकरो यतः ॥ सर्वरत्नप्रधानस्त्वं गृहाणार्घ्यं महोदधे ॥' इत्यर्घ्यं दत्वा तर्पयेत् । यथोक्तं पृथ्वीचन्द्रोदये स्कान्दे–'पिप्पलादं विकण्वं च कृतान्तं जीविकेश्वरम् । वसिष्ठं वामदेवं च पराशरसुमापतिम् ॥ वाल्मीकिं नारदं चैव वालखिल्यांस्तथैव च । नलं नीलं गवाक्षं च गवयं गन्धमादनम् ॥ जाम्बवन्तं हनूमन्तं सुग्रीवं चाङ्गदं तथा । मैन्दं च द्विविदं चैव ऋषभं शरभं तथा ॥ रामं च लक्ष्मणं चैव सीतां चैव यशस्विनीम् । एतांस्तु तर्पयेद्वि-द्वान् जलमध्ये विशेषतः ॥ आब्रह्मस्तम्बपर्यंतं यत्किंचित्सचरा-चरम् । मया दत्तेन तोयेन तृप्तिमेवाभिगच्छतु ॥' इति ॥

इति श्रीमीमांसकनारायणभट्टसूरिसूनुरामकृष्णभट्टात्मज-
दिनकरभट्टानुजकमलाकरभट्टकृते निर्णसिन्धौ
प्रथमः परिच्छेदः समाप्तः ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

❀ अथैकादशीपट्टः ❀

अथ शुद्धाविद्धादिभेदेन स्मार्तवैष्णवयोः स्फुटज्ञानार्थं श्रीवासुदेवोपाध्यायविरचितो धर्माब्धिस्थोदाहरण-सहितश्चैकादशीनिर्णयपट्टो लिख्यते ।

श्रीकाशिनाथोपाध्यायैरेकादश्या विनिर्णयः ।
कृतोऽष्टादशभेदात्मा स्मार्तवैष्णवयोः पृथक् ॥ १ ॥
संलक्ष्योदाहृतेः सिद्धिं संशोध्य ग्रन्थपट्टयोः ।
विभाव्यैक्यं च पट्टेऽस्मिन्स यथामति लिख्यते ॥ २ ॥
श्रीरामचन्द्रनामा नामप्रागर्धघृष्टजिह्वाग्रः ।
स ब्रह्मवित्पिता मे जयतितरामेष जानकीजानिः ॥ ३ ॥
नामस्मृत्या यस्य च विबोधितो धर्मशास्त्रदुर्बोधम् ।
निर्णयमेकादश्या निःसंदिग्धं सुखेन विलिखामि ॥ ४ ॥

अत्र समत्वं सूर्योदयाद्यक्षणाव्यवहितपूर्वक्षणान्ततिथिसत्त्वं षष्टि-घटिकारूपम् । न्यूनत्वं तु किंचिन्न्यूनषष्टिघटिकावधिशुद्धाविद्धाभेदेषु तिथिक्षयवृद्धिभ्यां विलक्षणम् । यथा वैष्णवशुद्धैकादशीप्रथमभेदे दशमी ५५।५९, एकादशी ४९।५९, द्वादशी ४३।५९। एवं परमक्षये पलोनचतुश्चत्वारिंशद्घटीमितं न्यूनत्वं, एवमेव स्मार्तवैष्णवयोः शुद्धाविद्धाभेदैर्विलक्षणत्वमूह्यम् ।

एते वैष्णवानामेकादश्याः शुद्धाभेदाः ।

अत्रारुणोदयवेधरहिता शुद्धा सा चतुर्विधा, सा चोदाहरणेषु प्रदर्श्यते —

	दशमी घ.	दशमी प.	एकाद. घ.	एकाद. प.	द्वादशी घ.	द्वादशी प.	
शुद्धन्यूना न्यूनद्वादशिका ।	५५	५९	५८	०	५९	५९	इयमनुभयाऽधिक्यवती शुद्धा । अत्र स्मार्तानां वैष्णवानां चैकादश्यामेवोपवासः। भेदः १।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम् ।	५५	०	५७	०	५८	०	
शुद्धन्यूना समद्वादशिका ।	५५	५९	५८	०	६०	०	इयमप्यनुभयाऽधिक्यवती शुद्धा । अत्रापि स्मार्तानां वैष्णवानां चैकादश्यामेवोपवासः। भेदः २।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम् ।	५५	०	५७	०	५८	०	

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

	दशमी		एकाद.		द्वादशी		
	घ.	प.	घ.	प.	घ.	प.	
शुद्धन्यूनाऽधिकद्वादशिका।	५५	५९	५८	०	६०	१	इयं द्वादशीमात्राऽधिक्यवती शुद्धा। अत्र स्मार्तानामेकादश्यां, वैष्णवानां द्वादश्यामेवोपवास इति माधवमतं, सर्वेषां द्वादश्यामेवेति हेमाद्रिमतम्। भे० ३।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५५	०	५८	०	६०	१	
शुद्धसमा न्यूनद्वादशिका।	५५	५९	६०	०	५९	५९	इयमनुभयाधिक्यवती शुद्धा। अत्र स्मार्तानां वैष्णवानां चैकादश्यामेवोपवासः।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५५	०	५७	०	५८	०	इदमुदाहरणं विचार्यम्। भे० ४।
शुद्धसमा समद्वादशिका।	५५	५९	६०	०	६०	०	इयमप्यनुभयाधिक्यवती शुद्धा। अत्र स्मार्तानां वैष्णवानां चैकादश्यामेवोपवासः। भे० ५।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५५	०	५७	०	५८	०	
शुद्धसमाऽधिकद्वादशिका।	५५	५९	६०	०	६० ३	० १	इयं द्वादशीमात्राधिक्यवती शुद्धा। अत्र स्मार्तानामेकादश्यां, वैष्णवाना द्वादश्यामेवोपवासः। इति माधवमतं, सर्वेषां द्वादश्यामेवोपवास इति हेमाद्रिमतम्। भे० ६।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५५	०	५८	०	६०	१	
शुद्धाऽधिका न्यूनद्वादशिका।	५५	५९	६० ०	० १	५९ क्ष	५८ यः	इयमेकादशीमात्राधिक्यवती शुद्धा अत्र स्मार्तगृहस्थानां पूर्वैकादश्यां, यतीनां वैष्णवानां चोर्वरितैकादश्यामेवोपवास इति माधवमतं, कामाद्वा अकामाद्वा वैष्णवो द्वयमुपवसेदिति हेमाद्रिमतं,इदमुदाहरणं विचार्यम्। भे० ७।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५५	०	६०	१	५८ क्ष	० यः	
शुद्धाऽधिका समद्वादशिका।	५५	५९	६० ०	० १	५९ क्ष	५९ यः	इयमप्येकादशीमात्राधिक्यवती शुद्धा। अत्रापि स्मार्तगृहस्थानां पूर्वैकादश्यां, यतीनां वैष्णवानां चावशिष्टैकादश्यामेवोपवास इति माधवमतं, कामाद्वा अकामाद्वा वैष्णवो द्वयमुपवसेदिति हेमाद्रिमतम्। भे० ८।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५५	०	६०	१	५८ क्ष	० यः	

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

	दशमी		एकाद.		द्वादशी		
	घ.	प.	घ.	प.	घ.	प.	
शुद्धाऽधिकाऽधिकद्वादशिका।	५५	५९	६०	१	३	५५	इयमुभयाधिक्यवती शुद्धा। अत्र स्मार्तैर्वैष्णवैश्च परैवैकादश्युपोष्येत्युभयमतम्। भे० ९।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५५	०	६०	१	५	०	

इति वैष्णवानां शुद्धैकादशीभेदाः।

एते वैष्णवानां विद्धैकादश्या भेदाः।

अत्र विद्धत्वमरुणोदये दशमीसत्त्वम्। अरुणोदयस्तु सूर्योदयात्प्राक् चतुर्घटिकात्मकः।

	दशमी		एकाद.		द्वादशी		
	घ.	प.	घ.	प.	घ.	प.	
विद्धन्यूना न्यूनद्वादशिका।	५५	१	५८	०	५९	५९	इयमनुभयाधिक्यवती विद्धा। अत्र स्मार्तानामेकादश्यामेवोपवासो वैष्णवानां विद्धत्वात् द्वादश्यामुपवासः। भेदः १।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५७	०	५८	०	५९	०	
विद्धन्यूना समद्वादशिका।	५६	१	५८	०	६०	०	इयमप्यनुभयाधिक्यवती विद्धा। अत्रापि स्मार्तानामेकादश्यामेवोपवासो वैष्णवानां विद्धत्वात् द्वादश्यामुपवासः। भे० २।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५७	०	५८	०	५९	०	
विद्धन्यूनाऽधिकद्वादशिका।	५६	१	५८	०	६०	०	द्वादशीमात्राऽधिक्यवती विद्धेयम्। अत्र स्मार्तैरेकादश्युपोष्या, वैष्णवैर्द्वादश्युपोष्या। हेमाद्रिमते तु सवर्द्वादश्येवोपोष्या। भे० ३।
					१	१	
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५८	०	५९	०	६०	१	
विद्धसमान्यूनद्वादशिका।	५८	५९	६०	०	५९	५९	इयमनुभयाधिक्यवती विद्धा। अत्र स्मार्तानामेकादश्यामेवोपवासो वैष्णवानां विद्धत्वात् द्वादश्यामुपवासः। भे० ४।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५७	०	५८	०	५९	०	
विद्धसमा समद्वादशिका।	५९	१	६०	०	६०	०	इयमप्यनुभयाधिक्यवती विद्धा। अत्र स्मार्तानामेकाादश्यामेवोपवासो वैष्णवानां विद्धत्वात् द्वादश्यामुपवासः। भे० ५।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५७	०	५८	०	५९	०	

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

	दशमी		एकाद.		द्वादशी		
	घ.	प.	घ.	प.	घ.	प.	
विद्धसमाधिकद्वादशिका।	५७	१	६०	०	६०	०	इयं द्वादशीमात्राऽधिक्यवती विद्धा।
					१	०	अत्र स्मार्तै रेकादश्युपोष्या, वैष्णवैर्द्वादश्युपोष्या। हेमाद्रिमते तु सर्वैर्द्वादश्येवोपोष्या।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५८	०	५९	०	६०	१	भे० ६।
विद्धाधिका न्यूनद्वादशिका।	५९	१	६०	०	५९	५८	इयमेकादशीमात्राधिक्यवती विद्धा।
			०	१	क्ष	यः	अत्र स्मार्तैर्गृहस्थैः पूर्वैकादश्युपोष्या, यतिभिर्निष्कामगृहिभिर्वनस्थैर्विधवाभिर्वैष्णवैश्च परैवोपोष्या। विष्णुप्रीतिकामैः
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५८	०	६०	१	५८	०	स्मार्तैरुपासद्वयं कार्यमिति
					क्ष	यः	केचित्। भे० ७।
विद्धाधिका समद्वादशिका।	५९	१	६०	०	५९	५९	इयमप्येकादशीमात्राधिक्यवती
			०	१	क्ष	यः	विद्धा। अत्र स्मार्तैर्गृहस्थैः पूर्वैकादश्युपोष्या यतिभिर्निष्कामगृहिभिर्वनस्थैर्विधवाभिर्वैष्णवैश्च परैवोपोष्या। विष्णुप्रीतिकामैः
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५८	०	६०	१	५८	०	स्मार्तैरुपवासद्वयं कार्यमिति
					क्ष	यः	केचित्। भे० ८।
विद्धाधिकाऽधिकद्वादशिका।	५६	१	६०	०	५	०	इयमुभयाधिक्यवती विद्धा। अत्र
			१	०			सर्वैः स्मार्तै वैष्णवैश्चावशिष्टा
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	५८	०	६०	१	४	०	परैवैकादश्युपोष्या। भे० ९।

इति वैष्णवानां विद्धैकादशीभेदाः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A,I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

इमे स्मार्तानां शुद्धैकादशीभेदाः ।

शुद्धत्वं नाम सूर्योदये दशम्यसत्त्वम् । सा चतुर्विधा, सा चोदाहरणैः प्रदर्श्यते ।

	दशमी		एकाद.		द्वादशी		
	घ.	प.	घ.	प.	घ.	प.	
शुद्धन्यूना न्यूनद्वादशिका ।	५९	५९	५९	०	५९	०	इयमनुभयाधिक्यवती विद्धा । अत्र स्मार्तानामेकादश्यामेवोपवासो न द्वादश्यां, वैष्णवानां तु विद्धत्वात् द्वादश्यामुपवासः ।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम् ।	५७	०	५८	०	५९	०	भे० १।
शुद्धन्यूना समद्वादशिका ।	५९	५९	५९	४५	६०	०	इयमप्यनुभयाधिक्यवती शुद्धा । अत्र स्मार्तानामेकादश्यामेवोपवासो न द्वादश्याम् । वैष्णवानां तु विद्धत्वात् द्वादश्यामुपवासः । भे० २।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम् ।	५७	०	५८	०	५९	०	
शुद्धन्यूनाऽधिकद्वादशिका ।	५९	५९	५९	५९	६०	०	इयं द्वादशीमात्राधिक्यवती शुद्धा । अत्र शुद्धत्वात् । स्मार्तानामेकादश्यामेवोपवासो न द्वादश्यामिति माधवमतम् । हेमाद्रिमते तु सर्वैर्द्वादश्येवोपोष्या । केचित्तु मुमुक्षुभिः स्मार्तैः परोपोष्येत्याहुः । भे० ३।
					१	०	
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम् ।	५८	०	५९	०	६०	०	
					०	१	
शुद्ध समान्यूनद्वादशिका ।	५८	५९	६०	०	५९	५९	इयमनुभयाधिक्यवती शुद्धा । अत्र स्मार्तानामेकादश्यामेवोपवासो न द्वादश्याम् । वैष्णवानां तु विद्धत्वात द्वादश्यामेवोपवासः । भे० ४।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम् ।	५७	०	५८	०	५९	०	
शुद्धसमा समद्वादशिका ।	५८	५९	६०	०	६०	०	इयमप्यनुभयाधिक्यवती शुद्धा । अत्रापि स्मार्तानामेकादश्यामेवोपवासो न द्वादश्याम् । वैष्णवानां तु विद्धत्वात् द्वादश्यामेवोपवासः । भे० ५।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम् ।	५७	०	५८	०	५९	०	

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

	दशमी		एकाद.		द्वादशी		
	घ.	प.	घ.	प.	घ.	प.	
शुद्धसमाऽधिकद्वादशिका ।	५९	५९	६०	०	६० १	० ०	इयं द्वादशीमात्राऽधिक्यवतीशुद्धा। अत्र शुद्धत्वात्स्मार्तानामेकादश्यामेवोपवासो नद्वादश्यामिति माधवमतम् । हेमाद्रिमते तु सर्वैः परा द्वादश्येवोपोष्या । केचित्तु मुमुक्षुभिः स्मार्तैः परोपोष्येत्याहुः । भे० ६।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम् ।	५८	०	५९	०	६० ०	० १	
शुद्धान्यूनाधिकाद्वादशिका ।	५९	५९	६० १	० ०	५८ क्ष	५९ यः	इय मेकादशीमात्राऽधिक्यवती शुद्धा। अत्र स्मार्तैर्गृहिभिः पूर्वैकादश्युपोष्या। यतिभिर्निष्कामगृहिभिर्वनस्थैर्विधवाभिर्वैष्णवैश्चपरैवोपोष्या। विष्णुप्रीतिकामैरुपवासद्वयं कार्यमिति केचित् । भे० ७।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम् ।	५८	०	६०	१	५८ क्ष	० यः	
शुद्धाधिका समद्वादशिका ।	५९	५९	६० १	० ०	५९ क्ष	० यः	इयमप्येकादशीमात्राऽधिक्यवती शुद्धा। अत्र स्मार्तैर्गृहिभिः पूर्वैकादश्युपोष्या । यतिभिर्निष्कामगृहिभिर्वनस्थैर्विधवाभि - र्वैष्णवैश्च परैवोपोष्या । विष्णुप्रीतिकामैरुपवासद्वयं कार्यमिति केचित् । भे० ८।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम् ।	५८	६०	६०	१	५८ क्ष	० यः	
शुद्धान्यूनाधिकाद्वादशिका ।	५९	५९	६० १	० ०	३	०	इयमुभयाधिक्यवती शुद्धा । अत्र सर्वैः स्मार्तैर्वैष्णवैश्चावशिष्टा परैवैकादश्युपोष्या । भे० ९।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम् ।	५८	०	६० १	० ०	४	०	

इति स्मार्तानां शुद्धैकादशीभेदाः ।

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE
CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

इमे स्मार्तानां विद्धैकादशीभेदाः ।

अत्र विद्धत्वं सूर्योदये दशमीसत्त्वम् । सूर्योदयस्तु षष्टिघटिकान्त्यक्षणाव्यवहितोत्तरक्षणलवादिकालावच्छिन्नः। इयमपि विद्धाचतुर्विधा, सा चोदाहरणेषु प्रदर्श्यते—

	दशमी		एकाद.		द्वादशी		
	घ.	प.	घ.	प.	घ.	प.	
विद्धान्यूना न्यूनद्वादशिका।	२	०	५७	५९	५७	०	इयमनुभयाधिक्यवती विद्धा। अत्र स्मार्तानामेकादश्यामुपवासः वैष्णवानां द्वादश्यामुपवासः। भेदः १।
			क्ष	यः			
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	२	०	५६	०	५५	०	
			क्ष	यः			
विद्धन्यूना समद्वादशिका।	२	०	५७	५९	६०	०	इयमप्यनुभयाधिक्यवती विद्धा। अत्रापि स्मार्तानामेकादश्यामुपवासः वैष्णवानां द्वादश्यामुपवासः। भे० २।
			क्ष	यः			
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	२	०	५६	०	५५	०	
			क्ष	यः			
विद्धन्यूनाधिकद्वादशिका।	१	०	५८	५९	६०	०	इयं द्वादशीमात्राधिक्यवती विद्धा। अत्रैकादश्या विद्धत्वात् द्वादश्यामेव स्मार्तानामप्युपवासः। तत्र किमु वक्तव्यं वैष्णवानामिति। एवं चोभयाधिक्ये द्वादशीमात्राधिक्ये च स्मार्तानां विद्धायास्त्यागो नान्यत्र। भे०३।
					१	०	
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	१	०	५८	०	६०	०	
					०	१	
विद्धसमा न्यूनद्वादशिका।	२	०	५८	०	५८	५९	इयमनुभयाधिक्यवती विद्धा। अत्र स्मार्तानामेकादश्यामुपवासः। वैष्णवानां द्वादश्यामुपवासः। भे० ४।
			क्ष	यः			
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	२	०	५६	०	५५	०	
			क्ष	यः			
विद्धसमासमद्वादशिका।	२	०	५८	०	६०	०	इयमनुभयाधिक्यवती विद्धा। अत्र स्मार्तानामेकादश्यामुपवासः वैष्णवानां द्वादश्यामुपवासः। भे० ५।
			क्ष	यः			
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	२	०	५६	०	५५	०	
			क्ष	यः			
विद्धसमाऽधिकद्वादशिका।	२	०	५८	०	६०	०	इयं द्वादशीमात्राऽधिक्यवती विद्धा। अत्रैकादश्या विद्धवात् द्वादश्यामेव स्मार्तानामप्युपवासः तत्र किमु वक्तव्यं वैष्णवानामिति। पूर्ववदत्र स्मार्तानां विद्धायास्त्यागः। भे० ६।
			क्ष	यः	१	०	
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	१	०	५८	०	६०	०	
			क्ष	यः	०	१	

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

	दशमी		एकाद.		द्वादशी		
	घ.	प.	घ.	प.	घ.	प.	
विद्धाधिका न्यूनद्वादशिका।	७	०	२	०	५५ क्ष	० यः	इयमेकादशीमात्राऽधिक्यवती विद्धा। अत्र स्मार्तैर्गृहिभिः पूर्वैकादश्युपोष्या। यतिभिर्निष्कामगृहिभिर्वनस्थैर्विधवाभिर्वैष्णवैश्च परैवोपोष्या। विष्णुप्रीतिकामैः स्मार्तैरुपवासद्वयं कार्यमिति केचित्। भे० ७।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	४	०	२	०	५८ क्ष	० यः	
विद्धाऽधिकासमद्वादशिका।	५	०	२	०	५८ क्ष	० यः	इयमेकादशीमात्राऽधिक्यवती विद्धा। अत्र स्मार्तैर्गृहिभिः पूर्वोपोष्या। यतिभिर्निष्कामगृहिभिर्वनस्थैर्विधवाभिर्वैष्णवैश्च परैवोपोष्या। विष्णुप्रीतिकामैः स्मार्तैरुपवासद्वयं कार्यमिति केचित्। भे० ८।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	४	०	२	०	५८ क्ष	० यः	
विद्धाधिकाऽधिकद्वादशिका।	७	०	४	०	३	०	इयमुभयाधिक्यवती विद्धा। अत्र सर्वैः स्मार्तैर्वैष्णवैश्चावशिष्टा परैवैकादश्युपोष्या। एतदुदाहरणेपि स्मार्तानां विद्धायास्त्यागः। भे० ९।
धर्माब्धिस्थमुदाहरणम्।	२	०	३	०	४	०	

इति स्मार्तानां विद्धैकादशीभेदाः।

रामचन्द्रतनूजेन वासुदेवेन विन्मुदे।
धर्माब्धिशेषपट्टोयमशोध्येकादशीभिदाम्॥ १॥

श्रीसीतारामचन्द्रार्पणमस्तु॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

श्रीगणेशाय नमः ।

निर्णयसिन्धौ

द्वितीयः परिच्छेदः ।

अथ चैत्रमासः ।

अथ संवत्सरप्रतिपदमारभ्य—'तिथिकृत्ये च कृष्णादिं व्रते शुक्लादिमेव च । विवाहादौ च सौरादिं मासं कृत्ये विनिर्दिशेत् ॥' इति ब्राह्मं प्रायशोऽनुसृत्य तिथिनिर्णयस्तत्कृत्यं च निरूप्यते ।

मीनसंक्रान्तिः

तत्र मीनसंक्रान्तौ पश्चात्षोडश घटिकाः पुण्यकालः । रात्रौ तु निशीथात्प्राक्परतश्च संक्रमे पूर्वोत्तरदिनार्धं पुण्यम् । निशीथे तु दिनद्वयं पुण्यमिति सामान्यनिर्णयादवसेयम् ॥

अथ तिथिनिर्णयः ।

तत्र चैत्रशुक्लप्रतिपदि वत्सरारम्भः । तत्रौदयिकी ग्राह्या । 'चैत्रे मासि जगद्ब्रह्मा ससर्ज प्रथमेऽहनि । शुक्लपक्षे समग्रं तु तदा सूर्योदये सति ॥' इति हेमाद्रौ ब्राह्मोक्तेः । दिनद्वये तद्व्याप्तावव्याप्तौ वा पूर्वैव । तदुक्तं ज्योतिर्निबन्धे—'चैत्रे सितप्रतिपदि यो वारोऽर्कोदये स वर्षेशः । उदयद्वितये पूर्वा नोदययुगुलेपि पूर्वः स्यात् ॥ यस्माच्चैत्रसितादेरुदयाद्भानोः प्रवृत्तिरब्दादेः ॥' इति । 'वत्सरादौ वसन्तादौ बलिराज्ये तथैव च । पूर्वविद्धैव कर्तव्या प्रतिपत्सर्वदा

---

१ सा तिथिस्तदहोरात्रं यस्यामभ्युदतो रविः । तया कर्माणि कुर्वीत ह्रास वृद्धीं न कारणम् ॥ सा तिथिस्तदहोरात्रं यस्यामस्तमितोरविः । तया कर्माणि कुर्वीत ह्रास वृद्धीं न कारणम् ॥ शुक्लपक्षे तिथिर्ग्राह्यायस्यामभ्युदितो रविः । कृष्णपक्षे तिथिर्ग्राह्या यस्यामस्तमितो रविः ॥ इति विष्णु धर्मोत्तरवचनत्वात् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

बुधैः ॥' इति वृद्धवसिष्ठोक्तेः । 'चैत्रेमासस्य या शुक्लप्रथमा प्रतिपद्भवेत् । तदह्नि ब्रह्मणः कृत्वा सोपवासस्तु पूजनम् ॥ संवत्सरमवाप्नोति सौख्यानि भृगुनन्दन ॥' इति हेमाद्रौ विष्णुधर्मोक्तेः ।

अधिकश्चेत्तदा निर्णयः ।

यदा तु चैत्रो मलमासो भवति तदा देवकार्यस्य तत्र निषिद्धत्वाच्छुद्धे मासि संवत्सरारम्भः कार्य इति केचिदाहुः । निष्कर्षस्तु—'शुक्लादेर्मलमासस्य सोऽन्तर्भवति चोत्तरः ।' इत्यादिवचनादग्रिमवर्षान्तःपातान्मलमासमारभ्यैव वर्षप्रवृत्तेः शुक्रास्तादाविव मलमास एव कार्य इति वयं प्रतीमः । ननु शुक्रास्तादौ चैत्रशुक्लप्रतिपदन्तरस्याभावाद्युक्तं तन्मध्य एवानुष्ठानम् । मलमासे तु शुद्धप्रतिपदन्तरस्य संभवात् शुद्ध एव वत्सरारम्भो युक्त इति चेत्, भ्रान्तोसि । नहि प्रतिपदन्तरसत्त्वं प्रयोजकं, द्विःकरणापत्तेः वर्षद्वयापत्तेश्च । अपि तु वत्सरारम्भः स तु मलमासेऽपीत्युक्तं प्राक् । नहि चैत्रशुक्लादिर्मलमासः पूर्ववर्षेऽन्तर्भवतीति ब्रह्मणापि सुवचम् ।

अत्रतैलाभ्यङ्गः ।*

तत्र तैलाभ्यङ्गो नित्यः । 'वत्सरादौ वसन्तादौ बलिराज्ये तथैव च । तैलाभ्यङ्गमकुर्वाणो नरकं प्रतिपद्यते ॥' इति वसिष्ठोक्तेः । अस्यामेव नवरात्रारम्भः । तदुक्तं मार्कण्डेयपुराणे—'शरत्काले महा-

---

* अत्र विशेषोक्तवृद्धवसिष्ठेन यथा–चैत्रमासि महाबाहो पुण्या या प्रतिपत्परा । अस्यां वैनिम्ब पत्राणि प्राश्य वै शृणुत्तिथिम् । शकवत्सरभूप मंत्रीणांरसधानेश्वरमेघ पतिनाम् । श्रवणात पठनाच्च वैनृणां शुभतां यात्यशुभं सह श्रिया ॥ इति वचनाच्छकादि श्रवणं कार्यम् । ब्राह्मे—तत्र कार्या महाशान्तिः सर्व कल्मषनाशिनी । तस्यामादौ तु संपूज्यो ब्रह्मा कमल संभवः ॥ पाद्यार्घ्यधूपदीपदीपैश्च वस्त्रालंकारभूषणैः । होमैवल्युपहारैश्च तथा ब्राह्मण तर्पणैः । ततः क्रमेण देवेभ्यः पूजा कार्या पृथक् पृथक् । ओं नमो ब्रह्मणे तुभ्यं कामाय च महात्मने ॥ नमस्ते बहुरुपाय विष्णवे परमात्मने । नमस्तेस्तु निमेषाय त्रुटये महात्मने ॥ अथ कि बहुनोक्तेन मन्त्रेणानेन पूजयेत् । प्रांमुखोदङ्मुखान्विप्रान्देवानुद्दिश्य पूर्ववत् ॥ अनेनैव तुमन्त्रेण स्वाहान्तेन पृथक्पृथक् । यविष्ठायाग्ने होमः कर्तव्यः सर्वं तृप्तये । शलाशोभा ततः कार्या मङ्गला लम्भनं तथा । भोजयित्वा द्विजान्सर्वान्सुहृत्संबन्धिबान्धवान् ॥ इति ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पूजा क्रियते या च वार्षिकी ।' इति । तत्र परयुतैव ग्राह्या । 'अमायुक्ता न कर्तव्या प्रतिपच्चण्डिकार्चने । मुहूर्तमात्रा कर्तव्या द्वितीयादिगुणान्विता ॥' इति देवीपुराणात् । 'तिस्रो ह्येताः पराः प्रोक्तास्तिथयः कुरुनन्दन । कार्तिकाश्वयुजोर्मासोश्चैत्रे मासि च भारत ॥' इति हेमाद्रौ ब्राह्मोक्तेः । पराः परयुताः । अत्र विशेषः पारणानिर्णयश्च शारदनवरात्रे वक्ष्यते ।

प्रपादानम् ।

अत्र प्रपादानमुक्तमपरार्के भविष्ये—'अतीते फाल्गुने मासि प्राप्ते चैत्रमहोत्सवे । पुण्येऽह्नि विप्रकथिते प्रपादानं समारभेत् ॥' इत्युपक्रम्य—'ततश्चोत्सर्जयेद्विद्वान्मन्त्रेणानेन मानवः । प्रपेयं सर्वसामान्या भूतेभ्यः प्रतिपादिता ॥ अस्याः प्रदानात्पितरस्तृप्यन्तु हि पितामहः । अनिवार्यं ततो देयं जलं मासचतुष्टयम् ॥' इति ।

प्रत्यहं धर्मकुम्भदानम् ।

तथा—'प्रपां दातुमशक्तेन विशेषाद्धर्ममीप्सुना । प्रत्यहं धर्मघटको वस्त्रसंवेष्टिताननः ॥ ब्राह्मणस्य गृहे देयः शीतामलजलः शुचिः ॥' तत्र मन्त्रः—'एष धर्मघटो दत्तो ब्रह्मविष्णुशिवात्मकः । अस्य प्रदानात्सकला मम सन्तु मनोरथाः ॥ अनेन विधिना यस्तु धर्मकुम्भं प्रयच्छति । प्रपादानफलं सोपि प्राप्नोतीह न संशयः ॥' इति ॥

चैत्रशुक्ल द्वितीया निर्णयः ।

तत्र शुक्लद्वितीया तृतीया युतैव ग्राह्या "युग्माग्नि–इति निगमवाक्यात् । तृतीयया युता कार्या द्वितीया नतु पूर्वयेति माधवोदाहृत व्यासवचनम् । एकादश्यष्टमीषष्ठी द्वितीया च चतुर्दशी । अमावास्या तृतीयाच ता उपोष्या परान्विता ॥ इति भृगुवचनमपि शुक्लद्वितीयाविषयमेव । चैत्रशुक्लद्वितीयायामुमादि पूजोक्ता निर्णयामृते भविष्योत्तरे—चैत्रशुक्लद्वितीयायामुपापूजा फलार्थिभिः । शिवपूजाऽग्निपूजा च कर्तव्या मुनिसत्तम ॥ इति । हेमाद्रौ देविपुराणे—

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

उमां शिवं हुताशं च द्वितीयायां प्रपूजयेत् । हविष्यमन्नं नैवेद्यं देयं गन्धार्चनान्वितम् ॥ फलमाप्नोति विप्रेन्द्र सर्वक्रतुसमुद्भवम् ॥ इति ।

चैत्रशुक्लतृतीया निर्णयः ।

चैत्रशुक्लतृतीयायां गौरीमीश्वरसंयुतां संपूज्य दोलोत्सवं कुर्यात् । तदुक्तं निर्णयामृते देवीपुराणे—'तृतीयायां यजेद्देवीं शंकरेण समन्विताम् । कुङ्कुमागरुकर्पूरमणिवस्त्रसुगन्धकैः ॥ स्रग्गन्धधूपदीपैश्च दमनेन विशेषतः । आन्दोलयेत्ततो वत्स शिवोमातुष्टये सदा ॥' इति । अत्र तृतीया चतुर्थीयुता ग्राह्या । 'मुहूर्तमात्रसत्त्वेपि दिने गौरीव्रतं परे ।' इति माधवोक्तेः । अत्रैव सौभाग्यशयनव्रतमुक्तं मात्स्ये–'वसन्तमासमासाद्य तृतीयायां जनप्रिये । सौभाग्याय सदा स्त्रीभिः कार्यं पुत्रसुखेप्सुभिः ॥' इति । तत्रापि परयुतैव ।

अत्र मन्वादिनिर्णयः ।

इयं च मन्वादिरपि । अत्रैव प्रसङ्गात्सर्वमन्वादिनिर्णय उच्यते । ताश्चोक्ता दीपिकायाम्—तिथ्यग्नी न तिथिस्तिथ्याशे कृष्णेभोनलो ग्रहः । तिथ्यर्कौ न शिवोऽश्वोमातिथी मन्वादयो मधोः ॥' इति । तिथिः पूर्णिमा । अग्निस्तृतीया । नेति वैशाखे नास्तीत्यर्थः । आशा दशमी । कृष्णेभः कृष्णाष्टमी । अनलस्तृतीया । ग्रहो नवमी । अर्कौ द्वादशी । नेति मार्गशीर्षे नास्तीत्यर्थः । शिव एकादशी । अश्वः सप्तमी । मधोश्चैत्रादारभ्यैता मन्वादय इत्यर्थः । अत्र मूलवचनानि हेमाद्र्यादेर्ज्ञेयानि । एताश्च मन्वादयो हेमाद्रिमते शुक्लपक्षस्थाः पौर्वाह्णिकाः, कृष्णपक्षस्था अपराह्णिका ग्राह्याः । 'पूर्वाह्णे तु सदा ग्राह्याः शुक्ला मनुयुगादयः । दैवे कर्मणि पैत्र्ये च कृष्णे चैवापराह्णिकाः ॥' इति गारुडवचनात् । 'अथो मन्वादियुगादिकर्मतिथयः पूर्वाह्णिकाः स्युः सिते विज्ञेया अपराह्णिकाश्च बहुले' इति दीपिकोक्तेश्च । कालादर्शे त्वपराह्णव्यापित्वं मन्वादिषूक्तं तत्त्वयुक्तमिति युगादिनिर्णये वक्ष्यामः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अत्र श्राद्धम् ।

अत्र च श्राद्धमुक्तं मात्स्ये—'कृतं श्राद्धं विधानेन मन्वादिषु युगादिषु । हायनानि द्विसाहस्रं पितॄणां तृप्तिदं भवेत् ॥' इति । मन्वादिश्राद्धं च मलमासे सति मासद्वयेपि कार्यम् । 'मन्वादिकं तैर्थिकं च कुर्यान्मासद्वयेपि च ॥' इति स्मृतिचन्द्रिकोक्तेः । अत्र पिण्डरहितं श्राद्धं कुर्यात् । तदुक्तं कालादर्शे—'विषुवायनसंक्रान्तिमन्वादिषु युगादिषु । विहाय पिण्डनिर्वापं सर्वं श्राद्धं समाचरेत् ॥' इति । मन्वादिश्राद्धं नित्यम् । अकरणे प्रायश्चित्तदर्शनात् । तदुक्तमृग्विधाने—'त्वं भुवः प्रतिमन्त्रं च शतवारं जले जपेत् । मन्वादयो यदा न्यूनाः कुरुते नैव चापि यः ॥' इति । एवं यत्र प्रायश्चित्तवीप्सादिदर्शनं तानि षण्णवतिश्राद्धानि नित्यानि । तानि तु—'अमायुगमनुक्रान्तिधृतिपातमहालयाः । अन्वष्टक्यं च पूर्वेद्युः षण्णवत्यः प्रकीर्तिताः ॥' इत्युक्तानि । चकारादष्टकाग्रहणम् ।

चैत्रशुक्लतृतीयैव मत्स्यजयन्ती ।

अत्रैवप्रसङ्गाद्दशावतारजयन्त्य निर्णीयन्ते ।

तत्र पुराणसमुच्चये—'मत्स्योऽभूद्धुतभुग्दिने मधुसिते कूर्मो विधौ माधवे वाराहो गिरिजासुते नभसि यद्भूते सिते माधवे । सिंहो भाद्रपदे सिते हरितिथौ श्रीवामनो माधवे रामो गौरितिथावतः परमभूद्रामो नवम्यां मधोः ॥ कृष्णोऽष्टम्यां नभसि सितपरे चाश्विने यद्दशम्यां बुद्धः कल्की नभसि समभूच्छुक्लषष्ठ्यां क्रमेण । अह्नो मध्ये वामनो रामरामौ मत्स्यः क्रोणश्चापराह्णे विभागे । कूर्मः सिंहो बौद्धकल्की च सायं कृष्णो रात्रौ कालसाम्ये च पूर्वे ॥' इति । केचित्तु स्फुटान् श्लोकान् पठन्ति । तथा—'चैत्रे तु शुक्लपञ्चम्यां भगवान्मीनरूपधृक् । ज्येष्ठे तु शुक्लद्वादश्यां कूर्मरूपधरो हरिः ॥ चैत्रे कृष्णे नवम्यां तु हरिर्वाराहरूपधृक् । नरसिंहश्चतुर्दश्यां वैशाखे शुक्लपक्षके ॥ मासि भाद्रपदे शुक्लद्वादश्यां वामनो हरिः । राधशुद्धतृतीयायां रामो भार्गवरूपधृक् ॥ चैत्रशुक्लनवम्यां तु रामो दशरथात्मजः । नभस्ये तु द्वितीयायां बलभद्रोऽभवद्धरिः ॥ श्रावणे बहुलेऽष्टम्यां कृष्णोऽभूल्लोक-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

रक्षकः। ज्येष्ठे शुक्लद्वितीयायां बौद्धः कल्की भविष्यति॥' इति। कोङ्कणास्तु वराहपुराणस्थत्वेन वाक्यानि पठन्ति—'आषाढे शुक्लपक्षे तु एकादश्यां महातिथौ। जयन्ती मत्स्यनाम्नीति तस्यां कार्यमुपोषणम्॥ नभोमासि तृतीयायां हरिः कमठरूपधृक्। नभस्यशुक्लपञ्चम्यां वराहस्य जयन्तिका॥ वैशाखे तु चतुर्दश्यां नृसिंहः समपद्यत। मासि भाद्रपदे शुक्लैकादश्यां वामनो हरिः। वैशाखे शुक्लपक्षे तु तृतीयायां भृगूद्वहः। चैत्रे नवम्यां रामोऽभूत्कौशल्यायां परः पुमान्। श्रावणे बहुलेऽष्टम्यां वासुदेवो जनार्दनः पौषशुक्ले तु सप्तम्यां कुर्याद्बौद्धस्य पूजनम्॥ माघशुक्लतृतीयायां कल्किनः पूजनं हरेः। प्रातः प्रातस्तु मध्याह्ने सायं सायं तथा निशि॥ मध्याह्ने मध्यरात्रे च सायंप्रातरनुक्रमात्॥' इति। तदत्र समूलत्वनिर्णये सति कल्पभेदेन व्यवस्था द्रष्टव्या। एताश्च तदुपासकानां नित्याः, अन्येषां तु काम्या। जन्माष्टम्यादौ तु विशेषं वक्ष्यामः॥

चैत्रशुक्ल पञ्चमी निर्णयः।

चैत्रशुक्लपञ्चमी कल्पादिः—तदुक्तं हेमाद्रौ मात्स्ये—'ब्रह्मणो या दिनस्यादिः कल्पादिः सा प्रकीर्तिता। वैशाखस्य तृतीया या कृष्णा या फाल्गुनस्य च॥ पञ्चमी चैत्रमासस्य तथैवान्त्या तथापरा। शुक्ला त्रयोदशी माघे कार्तिकस्य तु सप्तमी॥ नवमी मार्गशीर्षस्य सप्तैताः संस्मराम्यहम्। कल्पानामादयो ह्येता दत्तस्याक्षयकारकाः॥' अत्र सर्वोऽपि निर्णयो मन्वादिवज्ज्ञेयः। हेमाद्रौ ब्राह्मे—शुक्लामथ पञ्चम्यां चैत्रे मासि शुभानना। श्रीर्ब्रह्मलोकान्मानुष्यं संप्राप्ता केशवाज्ञया॥ अतस्तां पूजयेत्तत्र यस्तं लक्ष्मीर्न मुञ्चति॥'

चैत्रशुक्लाष्टमी निर्णयः।

चैत्रशुक्लाष्टम्यां भवान्या उत्पत्तिः। तत्र नवमीयुता ग्राह्या। 'अष्टमी नवमीयुक्ता नवमी चाष्टमीयुता।' इति ब्रह्मवैवर्तात्। अत्र

१—ब्राह्मे। शुक्लायामथ पंचम्यां चैत्रमासि शुभानना। श्रीब्रह्मलोकान्मानुष्यं संप्राप्ता केशवाज्ञया। ततस्तां पूजयेत्तत्र यस्तं लक्ष्मीर्न मुञ्चति। इति। २—अमावस्या—इति।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भवानीयात्रोक्ता काशीखण्डे–भवानीं यस्तु पश्येत शुक्लाष्टम्यां मधौ नरः । न जातु शोकं लभते सदानन्दमयो भवेत् ॥' इति । अत्रैवाशोककलिकाप्राशनमुक्तं हेमाद्रौ लैङ्गे–'अशोककलिकाश्चाष्टौ ये पिबन्ति पुनर्वसौ । चैत्रे मासि सितेष्टम्यां न ते शोकमवाप्नुयुः ॥' प्राशनमन्त्रस्तु–त्वामशोक नराभीष्टं मधुमाससमुद्भवम् । पिबामि शोकसंतप्तो मामशोकं सदा कुरु ॥' इति । अत्र विशेषः पृथ्वीचन्द्रोदये विष्णुः–'पुनर्वसुबुधोपेता चैत्रे मासि सिताष्टमी । प्रातस्तु विधिवत्स्नात्वा वाजपेयफलं लभेत् ॥' इति । तिथितत्त्वे कालिकापुराणे–'चैत्रे मासि सिताष्टम्यां यो नरो नियतेन्द्रियः । स्नायाल्लौहित्यतोयेषु स याति ब्रह्मणः पदम् ॥ चैत्रं तु सकलं मासं शुचिः प्रयतमानसः । लौहित्यतोये यः स्नायात्स कैवल्यमवाप्नुयात् ॥' लौहित्यो ब्रह्मपुत्रः । मन्त्रस्तु–'ब्रह्मपुत्र महाभाग शंतनोः कुलसंभव । अमोघागर्भसंभूत पापं लौहित्य मे हर ॥'

चैत्रशुक्लनवमी रामनवमी निर्णयः ।

तदुक्तमगस्त्यसंहितायाम्–'चैत्रे नवम्यां प्राक्पक्षे दिवा पुण्ये पुनर्वसौ । उदये गुरुगौरांशवोः स्वोच्चस्थे ग्रहपञ्चके ॥ मेषे पूषणि संप्राप्ते लग्ने कर्कटकाह्वये । आविरासीत्सकलया कौशल्यायां परः पुमान् । तस्मिन् दिने तु कर्तव्यमुपवासव्रतं सदा । तत्र जागरणं कुर्याद्रघुनाथपरो भुवि ॥' इति । इयं च मध्याह्नयोगिनी ग्राह्या । 'चैत्रशुक्ले तु नवमी पुनर्वसुयुता यदि । सैव मध्याह्नयोगेन महापुण्यतमा भवेत् ॥' इति तत्रैवोक्तेः । तथा–'चैत्रमासे नवम्यां तु जातो रामः स्वयं हरिः । पुनर्वस्वृक्षसंयुक्ता सा तिथिः[2] सर्वकामदा ॥ श्रीरामनवमी प्रोक्ता कोटिसूर्यग्रहाधिका ॥' तथा–'केवलापि सदोपोष्या नवमीशब्दसंग्रहात् । तस्मात्सर्वात्मना सर्वैः कार्यं वै

१—लोहिता सरसो जात लौहित्याख्यस्ततोऽर्थवत् । इति कालीपुराणात् ।

२—तिथी शरीरं देवस्य तिथौ नक्षत्रमाश्रितम् । तस्मात्तिथिं प्रशंसन्ति न नक्षत्रतिथीं विना ॥ इतिवचनात् ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नवमीव्रतम् ॥' पूर्वेद्युरेव मध्याह्नयोगे कर्मकालव्याप्तेः सैव ग्राह्या। दिनद्वये मध्याह्नव्याप्तौ तदभावे वा पूर्वदिने पुनर्वस्वृक्षयुक्तामपि त्यक्त्वा परैव कार्या । तदुक्तं माधवीयेऽगस्तिसंहितायाम्—'नवमी चाष्टमीविद्धा त्याज्या विष्णुपरायणैः । उपोषणं नवम्यां च दशम्यां चैव पारणम् ॥' इति । अष्टमीविद्धा सनक्षत्रापि नोपोष्येति माधवः । रामार्चनचन्द्रिकायामपि—'विद्धैव चेदृक्षयुक्ता व्रतं तत्र कथं भवेत् । विद्धा निषिद्धश्रवणान्नवमी चेति वाक्यतः ॥ वैष्णवानां विशेषात्तु तत्र विष्णुपरैरपि । दशम्यादिषु वृद्धिश्चेद्विद्धा त्याज्यैव वैष्णवैः ॥ तदन्येषां च सर्वेषां व्रतं तत्रैव निश्चितम् ॥' इति । अत्र दशम्यादिषु वृद्धिश्चेदिति, तदन्येषामिति च वदन् यदा प्रातस्त्रिमुहूर्ता नवमी दशमी च क्षयवशात्सूर्योदयात्प्रागेव समाप्यते, तदा स्मार्तानां तत्रैव । एकादशीनिमित्तोपवासात् नवमीव्रताङ्गपारणालोपः स्यात् । अतोऽष्टमीविद्धैव स्मार्तैः कार्या । वैष्णवानां त्वरुणोदयविद्धैकादश्या हेयत्वान्न पारणालोपप्रसङ्गः, इति द्वितीयैव तैः कार्येति सूचयति । दशमीवृद्ध्यभावेऽष्टमीविद्धाया एव मध्याह्नव्यापित्वे क्षये च वैष्णवैरपि विद्धैवोपोष्येत्यर्थसिद्धम् । इदं च व्रतं संयोगपृथक्त्वन्यायेन काम्यं नित्यं च । तदुक्तं हेमाद्रावगस्तिसंहितायाम्—'उपोषणं जागरणं पितॄनुद्दिश्य तर्पणम् । तस्मिन् दिने तु कर्तव्यं ब्रह्मप्राप्तिमभीप्सुभिः ॥ सर्वेषामप्ययं धर्मो भुक्तिमुक्त्यैकसाधनः । अशुचिर्वापि पापिष्ठः कृत्वेदं व्रतमुत्तमम् ॥ पूज्यः स्यात्सर्वभूतानां यथा रामस्तथैव सः । यस्तु रामनवम्यां तु भुङ्क्ते मोहाद्विमूढधीः ॥ कुम्भीपाकेषु घोरेषु पच्यते नात्र संशयः ॥' तथा—'अकृत्वा रामनवमीव्रतं सर्वव्रतोत्तमम् । व्रतान्यन्यानि कुरुते न तेषां फलभाग्भवेत् ॥ प्राप्ते श्रीराम-

१—विष्णुपरायणैरित्यत्र विष्णुशब्दस्य प्रकृतरामात्मकविष्णुपरत्वात् तत्परायणः तन्मन्त्रदीक्षिताः तैः, नित्यव्रतं तेषामेव । "तस्मिन्दिने तु कर्तव्यमुपवासव्रतं सदा ।"

इति नित्यप्रयोगविधौ सदा शब्देन तदन्वयात् ।

सूर्यग्रहे कुरुक्षेत्रे महादानैर्मुहुर्मुहुः ।

तत्फलं समवाप्नोती श्रीरामनवमीव्रतात् ॥ इति काम्यप्रयोगश्च सर्वेषाम् । नच तद्विधौ विष्णुपरायणैरित्यस्यान्वयः । काम्यप्रयोगस्य खण्डतिथौ निषेधेन नित्यप्रयोगविधिमात्रशेषत्वे तदन्तर्गत तत्पदस्यापि तच्छेषत्वौचित्यात् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नवमीदिने मर्त्यो विमूढधीः। उपोषणं न कुरुते कुम्भीपाकेषु पच्यते ॥' अत्र केचित्तदुपासकानामेवेदं व्रतं नित्यं, न त्वन्येषामित्याहुः । अन्ये तु अकरणे दोषश्रवणात् 'तस्मात्सर्वात्मना सर्वैः कार्यं वै नवमीव्रतम् ।' इति पूर्वोक्तवचनाच्च जन्माष्टम्यादिवदिदमपि सर्वेषां नित्यम्। अन्यथा जन्माष्टम्यादावपि तदुपासकानामेव नित्यतां वक्तुः को वारयितेत्याहुः ।

श्रीराम पूजाविधिः ।

अत्र विशेषो हेमाद्रावगस्त्यसंहितायाम्—'आचार्यं चैव संपूज्य वृणुयात्प्रार्थयेन्निशि । श्रीरामप्रतिमादानं करिष्येऽहं द्विजोत्तम । भक्त्याचार्यो भव प्रीत श्रीरामोसि त्वमेव च ॥' तथा—'स्वगृहे चोत्तरे देशे दानस्योज्ज्वलमण्डपम् । शङ्खचक्रहनूमद्भिः प्राग्द्वारे समलंकृतम् ॥ गरुत्मच्छार्ङ्गबाणैश्च दक्षिणे समलंकृतम् । गदाखड्गाङ्गदैश्चैव पश्चिमे सुविभूषितम् ॥ पद्मस्वस्तिकनीलैश्च कौबेरे समलंकृतम् । मध्ये हस्तचतुष्काढ्यं वेदिकायुक्तमायतम् ॥ ततः संकल्पयेद्देवं राममेव स्मरन्मुने । अस्यां रामनवम्यां च रामाराधनतत्परः ॥ उपोष्याष्टसु यामेषु पूजयित्वा यथाविधि । इमां स्वर्णमयीं रामप्रतिमां च प्रयत्नतः। श्रीरामप्रीतये दास्ये रामभक्ताय धीमते । प्रीतो रामो हरत्वाशु पापानि सुबहूनि मे ॥ अनेकजन्मसंसिद्धान्यभ्यस्तानि महान्ति च । ततः स्वर्णमयीं रामप्रतिमां पलमात्रतः । निर्मितां द्विभुजां दिव्यां वामाङ्कस्थितजानकीम् । बिभ्रतीं दक्षिणकरे ज्ञानमुद्रां महामुने ॥ वामेनाधः करेणाराद्देवीमालिङ्ग्य संस्थिताम् । सिंहासने राजतेत्र पलद्वयविनिर्मिते ॥' तथा—'अशक्तो यो महाभागः स तु वित्तानुसारतः । पलेनार्धतदर्धार्धतदर्धार्धेन वा मुने ॥ सौवर्णं राजतं वापि कारयेद्रघुनन्दनम् । पार्श्वे भरतशत्रुघ्नौ धृतच्छत्रकरावुभौ ॥ चापद्वयसमायुक्तं लक्ष्मणं चापि कारयेत् । दक्षिणाङ्गे दशरथं पुत्रावेक्षणतत्परम् ॥ मातुरङ्गगतं राममिन्द्रनीलसमप्रभम् । पञ्चामृतस्नानपूर्वं

१—तद्वाक्ये मर्त्यसामान्यश्रवणात् सर्वेषामेतदन्वयात् । शिष्टाचारानुगृतत्वात्कल्पनाया इति । वैष्णवानामेव नित्ये ऽधिकारः । सामान्य शब्दोपि वैष्णवपर इत्यपि वदन्ति ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

संपूज्य विधिवत्ततः ॥' कौशल्यामन्त्रस्तु—'रामस्य जननी चासि रामरूपमिदं जगत् । अतस्त्वां पूजयिष्यामि लोकमातर्नमोऽस्तु ते ॥ नमो दशरथायेति पूजयेत्पितरं ततः ॥' अत्र दशावरणपञ्चावरणादिपूजान्यत्र ज्ञेया । 'अशोककुसुमैर्युक्तमर्घ्यं दद्याद्विचक्षणः । दशाननवधार्थाय धर्मसंस्थापनाय च ॥ राक्षसानां विनाशाय दैत्यानां निधनाय च । परित्राणाय साधूनां जातो रामः स्वयं हरिः ॥ गृहाणार्घ्यं मया दत्तं भ्रातृभिः सहितोऽनघ । पुष्पाञ्जलिं पुनर्दत्वा यामे यामे प्रपूजयेत् ॥ दिवैवं विधिवत्कृत्वा रात्रौ जागरणं ततः । ततः प्रातः समुत्थाय स्नानसंध्यादिकाः क्रियाः ॥ समाप्य विधिवद्रामं पूजयेद्विधिवन्मुने । ततो होमं प्रकुर्वीत मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥ पूर्वोक्तपद्मकुण्डे वा स्थण्डिले वा समाहितः । लौकिकाग्नौ विधानेन शतमष्टोत्तरं ततः ॥ साज्येन पायसेनैव स्मरन् राममनन्यधीः । ततो भक्त्या सुसंतोष्य आचार्यं पूजयेन्मुने ॥ ततो रामं स्मरन् दद्यादेवं मन्त्रमुदीरयेत् । इमां स्वर्णमयीं रामप्रतिमां समलंकृताम् ॥ चित्रवस्त्रयुगच्छन्नां रामोऽहं राघवाय ते । श्रीरामप्रीतये दास्ये तुष्टो भवतु राघवः ॥ इति दत्वा विधानेन दद्याद्वै दक्षिणां भुवम् । ब्रह्महत्यादिपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ॥' इति । इयं मलमासे न कार्या । सुजप्तमप्यजप्तं स्यान्नोपवासः कृतो भवेत् ।' इति, 'न कुर्यान्मलमासे, तु महादानव्रतानि च ।' इति च माधवीये संग्रहवचनात् । ननु रामनवमीव्रतस्य नित्यत्वादेकादशीवन्मलमासेऽपि कर्तव्यता स्यादिति चेत्, अत्र ब्रूमः । नैकादश्युपवासस्य व्रतत्वेन प्राप्तिः । किंतु 'एकादश्यां न भुञ्जीत पक्षयोरुभयोरपि ।' इत्यादिनिषेधस्य मलमासेपि पालनीयत्वात् कृष्णैकादश्यां पुत्रवद्गृहिण इवार्थादुपवासः प्रसज्यते । न त्विह तथेति व्रतत्वेन प्राप्तिर्वाच्या । सा च निषिद्धेत्यप्रसङ्गः । 'स्पष्टमासविशेषाख्याविहितं वर्जयेन्मले' इति निषेधाच्च । एवं जन्माष्टम्यादावपि बोद्धव्यम् । इति रामनवमी ॥

चैत्रशुक्लैकादशी निर्णयः ।

चैत्रशुक्लैकादश्यां दोलोत्सव उक्तो ब्राह्मे—'चैत्रमासस्य शुक्लायामेकादश्यां तु वैष्णवैः । आन्दोलनीयो देवेशः सलक्ष्मीको महोत्सवैः ॥' इति ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

चैत्रशुक्लद्वादश्यां दमनोत्सवः ।

'द्वादश्यां चैत्रमासस्य शुक्लायां दमनोत्सवः । बौधायनादिभिः प्रोक्तः कर्तव्यः प्रतिवत्सरम् ॥' इति रामार्चनचन्द्रिकोक्तेः । 'ऊर्जं व्रतं मधौ दोला श्रावणे तन्तुपूजनम् । चैत्रे च दमनारोपमकुर्वाणो व्रजत्यधः ॥' इति तत्रैव पाद्मवचनाच्च । शिवभक्तादिभिस्तु चतुर्दश्यादौ कार्यम् । 'तत्र स्यात्स्वीयतिथिषु वह्न्यादेर्दमनार्पणम् ।' इति तत्रैवोक्तेः । ज्योतिःप्रकाशेपि-' स्वस्वदेवप्रतिष्ठायां मन्त्रसंग्रहणे तथा । पवित्रदमनारोपे ग्राह्या तत्तत्तिथिर्बुधैः ॥' तिथयस्तु— 'वह्निर्विरिञ्चिर्गिरिजा गणेशः फणी विशाखो दिनकृन्महेशः । दुर्गान्तको विश्वहरिः स्मरश्च शर्वः शशी चेति तिथीषु पूज्याः ॥' इत्युक्ताः ।

अथागमोक्तदीक्षावतो दमनारोपणविधिः ।

रामार्चनचन्द्रिकायाम् । तत्रैकादश्यां—' क्रियालोपविघातार्थं यत्त्वया विहितं प्रभो । न मे विघ्नो भवेदत्र कुरु नाथ दयां मयि ॥ सर्वथा सर्वदा विष्णो मम त्वं परमा गतिः । उपवासेन त्वां देव तोषयामि जगत्पते ॥ कामक्रोधादयोऽप्येते न मे स्युर्व्रतघातकाः । अद्यप्रभृति देवेश यावद्वैशेषिकं दिनम् ॥ तावद्रक्षा त्वया कार्या सर्वस्यास्य जगत्पते ॥' इति देवं संप्रार्थ्य दमनमादाय पञ्चगव्येन प्रोक्ष्य वारिणा प्रक्षाल्याशोकमूले देवाग्रे वा-'अशोकाय नमस्तुभ्यं कामस्त्रीशोकनाशन । शोकार्तिं हर मे नित्यमानन्दं जनयस्व मे ॥' इत्यशोकम्, त्रुट्यादिकालपर्यन्तः कालरूपो महाबलः । कलते चैव यः सर्वं तस्मै कालात्मने नमः ॥' इति कालम्, 'वसन्ताय नमस्तुभ्यं वृक्षगुल्मलताश्रय । सहस्रमुखसंवास कामरूप नमोस्तु ते ॥' इति वसन्तम्, 'कामभस्मसमुद्भूत रतिबाष्पपरिप्लुत । ऋषिगन्धर्वदेवादिविमोहक नमोस्तु ते ॥' इति दमनं च संपूज्य-'नमोस्तु पञ्चबाणाय जगदाह्लादकारिणे । मन्मथाय जगन्नेत्रे रतिप्रीतिप्रियाय ते ॥' इति दमनमुपस्थाय ' ॐ कामाय नमः' इति संपूज्य निशायां देवताग्रे पञ्चवर्णैः चन्दनेन वा अष्टदलं कृत्वा बहिश्चतुरस्रं तद्बहिर्वर्तुत्रयं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तद्बहिर्वृत्तं चतुरस्रं च कृत्वा तत्र कुम्भं संस्थाप्योपरि दमनं पूजयित्वा–'पूजार्थं देवदेवस्य विष्णो लक्ष्मीपते प्रभो। मदन त्वमिहागच्छ सांनिध्यं कुरु ते नमः॥' 'ॐ क्लीं कामदेवाय नमः' 'ॐ ह्रीं रत्यै नमः' इत्यावाह्य दिक्षु पूर्वादितः 'स्मरशरीराय नमः अनङ्गाय० मन्मथाय० कामाय० क्लीं वसन्तसखाय० स्मराय० इक्षुचापाय० पुष्पास्त्राय नमः' इति पूजयित्वा—'ॐ तत्स्वरूपाय विद्महे कामदेवाय धीमहि। तन्नोऽनङ्गः प्रचोदयात्॥' इत्यष्टोत्तरशतं संमन्त्र्य पूजयित्वा 'ह्रीं नमः' इति पुष्पाञ्जलिं दत्वा—'नमोस्तु पुष्पबाणाय जगदाह्लादकारिणे। मन्मथाय जगन्नेत्रे रतिप्रीतिप्रियाय ते॥' इति नत्वा—'आमन्त्रितोसि देवेश पुराणपुरुषोत्तम। प्रातस्त्वां पूजयिष्यामि सान्निध्यं कुरु केशव॥ क्षीरोदधिमहानागशय्यावस्थितविग्रह। प्रातस्त्वां पूजयिष्यामि सन्निधौ भव ते नमः॥ निवेदयास्यहं तुभ्यं प्रातर्दमनकं शुभम्। सर्वदा सर्वथा विष्णो नमस्तेस्तु प्रसीद मे॥' इति देवं संप्रार्थ्य पुष्पाञ्जलिं दत्वा अस्त्रेण चक्रमन्त्रेण वा रक्षां कुर्यात्। ततः प्रातर्नित्यपूजां कृत्वा पुनर्देवं संपूज्य गन्धदूर्वाक्षतयुक्तं दमनमादाय मूलमन्त्रं पठित्वा–'देवदेव जगन्नाथ वाञ्छितार्थप्रदायक। हृदिस्थान्पूरयेः कामान्मम कामेश्वरीप्रिय॥ इदं दमनकं देव गृहाण मदनुग्रहात्। इमां सांवत्सरीं पूजां भगवन्परिपूरय॥' इति मन्त्रान्ते पुनर्मूलमन्त्रेण देवे समर्पयेत्। ततोऽङ्गदेवताभ्यः स्वस्वमन्त्रेण दत्वा प्रार्थयेत्—'मणिविद्रुममालाभिर्मन्दारकुसुमादिभिः। इयं सांवत्सरी पूजा तवास्तु गरुडध्वज॥ वनमालां यथा विष्णो कौस्तुभं सततं हृदि। तद्वद्दामनकीं मालां पूजां च हृदये वह॥ जानताऽजानता वापि न कृतं यत्तवार्चनम्। तत्सर्वं पूर्णतां यातु त्वत्प्रसादाद्रमापते॥ जितं ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन। नमस्तेऽस्तु हृषीकेश महापुरुष पूर्वज॥' 'मन्त्रहीनं०' इति च संप्रार्थ्य पञ्चोपचारैः पुनः संपूज्य नीराज्य पारयेदिति। दीक्षारहितानां तु नाम्नैव समर्पणम्। अत्र च द्वादशीमतन्त्रीकृत्य पारणाहो ग्राह्यम्। 'पारणाहे न लभ्येत द्वादशी घटिकापि चेत्। तदा त्रयोदशी ग्राह्या पवित्रदमनार्पणे॥' इति तत्रैवोक्तेः। गौणोपि काल उक्तस्तत्रैव—'हरौ न दमनारोपः स्यान्मधौ विघ्नतो यदि। वैशाखे श्रावणे वापि तत्तिथौ स्यात्तदर्पणम्॥' 'श्रावणावधिशुक्रास्ते कर्तव्यमिति नारदः।' इति पाठा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

न्तरम् । इदं च मलमासे न कार्यम् । 'उपाकर्मोत्सर्जनं च पवित्रदमनार्पणम् ।' इति कालादर्शे मलमासवर्ज्येषु परिगणनात् । 'उपाकर्म च हव्यं च कव्यं पर्वोत्सवं तथा । उत्तरे नियतं कुर्यात्पूर्वे तन्निष्फलं भवेत् ॥' इति माधवीये प्रजापतिवचनाच्च । शुक्रास्तादौ तु कार्यमेव । पूर्वोक्तवचनात् । 'उपाकर्मोत्सर्जनं च पवित्रदमनार्पणम् । ईशानस्य वलिं विष्णोः शयनं परिवर्तनम् ॥ कुर्याच्छुक्रस्य च गुरोर्मौढ्येऽपीति विनिश्चयः ॥' इति ज्योतिर्निबन्धे वृद्धगार्ग्यवचनाच्च ॥ इति दमनारोपः ॥

चैत्रशुक्ल त्रयोदशी—

चैत्रशुक्लत्रयोदश्यामनङ्गव्रतम् ॥ (हेमाद्रौ भविष्ये—'चैत्रोत्सवे सकललोकमनोनिवासे कामं त्रयोदशतिथौ च वसन्तयुक्तम् । पत्न्या सहार्च्य पुरुषप्रवरोऽथ योषित् सौभाग्यरूपसुतसौख्ययुतः सदा स्यात् ॥') तत्र सा पूर्वा ग्राह्या । 'त्रयोदशतिथिः पूर्वः सितः' इति दीपिकोक्तेः ।

चैत्रशुक्लचतुर्दशी निर्णयः ।

चैत्रशुक्लचतुर्दशी पूर्वा ग्राह्या । 'मधोः श्रावणमासस्य शुक्ला या तु चतुर्दशी । सा रात्रिव्यापिनी ग्राह्या नान्या शुक्ला कदाचन ॥' इति हेमाद्रौ बौधायनोक्तेः । 'परा पूर्वाह्णगामिनी' इति वा पाठः । अत्र केचिद्यथाश्रुतमेवार्थं वर्णयन्ति । 'निशि भ्रमन्ति भूतानि शक्तयः शूलभृद्यतः । अतस्तत्र चतुर्दश्यां सत्यां तत्पूजनं भवेत् ॥' इति ब्रह्मवैवर्तात् । हेमाद्रिमाधवादिलिखनमप्येवम् । संप्रदायविदस्त्वाहुः—

१—कृष्णाष्टमी बृहत्तपा सावित्री वट पौत्रिकी । कामत्रयोदशी रम्भा उपोष्याः पूर्व संयुताः ॥ इति वचनात् । त्रयादशा प्रकर्तव्या भवेद्या चापराह्णिकी । इति स्कान्दन्तु शुक्ल त्रयोदशी पौर्वाह्णिकी उत्तर विद्वान ग्राह्या किन्तु आपराह्णव्यापिनी आपराह्णाव्यापिनी चेदिति सामान्यतो निर्णयः । अनङ्गत्रयोदशी तु अनापराह्णव्यापिनी सायाह्नव्यापिनीति वाक्य द्वयं सार्थकमित्याहुः ॥

२—दमनपवित्रारोपादौ इति शेषः ।

३—मासान्तरवर्तिनी शुक्ला पूर्वाह्णगामिनी उत्तराविद्धेत्यर्थः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'चतुर्दशी तु कर्तव्या त्रयोदश्या युता विभो ॥' इति स्कान्दमुत्सर्गः। तदपवादश्च—'तृतीयैकादशी षष्ठी शुक्लपक्षे चतुर्दशी। पूर्वविद्धा न कर्तव्या कर्तव्या परसंयुता॥' इति नारदीयवचनम्। तदपवादश्च—'मधोः श्रावणमासस्य' इति। तत्र 'अपवादाभावे पुनरुत्सर्गस्य स्थितिः' इति न्यायेन पूर्वविद्धैव ग्राह्येति सिध्यति। ब्रह्मवैवर्तं तु सामान्यरूपमन्यत्र सावकाशमिति। तेन पूर्वदिने मुहूर्तत्रयवेधे पूर्वा अन्यथोत्तरेति।

चैत्रपूर्णिमा निर्णयः।

चैत्रपूर्णिमा सामान्यनिर्णयात्परैव। अत्र विशेषो निर्णयामृते विष्णुस्मृतौ—चैत्री चित्रायुता चेत्स्यात्तस्यां चित्रवस्त्रप्रदानेन सौभाग्यमाप्नोति इति। तथा ब्राह्मे—'मन्दे वार्के गुरौ वापि वारेष्वेतेषु चैत्रिका। तत्राश्वमेधजं पुण्यं स्नानश्राद्धादिभिर्लभेत्॥' इति। अत्र सर्वदेवानां दमनपूजोक्ता। तत्रैव वायवीये—'संवत्सरकृतार्चायाः साफल्यायाखिलान्सुरान्। दमनेनार्चयेच्चैत्र्यां विशेषेण सदाशिवम्॥' इति। अत्र स्वीयतिथ्या समुच्चय इति केचित्। स्वीयतिथ्यामकरणेऽत्र दमनपूजनमित्यन्ये। दीक्षिततदितरविषयत्वेन व्यवस्थेत्यपरे। इयं मन्वादिरपि। सा च पूर्वमुक्ता॥

चैत्रकृष्णत्रयोदश्यां महावारुणीसंज्ञो योगो गौडेषु प्रसिद्धः।

तदुक्तं वाचस्पतिकृतौ शूलपाणौ च स्कान्दे—'वारुणेन समायुक्ता मधौ कृष्णा त्रयोदशी। गङ्गायां यदि लभ्येत सूर्यग्रहशतैः समा॥ शनिवारसमायुक्ता सा महावारुणी स्मृता। गङ्गायां यदि लभ्येत् कोटिसूर्यग्रहैः समा॥ शुभयोगसमायुक्ता शनौ शतभिषा यदि। महामहेति विख्याता त्रिकोटिकुलमुद्धरेत्॥' तत्रैव ज्योतिषे—'चैत्रासिते वारुणऋक्षयुक्ता त्रयोदशी सूर्यसुतस्य वारे। योगे शुभे सा महती महत्या गङ्गाजलेऽर्कग्रहकोटितुल्या॥' इति त्रिस्थलीसेतौ ब्रह्माण्डपुराणे—'वारुणेन समायुक्ता मधौ कृष्णा त्रयोदशी। गङ्गायां यदि लभ्येत शतसूर्यग्रहैः समा॥' इति। कल्पतरौ ब्राह्मे—'मधौ कृष्णत्रयोदश्यां शनौ शतभिषायुता। वारुणीति समाख्याता शुभे तु महती स्मृता॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

चैत्रकृष्णचतुर्दश्यां विशेषः ।

पृथ्वीचन्द्रोदये पुलस्त्यः—'चैत्रकृष्णचतुर्दश्यां यः स्नायाच्छिवसन्निधौ । न प्रेतत्वमवाप्नोति गङ्गायां तु विशेषतः ॥' इति । तत्र पूर्वा ग्राह्या कृष्णपक्षस्थत्वात् । गौडैस्त्वेतदेव शुक्लचतुर्दश्यामित्येवं देवलीयत्वेन पठितम् ॥ इति श्रीरामकृष्णभट्टसूनुकमलाकरभट्टकृते कालनिर्णयसिन्धौ चैत्रमासः ॥

अथ मेषसंक्रान्तिः ।

मेषसंक्रमे प्रागपरा दश दशघटिकाः पुण्यकालः । रात्रौ तु प्रागुक्तम् । अत्र धर्मघटादिदानमुक्तं पृथ्वीचन्द्रोदये पाद्मे—'तीर्थे चानुदिनं स्नानं तिलैश्च पितृतर्पणम् । दानं धर्मघटादीनां मधुसूदनपूजनम् ॥ माधवे मासि कुर्वीत मधुसूदनतुष्टिदम् ॥'

अथ वैशाखस्नानम् ।

तत्र पृथ्वीचन्द्रोदये विष्णुस्मृतिपाद्मयोः—तुलामकरमेषेषु प्रातःस्नानं विधीयते । हविष्यं ब्रह्मचर्यं च महापातकनाशनम् ॥' इति सौरमास उक्तः अन्यत्पक्षद्वयमुक्तं तत्रैव पाद्मे—'मधुमासस्य शुक्लायामेकादश्यामुपोषितः । पञ्चदश्यां च भो वीर मेषसंक्रमणे तु वा ॥ वैशाखस्नाननियमं ब्राह्मणानामनुज्ञया । मधुसूदनमभ्यर्च्य कुर्यात्संकल्पपूर्वकम् ॥

वैशाखस्नान मन्त्रः ।

तत्र मन्त्रः—'वैशाखं सकलं मासं मेषसंक्रमणे रवेः । प्रातः सनियमः स्नास्ये प्रीयतां मधुसूदनः ॥ मधुहन्तुः प्रसादेन ब्राह्मणानामनुग्रहात् । निर्विघ्नमस्तु मे पुण्यं वैशाखस्नानमन्वहम् ॥ माधवे मेषगे भानौ मुरारे मधुसूदन । प्रातःस्नानेन मे नाथ फलदो भव पापहन् ॥ इति

तीर्थविशेषोपि तत्रैवोक्तः—

मेषसंक्रमणे भानोर्माधवे मासे यत्नतः । महानद्यां नदीतीर्थे नदे सरसि निर्झरे ॥ देवखातेऽथवा स्नायाद्यथाप्राप्ते जलाशये । दीर्घिका-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कूपवापीषु नियतात्मा हरिं स्मरन् ॥' इति ॥ संकल्पे च तत्तत्तीर्थनाम ग्राह्यम्। अज्ञाने तु विष्णुतीर्थमिति वदेत्। 'यदा न ज्ञायते नाम तस्य तीर्थस्य भो द्विजाः। तत्रेत्युच्चारणं कार्यं विष्णुतीर्थमिदं त्विति ॥ तीर्थस्य देवता विष्णुः सर्वत्रापि न संशयः ॥' इति तत्रैवोक्तेः।

तथान्योपि विशेषस्तत्रैव

पाद्मे—'तुलसी कृष्णगौराख्या तयाभ्यर्च्य मधुद्विषम्। विशेषेण तु वैशाखे नरो नारायणो भवेत् ॥ माधवं सकलं मासं तुलस्या योऽर्चयेन्नरः। त्रिसंध्यं मधुहन्तारं नास्ति तस्य पुनर्भवः ॥' तथा प्रातः स्नात्वा विधानेन माधवे माधवप्रियम्। योऽश्वत्थमूलमासिञ्चेत्तोयेन बहुना सदा ॥ कुर्यात्प्रदक्षिणं तं तु सर्वदेवमयं ततः। पितृदेवमनुष्यांश्च तर्पयेत्सचराचरम् ॥ योऽश्वत्थमर्चयेद्देवमुदकेन समन्ततः। कुलानामयुतं तेन तारितं स्यान्न संशयः ॥ कण्डूय पृष्ठतो गां तु स्नात्वा पिप्पलतर्पणम्। कृत्वा गोविन्दमभ्यर्च्य न दुर्गतिमवाप्नुयात् ॥' तथा—एकभक्तमथो नक्तमयाचितमतन्द्रितः। माधवे मासि यः कुर्याल्लभते सर्वमीप्सितम्' ॥ वैशाखे विधिना स्नानं देवनद्यादिके बहिः। हविष्यं ब्रह्मचर्यं च भूशय्या नियमस्थितिः ॥ व्रतं दानं दमो देवि मधुसूदनपूजनम्। अपि जन्मसहस्रोत्थं पापं दहति दारुणम् ॥ मदनरत्ने स्कान्दे—प्रपा कार्या च वैशाखे देवे देया गलन्तिका। उपानद्व्यजनच्छत्रसूक्ष्मवासांसि चन्दनम् ॥ जलपात्राणि देयानि तथा पुष्पगृहाणि च। पानकानि च चित्राणि द्राक्षारम्भाफलान्यपि ॥' तिथितत्त्वे—'ददाति यो हि मेषादौ सक्तूनम्बुघटान्वितान्। पितॄनुद्दिश्य विप्रेभ्यः सर्वपापैः प्रमुच्यते ।' इति। तथा—'वैशाखे यो घटं पूर्णं सभोज्यं वै द्विजन्मने। ददाति सुरराजेन्द्र स याति परमां गतिम् ॥'

वैशाखे सर्वस्नानाशक्तौ।

एवं संपूर्णस्नानाशक्तौ त्र्यहं वा स्नायात्। तदुक्तं तत्रैव पाद्मे—'त्रयोदश्यां चतुर्दश्यां वैशाख्यां वा दिनत्रयम्। अपि सम्यग्विधानेन नारी वा पुरुषोऽपि वा ॥ प्रातःस्नातः सनियमः सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥' यदा तु वैशाखो मलमासो भवति तदा काम्यानां तत्र समाप्तिनिषे-

१—"अलिञ्जरः स्यान्मणिकः कर्कर्यालुगलन्तिका।" इत्यमर कोषे।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

धात् मासद्वयं स्नानं तन्नियमाश्च कर्तव्याः । मासोपवासचान्द्रायणादि तु मलमासे एव समापयेत् । तदुक्तं दीपिकायाम्– 'नियतत्रिंशद्दिनत्वाच्छुभे मास्यारभ्य समापयेत् मलिने मासोपवासव्रतम्' इति ।

अत्र दानविशेषनिर्णयः ।

उक्तोऽपरार्के वामनपुराणे–'गन्धाश्च माल्यानि तथा वैशाखे सुरभीणि च । देयानि द्विजमुख्येभ्यो मधुसूदनतुष्टये ॥'

अथ वैशाखव्रतोद्यापन विधिः ।

एवं स्नानेकृते तस्योद्यापनं कार्यम् । तदुक्तं तत्रैव–'मासमेवं वहिः स्नात्वा नद्यादौ विमले जले । एकादश्यां च द्वादश्यां पौर्णमास्यामथापि वा ॥ उपोष्य नियतो भूत्वा कुर्यादुद्यापनं बुधः । मण्डलं कारयेदादौ कलशं तत्र विन्यसेत् । निष्केण वा तदर्धेन तदर्धार्धेन वा पुनः । शक्त्या वा कारयेद्देवं सौवर्णं लक्षणान्वितम् ॥ लक्ष्मीयुक्तं जगन्नाथं पूजयेदासने बुधः । भूषणैश्चन्दनैः पुष्पैर्दीपैर्नैवेद्यसंचयैः ॥ एवं संपूज्य विधिवद्रात्रौ जागरणं चरेत् । श्वोभूते कृतमैत्रोऽथ ग्रहवेद्यां ग्रहान्यजेत् ॥ होमं कुर्यात्प्रयत्नेन पायसेन विचक्षणाः । तिलाज्येन यवैर्वापि सर्वैर्वापि स्वशक्तितः । अष्टोत्तरसहस्रं वा शतमष्टोत्तरं तु वा । [1]प्रतद्विष्णुरनेनैवं इदं विष्णुरनेन वा ॥ व्रतसंपूर्तिसिद्ध्यर्थं धेनुमेकां पयस्विनीम् ।

१—स तु मन्त्रो ऋग्वेदसंहितायां द्वितीयाष्टके द्वितीयाध्याये—'प्र तद्विष्णुः स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः । यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा ॥' इति । अस्यार्थः—'स महानुभावो विष्णुः वीर्येण स्वकीयेन वीरकर्मणा पूर्वोक्तरूपेण प्रस्तवते प्रकर्षेण स्तूयते सर्वैः । वीर्येण स्तूयमाणत्वे दृष्टान्तः—मृगोन सिंहादिरिव । यथा स्वविरोधिनो मृगयिता सिंहो भीमो भीतिजनकः कुचरः कुत्सितहंसादिकर्ता दुर्गमप्रदेशगन्ता वा गिरिष्ठाः पर्वताद्युन्नतप्रदेशस्थायी सर्वैः स्तूयते । तद्वदयमपि मृगः अन्वेष्टा शत्रूणां भीमः भयानकः सर्वेषां भीत्यपादानभूतः । परमेश्वराद्भीतिः—'भीषाऽस्माद्वातः पवते' इत्यादिश्रुतिषु प्रसिद्धा । किंच कुचरः शत्रुवधादिकुत्सितकर्मकर्ता । कुषु सर्वासु भूमिषु लोकत्रयेषु संचारी वा । तथा गिरिष्ठाः गिरिवदुच्छ्रितलोकस्थायी यद्वा । गिरि मन्त्रादिरूपायां वाचि सर्वदा वर्तमानः । ईदृशोऽयं स्वमहिम्ना स्तूयते । किंच यस्य विष्णोरुरुषु विस्तीर्णेषु त्रिषु त्रिसंख्याकेषु विक्रमणेषु पादप्रक्षेपेषु विश्वा सर्वाणि भुवनानि भूतजातानि अधिक्षियन्ति आश्रित्य निवसन्ति । स विष्णुः स्तूयते इति श्रीसायणाचार्यभाष्य उक्तः । इममर्थं मनसि निधाय कर्मानुष्ठेयं श्रद्धालुभिरिति तद्बोधनार्थमेवायमर्थो निवेशितः इति ज्ञेयम् । प्रा०टि०

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पादुकोपानहौ छत्रं गुरवे व्यजनं तथा ॥ शय्यां सोपस्करां दद्याद्दीपिकां दर्पणं तथा । ब्राह्मणान्भोजयेत्त्रिंशत्तेभ्यो दद्याच्च दक्षिणाम् ॥ कलशाञ्जलसंपूर्णांस्तेभ्यो दद्याद्यवांस्तथा । एवं कृते माधवस्य चोद्यापनविधौ शुभे । फलमाप्नोति सकलं विष्णुसायुज्यमाप्नुयात् ॥'

उद्यापनाशक्तौ ।

एतावत्यशक्तौ तत्रैवोक्तं–'वैशाख्यां विधिना स्नात्वा भोजयेद्ब्राह्मणान्दश । कृसरं सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ॥' इति ॥

अथ अक्षय्यतृतीया निर्णयः ।

वैशाखशुक्लतृतीया अक्षय्यतृतीयोच्यते । सा पूर्वाह्णव्यापिनी ग्राह्या । दिनद्वयेपि तद्व्याप्तौ परैव । तदुक्तं निर्णयामृते नारदीये–'वैशाखे शुक्लपक्षे तु तृतीया रोहिणीयुता । दुर्लभा बुधवारेण सोमेनापि युता तथा ॥ रोहिणीबुधयुक्तापि पूर्वविद्धा विवर्जिता । भक्त्या कृतापि मान्धातः पुण्यं हन्ति पुराकृतम् ॥ गौरीविनायकोपेता रोहिणीबुधसंयुता । विनापि रोहिणीयोगात्पुण्यकोटिप्रदा सदा ॥' इति ॥

युगादिनिर्णयः ।

इयं युगादिरपि । सा चोक्ता रत्नमालायाम्–'माघे पञ्चदशी कृष्णा नभस्ये च त्रयोदशी । तृतीया माधवे शुक्ला नवम्यूर्जे युगादयः ॥' इति । यत्तुगौडाः–'माघस्य पौर्णमास्यां तु घोरं कलियुगं स्मृतम् ।' इति ब्राह्मोक्तेः, 'वैशाखमासस्य च या तृतीया नवम्यसौ कार्तिकशुक्लपक्षे । नभस्यमासस्य तमिस्रपक्षे त्रयोदशी पञ्चदशी च माघे ॥' इति विष्णुपुराणे । चकारेण तमिस्रपक्षानुषङ्गेपि पूर्वानुरोधात्पौर्णमास्येव ज्ञेया । 'द्वे शुक्ले' इत्यादिकं तु निर्मूलमित्याहुः । तन्न । 'दर्शे तु माघमासस्य प्रवृत्तं द्वापरं युगम् ।' इति भविष्यविरोधात् । एतेन ब्राह्मानुसारात्पूर्णिमायामेव युगादिश्राद्धं वदन् शूलपाणिः परास्तः । तेन कल्पभेदाद्युगभेदाद्वा व्यवस्थेति तत्त्वम् । एतेन 'कार्तिके नवमी शुक्ला

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

माघमासे च पूर्णिमा ।' इति बृहन्नारदीयं व्याख्यातम् । निर्मूलत्वोक्तिर्नारदीयाज्ञानकृता ।

अत्र श्राद्धनिर्णयः

अत्र श्राद्धमुक्तं मात्स्ये—'कृतं श्राद्धं विधानेन मन्वादिषु युगादिषु । हायनानि द्विसाहस्रं पितॄणां तृप्तिदं भवेत् ॥' इति । भारतेपि—'या मन्वाद्या युगाद्याश्च तिथयस्तासु मानवः । स्नात्वा हुत्वा च दत्वा च जप्त्वानन्तफलं लभेत् ॥' इति । श्राद्धेपि पूर्वाह्णव्यापिनी ग्राह्या । 'पूर्वाह्णे तु सदा कार्याः शुक्ला मनुयुगादयः । दैवे कर्मणि पित्र्ये च कृष्णे चैवापराह्णिकाः ॥' इति पाद्मोक्तेः । 'द्वे शुक्ले द्वे तथा कृष्णे युगादी कवयो विदुः । शुक्ले पौर्वाह्णिके ग्राह्ये कृष्णे चैवापराह्णिके इति हेमाद्रौ नारदीयवचनाच्च । दीपिकापि—'अथो मन्वादियुगादिकर्मतिथयः पूर्वाह्णिकाः स्युः सिते विज्ञेया अपराह्णिकाश्च बहुले ।' इति । स्मृत्यर्थसारेपि—'युगादिमन्वादिश्राद्धेषु शुक्लपक्षे उदयव्यापिनी तिथिर्ग्राह्या । कृष्णपक्षेऽपराह्णव्यापिनी' इति । दिवोदासीये गोभिलः—'वैशाखस्य तृतीयां यः पूर्वविद्धां करोति वै । हव्यं देवा न गृह्णन्ति कव्यं च पितरस्तथा ॥' इति । गोविन्दार्णवेप्येवम् । तेनेयं पूर्वाह्णव्यापिनी । दिनद्वये तत्त्वे परैवेति धर्मतत्त्वविदो हेमाद्र्यादयः । अनन्तभट्टस्तु—'सवैधृतिर्व्यतीपातो युगमन्वादयस्तथा । सन्मुखा उपवासे स्युर्दानादावन्तिमाः स्मृताः ॥' इत्याह । दानादाविति श्राद्धसंग्रहः । उपवासस्त्वग्रे वक्ष्यते । हेमाद्रावप्येवम् । माधवस्तु व्यतीपातः श्राद्धेऽपराह्णव्यापी ग्राह्य इत्याह । स्मृत्यर्थसारे तु कुतुपकालयोगीत्युक्तम् । यत्तु मार्कण्डेयः—'शुक्लपक्षस्य पूर्वाह्णे श्राद्धं कुर्याद्विचक्षणः । कृष्णपक्षापराह्णे हि रौहिणं तु न लङ्घयेत् ॥' रौहिणो नवमो मुहूर्तः । अत्र शुक्लपक्षयुगादिश्राद्धं पूर्वाह्णे कार्यमिति शूलपाणिः । निर्णयामृतादयस्तु कालादर्शेऽमाश्राद्धमापराह्णिकमुक्त्वा—'एष मन्वन्तरादीनां युगादीनां विनिर्णयः ।' इत्युक्तत्वात् 'द्वे शुक्ले' इत्यादि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वचनं विष्णुपूजनविषयम्। श्राद्धे त्वापराह्णिक्येवेति व्यवस्थां जगदुः। सेयं पूर्वोक्तानेकवचोविरोधात् 'पूर्वाह्णे दैविकं कुर्यात्' इत्यादिवचनादेव सिद्धे वचनवैयर्थ्याच्च स्वाच्छन्द्यविलसितमात्रमित्युपेक्षणीया। किंच कलादर्शोक्तिर्न्यायमूला वचोमूला वा। नाद्यः। युगादिश्राद्धस्यामाश्राद्ध विकृतित्वेन न्यायतोऽपराह्णव्याप्तावपि वचनेन तस्य बाधात् नान्त्यः। अतिदेशादेवापराह्णप्राप्तेर्वचनवैयर्थ्यात्। 'अप्राप्ते शास्त्रमर्थवत्' इति न्यायात्। तेन यदि कालादर्शोक्तेः कथंचिच्छ्रद्धाजाड्येन समाधित्सा तर्हि न्यायप्राप्तकृष्णपक्षयुगादिविषयत्वेन सा व्यवस्थापनीयेति दिक्। पूर्वाह्णस्तत्र द्वेधा विभक्तदिनपूर्वार्धः। 'द्वेधा भक्तदिनांशकोऽत्र गदितः प्राह्णापराह्णौ' इति दीपिकोक्तेः। माधवादयोप्येवम्।

अत्र विशेषो

हेमाद्रौ भविष्ये-'वैशाखे शुक्लपक्षे तु तृतीयायां तथैव च। गाङ्गातोये नरः स्नात्वा मुच्यते सर्वकिल्बिषैः। तस्यां कार्यो यवैर्होमो यवैर्विष्णुं समर्चयेत्। यवान्दद्याद्द्विजातिभ्यः प्रयतः प्राशयेद्यवान्॥' इति।

अत्र दानविशेष

तत्रैव भविष्ये इमां प्रक्रम्य-'उदकुम्भान्सकनकान्सान्नान्सर्वरसैः सह। यवगोधूमचणकान्सक्तुदध्योदनं तथा॥ ग्रैष्मिकं सर्वमेवात्र सस्यं दाने प्रशस्यते॥' इति। देवीपुराणेपि-'तृतीयायां तु वैशाखे रोहिण्यृक्षे प्रपूज्य तु। उदकुम्भप्रदानेन शिवलोके महीयते॥' मन्त्रस्तु-'एष धर्मघटो दत्तो ब्रह्मविष्णुशिवात्मकः। अस्य प्रदानात्तृप्यन्तु पितरोपि पितामहाः॥ गन्धोदकतिलैर्मिश्रं सान्नं कुम्भं फलान्वितम्। पितृभ्यः संप्रदास्यामि अक्षय्यमुपतिष्ठतु॥' इति।

अत्र च पिण्डरहितं श्राद्धं कुर्यात्। 'अयनद्वितये श्राद्धं विषुवद्वितये तथा। युगादिषु च सर्वासु पिण्डनिर्वपणादृते॥' इति हेमाद्रौ पुलस्त्यवचनात्। अत्र रात्रिभोजने प्रायश्चित्तमृग्विधाने-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'रात्रौ भुक्ते वत्सरे तु मन्वादिषु युगादिषु । (१)अभिस्ववृष्टिं मन्त्रं च जपेद्दश न पातकम् ॥' इति । अपरार्के यमः—'कृतोपवासाः सलिलं ये युगादिदिनेषु च । दास्यन्त्यन्नादिसहितं तेषां लोका महोदयाः ॥' इति ॥ वैशाखे मलमासे सति तत्रैव युगादिः कार्या । तथाच हेमाद्रौ ऋष्यशृङ्गः—'दशहरासु नोत्कर्षश्चतुर्ष्वपि युगादिषु । उपाकर्मणि चोत्सर्गे ह्येतदिष्टं वृषादितः ॥' इति । एतद्दशहरादिकं वृषादिसंक्रमे इष्टम् । 'कन्याचन्द्रे वृषे रवौ' इत्यादिना सौरमासोक्तेरित्यर्थः । कालादर्शेऽपि—'अब्दोदकुम्भमन्वादिमहालययुगादिषु' इति मलमासकर्तव्येषु परिगणनाच्च । महालयशब्देन मघात्रयोदश्युच्यत इति माधवः । स्मृतिचन्द्रिकायां तु मासद्वये कर्तव्यमित्युक्तम् । 'यौगादिकं मासिकं च श्राद्धं चापरपक्षिकम् । मन्वादिकं तैर्थिकं च कुर्यान्मासद्वयेऽपि च ॥' इति । अपरपक्षः कृष्णपक्षः न तु महालयः । तस्य तत्र निषेधात् ।

मदनरत्नेऽपि मरीचिः—'प्रतिमासं मृताहे च श्राद्धं यत्प्रतिवत्सरम् । मन्वादौ च युगादौ च तन्मासोरुभयोरपि ॥' इति । प्रतिवत्सरं क्रियमाणं कल्पादिश्राद्धमिति स एव व्याचख्यौ ।

१—"अभि स्ववृष्टिं मदे अस्य युध्यतो रघ्वीरिव प्रवणे सस्रुरूतयः । इन्द्रो यद्वज्री धृषमाणो अन्धसाऽभिनद्वलस्य परिधीरिव त्रितः ॥" इति ऋ० अ० १ अ० ४ । अस्य व्याख्या:— 'ऊतयो मरुतः मदे सोमपानेन हर्षे सति अस्येन्द्रस्य युध्यतो वृत्रेण सह युध्यमानस्य पुरतः । स्ववृष्टिं स्वभूतवृष्टिमन्तं वृत्रं अभि आभिमुख्येन सस्रुः जग्मुः । [कथंभूताः] रघ्वीरिव प्रवणे । यथा गमनस्वभावा आपः निम्नदेशे गच्छन्ति । यत् यदा अन्धसा सोमलक्षणेनान्नेन पीतेन धृषमाणः प्रगल्भः सन् वज्री वज्रवानिन्द्रः वलस्य संवृण्वतः एतत्संज्ञमसुरं भिनत् व्यदारयत् अवधीदित्यर्थः । तत्र दृष्टान्तः—त्रितः परिधीनिव । देवानां हविर्लेपनिघर्षणाय अग्नेः सकाशादप्सु एकतो द्वितस्त्रित इति त्रयः पुरुषा जज्ञिरे । तथा च तैत्तिरीयैः समाम्नातम्—'सोऽङ्गारेणापः अभ्यपातयत् तत एकतोऽजायत, स द्वितीयमभ्यपातयत् ततो द्वितोऽजायत, स तृतीयमभ्यपातयत् ततस्त्रितोऽजायत' इति । तत्र उदकपानार्थं प्रवृत्तस्य कूपे पतितस्य प्रतिरोधायासुरैः परिधयः परिधायकाः कूपस्याच्छादकाः स्थापिताः । तान्यथ सोऽभिनत्तद्वत् ।' इति **श्रीमत्सायणाचार्याणाम्** । अत्र यत्र यत्र मन्त्रास्तेषामर्थाश्च निर्दिष्टाःतत्र मन्त्रनिर्देशप्रयोजनं स्फुटमेव । विशेषतोऽर्थनिर्देशप्रयोजनं च जपकाले तत्तन्मन्त्रार्थज्ञानं तावदवश्यमपेक्षितम् । अन्यथा जपस्य न सम्यक् फलनिष्पत्तिरिति 'तज्जपस्तदर्थभावनम्' इति **श्रीमत्पञ्जलिकृतयोगसूत्रादवगम्यत** इति ज्ञेयम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अत्र श्राद्धाकरणे प्रायश्चित्तम् ।

उक्तमृग्विधाने–'नयस्यद्यावामन्त्रं च शतवारं तदा जपेत् । युगादयो यदा न्यूनाः कुरुते नैव चापि यः ॥' इति अत्र समुद्रस्नानं प्रशस्तम् । तदुक्तं पृथ्वीचन्द्रोदये सौरपुराणे–'युगादौ तु नरः स्नात्वा विधिवल्लवणोदधौ । गोसहस्रप्रदानस्य कुरुक्षेत्रे फलं हि यत् ॥ तत्फलं लभते मर्त्यो भूमिदानस्य च ध्रुवम् ॥' इति । अयं निर्णयः सर्वयुगादिषु बोद्धव्यः ॥ इति युगादिनिर्णयः ।

अथपरशुरामजयन्ती निर्णयः ।

इयमेव तृतीया परशुरामजयन्ती । सा प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या । तदुक्तं भार्गवार्चनदीपिकायां स्कान्दभविष्ययोः—'वैशाखस्य सिते पक्षे तृतीयायां पुनर्वसौ । निशायाः प्रथमे यामे रामाख्यः समये हरिः ॥ स्वोच्चगैः षड्ग्रहैर्युक्ते मिथुने राहुसंस्थिते । रेणुकायास्तु यो गर्भादवतीर्णो हरिः स्वयम् ॥' इति । दिनद्वये तद्व्याप्त्यावशतः समव्याप्तौ च परा, अन्यथा पूर्वैव । तदुक्तं तत्रैव भविष्ये–'शुक्लतृतीया वैशाखे शुद्धोपोष्या दिनद्वये । निशायाः पूर्वयामे चेदुत्तरान्यत्र पूर्विका ॥' इति ॥

गङ्गोत्पत्ति निर्णयः ।

वैशाखशुक्लसप्तम्यां गङ्गोत्पत्तिः । तदुक्तं पृथ्वीचन्द्रोदये ब्राह्मे–'वैशाखे शुक्लसप्तम्यां जह्नुना जाह्नवी पुरा । क्रोधात्पीता पुनस्त्यक्ता कर्णरन्ध्रात्तु दक्षिणात् ॥ तां तत्र पूजयेद्देवीं गङ्गां गगनमेखलाम् ॥'

१—"न यस्य द्यावपृथिवी अनुव्यचो न सिन्धवो रजसो अन्तमानशुः । नोत स्ववृष्टिं मदे अस्य युध्यत एको अन्यच्चकृषे विश्वमानुषक् ॥' इति । ऋ० अ० १ अ० ४। 'यस्येन्द्रस्य व्यचो व्यापनं द्यावपृथिवी द्यावापृथिव्यौ नान्वानशाते प्राप्तुमसमर्थे बभूवतुः' तथा 'रजसोऽन्तरिक्षलोकस्य उपरि सिन्धवः स्यन्दनशीला आपः यस्येन्द्रस्य तेजसोऽन्तमवसानं नानशुः न प्रापुः । उत अपि च सोमपानेन मदे हर्षे सति स्ववृष्टिं स्वीकृतवृष्टिं वृत्रादिं युध्यतः युध्यमानस्य बलस्यान्तं वृत्रादयो न प्रापुः । अतः हे इन्द्र एकस्त्वं अन्यत् स्वव्यतिरिक्तं विश्वं सर्वं भूतजातं आनुषक् अनुषक्तं चकृषे । सकलमपि भूतजातं त्वदधीनमभूदिति भावः ।' इति । अनेन य एवमपरिमितशक्तिरीश्वरस्त्वं अस्माकं विहितकर्माकरणरूपं दोषं परिहर्तुमपि समर्थोऽसीति भावोऽवसेयः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection.

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

इति । अत्र शिष्टाचारान्मध्याह्नव्यापिनी ग्राह्या । दिनद्वये तद्व्याप्त्यवेकदेशव्याप्तौ वा पूर्वा । युग्मवाक्यात् ॥

वैशाखशुक्लद्वादश्यां योगविशेषः ।

वैशाखशुक्लाद्वादश्यां योगविशेषो हेमाद्रौ ज्योतिःशास्त्रे—'पञ्चाननस्थौ गुरुभूमिपुत्रौ मेषे रविः स्याद्यदि शुक्लपक्षे । पाशाभिधाना करभेण युक्ता तिथिर्व्यतीपात इतीह योगः । अस्मिंस्तु गोभूमिहिरण्यवस्त्रदानेन सर्वं परिहाय पापम् । सुरत्वमिन्द्रत्वमनामयत्वं मर्त्याधिपत्यं लभते मनुष्यः ॥' इति । पञ्चाननः सिंहः, पाशाभिधाना तिथिर्द्वादशी, करभो हस्तः ॥

वैशाखशुक्लचतुर्दशी नृसिंहजयन्ती निर्णयः ।

सा प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या । तदुक्तं हेमाद्रौ नृसिंहपुराणे—'वैशाखे शुक्लपक्षे तु चतुर्दश्यां निशामुखे । मज्जन्मसंभवं पुण्यं व्रतं पापप्रणाशनम् ॥ वर्षे वर्षे तु कर्तव्यं मम संतुष्टिकारणम् ॥' इति । दिनद्वयेपि तद्व्याप्तावंशतः समव्याप्तौ च परा । विषमव्याप्तौ त्वधिक व्याप्तिमती । दिनद्वयेऽव्याप्तौ परा परदिने गौणकालव्याप्तेः सत्वात्पूर्वदिने च तदभावात् । यत्तु—'ततो मध्याह्नवेलायां नद्यादौ विमले जले ।' इत्युपक्रम्य—'परिधाय ततो वासो व्रतकर्म समारभेत् ।' इति तत्रैवोक्तं तत्संकल्परूपव्रतोपक्रमविषयम् । न त्वेतावता मध्याह्नव्यापिनी ग्राह्येति भ्रमितव्यम् । पूर्वोक्तवचनविरोधात् । 'वैशाखस्य चतुर्दश्यां सोमवारेऽनिलर्क्षके । अवतारो नृसिंहस्य प्रदोषसमये द्विजाः ॥' इति टोडरानन्दे स्कान्दात् । 'कूर्मः सिंहो बौद्धकल्की च सायम्' इति पूर्वोक्तपुराणसमुच्चयवचनाच्चेति केचित् । तत्त्वं तु पूर्ववचसामनाकरत्वेन निर्मूलत्वात् हेमाद्रौ नृसिंहपुराणे—'मज्जन्मसंभवं पुण्यं व्रतं पापप्रणाशनम् ।' इत्युपक्रम्य—'स्वातीनक्षत्रयोगे च शनिवारे तु मद्व्रतम् । सिद्धयोगस्य संयोगे वणिजे करणे तथा ॥ पुंसां सौभाग्ययोगेन लभ्यते दैवयोगतः ॥ सर्वैरेतैस्तु संयुक्तं हत्याकोटिविना-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

शनम् ॥ एतदन्यतरे योगे मद्दिनं पापनाशनम् । केवलेपि प्रकर्तव्यं मद्दिने व्रतमुत्तमम् ॥ अन्यथा नरकं याति यावच्चन्द्रदिवाकरौ ॥' इत्युक्त्वा—'ततो मध्याह्नवेलायां नद्यादौ विमले जले ।' इत्यादिना मध्याह्न एव व्रतविधानाच्चतुर्दश्युत्तरार्धवणिजे करणे मध्याह्ने च स्पष्टं जन्म प्रतीयते । संध्यायां जन्म तु क्वाप्यनुक्तेर्मौर्ख्यकृतं, तद्वशान्निर्णयश्च हेय एवेति । तथा इयमेव योगविशेषेणातिप्रशस्ता । तदुक्तं तत्रैव—'स्वातीनक्षत्रयोगे च शनिवारे च मद्व्रतम् । सिद्धयोगस्य संयोगे वणिजे करणे तथा ॥ पुंसां सौभाग्ययोगेन लभ्यते दैवयोगतः । एभिर्योगैर्विनापि स्यान्मद्दिनं पापनाशनम् ॥ सर्वेषामेव वर्णानामधिकारोस्ति मद्व्रते । मद्भक्तैस्तु विशेषेण कर्तव्यं मत्परायणैः ॥ तथा—'सिंहः स्वर्णमयो देयो मम संतोषकारकः ।' तथा—'विज्ञाय मद्दिनं यस्तु लङ्घयेत्पापकृन्नरः । स याति नरकं घोरं यावच्चन्द्रदिवाकरौ ॥' इदं च संयोगपृथक्त्वन्यायेन नित्यं काम्यं च । अथात्र विशेषः—मध्याह्ने मृद्गोमयतिलामलकस्नानं कृत्वा—'नृसिंह देवदेवेश तव जन्मदिने शुभे । उपवासं करिष्यामि सर्वभोगविवर्जितः ॥' इति मन्त्रेण संकल्पं कृत्वा आचार्यं वृत्वा सायंकाले—'हैमी तु तत्र मन्मूर्तिः स्थाप्या लक्ष्म्यास्तथैव च । पलेन वा तदर्धेन तदर्धार्धेन वा पुनः ॥ यथाशक्ति तथा कुर्याद्वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥' इत्युक्तम् । नृसिंहमूर्तिं शक्त्या कृतं सुवर्णसिंहं च कलशोपरि संपूज्य रात्रौ जागरणं कृत्वा प्रातः पुनः संपूज्य—'नृसिंहाच्युत देवेश लक्ष्मीकान्त जगत्पते । अनेनार्चाप्रदानेन सफलाः स्युर्मनोरथाः ॥' इत्याचार्याय दत्वा-'मद्वंशे ये नरा जाता ये जनिष्यन्ति चापरे । तांस्त्वमुद्धर देवेश दुस्तराद्भवसागरात् ॥ पातकार्णवमग्नस्य व्याधिदुःखाम्बुवारिभिः । तीव्रैश्च परिभूतस्य महादुःखगतस्य मे ॥ करावलम्बनं देहि शेषशायिन् जगत्पते । श्रीनृसिंह रमाकान्त भक्तानां भयनाशन ॥ क्षीराम्बुनिधिवासिंस्त्वं चक्रपाणे जनार्दन । व्रतेनानेन देवेश भुक्तिमुक्तिप्रदो भव ॥' इति प्रार्थयेदिति संक्षेपः ॥

वैशाख पूर्णिमा निर्णयः ।

वैशाख पौर्णमास्यां विशेषोऽपरार्के जाबालिनोक्तः—'श्रुतान्नमुदकुम्भं च वैशाख्यां च विशेषतः । निर्दिश्य धर्मराजाय गोदानफल-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

माप्नुयात् ॥ सुवर्णतिलयुक्तैस्तु ब्राह्मणान्सप्त पञ्च च । तर्पयेदुदपात्रैस्तु ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥' इति । उदकुम्भदानमन्त्रस्त्वक्षय्यतृतीयाप्रकरणे उक्तः । भविष्येपि—'वैशाखी कार्तिकी माघी तिथयोऽतीव पूजिताः । स्नानदानविहीनास्ता न नेयाः पाण्डुनन्दन ॥' अत्र कृष्णाजिनदानं कार्यम् । तथा च विष्णुः—'कृष्णाजिने तिलान्कृष्णान्हिरण्यं मधुसर्पिषी । ददाति यस्तु विप्राय सर्वं तरति दुष्कृतम् ॥' इति । इति श्रीरामकृष्णभट्टसूरिसू कमलाकरभट्टकृते कालनिर्णयसिन्धौ वैशाखमासः समाप्तः ॥

वृषसंक्रान्तिनिर्णयः ।

वृषसंक्रान्तौ पूर्वाः षोडश घटिकाः पुण्यकालः । रात्रौ संक्रमे सति प्रागेवोक्तम् ॥

रंभाव्रतनिर्णयः ।

ज्येष्ठशुक्लतृतीयायां रम्भाव्रतमुक्तं माधवीये भविष्ये—'भद्रे कुरुष्व यत्नेन रम्भाख्यं व्रतमुत्तमम् । ज्येष्ठशुक्लतृतीयायां स्नाता नियमतत्परा ॥' इति । सा पूर्वविद्धा ग्राह्या । 'बृहत्तपा तथा रम्भा सावित्री वटपैतृकी । कृष्णाष्टमी च भूता च कर्तव्या संमुखी तिथिः ॥' इति स्कान्दोक्तेः ।

ज्येष्ठशुक्लदशमी दशहरानिर्णयः ।

ज्येष्ठशुक्लदशमी दशहरा । हेमाद्रौ ब्राह्मे—'ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे दशमी हस्तसंयुता । हरते दश पापानि तस्माद्दशहरा स्मृता ॥' इति । वाराहेपि—'दशमी शुक्लपक्षे तु ज्येष्ठे मासि कुजेहनि । अवतीर्णा यतः स्वर्गात् हस्तर्क्षे च सरिद्वरा ॥ हरते दशपापानि तस्माद्दशहरा स्मृता ॥' इति । स्कान्दे तु दशयोगा उक्ताः । तथा—'ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे दशम्यां बुधहस्तयोः । व्यतीपाते गरानन्दे कन्याचन्द्रे वृषे रवौ ॥ दशयोगे नरः स्नात्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥' इति । अत्र बुधभौमयोः कल्पभेदेन व्यवस्था । इयं च यत्रैव योगबाहुल्यं सैव ग्राह्या । योगाधिक्ये फलाधिक्यात् । ज्येष्ठे मलमासे सति तत्रैव

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दशहरा कार्या न तु शुद्धे। 'दशहरासु नोत्कर्षश्चतुर्ष्वपि युगादिषु।' इति हेमाद्रौ ऋष्यशृङ्गोक्तेः। तथा स्कान्दे—'यां कांचित्सरितं प्राप्य दद्यादर्घ्यं तिलोदकम्। मुच्यते दशभिः पापैः स महापातकोपमैः॥'

अत्र विशेषः।

काशीखण्डे—'ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे प्राप्य प्रतिपदं तिथिम्। दशाश्वमेधके स्नात्वा मुच्यते सर्वपातकैः॥ एवं सर्वासु तिथिषु क्रमस्नायी नरोत्तमः। आ शुक्लपक्षदशमीं प्रतिजन्माघमुत्सृजेत्॥' तथा—'लिङ्गं दशाश्वमेधेशं दृष्ट्वा दशहरातिथौ। दशजन्मार्जितैः पापैस्त्यज्यते नात्र संशयः॥' तथा च भविष्योत्तरकाशीखण्डयोः—'निशायां जागरं कृत्वा समुपोष्य च भक्तितः। पुष्पैर्गन्धैश्च नैवेद्यैः फलैश्च दशसंख्यया॥ तथा दीपैश्च ताम्बूलैः पूजयेच्छ्रद्धयान्वितः। स्नात्वा भक्त्या तु जाह्नव्यां दशकृत्वो विधानतः॥ दशप्रसृतिकृष्णांश्च तिलान्सर्पिश्च वै जले। सक्तुपिण्डान् गुडपिण्डान्दद्याच्च दशसंख्यया॥ ततो गङ्गातटे रम्ये हेम्ना रूप्येण वा तथा। गङ्गायाः प्रतिमां कृत्वा वक्ष्यमाणस्वरूपिणीम्॥ संस्थाप्य पूजयेद्देवीं तदलाभे मृदापि च। अथ तत्राप्यशक्तश्चेल्लिखेत्पिष्टेन वै भुवि। वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण कुर्यात्पूजां विशेषतः। नारायणं महेशं च ब्रह्माणं भास्करं तथा॥ भगीरथं च नृपतिं हिमवन्तं नगेश्वरम्। गन्धपुष्पादिभिः सम्यग्यथाशक्ति प्रपूजयेत्। दशप्रस्थांस्तिलान्दद्याद्दशविप्रेभ्य एव च। दशप्रस्थान्यवान्दद्याद्दशसंख्यागवीस्तथा॥' प्रस्थः षोडशपलानि। पलं तु—'मुष्टिमात्रं पलं स्मृतम्' इति महार्णवे उक्तम्। 'मत्स्यकच्छपमण्डूकमकरादिजलेचरान्। हंसकारण्डवबकचक्रटिट्टिभसारसान्॥ कारयित्वा यथाशक्ति स्वर्णेन रजतेन वा। तदलाभे पिष्टमयानभ्यर्च्य कुसुमादिभिः गङ्गायां प्रक्षिपेदाज्यदीपांश्चैव प्रवाहयेत्। पुष्पाद्यैः पूजयेद्गङ्गां मन्त्रेणानेन भक्तितः॥ 'ॐ नमः शिवायै नारायण्यै दशहरायै गंगायैनमो नमः' इति मन्त्रं तु यो मर्त्यो दिने तस्मिन्दिवानिशम्। जपेत्पञ्चसहस्राणि दशधर्मफलं लभेत्॥' काशीखण्डे त्वन्यो मन्त्र उक्तः—'नमः शिवायै प्रथमं नारायण्यै पदं ततः। दशहरायै पदमिति गङ्गायै मन्त्र एष वै। स्वाहान्तः प्रणवादिश्च भवेद्विंशात्तरो

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मनुः । पूजा दानं जपो होमस्तेनैव मनुना स्मृतम् ॥' इति । अत्र गङ्गास्तोत्रंपाठमपि दशवारं कुर्यात् । तदुक्तं भविष्ये— तस्यां दशम्यामेतच्च स्तोत्रं गङ्गाजले स्थिता । यः पठे· दशकृत्वस्तु दरिद्रो वापि चाक्षमः ॥ सोपि तत्फलमाप्नोति गङ्गां

१—तत्र स्तोत्रपाठविधिश्च विशेषत उक्तो **धर्मसिन्धौ** । यथा—'**ब्रह्मोवाच** ॥ नमः शिवायै गङ्गायै शिवदायै नमो नमः । नमस्ते रुद्ररूपिण्यै शांकर्यै ते नमो नमः ॥ नमस्ते विश्वरूपिण्यै ब्रह्ममूर्त्यै नमो नमः । सर्वदेवस्वरूपिण्यै नमो भेषजमूर्तये ॥ सर्वस्य सर्वव्याधीनां भिषक्श्रेष्ठ्यै नमोस्तु ते । स्थाणुजङ्गमसंभूतविषहन्त्र्यै नमोनमः ॥ भोगोपभोगदायिन्यै भोगवत्यै नमो नमः । मन्दाकिन्यै नमस्तेस्तु स्वर्गदायै नमः सदा ॥ नमस्त्रैलोक्यभूषायै जगद्धात्र्यै नमो नमः । नमस्त्रिशुक्लसंस्थायै तेजोवत्यै नमो नमः । नन्दायै लिङ्गधारिण्यै नारायण्यैनमो नमः । नमस्ते विश्वमुख्यायै रेवत्यै ते नमो नमः ॥ बृहत्यै ते नमस्तैस्तु लोकधात्र्यै नमो नमः । नमस्ते विश्वमित्रायै नन्दिन्यै ते नमो नमः ॥ पृथ्व्यै शिवामृतायै च सुवृषायैनमोनमः । शान्तायै च वरिष्ठायै वरदायै नमो नमः ॥ उस्रायै सुखदोग्ध्र्यै च संजीविन्यै नमो नमः । ब्रह्मिष्ठायै ब्रह्मदायै दुरितघ्न्यै नमो नमः ॥ प्रणतार्तिप्रभञ्जिन्यै जगन्मात्रे नमोस्तु ते । सर्वापत्प्रतिपक्षायै मङ्गलायै नमो नमः ॥ शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे । सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोस्तु ते ॥ निर्लेपायै दुर्गहन्त्र्यै दक्षायै ते नमो नमः । परात्परतरे तुभ्यं नमस्ते मोक्षदे सदा ॥ गङ्गे ममाग्रतो भूया गङ्गे मे देवि पृष्ठतः । गङ्गे मे पार्श्वयोरेहि त्वयि गङ्गेस्तु मे स्थितः ॥ आदौ त्वमन्ते मध्ये च सर्वं त्वं गां गते शिवे । त्वमेव मूलप्रकृतिस्त्वं हि नारायणः परः ॥ गङ्गे त्वं परमात्मा च शिवस्तुभ्यं नमः शिवे । य इदं पठति स्तोत्रं भक्त्या नित्यं नरोपि यः ॥ शृणुयात् श्रद्धया युक्तः कायवाक्चित्तसंभवैः । दशधा संस्थितैर्दोषैः सर्वैरेव प्रमुच्यते ॥ सर्वान्कामानवाप्नोति प्रेत्य ब्रह्मणि लीयते । ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे दशमी हस्तसंयुता ॥ तस्यां दशम्यामेतच्च स्तोत्रं गङ्गाजले स्थितः । यः पठेद्दशकृत्वस्तु दरिद्रो वापि चाक्षमः ॥ सोपि तत्फलमाप्नोति गङ्गां संपूज्य यत्नतः । अदत्तानामुपादानं हिंसा चैवाविधानतः । परदारोपसेवा च कायिकं त्रिविधं स्मृतम् । पारुष्यमनृतं चैव पैशुन्यं चापि सर्वशः ॥ असंबद्धप्रलापश्च वाङ्मयं स्याच्चतुर्विधम् ॥ परद्रव्येष्वभिध्यानं मनसानिष्टचिंतनम् ॥ वितथाभिनिवेशश्च मानसं त्रिविधं स्मृतम् । एतानि दश पापानि हर त्वं मम जाह्नवि ॥ दशपापहरा यस्मात्तस्माद्दशहरा स्मृता । त्रयस्त्रिंशच्छतं पूर्वान् पितॄनथ पितामहान् ॥ उद्धरत्येव संसारान्मन्त्रेणानेन पूजिता ॥ नमो भगवत्यै दशपापहरायै गङ्गायै नारायण्यै रेवत्यै शिवायै दक्षाय अमृतायै विश्वरूपिण्यै नन्दिन्यै ते नमो नमः । सितमकर निषण्णां शुभ्रवर्णां त्रिनेत्रां करधृतकलशोद्यत्सोत्पलामत्यभीष्टाम् । विधिहरिहररूपां सेन्दुकोटीरजुष्टां कलितसितदुकूलां जाह्नवीं तां नमामि ॥ आदावादिपितामहस्य निगमव्यापारपात्रे जलं पश्चात्पन्नगशायिनो भगवतः पादोदकं पावनम् । भूयः शम्भुजटाविभूषणमणिर्जह्नोर्महर्षेरियं देवी कल्मषनाशिनी भगवती भागीरथी दृश्यते ॥ गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद्योजनानां शतैरपि । मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति ॥' इति ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

संपूज्य यत्नतः ॥' इति । स्तोत्रं च प्रतिपदादिदशमीपर्यन्तं दिनवृद्धिसंख्यया पठनीयमिति शिष्टाः । अत्र च सर्वोपि विस्तरः स्तोत्रादि च भट्टकृतत्रिस्थलीसेतोरवधेयः । विस्तरभीतेस्तु न लिख्यते । एवं कुर्वतः फलमुक्तं काशीखण्डे–'एवं कृत्वा विधानेन वित्तशाठ्यविवर्जितः । उपवासी वक्ष्यामाणैर्दशपापैः प्रमुच्यते ॥ सर्वान्कामानवाप्नोति प्रेत्य ब्रह्मणि लीयते ॥' इति च । अस्यां सेतुबन्धरामेश्वरस्य प्रतिष्ठादिनत्वाद्विशेषेण पूजा कार्या । तदुक्तं स्कान्दे सेतुमाहात्म्ये –'ज्येष्ठे मासे सिते पक्षे दशम्यां बुधहस्तयोः । गरानन्दे व्यतीपाते कन्याचन्द्रे वृषे रवौ । ॥ दशयोगे सेतुमध्ये लिङ्गरूपधरं हरम् । रामो वै स्थापयामास शिवलिङ्गमनुत्तमम् ॥' इति । इति दशहरा ॥

ज्येष्ठशुक्लैकादशी निर्णयः ।

ज्येष्ठशुक्लैकादशी निर्जला । तत्र निर्जलमुपोष्य विप्रेभ्यो जलकुम्भान्दद्यादिति निर्णयामृते उक्तम् । मदनरत्ने स्कान्दे–'ज्येष्ठे मासि नृपश्रेष्ठ या शुक्लैकादशी शुभा । निर्जलं समुपोष्यात्र जलकुम्भान्सशर्करान् ॥ प्रदाय विप्रमुख्येभ्यो मोदते विष्णुसन्निधौ ॥'

सावित्री व्रत निर्णयः ।

ज्येष्ठपौर्णमास्यां सावित्रीव्रतम् । तदुक्तं स्कान्दभविष्ययोः–'ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे द्वादश्यां रजनीमुखे ।' इत्युपक्रम्य–'व्रतं त्रिरात्रमुद्दिश्य दिवारात्रिं स्थिरा भवेत् ।' इति । अन्तेप्युपसंहृतम् । ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे पूर्णिमायां तथा व्रतम् । चीर्णं पुरा महाभक्त्या कथितं ते मया नृप ॥' इति दाक्षिणात्याश्चैतदेवाद्रियन्ते । एतच्चामावास्यायामप्युक्तं निर्णयामृते भविष्ये–'अमायां च तथा ज्येष्ठे वटमूले महासती । त्रिरात्रोपोषिता नारी विधिनानेन पूजयेत् ॥' मदनरत्ने त्विदं वाक्यम्–'पञ्चदश्यां तथा ज्येष्ठे' इति पठित्वा

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ज्येष्ठपौर्णमास्यामुक्तम् । तथा—'अशक्तौ तु त्रयोदश्यां नक्तं कुर्याज्जितेन्द्रिया । अयाचितं चतुर्दश्याममायां समुपोषणम् ॥' इति । तत्तु पाश्चात्या आद्रियन्ते । हेमाद्रिसमयोद्द्योतादिषु तु भाद्रपदपूर्णिमायामुक्तम् । तत्तु नेदानीं प्रचरति । गौडास्तु—'मेषे वा वृषभे वापि सावित्रीं तां विनिर्दिशेत् । ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां सावित्रीमर्चयन्ति याः ॥ वटमूले सोपवासा न ता वैधव्यमाप्नुयुः ॥' इति पराशरोक्तेश्चतुर्दश्यां प्रदोषे व्रतम् । दिनद्वये तद्व्याप्तौ परैवेत्याहुः । तन्निर्मूलम् । अत्र पूर्णिमामावास्ये पूर्वविद्धे ग्राह्ये । 'भूतविद्धा न कर्तव्या अमावास्या च पूर्णिमा । वर्जयित्वा नरश्रेष्ठ सावित्रीव्रतमुत्तमम् ॥' इति ब्रह्मवैवर्तात् । स्कान्देऽपि—'भूतविद्धा सिनीवाली न तु तत्र व्रतं चरेत् । वर्जयित्वा तु सावित्रीव्रतं तु शिखिवाहन ॥' इति । मदनरत्ने ब्रह्मवैवर्तेऽपि—'प्रतिपत्पञ्चमी भूतसावित्री वटपूर्णिमा । नवमी दशमी चैव नोपोष्याः परसंयुताः ॥' इति । यदा त्वष्टादशघटिका चतुर्दशी तदा परा ग्राह्या । 'पूर्वविद्धैव सावित्रीव्रते पञ्चदशी तिथिः । नाड्योऽष्टादश भूतस्य स्युश्चेत्तत्र परेऽहनि ॥' इति माधवः । वस्तुतस्तु—'भूतोऽष्टादशनाडीभिर्दूषयत्युत्तरां तिथिम् ।' इत्यस्य व्रतान्तरे सावकाशत्वाद्विशेषप्रवृत्तपूर्वविद्धाविधायकवचनेन तस्य बाधादष्टादशनाडीवेधेऽपि पूर्वैवेत्ययं पन्थाः साधुः । अत्र पूर्णिमानुरोधेनैव यथा त्रिरात्रिसंपत्तिर्भवति तथा त्रयोदश्यादि ग्राह्यम् । तस्याः प्रधानत्वात् । अयं निर्णयोऽमायामपि ज्ञेयः । पारणं तु पूर्णिमान्ते कार्यम् ॥

तत्र स्त्रीव्रतेविशेष विधयः ।

अत्र स्त्रीव्रतेषु विशेषाः परिभाषायामुक्ताः । अत्र विशेषो भविष्ये—'गृहीत्वा वालुकां पात्रे प्रस्थमात्रां युधिष्ठिर । ततो वंशमये पात्रे वस्त्रयुग्मेन वेष्टिते ॥ सावित्रीप्रतिमां कुर्यात्सौवर्णीं वापि मृन्मयीम् । सार्धं सत्यवता साध्वीं फलनैवेद्यदीपकैः ॥ रजन्या कण्ठसूत्रैश्च शुभैः कुङ्कुमकेशरैः ॥' पूजयेदिति शेषः । रजनी हरिद्रा । कण्ठसूत्रं सौभाग्यतन्तुः । 'सावित्र्याख्यानकं वापि वाचयीत द्विजोत्तमैः । रात्रौ जागरणं कृत्वा प्रभाते विमले ततः । तामपि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ब्रह्मणे दत्वा प्रणिपत्य क्षमापयेत् ॥' इति। मन्त्रस्तु—'सावित्रीयं मया दत्ता सहिरण्या महासती। ब्रह्मणः प्रीणनार्थाय ब्राह्मणः प्रतिगृह्यताम् ॥ व्रतेनानेन राजेन्द्र वैधव्यं नाप्नुयात्क्वचित् ॥' इति ॥

ज्येष्ठपौर्णमास्यां विशेषः

आदित्यपुराणे—'ज्येष्ठे मासि तिलान्दद्यात्पौर्णमास्यां विशेषतः। अश्वमेधस्य यत्पुण्यं तत्प्राप्नोति न संशयः ॥' विष्णुरपि—ज्येष्ठी ज्येष्ठायुता चेत्स्यात्तस्यां छत्रोपानत्प्रदानेन नरो नराधिपत्यमाप्नोति' इति। हेमाद्रौ ज्यौतिषे—ऐन्द्रे गुरुः शशी चैव प्राजापत्ये रविस्तथा। पूर्णिमा ज्येष्ठमासस्य महाज्येष्ठी प्रकीर्तिता ॥' इति। इयं मन्वादिरपि। सा पौर्वाह्णिकी ग्राह्या। विशेषस्तु चैत्रे उक्तः। तथाऽपरार्के वामनपुराणे—'उदकुम्भाम्बुदानं च तालवृन्तं सचन्दनम्। त्रिविमक्रस्य प्रीत्यर्थं दातव्यं ज्येष्ठमासि तु ॥' इतिकमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ ज्येष्ठमासः समाप्तः ॥

अथमिथुन संक्रान्तिः।

मिथुनसंक्रान्तौ—पराः षोडश घटिकाः पुण्यकालः। रात्रौ तु प्रागेवोक्तम् ॥

आषाढशुक्लद्वितियायां रथोत्सवः।

तदुक्तं तिथितत्त्वे स्कान्दे—आषाढस्य सिते पक्षे द्वितीया पुष्यसंयुता। तस्यां रथे समारोप्य रामं वै भद्रया सह॥ यात्रोत्सवं प्रवर्त्याथ प्रीणयेत द्विजान्बहून् ॥' तथा—'ऋक्षाभावे तिथौ कार्या यात्रासौ मम पुण्यदा ॥ आषाढशुक्लदशमी पौर्णमासी च मन्वादिः। सा च पूर्वाह्णव्यापिनी ग्राह्येति प्रागुक्तम्। आषाढशुक्लद्वादश्यामनुराधायोगरहितायां पारणं कुर्यात्।तदुक्तं भविष्ये—'आभाकासितपक्षेषु मैत्रश्रवणरेवती। संगमे न हि भोक्तव्यं द्वादश द्वादशीर्हरेत् ॥'अस्यार्थः—'आषाढ भाद्रपदकार्तिकशुक्लद्वादशीष्वनुराधाश्रवणरेवतीयोगे पारणं न कुर्यादिति। अत्र यद्यप्येतावदेवोक्तं तथाप्यनुराधाप्रथमपाद एव वर्ज्यः॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तदुक्तं विष्णुधर्मे—मैत्राद्यपादे स्वपितीह विष्णुः पौष्णान्त्यपादे प्रतिबोधमेति । श्रुतेश्च मध्ये परिवर्तमेति सुप्तिप्रबोधपरिवर्तनमेव वर्ज्यम् ।' इति । वस्तुतस्तु पूर्ववचनमिदं च निर्मूलम् ॥

अथ विष्णुशयनोत्सवनिर्णयः ।

अत्रैव विष्णुशयनोत्सव उक्तो हेमाद्रौ ब्राह्मे—'एकादश्यां तु शुक्लायामाषाढे भगवान्हरिः । भुजङ्गशयने शेते क्षीरार्णवजले सदा ॥' इति । कल्पतरौ यमः—'क्षीराब्धौ शेषपर्यङ्के आषाढ्यां संविशेद्धरिः । निद्रां त्यजति कार्तिक्यां तयोः सम्पूजयेत्सदा ॥ ब्रह्महत्यादिकं पापं क्षिप्रमेव व्यपोहति । हिंसात्मकैस्तु किं तस्य यज्ञैः कार्यं महात्मनः ॥ प्रस्वापे च प्रबोधे च पूजितो येन केशवः ॥' टोडरानन्देपि स्कान्दे—'आषाढशुक्लैकादश्यां कुर्यात्स्वप्नमहोत्सवम् ।' अयं द्वादश्यामप्युक्तः 'आभाकासितपक्षेषु मैत्रश्रवणरेवती । आदिमध्यावसानेषु प्रस्वापावर्तनोत्सवाः ॥ निशि स्वापो दिवोत्थानं सन्ध्यायां परिवर्तनम् । अन्यत्र पादयोगेपि द्वादश्यामेव कारयेत् । आभाकाद्येषु मासेषु मिथुने माधवस्य च । द्वादश्यां शुक्लपक्षे च प्रस्वापावर्तनोत्सवाः ॥' इति भविष्योक्तेः । 'द्वादश्यां सन्धिसमये नक्षत्राणामसम्भवे । आभाकासित पक्षेषु शयनावर्तनादिकम् ॥' इति । वाराहोक्तेश्च । द्वादश्यामित्यत्रापि पारणाहोमात्रं विवक्षितम् । 'पारणाहे पूर्वरात्रे घण्टादीन्वादयन्मुहुः । इति रामार्चनचन्द्रिकोक्तेः—अत्रैकादशीद्वादश्योर्देशभेदेन व्यवस्था ।

अस्य मलमासे निषेधः ।

इदं च मलमासे न कार्यम् । 'ईशानस्य बलिर्विष्णोः शयनं परिवर्तनम् । इति कालादर्शे निषेधात् । यदपि—एकादश्यां तु गृह्णीयात्संक्रान्तौ कर्कटस्य च । आषाढ्यां वा नरो भक्त्या चातुर्मास्यव्रतक्रियाम् ॥' इति हेमाद्रौ ब्रह्मवैवर्तं तदपि मलमासेऽसति द्रष्टव्यम् । 'मिथुनस्थो यदा भानुरमावास्याद्वयं स्पृशेत् । द्विराषाढः स विज्ञेयो विष्णुः स्वपिति कर्कटे ॥' इति तत्रैव मोहचूलोत्तरोक्तेः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ चातुर्मास्यव्रतारम्भः ।

अत्रैव चातुर्मास्यव्रतारम्भ उक्तो भारते—'आषाढे तु सिते पक्षे एकादश्यामुपोषितः । चातुर्मास्यव्रतं कुर्याद्यत्किञ्चिन्नियतो नरः ॥' इति । अस्य नित्यत्वं तत्रैवोक्तम्—'वार्षिकांश्चतुरो मासान्वाहयेत्केनचिन्नरः । व्रतेन नोचेदाप्नोति किल्बिषं वत्सरोद्भवम् ॥ 'असम्भवे तुलार्केपि कर्तव्यं तत्प्रयत्नतः ॥' इति । तेनाषाढशुक्लैकादश्यां द्वादश्यां पौर्णमास्यां वारम्भः । समाप्तिस्तु कार्तिकशुक्लद्वादश्यामेव । तदुक्तं हेमाद्रौ भारते— 'चतुर्धा गृह्य वै चीर्णं चातुर्मास्यव्रतं नरः । कार्तिके शुक्लपक्षे तु द्वादश्यां तत्समापयेत् ॥' इति । अस्यारम्भः शुक्रास्तादावपि कार्यः । 'न शैशवं न मौढ्यं च शुक्रगुर्वोर्न वा तिथेः। खण्डत्वं चिन्तयेदादौ चातुर्मास्यविधौ नरः ॥' इति हेमाद्रौ वृद्धगार्ग्योक्तेः । इदं च द्वितीयाद्यारम्भविषयम् । प्रथमारम्भस्तु न भवत्येव । आशौचमध्येपि द्वितीयाद्यारम्भो भवति । 'अशुचिर्वा शुचिर्वापि यदि स्त्री यदि वा पुमान् । व्रतमेतन्नरः कृत्वा मुच्यते सर्वपातकैः ॥' इति भार्गवार्चनदीपिकायां स्कान्दोक्तेः । 'आरब्धे सूतकं न स्यादनारब्धे तु सूतकम् ।' इति विष्णुवचनाच्च । यत्तु—'असंक्रान्तं तथा मासं दैवे पित्र्ये च कर्मणि । मलमासमशौचं च वर्जयेन्मतिमान्नरः ॥' इति हेमाद्रौ चातुर्मास्यव्रतप्रकरणे भविष्यवचनं तत् पूषानुमन्त्रणमन्त्रवदसंबद्धं मध्ये पठितमिति ज्ञेयम् । अन्यथा पित्र्यस्य पूर्वोक्तस्य विवाहादेश्च चातुर्मास्यव्रते कः प्रसङ्गः । प्रकरणनिवेशेपि वा प्रथमारम्भविषयं ज्ञेयम् । केचित्तु प्रतिवर्षं चातुर्मास्यव्रतप्रयोगाणां भिन्नत्वादाशौचादिपाते द्वितीयादिप्रयोगो न भवत्येवेत्याहुः । तन्न । 'प्रतिवर्षं च यः कुर्यादेवं वै संस्मरन्हरिम् । देहान्तेऽतिप्रदीप्तेन विमानेनार्कवर्चसा ॥ मोदते विष्णुलोकेऽसौ यावदाभूतसंप्लवम् ॥' इति हेमाद्रौ भविष्यवचनादित्यास्तां विस्तरः ।

इदं च शिवभक्तादिभिरपि कार्यम् । 'शिवे वा भक्तिसंयुक्तो भानौ वा गणनायके। कृत्वा व्रतस्य नियमं यथोक्तफलभाग्भवेत् ॥' इति ब्रह्मवैवर्तात् । व्रतग्रहणप्रकारस्तु हेमाद्रौ भविष्ये—'महापूजां ततः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कुर्याद्देवदेवस्य चक्रिणः । जातीकुसुममालाभिर्मन्त्रेणानेन पूजयेत् ॥ सुप्ते त्वयि जगन्नाथे जगत्सुप्तं भवेदिदम् । विबुद्धे च विबुध्येत प्रसन्नो मे भवाच्युत ॥ एवं तां प्रतिमां विष्णोः पूजयित्वा स्वयं नरः । प्रभाषेताग्रतो विष्णोः कृताञ्जलिपुटस्तथा ॥ चतुरो वार्षिकान्मासान्देवस्योत्थापनावधि । इमं करिष्ये नियमं निर्विघ्नं कुरु मेऽच्युत ॥ इदं व्रतं मया देव गृहीतं पुरतस्तव । निर्विघ्नं सिद्धिमायातु प्रसादात्तव केशव ॥ गृहीतेस्मिन्व्रते देव पञ्चत्वं यदि मे भवेत् । तदा भवतु संपूर्णं त्वत्प्रसादाज्जनार्दन ॥ गृहीतेस्मिन्व्रते देव यद्यपूर्णे मृतो ह्यहम् । तन्मे भवतु संपूर्णं त्वत्प्रसादाज्जनार्दन ॥' इति

चातुर्मास्ये नियमाः शाकव्रतादि च ।

तत्र भार्गवार्चनदीपिकायां नृसिंहपरिचर्यायां च भविष्ये— 'श्रावणे वर्जयेच्छाकं दधि भाद्रपदे तथा । दुग्धमाश्वयुजे मासि कार्तिके द्विदलं त्यजेत् ॥' इति । स्कान्देपि चातुर्मास्यकल्पे—'चत्वार्येतानि नित्यानि चतुराश्रमवर्णिनाम् । प्रथमे मासि कर्तव्यं नित्यं शाकव्रतं नरैः ॥ द्वितीये मासि कर्तव्यं दधिव्रतमनुत्तमम् । पयोव्रतं तृतीये तु चतुर्थेपि निशामय ॥ द्विदलं बहुबीजं च वृन्ताकं च विवर्जयेत् । नित्यान्येतानि विप्रेन्द्र व्रतान्याहुर्मनीषिणः॥ जम्बीरं राजमाषांश्च मूलकं रक्तमूलकम् । कूष्माण्डं चेक्षुदण्डं च चातुर्मास्ये त्यजेद्बुधः ॥ तथा— 'विशेषाद्बदरीं धात्रीं कूष्माण्डं तिन्तिणीं त्यजेत् । जीर्णधात्रीफलं ग्राह्यं कथंचित्कायशोधनम् ॥' इति । तीर्थसौख्ये स्कान्दे— 'वार्षिकांश्चतुरो मासान्प्रसुप्ते वै जनार्दने । मञ्चखट्वादिशयनं वर्जयेद्भक्तिमान्नरः ॥ अनृतौ वर्जयेद्भार्यां मांसं मधु परौदनम् । पटोलं मूलकं चैव वृन्ताकं च न भक्षयेत् ॥ अभक्ष्यं वर्जयेद्दूरान्मसूरं सितसर्षपम् । राजमाषान्कुलित्थांश्च आशुधान्यं च संत्यजेत् ॥ शाकं दधि पयो माषान् श्रावणादिषु संत्यजेत् ॥' अत्र त्यजेदिति वर्जनसंकल्परूपः पर्युदासो ज्ञेयः व्रतोपक्रमात् । अत्र केचित्—' शाकाख्यं पत्रपुष्पादि ' इत्यमरकोशस्य ' शक्यतेऽशितुमनेनेति शाका ' इति क्षीरस्वामिनो व्याख्यानात् व्यञ्जनमात्रस्य निषेधमाचक्षते । अन्ये तु शाकशब्दस्य पत्रादिदशविधशाके योगरूढत्वात् योगाच्च रूढेर्बली-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

यस्त्वात् सूपादीनामपि त्यागापत्तेश्च तत्प्रत्याचक्षते। तेन मूलपत्र-करीराग्रफलकाण्डाधिरूढकाः। त्वक् पुष्पं कवचं चेति शाकं दश-विधं स्मृतम् ॥' इति क्षीरस्वामिनोक्तस्य शाकस्य निषेध इति। अधिरूढकाः अङ्कुराः। वस्तुतस्तु—'तत्तत्कालोद्भवाः शाका वर्ज-नीयाः प्रयत्नतः। बहुबीजमबीजं च विकारि च विवर्जयेत् ॥' इति भविष्यवचनात्तत्तत्कालोत्पन्नानां दशविधशाकानां निषेधः। अत्र तत्कालोद्भवजातीयत्वं विवक्षितम्। तेनातपादिशोषितानां वर्षान्त-रोद्भवानामपि निषेधः। अत्र तत्कालोद्भवत्वमात्रं विवक्षितं, न तु तन्मात्रकालोद्भवत्वं, गौरवात्। तेनान्यकालोद्भवानां तत्कालोद्भवानां च बिम्बादीनां निषेधः। अत्र तत्तत्कालोद्भवा इति वीप्सावशात्स्व-स्वकालोद्भवानां सर्वेषां निषेध इति निष्कर्षः। बहुबीजमित्यनेकबीज-मिति केचित्। इतरावयवापेक्षया बीजावयवा यत्र बहवस्तदित्यन्ये। अबीजं कदल्यादि। वस्तुतस्तु इदं महानिबन्धेष्वभावान्निर्मूलमेव। आचारप्रदीपे—वृन्ताकं च कलिङ्गं च बिल्वौदुम्बरभिःसटाः। उदरे यस्य जीर्यन्ति तस्य दूरतरो हरिः ॥ तथापरार्के देवलः—ब्रह्मचर्यं तथा शौचं सत्यमामिषवर्जनम्। व्रतेष्वेतानि चत्वारि वरिष्ठानीति निश्चयः ॥'

आमिषपरिगणनम्।

आमिषाणि चोक्तानि रामार्चनचन्द्रिकायां पाद्मे—'प्राण्यङ्ग-चूर्णं चर्माम्बु जम्बीरं बीजपूरकम्। अयज्ञशिष्टमाषादि यद्विष्णोर-निवेदितम् ॥ दग्धामन्नं मसूरं च मांसं चेत्यष्टधामिषम्। रुच्यं तत्त-द्देशलभ्यं सुप्ते देवे विवर्जयेत् ॥' पाद्मे कार्तिकमहात्म्ये—'गोच्छा-गीमहिषीदुग्धादन्यद्दुग्धादि चामिषम्। धान्ये मसूरिका प्रोक्ता अन्नं पर्युषितं तथा ॥ द्विजक्रीता रसाः सर्वे लवणं भूमिजं तथा। ताम्र-पात्रस्थितं गव्यं जलं पल्वलसंस्थितम् ॥ आत्मार्थं पाचितं चान्नमा-मिषं तत् स्मृतं बुधैः ॥' तथा—निष्पावान् राजमाषांश्च मसूरं संधि-तानि च। वृन्ताकं च कलिङ्गं च सुप्ते देवे विवर्जयेत् ॥' संधितानि लवणशाकादीनि।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

हविष्यपरिगणनम् ।

तत्रैव विष्णुधर्मे—'चतुर्ष्वपीह मासेषु हविष्याशी न पापभाक् ।' हविष्याणि तु पृथ्वीचन्द्रोदये भविष्ये—'हैमन्तिकं सितास्विन्नं धान्यं मुद्गा यवास्तिलाः । कलायकङ्गुनीवारा वास्तुकं हिलमोचिका ॥ षष्टिका कालशाकं च मूलकं केमुकेतरत् । कन्दः सैन्धवसामुद्रे गव्ये च दधिसर्पिणी ॥ पयोनुद्धृसारं च पनसाम्रहरीतकी । पिप्पली जीरकं चैव नागरङ्गं च तिन्तिणी ॥ कदलीलवलीधात्रीफलान्यगुडमैक्षवम् । अतैलपक्वं मुनयो हविष्याणि प्रचक्षते ॥' इति सितास्विन्नं अनूष्मपक्वम् । धान्यं च तन्दुलाः केमुकं 'केमुता' इति प्राच्येषु प्रसिद्धः कन्दः । 'कलायस्तु सतीनकः' इत्यमरः । 'बट्टुरी' इति प्रसिद्धं धान्यम् । मदनरत्नेऽप्येवम् । अगस्तिसंहितायां हैमन्ताद्युक्त्वा—'नारिकेलफलं चैव कदली लवली तथा । आम्रमामलकं चैव पनसं च हरीतकी । व्रतान्तरप्रशस्तं च हविष्यं मन्यते बुधाः ॥'

व्रतभेदेन फलविशेषाः ।

अन्यान्यपि व्रतान्युक्तानि हेमाद्रौ भविष्ये—'स्त्री वा नरो वा मद्भक्तो धर्मार्थं सुदृढव्रतः ॥ गृह्णीयान्नियमानेतान्दतधावनपूर्वकान् । तेषां फलानि वक्ष्यामि तत्कर्तॄणां पृथक् पृथक् ॥ मधुरस्वरो भवेद्राजा पुरुषो गुडवर्जनात् । तैलस्यवर्जनाद्राजन् सुन्दराङ्गः प्रजायते ॥ कटुतैलपरित्यागाच्छत्रुनाशः प्रजायते । योगाभ्यासी भवेद्यस्तु स ब्रह्मपदमाप्नुयात् ताम्बूलवर्जनाद्भोगी रक्तकण्ठश्च जायते ॥ घृतत्यागाच्च लावण्यं सर्वस्निग्धतनुर्भवेत् । शाकपत्राशनाद्भोगी अपक्वादोऽमलो भवेत् ॥ भूमौ प्रस्तरशायी च विप्रो मुनिवरो भवेत् । एकान्तरोपवासेन ब्रह्मलोके महीयते ॥ धारणान्नखरोम्णां च गङ्गास्नानफलं लभेत् । मौनव्रती भवेद्यस्तु तस्याज्ञाऽस्खलिता भवेत् । भूमौ भुङ्क्ते सदा यस्तु स पृथिव्या पतिर्भवेत् । प्रदक्षिणाशतं यस्तु करोति स्तुतिपाठकः । हंसयुक्तविमानेन स च विष्णुपुरं व्रजेत् । अयाचितेन प्राप्नोति पुत्रान्धर्म्यान्विशेषतः । षष्ठान्नकालभोक्ता यः कल्पस्थायी भवेदिति । पर्णेषु यो नरो भुङ्क्ते कुरुक्षेत्रफलं लभेत् । गुडवर्जी नरो दद्यात्तद्भृतं ताम्रभाजनम् । सहिरण्यं नरश्रेष्ठ लवण-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्याप्ययं विधिः । सुप्ते देवे तु यो विष्णुः शिवस्याङ्गणमर्चयेत् । पञ्चवर्णैस्तु यो नित्यं स्वस्तिकैः पद्मकैस्तथा । स याति रुद्रलोकं हि गाणपत्यमवाप्नुयात् ॥'

व्रतविशेषेण दानानि ।

अथैषां समाप्तौ कार्तिक्यां दानानि । 'एकभुक्तव्रते दम्पती संपूज्य धेनुर्देया, नक्ते वस्त्रयुगं, एकान्तरोपवासे गौः, भूशयने शय्या, षष्ठाकालभोजने गौः, व्रीहिगोधूमादित्यागे हैमव्रीह्यादि, कृच्छ्रे गोयुग्मं, शाकाशने गौः पयोव्रते च, दधिमधुघृतव्रतेषु वासो गौश्च, ब्रह्मचर्ये स्वर्णमूर्तिः ताम्बूलव्रते वासोयुगं, मौने घृतकुम्भो वस्त्रयुगं घण्टा च, देवाग्रे रङ्गमालिकाकरणे धेनुर्हैमपद्मं च, दीपिकाव्रते दीपिका वासोयुगं च, भूमिभोजने पर्णभोजने च कांस्यपात्रं गौश्च, चतुष्पथदीपे गोग्रासे च गोवृषौ, प्रदक्षिणाशते वस्त्रम्, अनुक्तेषु स्वर्णं गौश्च' इत्यादि हेमाद्रौ ज्ञेयम् । तथाच भार्गवार्चनदीपिकायां पाद्मे–शयनबोधिनीमध्ये शमीदूर्वापमार्गकैः भृङ्गराजेन देवांस्तु नार्चयीत कदाचन॥ पाद्मे–' आषाढादिचतुर्मासानभ्यङ्गं वर्जयेन्नरः । समाप्तौ च पुनर्दद्यात्तिलतैलयुतं घटम् ॥ आषाढादिचतुर्मासं वर्जयेन्नखकृन्तनम् । वृन्ताकं गृञ्जनं चैव मधुसर्पिर्घटान्वितम् ॥ कार्तिक्यां तत्पुनर्हैमं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥' अन्यान्यपि केशकर्तनादिवर्जनसंकल्पानुरूपाणि पृथ्वीचन्द्रोदये ज्ञेयानि । टोडरानन्दे स्कान्दे–' एकान्तरं द्व्यन्तरं

---

१ चतुर्मास्य व्रतं कृत्वा "व्रतान्ते गोवृषप्रदः इति" वाक्यात् धेनु वा दद्यात् । व्यासः—योऽधीते भारतं पुण्यं ब्राह्मणो नियतव्रतः । चतुरो वार्षिकान् मासान् सर्वपापात्प्रमुच्यते ॥ तस्मान्नियमसंयुक्तैः श्रोतव्यं ब्राह्मणैरिदम् । कृष्णप्रोक्तामिमां पुण्यां भारतीमुत्तमां कथाम् ॥ श्रावयिष्यन्ति ये विप्रा ये च श्रोष्यन्ति मानवाः । सर्वथा वर्तमाना वै न ते शोच्याः कृताकृते । इति—

नियमा ब्रह्मचर्यहविष्याशनभूशय्याद्याः । एवं संकल्पपूर्वकं श्रुत्वा समाप्तौ सति सामर्थ्ये पर्वसमाप्तौ वाचकं पायसेन भोजयेत् तस्मै रत्नकाञ्चनगोभूगृहवस्त्रादि दद्यात् ततो द्विजान् भोजयित्वा तेभ्यो दक्षिणां दद्यादेवं सर्वं पुराणश्रवणविधिरिति ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वा कुर्यान्मासोपवासकम् । अनोदनं फलाहारं नक्तव्रतमथापि वा ॥'

तप्तमुद्राधारण विधिः ।

अत्रैव तप्तमुद्राधारणमुक्तं रामार्चनचन्द्रिकायां भविष्ये— 'शयन्यां चैव बोधिन्यां चक्रतीर्थे तथैव च । शङ्खचक्रविधानेन वह्निपूतो भवेन्नरः ॥' इति । 'अतप्ततनूर्न तदामो अश्नुते' इति ऋग्वेदात्, 'स होवाच याज्ञवल्क्यस्तस्मात्पुमानात्महिताय हरिं भजेत् । सुश्लोकमौलेर्वर्माण्यग्निना संदधते' इति शतपथश्रुतेः, 'प्रतद्विष्णो अब्जचक्रे सुतप्ते जन्माम्भोधीतर्तवे चर्षणीन्द्राः । मूले बाह्वोर्दधन्ये पुराणातु लिङ्गान्यङ्के तप्तायुधान्यर्पयन्त' इति सामवेदात् 'अग्निहोत्रं यथा नित्यं वेदस्याध्ययनं यथा । ब्राह्मणस्य तथैवेदं तप्तमुद्रादिधारणम् ॥' इति पद्मपुराणाच्चेति । 'ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो वा यदि वेतरः । शङ्खमुद्राङ्किततनुस्तुलसीमञ्जरीधरः ॥ गोपीचन्दनलिप्ताङ्गो दृष्टश्चेत्तदघं कुतः ॥' इति काशीखण्डात् । तत्प्रकारस्तु रामार्चनचन्द्रिकातो ज्ञेयः ।

पृथ्वीचन्द्रोदयादयस्तु—'यस्तु संतप्तशङ्खादिलिङ्गचिह्नतनुर्नरः । स सर्वयातनाभोगी चण्डालो जन्मकोटिषु ॥ द्विजं तु तप्तशङ्खादिलिङ्गाङ्किततनुं नरः । संभाष्य रौरवं याति यावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥' इति बृहन्नारदीयोक्तेः । 'शङ्खचक्राद्यङ्कनं च गीतनृत्यादिकं तथा । एकजातेरयं धर्मो न जातु स्याद्द्विजन्मनः ॥ शङ्खचक्रे मृदा यस्तु कुर्यात्तप्तायसेन वा । स शूद्रवद्बहिः कार्यः सर्वस्माद्द्विजकर्मणः ॥ यथा श्मशानजं काष्ठमनर्हं सर्वकर्मसु । तथा चक्राङ्कितो विप्रः सर्वकर्मसु गर्हितः ॥' तथा—'शिवकेशयोरङ्कांश्शूलचक्रादिकान्द्विजः । न धारयेत मतिमान्वैदिके वर्त्मनि स्थितः ॥' इति विष्णवाश्वलायनादिवचनात् ऋग्वेदादिश्रुतीनामन्यार्थत्वादन्यश्रुतीनां चासत्त्वाच्चक्रादिधारणं शूद्रविषयमित्यूचुः । 'नृत्यं चोदरार्थं निषिद्धम्' इति श्रीधरस्वामी । यद्यपि निषेधस्य प्राप्तिसापेक्षत्वाद्विधिं विना च तदयोगादुपजीव्यविरोधेन 'न तौ पशौ करोति' इतिव-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

द्विकल्पो युक्तस्तथापि 'एकजातेरयं धर्मः' इत्यनेन विधिवाक्याना-मुपसंहाराद्द्विजातिनिषेधो नित्यानुवाद इति तदाशयः । अत्र शिष्टाचार एव संकटपाशनिःसरणसृणिरिति संक्षेपः ।

कोकिलाव्रतनिर्णयः ।

आषाढपौर्णमास्यां कोकिलाव्रतमुक्तं हेमाद्रौ भविष्ये—'आषाढपौर्णमास्यां तु संध्याकाले ह्युपस्थिते । संकल्पयेन्मासमेकं श्रावणे प्रत्यहं ह्यहम् ॥ स्नानं करिष्ये नियता ब्रह्मचर्ये स्थिता सती । भोक्ष्यामि नक्तं भूशय्यां करिष्ये प्राणिनां दयाम् ॥' इति । अस्य नक्तव्रतत्वात्सायाह्नव्यापिनी ग्राह्या ।

शिवशयनोत्सवः ।

अत्रैव शिवशयनोत्सव उक्तो हेमाद्रौ वामनपुराणे—'पौर्णमास्यामुमानाथः स्वपते चर्मसंस्तरे । वैयाघ्रे च जटाभारं समुद्ग्रथ्याहिवर्ष्मणा ॥' मदनरत्नेऽप्येवम् । इयं च प्रदोषव्यापिनी ।

अत्रैव व्यासपूजोक्ता ।

तत्र त्रिमुहूर्ता चेत् परैवेति संन्यासपद्धतौ[२] । 'त्रिमुहूर्ताधिकं ग्राह्यं पर्व क्षौरप्रणामयोः ।' इति वचनात् ॥ इति श्रीरामकृष्णभट्टात्मजदिनकरभट्टानुजकमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ आषाढः समाप्त ॥

१—आषाढेऽधिमासे सति तस्मिन्वर्षे एव शुद्धाषाढे कोकिलाव्रतकरणसंप्रदायस्तु निर्मूलः । तथाच व्रतराजे वाराहे-'आषाढौ द्वौ यदा स्यातां कोकिलायास्तदार्चनम् । तथा या कुरुते नारी न सा वैधव्यमाप्नुयात् ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि मन्त्रैः पौराणिकैर्युतम् । मलमासे त्वतिक्रान्ते शुद्धाषाढे समागते ॥' इत्युक्तिस्तु मलमासे प्राप्ते सति शुद्धमास एव व्रतनिर्णयपरा । इति **धर्मसिन्धुसाराशयः** । २—संन्यासिनां चातुर्मास्यावाससंकल्पाङ्गत्वेन क्षौरव्यासपूजादिकं विहितम् । तत्रादौ क्षौरं विधाय द्वादशमृत्तिकास्नानानि प्राणायामादिविधिं च कृत्वा व्यासपूजां कुर्यात् । पूजान्ते 'असति प्रतिबन्धे चतुरो वार्षिकान्मासानिह वसामि' इति मनसा **संकल्प्य**—'अहं तावन्निवत्स्यामि सर्वभूतहिताय वै । प्रायेण प्रावृषि प्राणिसंकुलं वर्त्म दृश्यते ॥ अतस्तेषामहिंसार्थं पक्षान्वै श्रुतिसंश्रयान् । स्थास्यामश्चतुरो मासानत्रैवासति बाधके ॥' इति वाचिकसंकल्पं कुर्यात् । ततो गृहस्थाः **प्रतिब्रूयुः**-'निवसन्तु सुखेनात्र गमिष्यामः कृतार्थताम् । यथाशक्ति च शुश्रूषां करिष्यामो वयं मुदा ॥' इति विशेषो **धर्मसिन्धावुक्तः** ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ श्रावणे कर्कसंक्रान्तिः ।

कर्कसंक्रान्तौ पूर्वं त्रिंशद्दण्डाः पुण्यकालः । सूर्योदयोत्तरं संक्रमे तु परत एव पुण्यम् । रात्रौ तु निशीथात्प्राक् परतश्च संक्रमेऽपरार्कहेमाद्यनन्तभट्टादिमते पूर्वोत्तरदिनयोः पञ्च नाड्यः पुण्यकालः 'धनुर्मीनावतिक्रम्य कन्यां च मिथुनं तथा । पूर्वापरविभागेन रात्रौ संक्रमते रविः ॥ दिनान्ते पञ्चनाड्यस्तु तदा पुण्यतमाः स्मृताः । उदयेपि तथा पञ्च दैवे पित्र्ये च कर्मणि ॥' इति स्कान्दोक्तेः । 'पूर्वापरविभागेनेति मकरकर्कभिन्नसंक्रान्तिपरम् । वक्ष्यमाणवचोविरोधात्' इत्युक्तं मदनरत्ने । तेनायमर्थः—रात्रौ पूर्वभागे मकरे उदये पञ्चनाड्यः पुण्यकालः । रात्रावपरभागे कर्कटे दिनान्ते पञ्च नाड्यः पुण्यकालः । विषुवतोस्तु पूर्वदिने पञ्चापरदिने च पञ्चेति वाक्यान्तरानुरोधात् । तेन हेमाद्रिमाधवयोः सर्ववचनानां चाविरोधः । माधवमते—'अर्धरात्रे तदूर्ध्वं वा संक्रान्तौ दक्षिणायने । पूर्वमेव दिनं ग्राह्यं यावन्नोदयते रविः ॥' इति वृद्धगार्ग्योक्तेः । 'मिथुनात्कर्कसंक्रान्तिर्यदि स्यादंशुमालिनः । प्रभाते वा निशीथे वा तदा पुण्यं तु पूर्वतः ॥' इति भविष्योक्तेश्च पूर्वदिन एव पुण्यम् । दाक्षिणात्यास्त्वेतदेवाद्रियन्ते । अत्र रात्रावपि स्नानादि भवतीत्युक्तं प्राक् । अत्र दानोपवासादि पूर्वमुक्तम् । तथा कर्के केशादिकर्तनं निषिद्धम् । 'कुम्भे कर्कटके वापि कन्यायां कार्मुके रवौ । रोमखण्डं गृहस्थस्य पितॄन्प्राशयते यमः ॥' इति सुमन्तुवचनादित्युक्तं जीवत्पितृकनिर्णये गुरुभिः ॥

अथ नदीनां रजोदोषः ।

हेमाद्रावत्रिः—'सिंहकर्कटयोर्मध्ये सर्वा नद्यो रजस्वलाः । न स्नानादीनि कर्माणि तासु कुर्वीत मानवः ॥' इदं च क्षुद्रनदीषु । 'सिंहकर्कटयोर्मध्ये सर्वा नद्यो रजस्वलाः । तासु स्नानं न कुर्वीत वर्जयित्वा समुद्रगाः ॥' इति व्याघ्रोक्तेः । मात्स्ये त्वगस्त्योदयावधित्वमुक्तम् । 'यावन्नोदेति भगवान्दक्षिणाशाविभूषणः । तावद्रजो

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

महानद्यः करतोयाः प्रकीर्तिताः ॥' करतोया अल्पतोयाः । तथा कात्यायनः—'याः शोषमुपगच्छन्ति ग्रीष्मे कुसरितो भुवि । तासु प्रावृषि न स्नायादपूर्णे दशवासरे ॥' इदं चापदि । स्मृतिसंग्रहे—'धनुःसहस्राण्यष्टौ तु गतिर्यासां न विद्यते । न ता नदीशब्दवहा गर्तास्ताः परिकीर्तिताः ॥' महानदीषु तु भविष्ये उक्तम्—'आदौ तु कर्कटे देवि महानद्यो रजस्वलाः । त्रिदिनं च चतुर्थेऽह्नि शुद्धाः स्युर्जाह्नवी यथा ॥'

महानद्यः ।

महानद्यश्च ब्राह्मे—'गोदावरी भीमरथी तुङ्गभद्रा च वेणिका । तापी पयोष्णी विन्ध्यस्य दक्षिणे तु प्रकीर्तिताः ॥ भागीरथी नर्मदा च यमुना च सरस्वती । विशोका च विहस्ता च विन्ध्यस्योत्तरसंस्थिताः ॥ द्वादशैता महानद्यो देवर्षिक्षेत्रसंभवाः ॥' मदनरत्ने पुराणान्तरे—'महानद्यो देविका च कावेरी वंजरा तथा । रजसा तु प्रदुष्टाः स्युः कर्कटादौ त्र्यहं नृप ॥' कात्यायनः—'कर्कटादौ रजोदुष्टा गोमती वासरत्रयम् । चन्द्रभागा सती सिन्धुः सरयूर्नर्मदा तथा ॥' इदं गङ्गाद्यतिरिक्तविषयम् ।

सप्तनदाः ।

'गङ्गा च यमुना चैव प्लक्षजाता सरस्वती । रजसा नाभिभूयन्ते ये चान्ये नदसंज्ञिताः ॥ शोणसिन्धुहिरण्याख्याः कोकलोहितघर्घराः शतद्रूश्च नदाः सप्त पावनाः परिकीर्तिताः ॥' इति देवलोक्ते ॥

यत्तु—'प्रथमं कर्कटे देवि त्र्यहं गङ्गा रजस्वला ।' इत्यादि वचनं तज्जाह्नवीभिन्नगोदावर्यादिगङ्गान्तरपरमिति मदनरत्ने । अन्ये त्वन्तर्गतोरजो विषयम् ॥ 'गंगाधर्मद्रवः पुण्या यमुना च सरस्वती । अन्तर्गतरजोदोषाः सर्वावस्थासु चामला ॥' इति निगमोक्तेः । तीरवासिनां तु रजोदोषो नास्ति । 'न तु तत्तीरवासिनाम्' इति निगमोक्तेः । रजोदुष्टमपि जलं गङ्गाजलयोगे पावनम् । 'गङ्गाम्भसा समायोगाद्दुष्टमप्यम्बु पावनम् ।' इति मात्स्योक्तेः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नूतनकूपादौ तु योगियाज्ञवल्क्यः—'अजा गावो महिष्यश्च ब्राह्मणी च प्रसूतिका। भूमेर्नवोदकं चैव दशरात्रेण शुध्यति॥' इति क्वचित्त्वदोषमाह व्याघ्रपादः—'अभावे कूपवापीनामनपायिपयोभृताम्। रजोदुष्टेपि पयसि ग्रामभोगो न दुष्यति॥' गौडास्तु—'अन्येनापि समुद्धृते' इति द्वितीयपादे पाठः। तेनोद्धृते न दोषः। तथा च 'तासु स्नानं नेति प्रागुक्तम्' इत्याहुः। वसिष्ठोपि—'उपाकर्मणि चोत्सर्गे प्रेतस्नाने तथैव च। चन्द्रसूर्यग्रहे चैव रजोदोषो न विद्यते॥' इत्यलं विस्तरेण॥

श्रावण शुक्ल तृतीया चतुर्थी च निर्णयः।

श्रावणशुक्लतृतीया मधुस्रवाख्या गुर्जरेषु प्रसिद्धा। सा परयुता ग्राह्येति दिवोदासः। श्रावणशुक्लचतुर्थी पूर्वयुता। 'मातृविद्धो गणेश्वर' इत्यादिवचनात्॥

नागपञ्चमी।

श्रावणशुक्लपञ्चमी नागपूजादौ परैवेति सामान्यनिर्णये उक्तम्। चमत्कारचिन्तामणौ—'पञ्चमी नागपूजायां कार्या षष्ठीसमन्विता। तस्यां तु तुषिता नागा इतरा सचतुर्थिका॥' इति। 'श्रावणे पञ्चमी शुक्ला संप्रोक्ता नागपञ्चमी। तां परित्यज्य पञ्चम्यश्चतुर्थीसहिता हिताः॥' इति मदनरत्नेऽभिधानाच्च। तेन परैवेति।

अत्र विशेषो हेमाद्रौ।

भविष्ये—'श्रावणे मासि पञ्चम्यां शुक्लपक्षे नराधिप। द्वारस्योभयतो लेख्या गोमयेन विषोल्बणाः॥ पूजयेद्विधिवद्वीर दधिदूर्वाङ्कुरैः कुशैः। गन्धपुष्पोपहारैश्च ब्राह्मणानां च तर्पणैः॥ ये तस्यां पूजयन्तीह नागान् भक्तिपुरःसराः। न तेषां सर्पतो वीर भयं भवति कुत्रचित्॥' इति।

शुक्लद्वादश्यां दधिव्रत पवित्रारोपणादि विधिः।

श्रावणशुक्लद्वादश्यां दधिव्रतं[1] प्रागुक्तम्। तक्रादीनां त्वनिषेधः।

१—चातुर्मास्ये भक्ष्याभक्ष्यविचारे 'द्वितीये मासि कर्तव्यं दधिव्रतम्—' इत्यादिनेत्यर्थः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तत्र दधिव्यवहाराभाववदिति वक्ष्यते ।

अत्रैव विष्णोः पवित्रारोपणमुक्तं हेमाद्रौ विष्णुरहस्ये—'श्रावणस्य सिते पक्षे कर्कटस्थे दिवाकरे । द्वादश्यां वासुदेवाय पवित्रारोपणं स्मृतम् ॥ द्वादश्यां श्रवणे वापि पञ्चम्यामथवा द्विज । आनुकूल्येषु कर्तव्यं पञ्चदश्यामथापि वा ॥' इति । शिवे तु तत्रैव कालोत्तरे—'आषाढान्ते चतुर्दश्यां नभस्यनभसोस्तथा । अष्टम्यां च चतुर्दश्यां पक्षयोरुभयोः समम् ॥' इति । अन्यदेवतानां तु वक्ष्यते । अधिवासनं तु दीपिकायाम्—'गोदोहान्तरिते काले पूर्वेद्युर्वाधिवासनम् ।' इति । गौणकालो रामार्चनचन्द्रिकायाम्—पवित्रारोपणं विघ्नाच्छ्रावणे न भवेद्यदि । कार्तिक्यवधि शुक्रास्ते कर्तव्यमिति नारदः ॥ हेमरौप्यताम्रक्षौमैः सूत्रैः कौशेयपद्मजैः । कुशैः काशैश्च कार्पासैर्ब्राह्मण्या कर्तितैः शुभैः ॥ कृत्वा त्रिगुणितं सूत्रं त्रिगुणीकृत्य शोधयेत् । तत्रोत्तमं पवित्रं तु षष्ट्या सह शतैस्त्रिभिः ॥ सप्तत्या सहितं द्वाभ्यां शताभ्यां मध्यमं स्मृतम् । साशीतिना शतेनैव कनिष्ठं तत्समाचरेत् ॥ साधारणपवित्राणि त्रिभिः सूत्रैः समाचरेत् । उत्तमं तु शतग्रन्थि पञ्चाशद्ग्रन्थि मध्यमम् ॥ कनिष्ठं तु पवित्रं स्यात्षट्त्रिंशद्ग्रन्थि शोभनम् । षट्त्रिंशच्च चतुर्विंशद्द्वादशेति च केचन ॥ चतुर्विंशद्द्वादशाष्टावित्येके मुनयो विदुः ॥' हेमाद्रौ विष्णुरहस्ये त्वन्यथोक्तम्—'अष्टोत्तरशतं कुर्याच्चतुःपञ्चाशदेव वा । सप्तविंशतिरेवाथ ज्येष्ठमध्यकनीयसम् ॥ अधमं नाभिमात्रं स्यादूरुमात्रं द्वितीयकम् । प्रलम्बतो जानुमात्रं प्रतिमायां निगद्यते ॥' शिवपवित्रं तु तत्रैव शैवागमे—'एकाशीत्यथवा सूत्रैस्त्रिशता वाष्टयुक्तया । पञ्चाशता वा कर्तव्यं तुल्यग्रन्थ्यन्तरालकम् ॥ द्वादशाङ्गुलमानानि व्यासादष्टाङ्गुलानि वा । लिङ्गविस्तारमानानि चतुरङ्गुलकानि च ॥' इति ।

अस्यामेव द्वादश्यां मासं कृतस्य शाकवर्जनव्रतस्य साङ्गतार्थं 'ब्राह्मणाय शाकदानं करिष्ये' इति संकल्प्य ब्राह्मणं संपूज्य—' उपायनमिदं देव व्रतसंपूर्तिहेतवे । शाकं तु द्विजवर्याय सहिरण्यं ददाम्यहम् ॥' इत्यादिमन्त्रेण पक्वमामं च शाकं दद्यात् । ततो—'दधि भाद्रपदे मासि वर्जयिष्ये सदा हरे । इत्येतच्च संकल्पयेत् । इति **धर्मसिन्धुः** ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अधिकारिणोपि तत्रैव विष्णुरहस्ये—'ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यस्तथा स्त्री शूद्र एव च । स्वधर्मावस्थिताः सर्वे भक्त्या कुर्युः पवित्रकम् ॥' तथा—'अतोदेवेति मन्त्रेण द्विजो विष्णौ निवेदयेत् । शूद्रस्य मूलमन्त्रो वा येन वा पूजयेद्धरिम् ॥ एतच्च नित्यम् । 'न करोति विधानेन पवित्रारोपणं तु यः । तस्य सांवत्सरी पूजा निष्फला मुनिसत्तम ॥ तस्माद्भक्तिसमायुक्तैर्नरैर्विष्णुपरायणैः । वर्षे वर्षे प्रकर्तव्यं पवित्रारोपणं हरेः ॥ इति तत्रैवोक्तेः । देवताविशेषे तिथयोपि तत्रैव—धनदश्च रमा गौरी गणेशः सोमराड् गुहः । भास्करश्चण्डिकाम्बा च वासुकिश्च तथर्षयः ॥ चक्रपाणिर्ह्यनङ्गश्च शिवो ब्रह्मा तथैव च । प्रतिपत्प्रभृतिष्वेताः पूज्यास्तिथिषु देवताः ॥ यथोक्ताः शुक्लपक्षे तु तिथयः श्रावणस्य च ॥' इति । तथा हेमाद्रौ कालोत्तरे—'चतुर्दश्यामथाष्टम्यां सर्वसाधारणं तु तत्' । इति ।

पवित्रविधिः ।

तत्प्रकारस्तु रामार्चनचन्द्रिकायां यथा—'ततस्तानि पवित्राणि वैणवे पटले शुभे । संस्थाप्य शुचिवस्त्रेण पिधाय पुरतो न्यसेत् । अरत्निसंमितां वेणीं कुर्यात्षट्त्रिंशता कुशैः ॥ क्रियालोपविघातार्थं यत्त्वया विहितं प्रभो ॥ मयैतत्क्रियते देव तव तुष्ट्यै पवित्रकम् ॥ न मे विघ्नो भवेद्देव कुरु नाथ दयां मयि । सर्वथा सर्वदा विष्णो मम त्वं परमा गतिः । उपवासेन देव त्वां तोषयामि जगत्पते । कामक्रोधादयोप्येते न मे स्युर्व्रतघातकाः । अद्यप्रभृति देवेश यावद्वैशेषिकं दिनम् । तावद्रक्षा त्वया कार्या सर्वस्यास्य नमोस्तु ते ॥' इति देवं संप्रार्थ्य कुम्भं संस्थाप्य तत्र वंशपात्रे—ॐ सांवत्सरस्य यागस्य पवित्रीकरणाय भो । विष्णुलोकात्पवित्राद्य आगच्छेह नमोस्तु ते ॥' अनेन मूलेन चावाह्योत्तममध्यमकनिष्ठेषु विष्णुब्रह्मरुद्रान्, सत्त्वरजस्तमांसि, वेदत्रयं, वनमालायां प्रकृतिं चावाह्य त्रिसूत्र्यां

१—वनवनमालालक्षणम् आरभ्यमुकुटं यावत्सूत्रैर्विरचिता शुभा । आपादलम्बिनी माला वनमाला प्रकीर्तितः ॥ इति वनमालालक्षणम् ।

अन्यच्च—

तुलसी कुन्द मन्दार परिजाताम्बुजैस्तु या ।
पञ्चभिर्ग्रथिता माला वनमाला प्रकीर्तिता ॥ इति ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ब्रह्मविष्णु रुद्रान् ग्रन्थिषु क्रिया, पौरुषी, वीरा, विजया, ईशा, अपराजिता, मनोन्मनी, जया, भद्रा, मुक्तिश्चेत्यावाह्य संपूज्य 'ॐ संवत्सरकृतार्चायाः संपूर्णफलदोपि यत् । पवित्रारोपणायै-तत्कुरु कंधर ते नमः ॥ विष्णुतेजोद्भवं रम्यं सर्वपातकनाश-नम् । सर्वकामप्रदं देव तवाङ्गे धारयाम्यहम् ॥' इति देवकरे मङ्गलसूत्रं बध्वा देवं संपूज्य निमन्त्रयेत्—'आमन्त्रितोसि देवेश पुराणपुरुषोत्तम । प्रातस्त्वां पूजयिष्यामि सान्निध्यं कुरु केशव ॥ क्षीरोदधिमहानागशय्यावस्थितविग्रह । प्रातस्त्वां पूजयि-ष्यामि सन्निधौ भव ते नमः ॥ निवेदयाम्यहं तुभ्यं प्रातरेतत्पवित्र-कम् । सर्वथा सर्वदा विष्णो नमस्तेस्तु प्रसीद मे ॥' तत पुष्पाञ्जलि दत्वा रात्रौ जागरणं कुर्यादिति अधिवासनम् । प्रातर्नित्यपूजां कृत्वा गन्धदूर्वाक्षतयुतं पवित्रमादाय—'ॐदेवदेव नमस्तुभ्यं गृहाणेदं पवित्रकम् । पवित्रीकरणार्थाय वर्षपूजाफलप्रदम् ॥ पवित्रकं कुरुष्वाद्य यन्मया दुष्कृत कृतम् । शुद्धो भवाम्यहं देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥ मूलसंपुटितेनानेन दत्वाङ्गदेवताभ्यो नाम्ना समर्प्य महानैवेद्यं दत्वा नीराज्य–'मणिविद्रुम मालाभि' इत्यादिभिर्दमनारोपणोक्तमन्त्रैः प्रार्थयित्वा गुरवे ब्राह्मणेभ्यश्च दत्वा स्वयं धारयेत् । तथा—'मासं पक्षमहोरात्रं त्रिरात्रं धारयेत्तथा । देवे तं सूत्रसंदर्भं देश-कालविवक्षया ॥' अकरणे तु तत्रैव—'पवित्रारोपणं काले न करोति कथंचन । तदायुतं जपेन्मन्त्रं स्तोत्रं वापि समाहितः ॥' इत्युक्तम् ॥ इति पवित्रारोपः ॥

श्रावणशुक्लचतुर्दशी पूर्वयुता ग्राह्या । अत्र वक्तव्यो विशेषश्चैत्र-चतुर्दश्यामुक्तः ।

अथोपाकर्म निर्णयः ।

तत्र बह्वृचानां प्रयोगपारिजाते शौनकः–'अथातः श्रावणे मासे श्रवणर्क्षयुते दिने । श्रावण्यां श्रावणे मासि पञ्चम्यां हस्तसंयुते ॥ दिवसे विद्धीतैतदुपाकर्म यथोदितम् । अध्यायोपाकृतिं कुर्यात्तत्रो-पासनवह्निना ॥' इति । अत्र पौर्णमास्युपसंहारन्यायेन यजुर्वेदिपरेति हेमाद्रिः । अत्र हस्तयुक्ता पञ्चम्युक्ता । कारिकापि—तन्मासे हस्त-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

युक्तायां पञ्चम्यां वा तदिष्यते ।' इति । केवलपञ्चम्यां हस्तयुतेन्यस्मिन् दिने इति तु हेमाद्रिः । उपासनवह्निनेति तु कर्मद्वयमिदं केचिल्लौकिकाग्नौ प्रकुर्वते ।' इति कारिकोक्तलौकिकाग्निना विकल्पते । तत्र 'अप्यध्याप्यैरन्वारब्धः' इति सूत्रात् सशिष्यत्वे तदधिकारिकस्याचार्याग्नौ नान्यस्याग्नावन्यो जुहुयादिति निषेधाल्लौकिक एव । तदभावे तु स्मार्त इति निगर्वः । यद्यपि दीपिकायां –वेदोपाकृतिरोषधिप्रजनने पक्षे सिते श्रावणे । इति शुक्लपक्षोपि सर्वेषां मुख्यकालत्वेनोक्तः वक्ष्यमाणगार्ग्यवचनेन छान्दोगान्प्रति विहितस्य तस्याविरोधिनः सर्वान्प्रति प्रवृत्तिश्च । तथापि श्रावणमाससंबन्धस्य सूत्रोक्तत्वात्कृष्णपक्षेपि कार्यमिति वृद्धाः । तथाच सूत्रम्–अथातोध्यायोपाकरणमोषधीनां प्रादुर्भावे श्रवणेन श्रावणस्य पञ्चम्यां हस्तेव वा ।' अत्र श्रावणो मुख्येऽन्ये गौणाः तत्प्राथम्यात् । तस्याहर्द्वययोगे हेमाद्रौ व्यासः–'धनिष्ठासंयुतं कुर्याच्छ्रावणं कर्म यद्भवेत् । तत्कर्म सकलं ज्ञेयमुपाकरणसंज्ञितम् । श्रवणेन तु यत्कर्म ह्युत्तराषाढसंयुतम् । संवत्सरकृतोध्यायस्तत्क्षणादेव नश्यति ॥' इति । गार्ग्योपि–'उदयव्यापिनी त्वेव विष्णवर्क्षे घटिकाद्वयम् । तत्कर्म सफलं ज्ञेयं तस्य पुण्यं त्वनन्तकम् ॥' इति । पूर्वेद्युरुत्तराषाढायोगे परेद्युः श्रवणाभावे घटिकाद्वयन्यूने वा पञ्चम्यादौ कार्यम्, न तु पूर्वविद्धायां संगवमात्रे । अपवादाभावात् । किंच परेद्युः संगवास्पर्शे निषिद्धपूर्वाग्रहणे किं मानम् । संगववाक्यं श्रवणवाक्यं चेति चेत् तर्हि व्रीहिवाक्यादश्वशफवाक्याच्च माषमिश्राणामप्युपादानं स्यादिति महत्पाण्डित्यम् । निषेधानुप्रवेशान्नैपेक्ष्यबाधा नेति चेदिहापि तुल्यम् । एतेन पर्वाण्यौदयिकं व्याख्यातम् । निषेधानुप्रवेशस्योभयत्र तुल्यत्वात् ॥

श्रवणयुतदिने संक्रान्त्यादौ ।

श्रवणयुतदिने संक्रान्त्यादौ तु 'उपाकर्म न कुर्वन्ति क्रमात्सामर्ग्यजुर्विदः । ग्रहसंक्रान्तियुक्तेषु हस्तश्रवणपर्वसु ॥' इति हेमाद्रौ निषेधात्पञ्चम्यादयो ग्राह्याः । मदनरत्नेपि–"यदि स्याच्छ्रावणं पर्व ग्रहसंक्रान्तिदूषितम् । स्यादुपाकरणं शुक्लपञ्चम्यां

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

श्रावणस्य तु ॥ स्मृतिमहार्णवे – संक्रान्तिर्ग्रहणं वापि यदि पर्वणि जायते । तन्मासे हस्तयुक्तायां पञ्चम्यां वा तदिष्यते ॥' तत्रापि प्रयोगपारिजाते वृद्धमनुकात्यायनौ – 'अर्धरात्रादधस्ताच्चेत्संक्रान्तिग्रहणं तदा । उपाकर्म न कुर्वीत परतश्चेन्न दोषकृत् ॥' इति । मदनरत्ने गार्ग्योऽपि – 'यद्यर्धरात्रादर्वाक्तु ग्रहः संक्रम एव च । नोपाकर्म तदा कुर्याच्छ्रावण्यां श्रवणेऽपि वा ॥' एतेन ग्रहणसंक्रान्तिकाले श्रवणसत्त्वे एव निषेधो नार्वागिति मूर्खशङ्का परास्ता । ग्रहविशिष्टानां हस्तश्रवणपर्वणां प्रत्येकं निषेधे तद्युतोपाकर्मनिषेधे च विशिष्टोद्देशे वाक्यभेदात् पञ्चम्यां संक्रान्तौ निषेधाभावापत्तेश्च । तेनार्धरात्रात्पूर्वं ग्रहसंक्रमसत्त्वे एवोपाकर्मनिषेधो न तद्योगे एव । यत्तु 'प्रतिपन्मिश्रिते नैव नोत्तराषाढसंयुते । श्रवणे श्रावणं कुर्युर्ग्रहसंक्रान्तिवर्जिते ॥' इति प्रतिपन्मिश्रनिषेधकं वचनं तन्निर्मूलम् ।

अत्र च – 'वेदोपाकरणे प्राप्ते कुलीरे संस्थिते रवौ । उपाकर्म न कर्तव्यं कर्तव्यं सिंहयुक्तके ॥' इति वचनं देशान्तरविषयम् । 'नर्मदोत्तरभागे तु कर्तव्यं सिंहयुक्तके । कर्कटे संस्थिते भानावुपाकुर्यात्तु दक्षिणे ।' इति बृहस्पतिवचनादिति प्रयोगपारिजातेनोक्तम् । पराशरमाधवीयेऽप्येवम् । सामगानां सिंहस्थरवावुक्तेस्तद्विषय इदं पुरोडाशचतुर्धाकरणवदुपसंह्रियते । तेषामेव देशव्यवस्था न तु बह्वृचादिपरम् । तेषां सूत्रे चान्द्रश्रावणोक्तेः । सौरे पञ्चम्ययोगात् इति तु वयं पश्यामः । यत्तु कालादर्शे–'अध्यायानामुपाकर्म श्रावण्यां तैत्तिरीयकाः । बह्वृचाः श्रवणे कुर्युः सिंहस्थोऽर्को भवेद्यपि । सहस्तशुक्लपञ्चम्यां वा तद्ग्रहणसंक्रमे । असिंहार्के प्रौष्ठपद्यां श्रावणेन व्यवस्थया ।' इति । तन्मूलालेखनाच्चिन्त्यम् ।

सस्यानुद्गमे तु ।

श्रावणे सस्यानुद्गमादौ तु बह्वृचपरिशिष्टे–'अवृष्ट्यौषधयस्तस्मिन्मासे तु न भवन्ति चेत् । तदा भाद्रपदे मासि श्रवणेन तदिष्यते ।' इति । तत्राप्यनुद्गमे तु–'कुर्यादेव तद्वार्षिकमिताचक्षते' इति सूत्रात् । वर्षर्तौ भवं वार्षिकम् । एतच्च शुक्रास्तादावपि कार्यम् ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'उपाकर्मोत्सर्जनं च पवित्रदमनार्पणम् ।' इति दमनारोपे लिखितवचनात् । 'नित्ये नैमित्तिके जप्ये होमे यज्ञक्रियासु च । उपाकर्मणि चोत्सर्गे ग्रहवेधो न विद्यते ॥' इति प्रयोगपारिजाते संग्रहोक्तेः ॥ पर्वणि ग्रहणे सति पूर्वं त्रिरात्रादिवेधाभावं वक्तुमिदम् ।

प्रथमश्रावणी ।

तेन पर्वणि ग्रहणेपि चतुर्दश्यां श्रवणे कार्यमिति हेमाद्रिः । अस्ते प्रथमारम्भस्तु न भवति । 'गुरुभार्गवयोर्मौढ्ये बाल्ये वा वार्धकेपि वा । तथाधिमाससंसर्पमलमासादिषु द्विजे ॥ प्रथमोपाकृतिर्न स्यात्कृतं कर्म विनाशकृत् ॥' इति तत्रैव कश्यपोक्तेः । अत्र प्रथमारम्भे वृद्धिश्राद्धं कुर्यादिति नारायणवृत्तौ । एतच्चाधिमासे न कार्यम् । 'उपाकर्म तथोत्सर्गः प्रसवाहोत्सवाष्टकाः । मासवृद्धौ परे कार्या वर्जयित्वा तु पैतृकम् ॥' इति ज्योतिः पराशरोक्तेः । 'उत्कर्षः कालवृद्धौ स्यादुपाकर्मादिकर्मणि । अभिषेकादिवृद्धीनां न तूत्कर्षो युगादिषु ॥' इति कात्यायनोक्तेश्च । यत्तु—'उपाकर्मणि चोत्सर्गे ह्येतदिष्टं वृषादितः ।' ऋष्यशृङ्गवचनं तत्सामगविषयम् । तेषां सिंहार्के एवोक्तेः ॥

एतच्चापराह्णे कार्यम् । 'उपाकर्मापराह्णे स्यादुत्सर्गः प्रातरेव तु ।' इति । 'अध्यायानामुपाकर्म कुर्यात्कालेऽपराह्णिके । पूर्वाह्णे तु विसर्गः स्यादिति वेदविदो विदुः ॥' इति च हेमाद्रौ गोभिलोक्तेः । वस्तुतस्तु 'भवेदुपाकृतिः पौर्णमास्यां पूर्वाह्ण एव तु ।' इति प्रचेतसो वचनात् पूर्ववाक्यं सामगविषयम् । तेषामपराह्ण एवोक्तेरित्यनुपदं वक्ष्यते । दीपिकापि—'अस्य तु विधेः पूर्वाह्णकालः स्मृतः' इति । याजुषास्तु पर्वणि कुर्युः । तच्चापस्तम्बैरौदयिकं ग्राह्यमन्यैस्तु पूर्ववत् । 'पर्वण्यौदयिके कुर्युः श्रावणं तैत्तिरीयकाः । बह्वृचाः श्रवणे कुर्युर्ग्रहसंक्रान्तिवर्जिते ॥' इति गार्ग्योक्तेः । संप्राप्तवाङ्श्रुतीर्ब्रह्मा पर्वण्यौदयिके पुनः । 'अतो भूतदिने तस्मिन्नोपाकरणमिष्यते ॥' इति कालिकापुराणाच्च । अथ चेद्दोषसंयुक्ते पर्वणि स्यादुपाक्रिया । दुःखशोकामयग्रस्ता राष्ट्रे

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तस्मिन् द्विजातयः ॥' इति मदनरत्नहेमाद्र्यादौ गार्ग्येण दोषोक्तेः । अत्र शिङ्गाभट्टीये विशेषः—'श्रवणः श्रावणं पर्व सङ्गवस्पृग्यदा भवेत् । तदैवौदयिकं कार्यं नान्यदौदयिकं भवेत् ॥' पराशरमाधवीयेऽपि गार्ग्यः—'श्रावणी पौर्णमासी तु सङ्गवात्परतो यदि । तदैवौदयिकी ग्राह्या नान्यदौदयिकी भवेत् ॥'

कर्मकालमाह ।

कालादर्शे निगमः—'श्रावण्या प्रौष्ठपद्या वा प्रतिपत्षण्मुहूर्तकैः । विद्धा स्याच्छन्दसां तत्रोपाकर्मोत्सर्जनं भवेत् ॥' अत्र पौर्णमासीश्रवणहस्तयोरुपलक्षणम् । तेन तावपि सङ्गवस्पृशौ । 'उदये संगवस्पर्शे श्रुतौ पर्वणि चार्कभे । कुर्युर्नभस्युपाकर्म ऋग्यजुः सामगाः क्रमात् ॥' इति पृथ्वीचन्द्रः । तेनोदयसङ्गवोभयव्यापिनी मुख्या । परेद्युः सङ्गवाभावे पूर्वेद्युरुदयाभावे चैकैकसत्त्वे पूर्वेद्युश्चतुर्दशीवेधनिषेधात्सामान्यवाक्यादौदयिकी कर्मपर्याप्ता ग्राह्या न पूर्वा । सङ्गवनिमित्तपूर्वविद्धापवादाभावात् । 'नान्यदौदयिकी' इत्यस्य पूर्वविद्धापरत्वाभावात् । तेन भाद्रादौ कालान्तरे स्यान्न तु निषिद्धे । न हि व्रीह्यलाभे निषिद्धमाषग्रहणं युक्तम् । अत एव परेद्युः सङ्गवव्याप्तौ पूर्वविद्धा निषेधः । तदभावे तु नेति मूर्खव्यवस्थाप्ययुक्ता, विधिवैषम्यात् । माषनिषेधेपि तथापत्तेश्च । पूर्वविद्धावचनसत्त्वे हि सा युज्यते । एवं श्रावणेपि ज्ञेयम् । तन्न । 'विष्णवर्क्षे घटिकाद्वयम्' इति पूर्वोक्तविरोधात् । तेन प्राशस्त्यमात्रपरमिदम् । तत्त्वं तु एतच्छुद्धाधिकपरम् । तेन यथाग्निहोत्रादौ सायंप्रातः कालबाधे सामान्ये जीवनावच्छिन्नकाले दर्शादौ वानुष्ठानम्, यथा वा व्रीह्यश्वशफाद्यभावे यागाक्षिप्तनिषिद्धवर्जद्रव्येण, तथात्र सङ्गवाभावे निषिद्धवर्जकर्मपर्याप्तौदयिके कालान्तरे वानुष्ठानं न तु कदाचिन्निषिद्धे । अपवादाभावे उत्सर्गस्यैव प्राप्तेः । कात्यायनादीनां तु दिनद्वये पूर्वाह्णव्याप्तौ एकदेशस्पर्शे वा पूर्वैवेति हेमाद्रिः । यदपि—'श्रावणी दुर्गनवमी दूर्वा चैव हुताशनी । पूर्वविद्धा प्रकर्तव्या शिवरात्रिर्बलेर्दिनम् ॥' इति ब्रह्मवैवर्तम्, तद्ब्रह्मपवित्रश्रवणाकर्मादिदैवकर्मविषयमिति हेमाद्रिः । अत एव वचनात्कुल-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

धर्मव्रतादावपि पूर्वैव । मदनरत्नेप्येवम् । मदनपारिजातेपि पूर्वविद्धायां श्रावण्यां वाजसनेयिनामुपाकर्मेत्युक्तम् ।

मदनरत्ने तु—'पर्वण्यौदयिके कुर्युः श्रावणं तैत्तिरीयकाः ।' इति बह्वृचपरिशिष्टे बह्वृचान्प्रति कर्मविधानार्थं प्रवृत्ते तत्र तैत्तिरीयककर्मविध्ययोगात् । पूर्वोक्तकालिकापुराणादौ सामान्यत औदयिकपर्वप्राप्तेस्तन्निषेधेन बह्वृचानां श्रवणविधानात्तैत्तिरीयकपदमनुवादत्वात् तस्य च प्राप्त्यधीनत्वात् प्राप्तेश्च यजुर्वेदिमात्रपरत्वात्सर्वयजुर्वेद्युपलक्षणार्थम् । अवयुत्यानुवादो वा अवयुत्य पृथक्कृत्य अनुवादो वा । नतु विधायकम् । येन विशेषविधिनोपसंहारः स्यात् । अनुवादत्वाल्लक्षणा न दोषः । अन्यथा त्वौदयिकपर्वविशिष्टोपाकर्मोद्देशेन कर्तृविधौ कर्तृविशिष्टे वा औदयिकपर्वविधौ वाक्यभेदापत्तेः । तस्मात्तैत्तिरीयकपदाविवक्षया सर्वयजुर्वेदिनामौदयिकमेव पर्वेत्युक्तम् । तन्न । न तावत्परिशिष्टे बह्वृचान्प्रत्येव विधिः । 'धनिष्ठाप्रतिपद्युक्तत्वाष्ट्रऋक्षसमन्वितम् ।' इत्यादि तदुदाहृते एव परिशिष्टे वेदान्तरधर्मविधीनां दर्शनात् । नाप्यनुवादोयं कालिकापुराणाद्बह्वृचादीनामपि तदापत्तेः । कुर्युरित्यस्य विधित्वेन तस्यैवार्थवादत्वेनैतत्प्राप्तानुवादित्वाच्च । न च तैत्तिरीयकाणां गृह्ये तद्विधिरस्ति । येनानुवादः स्यात् । न च वाक्यभेदः । तैत्तिरीयकमात्रस्य कर्ममात्रस्य वा उद्देश्यत्वायोगेन हविरार्तिवत् 'अष्टवर्षं ब्राह्मणमुपनयीत' इतिवच्चागत्या विशिष्टस्योद्देश्यत्वात् । अन्यथोत्तरार्धे बह्वृचपदस्याप्यविवक्षापत्त्या श्रवणस्य सर्वसाधारण्यापत्तेः । तस्माद्धेमाद्रिमतमेव युक्तमिति दिक् । इदं च शिष्यानध्यापयत आवसथ्येग्नौ । अनध्यापयतो नाधिकार इति कर्कः । श्रावण्यामपि ग्रहणादिदुष्टायां कातीयभिन्नैः प्रोष्ठपद्यां कार्यम् । तैस्तु श्रावणपञ्चम्यां—'संक्रान्तिर्ग्रहणं वापि पौर्णमास्यां यदा भवेत् । उपाकृतिस्तु पञ्चम्यां कार्या वाजसनेयिभिः ॥' इति स्मृतिमहार्णवे वाजसनेयिग्रहणादिति हेमाद्रिः । इदं च सूत्रोक्तकालपरत्वाद्बह्वृचपरमपि । सांख्यायनैस्तु हस्ते कार्यम् । आपस्तम्बैराथर्वणैश्च प्रौष्ठपद्याम् । यत्तु बौधायनः—'श्रावण्यां पौर्णमास्यामाषाढ्यां वोपाकृत्य' इत्यूचे, तत् प्रौष्ठपद्यामपि दोषे आषाढ्यां

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कार्यमित्येवमर्थं तच्छाखीयविषयं वा ।

सामगास्तु श्रावणे हस्ते कुर्युः । 'बह्वृचाः श्रवणे चैव हस्तर्क्षे सामवेदिनः ।' इति निर्णयामृते गोभिलोक्तेः । सोऽप्युत्तरः । 'धनिष्ठाप्रतिपद्युक्तं त्वाष्ट्रऋक्षसमन्वितम् । श्रावणं कर्म कुर्वीरन् ऋग्यजुःसामपाठकाः ॥' इति मदनरत्ने परिशिष्टोक्तेः । गार्ग्योऽपि—'सिंहे रवौ तु पुष्यर्क्षे पूर्वाह्णेऽविवरे बहिः । छन्दोगा मिलिताः कुर्युरुत्सर्गं स्वस्वछन्दसाम् ॥ शुक्लपक्षे तु हस्तेन उपाकर्मापराह्णिकम् ॥' इति । अविवरे ग्रहादिदोषहीने । विचरेदिति पाठोऽज्ञानकृतः । पुष्यर्क्षे पूर्वाह्णे उत्सर्गः । अपराह्णिकमुपाकर्मेत्यन्वयः । अन्यस्तु विशेषः पूर्वमेवोक्तः। प्रयोगपारिजाते गोभिलः—'उपाकर्मोत्सर्जनं च वनस्थानामपीष्यते । धारणाध्ययनाङ्गत्वाद्गृहिणां ब्रह्मचारिणाम् ॥ उत्सर्जनं च वेदानामुपाकरणकर्म च । अकृत्वा वेदजप्येन फलं नाप्नोति मानवः ॥' सर्वथा लोपे तु कृच्छ्र उपवासश्च । 'वेदोदितानां नित्यानाम्' इति मनुनाभोजनोक्तेः । एवमुत्सर्गेऽपि ॥

अथ प्रसङ्गादत्रैवोत्सर्जनमुच्यते ।

तच्च पौषमासे रोहिण्यां तत्कृष्णाष्टम्यां वा कार्यम् । 'पौषमासस्य रोहिण्यामष्टकायामथापि वा । जलान्ते छन्दसां कुर्यादुत्सर्गं विधिवद्बहिः ॥' इति याज्ञवल्क्योक्तेः । श्रावण्यां प्रौष्ठपद्यां वोपाकृतौ क्रमेण पौषशुक्लप्रतिपदि माघशुक्लप्रतिपदि वा कार्यम् । अर्धपञ्चमान्मासानधीयीत' इति तेनैवोक्तेः । अर्धः पञ्चमो येषु सार्धचतुर इत्यर्थः । यत्तु हारीतः—'अर्धपञ्चमान्मासानधीत्योर्ध्वमुत्सृजेत् । पञ्चार्धषष्ठान्वा' इति तदाषाढ्युपाकर्मविषयम् । बौधायनास्तु पौष्यां माघ्यां वा कुर्युः । 'पौष्यां मघ्यां चोत्सृजेत्' इति तत्सूत्रात् । तैत्तिरीयैस्तु तैष्यां कार्यम् । तैष्यां पौर्णमास्यां रोहिण्यां वा विरमेत्' इति तत्सूत्रात् बह्वृचैस्तु माघ्यां कार्यम् । 'अध्यायोत्सर्जनं माघ्यां पौर्णमास्यां विधीयते' इति कारिकोक्तेः । कातीयास्तु भाद्रपदे कुर्युः । 'उत्सर्गश्चेति नन्दादितिथ्यां प्रौष्ठपदेऽपि वा ।' इति कात्यायनोक्तेः । सामगास्तु सिंहार्के पुष्ये कुर्युः । तथाच सिंहे रवौ

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

त्विति गार्ग्यवचनं पूर्वमुक्तम् । सर्वैरुपाकर्मदिने वा कार्यम् । 'पुष्ये तूत्सर्जनं कुर्यादुपाकर्मदिनेथवा ।' इति हेमाद्रौ खादिरगृह्योक्तेः । यदा सिंहस्थे सूर्ये सति तन्मध्यस्थहस्तनक्षत्रात्प्राक् पुष्यः कर्कटस्थो भवति तदा तस्मिन्पुष्ये उत्सर्गं कृत्वा तदुत्तरहस्ते उपाकर्म सामगाः कुर्युः । 'मासे प्रौष्ठपदे हस्तात्पुष्यः पूर्वो भवेद्यदा । तदा च श्रावणे कुर्यादुत्सर्गं छन्दसां द्विजः ॥' इति तत्रैव परिशिष्टोक्तेः । अत्र द्वावपि सौरौ मासौ ज्ञेयौ । तेषां सौरस्यैवोक्तेः ॥

अत्र विशेषः ।

अत्र विशेषमाह कार्ष्णाजिनिः—'उपाकर्मणि चोत्सर्गे यथाकालं समेत्य च । ऋषीन्दर्भमयान्कृत्वा पूजयेत्तर्पयेत्ततः ॥ इति । 'उपाकर्मण्युत्सर्गे च त्रिरात्र पक्षिणीमहोरात्रं वानध्यायः' इति मिताक्षरायामुक्तम् । अत्र नदीनां रजोदोषो नास्त । 'उपाकर्मणि चोत्सर्गे रजोदोषो न विद्यते' इति गार्ग्योक्तेः ।

रक्षाबन्धन निर्णयः ।

अत्रैव रक्षाबन्धनमुक्तं हेमाद्रौ भविष्ये—'संप्राप्ते श्रावणस्यान्ते पौर्णमास्यां दिनोदये । स्नानं कुर्वीत मतिमान् श्रुतिस्मृतिविधानतः ॥ उपाकर्मादिकं प्रोक्तमृषीणां चैव तर्पणम् । शूद्राणां मन्त्ररहितं स्नानं दानं च शस्यते । उपाकर्मणि कर्तव्यमृषीणां चैव पूजनम् । ततोऽपराह्णसमये रक्षापोटलिकां शुभाम् । कारयेदक्षतैः शस्तैः सिद्धार्थैर्हेमभूषितैः ॥' इति। अत्रोपाकर्मानन्तर्यस्य पूर्णातिथावार्थिकस्यानुवादो न तु विधिः । गौरवात् प्रयोगविधिभेदेन क्रमायोगाच्छूद्रादौ तदयोगाच्च । तेन परेद्युरुपाकरणेपि पूर्वेद्युरपराह्णे तत्करणं सिद्धम् । इदं भद्रायां न कार्यम् । 'भद्रायां द्वे न कर्तव्ये श्रावणी फाल्गुनी तथा । श्रावणी नृपतिं हन्ति ग्रामं दहति फाल्गुनी ॥' इति सङ्ग्रहोक्तेः । तत्सत्त्वे तु रात्रावपि तदन्ते कुर्यादिति निर्णयामृते । इदं प्रतिपद्युतायां न कार्यम् । 'नन्दाया दर्शने रक्षा बलिदानं दशासु च । भद्रायां गोकुलक्रीडा देशनाशाय जायते ॥' इति मदनरत्ने ब्रह्मवैवर्तात् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भविष्ये – 'उपलिप्ते गृहमध्ये दत्तचतुष्के न्यसेत्कुम्भम् । पीठे तत्रोपविशेद्राजामात्यैर्युतश्च सुमुहूर्ते ॥ तदनु पुरोधा नृपते रक्षां बध्नीत मन्त्रेण ॥' इदं रक्षाबन्धनं नियतकालत्वाद्भद्रावर्ज्यग्रहणदिनेपि कार्यं होलिकावत् । ग्रहसंक्रान्त्यादौ रक्षानिषेधाभावात् । 'सर्वेषामेव वर्णानां सूतकं राहुदर्शने ।' इति तत्कालीनकर्मपर एव न त्वन्यत्र । अन्यथा होलिकायां का गतिः । अत एव– 'नित्ये नैमित्तिके जप्ये होमे यज्ञक्रियासु च । उपाकर्मणि चोत्सर्गे ग्रहवेधो न विद्यते ॥' इति नियतकालीने तदभाव इति दिक् । उपाकर्मणि तद्दिनभिन्नपरं तत्र तन्निषेधादित्युक्तं प्राक् । मन्त्रस्तु– 'येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः ॥ तेन त्वामपि बध्नामि रक्षे मा चल मा चल ॥ ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः शूद्रैरन्यैश्च मानवैः ॥ कर्तव्यो रक्षिताचारो द्विजान्संपूज्य शक्तितः ॥' इति ॥

अत्रैव हयग्रीवोत्पत्तिः ।

तदुक्तं कल्पतरौ– 'श्रावण्यां श्रवणे जातः पूर्वं हयशिरा हरिः जगाद सामवेदं तु सर्वकल्मषनाशनम् ॥ स्नात्वा संपूजयेत्तं तु शङ्खचक्रगदाधरम् ॥'

अत्राश्वलायनेन श्रवणाकर्मोक्तम् ।

'श्रावण्यां पौर्णमास्यां श्रवणाकर्म' इति । तत्रास्तमययोगिनी ग्राह्या । 'अस्तमिते स्थालीपाकं श्रपयित्वा इति सूत्रात् । अत एव निशीष्टेर्दर्शप्रयोगान्तःपातनियमात्तदङ्गैः प्रसङ्गसिद्धिरुक्ता द्वादशे । अन्यथा परेद्युः प्राप्तौ कः प्रसङ्गः प्रसङ्गस्य । याज्ञिकास्तु पौर्णिमादर्शशब्दयोः पर्वान्त्यक्षणवदहोरात्रवाचित्वात्तत्रैव कर्मकालव्याप्तिर्ग्राह्येति विकृतित्वाच्छेषपर्वेच्छन्ति ।

श्रावण कृष्ण द्वितीयायामशून्यव्रतम् ।

श्रावणादिमास चतुष्टयकृष्णपक्षद्वितीयासु अशून्यशयनव्रतम् । तत्र चन्द्रोदयव्यापिनी । दिनद्वये सत्त्वे परेति निर्णयामृते ॥ इति कमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ श्रावणमासः ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथभाद्रपदमासः ।

सिंहे पराः षोडशघटिकाः पुण्यकालः । अन्यत्पूर्ववत् । अत्र गोप्रसवेऽद्भुतसागरे नारदः—'भानौ सिंहगते चैव यस्य गौः संप्रसूयते मरणं तस्य निर्दिष्टं षड्भिर्मासैर्न संशयः ॥ तत्र शन्ति प्रवक्ष्यामि येन संपद्यते शुभम् । प्रसूतां तत्क्षणादेव तां गां विप्राय दापयेत् ॥ ततो होमं प्रकुर्वीत घृताक्तै राजसर्षपैः । आहुतीनां घृताक्तानामयुतं जुहुयात्ततः । व्याहृतिभिश्चायं होमः । 'सोपवासः प्रयत्नेन दद्याद्विप्राय दक्षिणाम् ।' इति । तथा—सिंहराशौ गते सूर्ये गोप्रसूतिर्यदा भवेत् । पौषे च महिषी सूते दिवैवाश्वतरी तथा । तदानिष्टं भवेत्किंचित्तच्छान्त्यै शान्तिकं चरेत् ॥ अस्यवामेति सूक्तेन तद्विष्णोरिति मन्त्रतः । जुहुयाच्च तिलाज्येन शतमष्टोत्तराधिकम् ॥ मृत्युञ्जयविधानेन जुहुयाच्च तथायुतम् । श्रीसूक्तेन ततः स्नायाच्छान्तिसूक्तेन वा पुनः ॥ मध्यरात्रे निशीथे वा यदा गौः क्रन्दते सदा । ग्रामे वा स्वगृहे वापि शान्तिकं पूर्ववद्दिशेत् ॥' एवं श्रावणे वडवाप्रसवो दिने निषिद्धः । तदुक्तमथर्ववेदिनां गार्ग्यपरिशिष्टे—माघे बुधे च महिषी श्रावणे वडवा दिवा । सिंहे गावः प्रसूयन्ते स्वामिनो मृत्युदायकाः ॥' इति । अत्र तदुक्तामृताख्या शान्तिः कार्या ॥

कज्जली बहुलाव्रत निर्णयः

भाद्रकृष्णतृतीया कज्जली संज्ञा सा परा ग्राह्येति दिवोदासीये उक्तम् । वचनं तु हरितालिका प्रकरणे वक्ष्यामः । भाद्रकृष्णचतुर्थी बहुलाख्या मध्यदेशे प्रसिद्धा । सा सायाह्नव्यापिनी ग्राह्या । दिनद्वये सत्त्वे पूर्वा ग्राह्या । 'गौर्याश्चतुर्थी वटधेनु पूजा दुर्गार्चनं दुर्भरहोलिके च । वत्सस्य पूजा शिवरात्रिरेताः परान्विता घ्नन्ति नृपं सराष्ट्रम् ॥' इति दिवोदासीये वचनात् । 'अत्र वत्सपूजायाः पृथगुपादानात् धेनुपूजाशब्देन बहुलाख्या गृह्यते' इति स एव व्याचख्यौ । मदनरत्नेप्येवम् । अत्र गोपूजा यवन्नाशनं च तत्रैवोक्तम् ॥

हलषष्ठी शीतलाव्रतविधिः निर्णयः

भाद्रकृष्णषष्ठी हलषष्ठी । सा सप्तमीयुतेति दिवोदासः । भाद्र-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कृष्णसप्तम्यां शीतलाव्रतम् । तत्र पूर्वा ग्राह्येति हेमाद्रौ ।

अथ जन्माष्टमी ।

सा च कृष्णादिमासेन भाद्रपदकृष्णाष्टमी । 'तथा भाद्रपदे मासि कृष्णाष्टम्यां कलौ युगे । अष्टाविंशतिमे जातः कृष्णोऽसौ देवकीसुतः ॥' इति कल्पतरौ ब्राह्मोक्तेः । अत्रेदं माधवमतम् । अष्टमी द्वेधा जन्माष्टमी जयन्ती चेति । तत्राद्या केवलाष्टमी । 'ये न कुर्वन्ति जानन्तः कृष्णजन्माष्टमीव्रतम् । ते भवन्ति नराः प्राज्ञ व्याला व्याघ्राश्च कानने ॥' इति स्कान्दात् । 'दिवा वा यदि वा रात्रौ नास्ति चेद्रोहिणी कला । रात्रियुक्तां प्रकुर्वीत विशेषेणेन्दुसंयुताम् ॥' इति पुराणान्तरात् । 'श्रावणे बहुले पक्षे कृष्णजन्माष्टमीव्रतम् । न करोति नरो यस्तु भवति क्रूरराक्षसः ॥' इति भविष्योक्तेश्च केवलाष्टम्या एवोपोष्यत्वावगतेः । सैव रोहिणीयुक्ता जयन्ती । 'कृष्णाष्टम्यां भवेद्यत्र कलैका रोहिणी यदि । जयन्ती नाम सा प्रोक्ता उपोष्या सा प्रयत्नतः ॥' इति वह्निपुराणात् । अष्टमी कृष्णपक्षस्य रोहिणीऋक्षसंयुक्ता । भवेत्प्रौष्ठपदे मासि जयन्ती नाम सा स्मृता ॥' इति विष्णुरहस्यादिवचनाच्च । ज्योतिरादिवत्संज्ञया कर्मभेदः । रोहिणीयोगश्चाहोरात्रं मुख्यः, निशीथमात्रे मध्यमः, दिवसादावधमः । 'अहोरात्रं तयोर्योगो ह्यसंपूर्णो भवेद्यदि । मुहूर्तमप्यहोरात्रे योगश्चेत्तामुपोषयेत् ॥' इति वसिष्ठसंहितोक्तेः । 'अर्धरात्रे तु योगोयं तारापत्युदये सति । नियतात्मा शुचिः स्नातः पूजां तत्र प्रवर्तयेत् ॥' इति विष्णुधर्मोक्तेः । 'वासरे वा निशायां वा यत्र स्वल्पापि रोहिणी । विशेषेण नभोमासे सैवोपोष्या मनीषिभिः ॥' इति पुराणान्तराच्च । विशेषेणेति श्रुतेर्भाद्रपदेपीदम् । 'श्रावणे वा नभस्ये वा' इति वक्ष्यमाणात् । गौडास्तु निशीथ एव रोहिणीयोगे जयन्ती नान्यथेत्याहुः । तन्न । 'वासरे वा निशायां वा' इति विरोधात् । योगविशेषाद्गुणात्फलमित्यन्ते । तेप्यकरणे दोषश्रुतेरुपेक्ष्याः ।

तत्र जन्माष्टमीव्रतं नित्यं, पूर्वोक्तवचनेषु अकरणे निन्दाश्रुतेः । 'वर्षे वर्षे तु या नारी कृष्णजन्माष्टमीव्रतम् । न करोति महाप्राज्ञ

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

व्याली भवति कानने ॥' इति स्कान्दे वीप्साश्रुतेश्च । 'न करोति नरो यस्तु' इति पूर्वमुक्तेरत्र स्त्रीलिङ्गमतन्त्रम् । मदनरत्नेस्कान्दे त्वत्र फलमप्युक्तम् । 'जन्माष्टमीव्रतं ये वै प्रकुर्वन्ति नरोत्तमाः । कारय-न्त्यथवा लोकाँल्लक्ष्मीस्तेषां सदा स्थिरा ॥ सिध्यन्ति सर्वकार्याणि कृते जन्माष्टमीव्रते ॥' इति ।

जयन्तीव्रतं तु नित्यं काम्यं च । 'महाजयार्थं कुरुतां जयन्तीं मुक्तयेऽनघ । धर्ममर्थं च कामं च मोक्षं च मुनिपुङ्गव ॥ ददाति वाञ्छितानर्थान्ये चान्येप्यतिदुर्लभाः ॥' इति स्कान्दादौ फलश्रुतेः । 'शूद्रान्नेन तु यत्पापं शवहस्तस्थभोजने । तत्पापं लभते कुन्ति जयन्तीविमुखो नरः । न करोति यदा विष्णोर्जयन्तीसंभवं व्रतम् । यमस्य वशमापन्नः सहते नारकीं व्यथाम् ॥' इत्यकरणे निन्दाश्रुतेश्च । यदा च पूर्वेद्युः परेद्युर्वा रोहिणीयोगस्तदा जन्माष्टमी जयन्त्यामन्तर्भूता ज्ञेया नतु जन्माष्टमीव्रतं पृथक्कार्यं विष्णुशृङ्खलवत् । तदुक्तं माधवेनैव— 'यस्मिन्वर्षे जयन्त्याख्यो योगो जन्माष्टमी तदा । अन्तर्भूता जयन्त्यां स्यादृक्षयोगप्रशस्तितः ॥' इति । मदनरत्ननिर्णयामृतगौडमैथिलमतेप्येवम् । हेमाद्र्यादयस्तु—'रोहिणीसंयुतोपोष्या सर्वाघौघविनाशिनी । अर्धरात्रादधश्चोर्ध्वं कलया वा यदा भवेत् । जयन्ती नाम सा प्रोक्ता सर्वपापप्रणाशिनी ॥' इत्यग्निपुराणादर्धरात्र एव रोहिणीयोगस्य प्राशस्त्यात् । 'मुहूर्तमपि लभ्येत' इत्यादीना चार्धरात्रयोगेप्युपपत्तेर्न जयन्तीव्रतं भिन्नम् । तत्त्वं तु हेमाद्रिमतेपि जयन्तीव्रतं भिन्नमेव । 'उदये चाष्टमी' इत्यस्य तेन जयन्तीपरत्वोक्तेः । किञ्च 'रोहिण्यामर्धरात्रे च यदा कृष्णाष्टमी भवेत् । तस्यामभ्यर्चनं शौरेर्हन्ति पापं त्रिजन्मजम् ॥' इति विष्णुधर्मोक्तेः—'समायोगे तु रोहिण्यां निशीथे राजसत्तम । समजायत गोविन्दो बालरूपी चतुर्भुजः ॥ तस्मात्तं पूजयेत्तत्र यथावित्तानुरुपतः ॥' इति वह्निपुराणाच्चार्धरात्रस्य कर्मकालत्वमवसीयते । अतः 'कर्मणो यस्य यः कालः' इत्यादिवचनात्पूर्वत्रैव प्राप्तेः परदिने सतोपि रोहिणीयोगस्य न प्रयोजकत्वम् । अन्यथा बुधवारादेरपि तत्त्वापत्तेः । किंच जयन्तीशब्दो रात्रिविशेषवचनः । 'अभिजिन्नाम नक्षत्रं जयन्ती नाम शर्वरी । मुहूर्तो विजयो नाम यत्र

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

जातो जनार्दनः ॥' इति ब्रह्माण्डपुराणात् । तेन तद्योगिरोहिण्यां गौणत्वान्न व्रतभेदः । यत्तु 'वासरे वा निशायां वा' इति तत्कैमुतिकन्यायेन निशीथयोगस्यैव स्तुत्यर्थं पूर्वदिनेऽर्धरात्रयोगाभावे प्राशस्त्यार्थमित्याहुः । यद्यपि—'दिवा वा यदि वा रात्रौ नास्ति चेद्रोहिणी कला । रात्रियुक्तां प्रकुर्वीत विशेषेणेन्दुसंयुताम् ॥' इत्यनेन रोहिणीयोगाभावेऽर्धरात्रव्याप्तेर्ग्राह्यतोक्ता, तथापि यस्मिन्वर्षे जयन्तीयोगो नास्ति तत्र जयन्तीव्रतलोपे प्राप्ते अष्टमीमात्रेऽपि जयन्तीव्रतं कार्यं इत्येवंपरमिदमिति तदाशयः । अत्र हि 'सत्रायागूर्य विश्वजिता यजेत । एषामसंभवे कुर्यादिष्टिं वैश्वानरीं द्विजः ।' इतिवद्रोहिणीयोगाभावे विधानात्तत्कार्यापत्तिः स्यात् । अत एवोक्तं—'जयन्ती नाम शर्वरी' इति ।

यच्च स्कान्दे–'उदये चाष्टमी किंचिन्नवमी सकला यदि । भवते बुधसंयुक्ता प्राजापत्यर्क्षसंयुता ॥ अपि वर्षशतेनापि लभ्यते वाथवा न वा ॥' इति । यच्च पाद्मे–'प्रेतयोनिगतानां तु प्रेतत्वं नाशितं तु तैः । यैः कृता श्रावणे मासि अष्टमी रोहिणीयुता ॥ किं पुनर्बुधवारेण सोमेनापि विशेषतः । किं पुनर्नवमीयुक्ता कुलकोट्यास्तु मुक्तिदा ॥' इति, तद्दानादिविषयम् । उपवासाश्रवणात्यनन्तभट्टः, जयन्तीपरमिति हेमाद्रिः । उदये चन्द्रोदय इति केचित् तन्न । चन्द्रोदयसत्त्वेऽसंदेहान्नवमी सकलेत्ययोगान्मानाभावाच्च । तेन पूर्वेद्युः सप्तमीविधे परदिने सूर्योदये घटिकापि ग्राह्या । पूर्वविद्धाष्टमीति पाद्मोक्तेः । इति युक्तम् । अतो न व्रतभेदो नाप्यन्तर्भाव इत्यूचिवान् । गौडास्तु नवमीक्षयपरमिदं वचनम् 'नवमी सकला यदि' इति विशिष्योक्तेः । एतत्पूर्वदिने जयन्त्यभावपरमित्याहुः । जयन्त्यादिसर्वापवादोयमिति चूडामण्यादयः । वयंतु, सत्यं व्रतभेदः । लोकास्तु जन्माष्टमीमेवानुतिष्ठन्ति । नहि 'श्रावणे वा नभस्ये वा रोहिणीसहिताष्टमी । यदा कृष्णा नरैर्लब्धा सा जयन्तीति कीर्तिता ॥ श्रावणे न भवेद्योगो नभस्ये तु भवेद्ध्रुवम् ॥' इति माधवीये वसिष्ठसंहितोक्तापि भाद्रे जयन्ती केनापि क्रियते । अतः पूर्वेद्युरेवोपवासः । यद्वा गुणात्फलम् । 'सप्तमे ब्रह्मवर्चसकाममुपनयेत्' इतिवदित्यन्ये । तन्न ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नित्यत्वानुपपत्तेः । अत्र गौणमुख्यचान्द्राभ्यामेक एव मास इत्यन्ये । तन्न । एकवाक्ये उभयनिर्देशे वा शब्दद्वयायोगात् । अतो जयन्तीव्रतस्यापि नित्यत्वादुपवासद्वयं कार्यमिति ब्रूमः । अत एव हेमाद्रिमदनरत्नादौ जन्माष्टमीव्रतं जयन्तीव्रतं च भिन्नमुक्तम् । भिन्नकालत्वात्सर्वथा तावदन्तर्भावो नेति सिद्धम् । यद्यपि पूर्वा परा वाल्पापि रोहिणीयुतैव कार्येति ग्रन्थानां तत्त्वं प्रतीयते तदपि जयन्तीपरमेव । इदं च काम्यमेवेत्यनन्तभट्टः । तद्दूषणं हेमाद्रौ ज्ञेयम् । नित्यं काम्यमिति तु बहवः ।

ननु यथा विष्णुशृङ्खलयोगेन श्रवणद्वादशीवामनजयन्त्यादिसर्वसिद्धिर्यथा वैकादशी स्वल्पापि परा, तथा 'कला काष्ठा मुहूर्तापि यदा कृष्णाष्टमी तिथिः । नवम्यां सैव ग्राह्या स्यात्सप्तमीसंयुता नहि ॥' इत्यादिवचनादर्धोदयादिवद्योगाधिक्ये फलाधिक्यात्परैव जन्माष्टमी युक्तेति चेत् वार्तमात्थ । नहि तत्र व्रतभेदो द्वयोर्नित्यत्वं द्वयोरकरणे दोषो वा श्रुतः इहत्वेतैस्त्रिभिर्हेतुभिः संज्ञाभेदाद्धर्मभेदात्कालभेदाच्चोपवासभेदः स्पष्ट एव । एकदैवतत्वाच्छ्रवणद्वादशीवन्न पारणालोपदोषोऽपि । तेन व्रतद्वयमेव युक्तम् । द्वयोरपि नित्यत्वात् । केचित्तु—'त्रेतायां द्वापरे चैव राजन्कृतयुगे तथा । रोहिणीसहिता चेयं विद्वद्भिः समुपोषिता ॥ अतः परं महीपाल संप्राप्ते तामसे कलौ । जन्मना वासुदेवस्य भविता व्रतमुत्तमम् ॥' इति हेमाद्रौ वह्निपुराणात् कलौ जन्माष्टमीव्रतमेव न जयन्तीव्रतमित्याहुः । तन्न । 'तामसे कलौ' इत्युक्तेः परमश्रेयोहेतोरस्य कलौ पापिनां दुर्लभत्वमुच्यते । तेन कलौ तामसा न करिष्यन्ति किन्तु धन्या एवेत्यर्थः । अन्यथा 'शूद्राश्च ब्राह्मणाचारा भविष्यन्ति युगे कलौ ।' इत्यादौ विधिकल्पनापत्तेः ॥

अष्टम्यां निशीथवेधः एव मुख्यः ।

अत्र निशीथवेध एव ग्राह्यः । पूर्वोक्तवचनेषु तस्यैव मुख्यकालत्वोक्तेः । 'अष्टमी शिवरात्रिश्च ह्यर्धरात्रादधो यदि । दृश्यते घटिका या सा पूर्वविद्धा प्रकीर्तिता ॥' इति माधवीये पुराणान्तरात् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'अर्धरात्रे तु रोहिण्यां यदा कृष्णाष्टमी भवेत् । तस्यामभ्यर्चनं शौरेर्हन्ति पापं त्रिजन्मजम् ॥' भविष्योक्तेः । 'अष्टमी रोहिणीयुक्ता निश्यर्धे दृश्यते यदि । मुख्यकाल इति ख्यातस्तत्र जातो हरिः स्वयम् ॥' इति वसिष्ठसंहितोक्तेश्च ॥

अष्टम्यां रोहिणी राहित्य तत्सत्त्वादिभेदेन निर्णयः ।

तत्राष्टमी द्वेधा । रोहिणीरहिता तद्युता च । आद्यापि चतुर्धा । पूर्वेद्युरेव निशीथयोगिनी परेद्युरेवोभयेद्युरनुभयेद्युश्चेति । तत्राद्ययोरसंदेह एव कर्मकालव्याप्तेः । 'जन्माष्टमी रोहिणी च शिवरात्रिस्तथैव च । पूर्वविद्धैव कर्तव्या तिथिभान्ते च पारणम् ॥' इति भृगूक्तेश्च । अस्मात्केवलरोहिण्युपवासोपि सिद्धः । अन्त्ययोः परैव । प्रातः संकल्पकालव्याप्तेराधिक्यात् । 'वर्जनीया प्रयत्नेन सप्तमीसंयुताष्टमी ।' इति ब्रह्मवैवर्ताच्च । एवम् शतः समव्याप्तावपि । विषमव्याप्तौ त्वाधिक्येन निर्णयः ।

रोहिणीयुतापि चतुर्धा । पूर्वेद्युरेव निशीथे रोहिणीयुता परेद्युरेवोभयेद्युरनुभयेद्युश्च । अत्राप्याद्ययोरसंदेहः । 'कार्या विद्धापि सप्तम्या रोहिणीसहिताष्टमी ।' इति पाद्मोक्तेः । 'जयन्त्यां पूर्वविद्धायामुपवासं समाचरेत् ।' इति गरुडाच्च । 'सप्तमीसंयुताष्टम्यां निशीथे रोहिणी यदि । भविता साष्टमी पुण्या यावच्चन्द्रदिवाकरौ ॥' इति वह्निपुराणाच्च । द्वितीयेऽसंदेह एव । तृतीयपक्षे परैव । 'वर्जनीया प्रयत्नेन सप्तमीसंयुताष्टमी । सऋक्षापि न कर्तव्या सप्तमीसंयुताष्टमी ॥' इति ब्रह्मवैवर्तात् । चतुर्थ्येपि त्रेधा । पूर्वेद्युर्निशीथेष्टमी परेह्नि रोहिणी, परेह्न्यष्टमी पूर्वेह्नि रोहिणी, उभयेद्युरुभयस्य निशीथासंबन्धो वेति । आद्ये परेद्युर्जयन्तीयोगस्य सत्त्वात्परैवेति माधवः । तदुक्तं तेनैव— 'यस्मिन्वर्षे जयन्त्याख्यो योगो जन्माष्टमी तदा । अन्तर्भूता जयन्त्यां स्यादृक्षयोगप्रशस्तितः ॥' इति । 'पूर्वविद्धाष्टमी या तु उदये नवमीदिने । मुहूर्तमपि संयुक्ता संपूर्णा साष्टमी भवेत् ॥ कला काष्ठा मुहूर्तापि यदा कृष्णाष्टमी तिथिः । नवम्यां सैव ग्राह्या स्यात्सप्तमीसंयुता नहि ॥' इति पाद्मोक्तेश्च । केचित्तु हेमाद्रौ—'अष्टम्याः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्राधान्यात्तस्याश्च पूर्वेद्युः कर्मकालव्यापित्वात्पूर्वैव । पाद्मं तु पूर्वेद्युर्निशीथेऽष्टम्यभावे ज्ञेयम् । अन्तर्भावोक्तिस्तु मूर्खदन्ध्रणमात्रं' इति आहुः । अन्ये तु पूर्वविद्धाष्टमीवाक्येन जन्माष्टम्यां सूर्योदये सप्तमी-वेधनिषेधात्कलाघटीमात्राप्यौदयिकी ग्राह्या । 'कार्या विद्धापि सप्तम्या' इति जयन्तीपरम् । 'जयन्त्यां पूर्वविद्धायामुपवासं समाचरेत् ।' इत्येकवाक्यत्वात् । तत्रापि द्वयोर्नित्यत्वात्कालभेदाच्चोपवासद्वयं भवत्येव । यदा तु केवलाष्टमी शुद्धाधिका तदा त्यागहेतोः सप्तमीवेधस्याभावात्पूर्वैव । यदि वा विद्धन्यूना तदा परदिने ग्राह्यतिथेरभावात्पूर्वैव । एवं सर्वाण्यौदयिकवाक्यानि सप्तमीवेधपराणि। येतु 'जन्माष्टमीं पूर्वविद्धां सऋक्षां सकलामपि । विहाय नवमीं शुद्धामुपोष्य व्रतमाचरेत् ॥' इति व्यासोक्तेर्विद्धायाः क्षये शुद्धनवम्या-मुपवासः । दशमीवेधे द्वादश्युपवासवदित्याहुः ते निर्मूलत्वादुपेक्ष्याः । 'मुहूर्तमपि संयुता' इति रोहिणीयोगे त्याज्यत्वोक्तेः । तिथ्यन्तपारणवाक्यानां निर्विषयत्वापत्तेः । नच जयन्तीपराणि शुद्धाधिकापराणि वा तानि । भृग्वाद्यैः पूर्वविद्धाष्टम्यामपि तिथ्यन्ते पारणोक्तेः । तेन 'कला काष्ठा' इति वाक्यान्तरवशाज्जयन्ती-परमेतत् ।

तत्त्वंतु अष्टम्याः कर्मकालव्याप्तेः 'दिवा वा यदि वा रात्रौ नास्ति चेद्रोहिणीकला । रात्रियुक्तां प्रकुर्वीत विशेषेणेन्दुसंयुताम् ॥' इति पूर्वोक्तवाक्यैः रोहिणीयोगाभावे ग्राह्यत्वोक्तेर्वचनात्कर्मकाल-व्यापिनीं त्यक्त्वा पूर्वा परा वाल्पापि रोहिणीयुता ग्राह्या । माधवमदनरत्ननिर्णयामृतानन्तभट्टगौडमैथिलग्रन्थादिष्वप्येवमिति । युक्तंतु उपवासद्वयं कार्यं द्वयोर्नित्यत्वादिति तु वयम् । अन्त्ययोः परैव । 'सप्तमीसंयुताष्टम्यां भूत्वा ऋक्षं द्विजोत्तम । प्राजापत्यं द्वितीयेऽह्नि मुहूर्तार्धं भवेद्यदि ॥ तदाष्टयामिकं पुण्यं प्रोक्तं व्यासादिभिः पुरा ॥' इति स्कान्दात् । 'मुहूर्तेनापि संयुक्ता संपूर्णा साष्टमी भवेत् । किं पुनर्नवमीयुक्ता कुलकोट्यास्तु मुक्तिदा ॥' इति पाद्माच्चेति दिक् । निम्बादित्योपासकास्तु जन्माष्टमीरामनवमीशि-

१—तच्च पूर्वेद्युर्जयन्तीप्रयुक्तामुत्तरेद्युर्जन्माष्टमीप्रयुक्तम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वराऽयादौ पूर्वेद्युः कर्मकालीनां तिथिं त्यक्त्वा त्रिद्विमुहूर्ता परैव तिथिर्ग्राह्या । 'उदयव्यापिनी ग्राह्या कुले तिथिरुपोषणे । निम्बार्को भगवान्येषां वाञ्छितार्थफलप्रदः ॥' इति हेमाद्रौ मात्स्योक्तामुक्तिसप्तमीव्रते भविष्योक्तेरित्याहुः । तन्न । 'यदि द्वितीये दिवसे तु ऋक्षतिथ्योर्युतिः स्यान्न तदोपवासः । पूर्वे प्रकुर्याद्दिवसे द्वितीये दिनेशभक्तोऽथ तदा व्रताद्यम् ।' इतिमात्स्यवाक्येन तत्रैव उपसंहारात्सर्वार्थत्वेन मानाभावात् । ऋक्षतिथ्योर्हस्तसप्तम्योः । अन्यथा ऋषिपञ्चम्यादौ तदापत्तिः शिष्टाचारान्नेति चेत् न । तस्य न्यायवचोविरोधेन हेयत्वात् । इदानीं क्वापि निम्बार्कोपासनाभावाच्चेति संक्षेपः ।

पारणा निर्णयः ।

पारणं तु—'तिथिरष्टगुणं हन्ति नक्षत्रं च चतुर्गुणम् । तस्मात्प्रयत्नतः कुर्यात्तिथिभान्ते च पारणम् ॥' इति ब्रह्मवैवर्तात्, 'तिथ्यर्क्षयोर्यदा छेदो नक्षत्रान्तमथापि वा । अर्धरात्रेऽथवा कुर्यात्पारणं त्वपरेहनि ॥' इति हेमाद्रौ वचनाच्चार्धरात्रेप्युभयान्तेऽन्यतरान्ते वेति मुख्यः पक्षः । 'सर्वेष्वेवोपवासेषु दिवा पारणमिष्यते ।' इति ब्रह्मवैवर्तं त्वन्यविषयम् । दिने मुख्यकाललाभेऽन्यतरान्ते वा ज्ञेयम् । गौडास्तु—'न रात्रौ पारणं कुर्यादृते वै रोहिणीव्रतात् । तत्र निश्यपि तत्कुर्याद्वर्जयित्वा महानिशाम् ॥' इति ब्रह्माण्डपुराणाद्रात्रौ सार्धप्रहरमध्ये कार्यम् । 'महानिशा तु विज्ञेया मध्यमं मध्ययामयोः ।' तथा—'मध्यमप्रहरे रात्रेर्विज्ञेया तु महानिशा ।' इति स्मृत्यन्तरात् । कल्पतरौ मदनरत्ने चैवम् । कामधेनौ गर्गस्तु—'महानिशा तु विज्ञेया मध्यमं प्रहरद्वयम् ।' इत्याह । वृद्धशातातपस्तु—'महानिशा द्वे घटिके रात्रौ मध्यमयामयोः ।' इत्याह । वेदपाठपरमेतदित्यन्ये । महानिशायामन्यतरान्ते तृतीयदिने पारणम् । 'अपरेहनि' इति पारणोत्तरदिनपरत्वात् उभयान्तापेक्षणादित्याहुः तत्त्वं तु महानिशातोर्वागन्यतरान्तलाभे महानिशानिषेधः महानिशायामेव लाभे

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तत्रैव पारणमिति । दिवोदासस्तु–'रजनीप्रहरं यावत्प्रवृत्तिः कर्मणो मता । पारणं तावदेवेष्टं प्रमादान्न भवेद्यदि ॥' इति स्कान्दादूर्ध्वं निषेधमाह । तन्निर्मूलम् । अशक्तौ तु वह्निपुराणे–'भान्ते कुर्यात्तिथेर्वापि शस्तं भारत पारणम् ।' इति । गारुडे विष्णुधर्मे च–'जयन्त्यां पूर्वविद्धायामुपवासं समाचरेत् । तिथ्यन्ते वोत्सवान्ते वा व्रती कुर्वीत पारणम् ॥' अशक्तौ तु–'तिथ्यन्ते तिथिभान्ते वा पारणं यत्र चोदितम् । यामत्रयोर्ध्वगामिन्यां प्रातरेव हि पारणा ॥' 'स एवोत्सवान्तः' इति कालादर्शोक्तेश्चेति संक्षेपः ॥

कृष्णादिपूजाविधिः ।

अष्टम्यां विशेषो हेमाद्रौ भविष्ये–'ततोऽष्टम्यां तिलैः स्नातो नद्यादौ विमले जले । सुदेशे शोभनं कुर्याद्देवक्याः सूतिकागृहम् ॥ तन्मध्ये प्रतिमा स्थाप्या सा चाप्यष्टविधा स्मृता । काञ्चनी राजती ताम्री पैत्तली मृन्मयी तथा ॥ वार्क्षी मणिमयी चैव वर्णकैर्लिखिताथवा । सर्वलक्षणसंपूर्णा पर्यङ्के च पटावृते ॥ देवकीं तत्र चैकस्मिन्प्रदेशे सूतिकागृहे प्रस्नुतां च प्रसूतां च स्थापयेन्मञ्चकोपरि ॥ मां तत्र बालकं सुप्तं पर्यङ्के स्तनपायिनम् । यशोदां तत्र चैकस्मिन्प्रदेशे सूतिकागृहे ॥ तद्वच्च कल्पयेत्पार्थ प्रसूतवरकन्यकाम् । कश्यपो वसुदेवोयमदितिश्चैव देवकी ॥ शेषो वै बलभद्रोयं यशोदा क्षितिरन्वभूत् । नन्दः प्रजापतिर्दक्षो गर्गश्चापि चतुर्मुखः ॥ गौर्धेनुः कुञ्जरश्चैव दानवाः शस्त्रपाणयः । लेखनीयाश्च तत्रैव कालियो यमुनाह्रदे ॥ इत्येवमादि यत्किञ्चिच्छक्यते चरितं मम । लेखयित्वा प्रयत्नेन पूजयेद्भक्तितत्परः ॥ मन्त्रेणानेन कौन्तेय देवकीं पूजयेन्नरः ॥ गायद्भिः किन्नराद्यैः सततपरिवृता वेणुवीणानिनादैः श्रृङ्गारादर्शकुम्भप्रवरकृतकरैः किंकरैः सेव्यमाना । पर्यङ्के स्वास्तृते या मुदिततरमुखी पुत्रिणी सम्यगास्ते सा देवी देवमाता जयति सुतनया देवकी कान्तरूपा ॥ पादौ संवाहयन्ती श्रीर्देवक्याश्चरणान्तिके । निषण्णा पङ्कजे पूज्या नमो देव्यै श्रियै इति॥ अर्धरात्रे वसोर्धारां पातयेद्गुडसर्पिषा । नाडीवर्धापनं षष्ठी नामादेः करणं मम ॥ ततो मन्त्रेण वै दद्याच्चन्द्रायार्घ्यं समाहितः। शङ्खे तोयं समादाय सपुष्पकुशचन्दनम् ॥ जानुभ्यां

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

धरणीं गत्वा चन्द्रायार्घ्यं निवेदयेत्। क्षीरोदार्णवसम्भूत अत्रिगोत्र समुद्भव। गृहाणार्घ्यं शशाङ्केदं रोहिण्या सहितो मम ॥ ज्योत्स्नापते नमस्तुभ्यं नमस्ते ज्योतिषां पते। नमस्ते रोहिणीकान्त अर्घ्यं नः प्रतिगृह्यताम् ॥ यथा पुत्रं हरिं लब्ध्वा प्राप्ता ते निर्वृतिः परा। तामेव निर्वृतिं देहि सुपुत्रं दर्शयस्व मे ॥' इति देवक्यर्घ्यः। 'ततः पुष्पाञ्जलिं दत्वा यामे यामे प्रपूजयेत्। प्रभाते ब्राह्मणान् शक्त्या भोजयेद्भक्तिमान्नरः ॥' 'ॐ नमो वासुदेवाय गोब्राह्मणहिताय च। शान्तिरस्तु शिवं चास्तु इत्युक्त्वा मां विसर्जयेत् ॥' इदं प्रतिमासकृष्णाष्टम्यामप्युक्तं मदनरत्ने वह्निपुराणे 'प्रतिमासं च ते पूजामष्टम्यां यः करिष्यति। मम चैवाखिलान्कामान्स सम्प्राप्स्यत्यसंशयम् ॥' तथा—'अनेन विधिना यस्तु प्रतिमासं नरेश्वर। करोति वत्सरं पूर्णं यावदागमनं हरेः ॥ दद्याच्छय्यां सुसम्पूर्णां भोगी रत्नैरलंकृताम् ॥' इति जन्माष्टमीव्रतम् ॥

कुशग्रहणविधिः।

भाद्रामावास्यायां कुशग्रहणमुक्तं हेमाद्रौ हारीतेन—'मासे नभस्यमावास्या तस्यां दर्भोच्चयो मतः। अयातयामास्ते दर्भा विनियोज्याः पुनः पुनः ॥' नभाः श्रावणः। तेन दर्शान्तमासे जन्माष्टम्यनन्तरं दर्शो लभ्यते। मदनरत्ने तु—'मासे नभस्येऽमावास्या तस्यां दर्भोच्चयो मतः।' इति मरीचिवाक्यमुक्तम्। नभस्यो भाद्रपदः। तेन महालयान्तर्गतदर्शो लभ्यते। अत्र गौणमुख्यचान्द्राभ्यामेक एव दर्श इत्यन्ये ॥

हरितालिका व्रत निर्णयः।

भाद्रपदशुक्लतृतीयायां हरितालिकाव्रतम्। तत्र परा ग्राह्या। 'मुहूर्तमात्रसत्त्वेपि दिने गौरीव्रतं परे। शुद्धाधिकायामप्येवं गणयोगप्रशंसनात्' इति माधवोक्तेः। चतुर्थीयुक्तायां फलाधिक्यम्। माधवीये आपस्तम्बः—'चतुर्थीसहिता या तु सा तृतीया फलप्रदा। अवैधव्यकरा स्त्रीणां पुत्रपौत्रप्रवर्धिनी ॥' द्वितीयायोगे प्रत्यवायमाह

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स एव—'द्वितीयाशेषसंयुक्तां या करोति विमोहिता। सा वैधव्यमवाप्नोति प्रवदन्ति मनीषिणः ॥ इति। 'आद्या मधुश्रावणिका कज्जली हरितालिका। चतुर्थीमिश्रिता स्त्रीभिर्दिवा नक्ते विधीयते ॥ तृतीया नभसः शुक्ला मधुश्रावणिका स्मृता। भाद्रस्य कज्जली कृष्णा शुक्ला च हरितालिका ॥' इति दिवोदासोदाहृतवचनाच्च ॥

भाद्रशुक्लचतुर्थी वरदचतुर्थी निर्णयः ।

सा मध्याह्नव्यापिनी ग्राह्या। 'प्रातः शुक्लतिलैः स्नात्वा मध्याह्ने पूजयेन्नृप ।' इति हेमाद्रौ भविष्ये तत्रैव पूजोक्तेः। मदनरत्नेऽप्येवम्। परदिने एवांशेन साकल्येन वा मध्याह्नव्याप्त्यभावे सर्वपक्षेषु पूर्वा ग्राह्या। तथाच बृहस्पतिः—'चतुर्थी गणनाथस्य मातृविद्धा प्रशस्यते। मध्याह्नव्यापिनी चेत्स्यात्परतश्चेत्परेऽहनि ॥' इति। 'मातृविद्धा प्रशस्ता स्याच्चतुर्थी गणनायके। मध्याह्ने परतश्चेत्स्यान्नागविद्धा प्रशस्यते ॥' इति माधवीये स्मृत्यन्तराच्च। तत्र गणेशरूपं स्कान्दे—'एकदन्तं शूर्पकर्णं नागयज्ञोपवीतिनम्। पाशाङ्कुशधरं देवं ध्यायेत्सिद्धिविनायकम् ॥' इति। इयं रविभौमयोरतिप्रशस्ता। 'भाद्रशुक्लचतुर्थी या भौमेनार्केण वा युता। महती सात्र विघ्नेशमर्चित्वेष्टं लभेन्नरः ॥' इति निर्णयामृते वाराहोक्तेः।

अत्र चन्द्रदर्शनं निषिद्धम् ।

तथाचापरार्के मार्कण्डेयः—'सिंहादित्ये शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां चन्द्रदर्शनम्। मिथ्याभिदूषणं कुर्यात्तस्मात्पश्येन्न तं सदा ॥' इति। चतुर्थ्यां न पश्येदित्यन्वयः। प्रधानक्रियान्वयलाभात्। तेन चतुर्थ्यामुदितस्य पञ्चम्यां न निषेधः। गौडा अप्येवमाहुः। पराशरोपि—'कन्यादित्ये चतुर्थ्यां तु शुक्ले चन्द्रस्य दर्शनम्। मिथ्याभिदूषणं कुर्यात्तस्मात्पश्येन्न तं सदा ॥ तद्दोषशान्तये सिंहः प्रसेनमिति वै पठेत् ।' इति श्लोकस्तु विष्णुपुराणे—'सिंह प्रसेनमवधीत्सिंहो जाम्बवता हतः। सुकुमारक मा रोदीस्तव ह्येषः स्यमन्तकः ॥' इति ॥

भाद्रपदशुक्लपञ्चमी ऋषिपञ्चमी ।

सा मध्याह्नव्यापिनी ग्राह्या। 'पूजाव्रतेषु सर्वेषु मध्याह्नव्यापिनी

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तिथिः ।' इति माधवीये हारीतोक्तेः । दिनद्वये सत्त्वे हेमाद्रिमते परा । 'सिता परयुता स्यात्पञ्चमी' इति दीपिकोक्तेः माधवमते पूर्वा । 'सर्वत्र पञ्चमी पूर्वा' इत्युक्तेः । युग्मवाक्यान्निर्णयस्तु युक्तः । ऋषिपञ्चमी षष्ठीयुतैवेति दिवोदासः । 'अत्र ऋषीन्प्रतिमासु पूजयित्वाऽकृष्टभूमिजशाकेन वर्तनम् । एवं सप्तवर्षाणि कृत्वा सप्तकुम्भेषु प्रतिमासु संपूज्य परेह्नि तत्तन्मन्त्रेणाष्टोत्तरशतं तिलान्हुत्वा सप्त ब्राह्मणान्भोजयेत्' इति निर्णयामृते ।

सूर्यषष्ठी निर्णयः ।

भाद्रशुक्लषष्ठी सा सप्तमीयुतैवेति दिवोदासः । शुक्ले भाद्रपदे षष्ठ्यां स्नानं भास्करपूजनम् । प्राशनं पञ्चगव्यस्य अश्वमेधफलाधिकम् ॥' इति वचनात् । कल्पतरौ भविष्ये—'येयं भाद्रपदे मासि षष्ठी स्याद्भरतर्षभ । योऽस्यां पश्यति गाङ्गेयं दक्षिणापथवासिनम् ॥ ब्रह्महत्यादिपापैस्तु मुच्यते नात्र संशयः ॥' गाङ्गेयः स्वामिकार्तिकेयः ॥

मुक्ताभरण सप्तमी ।

भाद्रपदशुक्लसप्तम्यां मुक्ताभरणव्रतम् । तत्र सप्तमी पूर्वयुता ग्राह्या । 'षण्मुन्योः' इति युग्मवाक्यात् ।

दूर्वाष्टमी ।

भाद्रपदशुक्लाष्टमी दूर्वाष्टमी । सा पूर्वा ग्राह्या । 'श्रावणी दुर्गनवमी दूर्वा चैव हुताशनी । पूर्वविद्धा तु कर्तव्या शिवरात्रिर्बलेर्दिनम् ॥' इति हेमाद्रौ वृद्धयमोक्तेः । 'शुक्लाष्टमी तिथिर्या तु मासि भाद्रपदे भवेत् । दूर्वाष्टमी तु सा ज्ञेया नोत्तरा सा विधीयते ॥' इति पुराणसमुच्चयाच्च । यत्तु-'मुहूर्त्तं रौहिणेऽष्टम्यां पूर्वा वा यदि वा परा । दूर्वाष्टमी तु सा कार्या ज्येष्ठा मूलं च वर्जयेत् ॥' इति तत्रैव परा कार्येत्युक्तम् । तत्पूर्वदिने ज्येष्ठादियोगे द्रष्टव्यम् । 'दूर्वाष्टमी सदा त्याज्या ज्येष्ठामूलर्क्षसंयुता ।' तथा—' ऐन्द्रर्क्षे पूजिता दूर्वा हन्त्यपत्यानि नान्यथा । भर्तुरायुर्हरा मूले तस्मात्तां परिवर्जयेत् ॥' इति तत्रैव तन्निषेधात् । इदमगस्त्योदये कन्यार्के च न कार्यम् । 'शुक्ले

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भाद्रपदे मासि दूर्वासंज्ञा तथाष्टमी । सिंहार्क एव कर्तव्या न कन्यार्के कदाचन ॥ सिंहस्थे सोत्तमा सूर्येऽनुदिते मुनिसम ॥' इति मदनरत्ने स्कान्दोक्तेः । 'अगस्त्ये उदिते तात पूजयेदमृतोद्भवाम् । वैधव्यं पुत्रशोकं च दश वर्षाणि पञ्च च ॥' इति तत्रैव दोषोक्तेश्च । भाद्रपदशुक्लाष्टम्यामगस्त्योदये भाविनि सति पूर्वकृष्णाष्टम्यामेव कुर्यादिति हेमाद्रिः । दीपिकाप्येवम् । इदंच व्रतं स्त्रीणां नित्यम् । 'या न पूजयते दूर्वां मोहादिह यथाविधि । त्रीणि जन्मानि वैधव्यं लभते नात्र संशयः ॥ तस्मात्संपूजनीया सा प्रतिवर्षं वधूजनैः ॥' इति पुराणसमुच्चयात् । यदा ज्येष्ठादिकं विनाष्टमी न लभ्यते तदा तत्रैवोक्तम्—'कर्तव्या चैकभक्तेन ज्येष्ठा मूलं यदा भवेत् । दूर्वामभ्यर्चयेद्भक्त्या न वन्ध्यं दिवसं नयेत् ॥' इति ।

दूर्वापूजाविधिः ।

अत्र विधिर्मदनरत्ने भविष्ये—'शुचौ देशे प्रजातायां दूर्वायां ब्राह्मणोत्तम । स्थाप्य लिङ्गं ततो गन्धैः पुष्पैर्धूपैः समर्चयेत् ॥ दध्यक्षतैर्द्विजश्रेष्ठ अर्घ्यं दद्यात्त्रिलोचने । दूर्वाशमीभ्यां विधिवत्पूजयेच्छ्रद्धयान्वितः ॥' मन्त्रस्तु—'त्वं दूर्वेऽमृतजन्मासि वन्दितासि सुरासुरैः । सौभाग्यं संततिं देहि सर्वकार्यकरी भव ॥ यथा शाखाप्रशाखाभिर्विस्तृतासि महीतले । तथा ममापि संतानं देहि त्वमजरामरम् ॥' इति । अत्रानग्निपक्वं भक्षयेत् । 'अनग्निपक्वमश्नीयादन्नं दधि फलं तथा । अक्षारलवणं ब्रह्मन्नश्नीयान्मधुनान्वितम् ॥' इति तत्रैव भविष्योक्तेः । 'भाद्रपदेऽधिमासे सति निर्णयदीपे स्कान्दे—'अधिमासे तु संप्राप्ते नभस्य उदये मुनेः । अर्वाग्दूर्वाव्रतं कार्यं परतो नैव कुत्रचित् ॥'

ज्येष्ठाव्रत विधिः ।

अत्रैव ज्येष्ठापूजोक्ता माधवीये स्कान्दे—'मासि भाद्रपदे शुक्लपक्षे ज्येष्ठर्क्षसंयुता । रात्रिर्यस्मिर्दिने कुर्याज्ज्येष्ठायाः परिपूजनम् ॥' इति । इयं ज्येष्ठायोगवशेन पूर्वा परा वा ग्राह्या । दिनद्वययोगे परा । पूर्वेह्नि रात्रियोगे पूर्वैव । 'नवम्या सह कार्या स्यादष्टमी

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नात्र संशयः। मासि भाद्रपदे शुक्लपक्षे ज्येष्ठर्क्षसंयुता॥ रात्रिर्यस्मिन्दिने कुर्याज्ज्येष्ठायाः परिपूजनं।' इति तत्रैवोक्तेः। अस्यापवादः–'यस्मिन्दिने भवेज्ज्येष्ठा मध्याह्नादूर्ध्वमप्यणुः। तस्मिन्हविष्यं पूजा च न्यूना चेत्पूर्ववासरे॥' इति। इदं केवलतिथौ नक्षत्रे चोक्तम्। तत्राद्यं केवलतिथौ कार्यम्। अन्त्यं केवलर्क्षे। तदुक्तं मात्स्ये—'प्रत्याब्दिकं तिथावुक्तं यज्ज्येष्ठादैवतव्रतम्। प्रतिज्येष्ठाव्रतं यच्च विहितं केवलोडुनि॥ तिथावेवाचरेदाद्यं द्वितीयं केवलर्क्षतः॥' इति अतएव मदनरत्ने भविष्ये नक्षत्रमात्रे उक्तम्—'मासि भाद्रपदे पक्षे शुक्ले ज्येष्ठा यदा भवेत्। रात्रौ जागरणं कृत्वा एभिर्मन्त्रैश्च पूजयेत्॥' इति। 'दक्षिणात्यास्त्वृक्ष एव कुर्वन्ति।' हेमाद्रौ स्कान्देपि–'मासि भाद्रपदे शुक्लपक्षे ज्येष्ठर्क्षसंयुते। यस्मिन्कस्मिन्दिने कुर्याज्ज्येष्ठायाः परिपूजनम्॥' इति। तथा–'मैत्रेणावाहयेद्देवीं ज्येष्ठायां तु प्रपूजयेत्। मूले विसर्जयेद्देवीं त्रिदिनं व्रतमुत्तमम्॥' इति। मन्त्रस्तु–'एह्येहि त्वं महाभागे सुरासुरनमस्कृते। ज्येष्ठे त्वं सर्वदेवानां मत्समीपगताभव॥' इत्यावाह्य 'तामग्निवर्णाम्' इति संपूज्य 'ज्येष्ठायै ते नमस्तुभ्यं श्रेष्ठायै ते नमो नमः। शर्वायै ते नमस्तुभ्यं शांकर्यै ते नमो नमः॥ ज्येष्ठे श्रेष्ठे तपोनिष्ठे ब्रह्मिष्ठे सत्यवादिनि। एह्येहि त्वं महाभागे अर्घ्यं गृह्ण सरस्वति॥' इत्यर्घ्यः॥

ज्येष्ठ शुक्ल द्वादश्यां पारणा निर्णयः।

भाद्रपदशुक्लद्वादश्यां श्रवणयोगरहितायां पारणं कुर्यात्। 'आभाकासितपक्षेषु' इति दिवोदासोदाहृतवचनात्। 'उपोष्यैकादशीं मोहात्पारणं श्रवणे यदि। करोति हन्ति तत्पुण्यं द्वादशद्वादशीभवम्॥' इति तत्रैव स्कान्दाच्च। अस्य तत्रैव प्रतिप्रसवः। मार्कण्डेयः–'विशेषेण महीपाल श्रवणं वर्धते यदि। तिथिक्षये न भोक्तव्यं द्वादशीं लङ्घयेन्नहि॥' इति। केचित्तु–'यदा त्वपरिहार्यो योगस्तदा श्रवणनक्षत्रे त्रेधाविभक्ते मध्यमविंशतिघटिकायोगं त्यक्त्वा पारणं कार्यम्।' तदुक्तं विष्णुधर्मे–'श्रुतेश्च मध्ये परिवर्तमेति सुप्तिप्रबोधपरिवर्तनमेव वर्ज्यम्।' इति। केचिच्चतुर्धा विभज्य मध्यपादद्वयं वर्ज्यमाहुः। अत्र मूलं चिन्त्यम्॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विष्णुपरिवर्तनोत्सवः ।

अत्रैव विष्णुपरिवर्तनोत्सवं कुर्यात् । संध्यायां विष्णुं संपूज्य प्रार्थयेत्। मन्त्रस्तु तिथितत्त्वे उक्तः-'ॐ वासुदेव जगन्नाथ प्राप्तेयं द्वादशी तव । पार्श्वेन परिवर्तस्व सुखं स्वपिहि माधव ॥' इति ।

शक्रध्वजोत्थापनम् ।

अत्रैव शक्रध्वजोत्थापनमुक्तमपरार्के गर्गेण-'द्वादश्यां तु सिते पक्षे मासि प्रौष्ठपदे तथा । शक्रमुत्थापयेद्राजा विश्वश्रवणवासवे ॥'

श्रवणद्वादशी निर्णयः ।

इयमेव श्रवणद्वादशी । तत्रैकादश्यां द्वादशीश्रवणयोगे सैवोपोष्या । 'एकादशी द्वादशी च वैष्णव्यमपि तत्र चेत् । तद्विष्णुश्रृङ्खलं नाम विष्णुसायुज्यकृद्भवेत् ॥' इति विष्णुधर्मोक्तेः । नारदीयेपि-'संस्पृश्यैकादशीं राजन्द्वादशी यदि संस्पृशेत् । श्रवणं ज्योतिषां श्रेष्ठं ब्रह्महत्या व्यपोहति ॥ द्वादशी श्रवणस्पृष्टा स्पृशेदेकादशीं यदि । स एव वैष्णवो योगो विष्णुश्रृङ्खलसंज्ञितः ॥' इति हेमाद्रौ मात्स्योक्तेश्च । दिनद्वये द्वादशीश्रवणयोगेपि पूर्वा । निर्णयामृते त्वस्य पूर्वार्धमन्यथा पठितम्—'द्वादशी श्रवणर्क्षं च स्पृशेदेकादशीं यदि ।' इति । तेन हेमाद्रिमते एकादश्याः श्रवणयोगाभावेपि तद्युक्तद्वादशीयोगमात्रेण विष्णुश्रृङ्खलं भवति । निर्णयामृतमते तु–'श्रवणस्यैकादशीद्वादशीभ्यां योग एव विष्णुश्रृङ्खलं नान्यथेति । यदा निशीथानन्तरं सूर्योदयावधि द्विकलामात्रमपि श्रवणर्क्षं भवति तदापि पूर्वैव ।' तदुक्तं तत्रैव नारदीये इमां प्रकृत्य-'तिथिनक्षत्रयोर्योगो योगश्चैव नराधिप । द्विकलो यदि लभ्येत स ज्ञेयो ह्यष्टयामिकः ॥' इति । 'द्वादशी श्रवणस्पृष्टा कृत्स्ना पुण्यतमा तिथिः । नतु सा तेन संयुक्ता तावत्येव प्रशस्यते ॥' इति मदनरत्ने मात्स्याच्च । दिवोदासीये तु—'रात्रेः प्रथमपादे चेच्छ्रवणं हरिवासरे। तदा पूर्वामुपवसेत्प्रातर्भान्ते च पारणम् ॥' इत्युक्तम् । इदंतु निर्मूलत्वात्पूर्वविरोधाच्चोपेक्ष्यम् । इयं बुधवारेऽतिप्रशस्ता । 'बुधश्रवण-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

संयुक्ता सैव चेद्द्वादशी भवेत् । अत्यन्तमहती सा स्याद्दत्तं भवति चाक्षयम् ॥' इति हेमाद्रौ स्कान्दात् । यानि तु पठन्ति—'उत्तराषाढसंयुक्ता श्रोणामध्याह्नगापि वा । आसुरी सैव तारा स्याद्धन्ति पुण्यं पुराकृतत् ॥ उदयव्यापिनी ग्राह्या श्रोणा द्वादशिकायुता । विश्वर्क्षसंयुता सा च नैवोपोष्या शुभेप्सुभिः ॥' इत्यादीनि विष्णुधर्मस्कान्दभविष्यादिवचनानि तानि निर्मूलानि । यदपि स्मृत्यर्थसारे 'उदयव्यापिनी ग्राह्ये'त्युक्तम् । यच्च बृहन्नारदीये—'उदयव्यापिनी ग्राह्या श्रवणद्वादशी व्रते ।' इति, तद्यदा शुद्धाधिका द्वादशी परदिन एवोदये श्रवणयोगः, पूर्वेद्युश्च तद्भिन्ने काले योगस्तत्परम् । दिनद्वये उदययोगे पूर्वैव बहुकर्मकालव्याप्तेरित्युक्तं । मदनरत्ने—यदा त्वेकादश्येव श्रवणयुता न द्वादशी तदापि पूर्वैव । 'यदा न प्राप्यते ऋक्षं द्वादश्यां वैष्णवं क्वचित् । एकादशी तदोपोष्या पापघ्नी श्रवणान्विता ॥' इति मदनरत्ने नारदीयोक्तेः । यदा परैवर्क्षयुता तदा परा । तत्र शक्तेनोपवासद्वयं कार्यम् । 'एकादशीमुपोष्यैव द्वादशीं समुपोषयेत् । न चात्र विधिलोपः स्यादुभयोर्दैवतं हरिः ॥' इति भविष्योक्तेः । यत्तु विष्णुधर्मे—'पारणान्तं व्रतं ज्ञेयं व्रतान्ते विप्रभोजनम् । असमाप्ते व्रते पूर्वे नैव कुर्याद्व्रतान्तरम् ॥' इति तदेतद्भिन्नपरम् । अत्र गौडाः—'शृणु राजन्परं काम्यं श्रवणद्वादशीव्रतम् ।' इति स्थूलशीर्षवचनात्काम्यमेवेदम् । तेनाशक्तस्य नित्यैकादशीव्रतमेवेति मन्यन्ते । 'द्वादश्यामुपवासेन शुद्धात्मा नृप सर्वशः । चक्रवर्तित्वमतुलं संप्राप्नोत्युत्तमां श्रियम् ॥' इति गौडनिबन्धे मार्कण्डेयोक्तेश्च । दाक्षिणात्यास्तु—'एकादश्यां नरो भुक्त्वा द्वादश्यां समुपोषणात् । व्रतद्वयकृतं पुण्यं सर्वं प्राप्नोत्यसंशयम् ॥' इति वराहवामनपुराणोक्तेः श्रवणद्वादशीव्रतमेवेत्याहुः । भुक्त्वेति फलाद्याहारपरं नत्वन्नपरम् 'अन्नाश्रितानि पापानि' इति निषेधात् । 'उपवासद्वयं कर्तुं न शक्नोति नरो यदि । प्रथमेह्नि फलाहारी निराहारो परेहनि ॥' इति दिवोदासीये भविष्योक्तेश्च । अशक्तौ तु गृहीतैकादशीव्रतो यस्तं प्रत्युक्तं मात्स्ये—'द्वादश्यां शुक्लपक्षे तु

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नक्षत्रं श्रवणं यदि। उपोष्यैकादशीं तत्र द्वादश्यां पूजयेद्धरिम् ॥' इति पूजयेन्न तूपवसेदित्यर्थः । अगृहीतैकादशीव्रतश्चेदेकादश्यां भुक्त्वा द्वादश्यामुपवसेत्। 'एवमेकादशीं भुक्त्वा द्वादशीं समुपोषयेत् । पूर्ववासरजं पुण्यं सर्वं प्राप्नोत्यसंशयम् ॥' इति नारदीयोक्तेः ।

पारणं तूभयान्तेऽन्यतरान्ते वा कुर्यात् । 'तिथिनक्षत्रनियमे तिथिभान्ते च पारणम्।' इति स्कान्दात्। तिथिनक्षत्रसंयोगे उपवासो यदा भवेत्। पारणं तु न कर्तव्यं यावन्नैकस्य संशय ॥' इति नारदीयादिति हेमाद्रिः। यद्यप्यत्र नक्षत्रमात्रान्तेपि पारणं प्रतिभाति, तथापि तिथिमात्रान्ते ज्ञेयम् , न त्वृक्षान्ते। तिथिमध्येपि-'याः काश्चित्तिथयः प्रोक्ताः पुण्या नक्षत्रयोगतः। ऋक्षान्ते पारणं कुर्याद्विना श्रवणरोहिणीम् ॥' इति विष्णुधर्मे श्रवणान्तमात्रे पारणनिषेधात्। रोहिण्यां तु-'भान्ते कुर्यात्तिथेर्वापि' इति वह्निपुराणात् तदन्तेप्यस्तु, न त्वत्रैवमस्तीति न ऋक्षान्तोऽनुकल्प इति मदनरत्ने। असंभवे तु 'तिथ्यन्ते तिथिभान्ते वा पारणं यत्र चोदितम् । यामत्रयोर्ध्वगामिन्यां प्रातरेव हि पारणा ॥' इति ज्ञेयम् । यत्तु मदनरत्ने-'द्वादशी वृद्धौ श्रवण वृद्धौ वा श्रवणान्त एव पारणं कुर्यात्।' 'पारणं तिथिवृद्धौ तु द्वादश्यामुडुसंक्षयात्। वृद्धौ कुर्यात्त्रयोदश्यां तत्र दोषो न विद्यते ॥' इति वह्निपुराणदित्युक्तम् । तत्प्रकरणादेतस्यामेव श्रवणयुक्तैकादश्यां विहितविजयैकादशीव्रतपरं नतु श्रवणद्वादशीपरमिति मदनरत्ने। गौडास्तु श्रवणद्वादशीपरमाहुः ।

श्रवणद्वादशीविधिः ।

अत्र विधिर्मदनरत्ने विष्णुधर्मे-'तस्मिन्दिने तथा स्नानं यत्र क्वचन संगमे ।' तथा-'दध्योदनयुतं तस्यां जलपूर्णं घटं द्विजे। वस्त्रसंवेष्टितं दत्वा छत्रोपानहमेव च॥ न दुर्गतिमवाप्नोति गतिमग्र्यां च विन्दति ॥' मन्त्रस्तु भविष्ये-घटे जनार्दनपूजामभिधाय-'नमो नमस्ते गोविन्द बुधश्रवणसंज्ञक। अघौघसंक्षयं कृत्वा सर्वसौख्यप्रदो भव ॥ प्रीयतां देवदेवेशो मम संशयनाशनः ॥' इति ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वामनद्वादशीव्रतविधिः ।

वामनावतारनिमित्तोपवासस्तु व्रतहेमाद्रौ भविष्ये–‘ द्वादश्यास्ते विधिः प्रोक्तः श्रवणेन युधिष्ठिर। सर्वपापप्रशमनः सर्वसौख्यप्रदायकः ॥ एकादशी यदा सा स्याच्छ्रवणेन समन्विता। विजया सा तिथिः प्रोक्ता भक्तानां विजयप्रदा ॥ ’ इत्युपक्रम्य–‘ अथ काले बहुतिथे गते सा गुर्विणी भवेत्। सुषुवे नवमे मासि पुत्रं सा वामनं हरिम् ॥ ’ इत्युक्त्वा—‘ एतत्सर्वं समभवदेकादश्यां युधिष्ठिर। तेनेष्टा देवदेवस्य सर्वथा विजया तिथिः ॥ एषा व्युष्टिः समाख्याता एकादश्यां मया तव। पूर्वमेव समाख्याता द्वादशी श्रवणान्विता ॥’ इत्युपसंहारादेकादश्यामेव । व्युष्टिः फलम् । भागवतेऽष्टमस्कन्धे तु द्वादश्यां वामनोत्पत्तिरुक्ता—‘श्रोणायां श्रवणद्वादश्यां मुहूर्तेऽभिजिति प्रभुः। ग्रहनक्षत्रताराद्याश्चक्रुस्तज्जन्म दक्षिणम् ॥ द्वादश्यां सविताऽतिष्ठन्मध्यंदिनगतो नृप। विजया नाम सा प्रोक्ता यस्यां जन्म विदुर्हरेः ॥ ’ श्रोणायां चन्द्रे, अभिजिच्छ्रवणप्रथमांशः। गौडा अप्येवम्। अत्र कल्पभेदाद्व्यवस्था।

वामनपूजादि ।

तद्विधिश्च हेमाद्रौ वह्निपुराणे–‘ नदीनां संगमे स्नायादर्चयेदत्र वामनम्। सौवर्णवस्त्रसंयुक्तं द्वादशाङ्गुलमुच्छ्रितम् ॥ ’ ततो विधिवत्सम्पूज्य—‘ हिरण्मयेन पात्रेण दद्यादर्घ्यं प्रयत्नतः। नमस्ते पद्मनाभाय नमस्ते जलशायिने ॥ तुभ्यमर्घ्यं प्रयच्छामि बालवामनरूपिणे ॥ नमः कमलकिञ्जल्कपीतनिर्मलवाससे। महाहरिवपुस्कन्धधृतस्कन्धाय चक्रिणे ॥ नमः शार्ङ्गसीरबाणपाणये वामनाय च। यज्ञभुक्फलदात्रे च वामनाय नमो नमः ॥ देवेश्वराय देवाय देवसम्भूतिकारिणे। प्रभवे सर्वदेवानां वामनाय नमो नमः ॥ एवं सम्पूजयित्वा तं द्वादश्यामुदये रवेः। शृङ्गारसहितं तं तु ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥ वामनः प्रतिगृह्णाति वामनोहं ददामि ते। वामनं सर्वतोभद्रं द्विजाय प्रतिपादये ॥’ इति। अनन्तभट्टोप्याह–‘ श्रवणद्वादश्यां जनार्दननामा विष्णुः पूज्यते। श्रवणैकादश्यां वामनावतारः ’ इति। श्रवणयुतशुद्धैकादश्यलाभे तु दशमीविद्धापि श्रवणर्क्षयुता कार्या। ‘दशम्यैकादशी यत्र सा नोपोष्या भवेत्तिथिः। श्रवणेन तु संयुक्ता सा चेत्स्यात्सर्व-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कामदा ॥' इति वह्निपुराणादित्युक्तं मदनरत्ने। पूजा च मध्याह्ने कार्या। 'अह्नो मध्ये वामनो रामरामौ' इति पूर्वोक्तवचनात् ॥

दुग्धव्रत विधिः ।

अत्रैव दुग्धव्रतं सङ्कल्पयेत्। तदुक्तम्—'दुग्धमाश्वयुजे मासि' इति। अत्रेदं चिन्त्यते—दुग्धव्रते पायसादि वर्ज्यं न वेति। नेति केचित्। नहि प्रकृतिवर्जने विकारवर्जनं युक्तम्। दधिघृतादीनामपि वर्जनापत्तेः। न च यत्र प्रकृतिरसोपलम्भस्तद्वर्जनमिति वाच्यम्। मांसविकारस्यौष्ट्रदध्यादेश्चावर्जनापत्तेः। तस्माद्दध्यादिवत्पायसादि भक्ष्यमिति। अत्र ब्रूमः। यत्र विकारे प्रकृतिरसोपलम्भस्तत्प्रत्यभिज्ञा वा तत्र विकारस्यापि निषेधः। अस्ति च मांसविकारे मांसप्रत्यभिज्ञा मांसत्वानपायात्। यत्तु—औष्ट्रदध्यादेरनिषेधापत्तिरिति तन्न। औष्ट्रमिति विकारतद्धितेन निषेधात्। तथाच विज्ञानेश्वरः—'औष्ट्रमैकशफं स्त्रैणमारण्यकमथाविकम्।' इत्यत्र 'औष्ट्रमिति विकारतद्धिताच्छकृन्मूत्रादीनामपि निषेधः' इत्याह। नन्वेवं 'सन्धिन्यनिर्दशावत्सागोपयः परिवर्जयेत्।' इति संधिन्यादिक्षीरनिषेधेपि दध्यादिग्रहणं स्यात्। सत्यं प्राप्तम्। वचनेन परं निषेधः तदाहापरार्के शङ्खः—'क्षीराणि यान्यभक्ष्याणि तद्विकाराशने बुधः। सप्तरात्रं व्रतं कुर्यात्प्रयत्नेन समाहितः॥' इति। व्रतं गोमूत्रयावकम्। तस्मात्पायसे दुग्धरसोपलम्भाद्वर्जनम्। अत एवामिक्षायां दधिसत्त्वेपि माधुर्योपलम्भात्पयोरूपत्वमुक्तं मीमांसकैः। तदुक्तम्—'पय एव घनीभूतमामिक्षेत्यभिधीयते' इति। 'दध्यादिषु तु तदभावादवर्जनम्' इति। एवं दध्यादिव्रते न तक्रादीनां निषेधः। उक्तोभयहेत्वभावादिति केचित्। पूर्वोक्तशङ्खवचनात्सर्वविकारनिषेध इति युक्तं प्रतीमः॥ इति दुग्धव्रतम्।

अनन्तव्रत विधिः ।

भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यामनन्तव्रतम्। तत्र त्रिमूहूर्ताप्यौदयिकी ग्राह्येति माधवः। उदुक्तम्— 'उदये त्रिमुहूर्तापि ग्राह्यानन्तव्रते तिथिः।' इति। 'मध्याह्ने भोज्यवेलायाम्' इति कथायां श्रवणादुपरि हि देवेभ्यो धारयतीतिवद्विधिकल्पनात् 'पूजाव्रतेषु सर्वेषु

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मध्याह्नव्यापिनी तिथिः' माधवीये वचनात् मध्याह्नव्यापिनी ग्राह्येति तु दिवोदासः। प्रतापमार्तण्डेऽप्येवम्। इदमेव च युक्तम्। निर्णयामृते तु घटिकामात्राप्यौदयिकीत्युक्तम्। 'तथा भाद्रपदस्यान्ते चतुर्दश्यां द्विजोत्तम। पौर्णमास्याः समायोगे व्रतं चानन्तकं चरेत्॥' इति भविष्योक्तेः। 'मुहूर्तमपि चेद्भाद्रे पूर्णिमायां चतुर्दशी। संपूर्णां तां विदुस्तस्यां पूजयेद्विष्णुमव्ययम्॥' इति स्कान्दाच्चेति। अत्र मूलं चिन्त्यम्। द्व्यहे प्यौदयिकत्वे पूर्णत्वात्पूर्वैति युक्तम्। तत्त्वं तु विध्यर्थवादयोर्भिन्नार्थत्वे एकवाक्यतायोगात् संदिग्धेष्वेकवाक्यत्वादिति न्यायेन पूर्वा परा वा मध्याह्नव्यापिन्येव मुख्या। माधवस्तु सामान्यवाक्यान्निर्णयं कुर्वन् भ्रान्त एव। अनन्तव्रतस्य पुराणान्तरेष्वभावान्निबन्धान्तरेष्वभावाच्च वचनं निर्मूलमेवेति॥

अथागस्त्यार्घ्यः।

तत्कालो व्रतहेमाद्रौ भविष्ये—'कन्यायामागते सूर्ये अर्वाग्वै सप्तमे दिने। कन्यायां समनुप्राप्ते ह्यर्घकालो निवर्तते॥' तेन उदयोत्तरमपि सप्तदिनमध्ये इत्यर्थः। यत्पाद्मे—'आ सप्तरात्रादुदयाद्यमस्य दातव्यमेतत्सकलं नरेण। यावत्समाः सप्तदशाथ वा स्युरथोर्ध्वमप्यत्र वदन्ति केचित्॥' यमस्यागस्त्यस्य। उदयकालश्च दिवोदासीये उक्तः—'उदेति याम्यां हरिसंक्रमाद्रवेरेकाधिके विंशतिमे ह्यगस्त्यः। स सप्तमेऽस्तं वृषसंक्रमाच्च प्रयाति गर्गादिभिरभ्यभाणि॥'

अगस्तिपूजा।

अत्र विधिर्विष्णुरहस्ये—'काशपुष्पमयीं रम्यां कृत्वा मूर्तिं तु वारुणेः। प्रदोषे विन्यसेत्तां तु पूर्णकुम्भे स्वलंकृताम्॥ कुम्भस्थां पूजयेत्तां तु पुष्पधूपविलेपनैः। दध्यक्षतबलिं दद्याद्रात्रौ कुर्यात्प्रजागरम्॥' पूजा च वक्ष्यमाणार्घ्यमन्त्रेण कार्या—'प्रभाते तां समादाय यायात्पुण्यं जलाशयम्। निशावसाने तां पश्यन् जलान्ते प्रतिमां मुनेः॥ अर्घ्यं दद्यादगस्त्याय भक्त्या सम्यगुपोषितः॥' मात्स्ये तु—'अङ्गुष्ठमात्रं पुरुषं तथैव सौवर्णमत्यायतबाहुदण्डम्।'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पूर्वं काशमयीत्वमशक्तौ—'चतुर्भुजं कुम्भमुखे निधाय धान्यानि सप्ताङ्कुरसंयुतानि । सकाशपुष्पाक्षतशुक्तियुक्तमन्त्रेण दद्याद्द्विजपुङ्गवाय ॥ धेनुं बहुक्षीरवतीं च दद्यात्सवस्त्रघण्टाभरणां द्विजाय ॥' भविष्ये–'विरूढैः सप्तधान्यैश्च वंशपात्रनिधापितैः । सौवर्णरूप्यपात्रेण ताम्रवंशमयेन वा । मूर्ध्नि स्थितेन नम्रेण जानुभ्यां धरणीं गतः ॥' विष्णुरहस्ये–'अगस्त्यः [1]खनमानेति पठन्मन्त्रमिमं मुनेः । अर्घ्यं दद्यादगस्त्याय शूद्रे मन्त्रविधिस्त्वयम् ॥ काशपुष्पप्रतीकाश वह्निमारुतसंभव । मित्रावरुणयोः पुत्र कुम्भयोने नमोस्तु ते ॥ विन्ध्यवृद्धिक्षयकर मेघतोयविषापह । रत्नवल्लभ देवेश लङ्कावास नमोस्तु ते ॥ वातापी भक्षितो येन समुद्रः शोषितः पुरा । लोपामुद्रापतिः श्रीमान्योऽसौ तस्मै नमो नमः । येनोदितेन पापानि विलयं यान्ति व्याधयः । तस्मै नमोऽस्त्वगस्त्याय सशिष्याय च पुत्रिणे ॥ अगस्त्यः खनमानेति विप्रोऽर्घ्यं विनिवेदयेत् । राजपुत्रि महाभागे ऋषिपत्नि वरानने ॥ लोपामुद्रे नमस्तुभ्यमर्घ्यं मे प्रतिगृह्यताम् ॥ दत्वैवमर्घ्यं कौरव्य प्रणिपत्य विसर्जयेत् । अर्चितस्त्वं यथाशक्त्या नमोऽगस्त्य महर्षये ॥ ऐहिकामुष्मिकीं दत्वा कार्यसिद्धिं व्रजस्व मे । विसर्जयित्वागस्त्यं तं विप्राय प्रतिपादयेत् ॥ अगस्त्यो मे मनस्थोऽस्तु अगस्त्योऽस्मिन्घटे स्थितः । अगस्त्यो द्विजरूपेण प्रतिगृह्णातु सत्कृतः ॥' दानमन्त्रः—अगस्त्यः सप्तजन्माघं नाशयत्वावयोरयम् । अतुलं विमलं सौख्यं प्रयच्छ त्वं महामुने ॥' प्रतिग्रहमन्त्रः विष्णुरहस्ये – 'त्यजेदगस्त्यमुद्दिश्य धान्यमेकं फलं रसम् । होमं कृत्वा ततः पश्चाद्वर्जयेन्मानवः फलम् ॥' होमश्चार्घ्यमन्त्रेणाज्येन । भविष्ये–'दत्वार्घ्यं सप्तवर्षाणि क्रमेणानेन पाण्डव । ब्राह्मणः

१—अयं मन्त्रो ऋग्वेदसंहितायां द्वितीयाष्टके चतुर्थाध्याये । यथा—"अगस्त्यः खनमानः खनित्रैः प्रजामपत्यं बलमिच्छमानः । उभौ वर्णावृषिरुग्रः पुपोष सत्या देवेष्वाशिषो जगाम ॥" इति। अस्य व्याख्या च श्रीमत्सायणाचार्यकृता—'अयमगस्त्यो मद्गुरुः खनित्रैः फलस्योत्पादसाधनैः यज्ञस्तोत्रादिभिः खनमानः फलमभिमतमुत्पादयन्, प्रजां प्रकर्षेण पुनः पुनर्जायमानमपत्यं कुलस्यापतनसाधनं पुत्रादिकं बलं चेच्छमानः सन्, यद्वा प्रजां भृत्यादिरूपां चेच्छन् ऋषिः अतीन्द्रियद्रष्टा महानुभावः उग्रः उद्गूर्णः संसारे संचरन्नप्यपापः सन्नुभौ वर्णौ वर्णनीयाकारौ कामं च तपश्च पुपोष । सत्या आशिषो देवेषु देवेभ्यो जगाम प्राप्तवान् । यतोऽयं महानुभावस्तस्मादस्मान् पातीत्यर्थः । इति ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्याच्चतुर्वेदः क्षत्रियः पृथिवीपतिः ॥ वैश्ये च धान्यनिष्पत्तिः शूद्रश्च धनवान्भवेत् । यावदायुश्च यः कुर्यात्स परं ब्रह्म गच्छति ॥' इत्यगस्त्यार्घ्यः ॥

नान्दीमुखश्राद्धम् ।

भाद्रपौर्णमास्यां प्रपितामहात्परांस्त्रीनुद्दिश्य श्राद्धं कार्यम् । तदुक्तं हेमाद्रौ ब्राह्ममार्कण्डेययोः—'नान्दीमुखानां प्रत्यब्दं कन्याराशिगते रवौ । पौर्णमास्यां तु कर्तव्यं वराहवचनं यथा ॥' इति । नान्दीमुखत्वं चोक्तं ब्राह्मे—' पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः । त्रयो ह्यश्रुमुखा ह्येते पितरः परिकीर्तिताः ॥ तेभ्यः पूर्वतरा ये च प्रजावन्तः सुखैधिताः । ते तु नान्दीमुखा नान्दी समृद्धिरिति कथ्यते ॥' एतच्च प्रत्यब्दमित्युक्तेः पक्षश्राद्धपक्षे सकृन्महालयपक्षे चावश्यकमिति प्रयोगपारिजाते । अत्र मातामहा अपि कार्याः । 'पितरो यत्र पूज्यन्ते तत्र मातामहा अपि ।' इति धौम्योक्तेः पितृशब्दस्य च जनकपरत्वे बहुवचनविरोधेन पितृभावापन्नपरत्वात् । वार्षिके तु वचनान्निवृत्तिः । न च जीवत्पितृकस्यान्वष्टकायां मातृश्राद्धे तदापत्तिः इष्टापत्तेः । अतएव स उक्तश्राद्धेषु स्वमातृमातामहयोर्दद्यादिति मदनरत्नकालादर्शौ । एतज्जीवत्पितृकश्राद्धे वक्ष्यामः । केचित्तु । अजहल्लक्षणया पित्रादयो यत्र तत्र मातामहास्तेनात्र नेत्याहुः । नचात्र नाम्ना नान्दीश्राद्धधर्मातिदेशः । वैष्णवादिशब्दवद्देवतापरस्य कर्मनामत्वाभावात् । नापि नान्दीमुखत्वं पितृविशेषणं पारिभाषिकत्वादिति दिक् । तथा निर्णयदीपे गार्ग्यः—'पौर्णमासीषु सर्वासु निषिद्धं पिण्डपातनम् । वर्जयित्वा प्रौष्ठपदीं यथा दर्शस्तथैव सा ॥' इति ॥

इति श्रीमीमांसकरामकृष्णभट्टात्मजभट्टकमलाकरकृते निर्णयसिन्धौ भाद्रपदमासः समाप्तः ॥

अथाश्विनमासः ।

कन्यासंक्रमे पराः षोडश घटिकाः पुण्याः । शेषं प्राग्वत् ॥

अथ महालयः ।

तत्र पृथिवीचन्द्रोदये वृद्धमनुः—' आषाढीमवधिं कृत्वा पञ्चमं पक्षमाश्रिताः । काङ्क्षन्ति पितरः क्लिष्टा अन्नमप्यन्वहं जलम् ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कन्यायोगे पुण्यतमत्वमाह शाट्यायनिः—'कन्यास्थार्कान्वितः पक्षः सोऽत्यन्तं पुण्यमुच्यते ।' इति । अत्र विशेषमाह वृद्धमनुः—'मध्ये वा यदि वाप्यन्ते यत्र कन्यां व्रजेद्रविः । स पक्षः सकलः श्रेष्ठः श्राद्धषोडशकं प्रति ॥' तथा ब्रह्माण्डमार्कण्डेययोः—'कन्यागते सवितरि दिनानि दश पञ्च च । पार्वणेनेह विधिना श्राद्धं तत्र विधीयते ॥' तथा तत्रैव षोडशदिनान्युक्तानि—'कन्यागते सवितरि यान्यहानि तु षोडश । ऋतुभिस्तानि तुल्यानि देवो नारायणोऽब्रवीत् ॥'

षोडशमहालय निर्णयः ।

अत्र हेमाद्रिः षोडशत्वं त्रेधा व्याचख्यौ । तिथिवृद्ध्या पक्षस्य षोडशदिनात्मकत्वे श्राद्धवृद्ध्यर्थमेकः पक्षः, भाद्रपदपूर्णिमया सहेति द्वितीयःपक्षः, आश्विनशुक्लप्रतिपदा सहेति तृतीयःपक्षः । अन्त्य एव [तृतीयपक्षः] तु युक्तः । 'अहःषोडशकं यत्तु शुक्लप्रतिपदा सह । चन्द्रक्षयाविशेणषे सापि दर्शात्मिका स्मृता ॥' इति देवलोक्तेः । तत्र पञ्च पक्षाः । तदुक्तं हेमाद्रौ ब्राह्मे—'आश्वयुक्कृष्णपक्षे तु श्राद्धं कार्यं दिने दिने । त्रिभागहीनं पक्षं वा त्रिभागं त्वर्धमेव वा ॥' दिने दिने इति पक्षपर्यन्तत्वमुक्तम् । त्रिभागहीनमिति पञ्चम्यादिपक्षः, त्रिभागमिति दशम्यादिपक्षः । त्रिभागहीनमिति चतुर्दशीसहितप्रतिपदादिचतुष्टयवर्जनाभिप्रायेणेति कल्पतरुः । अत्र दिनपदं तिथिपरं वीप्सया तत्पक्षीयतिथित्वं श्राद्धव्याप्यतावच्छेदकम् । तेन पञ्चदशतिथिव्यापि श्राद्धं सिध्यति । तेन चतुर्दशीनिषेधोऽन्यकृष्णपक्षपर इति गौडाः । तन्न । 'श्राद्धं शस्त्रहतस्यैव चतुर्दश्यां महालये ।' इत्यादिविरोधात् । यच्च कश्चित्पूरणप्रत्ययलोपेन तृतीयभागहीनं षष्ठ्यादिपक्षं तृतीयभागमेकादश्यादि तदर्धं त्रयोदश्यादि, उत्तरोत्तरं लघुकालोक्तेरिति । तन्न । गौतमादिवचनेन मूलकल्पनालाघवात् पक्षमित्यनन्वयापत्तेश्च । 'पञ्चम्यूर्ध्वं च तत्रापि दशम्यूर्ध्वं ततोप्यति ।' इति विष्णुधर्मोक्तेः । षष्ठ्याद्येकादश्यादिपक्षावपि ज्ञेयाविति तत्त्वम् । कालादर्शेपि—'पक्षाद्यादि च दर्शान्तं पञ्चम्यादि दिगादि च । अष्टम्यादि यथाशक्ति कुर्यादापरपक्षिकम् ॥ पक्षादिः प्रतिपत्, दिक् दशमी दर्शान्तमिति सर्वत्र । गौतमोपि—'अथापरपक्षे श्राद्धं पितृभ्यो दद्यात् पञ्चम्यादि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दर्शान्तमष्टम्यादि दशम्यादि सर्वस्मिंश्च' इति। तथैकस्मिन्नपि दिने श्राद्धमुक्तं हेमाद्रौ नागरखण्डे—'आषाढ्याः पञ्चमे पक्षे कन्यासंस्थे दिवाकरे। यो वै श्राद्धं नरः कुर्यादेकस्मिन्नपि वासरे॥ तस्य संवत्सरं यावत्संतृप्ताः पितरो ध्रुवम्॥' इति। अत्र शक्ताशक्तपरा व्यवस्थेति प्राञ्चः। तन्न। तद्वाचकपदाभावात् न त्रयोदश्यादिपक्ष एव नित्यः। तत्रैव निन्दाश्रुतेः। ब्राह्मे—'एवकारेण तस्यैव पञ्चमपक्षयोगव्यवच्छेदोक्तेः' इति गौडाः। तन्न। एकस्मिन्नपीति विरोधात्। तेन फलभूमार्थिनान्यानि कार्याणीति तत्त्वम्। तत्र चतुर्दशीश्राद्धाभावे पञ्चम्यादिदशम्यादिपक्षौ तत्सत्त्वे षष्ठ्याद्येकादश्यादिकौ। एवं चतुर्दश्यभावे द्वादश्यादिः। तत्सत्त्वे त्रयोदश्यादिरिति व्यवस्था॥

महालये विधवायाः पार्वणचतुष्टयम्।

विधवायास्तु विशेषः स्मृतिसंग्रहे—'चत्वारः पार्वणाः प्रोक्ता विधवायाः सदैव हि। स्वभर्तृश्वशुरादीनां मातापित्रोस्तथैव च॥ ततो मातामहानां च श्राद्धदानमुपक्रमेत्।' तथा—'श्वश्रूणां च विशेषेण मातामह्यास्तथैव च।' इति। अशक्तौ तु स्मृतिरत्नावल्याम्—'स्वभर्तृप्रभृति त्रिभ्यः स्वपितृभ्यस्तथैव च। विधवा कारयेच्छ्राद्धं यथाकालमतन्द्रिता॥' विधवा स्वयं संकल्पं कृत्वान्यद्ब्राह्मणद्वारा कारयेदित्युक्तं प्रयोगपारिजाते॥

महालये वर्ज्यतिथिनक्षत्रादि।

सकृन्महालये च वर्ज्यतिथ्याद्युक्तम्। पृथ्वीचन्द्रोदयप्रयोगपारिजातादिषु वसिष्ठः—'नन्दायां भार्गवदिने चतुर्दश्यां त्रिजन्मसु। एषु श्राद्धं न कुर्वीत गृही पुत्रधनक्षयात्॥' जन्मभं तत्पूर्वोत्तरे च त्रिजन्मानि। वृद्धगार्ग्यः—'प्राजापत्ये च पौष्णे च पित्र्यर्क्षे भार्गवे तथा। यस्तु श्राद्धं प्रकुर्वीत तस्य पुत्रो विनश्यति॥' प्राजापत्यं रोहिणी, पौष्णं रेवती, पित्र्यं मघा। अन्यान्यपि प्रत्यरादीनि तत्रैव ज्ञेयानि। केचित्तु—'नन्दाश्वकामरव्यारभृग्वग्निपितृकालभे। गण्डे वैधृतिपाते च पिण्डास्त्याज्याः सुतेप्सुभिः॥' इति संग्रहात्। नन्दा प्रतिपत्षष्ठ्येकादश्यः, अश्वः सप्तमी, कामस्त्रयोदशी, आरो भौमः,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भृगुः शुक्रः, अग्निभं कृत्तिका, कालभं भरणी, अत्र पिण्डास्त्याज्या इत्याहुः । तत्र मूलं मृग्यम् । एतच्च सकृन्महालयविषयम् । 'सकृन्महालये काम्ये पुनः श्राद्धे खिलेषु च । अतीतविषये चैव सर्वमेतद्विचिन्तयेत् ॥' इति पृथिवीचन्द्रोदये नारदोक्तेः ।

एषामपवादः ।

अस्यापवादो हेमाद्रौ पृथ्वीचन्द्रोदये च—'अमापाते भरण्यां च द्वादश्यां पक्षमध्यके । तथा तिथिं च नक्षत्रं वारं च न विचारयेत् ॥' पराशरमाधवीये मदनपारिजातादिषु चैवम् । निर्णयदीपिकायां तु—'पितृमृताहे निषिद्धदिनेपि सकृन्महालयः कार्यः' इत्युक्तम् । 'आषाढ्याः पञ्चमे पक्षे कन्यासंस्थे दिवाकरे । मृताहनि पितुर्यो वै श्राद्धं दास्यति मानवः ॥ तस्य संवत्सरं यावत्संतृप्ताः पितरो ध्रुवम् ॥' इति नागरखण्डोक्तेः । 'या तिथिर्यस्य मासस्य मृताहे तु प्रवर्तते । सा तिथिः पितृपक्षे तु पूजनीया प्रयत्नतः ॥ तिथिच्छेदो न कर्तव्यो विनाशौचं यदृच्छया । पिण्डश्राद्धं च कर्तव्यं विच्छित्तिं नैव कारयेत् ॥ अशक्तः पक्षमध्ये तु करोत्येकदिने यदा । निषिद्धेऽपि दिने कुर्यात्पिण्डदानं यथाविधि ॥' इति कात्यायनोक्तेश्च । अत्र मूलं चिन्त्यम् ।

तथा पक्षश्राद्धकरणेऽपि न नन्दादिषु पिण्डनिषेध इत्याह पराशरमाधवीये कार्ष्णाजिनिः—'नभस्यस्यापरे पक्षे श्राद्धं कार्यं दिने दिने । नैव नन्दादि वर्ज्यं स्यान्नैव निन्द्या चतुर्दशी ॥' इति । अत्र श्राद्धमित्येकवचनाद्दिने दिने इति वीप्सावशाच्च सोमयागवदेकस्याभ्यासेनैकप्रयोगपरमिदम् । अतः 'प्रतिपत्प्रभृतिष्वेकां वर्जयित्वा चतुर्दशीम् ।' इति याज्ञवल्कीयं प्रयोगभेदपरं नतु पञ्चम्यादिपक्षविषयम् । 'प्रतिपत्प्रभृतिषु' इति विशिष्योक्तेः । निर्णयदीपे, पृथ्वीचन्द्रोदये, मदनपारिजाते चैवम् । अन्यकृष्णपक्षपरं याज्ञवल्कीयम् । एतत्परत्वेनैव 'निन्द्या चतुर्दशी विरोधात् ।' इति गौडाः । तन्न 'श्राद्धं शस्त्रहतस्यैव चतुर्दश्यां महालये ।' इति विरोधात् । तत्त्वं तु—'तिथिनक्षत्रवारादिनिषेधो य उदाहृतः । स श्राद्धे तन्निमित्ते स्यान्नानुषङ्गकृते ह्यसौ ॥' इति दिवोदासीये वृद्धगार्ग्योक्तेस्तन्निमित्ते

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पक्षान्तरे च ज्ञेयः । सकृन्महालये तु वचनान्निषेधः । अन्यत्र न कोपि निषेधः । कार्ष्णाजिनिस्मृतेरिति । अतो नन्दादौ सपिण्डकश्राद्धे पुत्रवतोऽप्यधिकारः । अत्रिरपि—'महालये क्षयाहे च दर्शे पुत्रस्य जन्मनि । तीर्थेपि निर्वपेत्पिण्डान् रविवारादिकेष्वपि ॥' पूर्वोक्तनन्दानिषेधस्तु मृताहातिक्रमे सकृन्महालये पौर्णमास्यादिमृतश्राद्धे तन्निमित्ते च ज्ञेयः । यत्तु स्मृत्यर्थसारे—'विवाहव्रतचूडासु वर्षमर्धं तदर्धकम् । पिण्डदानं मृदा स्नानं न कुर्यात्तिलतर्पणम् ॥' इति । तस्यात्रापवादो दिवोदासीये बृहस्पति—'तीर्थे संवत्सरे प्रेते पितृयागे महालये । पिण्डदानं प्रकुर्वीत युगादिभरणीमघे ॥ महालये गयाश्राद्धे मात्रापित्रोः क्षयेऽहनि । कृतोद्वाहोपि कुर्वीत पिण्डनिर्वपणं सदा ॥' इति निर्णयदीपे तु नन्दादिनिषेधः प्रत्यहभिन्नश्राद्धविषयः । षोडशाहव्यापिश्राद्धप्रयोगैकत्वे तु प्रत्यहं पिण्डदानं कार्यमेवेत्युक्तम् । तदयमर्थः संपन्नः—षोडशाहव्यापिश्राद्धैक्ये न पिण्डनिषेधः । मृताहे सकृन्महालयेपि तथा । प्रत्यहं श्राद्धभेदेपि व्यतीपातादौ तथा । अन्यत्र मृताहातिक्रमे महालये च पिण्डनिषेध इति ॥

संन्यासिनां महालयः ।

संन्यासिनां तु द्वादश्यां श्राद्धं कार्यम् । 'यतीनां च वनस्थानां वैष्णवानां विशेषतः । द्वादश्यां विहितं श्राद्धं कृष्णपक्षे विशेषतः ॥' पृथ्वीचन्द्रोदये संग्रहोक्तेः ॥

कालातिक्रमे वृश्चिकपर्यन्तं गौणकालः ।

अत्र पक्षे श्राद्धाकरणे गौणकालमाह हेमाद्रौ यमः—'हंसे कन्यासु वर्षास्थे शाकेनापि गृहे वसन् । पञ्चम्योरन्तरे दद्यादुभयोरपि पक्षयोः ॥' आश्विनकृष्णशुक्लपञ्चम्योर्मध्य इत्यर्थः । तत्राप्यसंभवे भविष्ये—'येयं दीपान्विता राजन्ख्याता पञ्चदशी भुवि । तस्यां दद्यान्न चेद्दत्तं पितॄणां वै महालये ॥' तत्राप्यसंभवे भारते—'यावच्च कन्यातुलयोः क्रमादास्ते दिवाकरः । शून्यं प्रेतपुरं तावद्वृश्चिकं यावदागतः ॥' ब्राह्मे—'वृश्चिके समतिक्रान्ते पितरो दैवतैः सह । निश्वस्य प्रतिगच्छन्ति शापं दत्वा सुदारुणम् ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

यत्तु जातूकर्ण्यः–'आकाङ्क्षन्ति स्म पितरः पञ्चमं पक्षमाश्रिताः। तस्मात्तत्रैव दातव्यं दत्तमन्यत्र निष्फलम् ॥' इति तत्फलातिशयहानिपरम्। 'कन्यां गच्छतु वा न वा' इति तुरीयपादे वा पाठः। तेन कन्यायोगे प्राशस्त्यमात्रम्। अतः श्राद्धविवेकोक्तं श्राद्धद्वयं हेयम्।

महालयादि श्राद्धमन्नेनैव कार्यन्नत्वामेन ।

इदं च श्राद्धमन्नेनैव कार्यं नामान्नादिना। 'मृताहं च सपिण्डं च गयाश्राद्धं महालयम्। आपन्नोपि न कुर्वीत श्राद्धमामेन कर्हिचित् ॥' इति स्मृतिदर्पणे गालवोक्तेः ॥

अथात्र देवताः ।

संग्रहे–'तातास्बात्रितयं सपत्नजननी मातामहादित्रयं सस्त्रि स्त्रीतनयादि तातजननीस्वभ्रातरस्तत्स्त्रियः। तातास्बात्मभगिन्यपत्यधवयुक् जायापिता सद्गुरुः शिष्याप्ताः पितरो महालयविधौ तीर्थे तथा तर्पणे ॥' अस्यार्थः—तातत्रयी पितृत्रयी, अम्बात्रयी च। स्मृत्यर्थसारेपि महालये मातृश्राद्धं पृथक् प्रशस्तमिति।

अनेक सापत्न मातृषु पिण्डदानम् ।

अत्र विशेषः स्मृतिदर्पणे गालवः–'अनेका मातरो यस्य श्राद्धे चापरपक्षिके। अर्घ्यदानं पृथक्कुर्यात्पिण्डमेकं तु निर्वपेत् ॥' जीवन्मातृकस्तु सापत्नमातुरेकोद्दिष्टं कुर्यान्न पार्वणम्। श्राद्धदीपकलिकायां तु पार्वणमुक्तम्। 'अन्वष्टक्यं च यन्मातुर्गयाश्राद्धं महालयम्। पितृपत्नीषु च श्राद्धं कार्यं पार्वणवद्भवेत्' इति बृहन्मनूक्तेः। सस्त्रीति मातामहानां सपत्नीकत्वेपि विभवे सति मातामहीनां पृथक्कार्यम्। 'महालये गयाश्राद्धे वृद्धौ चान्वष्टकासु च। ज्ञेयं द्वादशदैवत्यं तीर्थे प्रौष्ठे मघासु च ॥' इति निगमोक्तेः। हेमाद्रिमते त्वत्र नवदैवत्यमेव। 'महालये गयाश्राद्धे वृद्धौ चान्वष्टकासु च। नवदैवत्यमत्रेष्टं शेषं षाट्पौरुषं विदुः ॥' इति विष्णुधर्मोक्तेः। तातभ्राता पितृव्यः, जननीभ्राता मातुलः, तत्स्त्रियः पितृव्यस्त्रीमातुलानीभ्रातृजायाः। पितृष्वसृमातृष्वसृस्वभगिन्योऽपत्यभर्तृयुक्ताः। तेन सापत्यायै सधवायै इति प्रयोगो ज्ञेयः। एतासु सतीषु न तद्भ-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

त्रादेर्दानम् । द्वारलोपात् । जायापिता श्वशुरः । श्वश्रूरप्यत्रोपलक्ष्या । अत्र मूलं स्मृतिचन्द्रिकायां ज्ञेयम् । अत्र पार्वणैकोद्दिष्टव्यवस्थोक्ता हेमाद्रौ पुराणान्तरे–'उपाध्यायगुरुश्वश्रूपितृव्याचार्यमातुलाः । श्वशुरभ्रातृतत्पुत्रपुत्रर्त्विक्शिष्यपोषकाः ॥ भगिनीस्वामिदुहितृजामातृभगिनीसुताः । पितरौ पितृपत्नीनां पितुर्मातुश्च या स्वसा ॥ सखिद्रव्यदशिष्याद्यास्तीर्थे चैव महालये । एकोदिष्टविधानेन पूजनीयाः प्रयत्नतः ॥' इति । इतरेषां पित्रादीनां पार्वणमर्थसिद्धम् । अत्र क्रमान्यत्वेप्याचाराद्व्यवस्था । अशक्तौ तु पृथिवीचन्द्रोदये चतुर्विंशतिमते–'एकस्मिन्ब्राह्मणे सर्वानाचार्यादीन्प्रपूजयेत् । दश द्वादश वा पिण्डान्दद्यादकरणं न तु ॥'

एकोद्दिष्ट स्वरूपम् ।

एकोद्दिष्टस्वरूपं चाह याज्ञवल्क्यः–'एकोद्दिष्टं देवहीनमेकार्घ्यैकपवित्रम् । आवाहनाग्नौकरणरहितं त्वपसव्यवत् ॥' इति ।

अथात्र पाणिहोमः ।

अत्रैकपाको वैश्वदेवतन्त्रं पिण्डं बर्हिश्चैकमिति स्मृत्यर्थसारे उक्तम् । अत्र पाणिहोमः । पिण्डाश्चात्र द्विजान्तिक इत्याह प्रयोगपारिजाते आचार्यः–'काम्यमभ्युदयेऽष्टम्यामेकोद्दिष्टमथाष्टमम् । चतुर्ष्वेषु करे होमः पिण्डाश्चात्र द्विजान्तिके ॥' इति । पार्वणैकोद्दिश्योः समानतन्त्रत्वे तु अग्निसमीप एव । अत्र धुरिलोचनौ वैश्वदेवौ । 'अपि कन्यागते सूर्ये काम्ये च धुरिलोचनौ ।' इति हेमाद्रावादित्यपुराणात् । अत्र प्रतिदिनं भिन्नप्रयोगत्वाद्दक्षिणाभेदो वा प्रयोगैक्यादन्ते एव वा दक्षिणेति हेमाद्रौ उक्तम् ।

सन्यस्त पितृकेण जीवत्पितृकेणापि—महालयः कार्यः ।

एतच्च संन्यस्तपितृकादिना जीवत्पितृकेणापि कार्यम् । 'वृद्धौ तीर्थे च संन्यस्ते ताते च पतिते सति । येभ्य एव पिता दद्यात्तेभ्यो दद्यात्स्वयं सुतः ॥' इति कात्यायनोक्तेः । यत्तु कौण्डिन्यः–'दर्शश्राद्धं गयाश्राद्धं श्राद्धं चापरपक्षिकम् । न जीवत्पितृकः कुर्यात्तिलैस्तर्प-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

णमेव च ॥' इति, तत्संन्यस्तपित्राद्यतिरिक्तविषयम्, काम्यश्राद्ध-परं वा ।

जीवत्पितृके निषेधः ।

अत्र वहु वक्तव्यं श्रीपितृकृतजीवत्पितृकनिर्णये ज्ञेयम् । एतच्च जीवत्पितृकेण पिण्डरहितं कार्यम् । 'मुण्डनं पिण्डदानं च प्रेतकर्म च सर्वशः । न जीवत्पितृकः कुर्याद्गुर्विणीपतिरेव च ।' इति दक्षेण तस्य पिण्डनिषेधात् । अन्वष्टक्यमातृवार्षिकादौ तु वचनाद्भवतीति वक्ष्यामः । तथा छागलेयः—'पिण्डो यत्र निवर्तेत मघादिषु कथंचन । सांकल्पं तु तदा कार्यं नियमाद्ब्रह्मवादिभिः ॥' सांकल्पस्वरूपं च वक्ष्यते ॥

अत्रसकृन्महालये तर्पणनिर्णयः ।

अत्रश्राद्धाङ्ग तर्पणं पक्ष श्राद्धे पतिदिनं श्राद्धोत्तरम् । सकृन्म-हालये तु परेह्नि कार्यम् । तदुक्तं नारदीये—'पक्षश्राद्धं यदा कुर्या-त्तर्पणं तु दिने दिने । सकृन्महालये चैव परेहनि तिलोदकम् ॥' गर्गोपि—'पक्षश्राद्धे हिरण्ये च अनुव्रज्य तिलोदकम् ।' इति । तथा प्रयोगपारिजाते गर्गः—'कृष्णे भाद्रपदे मासि श्राद्धं प्रतिदिनं भवेत् । पितॄणां प्रत्यहं कार्यं निषिद्धाहेपि तर्पणम् ॥ सकृन्महालये श्वः स्यादष्टकास्वन्त एव हि ॥' इदं निषिद्धदिनेपि कार्यम् । 'तिथि-तीर्थविशेषेषु कार्यं प्रेते च सर्वदा ।' इति स्मृत्यर्थसारोक्तेः । 'तीर्थे तिथिविशेषे च गयायां प्रेतपक्षके । निषिद्धेपिदिने कुर्यात्तर्पणं तिलमिश्रितम् ॥' इति स्मृतिरत्नावल्यां वचनाच्च ॥

मलमासे महालयनिषेधः ।

एतच्च श्राद्धं मलमासे न कार्यम् । तदाह भृगुः—'वृद्धिश्राद्धं तथा सोममग्न्याधेयं महालयम् । राजाभिषेकं काम्यं च न कुर्याद्भा-नुलङ्घिते ॥' इति । हेमाद्रौ नागरखण्डे—'नभो वाथ नभस्यो वा मलमासो यदा भवेत् । सप्तमः पितृपक्षः स्यादन्यत्रैव तु पञ्चमः ॥' एतच्च पित्रोर्मरणे प्रथमाब्दे कृताकृतमिति त्रिस्थलीसेतौ भट्टाः ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

महालयाकरणाकरणेफलाफलम् ।

इदं च नित्यं काम्यं च । 'पुत्रानायुस्तथारोग्यमैश्वर्यमतुलं तथा । प्राप्नोति पञ्चमे दत्वा श्राद्धं कामान्सुपुष्कलान् ॥' इति जाबाल्युक्तेः । 'वृश्चिके समतिक्रान्ते पितरो दैवतैः सह । निश्वस्य प्रतिगच्छन्ति शापं दत्वा सुदारुणम् ॥' इति कार्ष्णाजिनिवचनाच्च । तदतिक्रमे प्रायश्चित्तमुक्तमृग्विधाने–'दु[१]रोअश्वस्य मन्त्रं च दशमासं द्विमासयोः । महालयं यदा न्यूनं तदा संपूर्णमेति तत् ॥' इति । द्विमासयोः कन्यातुलयोर्महालयश्राद्धं यदा हीनमित्यर्थः ॥

भरणीश्राद्धम् ।

अत्र भरण्यां श्राद्धमतिप्रशस्तम् । तदुक्तं पृथ्वीचन्द्रोदये मात्स्ये–'भरणी पितृपक्षे तु महती परीकीर्तिता । अस्यां श्राद्धं कृतं येन स गयाश्राद्धकृद्भवेत् ॥' पृथिवीचन्द्रोदये श्रीधरीये बृहस्पतिः–'नभस्यापरपक्षस्य द्वितीया यदि याम्यभे । तृतीया चाग्नितारा भिः सहिता प्रीतिदा पितुः ।

कपिलाषष्ठी व्रतनिर्णयः ।

एतत्पक्षे षष्ठी योगविशेषेण कपिलासंज्ञा । तदुक्तं वाराहे–'नभस्यकृष्णपक्षे तु रोहिणीपातभूसुतैः । युक्ता षष्ठी पुराणज्ञैः कपिला परिकीर्तिता ॥ व्रतोपवासनियमैर्भास्करं तत्र पूजयेत् । कपिलां य द्विजाग्र्याय दत्वा क्रतुफलं लभेत् ॥' पुराणसमुच्चये–'भाद्रे

१—स मन्त्रो ऋग्वेदसंहितायां प्रथमाष्टके चतुर्थाध्याये—'दुरो अश्वस्य दुर इन्द्र गोरसि दुरो यवस्य वसुन इनस्पतिः । शिक्षानरः प्रदिवो अकामकर्शनः सखा सखिभ्यस्तमिदं गृणीमसि ॥' इति । अस्य व्याख्या—'हे इन्द्र, त्वं अश्वस्य दुरो दाताऽसि, तथा गोः पश्वादेर्दुरो दाताऽसि, तथा यवस्य यवादेर्धान्यजातस्य दुरो दातासि । वसुनः निवासहेतोर्धनस्येनः स्वामी पतिः सर्वेषां पालयिता । शिक्षानरः शिक्षतिर्दानकर्मा । शिक्षाया दानस्य नेताऽसि प्रदिवः पुराणः प्रगता दिवो दिवसा यस्मिन् स तथोक्तः । अकामकर्शनः कामान् कर्शयति नाशयतीति कामकर्शनः न कामकर्शनः अकामकर्शनः...हविर्दत्तवतां यजमानानां कामानभिमतफलप्रदानेन पूरयतीत्यर्थः । सखिभ्यः समानख्यानेभ्य ऋत्विग्भ्यः सखा सखिवदत्यन्तं प्रियः' एवंभूतो य इन्द्रस्तं प्रति इदं स्तोत्रलक्षणं वचः गृणीमसि ब्रूमहे ।' इति श्रीमत्सायणाचार्याणाम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मास्यसिते पक्षे भानौ चैव करे स्थिते । पाते कुजे च रोहिण्यां सा षष्ठी कपिला भवेत् ॥' अत्र दर्शान्तत्वेन महालयो भाद्रपदकृष्णपक्षो ज्ञेय इत्युक्तं निर्णयामृते हेमाद्रौ च । हस्तार्कस्तु फलातिशयार्थः । 'संयोगे तु चतुर्णां वै निर्दिष्टा परमेष्ठिना ।' इति तत्रैवोक्तेः ।

अत्र विशेषो—

हेमाद्रौ स्कान्दे—'देवदारुं तथोशीरं कुङ्कुमैला मनःशिलाम् । पत्रकं पद्मकं यष्टिमधुगव्येन पेषयेत् ॥ क्षीरेणालोड्य कल्केन स्नानं कुर्यात्समन्त्रकम् ॥ आपस्त्वमसि देवेश ज्योतिषां पतिरेव च । पापं नाशय मे देव वाङ्मनः कायकर्मजम् । पञ्चगव्यकृतस्नानः पञ्चभङ्गैस्तु मार्जयेत् ।' पञ्चभङ्गैः पञ्चपल्लवैः । तथा—'रत्नैर्नानाविधैर्युक्तं सौवर्णं कारयेद्रविम् । शक्तितस्तु पलादूर्ध्वं तदर्धं कर्षतोपि वा ॥ सौवर्णमरुणं कुर्यान्नौकां चैव तथा रथम् ॥' तथा—'अल्पवित्तोपि यः कश्चित्सोपि कुर्यादिमं विधिम् ।' प्रभासखण्डे—स्थापयेदव्रणं कुम्भं चन्दनोदकपूरितम् । रक्तवस्त्रयुगच्छन्नं ताम्रपात्रेण संयुतम् ॥ रथो रौक्मपलस्यैव एकचक्रः सुचित्रतः । सौवर्णपलसंयुक्तां मूर्तिं सूर्यस्य कारयेत् ॥' ततः सूर्यं कपिलां च षोडशोपचारैः संपूज्य दद्यात् । 'दिव्यमूर्तिर्जगच्चक्षुर्द्वादशात्मा दिवाकरः । कपिलासहितो देवो मम मुक्तिं प्रयच्छतु ॥ यस्मात्त्वं कपिले पुण्या सर्वलोकस्य पावनी । प्रदत्ता सह सूर्येण मम मुक्तिप्रदा भव ॥' इति । विशेषान्तरं तत्रैव ज्ञेयमिति दिक् ॥

चन्द्रषष्ठीव्रतम् ।

इयमेव चन्द्रषष्ठी । सा चन्द्रोदयव्यापिनी ग्राह्या । उभयत्र तथात्वे पूर्वा । तदुक्तं भविष्ये—'तद्वद्भाद्रपदे मासि षष्ठ्यां पक्षे सितेतरे । चन्द्रषष्ठीव्रतं कुर्यात्पूर्ववेधः प्रशस्यते । चन्द्रोदये यदा षष्ठी पूर्वाह्णे चापरेऽहनि । चन्द्रषष्ठ्य सिते पक्षे सैवोपोष्या प्रयत्नतः ॥' इति ॥

मघावर्षश्राद्धम् ।

अष्टम्यामाश्वलायनेन मघावर्षसंज्ञं श्राद्धमुक्तम् । 'एतेन माघ्यावर्षं प्रौष्ठपद्या अपरपक्षे' इति । 'इदं सप्तम्यादिषु त्रिष्वहःसु कार्यम्' इति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नारायणवृत्तिः। हरदत्तस्तु मघायुक्तवर्षासु भवं त्रयोदशीश्राद्धमिति व्याचख्यौ। पृथ्वीचन्द्रोदये ब्राह्मे–'आषाढ्याः पञ्चमे पक्षे गया मध्याष्टमी स्मृता। त्रयोदशी गजच्छाया गयातुल्या तु पैतृके॥

महालक्ष्मीव्रतम्।

आश्विनकृष्णाष्टम्यां महालक्ष्मीव्रतम्। तत्र निर्णयामृते पुराणसमुच्चये–'श्रियोऽर्चनं भाद्रपदे सिताष्टमीं प्रारभ्य कन्यामगते च सूर्ये। समापयेत्तत्र तिथौ च यावत्सूर्यस्तु पूर्वार्धगतो युवत्या॥' इति। तत्रैव—'कन्यागतेऽर्के प्रारभ्य कर्तव्यं न श्रियोऽर्चनम्। हस्तप्रान्तदलस्थेऽर्के तद्व्रतं न समापयेत्॥ पूजनीया गृहस्थानामष्टमी प्रावृषि श्रियः। दोषैश्चतुर्भिः संत्यक्ता सर्वसंपत्करी तिथिः॥' तथा—'पुत्रसौभाग्यराज्यायुर्नाशिनी सा प्रकीर्तिता। तस्मात्सर्वप्रयत्नेन त्याज्या कन्यागते रवौ॥ विशेषेण परित्याज्या नवमीदूषिता यदि॥' इति। दोषचतुष्टयं तत्रैवोक्तम्—'त्रिदिने चावमे चैव आष्टमीं नोपवासयेत्। पुत्रहा नवमीविद्धा स्वघ्नी हस्तार्धगे रवौ॥' इति। त्रिदिनावमदिनलक्षणं च रत्नमालायाम्—'यत्रैकः स्पृशति तिथिद्वयावसानं वारश्चेदवमदिनं तदुक्तमार्यैः। य स्पर्शाद्भवति तिथित्रयस्य चाह्नां त्रिद्युस्पृक्कथितमिदं द्वयं च नेष्टम्॥' एते च सर्वे निषेधाः प्रथमारम्भविषयाः। मध्ये तु सतिसम्भवे ज्ञेयाः। व्रतस्य षोडशाब्दसाध्यत्वेन मध्ये त्यागायोगात्। इयं चन्द्रोदयव्यापिनी ग्राह्या। तत्रैव पूजाद्युक्तेः। परदिने चन्द्रोदयादूर्ध्वं त्रिमुहूर्तं व्यापित्वे परैव कार्या, अन्यथा पूर्वैव। 'पूर्वा वा परविद्धा वा ग्राह्या चन्द्रोदये सदा। त्रिमुहूर्तापि सा पूज्या परतश्चोर्ध्वगामिनी॥' इति मदनरत्ने निर्णयामृते च संग्रहोक्तेः। 'अर्धरात्रमतिक्रम्य वर्तते योत्तरा तिथिः। तदा तस्यां तिथौ कार्यं महालक्ष्मीव्रतं सदा॥' इति वचनाच्चेति संक्षेपः॥

इति महालक्ष्मीव्रतनिर्णयः॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अन्वष्टकाश्राद्धम् ।

अथ नवम्यामन्वष्टकाश्राद्धम् । तत्र कात्यायनः—'अन्वष्टकासु नवभिः पिण्डैः श्राद्धमुदाहृतम् । पित्रादिमातृमध्यं च ततो मातामहान्तकम् ॥' पृथ्वीचन्द्रोदये ब्रह्माण्डे—'पितॄणां प्रथमं दद्यान्मातॄणां तदनन्तरम् । ततो मातामहानां च अन्वष्टक्ये क्रमः स्मृतः ॥' श्राद्धहेमाद्रौ छागलेयः—'केवलास्तु क्षये कार्या वृद्धावादौ प्रकीर्तिताः । अन्वष्टकासु मध्यस्था नान्त्याः कार्यास्तु मातरः ॥' दीपिकायां तु मातृश्राद्धमादौ कार्यमित्युक्तम् मातृयजनं त्वन्वष्टकास्वादित इति । हेमाद्रौ ब्राह्मेपि—'अन्वष्टकासु क्रमशो मातृपूर्वं तदिष्यते ।' इति । अत्र शाखाभेदेन व्यवस्थेति पृथ्वीचन्द्रोदयः । जीवत्पितृकविषयमिति निर्णयदीपः । इदं च जीवत्पितृकेणापि कार्यम् । तदुक्तं निर्णयामृते मैत्रायणीयपरिशिष्टे—'आन्वष्टक्यं गयाप्राप्तौ सत्यां यच्च मृतेऽहनि । मातुः श्राद्धं सुतः कुर्यात्पितर्यपि च जीवति ॥' यद्यपि जीवत्पितृकस्य पञ्चान्वष्टका अवश्यं कर्तव्याः, तथाप्यशक्तस्येयमावश्यकी । 'प्रौष्ठपद्यष्टका भूयः पितृलोके भविष्यति ।' इति हेमाद्रौ पाद्मोक्तेः । 'सर्वासामेव मातॄणां श्राद्धं कन्यागते रवौ । नवम्यां हि प्रदातव्यं ब्रह्मलब्धवरा यतः ॥' इति सूतेनावश्यकत्वोक्तेश्च । अत्र 'सर्वासाम्' इत्युक्तेः स्वमातरि जीवन्त्यामपि सपत्नमातृभ्यो दद्यात् । तन्मरणे सति तस्यै ताभ्यश्च दद्यादित्युक्तं जीवत्पितृकनिर्णये गुरुभिः । अत्र सर्वासां नामनिर्देशेनैको ब्राह्मणोऽर्घ्यः पिण्डश्च । नामैक्ये तु द्विवचनादिप्रयोग इत्युक्तं नारायणवृत्तौ । अन्वष्टकाश्राद्धं तद्यागश्च गोभिलीयानां मध्यमायामेव न सर्वासु । 'आन्वष्टक्यं मध्यमायामिति गोभिलगौतमौ ।' इति छन्दोपरिशिष्टात् । अत्र भर्तृमरणोत्तरं पूर्वमृतमातृश्राद्धं न कार्यमिति केचिदाहुः । पठन्ति च—'श्राद्धं नवम्यां कुर्यात्तन्मृते भर्तरि लुप्यते ।' इति । तदेतन्निर्मूलत्वान्मूर्खप्रतारणमात्रम् । श्राद्धदीपकलिकायां ब्राह्मे—'पितृमातृकुलोत्पन्ना याः काश्चित्तु मृताः स्त्रियः । श्राद्धार्हा मातरो ज्ञेयाः श्राद्धं तत्र प्रदीयते ॥' इति । अत्र देशाचारद्व्यवस्था ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अन्वष्टकाश्राद्धमनुपनीतेनापि कर्तव्यम् ।

इदं चानुपनीतेनापि कार्यम् । तदुक्तं श्राद्धशूलपाणौ मात्स्ये– 'अमावास्याष्टकाकृष्णपक्षपञ्चदशीषु च ।' इत्यभिधाय–'एतच्चानुपनीतोपि कुर्यात्सर्वेषु पर्वसु । श्राद्धं साधारणं नाम सर्वकामफलप्रदम् ॥ भार्याविरहितोप्येतत्प्रवासस्थोपि नित्यशः । शूद्रोप्यमन्त्रवत् कुर्यादनेन विधिना बुधः ॥' इति । तेन साग्नेरेवेदमिति परास्तम् । अन्वष्टकातः पृथगेवेदं मातुः श्राद्धमित्यपि परास्तम् । लाघवेन मूलैक्यादष्टकापदाविशेषाच्च । तेनान्यत्रान्वष्टकाश्राद्धस्याङ्गस्याप्यत्र प्रधानत्वं वचनात् । अवेष्टेरिव राजसूयान्तर्गतायाः 'एतयान्नाद्यकामं याजयेत्' इति फलार्थत्वम् । अत्राष्टकान्वष्टकापूर्वानुरोधात् । तथाग्निपुराणे–'अन्वष्टकासु वृद्धौ च गयायां च क्षयेऽहनि । अत्र मातुः पृथक् श्राद्धमन्यत्र पतिना सह ॥' आपस्तम्बानां त्वष्टकासु च वृद्धौ चेति भाष्यकारैः पाठादष्टकायां मातृकाश्राद्धम् । छन्दोगैस्त्वत्र मातृमातामहश्राद्धे न कार्ये किंतु त्रिपुरुषमेव । 'न योषिद्भ्यः पृथग्दद्यादवसानदिनादृते । कर्षूसमन्वितं मुक्त्वा तथाद्यं श्राद्धषोडशम् । प्रत्याब्दिकं च शेषेषु पिण्डाः स्युः षडिति स्थितिः ॥' इति छन्दोगपरिशिष्टात् । 'अन्वष्टकासु तेषां कर्षूविधानात्' इति शूलपाणिः । यत्तु–'तमिस्रपक्षे नवमी पुण्या भाद्रपदे हि या । चत्वारः पार्वणाः कार्याः पितृपक्षे मनीषिभिः ॥' इति, तद्देशाचारतो व्यवस्थितं ज्ञेयम् । इदं जीवत्पितृकेणापि सपिण्डं कार्यम् । हेमाद्रौ विष्णुधर्मोत्तरे–'अन्वष्टकासु च स्त्रीणां श्राद्धं कार्यं तथैव च ।' इत्युपक्रम्य 'पिण्डनिर्वपणं कार्यं तस्यामपि नृसत्तम ।' इति वचनं श्राद्धविधिना पिण्डदाने प्राप्ते पुनस्तत्कीर्तनं यस्य जीवत्पितृकगर्भिणीपतित्वादिना पिण्डदानं निषिद्धं तस्य तत्प्राप्त्यर्थमिति श्रीतातचरणाः ॥

अत्र सुवासिनीभोजनमुक्तम् ।

मार्कण्डेयपुराणे–'मातुः श्राद्धे तु संप्राप्ते ब्राह्मणैः सह भोजनम् । सुवासिन्यै प्रदातव्यमिति शातातपोऽब्रवीत् ॥ भर्तुरग्रे मृता

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नारी सह दाहेन वा मृता । तस्याः स्थाने नियुञ्जीत विप्रैः सह सुवासिनीम् ॥' तथैव मदालसावाक्यम्–'स्त्रीश्राद्धे पुत्र देयाः स्युरलंकाराश्च योषिते । मञ्जीरमेखलादामकर्णिकाकङ्कणादयः । इति ।

अशक्तौ अनुकल्पः ।

अत्राशक्तावनुकल्पमाहाश्वलायनः–'अनडुहो यवसमाहरेदग्निना वा कक्षमुपोषेदेषा मेऽष्टकेति न त्वेवानष्टकः स्यात्' इति । हेमाद्रौ पितामहः–'अमावास्याव्यतीपातपौर्णमास्यष्टकासु च । विद्वान् श्राद्धमकुर्वाणो नरकं प्रतिपद्यते ॥' अकरणे च प्रायश्चित्तमुक्तमृग्विधाने–'एभिर्द्युभिर्जपेन्मन्त्रं शतवारं तु तद्दिने । आन्वष्टक्यं यदा न्यूनं संपूर्णं याति सर्वथा ॥' इति ॥ एतत्पक्षे द्वादश्यां विशेषः । पृथ्वीचन्द्रोदये वायवीये–'संन्यासिनोप्याब्दिकादि पुत्रः कुर्याद्यथाविधि । महालये तु यच्छ्राद्धं द्वादश्यां पार्वणं तु तत् ॥' इति ।

अथ त्रयोदशीश्राद्धम् ।

तत्र चन्द्रिका–'त्रयोदशी भाद्रपदी कृष्णा मुख्या पितृप्रिया । तृप्यन्ति पितरस्तस्यां स्वयं पञ्चशतं समाः ॥ मघायुतायां तस्यां तु जलाद्यैरपि तोषिताः । तृप्यन्ति पितरस्तद्वद्वर्षाणामयुतायुतम् ॥' प्रयोगपारिजाते शङ्खः–'प्रौष्ठपद्यामतीतायां मघायुक्तां त्रयोदशीम् । प्राप्य श्राद्धं तु कर्तव्यं मधुना पायसेन च ॥ प्रजामिष्टां यशः स्वर्गमारोग्यं च धनं तथा । नृणां श्राद्धे सदा प्रीताः प्रयच्छन्ति पितामहाः ॥' एतन्नित्यमपि । पृथ्वीचन्द्रोदये विष्णुधर्मे–'प्रौष्ठपद्यामतीतायां तथा

१— तत्र पूर्वं ममान्वष्टक्याकरणजनितप्रत्यवायपरिहारार्थं शतवारमेभिर्द्युभिः सुमना इति मन्त्रजपं करिष्ये इति संकल्प्य तज्जपं कुर्यात् । मन्त्रस्तु–"एभिर्द्युभिः सुमना एभिरिन्दुभिर्निरुन्धानो अमतिं गोभिरश्विना । इन्द्रेण दस्युं दरयन्त इन्दुभिर्युतद्वेषसः समिषा रभेमहि ॥" इति । ऋ० सं० अ० १ अ० ४ । अस्य 'हे इन्द्र, एभिरस्माभिर्दत्तैर्द्युभिर्दीप्तैश्चरुपुरोडाशादिभिः एभिरिन्दुभिः पुरोवर्तिभिस्तुभ्यं दत्तैः सोमैश्च प्रीतस्त्वं अस्माकममतिं दारिद्र्यं गोभिस्त्वया दत्तैः पशुभिरश्विनाश्वयुक्तेन धनेन च निरुन्धानो निवर्तयन् सुमनाः शोभनमना भव । वयमिन्दुभिरस्माभिर्दत्तैः सोमैः प्रीतेनेन्द्रेण दस्युं उपक्षपयितारं शत्रुं दरयन्तो हिंसन्तः अत एव युतद्वेषसः पृथग्भूतशत्रुका भूत्वा इषा इन्द्रदत्तेनान्नेन संरभेमहि संरब्धा भवेम । संगच्छेमहीत्यर्थः ।' इति श्रीमत्सायणाचार्यकृता व्याख्या ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कृष्णत्रयोदशी । इत्युक्त्वा–'एतांस्तु श्राद्धकालान्वै नित्यानाह प्रजापतिः । श्राद्धमेतेष्वकुर्वाणो नरकं प्रतिपद्यते ॥' इत्युक्तेः । एतच्चाविभक्तैरपि पृथक्कार्यम् । तथा च हेमाद्रौ–'विभक्ता वाऽविभक्ता वा कुर्युः श्राद्धं पृथक् सुताः । मघासु च ततोऽन्यत्र नाधिकारः पृथग्विना ॥' इति अपरार्के वायवीये–'हंसे हस्तस्थिते या तु मघायुक्ता त्रयोदशी । तिथिर्वैवस्वती नाम सा छाया कुञ्जरस्य तु ॥' अत्र च–'अपि नः स कुले भूयाद्यो नो दद्यात्त्रयोदशीम् । पायसं मधुसर्पिर्भ्यां प्राक्छाये कुञ्जरस्य च ॥' इति विष्णुमनुवचने केवलत्रयोदशीश्रुतेर्मघा गुण इति कल्पतरुः । शूलपाणिस्तु–'केवलवाक्यानामर्थवादत्वाद्विधौ च मघायोगश्रुतेर्विधिलाघवाद्विशिष्टमेव निमित्तम्' इत्याह । वस्तुतस्तु—'मधुमांसैश्च शाकैश्च पयसा पायसेन च । एष नो दास्यति श्राद्धं वर्षासु च मघासु च ॥' इति वसिष्ठवचने केवलमघाश्रुतेर्विनिगमकाभावादुभयं भिन्ननिमित्तं, पूर्वोक्तवचनाच्च योगाधिक्ये फलाधिक्यम् । अतएव याज्ञवल्क्यः । 'तथा वर्षात्रयोदश्यां मघासु च विशेषतः ॥' इति । त्रयोदशीश्राद्धं नित्यम् । अन्यत्काम्यम् । 'अत्र त्रयोदश्यां बहुपुत्रा युवमारिणस्तु भवन्ति' इत्यापस्तम्बोक्तेर्युवमारित्वमपत्यदोषं सहिष्णोरपत्यमात्रार्थिनः स्मृत्यन्तरोक्तधनार्थिनो वाधिकार इति कल्पतरुः । अपत्यनिन्दया तदर्थिनोऽनधिकारात् फलान्तरकामस्यैवाधिकार इति हलायुधः । एतत्पिण्डरहितं कार्यम् । 'मघायुक्तत्रयोदश्यां पिण्डनिर्वपणं द्विजः । ससंतानो नैव कुर्यान्नित्यं ते कवयो विदुः ॥' इति बृहत्पराशरोक्तेः । इदं मलमासेपि कार्यम् । 'मघात्रयोदशीश्राद्धं प्रत्युपस्थितिहेतुकम् । अनन्यगतिकत्वेन कर्तव्यं स्यान्मलिम्लुचे ॥' इति काठकगृह्योक्तेः । यानि तु अङ्गिराः–'त्रयोदश्यां कृष्णपक्षे यः श्राद्धं कुरुते नरः । पञ्चत्वं तस्य जानीयाज्ज्येष्ठपुत्रस्य निश्चितम् ॥' वामनपुराणे–'त्रयोदश्यां तु वै श्राद्धं न कुर्यात्पुत्रवान् गृही ।' इत्यादीनि वचनानि तानि पुत्रवद्विषयाणि वा, महालयस्थभिन्नत्रयोदशीविषयाणि वा, काम्यश्राद्धविषयाणि वा, सपिण्डकश्राद्धविषयाणि वेति केचित् । हेमाद्रिप्रमुखास्त्वेकवर्गश्राद्धविषयाणि । श्राद्धं नैवैकवर्गस्य त्रयोदस्यामुपक्रमेत् । न तृप्तास्तत्र ये यस्य प्रजा

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

हिंसन्ति तस्य ते ॥' इति कार्ष्णाजिनिस्मृतेः। यद्यपि 'पितरो यत्र पूज्यन्ते तत्र मातामहा अपि।' इति धौम्योक्तेर्न केवलपितृवर्गस्य प्राप्तिस्तथापि व्यामोहादिप्राप्तनिषेधोयमित्याहुः। वयं तु पश्यामः पुत्रवद्विषयाण्येवेति। 'असंतानस्तु यस्तस्य श्राद्धे प्रोक्ता त्रयोदशी। सन्तानयुक्तोः यः कुर्यात्तस्य वंशक्षयो भवेत् ॥' इति हेमाद्रौ नागरखण्डोक्तेः। पूर्ववाक्यमप्यसंतानस्यैवैकवर्गनिषेधकमिति। अत्र मघा त्रयोदशीमहालययुगादिश्राद्धानां तन्त्रेण प्रयोगः नतु प्रसङ्गसिद्धिरित्यन्यत्र विस्तरः ॥

चतुर्दशी श्राद्धनिर्णयः।

अथ चतुर्दशी पृथ्वीचन्द्रोदये प्रचेताः—'वृक्षारोहणलोहाद्यैर्विद्युज्जलविषाग्निभिः। नखिदंष्ट्रिविपन्ना ये तेषां शस्ता चतुर्दशी ॥' ब्राह्मे—'युवानः पितरो यस्य मृताः शस्त्रेण वा हताः। तेन कार्यं चतुर्दश्यां तेषां तृप्तिमभीप्सता ॥' नागरखण्डे—'अपमृत्युर्भवेद्येषां शस्त्रमृत्युरथापि वा। श्राद्धं तेषां प्रकर्तव्यं चतुर्दश्यां नराधिप ॥' एतच्च प्रायो नाशकशस्त्राग्निविषोदकोद्बन्धनप्रपतनैश्चेच्छतामिति गौतमोक्तदुर्मरणोपलक्षणम्। एकयोगनिर्देशात्। 'सर्वेषां तुल्यधर्माणामेकस्यापि यदुच्यते। सर्वेषां तत्समं ज्ञेयमेकरूपा हि ते स्मृताः ॥' इत्युशनसोक्तेश्च। तच्च कृतक्रियाणामेवेति वक्ष्यामः। मरीचिः—'विषशस्त्रश्वापदाहितिर्यग्ब्राह्मणघातिनाम्। चतुर्दश्यां क्रियाः कार्या अन्येषां तु विगर्हिताः ॥' अत्र ब्राह्मणघाती तेन हतो नतु ब्रह्महा। तस्य पतितत्वादिति शूलपाणिः। अत्रोद्देश्यविशेषणस्याविवक्षितत्वात्स्त्रीणामपि शस्त्रादिहतानामेकोद्दिष्टं कार्यं न पार्वणमिति श्रीदत्तोपाध्यायः। इदं विषादिहतानामेव न प्रसवादिमृतानामिति वाचस्पतिः। यत्तु शाकटायनः—'जलाग्निभ्यां विपन्नानां संन्यासे वा गृहे पथि। श्राद्धं कुर्वीत तेषां वै वर्जयित्वा चतुर्दशीम् ॥' इति, तत् प्रायश्चित्तार्थजलादिमृतविषयमित्याकरे उक्तम्। अतएव वैधत्वात्सहगमनेपि न कार्यमिति हेमाद्रिः। एतच्च दैवयुक्तमेकोद्दिष्टं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कार्यमित्युक्तं प्रयोग पारिजाते—'प्रेतपक्षे चतुर्दश्यामेकोद्दिष्टं विधानतः। दैवयुक्तं तु तच्छ्राद्धं पितृणामक्षयं भवेत्॥ तच्छ्राद्धं दैवहीनं चेत्पुत्रदारधनक्षयः॥ एकोद्दिष्टं दैवयुक्तमित्येवं मनुरब्रवीत्॥' भविष्येपि—'समत्वमागतस्यापि पितुः शस्त्रहतस्य च। चतुर्दश्यां तु कर्तव्यमेकोद्दिष्टं महालये॥ चतुर्दश्यां तु यच्छ्राद्धं सपिण्डीकरणे कृते। एकोद्दिष्टविधानेन तत्कार्यं शस्त्रघातिनः॥' इति। संवत्सरप्रदीपे हारीतः—'विश्वेदेवांश्च तत्रापि पूजयित्वादितोऽमलान्। ये वै शस्त्रहतास्तेषां श्राद्धं कुर्यादतन्द्रितः॥' अत्रैकोद्दिष्टवचनानां निर्मूलत्वम्। समूलत्वेपि पार्वणाशक्तपराणि। विष्वादिवचनैः प्रकरणात् कृष्णपक्षीयपार्वणावगतेरिति शूलपाणिः। तन्न। वाक्येन प्रकरणस्य बाधात्। पित्रादीनां पार्वणं भ्रात्रादीनामेकोद्दिष्टमिति गौडार्वाश्चः। तन्न। पितुरित्यनेन विरोधात् विशेषवाक्यवैयर्थ्यापत्तेश्च। अत्र शस्त्रहतस्यैव चतुर्दश्यामिति नियमो न तु चतुर्दश्यामेव शस्त्रहतस्येति। 'श्राद्धं शस्त्रहतस्यैव चतुर्दश्यां महालये।' इति कालादर्शात्। वार्षिकादीनामकरणापत्तेश्च। तेन महालये एव दिनान्तरे पार्वणं मातामहादितृप्त्यर्थं कार्यमेव। पितामहोपि शस्त्रहतश्चेदेकोद्दिष्टद्वयं कार्यम्। तदुक्तं हेमाद्रौ स्मृत्यन्तरे—'एकस्मिन्द्वयोर्वैकोद्दिष्टम्' इति। त्रिषु शस्त्रहतेषु पार्वणमेव कार्यम्।

यत्तु देवस्वामिनोक्तं त्रिष्वपि शस्त्रहतेषु पृथगेकोद्दिष्टत्रयं कार्यं नतु पार्वणमाहत्य वचनाभावादिति, तदयुक्तम्। 'पित्रादयस्त्रयो यस्य शस्त्रैर्यातास्त्वनुक्रमात्। स भूते पार्वणं कुर्यादाब्दिकानि पृथक् पृथक्॥' इति बृहत्पराशरोक्तेः। 'एकस्मिन्वा द्वयोर्वापि विद्युच्छस्त्रेण वा हते। एकोद्दिष्टं सुतः कुर्यात्त्रयाणां दर्शवद्भवेत्॥' इति स्मृत्यन्तराच्चेति पृथिवीचन्द्रोदये उक्तम्। अपरार्के हेमाद्रौ चैवम्। यस्तु अत्रैव शस्त्रादिना हतस्तस्य वार्षिकमेव पार्वणमेकोद्दिष्टं वा कार्यं नतु श्राद्धद्वयम्। प्रसङ्गसिद्धेरिति पृथिवीचन्द्रोदये। अत्र श्राद्धाकरणेऽग्रिमापरपक्षे दिनान्तरे पार्वणेनैव कार्यमिति तत्रैवोक्तम्। यद्यपि—'शस्त्रविप्रहतानां च शृङ्गिदंष्ट्रिसरीसृपैः। आत्मनस्त्यागिनां चैव श्राद्धमेषां न कारयेत्॥' इति छागलेयाद्यैः शस्त्रादि-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

हतानां श्राद्धं निषिद्धं तथापि प्रमादमृतानां श्राद्धार्हत्वात्कार्यम्। वृद्धादिभिन्नबुद्धिपूर्वमृतानां तु न कार्यम्। यत्तु—'चतुर्दश्यां तर्पणीया लुप्तपिण्डोदकक्रिया।' इति ब्राह्मे। तद्गौणमिति शूलपाणिः। लक्षणायां मानाभावात्। 'पतितेनापि कर्तव्यं कर्तव्यं पतितस्य च॥' इति गयादिवद्विशेषविधिबलात्पतितानामपि कार्यमिति नव्यगौडाः। तत्त्वं तु समत्वमागतस्येत्यादिवशात्कृतक्रियाणां कार्यं नान्येषामिति वयं प्रतीमः। यत्तु मनुः—'न पैतृयज्ञियो होमो लौकिकाग्नौ विधीयते। न दर्शेन विना श्राद्धमाहिताग्नेर्विधीयते॥' इति। अत्र पूर्वार्धं हेतुत्वेनोक्तम्। तद्यथाश्रुतमेव मन्यन्ते पृथ्वीचन्द्रोदयादयः। आहिताग्नेः पिण्डपितृयज्ञकल्पेन श्राद्धनिषेधार्थमिदं न तु साकल्यादेरपीत्यस्मद्गुरवः। कृष्णपक्षश्राद्धमन्यदिनेषु प्राप्तमाहिताग्नेर्दर्शे नियम्यत इति तु वयम्। दर्शेन पार्वणेन विना श्राद्धं न। तेन क्वापि वार्षिकादावेकोद्दिष्टं नेति हरिहरः॥ इति चतुर्दशी॥

अमायां गजच्छायानिर्णयः।

अमायां विशेषमाहापरार्के यमः—'हंसे करस्थिते या तु अमावास्या करान्विता। सा ज्ञेया कुञ्जरच्छाया इति बौधायनोऽब्रवीत्॥ वनस्पतिगते सोमे छाया या प्राङ्मुखी भवेत्। गजच्छाया तु सा प्रोक्ता तस्यां श्राद्धं प्रकल्पयेत्॥' भारते—'अजेन सर्वलोहेन वर्षासु नियतव्रतः। हस्तिच्छायासु विधिवत्कर्णव्यजनवीजितम्॥' श्राद्धं दद्यादिति शेषः।

आश्विनशुक्लप्रतिपदि दौहित्रस्य मातामहश्राद्धमुक्तम्।

हेमाद्रौ संग्रहे च—'जातमात्रोपि दौहित्रो विद्यमानेपि मातुले। कुर्यान्मातामहश्राद्धं प्रतिपद्याश्विने सिते॥' इति। इयं संगवव्यापिनी ग्राह्येपि निर्णयदीपे उक्तम्। 'प्रतिपद्याश्विने शुक्ले दौहित्रोस्त्वेकपार्वणम्। श्राद्धं मातामहं कुर्यात्सपिता सङ्गवे सदा॥ जातमात्रोपि दौहित्रो जीवत्यपि च मातुले। प्रातःसङ्गवयोर्मध्ये श्रार्यस्य प्रतिपद्भवेत्॥' इति वचनात्। अत्र समूलत्वं विमृश्यम्। इदं च मलमासे

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

न कार्यम्। 'स्पष्टमासविशेषाख्याविहितं वर्जयेन्मले' इति निषेधात्। इदं च जीवत्पितृकेणैव कार्यमिति शिष्टाः। इदं च शिष्टाचारात्सपिण्डकं कार्यमिति केचित्। पिण्डरहितं तु युक्तम्। जीवत्पितृकस्य–'मुण्डनं पिण्डदानं च प्रेतकर्म च सर्वशः। न जीवत्पितृकः कुर्याद्गुर्विणीपतिरेव च॥' इति दक्षेण पिण्डनिषेधात्। आन्वष्टक्यवद्विशेषवचनाभावाच्चेति संक्षेपः॥ इति श्रीकमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ महालयनिर्णयः॥

अथाश्विनशुक्लप्रतिपदि नवरात्रारम्भः।

तन्निर्णयः। तत्र भार्गवार्चनदीपिकायां देवीपुराणे सुमेधा उवाच–'शृणु राजन् प्रवक्ष्यामि चण्डिकापूजनक्रमम्। आश्विनस्य सिते पक्षे प्रतिपत्सु शुभे दिने॥' इत्युपक्रम्योक्तम्–'शुद्धे तिथौ प्रकर्तव्यं प्रतिपच्चोर्ध्वगामिनी। आद्यास्तु नाडिकास्त्यक्त्वा षोडश द्वादशापि वा॥ अपराह्णे च कर्तव्यं शुद्धसंततिकांक्षिभिः॥' इदं चापराह्णयोगिन्याः प्राशस्त्यं द्वितीयदिने प्रतिपदो भावे ज्ञेयम्। तथा तत्रैव देवीपुराणे डामरतन्त्रे च देवीवचः–अमायुक्ता न कर्तव्या प्रतिपत् पूजने मम। मुहूर्तमात्रा कर्तव्या द्वितीयादिगुणान्विता॥ आद्याः षोडशनाडीस्तु लब्ध्वा यः कुरुते नरः। कलशस्थापनं तत्र ह्यरिष्टं जायते ध्रुवम्॥' मार्कण्डेयदेवीपुराणयोः–'पूर्वविद्धा तु या शुक्ला भवेत् प्रतिपदाश्विनी। नवरात्रव्रतं तस्यां न कार्यं शुभमिच्छता॥ देशभङ्गो भवेत्तत्र दुर्भिक्षं चोपजायते॥ नन्दायां दर्शयुक्तायां यत्र स्यान्मम पूजनम्॥' इति। स्कान्देपि–'प्रतिपद्याश्विने मासि सा शुद्धा शुभदा भवेत्। भाद्रपञ्चदशी कृष्णा तथा युक्ता न शस्यते॥ विरुद्धफलदा सा हि पुत्रदारभयावहा॥' इति। तथा–'वर्जनीया प्रयत्नेन अमायुक्ता तु पार्थिव। द्वितीयादिगुणैर्युक्ता प्रतिपत्सर्वकामदा॥' तथा देवीपुराणे–'यो मां पूजयते नित्यं द्वितीयादिगुणान्विताम्। प्रतिपच्छारदीं ज्ञात्वासोऽश्नुते सुखमव्ययम्॥ यदि कुर्यादमायुक्तां प्रतिपत्स्थापने मम। तस्य शापायुतं दत्वा भस्मशेषं करोम्यहम्॥ आग्रहात्कुरुते यस्तु कलशस्थापनं मम। तस्य

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

संपद्विनाशः स्याज्ज्येष्ठः पुत्रो विनश्यति ॥ अमायुक्ता न कर्तव्या प्रतिपच्चण्डिकार्चने । धनार्थिभिर्विशेषेण वंशहानिश्च जायते ॥ न दर्शकलया युक्ता प्रतिपच्चण्डिकार्चने । उदये द्विमुहूर्तापि ग्राह्या सोदयदायिनी ॥' इति । देवीपुराणे—'या चाश्वयुजि मासे स्यात्प्रतिपद्भद्रयान्विता । शुद्धा ममार्चनं तस्यां शतयज्ञफलप्रदम् ॥' रुद्रयामले—'अमायुक्ता सदा चैव प्रतिपन्निन्दिता मता । तत्र चेत्स्थापयेत्कुम्भं दुर्भिक्षं जायते ध्रुवम् ॥ प्रतिपत्सद्वितीया कुम्भारोपणकर्मणि ॥' इति । यद्यपि रुद्रयामलं डामरं च निर्मूलं तथाप्यविरोधात् प्रचाराच्च तद्वचनानि लिख्यन्ते । तिथितत्त्वे देवीपुराणेपि—'प्रातरावाहयेद्देवीं प्रातरेव प्रवेशयेत् । प्रातः प्रातश्च संपूज्य प्रातरेव विसर्जयेत् ॥' तत्रैव—'शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी । सा कार्योदयगामिन्यां न तत्र तिथियुग्मता ॥' तथा—'कुहूकाष्ठोपसंयुक्तां वर्जयेत्प्रतिपत्तिथिम् । राज्यनाशाय सा प्रोक्ता निन्दिता चाश्वपूजने ॥' इति । एषु वचनेषु कलशस्थापनग्रहणात्तदेव प्रथमदिने निषिध्यते न तूपवासादि । तस्य 'प्रतिपद्यप्यमावास्या' इति युग्मवाक्यात्, 'शुक्ला स्यात्प्रतिपत्तिथिः प्रथमतः' इति दीपिकोक्तेः, शुक्लपक्षे दर्शविद्धेति माधवोक्तेश्च पूर्वदिने प्राप्तस्य बाधे मानाभवादिति केचित् । वस्तुतस्तु पूर्वोक्तवाक्येषु चण्डिकार्चनपूजाग्रहणादुपवासादेश्चाङ्गत्वात् प्रधानदेवीपूजादावपि परेति युक्तम् । कलशस्थापनग्रहणं तूपलक्षणम् । अतएव देवलः—'व्रतोपवासनियमे घटिकैकापि या भवेत् । सा तिथिस्तद्दिने पूज्या विपरीता तु पैतृके ॥' इति । अत्र घटिका मुहूर्त इति गौडाः । यदा तु पूर्वदिने संपूर्णा शुद्धा च भूत्वा परदिने वर्धते तदा संपूर्णत्वादमायोगाभावाच्च पूर्वैव । यानि च द्वितीयायोगनिषेधकानि वचनानि केचित्पठन्ति तान्यपि शुद्धाधिकानिषेधपराणि । परदिने प्रतिपदोऽत्यन्तासत्त्वे तु दर्शयुतापि पूर्वैव ग्राह्या । तदाह लल्लः—'तिथिः शरीरं तिथिरेव कारणं तिथिः प्रमाणं तिथिरेव साधनम् ।' इति । यानि तु—'अमायुक्ता प्रकर्तव्या' इत्यादीनि नृसिंहप्रसादे वचनानि तानि समूलत्वे सत्येतद्विषयाणि । अत्रेदं तत्त्वम् । पूर्वोक्तवाक्यानां सर्वेषां हेमाद्र्याद्यलिखितत्वेन निर्मूलत्वात्तैश्चान्यनिर्णयस्यानुक्तेः सामान्यनिर्णयात्पूर्वप्राप्तावपि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

गौडनिबन्धेषु विशेषनिर्णयादौदयिकी ग्राह्या। तत्रापि घटिकैकेत्यस्य द्विमुहूर्तस्तुतित्वोक्तेर्द्विमुहूर्ता ग्राह्या। 'उदिते दैवतं भानौ' पित्र्यं चास्तमिते रवौ। द्विमुहूर्तं त्रिरह्नश्च सा तिथिर्हव्यकव्ययोः॥' इति। इत्यत्र 'द्विमुहूर्तं त्रिरह्नश्च' इति औदयिक्या द्विमुहूर्तत्वनियमात्। तेन 'उदये द्विमुहूर्तापि' इत्याद्यनुसारोऽपि मुहूर्तमात्रा कर्तव्येति द्विमुहूर्तस्तुतिः अन्यथा द्विमुहूर्तविधिवैयर्थ्यात्। केचित्तु मुहूर्तमात्रेति वचनात्ततो न्यूनत्वे परा नेत्याहुः। गौडा अप्येवम्॥

अत्र देवीपूजैव प्रधानम्। उपवासादि त्वङ्गम्। 'अष्टम्यां च नवम्यां च जगन्मातरमम्बिकाम्। पूजयित्वाश्विने मासि विशोको जायते नरः॥' इति हेमाद्रौ भाविष्ये तस्या एव फलसम्बन्धात्, 'नवमीतिथिपर्यन्तं वृद्ध्या पूजाजपादिकम्।' इति तत्रैव देवीपुराणात्, 'शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी।' इति मार्कण्डेयपुराणाच्च पूर्ववचनादष्टमीनवमीपूजैव प्रधानमन्यत्सर्वमङ्गमिति गौडाः। एकाहपक्षोऽपि कालिकापुराणे—'यस्त्वेकस्यामथाष्टम्यां नवम्यामथ साधकः। पूजयेद्वरदां देवीं महाविभवविस्तरैः॥' इति। तत्त्वं तु राजसूयेऽन्ययागैः समप्रधानायाः सहिताया अप्यवेष्टेः 'एतयान्नाद्यकामं याजयेदि' त्येकत्वान्मध्ये विधानाच्च यथा फलार्थो बहिःप्रयोगस्तथा नवरात्रमध्यस्थाया अष्टम्या नवम्या वा फलार्थः पृथक्प्रयोगः। रूपनारायणधृतदेवीपुराणे—'महानवम्यां पूजेयं सर्वकामप्रदायिका। सर्वेषु चैव वर्णेषु तव भक्त्या प्रकीर्तिता॥ कृत्वाप्नोति यशो राज्यपुत्रायुर्धनसंपदः॥' सा च काम्या नित्या च। 'एवमन्यैरपि तथा देव्याः कार्यं प्रपूजनम्। विभूतिमतुलां लब्धुं चतुर्वर्गप्रदायकम्॥' इति, 'यो मोहादथवालस्याद्देवीं दुर्गां महोत्सवे। न पूजयति दम्भाद्वा द्वेषाद्वाप्यत्र भैरव॥ क्रुद्धा भगवती तस्य कामानिष्टान्निहन्ति वै॥' इति कालिकापुराणे फलनिन्दाश्रुतेः। 'वर्षे वर्षे विधातव्यं स्थापनं च विसर्जनम्।' इति तिथितत्त्वे देवीपुराणाच्च॥

अत्रोपवासादिकमुक्तं हेमाद्रौ भविष्ये—'एवं च विन्ध्यवासिन्यां नवरात्रोपवासतः। एकभक्तेन नक्तेन तथैवायाचितेन च॥ पूजनीया जनैर्देवी स्थाने स्थाने पुरे पुरे। गृहे गृहे शक्तिपरैर्ग्रामे ग्रामे वने

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वने ॥ स्नातैः प्रमुदितैर्हृष्टैर्ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्नृपैः । वैश्यैः शूद्रैर्भक्तियुक्तैर्म्लेच्छैरन्यैश्चमानवैः ॥' इति । यत्तु रूपनारायणीये भविष्ये— 'एवं नानाम्लेच्छगणैः पूज्यते सर्वदस्युभिः ।' इति, तत्तामसपूजापरम् । 'विना मन्त्रैस्तामसी स्यात्किरातानां तु संमता ।' इति तत्रैवोक्तेः । मदनरत्ने देवीपुराणेऽपि—'कन्यासंस्थे रवौ शक्र शुक्लामारभ्य नन्दिकाम् । अयाची ह्यथवैकाशी नक्ताशी वाथवाऽब्दः ॥ भूमौ शयती चामन्त्र्य कुमारीर्भोजयेन्मुदा । वस्त्रालंकारदानैश्च संतोष्याः प्रतिवासरम् ॥ बलिं च प्रत्यहं दद्यादोदनं मांसमाषवत् । त्रिकालं पूजयेद्देवीं जपस्तोत्रपरायणः ॥' इति ।

रात्रिपूजानिर्णयः ।

नन्दिका प्रतिपत्तिथिरिति मैथिलाः, षष्ठीति गौडाः । तच्च पूजनं रात्रौ कार्यम् । 'आश्विने मासि मेघान्ते महिषासुरमर्दिनीम् । निशासु पूजयेद्भक्त्या सोपवासादिकः क्रमात् ॥' इति देवीपुराणात् । संग्रहेपि—'आश्विने मासि मेघान्ते प्रतिपद्या तिथिर्भवेत् । तस्यां नक्तं प्रकुर्वीत रात्रौ देवीं च पूजयेत् ॥ रात्रिरूपा यतो देवी दिवारूपो महेश्वरः । रात्रिव्रतमिदं देवि सर्वपापप्रणाशनम् ॥ सर्वकामप्रदं नृणां सर्वशत्रुनिबर्हणम् । रात्रिव्रतमिदं तस्य रात्रौ कर्तव्यतेष्यते ॥ नक्तव्रतमिदं यस्मादन्यथा नरके गतिः ॥' इत्यादिवचनाच्च । रात्रिव्रतत्वमेवाभिप्रेत्य माधवेनोक्तम् । तस्य नक्तव्रतत्वादिति न तु रात्रिभोजनात् । ननु 'मासि चाश्वयुजे शुक्ले नवरात्रे विशेषतः । संपूज्य नवदुर्गां च नक्तं कुर्यात्समाहितः ॥ नवरात्राभिदं कर्म नक्तव्रतमिदं स्मृतम् ।' 'आरम्भे नवरात्रस्य' इत्यादिस्कान्दात् माधवोक्तेश्च नक्तमेव प्रधानमिति चेत् । न । 'नवरात्रोपवासतः' इत्यादेरनुपपत्तेः । तेन पाक्षिकनक्तानुवादोऽयम् । नित्यानित्यसंयोगविरोधात् । नह्यग्निहोत्रे दशमपक्षे प्राप्तस्य 'दध्ना जुहोति' इत्यस्येन्द्रियकामहोमेऽनुवादो घटते, नित्यवदनुवादायोगात् इत्युक्तं वार्तिके तथात्रापि । तेनात्र तद्वदेव गुणात्फलमिति ज्ञेयम् । ननु रात्रेः कर्मकालत्वे तद्व्यापिनी

१—दध्ना इन्द्रियकामस्य जुहुयात् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पूर्वैव प्रतिपत्प्राप्नुयात्। मैवम्। न्यायतः प्राप्तावपि पूर्वोक्तवचनैर्बाधात्। यथा पूर्वद्युः कर्मकालव्यापिनीमपि त्यक्त्वा स्वल्पापि परैव रामनवमीति प्रागुक्तम्, यथा वा निशीथे सतीमपि पूर्वां जन्माष्टमीं त्यक्त्वा रोहिणीयुक्ता परैवेति माधवेनोक्तम्, तथात्रापि। वस्तुतस्तु रात्रेः कर्मकालत्ववचसां हेमाद्र्याद्यलिखनात्समूलत्वं विमृश्यमेव। 'त्रिकालं पूजयेत्' इत्यादि पूर्वविरोधाच्च। माधवोक्तिस्तु पाक्षिकनक्तानुवाद इत्युक्तम्। तस्मात्सर्वपक्षेषु परैव प्रतिपदिति सिद्धम्। अत्र केचिन्नवरात्रशब्दो नवाहोरात्रपरः। 'वृद्धौ समाप्तिरष्टम्यां ह्रासेमा प्रतिपन्निशि। प्रारम्भो नवचण्ड्यास्तु नवरात्रमतोऽर्थवत्॥' इति देवीपुराणादित्याहुः। तन्न। अतिह्रासवृद्ध्योर्न्यूनाधिकत्वापत्तेः। अत्र मूलाभावाच्च। तेन तिथिवाच्येवायम्। तदुक्तम्—'तिथिवृद्धौ तिथिह्रासे नवरात्रमपार्थकम्। अष्टरात्रे न दोषोऽयं नवरात्रतिथिक्षये॥' इति। स च नवरात्रशब्दः क्वचिल्लक्षणया कर्मवाची। यथा 'प्रारम्भो नवरात्रस्य' इत्यत्रेति दिक्॥

वैधृत्यादि दुष्टयोगे प्रतिपन्नग्राह्या।

प्रतिपदि च वैधृत्यादियोगनिषेधो भार्गवार्चनदीपिकायां देवीपुराणे—'त्वाष्ट्रवैधृतियुक्ता चेत्प्रतिपच्चण्डिकार्चने। तयोरन्ते विधातव्यं कलशारोपणं गृहे॥' इति। चित्रावैधृतियुक्तापि द्वितीयायुता चेत्सैव ग्राह्येत्युक्तम्। दुर्गोत्सवे—'भद्रान्विता चेत्प्रतिपत्तु लभ्यते विरुद्धयोगैरपि संगता सती। सैवापराह्णे विबुधैर्विधेया श्रीपुत्रराज्यादिविवृद्धिहेतुः॥' इति। यदा तु वैधृत्यादिपरिहारेण प्रतिपन्न लभ्यते तदोक्तं तत्रैव कात्यायनेन—'प्रतिपद्याश्विने मासि भवेद्वैधृतिचित्रयोः। आद्यपादौ परित्यज्य प्रारभेन्नवरात्रकम्॥' इति। भविष्येपि—'चित्रावैधृतिसंपूर्णा प्रतिपच्चेद्भवेन्नृप। त्याज्या ह्यंशास्त्रयस्त्वाद्यास्तुरीयांशे तु पूजनम्॥' इति। रुद्रयामलेपि—'वैधृतौ पुत्रनाशः स्याच्चित्रायां धननाशनम्। तस्मान्न स्थापयेत्कुम्भं चित्रायां वैधृतौ तथा॥ सम्पूर्णा प्रतिपद्देव चित्रायुक्ता यदा भवेत्। वैधृत्या वापि मुक्ता स्यात्तदा मध्यंदिने रवौ॥ अभिजित्तु मुहूर्तं यत्तत्र स्थापनमिष्यते॥' इति। चित्रादिनिषेधे मूलं चिन्त्यम्।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कलशस्थापन समयविचारः ।

इदं कलशस्थापनं रात्रौ न कार्यम् । 'न रात्रौ स्थापनं कार्यं न च कुम्भाभिषेचनम् ।' इति मात्स्योक्तेः । 'भास्करोदयमारभ्य यावत्तु दश नाडिकाः । प्रातःकाल इति प्रोक्तः स्थापनारोपणादिषु ॥' इति विष्णुधर्मोक्तेश्च । रुद्रयामले—'स्नानं माङ्गलिकं कृत्वा ततो देवीं प्रपूजयेत् । शुभाभिर्मृत्तिकाभिश्च पूर्वं कृत्वा तु वेदिकाम् ॥ यवान्वै वापयेत्तत्र गोधूमैश्चापि संयुतान् । तत्र संस्थापयेत्कुम्भं विधिना मन्त्रपूर्वकम् ॥ सौवर्णं राजतं वापि ताम्रं मृन्मयजं तु वा ॥' इति ॥

अथ पूजाविधिः ।

सा च जयन्तीमन्त्रेण नवाक्षरेण वा कार्या । तदुक्तं दुर्गाभक्तितरङ्गिण्यां देवीपुराणे—'कुर्याद्देव्यास्तु मन्त्रेण पूजां क्षीरघृतादिभिः ।' इत्युक्त्वा 'जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी । दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोस्तु ते ॥ अनेनैव तु मन्त्रेण जपहोमौ तु कारयेत् ॥' इति, ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षिणि स्वाहा' इति नवाक्षरः । तत्र प्रतिपदि प्रातरभ्यङ्गं कृत्वा देशकालौ संकीर्त्य ममेह जन्मनि दुर्गाप्रीतिद्वारा सर्वापच्छान्तिपूर्वकदीर्घायुर्विपुलधनपुत्रपौत्राद्यनवच्छिन्नसन्ततिवृद्धिस्थिरलक्ष्मीकीर्तिलाभशत्रुपराजयसदभीष्टसिद्ध्यर्थं शारदनवरात्रप्रतिपदि विहितकलशस्थापनदुर्गापूजाकुमारीपूजादि करिष्ये इति संकल्प्य 'महीद्यौः' इति भूमिं स्पृष्ट्वा 'ओषधयः सम्' इति यवान्निक्षिप्य 'आकलशेषु' इति कुम्भं संस्थाप्य 'इमं मे गङ्गे' इति जलेनापूर्य 'गन्धद्वाराम्' इति गन्धं 'या ओषधीः' इति सर्वौषधीः 'काण्डात् काण्डात्' इति दूर्वाः 'अश्वत्थेव' इति पञ्चपल्लवान् 'स्योना पृथिवि' इति सप्तमृदः 'याः फलिनीः' इति फलं 'सहिरत्नानि' इति पञ्चरत्नानि हिरण्यं च क्षिप्त्वा 'युवा सुवासाः' इति वस्त्रेणावेष्ट्य 'पूर्णादर्वि' इति पूर्णपात्रं निधाय तत्र वरुणं सम्पूज्य जीर्णायां नूतनायां वा प्रतिमायां दुर्गामावाह्य पूजयेत् । तद्यथा—पूर्वोक्तं मन्त्रमुक्त्वा—'आगच्छ वरदे देवि दैत्यदर्पनिषूदनि । पूजां गृहाण सुमुखि नमस्ते शंकरप्रिये ॥ सर्वतीर्थमयं वारि सर्वदेवसमन्वितम् । इमं घटं समागच्छ तिष्ठ देवगणैः सह । दुर्गे देवि समागच्छ सान्निध्यमिह

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कल्पय। बलिं पूजां गृहाण त्वमष्टाभिः शक्तिभिः सह ॥' इत्यावाह्य पूर्वोक्तमन्त्रेण षोडशोपचारैः पूजयित्वा माषभक्तबलिं कूष्माण्डादिबलिं वा निवेदयेत् ॥

अथ कुमारी पूजनविधिः ।

ततः कुमारीपूजा । तदुक्तं हेमाद्रौ स्कान्दे—'एकैकां पूजयेत्कन्यामेकवृद्ध्या तथैव च। द्विगुणं त्रिगुणं वापि प्रत्येकं नवकं तु वा ॥' तथा—'नवभिर्लभते भूमिमैश्वर्यं द्विगुणेन तु। एकवृद्ध्या लभेत्क्षेममेकैकेन श्रियं लभेत् ॥ एकवर्षा तु या कन्या पूजार्थे तां विवर्जयेत्। गन्धपुष्पफलादीनां प्रीतिस्तस्या न विद्यते ॥' तेन द्विवर्षामारभ्य दशवर्षापर्यन्ता एव पूज्याः न त्वन्याः । तासां च क्रमेण-कुमारिका त्रिमूर्तिः कल्याणी रोहिणी काली चण्डिका शाम्भवी दुर्गा सुभद्रेति नामभिः पूजा कार्या । आसां च प्रत्येकं पूजामन्त्राः फलविशेषाश्च तत्रैव ज्ञेयाः । सामान्यतस्तु – 'मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातृणां रूपधारिणीम् । नवदुर्गात्मिकां साक्षात्कन्यामावाहयाम्यहम् ॥' 'एवमभ्यर्चनं कुर्यात्कुमारीणां प्रयत्नतः । कञ्चुकैश्चैव वस्त्रैश्च गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥ नानाविधैर्भक्ष्यभोज्यैर्भोजयेत्पायसादिभिः ॥' तथा—'ग्रन्थिस्फुटितशीर्णाङ्गीं रक्तपूयव्रणाङ्किताम् । जात्यन्धां केकरां काणीं कुरूपां तनुरोमशाम् ॥ संत्यजेद्रोगिणीं कन्यां दासीगर्भसमुद्भवाम् ॥' तथा—'ब्राह्मणी सर्वकार्येषु जयार्थे नृपवंशजाम् । लाभार्थे वैश्यवंशोत्थां सुतार्थे शूद्रवंशजाम् ॥ दारुणे चान्त्यजातानां पूजयेद्विधिना नरः ॥' इति ॥

नवरात्रे वेदपारायणचण्डीपाठविधिः ।

अत्र वेदपारायणमप्युक्तं रुद्रयामले—'एवं चतुर्वेदविदो विप्रान्सर्वान्प्रसादयेत् । तेषां च वरणं कार्यं वेदपारायणाय वै ॥' इति । तथा एकोत्तरादिवृद्ध्या तु नवमी यावदेव हि । चण्डीपाठं जपेच्चैव जापयेद्वा विधानतः ॥' तिथितत्त्वेवाराहीतन्त्रे—'प्रणवं चादितो जप्त्वा स्तोत्रं वा संहितां पठेत् । अन्ते च प्रणवं दद्यादित्युवाचादिपूरुषः ॥ आधारे स्थापयित्वा तु पुस्तकं प्रजपेत्सुधीः । हस्तसंस्थापनादेव

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

यस्माद्वै विफलं भवेत् ॥ स्वयं च लिखितं यच्च शूद्रेण लिखितं भवेत् । अब्राह्मणेन लिखितं तच्चापि विफलं भवेत् ॥ ऋषिच्छन्दादिक न्यस्य पठेस्तोत्रं विचक्षणः । स्तोत्रे न दृश्यते यत्र प्रणवं तत्र विन्यसेत् ॥ सर्वत्र पाठ्ये विज्ञेयस्त्वन्यथा विफलं भवेत् ॥' एवं नवमीपर्यन्त प्रत्यहं कुर्यात् । अत्र विशेषो हेमाद्रौ देवीपुराणे—'यदाद्ये दिवसे कुर्याच्चण्डिकापूजनादिकम् । द्विगुणं तद् द्वितीयेऽह्नि त्रिगुणं तत् परेऽहनि ॥ नवमीतिथि पर्यन्तं वृद्ध्या पूजाजपादिकम् ॥' इति । एतेन नवरात्रे पूजैव प्रधानं उपवासादि त्वङ्गमिति गम्यते । तिथि-ह्रासे तु तिथिद्वयनिमित्तं पूजादि महालयश्राद्धवदेकदिने आवृत्त्या कार्यम् । वृद्धौ तद्वदेवावृत्तिः ततो नवरात्रोपवासादिसंकल्पं कुर्यात् । स्वस्याशक्तावन्येन वा पूजादि कारयेत् । 'स्वयं वाप्यन्यतो वापि पूजयेत्पूजयीत वा ।' इति तरङ्गिण्यां देवीपुराणात् । इदं च देवीपूजनं शुक्रास्तादावपि कार्यम् । तदुक्तं धर्मप्रदीपे-'नष्टे शुक्रे तथा जीवे सिंहस्थे च बृहस्पतौ । कार्या चैव स्वदेव्यर्चा प्रत्यब्दं कुलधर्मतः ॥' इति । मलमासे तु वचनाभावान्न भवति ॥

अत्र साश्वस्याश्वपूजनमुक्तम् ।

मदनरत्ने देवीपुराणे—आश्वयुक्शुक्लप्रतिपत्स्वातीयोगे शुभे दिने । पूर्वमुच्चैःश्रवा नाम प्रथमं श्रियमावहत् ॥ तस्मात्साश्वैनरैस्तत्र पूज्योऽसौ श्रद्धया सह । पूजनीयाश्च तुरगा नवमी यावदेव हि ॥ शान्तिः स्वस्त्ययनं कार्यं तदा तेषां दिने दिने । धान्यं भल्लातकं कुष्ठं वचा सिद्धार्थकास्तथा ॥ पञ्चवर्णेन सूत्रेण ग्रन्थि तेषां तु बन्धयेत् । वायव्यैर्वारुणैः सौरैः शाक्तैर्मन्त्रैः सवैष्णवैः ॥ वैश्वदेवैस्तथाग्नेयैर्होमः कार्यो दिने दिने ॥' कल्पतरौ त्वेतदग्रेऽन्यदपि—'ज्येष्ठायोगे, पुरा तत्र गजाश्चाष्टौ महाबलाः । पृथिवीमाहवन्पूर्वं सशैलवनकाननाम् । कुमुदैरावणौ पद्मः पुष्पदन्तोऽथ वामनः । सुप्रतीकोऽञ्जनो नीलस्त-स्मात्तांस्तत्र पूजयेत् ॥ शाकाद्दक्षात्समारभ्य नवम्यन्तं च पूर्व-वत् ॥' अश्ववद्धोमादीत्यर्थः ॥

प्रतिपदादौ विशेष पूजा विधिः ।

अथ प्रतिपदादिषु विशेषो दुर्गाभक्तितरङ्गिण्यां भविष्ये—'केशसंस्कारद्रव्याणि प्रदद्यात् प्रतिपद्दिने । पक्वतैलं द्वितीयायां

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

केशसंयमहेतवे ॥' पट्टदोरमिति गौडपाठः । 'दर्पणं च तृतीयायां सिन्दूरालक्तकं तथा । मधुपर्कं चतुर्थ्यां तु तिलकं नेत्रमण्डनम् ॥ पञ्चम्यामङ्गरागं च शक्त्यालंकरणानि च । षष्ठ्यां बिल्वतरौ बोधं सायंसंध्यासु कारयेत् ॥ सप्तम्यां प्रातरानीय गृहमध्ये प्रपूजयेत् । उपोषणमथाष्टम्यामात्मशक्त्या च पूजनम् ॥ नवम्यामुग्रचण्डायाः पूजां कुर्याद्बलिं तथा । संपूज्य प्रेषणं कुर्याद्दशम्यां सारवोत्सवैः ॥ अनेन विधिना यस्तु देवीं प्रीणयते नरः । स्कन्दवत्पालयेद्देवी तं पुत्रधनकीर्तिभिः ॥' कृत्यतत्त्वार्णवे लैङ्गे—'कन्यायां कृष्णपक्षे तु पूजयित्वार्द्रभेपि वा । नवम्यां बोधयेद्देवीं महाविभवविस्तरैः ॥ शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां तु देवीकेशविमोक्षणम् । प्रातरेव तु पञ्चम्यां स्नापयेत्सुशुभैर्जलैः ॥ षष्ठ्यां सायं प्रकुर्वीत बिल्ववृक्षेऽधिवासनम् । सप्तम्यां पत्रिकापूजा अष्टम्यां चाप्युपोषणम् ॥ पूजा च जागरश्चैव नवम्यां विधिवद्बलिः । विसर्जनं दशम्यां तु क्रीडाकौतुकमङ्गलैः ॥' अत्र नवम्यां बोधनासामर्थ्ये षष्ठ्यां बोधनमिति स्मार्ताः । फलभूमार्थिनः समुच्चय इत्यन्ये । नवम्यां मन्त्रः कालिकापुराणे—'इषे मास्यसिते पक्षे नवम्यामार्द्रभे दिवा । श्रीवृक्षे बोधयामि त्वां यावत्पूजां करोम्यहम् ॥' अत्र स्त्रीव्रते विशेषः परिभाषायां ज्ञेयः ॥

अत्राशौचे निर्णयः ।

अत्राशौचे विशेषो निर्णयामृते विश्वरूपनिबन्धे—'आश्विने शुक्लपक्षे तु प्रारब्धे नवरात्रके । शावाशौचे समुत्पन्ने क्रिया कार्या कथं बुधैः ॥ सूतके वर्तमाने च तत्रोत्पन्ने सदा बुधैः । देवीपूजा प्रकर्तव्या पशुयज्ञविधानतः ॥ सूतके पूजनं प्रोक्तं दानं चैव विशेषतः । देवीमुद्दिश्य कर्तव्यं तत्र दोषो न विद्यते ॥' इति कालादर्शे विष्णुरहस्येपि—'पूर्वसंकल्पितं यच्च व्रतं सुनियतव्रतैः । तत्कर्तव्यं नरैः शुद्धं दानार्चनविवर्जितम् ॥' इति गौडनिबन्धे तिथितत्त्वेऽप्युक्तम् । आश्विनकृष्णनवम्यादि शुक्लप्रतिपदादि षष्ठ्यादि सप्तम्यादि चैकं कर्म । अतश्च मध्ये आशौचपातेऽपि न दोषः । 'संकल्पो व्रतसत्त्रयोः' इति विष्णूक्तेरिति । आरब्धं स्वयमेव कार्यं, अनारब्धं त्वन्येन कारयेदिति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दिवोदासः । रजस्वला त्वन्येन कारयेत् । सूतकादिवद्विशेषवचनाभावात् ॥ स्त्रीणां च नवरात्रे ताम्बूलादिचर्वणं भवति । तदुक्तं व्रतहेमाद्रौ गारुडे—'गन्धालंकारताम्बूलपुष्पमालानुलेपनम् । उपवासे न दुष्यन्ति दन्तधावनमञ्जनम् ॥' इति । एतत्सभर्तृकोपवासविषयम् । अन्यश्चात्र विशेषः परिभाषायामुक्तः ॥

उपाङ्गललितव्रतनिर्णयः ।

आश्विनशुक्लपञ्चम्यामुपाङ्गललिताव्रतं महाराष्ट्रेषु प्रसिद्धम् । तत्र यद्यपि कथायां कालविशेषो नोक्तस्तथापि—'रात्रौ जागरणं कुर्याद्गीतवादित्रनिःस्वनैः ।' इति रात्रौ जागरोक्तेः शक्तिपूजाया रात्रौ प्राशस्त्याच्च रात्रिव्यापिनी ग्राह्येति केचित् । वस्तुतस्तु वचनं विना रात्रिपूजायां मानाभावाज्जागरस्य चाङ्गत्वाद्युग्मवाक्यात् 'भुक्त्वा जागरणे नक्ते चन्द्राद्यर्घ्यव्रते तथा । ताराव्रतेषु सर्वेषु रात्रियोगो विशिष्यते ॥' इति कालहेमाद्रौ वचनाच्च पूर्वविद्धा ग्राह्या । रात्रिशब्दः पूर्वविद्धावचन इति हेमाद्रिः । अस्य च भुक्त्वा जागरणरूपत्वादिति साधु प्रतीमः । भुक्त्वा जागरणं यत्रेत्येकं पदम् । तस्मिन्व्रते इत्यर्थः । अन्यथा भुक्त्वेत्यसंगतेः । दिवोदासीयेप्येवम् ॥

सरस्वतीस्थापनपूजनादि विचारः ।

आश्विनशुक्लपक्षे मूलनक्षत्रे पुस्तकेषु सरस्वतीस्थापनम् । यथोक्तं निर्णयामृते देवीपुराणे—'मूलेषु स्थापनं देव्याः पूर्वाषाढासु पूजनम् । उत्तरासु बलिं दद्याच्छ्रवणेन विसर्जयेत् ॥' इति । रुद्रयामलेपि-'मूलऋक्षे सुराधीश पूजनीया सरस्वती । पूजयेत्प्रत्यहं देव यावद्वैष्णवमृक्षकम् ॥ नाध्यापयेन्न च लिखेन्नाधीयीत कदाचन । पुस्तके स्थापिते देव विद्याकामो द्विजोत्तमः ॥' संग्रहे—'आश्विनस्य सिते पक्षे मेधाकामः सरस्वतीम् । मूलेनावाहयेद्देवीं श्रवणेन विसर्जयेत् ॥' मूलस्याद्यपादे आवाहनमिति शिष्टाः । श्रवणाद्यपादे च विसर्जयेत् ।' आदिभागो निशायां तु श्रवणस्य यदा भवेत् । संप्रेषणं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तदा देव्या दशम्यां च महोत्सवः ॥' इति चिन्तामणौ ब्रह्माण्ड-पुराणात् ।

बिल्वाभिमन्त्रणं ।

अथ षष्ठी । गौडनिबन्धे देवीपुराणे—'ज्येष्ठानक्षत्रयुक्तायां षष्ठ्यां बिल्वाभिमन्त्रणम् । सप्तम्यां मूलयुक्तायां पत्रिकायाः प्रवेशनम् ॥ पूर्वाषाढायुताष्टम्यां पूजाहोमाद्युपोषणम् । उत्तरेण नवम्यां तु बलिभिः पूजयेच्छिवाम् ॥ श्रवणेन दशम्यां तु प्रणिपत्य विसर्जयेत् ।' कालिकापुराणे—'बोधयेद्बिल्वशाखायां षष्ठ्यां देवीं फलेषु च । सप्तम्यां बिल्वशाखां तामाहृत्य प्रतिपूजयेत् ॥ पुनः पूजां तथाष्टम्यां विशेषेण समाचरेत् । जागरं च स्वयं कुर्याद्बलिदानं महानिशि ॥ प्रभूत-बलिदानं तु नवम्यां विधिवच्चरेत् । विसर्जनं दशम्यां तु कुर्याद्वै सारवोत्सवैः ॥ धूलिकर्दमनिक्षेपैः क्रीडाकौतुकमङ्गलैः ॥' अत्र सर्वत्र तिथिनक्षत्रयोगादरो मुख्यः कल्पः । तदभावे तु तिथिरेव ग्राह्या । 'तिथिः शरीरं देवस्य तिथौ नक्षत्रमाश्रितम् । तस्मात्तिथिं प्रशंसन्ति नक्षत्रं न तिथिं विना ॥' इति विद्यापतिलिखितवचनात् । तिथिनक्ष-त्रयोर्योगे द्वयोरेवानुपालनम् । योगाभावे तिथिर्ग्राह्या देव्याः पूजनकर्मणि ॥' इति तत्रैव देवलोक्तेश्च ।

अत्र च पत्रीप्रवेशात्पूर्वेद्युः सायंकाले षष्ठ्यभावे पूर्वदिनेऽधि-वासनं कार्यम् । सायंकालेऽत्यन्तासत्त्वे त्वधिवासनलोपः । 'षष्ठ्यां सायं प्रकुर्वीत बिल्ववृक्षेऽधिवासनम् ।' इति पूर्ववचनादिति कल्पतरुः। सायंश्रुतिः फलातिशयमात्रार्था नतु कर्मलोप इत्याचार्यचूडामणिः । अत्र क्रमः । बिल्वसमीपं गत्वा देवीं बिल्वच संपूज्य प्रार्थयेत् । तत्र मन्त्रः— 'रावणस्य वधार्थाय रामस्यानुग्रहाय च । अकाले ब्रह्मणा बोधो देव्यास्त्वयि कृतः पुरा ॥ अहमप्याश्रितः षष्ठ्यां सायाह्ने बोध-धाम्यतः । श्रीशैलशिखरे जातः श्रीफलः श्रीनिकेतनः ॥ नेतव्योऽसि समागच्छ पूज्यो दुर्गास्वरूपतः ॥' इति देव्याःपत्रिका पूजा ।

एवं देवीमधिवास्य परदिने निमन्त्रितबिल्वशाखापत्रीप्रवेशपूजां कुर्यात् । तदुक्तं हेमाद्रौ लैङ्गे—'मूलाभावे तु सप्तम्यां केवलायां प्रवेशयेत् । युग्माभ्यां नवबिल्वस्य फलाभ्यां शाखिकां तथा ॥ तथैव

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्रतिमा देव्याः स्नात्वाभ्युक्ष्य प्रवेशयेत् ।' अत्र चोपवासपूजादावौदयिकी सप्तमी ग्राह्या, न तु युग्मवाक्यात्पूर्वा । 'युगाद्या वर्षवृद्धिश्च सप्तमी पार्वतीप्रिया । रवेरुदयमीक्षन्ते न तत्र तिथियुग्मता ॥' इति कृत्यतत्त्वार्णवोदाहृतवचनात् । 'भगवत्याः प्रवेशादिविसर्गान्ताश्च याः क्रियाः । तिथावुदयगामिन्यां सर्वास्ताः कारयेद्बुधः ॥' इति तथितत्त्वे नन्दिकेश्वरपुराणाच्च । दुर्गाभक्तितरङ्गिण्यामप्येवम् । तत्रापि घटिकातो न्यूनत्वे परा न कार्या । 'व्रतोपवासनियमे घटिकैकापि या भवेत् ।' इति देवलोक्तेरिति गौडाः । दाक्षिणात्यास्तु पूर्ववचनमदृष्ट्वा युग्मवाक्यात्पूर्वां कुर्वन्ति । पत्रिकापूजा च पूर्वाह्ण एव कार्या । न तु मूलानुरोधान्मध्याह्नादाविति कृत्यतत्त्वार्णवे उक्तम् । पत्रिकास्तु—'रम्भा कवी हरिद्रा च जयन्ती बिल्वदाडिमौ । अशोको मानवृक्षश्च धान्यादिनवपत्रिकाः' इति तत्रैवोक्ताः ।

अस्यामेव देवीत्रिरात्रम् ।

अस्यामेव सप्तम्यां देवीत्रिरात्रमुक्तं हेमाद्रौ । प्रतिपदादिनवतिथिषु उपवासकरणासामर्थ्ये सप्तम्यादिदिनत्रये वा कुर्यात् । तदाह धौम्यः—'आश्विने मासि शुक्ले तु कर्तव्यं नवरात्रकम् । प्रतिपदादिक्रमेणैव यावच्च नवमी भवेत् ॥ त्रिरात्रं वापि कर्तव्यं सप्तम्यादि यथाक्रमम् ॥' अतएव हेमाद्रौ देवीपुराणे मङ्गलाव्रते—आश्विने वाथवा माघे चैत्रे वा श्रावणेपि वा । कृष्णाष्टम्यादि कर्तव्यं व्रतं शुक्लावधि हरेः ॥ यावच्छुक्लाष्टमी शक्र उपोष्या तु विधानतः । दानं होमो जपः पूजा कन्या भोज्यास्तथान्वहम् ॥ महाभैरवरूपेण अस्थिमालाधराश्च ये । पूजनीया विशेषेण वस्त्रैर्ग्रामपुरादिषु ॥' इति मासचतुष्टयेऽभिधाय । अन्यत्रापि—'अथवा नवरात्रं च सप्त पञ्च त्रिकं दिवा । एकभक्तेन नक्तेनाऽयाचितोपोषितैः क्रमात् ॥' इति । 'पूजयेताश्विने शक्र यावच्छुक्लाष्टमी भवेत् । सर्वकर्माणि सिध्यन्ति शक्र नास्त्यत्र संशय ॥' इत्युक्तम् । दिवेत्येकरात्रमुक्तम् । गोविन्दार्णवे देवीपुराणे—'नवरात्रव्रते शक्तिस्त्रिरात्रं चैकरात्रकम् । व्रतं चरति यो भक्तस्तस्मै दास्यामि वाञ्छितम् ॥ इति । तत्रापि सप्तम्याः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पूजने पूर्वोक्तो निर्णयः। अत्र तिथियौगपद्ये तंत्रेणोपवासः। तिथिद्वयनिमित्तं पूजादिकं तु भेदेन॥

देवीगृह प्रतिमादिकरण विधिः।

अत्र विशेषो निर्णयामृते भविष्ये—सप्तम्यां नव गेहानि दारुजानि नवानि च। एकं वा वित्तभावेन कारयेत्सुसमाहितः॥ दुर्गागृहं प्रकर्तव्यं चतुरस्रं सुशोभनम्। तन्मध्ये वेदिकां कुर्याच्चतुर्हस्तां समां शुभाम्॥ तस्यां सिंहासनं क्षौमं कम्बलाजिनसंयुतम्। तत्र दुर्गां प्रतिष्ठाप्य सर्वलक्षणसंयुताम्॥ भुजैश्चतुर्भी रुचिरैर्दशभिर्वा विभूषिताम्। तप्तहाटकवर्णाभां त्रिनेत्रां शशिशेखराम्॥ अनेककुसुमाकीर्णां कपर्देन सुशोभिताम्। नितम्बबिम्बसन्नद्धकिङ्किणीक्वाणनादिनीम्॥ शूलचक्रदण्डशक्तिवज्रचापासिधारिणीम्। घण्टाक्षमालाकरकपानपात्रलसत्कराम्॥ तदग्रे छिन्नशिरसं माहिषं रुधिराप्लुतम्। निःसृतार्धतनुं कण्ठनाले चर्मासिधारिणम्॥ देवीधृतकरग्रीवं शूलेनोरसि ताडितम्। नागपाशेन विक्षिप्तं हर्यक्षेणापि विद्रुतम्॥ वमद्रुधिरवक्त्रेण धुन्वतोर्ध्वं सटात्रुषा। सर्वतो मातृचक्रेण सेव्यमानां सुरैस्तथा॥' इति। 'तत्र देवी प्रकर्तव्या हैमी वा राजती तथा। मृद्वार्क्षी लक्षणोपेता खड्गशूले च पूजयेत्॥' वार्क्षी दारुमयी।

देव्याः प्रतिमालक्षणम्

देवीमूर्तिस्थापने विशेषो दुर्गाभक्तितरङ्गिण्यां देवीपुराणे—'याम्यास्य शुभदा दुर्गा पूर्वास्या जयवर्धिनी। पश्चिमाभिमुखी नित्यं न स्थाप्या सौम्यदिङ्मुखी॥' प्रतिमाभावे विशेषस्तत्रैव—'हैमराजतमृद्धातुशैलचित्रार्पितापि वा। खड्गे शूलेऽर्चिता देवी सर्वकामफलप्रदा॥ यद्यद्यस्यायुधं प्रोक्तं तस्मिंस्तां प्रतिपूजयेत्। देवी भक्त्यार्चिता पुंसां राज्यायुःसुतसौख्यदा॥ कृत्यतत्त्वार्णवे कालिकापुराणे—'लिङ्गस्थां पूजयेद्देवीं मण्डलस्थां तथैव च। पुस्तकस्थां महादेवीं पावके प्रतिमासु च॥ चित्रे च त्रिशिखे खड्गे जलस्थां वापि पूजयेत्। बिल्वपत्रैर्यजेद्देवीं तथा जातीप्रसूनकैः॥ नानापिष्टकनैवेद्यैर्धूपदीपैर्मनोहरैः। भगलिङ्गाभिधानैश्च भगलिङ्गप्रगीतकैः॥ भगलिङ्गक्रियाभिश्च प्रीणयेद्वरचण्डिकाम्। परैर्नाक्षिप्यते यस्तु यः परान्नाक्षिप-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

त्यपि ॥ तस्य क्रुद्धा भगवती शापं दद्यात्सुदारुणम् ॥' चित्रमृन्मयादौ स्नानाद्यसम्भवे तत्रैवोक्तम्-'अन्तिके स्थापिते खड्गे स्नापयेद्दर्पणेऽथवा ।' इति ॥

अथ सप्तमीपूजाविधिः।

प्रतिपद्युक्तविधिना फलसंकीर्तनान्ते नवपत्रिकामृन्मयदुर्गापूजाबलिदानानि करिष्य इति संकल्प्य पूर्वनिमन्त्रितबिल्वसमीपं गत्वा संपूज्य—'आगच्छ सर्वकल्याणि' इति पूर्वोक्तमन्त्रं पठित्वा—'बिल्ववृक्ष महाभाग सदा त्वं शङ्करप्रिय। गृहीत्वा तव शाखां च देवीपूजां करोम्यहम् ॥ शाखाच्छेदोद्भवं दुःखं न च कार्यं त्वया प्रभो। गृहीत्वा तव शाखां च पूज्या दुर्गेति च स्मृतिः ॥ उत्तिष्ठ पत्रिके देवी सर्वकल्याणहेतवे। पूजां गृहाण सकलामस्माकं वरदा भव ॥ मेरुमान्दारकैलासहिमवच्छिखरे गिरौ। जातः श्रीफलवृक्ष त्वमम्बिकायाः सदा प्रियः॥' इति संप्रार्थ्य—'ॐ छिन्धि छिन्धि फट् फट्' 'ॐ हुं फट् स्वाहा' इति छित्वा संपूज्य—'ॐ चामुण्डे चल चल इति वाद्यघोषेण देवीं तां च गृहं प्रवेश्य—'आरोपितासि दुर्गे त्वं मृन्मय्यां श्री फलेऽपि च। स्थिरा नितान्तं भूत्वा च गृहे त्वं कामदा भव ॥' इति स्थिरीकृत्य रम्भादिपत्रिकाः पञ्चगव्येन पञ्चामृतेन च स्नापयित्वा वस्त्रेणावेष्ट्य स्थापयेत् । ततः पूर्ववत्संकल्पं कृत्वाऽक्षतानादाय देवीमावाहयेत्। तत्र मन्त्रः—'आवाहयाम्यहं देवीं मृन्मय्यां श्रीफले तथा। कैलासशिखराद्देवि विन्ध्याद्रेर्हिमपर्वतात् ॥ आगत्य बिल्वशाखायां चण्डिके कुरु सन्निधिम्। स्थापितासि मया दुर्गे पूजये त्वां प्रसीद मे ॥ आयुरारोग्यमैश्वर्यं देहि देवि नमोस्तु ते। दुर्गे दुर्गस्वरूपासि सुरतेजोमयेऽर्चिते ॥ सदानन्दकरे देवि प्रसीद मम सिद्धये। एह्येहि भगवत्यम्ब शत्रुक्षयजयप्रदे ॥ भक्तितः पूजयामि त्वां दुर्गे देवि सुरार्चिते । पल्लवैश्च फलोपेतैः पुष्पैश्च सुमनोहरैः ॥ पल्लवे संस्थितै देवि पूजये त्वां प्रसीद मे। दुर्गे देवि इहागच्छ सान्निध्यमिह कल्पय ॥ यज्ञभागान् गृहाण त्वं योगिनीकोटिभिः सह ॥' इति। ततो मूलमन्त्रेण पाद्यादिगन्धान्तोपचारैः-' अमृतोद्भवं च श्रीवृक्षं शंकरस्य सदा प्रियम्! बिल्वपत्रं प्रयच्छामि पवित्रं ते सुरेश्वरि ॥' इति बिल्वपत्रम्, 'ब्रह्मविष्णुशिवादीनां द्रोणपुष्पं सदा प्रियम्। तत्ते दुर्गे प्रयच्छामि सर्वकामार्थसिद्धये ॥' इति द्रोणपुष्पं निवेद्य धूपादि-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दक्षिणान्तां पूजां मूलेन कृत्वा प्रार्थयेत्-ॐमहिषघ्नि महामाये चामुण्डे मुण्डमालिनि। आयुरारोग्यमैश्वर्यं देहि देवि नमोस्तु ते॥ कुङ्कुमेन समालब्धे चन्दनेन विलेपिते । बिल्वपत्रकृतापीडे दुर्गेऽहं शरणं गतः॥ रूपं देहि यशो देहि भगं भगवति देहि मे। पुत्रान्देहि धनं देहि सर्वान्कामांश्च देहि मे॥' 'सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये' इति च सम्प्रार्थ्य पत्रिकाः पूजयेत्। कदल्यां ब्रह्माणीं, दाडिमे रक्तदन्तिकाम्, धान्ये लक्ष्मीं, हरिद्रायां दुर्गाम, माने चामुण्डाम् कचौ कालिकाम्, बिल्वे शिवाम्, अशोके शोकरहिताम्, जयन्त्यां कार्तिकीं चावाह्य सम्पूज्य दुर्गायै बलिं दद्यात्। अत्र शस्त्रादिपूजा वक्ष्यते। ततः स्तुतिं पठेत्। तदुक्तं शिवरहस्ये-'दुर्गां शिवां शान्तिकरीं ब्रह्माणीं ब्रह्मणः प्रियाम्। सर्वलोकप्रणेत्रीं च प्रणमामि सदाशिवाम्॥ मङ्गलां शोभनां शुद्धां निष्कलां परमां कलाम्। विश्वेश्वरीं विश्वमातां चण्डिकां प्रणमाम्यहम्॥ सर्वदेवमयीं देवीं सर्वरोगभयापहाम् ब्रह्मेशविष्णुनमितां प्रणमामि सदा उमाम्॥ विन्ध्यस्थां विन्ध्यनिलयां दिव्यस्थाननिवासिनीम्। योगिनीं योगमातां च चण्डिकां प्रणमाम्यहम्॥ ईशानमातरं देवीमीश्वरामीश्वरप्रियाम्। प्रणतोस्मि सदा दुर्गां संसारार्णवतारिणीम्॥ य इदं पठते स्तोत्रं शृणुयाद्वापि यो नरः। स मुक्तः सर्वपापैस्तु मोदते दुर्गया सह॥'

अथ महाष्टमी।

सा च परयुता ग्राह्या। 'शुक्लपक्षेऽष्टमी चैव शुक्लपक्षे चतुर्दशी। पूर्वविद्धा न कर्तव्या कर्तव्या परसंयुता॥' इति ब्रह्मवैवर्तात्। मदनरत्ने स्मृतिसंग्रहे—शरन्महाष्टमी पूजा नवमीसंयुता सदा। सप्तमीसंयुता नित्यं शोकसंतापकारिणी। जम्भेन सप्तमीयुक्ता पूजिता तु महाष्टमी। इन्द्रेण निहतो जम्भो यस्माद्दानवपुङ्गवः॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सप्तमीमिश्रिताष्टमी। वर्जनीया प्रयत्नेन मनुजैः शुभकाङ्क्षिभिः॥ सप्तमीशल्यसंयुक्तां मोहादज्ञानतोऽपि वा। महाष्टमीं प्रकुर्वाणो नरकं प्रतिपद्यते॥ सप्तमी कलया यत्र परतश्चाष्टमी भवेत्। तेन शल्यमिदं प्रोक्तं पुत्रपौत्रक्षयप्रदम्॥' तथा--'पुत्रान्हन्ति पशून्हन्ति हन्ति राष्ट्रं सराजकम्। हन्ति जातानजातांश्च सप्तमीसहिताष्टमी॥' तेन नात्र त्रिमुहूर्तवेधः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तदा घटिकामात्राप्यौदयिकी ग्राह्या । 'व्रतोपवासनियमे घटिकैकापि या भवेत् ।' इति देवलोक्तेः । गौडा अप्येवमाहुः । अत एवोक्तं भोजराजेन—'नच सप्तमीशल्यसमोपहता' इति । इयं भौमेऽतिप्रशस्ता । 'अष्टम्यामुदिते सूर्ये दिनान्ते नवमी भवेत् । कुजवारो भवेत्तत्र पूजनीया प्रयत्नतः ॥ इति मदनरत्ने वचनात् । 'सप्तमीशल्यसंविद्धा वर्जनीया सदाष्टमी । स्तोकापि सा महापुण्या यस्यां सूर्योदयो भवेत् ॥' इति मदनरत्ने स्मृतिसमुच्चयवचनात् । 'अष्टमी नवमीयुक्ता नवमी चाष्टमीयुता ।' इति पाद्मवचनाच्च ॥

अथ महानवमी मूलयुक्ता ।

इयमेव मूलयुक्ता चेन्महानवमीसंज्ञा । 'आश्वयुक्शुक्लपक्षे याऽष्टमी मूलेन संयुता । सा महानवमी प्रोक्ता त्रैलोक्येपि सुदुर्लभा ॥' इति हेमाद्रौ स्कान्दात् । मूलयुक्तापि सप्तमीयुता चेत्त्याज्यैवेत्युक्तं निर्णयामृते दुर्गोत्सवे—'मूलेनापि हि संयुक्ता सदा त्याज्याष्टमी बुधैः । लेशमात्रेण सप्तम्या अपि स्याद्यदि दूषिता ॥' इति । महाष्टमी पूर्वेद्युः पूर्वाह्णव्यापित्वे पूर्वाऽन्यथा परैवेति निर्णयदीपमतम् । एतच्च तुच्छत्वादुपेक्ष्यम् । रूपनारायणधृते देवीपुराणे—'सप्तमीवेधसंयुक्ता यैः कृता तु महाष्टमी । पुत्रदारधनैर्हीना भ्रमन्तीह पिशाचवत् ॥' यत्तु—'सप्तम्यामुदिते सूर्ये परतो याष्टमी भवेत् । तत्र दुर्गोत्सवं कुर्यान्न कुर्यादपरेऽहनि ॥' इति विश्वरूपनिबन्धवचनं तदाश्विनकृष्णाष्टमीविषयम् । कन्यायां कृष्णपक्षे तु पूजयित्वाष्टमीदिने । नवम्यां बोधयेद्देवीं गीतवादित्रनिःस्वनैः ॥' इति देवीपुराणे । तत्रापि पूजोक्तेरितिहेमाद्रौ निर्णयामृते चोक्तम् । यानि 'भद्रायां भद्रकाल्याश्च मध्ये स्यादर्चन क्रिया । तस्माद्वै सप्तमीविद्धा कार्या दुर्गाष्टमी बुधैः ॥' इति यच्च मोहचूलोत्तरे ब्राह्मे च—'आश्विनस्य सिताष्टम्यामर्धरात्रे तु पार्वती । भद्रकाली समुत्पन्ना पूर्वाषाढासमायुता ॥' इति । तथा—'अत्राष्टम्यां भद्रकाली दक्षयज्ञविनाशिनी । प्रादुर्भूता महाघोरा योगिनी कोटिभिः सह ॥' इति यच्च मदनरत्ने—'महाष्टम्याश्विने मासि शुक्ला कल्याणकारिणी । सप्त-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

म्यापि युता कार्या मूलेन तु विशेषतः ॥' इति, तानि परदिनेऽष्टम्य-भावविषयाणीति मदनरत्ने उक्तम्। यत्तु तत्रैव परदिनेऽष्टमीसत्त्वेपि पूर्वविद्धाविधायकं वचनम्—'यदाष्टमीं तु संप्राप्य ह्यस्तं याति दिवा-करः। तत्र दुर्गोत्सवं कुर्यान्न कुर्यादपरेऽहनि॥ दुर्भिक्षं तत्र जानीया न्नवम्यां यत्र पूज्यते॥' इति, तत्, परदिने दशम्यां नवम्यभावविषयम्। 'यदा सूर्योदये न स्यान्नवमी चापरेऽहनि। तदाष्टमीं प्रकुर्वीत सप्तम्या सहितां नृप॥' इति तत्रैव स्मृतिसंग्रहोक्तेः। 'उत्तरास्तिथयो यत्र त्तयं यान्ति नराधिप। पूर्वाष्टमीं तदा कुर्यादन्यथा त्वशुभं भवेत्॥' इति दुर्गोत्सवोक्तेश्चेति मदनरत्ने। वस्तुतस्तु इदं वचनद्वयं अष्टमीनवम्योः सूर्योदयद्वयासंबन्धपरम्। अत एव 'नवमी च' इति चकारादष्टमी च। तिथय इति बहुवचनादष्टमी नवमीदशम्युक्ता। अन्यथा पूर्वोक्तविरोधादिति दिक्।

यत्तु—'अहं भद्रा च भद्राहं नावयोरन्तरं क्वचित्। सर्वसिद्धिं प्रदास्यामि भद्रायामर्चिता ह्यहम्॥' इति देवीपुराणे, तद्विष्टिकरण-मध्ये पूजाविधानार्थम्। विष्टिं त्यक्त्वा महाष्टम्यां मम पजां करोति यः। तस्य पूजाफलं न स्यात्तेनाहमवमानिता॥' इति तत्रैवोक्तेरिति निर्णयामृते। तथा कालिकापुराणे—'सप्तम्यां पत्रिकापूजा अष्टम्यां चाप्युपोषणम्। पूजा च जागरश्चैव नवम्यां विधिवद्बलिः॥' इति। अष्टम्युपवासश्च पुत्रवता न कार्यः। उपवासं महाष्टम्यां पुत्रवान्न समाचरेत्। यथा तथा वा पूतात्मा व्रती देवीं प्रपूजयेत्॥' इति तत्रैवोक्तेः। रूपनारायणीये ब्राह्मे—'अत्यर्थं पूजनीया सा तस्मिन्नहनि मानवैः। उपोषितैर्वस्त्रधूपमाल्यरत्नानुलेपनैः॥ पशुभिः पानकैर्हृद्यै रात्रौ जागरणेन च। दुर्गागृहे च शस्त्राणि पूजितव्यानि पण्डितैः॥ वाद्यभाण्डानि चिह्नानि कवचान्यायुधानि च॥'

अत्र विशेषो हेमाद्रौ निर्णयामृते भविष्ये—'आश्वयुक्शुक्लपक्षस्य अष्टमी मूलसंयुता। सा महानवमी नाम त्रैलोक्येपि सुदुर्लभा॥ कन्यागते सवितरि शुक्लपक्षेऽष्टमीयुता। मूलनक्षत्रसंयुक्ता सा महा-नवमी स्मृता॥ नवम्यां पूजिता देवी ददात्यभिमतं फलम्। सा पुण्या सा पवित्रा च सा धन्या सुखदायिनी॥ तस्यां सदा पूजनीया

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

चामुण्डामुण्डमालिनी ॥' सदेत्युक्तेर्नित्यतापि। 'तस्यां ये ह्युपयुज्यन्ते प्राणिनो महिषादयः। सर्वे ते स्वर्गतिं यान्ति घ्नतां पापं न विद्यते ॥ यावन्न चालयेद्गात्रं पशुस्तावन्न हन्यते । न तथा बलिदानेन पुष्पधूपविलेपनैः ॥ यथा संतुष्यते मेषैर्महिषैर्विन्ध्यवासिनी । एवं च विन्ध्यवासिन्यां नवरात्रोपवासतः ॥ एकभुक्तेन नक्तेन स्वशक्त्याऽऽयाचितेन च। पूजनीया जनैर्देवी स्थाने स्थाने पुरे पुरे ॥ गृहे गृहे भक्तिपरैर्ग्रामे ग्रामे वने वने । स्नातैः प्रमुदितैर्हृष्टैर्ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्नृपैः ॥ वैश्यैः शूद्रैर्भक्तियुतैर्म्लेच्छैरन्यैश्च मानवैः । स्त्रीभिश्च कुरुशार्दूल तद्विधानमिदं शृणु। जयाभिलाषी नृपतिः प्रतिपत्प्रभृति क्रमात्। लौहाभिसारिकं[1] कर्म कारयेद्यावदष्टमी ॥' इति ।

लौहाभिसारिकं कर्म प्रचारः ।

लौहाभिसारिककर्मविधानं तत्रैवोक्तम्। 'प्रागुदक्प्रवणे देशे पताकाभिरलङ्कृताम् । मण्डपं कारयेद्दिव्यं नवसप्तकरं परम् ॥' षोडशहस्तमित्यर्थः ॥ 'आग्नेय्यां कारयेत्कुण्डं हस्तमात्रं सुशोभनम् । मेखलात्रयसंयुक्तं योन्याऽश्वत्थदलाभया ॥ राजचिह्नानि सर्वाणि शस्त्राण्यस्त्राणि यानि च । आनीय मण्डपे तानि सर्वाण्यत्राधिवासयेत् ॥ ततस्तु ब्राह्मणः स्नातः शुक्लाम्बरधरः शुचिः । ॐकारपूर्वकैर्मन्त्रैस्तल्लिङ्गैर्जुहुयाद्घृतम् । शस्त्रास्त्रमन्त्रैर्होतव्यं पायसं घृतसंयुतम् । हुतशेषं तुरङ्गाणां राजानमुपहारयेत् ॥ लौहाभिसारिकं कर्म तेनैव ऋषिभिः स्मृतम् । धृतपल्ययनानश्वान् गजांश्च समलंकृतान् ॥ भ्रामयेन्नगरे नित्यं बन्दिघोषपुरःसरम् । प्रत्यहं नृपतिः स्नात्वा संपूज्य पितृदेवताः ॥ पूजयेद्राजचिह्नानि फलमाल्यविलेपनैः । तस्याभिसरणाद्राज्ञो विजयः समुदाहृतः ॥ पूजामन्त्रान्प्रवक्ष्यामि पुराणोक्तानहं तव । यैः पूजिताः प्रयच्छन्ति कीर्तिमायुर्यशो बलम् ॥'

राजचिह्नानां पृथक् पूजामन्त्राः ।

अथ मन्त्रा विष्णुधर्मोत्तरोक्ताः । छत्रस्य—'यथाम्बुदश्छादयति शिवायेमां वसुन्धराम्। तथा छादय राजानं विजयारोग्यवृद्धये ॥' शशाङ्ककरसंकाश क्षीरडिण्डीरपाण्डुर। प्रोत्सारयाशु दुरितं चामरा-

---

१ लोहाभिसारोऽस्त्रभृतां राज्ञां नीराजनाविधिः । इत्यमरः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मरदुर्लभम् ॥' अश्वानां वृद्ध्यर्थं रेवन्तप्रजनमहं करिष्ये। 'सूर्यपुत्र महाबाहो छायाहृदयनन्दन। शान्ति कुरु तुरङ्गाणां रेवन्ताय नमो नमः ॥' अनेन मन्त्रेण पूजा। अथाश्वस्य—'गन्धर्वकुलजातस्त्वं मा भूयाः कुलदूषकः। ब्रह्मणः सत्यवाक्येन सोमस्य वरुणस्य च ॥ प्रभावाच्च हुताशस्य वर्धय त्वं तुरङ्गमान्। तेजसा चैव सूर्यस्य मुनीनां तपसा तथा ॥ रुद्रस्य ब्रह्मचर्येण पवनस्य बलेन च। स्मर त्वं राजपुत्रं त्वं कौस्तुभं च मणिं स्मर ॥ यां गतिं ब्रह्महा गच्छेन्मातृहा पितृहा तथा। भ्रूणहानृतवादी च क्षत्रियश्च पराङ्मुखः ॥ सूर्याचन्द्रमसौ वायुर्यावत्पश्यन्ति दुष्कृतम्। व्रजाश्व तां गतिं क्षिप्रं तच्च पापं भवेत्तव ॥ निष्कृतो यदि गच्छेथा युद्धाध्वनि तुरङ्गम। रिपन्विजित्य समरे सह भ्रात्रा सुखी भव ॥' इति। अथ ध्वजस्य—'शक्रकेतो महावीर्य श्यामवर्णार्चयाम्यहम्। पत्रिराज नमस्तेऽस्तु तथा नारायणध्वज ॥ काश्यपेयारुणभ्रातर्नागारे विष्णुवाहन। अप्रमेय दुराधर्ष रणे देवारिसूदन ॥ गरुत्मान्मारुतगतिस्त्वयि संनिहितो यतः। सारवन्त्यायुधान्यत्र रक्ष त्वं च रिपून्दह ॥' अथ पताकायाः 'हुतभुग्वसवो रुद्रा वायुः सोमो महर्षयः। नागकिन्नरगन्धर्वयक्षभूतगणग्रहाः ॥ प्रमथास्तु सहादित्यैर्भूतेशो मातृभिः सह। शक्रः सेनापतिः स्कन्दो वरुणश्चाश्रितास्त्वयि ॥ प्रदहन्त रिपून्सर्वान् राजा विजयमृच्छतु। यानि प्रयुक्तान्यरिभिप्रायुधानि समन्ततः ॥ पतन्तु-परिशत्रूणां हतानि तव तेजसा। हिरण्यकशिपोर्युद्धे युद्धे देवासुरे तथा ॥ कालनेमिवधे यद्वद्यद्वत्त्रिपुरघातने। शोभितासि तथैवाद्य शोभयास्मांश्च संस्मर ॥ नीलाञ्श्वेतानिमान्दृष्ट्वा नश्यन्त्वाशु नृपारयः। व्याधिभिर्विविधैर्घोरैः शस्त्रैश्च युधि निर्जिताः ॥ पूतना रेवती नाम्ना कालरात्रिश्च या स्मृता। दहत्याशु रिपून्सर्वान्पताके त्वं मयार्चिता ॥' अथ गजस्य—'कुमुदैरावणौ पद्मः पुष्पदन्तोऽथ वामनः। सुप्रतीकोऽञ्जनो नील एतेऽष्टौ देवयोनयः। तेषां पुत्राश्चपौत्राश्च वनान्यष्टौ समाश्रिताः ॥ मन्दो भद्रो मृगश्चैव गजः संकीर्ण एव च। वने वने प्रसूतास्ते यूथानि सुमहान्ति च ॥ पान्तु त्वां वसवो रुद्रा आदित्याः समरुद्गणाः। भर्तारं रक्ष नागेन्द्र स्वामिवत्प्रतिपाल्यताम् ॥ अवाप्नुहि जयं युद्धे गमने स्वस्ति नो

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

व्रज । श्रीस्ते सोमाद्बलं विष्णोस्तेजः सूर्याज्जवो निलात् ॥ स्थैर्यं मेरोर्जयं रुद्राद्यशो देवात्पुरन्दरात् । युद्धे रक्षन्तु नागास्त्वां दिशश्च सह दैवतैः ॥ अश्विनौ सह गन्धर्वैः पान्तु त्वां सर्वतः सदा ॥' इति । अथ खड्गमन्त्रः—'असिर्विशसनः खड्गस्तीक्ष्णधारो दुरासदः । श्रीगर्भो विजयश्चैव धर्मधारस्तथैव च । एतानि तव नामानि स्वयमुक्तानि वेधसा । नक्षत्रं कृत्तिका ते तु गुरुर्देवो महेश्वरः ॥ रोहिण्यश्च शरीरं ते दैवतं च जनार्दनः । पिता पितामहो देवस्त्वं मां पालय सर्वदा ॥ नीलजीमूतसङ्काशस्तीक्ष्णदंष्ट्रः कृशोदरः । भावशुद्धो मर्षणश्च अतितेजास्तथैव च ॥ इयं येन धृता क्षोणी हतश्च महिषासुरः । तीक्ष्णधाराय शुद्धाय तस्मै खड्गाय ते नमः ॥' इति । अथ छूरिकायाः—'सर्वायुधानां प्रथमं निर्मितासि पिनाकिना । शूलायुधाद्विनिष्कृष्य कृत्वा मुष्टिग्रहं शुभम् ॥ चण्डिकायाः प्रदत्तासि सर्वदुष्टनिबर्हिणी । तया विस्तारिता चासि देवानां प्रतिपादिता ॥ सर्वसत्त्वाङ्गभूतासि सर्वाशुभनिबर्हिणी । छुरिके ! रक्ष मां नित्यं शान्तिं यच्छ नमोऽस्तु ते ॥' अथ कट्टारकपूजा—'रक्षाङ्गानि गजान् रक्ष रक्ष वाजिधनानि च । मम देहं सदा रक्ष कट्टारक ! नमोऽस्तु ते ॥' कट्टारको मध्यदेशे 'कटारी' इति प्रसिद्धा । अथ धनुःपूजा—'सर्वायुधमहामात्र सर्वदेवारिसूदन । चाप ! मां समरे रक्ष साकं शरवरैरिह ॥ धृतं कृष्णेन रक्षार्थं संहाराय हरेण च । त्रयीमूर्तिगतं देवं धनुरस्त्रं नमाम्यहम् ॥' अथ कुन्तपूजा—'प्रास पातय शत्रूँस्त्वमनया नाकमायया । गृहाण जीवितं तेषां मम सैन्यं च रक्षताम् ॥' अथ चर्मपूजा—'शर्मप्रदस्त्वं समरे चर्म सैन्ये यशोद्यमे । रक्ष मां रक्षणीयोऽहं तापनेय ! नमोऽस्तु ते ॥' अथ कनकदण्डमन्त्रः—'प्रोत्सारणाय दुष्टानां साधुसंरक्षणाय च । ब्रह्मणा निर्मितश्चासि व्यवहारप्रसिद्धये ॥ यशो देहि सुखं देहि जयदो भव भूपतेः । ताडयस्व रिपून्सर्वान्हेमदण्ड ! नमोऽस्तु ते ॥' अथ दुन्दुभिमन्त्रः—'दुन्दुभे त्वं सपत्नानां घोरो हृदयकम्पनः । भव भूमिपसैन्यानां तथा विजयवर्धनः ॥ यथा जीमूतघोषेण प्रहृष्यन्ति च बर्हिणः । तथाऽस्तु तव शब्देन हर्षोऽस्माकं मुदावहः ॥ यथा जीमूतशब्देन स्त्रीणां त्रासोऽभिजायते । तथाऽत्र तव शब्देन त्रस्यन्त्वस्मद्विषो

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

रणे ॥' अथ शङ्खमन्त्रः–'पुण्यस्त्वं शङ्ख ! पुण्यानां मङ्गलानां च मङ्गलम् । विष्णुना विधृतो नित्यमतः शान्तिप्रदो भव ॥'

अथ सिंहासनमन्त्रः–'विजयो जयदो जेता रिपुघाती शुभङ्करः । दुःखहा धर्मदः शान्तः सर्वारिष्टविनाशनः ॥ एते वै सन्निधौ यस्मात्तव सिंहा महाबलाः । तेन सिंहासनेति त्वं देवैर्मन्त्रैश्च गीयसे ॥ त्वयि स्थितः शिवः शान्तस्त्वयि शक्रः सुरेश्वरः । नमस्ते सर्वतोभद्र ! भद्रदो भव भूपतेः ॥ त्रैलोक्यजयसर्वस्व सिंहासन ! नमोऽस्तु ते । तथैव कर्मचिह्नानि स्वानि पूज्यानि शिल्पिभिः ॥ लौहाभिसारिकं कर्म कृत्वैवं मन्त्रपूर्वकम् । नियमं कृत्वा तथाऽष्टम्यां पूर्वाह्णे स्नानमाचरेत् ॥ कुङ्कुमचन्दनचम्पकचतुःसमैः शैलपिष्टैश्च । चर्चितगात्रीं देवीं कुसुमैरभ्यर्चयेद्बहुभिः ॥ कुमुदैः सपद्मपुष्पैः सधूपदीपैः सनैवेद्यैः । मांसैर्बल्युपहारैर्मङ्गलशब्दैः समुच्छलितैः ॥ विहितच्छत्रैर्यानैः स्यन्दनसितशस्त्रधारिजनलोकैः । तुष्टैः पश्वस्त्रादि तु निवेद्यते सर्वमेव भगवत्यै ॥ दुर्गा सा पूजनीया च तद्दिने द्रोणपुष्पकैः । ततः खड्गं नमस्कृत्य शत्रूणां वधसिद्धये ॥ इच्छेत विजयं राज्यं सुभिक्षं चाऽऽत्मने नृपः । पुनः पुनः प्रणम्यार्यां संस्मरन्हृदये शिवाम् ॥ सर्वं कृत्वेति कौरव्य अष्टम्यां जागरं निशि । नटनर्तकगीतैश्च कारयेच्च महोत्सवम् ॥ एवं हृष्टैर्निशां नीत्वा प्रभाते अरुणोदये । घातयेन्महिषान्मेषानग्रतो नतकन्धरान् ॥ शतमर्धशतं वाऽपि तदर्धं वा यथेच्छया । सुरासवभृतैः कुम्भैस्तर्पयेत्परमेश्वरीम् ॥ कापालिकेभ्यस्तद्देयं दासीदासजने तथा । ततोऽपराह्णसमये नवम्यां वै रथे स्थिताम् । भवानीं भ्रामयेद्राष्ट्रे स्वयं राजा सशब्दवान् । कश्चिच्चोपोषितो वीरो विधृतोऽन्येन खड्गवान् ॥

अथ बलिदानविधिः ।

'भूतेभ्यस्तु बलिं दद्यान्मन्त्रेणानेन सामिषम् । सरक्तं सजलं चान्नं गन्धपुष्पाक्षतैर्युतम् । त्रींस्त्रीन्वारान्समूलेन दिग्विदिक्षु किरेद्बलिम् ॥' मन्त्रश्च–'बलिं गृह्णन्त्विमं देवा आदित्या वसवस्तथा । मरुतश्चाश्विनौ रुद्राः सुपर्णाः पन्नगा ग्रहाः ॥ असुरा यातुधानाश्च पिशाचोरगराक्षसाः । डाकिन्यो यक्षवेताला योगिन्यः पूतनाः शिवाः ॥ जृम्भकाः सिद्धगन्धर्वा माला विद्याधरा नगाः । दिक्पाला लोकपालाश्च ये च विघ्नविनायकाः । जगतां शान्तिकर्तारो ब्रह्माद्याश्च महर्षयः । मा

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विघ्नं मा च मे पापं मा सन्तु परिपन्थिनः ॥ सौम्या भवन्तु तृप्ताश्च भूतप्रेताः सुखावहाः ।' इति ॥ इति महाष्टमी ॥

महानवमी पूर्वविद्धा ।

महानवमी तु पूर्वयुता ग्राह्या । पूर्वोक्तवचनात् । 'नवमी दुर्गाव्रते श्रावणी' इति दीपिकोक्तेः । 'श्रावणी दुर्गनवमी दूर्वा चैव हुताशनी । पूर्वविद्धा प्रकर्तव्या शिवरात्रिर्बलेर्दिनम् ॥' इति हेमाद्रौ पाद्मोक्तेश्च । भविष्येऽपि-'आश्वयुक्शुक्लपक्षे तु अष्टमी मूलसंयुता । सा महानवमी नाम त्रैलोक्येऽपि सुदुर्लभा ॥' इति । मूलमुपलक्षणम् । 'दुर्गापूजासु नवमी मूलाद्यृक्षत्रयान्विता । महती कीर्तिता तस्यां दुर्गा महिषमर्दिनी ॥' इति मदनरत्ने लैङ्गात् । अत्र पूजयेदित्यग्रे शेषः । यानि तु—'सा कार्योदयगामिन्यां' इत्यादि प्रागुक्तानि तानि नवमीभिन्नतिथिपराणि । नवम्यां विशेषोक्तेः । वेधश्च मुहूर्तत्रयेणैव ज्ञेयः । यद्यपि हेमाद्रिमते मुहूर्तद्वयात्मापि वेधोऽस्ति, तथाऽपि सूर्योदय एव सः । सायं तु त्रिमुहूर्त एव । तदुक्तं दीपिकायाम्—'त्रिमुहूर्तगा तु सकला सायं' इति । माधवोऽपि-'सायं तूत्तरया तद्वन्न्यूनया न तु विध्यते ।' इति । तेन त्रिमुहूर्तयोगे पूर्वा नवमी पूर्वोक्तवचनात् । 'न कुर्यान्नवमीं तात दशम्यां तु कदाचन ।' इति स्कान्दे परानिषेधाच्च । त्रिमुहूर्तयोगाभावे तु निषिद्धाऽपि परैव कार्येति निष्कर्षः ।

यत्तु—'नवम्यां च जपं होमं समाप्य श्रवणेऽपि वा ।' इति सङ्ग्रहोक्तेः, 'व्रतं च जागरश्चैव नवम्यां विधिवद्बलिः ।' इति देवीपुराणाच्च, नवम्यां होमबल्यादि विहितं तत्र 'आश्वयुक्शुक्लनवमी मुहूर्तं वा कला यदि । सा तिथिः सकला ज्ञेया लक्ष्मीविद्याजयार्थिभिः ॥' इति सौरपुराणात्, 'सूर्योदये परं रिक्ता पूर्णा स्यादपरा यदि । बलिदानं प्रकर्तव्यं तत्र देशे शुभावहम् ॥ बलिदाने कृतेऽष्टम्यां पुत्रभङ्गो भवेन्नृप ॥' इति मदनरत्ने देवीपुराणाच्च बल्यादौ परा कार्या । उपवासादौ तु पूर्वेति मदनरत्ने उक्तम् । प्रतापमार्तण्डेऽप्येवम् । यत्तु—'अष्टम्यां बलिदानेन पुत्रनाशो भवेद्ध्रुवम् ।' इति कालिकापुराणं तत्स-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

न्धिपूजापरम्। 'अष्टमीनवमीसन्धौ तृतीया खलु कथ्यते।' इति तत्रैव तदुक्तेः। कामरूपनिबन्धे-'अष्टम्याः शेषदण्डश्च नवम्याः पूर्व एव च। तत्र या क्रियते पूजा विज्ञेया सा महाफला॥' अष्टमीमात्रे भवत्येव। 'आश्विने पूजयित्वा तु अर्धरात्रेऽष्टमीषु च। घातयन्ति पशून्भक्त्या ते भवन्ति महाबलाः॥' तथा-'कन्यासंस्थे रवावीषे शुक्लाष्टम्यां प्रपूजयेत्। सोपवासो निशाऽर्धे तु महाविभवविस्तरैः॥' तथा-'पशुघातश्च कर्तव्यो गवयाजवधस्तथा।' इति रूपनारायणीये देवीपुराणात्। तत्रैव भविष्ये-'तस्मादियं महापुण्या नवमी पापनाशिनी। उपोष्या सुप्रयत्नेन सततं सर्वपार्थिवैः॥' निर्णयदीपे तु—महानवमी परदिनेऽपराह्णव्यापित्वे परा। अन्यथा पूर्वा। 'आवर्तनात्पूर्वकाले नवमी स्यात्परेऽहनि। दुर्गार्चा तत्र पूर्वेद्युःपूर्वाह्णे त्वष्टमी यदि॥' इति धौम्यवचनादित्युक्तम्। अस्य तु शारदानवमीविषयत्वं समूलत्वं च विमृश्यम्। यानि तु—'नन्दायां ज्वलते वह्निः पूर्णायां पशुघातनम्। भद्रायां गोकुलक्रीडा तत्र राज्यं विनश्यति॥' इति 'नवम्यामपराह्णे तु बलिदानं प्रशस्यते। दशमीं वर्जयेत्तत्र नात्र कार्या विचारणा॥' इति 'नन्दाया दर्शने रक्षा बलिदानं दशासु च। भद्रायां गोकुलक्रीडा देशनाशाय जायते॥' इति ब्रह्मवैवर्तनारदादिवचनानि तानि शुद्धाधिकनिषेधपराणि इति मदनरत्ने होमप्रकारः। तथा कालिकापुराणे-'नवम्यां बलिदानं तु कर्तव्यं वै यथाविधि। जपं होमं च विधिवत्कुर्यात्तत्र विभूतये॥' केचित्तु-'पूर्वाषाढायुताष्टम्यां पूजाहोमाद्युपोषणम्।' इति पूर्वोक्तदेवीपुराणादष्टम्यां होममाहुः। अन्ये तु—द्विविधवाक्यवशादष्टम्यामारभ्य नवम्यां समापयन्ति। समुच्चयस्तु युक्तः। रुद्रयामले तु विकल्प इत्युक्तं तत्तु निर्मूलम्। दुर्गाभक्तितरङ्गिण्यादिगौडग्रन्थेष्वपि नवम्यां होम उक्तः।

होमे च विशेष उक्तो डामरतन्त्रे-'पायसं सर्पिषा युक्तं तिलैः शुक्लैर्विमिश्रितम्। होमयेद्विधिवद्भक्त्या दशांशेन नृपोत्तम॥ रुद्राध्याये यथा होमं मन्त्रेणैकेन साधयेत्। तथा स्तोत्रजपे होमं श्लोकेनैकेन साधयेत्॥ यद्वा सप्तशतीं जप्य होममन्त्रो नवाक्षरः।' 'ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' इति नवाक्षर इति केचित्। पूजोक्तो ग्राह्य इति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तु युक्तम्, रुद्रयामलेऽपि—'प्रधानद्रव्यमुद्दिष्टं पायसान्नं तिलास्तथा । किंशुकैः सर्षपैः पूगैर्लाजदूर्वाङ्कुरैरपि ॥ यवैर्वा श्रीफलैर्दिव्यैर्नानाविधफलैस्तथा । रक्तचन्दनखण्डैश्च गुग्गुलैश्च मनोहरैः ॥ प्रतिश्लोकं च जुहुयात्सर्वद्रव्याणि च क्रमात् । नवाक्षरेण वा हुत्वा नमो देव्या इतीति च ॥' इति। रहस्ये तु—'प्रतिश्लोकं च जुहुयात्पायसं तिलसर्पिषा।' इत्युक्तम् । दुर्गाभक्तितरङ्गिण्यां तु—तिलैर्जयन्तीमन्त्रेणच होम उक्तः। 'पुरश्चरणकार्ये तु बिल्वपत्रयुतैस्तिलैः' इति कालिकापुराणाद्बिल्वपत्रैश्चेति स्मार्ताः । तन्न । अन्यत्र मानाभावात् ॥

अथ बलिदानम् ।

तत्राश्वमेधच्छागमहिषस्वमांसानामुत्तरोत्तरप्राशस्त्यं फलविशेषश्चान्यतोऽवसेय इति दिक् । बलिप्रकारस्तु देवीपुराणे—'कन्यासंस्थे रवौ शक्तः शुक्लाष्टम्यां प्रपूज्य तु । द्रोणपुष्पैश्च बिल्वाम्रजातीपुन्नागचम्पकैः ॥ पञ्चाब्दं लक्षणोपेतं गन्धपुष्पसमन्वितम् । विधिवत्कालि कालीति जप्त्वा खड्गेन घातयेत् ॥' 'ॐ कालि कालि यज्ञेश्वरि लोहदण्डायै नमः' इति मन्त्रः । 'तदुत्थरुधिरं मांसं गृहीत्वा पूतनादिषु ।' आदिशब्दाच्चरकीविदारीपापराक्षस्यः । 'नैर्ऋतेभ्यः प्रदातव्यं महाकौशिकमन्त्रितम् ॥' मन्त्रस्तु वक्ष्यते । तथा—'तस्याग्रतो नृपः स्नायात्कृत्वा शत्रुं तु पैष्टिकम् । खड्गेन घातयित्वा तु दद्यात्स्कन्दविशाखयोः ॥' अशक्तौ ब्राह्मणेन च कूष्माण्डादिभिर्बलिदानं कार्यम् । तदुक्तं कालिकापुराणे—'कूष्माण्डमिक्षुदण्डं च मांसं सारसमेव च । एते बलिसमाः प्रोक्तास्तृप्तौ छागसमाः सदा ॥' रुद्रयामलेऽपि—'छागाभावे तु कूष्माण्डं श्रीफलं वा मनोहरम् । वस्त्रसम्वेष्टितं कृत्वा छेदयेच्छुरिकादिना ॥' तथा—'ब्राह्मणेन सदा देयं कूष्माण्डं बलिकर्मणि । श्रीफलं वा सुराधीश छेदं नैव तु कारयेत् ॥' छेदे विकल्पः । 'माषान्नेन बलिर्देयो ब्राह्मणेन विजानता ।' कालिकापुराणे—'उत्तराभिमुखो भूत्वा बलिं पूर्वमुखं तथा । निरीक्ष्य साधकः पश्चादिमं मन्त्रमुदीरयेत् ॥ पशुस्त्वं बलिरूपेण मम भाग्यादुपस्थितः । प्रणमामि ततः सर्वरूपिणं बलिरूपिणम् ॥ चण्डिकाप्रीतिदानेन दातुरापद्विनाशनम् । चामुण्डाबलिरूपाय बले तुभ्यं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नमोऽस्तु ते ॥ यज्ञार्थे बलयः सृष्टाः स्वयमेव स्वयम्भुवा । अतस्त्वां घातयाम्यद्य तस्माद्यज्ञे वधोऽवधः ॥ ऐंह्रींश्रीमिति मन्त्रेण तं बलिं मत्स्वरूपिणम् । चिन्तयित्वा न्यसेत्पुष्पं मूर्ध्नि तस्य तु भैरव ॥ रसना त्वं चण्डिकायाः सुरलोकप्रसाधकः । ह्रींह्रींखड्गेतिमन्त्रेण ध्यात्वा खड्गं च पूजयेत् ॥ पूजयित्वा ततः खड्गं ॐ हुंफडिति मन्त्रकैः गृहीत्वा विमलं खड्गं छेदयेद्बलिमुत्तमम् ॥ ॐ ह्रींऐंह्रींकौशिकीति रुधिरेणाऽऽप्यायतामिति । बलिदाने तु दुर्गायाः सर्वत्रायं विधिः स्मृतः ॥' मत्स्यसूक्ते–'नवम्यां पूर्ववत्पूजा कर्तव्या भूतिमिच्छता । दक्षिणां वस्त्रयुग्मं च आचार्याय निवेदयेत् ॥'

अथ शतचण्डीविधानम् ।

अथात्र प्रसङ्गाच्छतचण्डीविधानमुच्यते । रुद्रयामले–'शतचण्डीविधानं च प्रोच्यमानं शृणुष्व तत् । सर्वोपद्रवनाशार्थे शतचण्डीं समारभेत् ॥ षोडशस्तम्भसंयुक्तं मण्डपं पल्लवोज्ज्वलम् । वसुकोणयुतां वेदीं मध्ये कुर्यात्त्रिभागतः ॥ पक्वेष्टकचितां रम्यामुच्छ्राये हस्तसम्मिताम् । पञ्चवर्णरजोभिश्च कुर्यान्मण्डलकं शुभम् ॥ पञ्चवर्णवितानं च किङ्किणीजालमण्डितम् । आचार्येण समं विप्रान्वरयेद्दश सुव्रतान् ॥ ईशान्यां स्थापयेत्कुम्भं पूर्वोक्तविधिना चरेत् । वारुण्यां च प्रकर्तव्यं कुण्डं लक्षणलक्षितम् ॥ मूर्तिं देव्याः प्रकुर्वीत सुवर्णस्य पलेन वै । तदर्धेन तदर्धेन तदर्धेन महामते ॥ अष्टादशभुजां देवीं कुर्याद्वाष्टकरामपि । पट्टकूलयुगच्छन्नां देवीं मध्ये निधापयेत् ॥ देवीं सम्पूज्य विधिवज्जपं कुर्युर्दशद्विजाः । शतमादौ शतं चान्ते जपेन्मन्त्रं

---

(१)—अथ चण्डीपाठफलमाह । वाराही तन्त्रे—ईश्वर उवाच—चण्डीपाठफलं देवी ! शृणुष्व गदतो मम । ग्रहोपशान्त्यै कर्तव्यं पञ्चावृत्तं वरानने ॥ महाभये समुत्पन्ने सप्तावृत्तमुदीरयेत् । अर्कावृत्तेः काम्यसिद्धिर्वैरिहानिश्च जायते ॥ मन्वावृत्त्या रिपुर्वश्यस्तथा स्त्री—वश्यतामियात् । सौख्यं पञ्चदशावृत्ताच्छ्रियमाप्नोति मानवः ॥ कलावृत्तात्पुत्रपौत्रधनधान्यादिकं विदुः । राज्ञां भीतिविमोक्षाय वैरस्योच्चाटनाय च ॥ कुर्यात्सप्तदशावृत्तं तथाऽष्टादशकं प्रिये । महाव्रणविमोक्षाय विंशावृत्तं पठेन्नरः ॥ पञ्चविंशावर्तनाच्च भवेद्बन्धविमोक्षणम् । सङ्कटे समनुप्राप्ते दुश्चिकित्सामये तथा ॥ जातिध्वंसे कुलच्छेदे आयुषो नाश आगते । वैरिवृद्धौव्याधिवृद्धौ धननाशे तथा क्षये ॥ तथैव त्रिविधोत्पाते तथा चैवातिपातके । कुर्याद्यत्नाच्छतावृत्तं ततः सम्पद्यते शुभम् ॥ यथाऽश्वमेधः क्रतुराड् देवानां च यथा हरिः । स्तवानामपि सर्वेषां तथा सप्तशतीस्तव ॥ अथवा बहुनोक्तेन किमेतेन वरानने । चण्ड्या शतावृत्तिपाठात् सर्वाः सिद्ध्यन्ति सिद्धयः ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नवार्णवम् ॥ चण्डीं सप्तशतीं मध्ये सम्पुटोऽयमुदाहृतः । एकं द्वे त्रीणि चत्वारि जपेद्दिनचतुष्टयम् ॥ रूपाणि क्रमशस्तद्वत्पूजनादिकमाचरेत् । पञ्चमे दिवसे प्रातर्होमं कुर्याद्विधानतः ॥ गुडूचीं पायसं दूर्वां तिलाञ्शुक्लान्यवानपि । चण्डीपाठस्य होमं तु प्रतिश्लोकं दशांशतः ॥ होमं कुर्याद्ग्रहादिभ्यः समिदाज्यचरून्क्रमात् । हुत्वा पूर्णाहुतिं दद्याद्विप्रेभ्यो दक्षिणां क्रमात् ॥ कपिलां गां नीलमणिं श्वेताश्वं छत्रचामरे । अभिषेकं ततः कुर्युर्यजमानस्य ऋत्विजः ॥ एवं कृतेऽमरेशान सर्वसिद्धिः प्रजायते ॥'

अथ सहस्रचण्डीप्रकारः ।

सा च तत्रैवोक्ता—'सहस्रचण्डीं विधिवच्छृणु विष्णो महामते । राज्यभ्रंशे महोत्पाते जनमारे महाभये ॥ गजमारेऽश्वमारे च परचक्रभये तथा । इत्यादिविविधे दुःखे क्षयरोगादिजे भये ॥ सहस्रचण्डिकापाठं कुर्याद्वा कारयेत्तथा । जापकास्तु शतं प्रोक्ता विंशद्धस्तश्च मण्डपः ॥ भोज्याः सहस्रं विप्रेन्द्रा गोशतं दक्षिणां दिशेत् । गुरवे द्विगुणं देयं शय्यादानं तथैव च । सप्तधान्यं च भूदानं श्वेताश्वं च मनोहरम् ॥ पञ्चनिष्कमिता मूर्तिः कर्तव्या वाऽर्धमानतः । अष्टादशभुजा देवी सर्वायुधविभूषिता । अवारितान्नं दातव्यं सहस्रं प्रत्यहं प्रभो । शतं वा नियताहारः पयःपानेन वर्तयेत् ॥ एवं यश्चण्डिकापाठं सहस्रं तु समाचरेत् ॥ तस्य स्यात्कार्यसिद्धिस्तु नाऽत्र कार्या विचारणा ॥' इति । एतद्द्वयं यद्यपि महानिबन्धेषु नास्ति तथाऽतिप्रचरद्रूपत्वादुक्तमिति दिक् ।

वाराहीतन्त्रे–'सङ्कटे समनुप्राप्ते दुश्चिकित्स्यामये तथा । जातिभ्रंशे कुलोच्छेदेऽप्यायुषो नाश आगते ॥ वैरिवृद्धौ व्याधिवृद्धौ धननाशे तथा क्षये । तथैव त्रिविधोत्पाते तथा चैवोपपातके ॥ कुर्याद्यत्नाच्छतावृत्तं ततः सम्पद्यते शुभम् । श्रेयोवृद्धिः शतावृत्ताद्राज्यवृद्धिस्तथापरा ॥ मनसा चिन्तितं देवि सिद्ध्येदष्टोत्तराच्छतात् । सहस्रावर्तनाल्लक्ष्मीरावृणोति स्वयं स्थिरा ॥ भुक्त्वा मनोरथान्कामान्नरो मोक्षमवाप्नुयात् । चण्ड्याः शतावृत्तिपाठात्सर्वाः सिद्ध्यन्ति सिद्धयः ॥' इति शतचण्डीसहस्रचण्डीविधिः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ नवरात्रपारणानिर्णयः ।

सा च दशम्यां कार्या । 'आश्विने मासि शुक्ले तु कर्तव्यं नवरात्रकम् । प्रतिपदाह्निक्रमेणैव यावच्च नवमी भवेत् ॥ त्रिरात्रं वाऽपि कर्तव्यं सप्तम्यादि यथाक्रमम् ।' इति हेमाद्रौ धौम्यवचनात् । 'नवमीतिथिपर्यन्तं वृद्ध्या पूजाजपादिकम् ।' इति प्रागुक्तवचनैर्नवमीपर्यन्तं प्रधानभूतपूजाद्युक्तेरुपवासादेश्चाङ्गत्वेन तत्पर्यन्तत्वात्, आदिशब्देनोपवासोक्तेः पूर्वोक्तत्रिरात्रव्रते नवम्या अप्युपोष्यत्वाच्च । न च पारणान्तत्वेन त्रिरात्रत्वम् । विष्णुत्रिरात्रादौ तथा प्रसक्तेः । न चाऽत्रोपवासे मानाभाव इति वाच्यम् । 'एवं च विन्ध्यवासिन्या नवरात्रोपवासतः । एकभक्तेन नक्तेन तथैवायाचितेन च ॥ पूजनीया जनैर्देवी स्थाने स्थाने पुरे पुरे ।' इति हेमाद्रौ भविष्योक्तेः । नवरात्रसमाख्यातो नवम्या अप्युपोष्यत्वाच्च । ननु तिथिह्रासेऽष्टावप्युपवासा भवन्तीति कथं समाख्या । तेन कर्मविशेषे नवरात्रशब्दो रूढः । अत एवोक्तं देवीपुराणे—'तिथिवृद्धौ तिथिह्रासे नवरात्रमपार्थकम् ।' इति चेन्न । तिथिह्रासेऽपि नवतिथीनामुपोष्यत्वान्नवरात्रत्वाक्षतेः । एतेन रात्रीणां प्राधान्यात् ह्रासे अमामादाय नवत्वमिति मूर्खोक्तिः परास्ता । यत्तु देवीपुराणे—'कन्यासंस्थे रवौ शक्र शुक्लामारभ्य नन्दिकाम् । अयाची ह्यथवैकाशी नक्ताश्यप्यथवाऽब्वदः' इति व्रतचतुष्टयमुक्तं तल्लौहाभिसारिकविषयम् । तस्य 'जयाभिलाषी नृपतिः प्रतिपत्प्रभृति क्रमात् । लौहाभिसारिकं कर्म कारयेद्यावदष्टमी ॥' इति भविष्येऽष्टमीपर्यन्तमेवोक्तेः । रूपनारायणेन तु नन्दादिव्रतप्रयोगं पृथगेवोक्त्वा तस्य नवम्यां पारणमुक्तम् । यदपि निर्णयदीपे-'आश्विने शुक्लपक्षे तु नवरात्रमुपोषितः । नवम्यां पारणं कुर्याद्दशमीमिश्रिता न चेत् ॥ दशमीमिश्रिता यत्र पारणे नवमी भवेत् । दुःखदारिद्र्यदा ज्ञेया तथा व्रतविनाशिनी ॥' इति ब्राह्म नाम्ना लिखितं वचनम् । यच्च रुद्रयामले इति वदन्ति-'अष्टम्या सह कार्या स्यान्नवमी पारणादिने । यो मोहाद्दशमीवेधे नवम्यां चण्डिकां यजेत् ॥ पारणं च प्रकुर्याद्वै तस्य पुण्यं निरर्थकम् । नवम्यां पारिता

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

देवी कुलवृद्धिं प्रयच्छति ॥ दशम्यां पारिता देवी कुलनाशं करोति वै । तस्मात्तु पारणं कुर्यान्नवम्यां विबुधाधिप ! ॥' इत्यादीनि तानि यदि समूलानि तदा लौहाभिसारिकनन्दादिव्रतचतुष्टयविषयाणि । तस्याऽष्टमीपर्यन्तमेवोक्तेरित्युक्तं प्राक् । अन्यथा महाष्टम्यां परविद्धायां पारणाविधाने पूर्वनिबन्धैर्विरोधो दुर्वारः स्यात् । यानि तु कैश्चिल्लिखितानि नवम्यां पारणाविधायकानि वचनानि, तानि हेमाद्र्यादिविरुद्धत्वान्निर्मूलानि । समूलत्वेऽपि यदा दिनद्वये नवमी, तदा द्वितीयदिन उपोष्य तिथ्यन्ते पारणा न, किन्तु नवमीमध्ये कार्येत्येव नेयानि । शिवरात्रिपारणावत् ।

अथ स्त्रीणां रजोदर्शने पारणानिर्णयः ।

अत्र केचित्पारणाहे सूतकादिप्राप्तौ तदतिक्रम्य पारणां कुर्यादित्याहुः । तन्मन्दम् । 'काम्योपवासे प्रक्रान्ते त्वन्तरा मृतसूतके । तत्र काम्यव्रतं कुर्याद्दानार्चनविवर्जितम् ॥' इति माधवीये कौर्मोक्तेः । 'व्रतयज्ञविवाहेषु श्राद्धे होमेऽर्चने जपे । प्रारब्धे सूतकं न स्यादनारब्धे तु सूतकम् ॥' इति विष्णुवचनाच्चाशौचमध्येऽपि तत्कर्तव्यतावगतेः । पारणान्तत्वाद्व्रतस्य । प्रारम्भस्तु तेनैवोक्तः-'प्रारम्भो वरणं यज्ञे सङ्कल्पो व्रतसत्रयोः । नान्दीमुखं विवाहादौ श्राद्धे पाकपरिक्रिया ॥' इति । रुद्रयामलेऽपि-'सूतके पारणं कुर्यान्नवम्यां होमपूर्वकम् । तदन्ते भोजयेद्विप्रान्दानं दद्याच्च शक्तितः ॥'इति । तदन्ते सूतकान्ते[1] । एवं स्त्रीभिरपि रजोदर्शनमध्ये कर्तव्यमेव पारणम् । 'सम्प्रवृत्तेऽपि रजसि न त्याज्यं द्वादशीव्रतम् ।' इति माधवीये ऋष्यश्रृङ्गवचनात् । द्वादशीव्रतमित्युपलक्षणम् । 'प्रारब्धदीर्घतपसां नारीणां यद्रजो भवेत् । न तत्राऽपि व्रतस्य स्यादुपरोधः कदाचन ॥' इति तत्रैव सत्यव्रतवचनात् । किञ्च एकादश्यादौ पञ्चषाशौचपाते मासान्ते पारणापत्तिः । मासोपवासान्ते पञ्चषाशौचपाते जीवनासम्भवश्च । यत्तु—'नियमस्था

१—ब्राह्मणभोजनं भूयसीदानादिकं च सूतकान्ते कार्यमित्यर्थः । रामचन्द्रभट्टास्तु—'नवरात्रे होमस्य पूजारूपत्वेन मुख्यत्वात्तस्य चानन्यसाध्यत्वेनाशौचेऽसम्भवात् 'न तु दानार्चनं जपम्' इति निषेधात्तत्समाप्तिं विना च नियमरूपोपवाससमाप्त्यसम्भवादाशौचान्ते होमादि कृत्वा पारणं कार्यम् । यैस्तु होमो न क्रियते तेषां सूतकादिमध्ये पारणं भवेत्' इत्याहुः । इति टीकाशयः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

यदा नारी प्रपश्येदन्तरा रजः । उपोष्यैव तु ता रात्रीः स्नात्वा शेषं चरेद्व्रतम् ॥' इत्यङ्गिरोवचनम्, यच्च हारीतवचनम्—'नियमस्था व्रतस्था स्त्री रजः पश्येत्कथञ्चन । त्रिरात्रं तु क्षिपेदूर्ध्वं व्रतशेषं समापयेत् ॥' तद्विधवोपवासविषयम् । तासां तत्र भोजननिषेधादिति केचित् । वयं तु प्रागुक्तसत्यव्रतवचने दीर्घतपसामिति विशेषणोपादानात् । द्वादशीव्यतिरिक्तसकलैकाहोपवासविषयोऽयं निषेधः । त्रिरात्रनवरात्रादिदीर्घव्रतेषु तु रजोमध्ये पारणेति ब्रूमः । आशौचमध्ये तु सर्वाऽपि पारणा भवति प्रागुक्तकौर्मवचनादिति सिद्धम् । अयं चोपवासपारणानिर्णयः सर्वव्रतेषु बोद्धव्य इत्यलं भूयसा ॥

अथ दशम्यां देवीविसर्जनविधिः ।

दशम्यां देवीं विसर्जयेत् । तदुक्तं दुर्गाभक्तितरङ्गिण्यां देवीपुराणे-'ततः प्रातः पूजयित्वा दशम्यां विधिपूर्वकम् । सम्प्रेषणं तु कर्तव्यं गीतवादित्रनिःस्वनैः ॥ रूपं देहि यशो देहि भगं भगवति देहि मे । पुत्रान्देहि धनं देहि सर्वकामांश्च देहि मे ॥ महिषघ्नि महामाये चामुण्डे मुण्डमालिनि । आयुरारोग्यमैश्वर्यं देहि देवि नमोऽस्तु ते ॥ इति सम्प्रार्थ्य देवीं तु तत उत्थापयेद्बुधः । उत्तिष्ठ देवि चण्डेशि शुभां पूजां प्रगृह्य च । कुरुष्व मम कल्याणमष्टाभिः शक्तिभिः सह । गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं देवि चण्डिके ॥ व्रज स्रोतोजलं वृद्ध्यै स्थीयतां च जले त्विह ॥' इति उत्थाप्य जलं नीत्वा—'दुर्गे देवि जगन्मातः स्वस्थानं गच्छ पूजिते । सम्वत्सरे व्यतीते तु पुनरागमनाय वै ॥ इमां पूजां मया देवि यथाशक्त्योपपादिताम् । रक्षार्थं त्वं समादाय व्रज स्वस्थानमुत्तमम्॥' इति जले प्रवाहयेत् ।

अथ विजयादशमी ।

इयमेव विजयादशमी । सा च द्वितीयदिने श्रवणयोगाऽभावे पूर्वा ग्राह्या । तदुक्तं हेमाद्रौ स्कान्दे—'दशम्यां तु नरैः सम्यग् पूजनीयाऽपराजिता । ऐशानीं दिशमाश्रित्य अपराह्णे प्रयत्नतः ॥ या पूर्णा नवमीयुक्ता तस्यां पूज्याऽपराजिता । क्षेमार्थं विजयार्थं च पूर्वोक्तविधिना नरैः ॥ नवमीशेषयुक्तायां दशम्यामपराजिता । ददाति विजयं देवी पूजिता जयवर्धिनी ।।' तथा-'आश्विने शुक्लपक्षे तु दशम्यां पूजयेन्नरः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

एकादश्यां न कुर्वीत पूजनं चापराजितम् ॥' इति । यदा तु पूर्वदिने श्रवणयोगाऽभावः, परदिने चाऽल्पापि तद्योगिनी तदा परैव । तथा च हेमाद्रौ व्रतकाण्डे कश्यपः—'उदये दशमी किञ्चित्सम्पूर्णैकादशी यदि । श्रवणर्क्षं यदा काले सा तिथिर्विजयाभिधा ॥ श्रवणर्क्षे तु पूर्णायां काकुत्स्थः प्रस्थितो यतः । उल्लङ्घयेयुः सीमानं तद्दिनर्क्षे ततो नराः ॥' इति । कालेऽपराह्णे । परदिनेऽपराह्णे श्रवणाभावे तु सर्वपक्षेषु पूर्वैव । मदनरत्नेऽप्येवम् । ज्योतिर्निबन्धे रत्नकोशे च नारदः—'ईषत्सन्ध्यामतिक्रान्तः किञ्चिदुद्भिन्नतारकः । विजयो नाम कालोऽयं सर्वकार्यार्थसिद्धिदः ॥ इषस्य दशमीं शुक्लां पूर्वविद्धां न कारयेत् । श्रवणेनाऽपि संयुक्तां राज्ञां पट्टाभिषेचने ॥ सूर्योदये यदा राजन्दृश्यते दशमी तिथिः । आश्विने मासि शुक्ले तु विजयां तां विदुर्बुधाः ॥' अत्रायं निर्गलितोऽर्थः—अपराह्णो मुख्यः कर्मकालः । तत्रैव पूजाद्युक्तेः । प्रदोषो गौणः । तत्र दिनद्वयेऽपराह्णव्यापित्वे पूर्वा । प्रदोषव्याप्तेराधिक्यात् । दिनद्वये प्रदोषव्यापित्वे परा । अपराह्णव्याप्तेराधिक्यात् । श्रवणस्तु रोहिणीवदप्रयोजकः । दिनद्वयेऽपराह्णस्पर्शे तु पूर्वा । तत्राऽपि परदिनेऽपराह्णे श्रवणसत्त्वे परैवेति दिक् ।

अत्र विशेषो भार्गवार्चनदीपिकायां भविष्ये—'शमीयुक्तं जगन्नाथं भक्तानामभयङ्करम् । अर्चयित्वा शमीवृक्षमर्चयेच्च ततः पुनः ॥' शमीमन्त्रस्तु हेमाद्रौ गोपथब्राह्मणे—'अमङ्गलानां शमनीं शमनीं दुष्कृतस्य च । दुःस्वप्ननाशिनीं धन्यां प्रपद्येऽहं शमीं शुभाम् ॥' तथा भविष्ये—'शमी शमयते पापं शमी लोहितकण्टका । धारिण्यर्जुनबाणानां रामस्य प्रियवादिनी ॥ करिष्यमाणयात्रायां यथाकालं सुखं मया । तत्र निर्विघ्नकर्त्री त्वं भव श्रीरामपूजिते ॥ गृहीत्वा साक्षतामार्द्रां शमीमूलगतां मृदम् । गीतवादित्रनिर्घोषैरानयेत्स्वगृहं प्रति ॥ ततो भूषणवस्त्रादि धारयेत्स्वजनैः सह ॥' इति ॥

[क्वचिच्छम्यभावादश्मन्तकं पूजयन्ति । तत्र—'अश्मन्तक महावृक्ष महादोषनिवारण । इष्टानां दर्शनं देहि शत्रूणां च निवारय' इति अश्मन्तकप्रार्थनामन्त्रः ।] अत्रैव बलिनीराजनमुक्तं कृत्यरत्ने । तत्र मन्त्रः—'चतुरङ्गबलं मह्यं निररित्वं व्रजत्विह । सर्वत्र विजयो मेऽस्तु

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

त्वत्प्रसादात्सुरेश्वरि ॥' इति । गौडनिबन्धे ज्योतिषे—'कृत्वा नीराजनं राजा बलवृद्ध्यै यथाक्रमम् ॥ शोभनं खञ्जनं पश्येज्जलगोगोष्ठसन्निधौ ॥' अस्य फलानि शुभाशुभदेशाश्च तत्रैव ज्ञेयाः ॥

अथ पौर्णमास्यां कोजागरीलक्ष्मीपूजननिर्णयः ।

आश्विनपौर्णमासी परा ग्राह्या । 'सावित्रीव्रतमन्तरेण भवतोऽमापौर्णमास्यौ परे' इति दीपिकोक्तेः । अत्र विशेषस्तिथितत्त्वे लैङ्गे—'आश्विने पौर्णमास्यां तु चरेज्जागरणं निशि । कौमुदी सा समाख्याता कार्या लोकैर्विभूतये ॥ कौमुद्यां पूजयेल्लक्ष्मीमिन्द्रमैरावतस्थितम् । सुगन्धिर्निशि सद्वेष अक्षैर्जागरणं चरेत् ॥' तथा—'निशीथे वरदा लक्ष्मीः कोजागर्तीति भाषिणी । तस्मै वित्तं प्रयच्छामि अक्षैः क्रीडां करोति यः ॥' इति ॥

अथ अश्वयुजीकर्मविधिः ।

अत्रैवाश्वयुजीकर्मोक्तमाश्वलायनेन—'आश्वयुज्या माश्वयुजीकर्म' इति । तच्छेषपर्वणि कार्यम् । विकृतित्वात् । तत्र पूर्वाह्णव्यापिनी ग्राह्या । दैवकर्मत्वात् ।

अथ आग्रयणनिर्णयः ।

आग्रयणं तु पर्वणि कार्यम् । 'शरद्याग्रयणं नाम पर्वणि स्यात्तदुच्यते ।' इति शौनकोक्तेः । तत्राऽपि शेषपर्वणि कार्यमिति प्रागुक्तम् । तच्च—'व्रीहिभिरिष्ट्वा व्रीहिभिरेव यजेत यवेभ्यो यवैरिष्ट्वा यवैरेव यजेत व्रीहिभ्यः' इति श्रुत्या दर्शपूर्णमासयोरेककर्मत्वेनैकद्रव्यनियमाद्दर्शेष्ट्याः परं पौर्णमासेष्ट्याश्च प्राग्भवतीति हेमाद्र्यादयः । 'दर्शेष्ट्याः परमुक्तमाग्रयणकं प्राक्पौर्णमासाच्च तत्' इति दीपिकोक्तेश्च । तच्चाग्रयणं त्रेधा व्रीह्याग्रयणं यवाग्रयणं श्यामाकाग्रयणं चेति । एषां कालः श्रुतौ—'गृहमेधी व्रीहियवाभ्यां शरद्वसन्तयोर्यजेत श्यामाकैर्नीवारैर्वर्षास्वापत्कालेनान्येन पुराणैर्वा' इति । आपस्तम्बोऽपि—'वर्षासु श्यामाकैर्यजेत शरदि व्रीहिभिर्वसन्ते यवैर्यथर्तु वेणुयवैः' इति । तत्राऽपि श्यामाकाग्रयणमनित्यम् । इतरे तु अनाहिताग्नेर्नित्ये । यवाग्रयणं च कार्यमिति स्मार्तवृत्तावुक्तत्वात् । सूत्रे व्रीहियवदेवता-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

सम्बद्धानामेव मन्त्राणामाम्नानाच्च । आहिताग्नेस्तुय वाग्रयणस्याप्यनित्यत्वम् । 'अपि वा क्रिया यवेषु' इति सूत्रात् । यद्वा व्रीह्याग्रयणेन समानतन्त्रता । 'श्यामाकैस्तु प्रस्तरं कुर्यान्नाग्रयणम् । यदि वा तदपि समानतन्त्रम्' इत्यादिनारायणवृत्तौ परिश्रमवतां सुलभमित्यलम् ।

इदं च पर्वाभावे शुक्लपक्षे देवनक्षत्रे कृत्तिकादिविशाखान्ते कार्यमिति स्मृत्यर्थसारे उक्तम् । बौधायनीये केशवस्वामिनाऽप्येवमुक्तम् । परिशिष्टे–'श्यामाकैर्व्रीहिभिश्चैव यवैश्चान्योन्यकालतः । प्राग्यष्टुं युज्यतेऽवश्यं नह्यत्राग्रयणात्ययः ॥' त्रिकाण्डमण्डनोऽप्येवम् । यदा त्वेतदाश्विनपौर्णमास्यां क्रियते तदेककालत्वादाश्वयुजीकर्मणोऽस्य च समानतन्त्रता भवति । तदेतद्वृत्तिकृता—'एकबर्हिरिध्माज्य—' इति सूत्रे स्पष्टमुक्तम् ।

अस्याकरणे प्रायश्चित्तम् ।

तस्याकरणे प्रायश्चित्तमुक्तं स्मृतिचन्द्रिकायां कात्यायनेन–'नित्ययज्ञात्यये चैव वैश्वदेवद्वयस्य च । अनिष्ट्वा नवयज्ञेन नवान्नप्राशने तथा ॥ भोजने पतितान्नस्य चरुर्वैश्वानरो भवेत् ।' कारिकाऽऽपि–'अकृताग्रयणोऽश्नीयान्नवान्नं यदि वै नरः । वैश्वानराय कर्तव्यश्चरुः पूर्णाहुतिस्तु वा ॥' इति । ऋग्विधाने तु–'समिन्द्रराया-[1]मन्त्रं च वर्षे वर्षे जपेच्छतम् । आग्रयणं यदा न्यूनं तदा सम्पूर्णमिति तत् ॥' इत्युक्तम् । एतच्चापदि मलमासे कार्यमन्यथा नेति प्रागुक्तम् । अन्योऽप्याहिताग्न्यादिविशेषः

१—अयं मन्त्रो यथा—"समिन्द्र राया समिषा रभेमहि सं वाजेभिः पुरुश्चन्द्रैरभिद्युभिः । सं देव्या प्रमत्या वीरशुष्मया गो अग्रयाश्ववत्या रभेमहि ॥" इति । ऋ० अ० १, अ० ४ । अस्यार्थः—'हे इन्द्र, राया धनेन वयं संरभेमहि सङ्गच्छेमहि । तथा इषा अन्नेन संरभेमहि । तथा वाजेभिर्बलैः संरभेमहि । कीदृशैर्वाजैः पुरुश्चन्द्रैः । पुरूणां बहूनामाह्लादकैः अभिद्युभिः अभितो दीप्यमानैः । किञ्च देव्या द्योतमानया प्रमत्या त्वदीयया प्रकृष्टबुद्ध्या संरभेमहि । कीदृश्या । वीरशुष्मया वीरं विशेषेण शत्रूणां क्षेपणसमर्थं शुष्मं बलं यस्याः सा तथोक्ता (तया) । गो अग्रया स्तोतृभ्यो दानार्थमग्रे प्रमुखत एव गावो यस्याः सा तथोक्ता (तया) । अश्वावत्या अश्वैरुपैतया ।' इति पूर्वाचार्यैः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

शौनकादेर्ज्ञेय इत्यलं बहुना ॥ इति कमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ आश्विनमासः ॥

अथ कार्तिकमासः ।

तुलासङ्क्रमे प्रागपरा दश घटिकाः पुण्याः । रात्रौ तु प्रागुक्तम् ।

अथ कार्तिकस्नानम् ।

अथ कार्तिकस्नानम्। तत्र पृथ्वीचन्द्रोदये विष्णुस्मृतिपाद्मयोः—'तुलामकरमेषेषु प्रातः स्नानं विधीयते। हविष्यं ब्रह्मचर्यं च महापातकनाशनम् ॥' इति सौरमास उक्तः। प्राच्याश्चैतदेवाद्रियन्ते। दाक्षिणात्यास्तु—'आश्विनस्य तु मासस्य या शुक्लैकादशी भवेत्। कार्तिकस्य व्रतानीह तस्यां वै प्रारभेत्सुधीः ॥' इति पाद्मोक्तेः। भार्गवार्चने च—'प्रारभ्यैकादशीं शुक्लामाशिवनस्य तु मानवः। प्रातःस्नानं प्रकुर्वीत यावत्कार्तिकभास्करः ॥' इति विष्णुरहस्योक्तेः। हेमाद्रावादित्यपुराणे—'पूर्ण आश्वयुजे मासि पौर्णमास्यां समाहितः।' इत्युक्त्वा—'मासं समग्रं परया च भक्त्या समाप्यते कार्तिकपौर्णमास्याम्।' इत्यन्तेऽभिधानाच्चाशिवनशुक्लैकादश्यां पौर्णमास्यां वाऽऽरभ्य कार्तिकशुक्लद्वादश्यां पौर्णमास्यां वा समापयेदित्याहुः। मदनपारिजाते विष्णुः—'कार्तिकं सकलं मासं नित्यस्नायी जितेन्द्रियः। जपहविष्यभुक् शान्तः सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥' अत्र देशविशेषः पाद्मे कार्तिकं प्रक्रम्य—'कुरुक्षेत्रे कोटिगुणो गङ्गायामपि तत्समः। ततोऽधिकः पुष्करे स्याद्द्वारवत्यां च भार्गव ॥ पुण्याः पुर्यश्च सप्तैवं मुनयो मथुराधिका। दुर्लभः कार्तिको विप्रा मथुरायां नृणामिह ॥ यत्रार्चितः स्वयं रूपं भक्तेभ्यः सम्प्रयच्छति ॥' इति। इदं च स्नानं काशीस्थपञ्चनदेऽप्यतिप्रशस्तम्। 'शतं समास्तपस्तप्त्वा कृते यत्प्राप्यते फलम्। तत्कार्तिके पञ्चनदे सकृत्स्नानेन लभ्यते ॥ कार्तिके विन्दुतीर्थे यो ब्रह्मचर्यपरायणः। स्नास्यत्यनुदिते भानौ भानुजातस्य भीः कुतः ॥' इत्यादिकाशीखण्डोक्तेः। भानुजो यमः।

इदं च प्रातःस्नानं सन्ध्यां च कृत्वा कार्यम्। तेन विनेतरकर्मानधिकारादिति वर्धमानः। यद्यपि प्रातःसन्ध्यायाः सूर्योदये समाप्तिः,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तथाऽपि वचनबलादनुदितहोमवद्भविष्यति स्नानमन्त्रश्च तत्रैव—'कार्तिकेऽहं करिष्यामि प्रातःस्नानं जनार्दन। प्रीत्यर्थं तव देवेश दामोदर मया सह ॥ इमं मन्त्रं समुच्चार्य मौनी स्नायाद्व्रती नरः।' इति। अर्घ्यमन्त्रोऽपि तत्रैव—'व्रतिनः कार्तिके मासि स्नानस्य विधिवन्मम। गृहाणार्घ्यं मया दत्तं दनुजेन्द्रनिषूदन ! ॥ नित्यनैमित्तिके कृष्ण कार्तिके पापनाशने। गृहाणार्घ्यं मयादत्तं राधया सहितो हरे ! ॥ इमौ मन्त्रौ समुच्चार्य योऽर्घ्यं मह्यं प्रयच्छति। सुवर्णरत्नपुष्पाम्बुपूर्णशङ्खेन पुण्यवान् ॥ सुवर्णपूर्णा पृथिवी तेन दत्ता न संशयः ॥' इति। एवं सम्पूर्णस्नानाशक्तौ त्र्यहं स्नायात्। 'वाराणस्यां पञ्चनदे त्र्यहं स्नातास्तु कार्तिके। अमी ते पुण्यवपुषः पुण्यभाजोऽतिनिर्मलाः ॥' इति काशीखण्डोक्तेः ॥

अथ कार्तिके मालाधारणप्रकारः ।

अथ मालाधारणम्। तत्र स्कान्दे द्वारकामाहात्म्ये—'निवेद्य केशवे मालां तुलसीकाष्ठसम्भवाम्। वहते यो नरो भक्त्या तस्य वै नास्ति पातकम् ॥ न जह्यात्तुलसीमालां धात्रीमालां विशेषतः। महापातकसंहर्त्रीं धर्मकामार्थदायिनीम् ॥ विष्णुधर्मे—'स्पृशेत्तु यानि लोमानि धात्रीमाला कलौ नृणाम्। तावद्वर्षसहस्राणि वैकुण्ठे वसतिर्भवेत् ॥ मालायुग्मं तु यो नित्यं धात्रीतुलसिसम्भवम्। वहते कण्ठदेशे तु कल्पकोटिर्दिवं वसेत् ॥ तुलसीकाष्ठसम्भूते माले कृष्णजनप्रिये। बिभर्मि त्वामहं कण्ठे कुरु मां कृष्णवल्लभम् ॥ एवं सम्प्रार्थ्य विधिवन्मालां कृष्णगलेऽर्पिताम्। धारयेत्कार्तिके यो वै स गच्छेद्वैष्णवं पदम् ॥' इति। अत्र मूलं चिन्त्यम्।

अथ कार्तिके यात्राविधिः ।

तथा काशीखण्डे—'कार्तिके मासि मे यात्रा यैः कृता भक्तितत्परैः। बिन्दुतीर्थकृतस्नानैस्तेषां मुक्तिर्न दूरतः ॥' भार्गवार्चनदीपिकायां नृसिंहपुराणे—'अगस्तिकुसुमैर्देवं योऽर्चयेच्च जनार्दनम्। दर्शनात्तस्य देवर्षेर्नरकं नाश्नुते नरः। विहाय सर्वपुष्पाणि मुनिपुष्पेण केशवम्। कार्तिके योऽर्चयेद्भक्त्या वाजपेयफलं लभेत् ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्कान्दे कार्तिकमाहात्म्ये—'मालतीमालया विष्णुः केतक्या चैव पूजितः। समाः सहस्रं सुप्रीतो भवेत्ते मधुसूदनः॥ पृथ्वीचन्द्रोदये पाद्मे—'कार्तिके नार्चितो यैस्तु कमलैः कमलेक्षणः। जन्मकोटिषु विप्रेन्द्र! न तेषां कमला गृहे॥' तथा—'कार्तिके केशवे पूजा येषां नाम्ना सुतैः कृता। ते निर्भर्त्स्य रवेः पुत्रं वसन्ति त्रिदिवे सदा॥ तुलसीदललक्षेण कार्तिके योऽर्चयेद्धरिम्। पत्रे पत्रे मुनिश्रेष्ठ मौक्तिकं लभते फलम्॥' तथा स्कान्दे कार्तिकमाहात्म्ये—'धात्रीच्छाये तु यः कुर्यात्पिण्डदानं महामुने। मुक्तिं प्रयान्ति पितरः प्रसादान्माधवस्य तु॥ धात्रीफलविलिप्ताङ्गो धात्रीफलविभूषितः। धात्रीफलकृताहारो नरो नारायणो भवेत्॥ धात्रीच्छायां समाश्रित्य योऽर्चयेच्चक्रधारिणम्। पुष्पे पुष्पेऽश्वमेधस्य फलं प्राप्नोति मानवः॥' तथा स्कान्दे—'कार्तिके मासि विप्रेन्द्र! धात्रीवृक्षोपशोभिते। वने दामोदरं विष्णुं चित्रान्नैस्तोषयेद्विभुम्॥ मूलेन पायसेनाथ होमं कुर्याद्विचक्षणः। ब्राह्मणान्भोजयेच्छक्त्या स्वयं भुञ्जीत बन्धुभिः॥' इति।

कार्तिके द्विदलादिवर्जनम्।

तथा कार्तिके द्विदलव्रतं प्रागुक्तम्—'कार्तिके द्विदलं त्यजेत्' इति। पाद्मेऽपि कार्तिकमाहात्म्ये—'राजिकामाढकं चैव नैवाद्यात्कार्तिकव्रती। द्विदलं तिलतैलं च तथान्यन्मतिदूषितम्॥' स्कान्देऽपि-'कार्तिके वर्जयेत्तद्वद्द्विदलं बहुबीजकम्। माषमुद्गमसूराश्च चणकाश्च कुलित्थकाः॥ निष्पावा राजमाषाश्च आढक्यो द्विदलं स्मृतम्। नूतनान्यपि जीर्णानि सर्वाण्येतानि वर्जयेत्॥' अत्र केचिदुत्पत्तिसमये दलद्वयं यस्य भवति तद्भूतपूर्वगत्या द्विदलमित्युच्यत इत्याहुः। उदाहरन्ति च-'बीजमेव समुद्भूतं द्विदलं चाङ्कुरं विना। दृश्यते यत्र सस्येषु द्विदलं तन्निगद्यते॥' इति। अन्ये तु लक्षणायां मानाभावाद्वचनस्य निर्मूलत्वाद्द्विदलात्मकं यस्य स्वरूपं तदेव वर्जयेदित्याहुः। तथा नारदीये–'कार्तिके वर्जयेत्तैलं कार्तिके वर्जयेन्मधु कार्तिके वर्जयेत्कांस्यं कार्तिके शुक्तसन्धितम्॥' कांस्यं तत्पात्रभोजनम्,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

शुक्तं पर्युषितम्[1], सन्धितं लवणशाकः। तत्रैव-'कार्तिके विष्णुमूर्त्यग्रे दीपदानाद्दिवं व्रजेत् ॥' तथा—'कार्तिके तु कृता दीक्षा नृणां जन्मविमोचनी ।' तथा-'कार्तिके कृच्छ्रसेवी यः प्राजापत्यपरोऽथवा । एकान्तरोपवासी वा त्रिरात्रोपोषितोऽपि वा ॥ षड् वा द्वादश पक्षं वा मासं वा वरवर्णिनि । एकभक्तेन नक्तेन तथैवायाचितेन च ॥ उपवासेन भैक्षेण व्रजते परमं पदम् ॥' अन्येऽपि नियमाः प्रागुक्ताः ।

ग्राह्यमुक्तं स्कान्दे—'व्रीहयो यवगोधूमाः प्रियङ्गुतिलशालयः । एते हि सात्त्विकाः प्रोक्ताः स्वर्गमोक्षफलप्रदाः ॥' काशीखण्डे-'ऊर्जे यवान्नमश्नीयाद्देवान्नमथवा पुनः । वृन्ताकं सूरणं चैव शूकशिम्बीश्च वर्जयेत् ॥' पृथ्वीचन्द्रोदये पाद्मे-'नोर्जो वन्ध्यो विधातव्यो व्रतिना केनचित्क्वचित् ।' तथा नारदीये—'अव्रतेन क्षिपेद्यस्तु मासं दामोदरप्रियम् । तिर्यग्योनिमवाप्नोति नाऽत्र कार्या विचारणा ॥' अन्यान्यपि ताम्बूल-तैल-केशकर्तनादिवर्जनसङ्कल्परूपाणि प्रागुक्तानि ॥

आकाशदीपप्रकारः ।

तथा कार्तिके आकाशदीप उक्तो निर्णयामृते पुष्करपुराणे—'तुलायां तिलतैलेन सायङ्काले समागते । आकाशदीपं यो दद्यान्मासमेकं हरिं प्रति ॥ महतीं श्रियमाप्नोति रूपसौभाग्यसम्पदम् ॥' इति । तद्विधिश्च हेमाद्रावादित्यपुराणे—'दिवाकरेऽस्ताचलमौलिभूते गृहाददूरे पुरुषप्रमाणम् । यूपाकृतिं यज्ञियवृक्षदारुमारोप्य भूमावथ तस्य मूर्ध्नि ॥ यवाङ्गुलच्छिद्रयुतास्तु मध्ये द्विहस्तदीर्घा अथ पट्टिकास्तु । कृत्वा चतस्राऽष्टदलाकृतीस्तु याभिर्भवेदष्टदिशानुसारी । तत्कर्णिकायां तु महाप्रकाशो दीपः प्रदेयो दलगास्तथाष्टौ । निवेद्य धर्माय हराय भूम्यै दामोदरायाप्यथ धर्मराज्ञे ॥ प्रजापतिभ्यस्त्वथ सत्पितृभ्यः प्रेतेभ्य एवाऽथ तमःस्थितेभ्यः ॥' इति । अपरार्के त्वन्यो मन्त्र उक्तः । यथा—'दामोदराय नभसि तुलायां दोलया सह । प्रदीपं ते प्रयच्छामि नमोऽनन्ताय वेधसे ॥' इति ॥

१—एतद्व्याख्यानमयुक्तमिति भाति । आरण्यानां च सर्वेषां मृगाणां माहिषं विना । स्त्रीक्षीरं चैव वर्ज्यानि सर्वशुक्तानि चैव हि ॥' इति मनुवचनव्याख्यानावसरे 'स्वभावतो मधुरादिरसानि यानि कालवशेनोदकादिना चाम्ली भवन्ति तानि शुक्तशब्दवाच्यानि'इति मन्वर्थमुक्तावल्यामुक्तत्वात् । 'शुक्तं पर्युषितं चैव' इत्यत्र मनुस्मृतिवचने च पर्युषितशब्दस्य पृथग्ग्रहणाच्च ।

१४

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

करकचतुर्थी ।

कार्तिककृष्णचतुर्थी-करकचतुर्थी । सा चन्द्रोदयव्यापिनी ग्राह्या। दिनद्वये तत्त्वे पूर्वा । तत्रैव पूजाद्याम्नानात् ॥

अथ गोवत्स-द्वादशी तत्र गोप्रदानादिविधिः ।

कार्तिककृष्णद्वादशी गोवत्ससंज्ञा । सा प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या। दिनद्वये तत्त्वे पूर्वा। युग्मवाक्यात्। 'वत्सपूजा वटश्चैव कर्तव्या प्रथमेऽहनि ॥' इति निर्णयामृतेऽविधानाच्च । अत्र विशेषो मदनरत्ने भविष्ये—'सवत्सां तुल्यवर्णां च शीलिनीं गां पयस्विनीम् । चन्दनादिभिरालिप्य पुष्पमालाभिरर्चयेत् ॥ अर्घ्यं ताम्रमये पात्रे कृत्वा पुष्पाक्षतैस्तिलैः । पादमूले तु दद्याद्वै मन्त्रेणानेन पाण्डव ! ॥ क्षीरोदार्णवसम्भूते सुरासुरनमस्कृते । सर्वदेवमये मातर्गृहाणार्घ्यं नमो नमः ॥ ततो माषादिसंसिद्धान्वटकान्विनिवेदयेत् ॥ सुरभि त्वं जगन्मातर्देवि विष्णुपदे स्थिता । सर्वदेवमये ग्रासं मया दत्तमिमं ग्रस ॥ ततः सर्वमये देवि सर्वदेवैरलङ्कृते । मातर्ममाभिलषितं सफलं कुरु नन्दिनि !॥' इति प्रार्थयेत्। तथा-'तद्दिने तैलपक्वं च स्थालीपक्वं युधिष्ठिर !। गोक्षीरं गोघृतं चैव दधि तक्रं च वर्जयेत् ॥

द्वादश्यादिषु पञ्चदिनेषु नीराजनविधिः ।

ज्योतिर्निबन्धे नारदः—'आश्विने कृष्णपक्षे तु द्वादश्यादिषु पञ्चसु । तिथिषूक्तः पूर्वरात्रे नृणां नीराजनो विधिः ॥ नीराजयेयुर्देवांस्तु विप्रान् गाश्च तुरङ्गमान् । ज्येष्ठाञ्छ्रेष्ठाञ्जघन्यांश्च मातृमुख्याश्च योषितः ॥' इति ॥

यमदीपः ।

निर्णयामृते स्कान्दे—'कार्तिकस्यासिते पक्षे त्रयोदश्यां निशामुखे। यमदीपं बहिर्दद्यादपमृत्युर्विनश्यति ॥' मन्त्रस्तु—'मृत्युना पाशदण्डाभ्यां कालेन श्यामया सह। त्रयोदश्यां दीपदानात्सूर्यजः प्रीयतां मम ॥' इति ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ नरकचतुर्दश्यामभ्यङ्गस्नानादिविधिः ।

कार्तिककृष्णचतुर्दश्यां प्रभाते चन्द्रोदयेऽभ्यङ्गं कुर्यात् । तदुक्तं हेमाद्रौ निर्णयामृते च भविष्योत्तरे—'कार्तिके कृष्णपक्षे तु चतुर्दश्यामिनोदये । अवश्यमेव कर्तव्यं स्नानं नरकभीरुभिः ॥' इनश्चन्द्रः । मदनरत्ने—' विधूदये ' इति पाठः । ' दिनोदये ' इति पाठात्सूर्योदयोत्तरं त्रिमुहूर्ते स्नानं वदतां गौडानां तदनुसारिणां चाज्ञतैव । पूर्वविद्धचतुर्दश्यां कार्तिकस्य सितेतरे । पक्षे प्रत्यूषसमये स्नानं कुर्यात्प्रयत्नतः ॥' इति स्मृतिदर्पणेऽपि—'चतुर्दशी चाश्वयुजस्य कृष्णा स्वात्यर्क्षयुक्ता च भवेत्प्रभाते । स्नानं समभ्यज्य नरैस्तु कार्यं सुगन्धतैलेन विभूतिकामैः ॥' इति । पृथ्वीचन्द्रोदये पाद्मे—'आश्वयुक्कृष्णपक्षस्य चतुर्दश्यां विधूदये । तिलतैलेन कर्तव्यं स्नानं नरकभीरुणा ॥' इति । 'कर्तव्यं मङ्गलस्नानं नरैर्निरयभीरुभिः' इति कालादर्शे पाठः । उभयत्राश्वयुगित्यमावास्यान्तं मासमभिप्रेत्योक्तम् । तथा—'तैले लक्ष्मीर्जले गङ्गा दीपावल्याश्चतुर्दशीम् ।' प्राप्येति शेषः । 'प्रातःस्नानं तु यः कुर्याद्यमलोकं न पश्यति ।' इति । दिनद्वयेऽपि चन्द्रोदये चतुर्दशीसत्त्वे तदभावेऽप्यरुणोदये सम्पूर्णे खण्डे वा दिनद्वये चतुर्दशीसमत्वे च पूर्वदिनेऽभ्यङ्गं कुर्यात् । 'पूर्वविद्धचतुर्दश्याम्' इति वचनात् । पूर्वदिने परदिन एव वा सत्त्वे सैव ग्राह्या । दिनद्वयेऽप्यसत्त्वे अरुणोदयव्यापिनी ग्राह्या । 'पक्षे प्रत्यूषसमये' इत्युक्तेः । वक्ष्यमाणवचनाच्च । तदभावे तु चतुर्दशीह्रासं पूर्वेद्युः प्रवेश्य पूर्वेऽह्नि त्रयोदशीमध्य एवाऽभ्यङ्गं कुर्यादिति दिवोदासः । केचिदत्र वचनमपि साधकत्वेन वदन्ति—'तिथ्यादौ तु भवेद्यावान्ह्रासो वृद्धिः परेऽहनि । तावान् ग्राह्यः स पूर्वेद्युरदृष्टोऽपि स्वकर्मणि ॥' इति । तन्मन्दम् । नहीदं वचनं पूर्वदिनस्यापूर्वं ग्राह्यत्वं विधत्ते । नक्तैकभक्तजन्माष्टम्यादौ दिनद्वये कर्मकालव्याप्त्यभावे सर्वत्र पूर्वदिनस्य ग्राह्यत्वप्रसङ्गात् । किन्तु यत्रैकभक्तादौ दिनद्वये कर्मकालव्याप्त्यभावे वाक्यान्तरेण न्यायेन वा पूर्वदिनस्य ग्राह्यत्वमुक्तं, तत्र मुख्यकाले तत्तिथेरभावेऽपि तत्रैवानुष्ठानबोधकमिदम् । नचाऽत्र तदस्तीति यत्किञ्चिदेतत् । तेन चतुर्थयामगामिनी ग्राह्या ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अत एव सर्वज्ञनारायणः–'तथा कृष्णचतुर्दश्यामाश्विनेऽर्कोदयात्पुरा। यामिन्याः पश्चिमे यामे तैलाभ्यङ्गो विशिष्यते ॥' इति। 'मृगाङ्कोदयवेलायां त्रयोदश्यां यदा भवेत्। दर्शे वा मङ्गलस्नानं दुःखशोकभयप्रदम् ॥' इति कालादर्शे त्रयोदशीनिषेधाच्च। तेनाऽयमर्थः–'यथाऽग्निहोत्रे यावज्जीवं सायम्प्रातः कालेषु व्याप्यकालस्य गुरुत्वम्, तथाऽत्र चतुर्दशीचतुर्थयामारुणोदयचन्द्रोदयानामुत्तरोत्तरस्य व्याप्यत्वाद्गुरुत्वमिति। यदपि दिवोदासीये–'त्रयोदशी यदा प्रातः क्षयं याति चतुर्दशी। रात्रिशेषे त्वमावास्या तदाऽभ्यङ्गे त्रयोदशी ॥' इति वचनं तद्धेमाद्रिनिर्णयामृताद्यलिखितत्वेन निर्मूलम्। समूलत्वेऽपि न चतुर्दश्याः सूर्योदयासम्बन्धित्वरूपः क्षयोऽत्र विवक्षितः। सूर्योदयात्प्राक् समाप्तौ चन्द्रोदयकालसत्त्वे च त्वयैवाङ्गीकारात्। किन्तु अभ्यङ्गकालात्प्राक् समाप्तिरूपोऽत्र ह्रासः क्षयशब्देन विवक्षितः। स चारुणोदयाच्चतुर्थयामाद्वा प्राक् यदा ह्रासस्तत्परमिदम्। अत एव सर्वज्ञनारायणेन चतुर्थयाममात्रे स्नानमुक्तम्। तथा चोदाहृतम्–'तथा कृष्णचतुर्दश्याम्' इति। ज्योतिर्निबन्धे नारदोऽपि–'इषासितचतुर्दश्यामिन्दुक्षयतिथावपि। ऊर्जादौ स्वातिसंयुक्ते तदा दीपावली भवेत् ॥ कुर्यात्संलग्नमेतच्च दीपोत्सवदिनत्रयम् ॥' ये तु त्रयोदशीमध्ये स्नानमाहुस्तेषामाशयं न विद्म इत्यलं भूयसा। यदपि—'अरुणोदयतोऽन्यत्र रिक्तायां स्नाति यो नरः। तस्याब्दिकभवो धर्मो नश्यत्येव न संशयः ॥' इति दिवोदासीये भविष्यवचनम्। तन्मुख्यकालेऽरुणोदये चतुर्दश्यभावेऽपि तत्रैव स्नातव्यमित्येवं परमिति सर्वसिद्धम्। चतुर्घटिकात्मकोऽरुणोदय इति तत्रैवोक्तम्।

मदनरत्ने पाद्मे–'अपामार्गमथो तुम्बीं प्रपुन्नाटमथापरम्। भ्रामयेत्स्नानमध्ये तु नरकस्य क्षयाय वै ॥' प्रपुन्नाटश्चक्रमर्दः। मन्त्रस्तु–'सीतालोष्ठसमायुक्त सकण्टकदलान्वित। हर पापमपामार्ग भ्राम्यमाणः पुनः पुनः ॥' इति। अस्यामेव प्रदोषे दीपान्दद्यादित्युक्तं हेमाद्रौ स्कान्दे–'ततः प्रदोषसमये दीपान्दद्यान्मनोरमान्। ब्रह्मविष्णु-शिवादीनां भवनेषु मठेषु च ॥' इति। दिवोदासीये ब्राह्मे–'अमावास्याचतुर्दश्योः प्रदोषे दीपदानतः। यममार्गाधिकारेभ्यो मुच्यते

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कार्तिके नरः ॥' खण्डतिथौ तु पूर्वेऽह्नि प्रदोषे दीपान्दत्वा परेद्युः स्नायादिति दिवोदासीये उक्तम् । अत्र नरकोद्देशेन चतुर्वर्तियुक्तं दीपदानं कार्यम् । तत्र मन्त्रः—'दत्तो दीपश्चतुर्दश्यां नरकप्रीतये मया चतुर्वर्तिसमायुक्तः सर्वपापापनुत्तये ॥' तत्रैव लैङ्गे—'माषपत्रस्य शाकेन भुक्त्वा तत्र दिने नरः । प्रेताख्यायां चतुर्दश्यां सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥'

यमतर्पणम् ।

अत्र यमतर्पणमुक्तं मदनपारिजाते वृद्धमनुना—'दीपोत्सवचतुर्दश्यां कार्यं तु यमतर्पणम् ॥' मदनरत्ने ब्राह्मे—'अपामार्गस्य पत्राणि भ्रामयेच्छिरसोपरि । ततश्च तर्पणं कार्यं धर्मराजस्य नामभिः ॥ यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चाऽन्तकाय च । वैवस्वताय कालाय सर्वभूतक्षयाय च ॥ औदुम्बराय दध्नाय नीलाय परमेष्ठिने । वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय वै नमः ॥' इति । तर्पणप्रकारस्तु हेमाद्रौ—'एकैकेन तिलैर्मिश्रान्दद्यात्त्रींस्त्रींजलाञ्जलीन् । सम्वत्सरकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥' तथा मदनरत्ने स्कान्दे—'दक्षिणाभिमुखो भूत्वा तिलैः सव्यं समाहितः । देवतीर्थेन देवत्वात्तिलैः प्रेताधिपो यतः ॥' तथा—'यज्ञोपवीतिना कार्यं प्राचीनावीतिनाथवा ।' इति । इदं जीवत्पितृकेणाऽपि कार्यम् । 'जीवत्पिताऽपि कुर्वीत तर्पणं यमभीष्मयोः ।' इति पाद्मोक्तेः । अत्र भीष्मतर्पणमप्युक्तं दिवोदासीये । तत्प्रकारस्तु माघे वक्ष्यते ॥ इति नरकचतुर्दशी ॥

कार्तिकामावास्यायामभ्यङ्गः ।

कार्तिकामावास्यायां प्रातरभ्यङ्गं कुर्यात् । तदुक्तं कालादर्शे—'प्रत्यूष आश्वयुग्दर्शे कृताभ्यङ्गादिमङ्गलः । भक्त्या प्रपूजयेद्देवीमलक्ष्मीविनिवृत्तये ॥' अस्य व्याख्याने आदिशब्दात्पञ्चत्वगुदकस्नानादेरुपसङ्ग्रहः । तदुक्तं पुष्करपुराणे—'स्वातीस्थिते रवाविन्दुर्यदि स्वातिगतो भवेत् । पञ्चत्वगुदकस्नायी कृताभ्यङ्गविधिर्नरः ॥ नीराजितो महालक्ष्मीमर्चयन् श्रियमश्नुते ।' आश्वयुग्दर्श इति दर्शशब्दः प्रत्यूषे स्वा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तियुक्ततिथिपरः । तदुक्तं ब्राह्मे–'ऊर्जे शुक्लद्वितीयायां तिथिषु स्वातिऋक्षगे । मानवो मङ्गलस्नायी नैव लक्ष्म्या वियुज्यते ॥' तत्रैव–'इषे भूते च दर्शे च कार्तिकप्रथमे दिने । यदा स्वाती तदाऽभ्यङ्गस्नानं कुर्याद्दिनोदये ॥' कश्यपसंहितायां तु दीपावलिदर्शं प्रक्रम्य–'इन्दुक्षयेऽपि संक्रान्तौ रवौ पाते दिनक्षये । तत्राऽभ्यङ्गो न दोषाय प्रातः पापापनुत्तये ॥' इति । स्वातीयोगं विनाऽप्यभ्यङ्ग उक्तः । मात्स्ये–'दीपैर्नीराजनादत्र सैषा दीपावली स्मृता ॥'

अथ लक्ष्मीपूजनविधिः ।

अत्र विशेषो हेमाद्रौ भविष्ये–'दिवा तत्र न भोक्तव्यमृते बालातुराज्जनात् । प्रदोषसमये लक्ष्मीं पूजयित्वा ततः क्रमात् ॥ दीपवृक्षाश्च दातव्याः शक्त्या देवगृहेषु च ॥' तत्रैवाभ्यङ्गमभिधाय–'एवं प्रभातसमये त्वमावास्यां नराधिप ! । कृत्वा तु पार्वणश्राद्धं दधि-क्षीर-घृतादिभिः ॥ दीपान्दत्वा प्रदोषे तु लक्ष्मीं पूज्य यथाविधि । स्वलङ्कृतेन भोक्तव्यं सितवस्त्रोपशोभिना ॥' अयं प्रदोषव्यापी ग्राह्यः । 'तुलासंस्थे सहस्रांशौ प्रदोषे भूतदर्शयोः । उल्काहस्ता नराः कुर्युः पितॄणां मार्गदर्शनम् ॥' इति ज्योतिषोक्तेः । दिनद्वये सत्त्वे परः । 'दण्डैकरजनीयोगे दर्शः स्यात्तु परेऽहनि । तदा विहाय पूर्वेद्युः परेऽह्नि सुखरात्रिके ॥' इति तिथितत्त्वे ज्योतिर्वचनात् । दिवोदासीये तु—प्रदोषस्य कर्मकालत्वात् 'अर्धरात्रे भवत्येव लक्ष्मीराश्रयितुं गृहान् । अतः स्वलङ्कृता लिप्ता दीपैर्जाग्रज्जनोत्सवाः ॥ सुधाधवलिताः कार्याः पुष्पमालोपशोभिताः ॥' इति ब्राह्मोक्तेश्च प्रदोषार्धरात्रव्यापिनी मुख्या । एकैकव्याप्तौ परैव । प्रदोषस्य मुख्यत्वादर्धरात्रेऽनुष्ठेयाभावाच्च । यस्तु–'अपराह्णे प्रकर्तव्यं श्राद्धं पितृपरायणैः । प्रदोषसमये राजन्कर्तव्या दीपमालिका ॥' इति क्रमः स सम्पूर्णतिथावेव प्राप्तेरनुवादो न विधिः । तत्तत्कर्मकालव्याप्तेर्बलवत्त्वात्सम्पूर्णतिथौ प्राप्त्या खण्डतिथावप्राप्त्या विध्यनुवादविरोधाच्चेत्युक्तम् ॥

दरिद्रानिःसरणम् ।

अत्रैव दर्शे परात्रेऽलक्ष्मीनिःसारणमुक्तं मदनरत्ने भविष्ये–

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'एवं गते निशीथे तु जने निद्राऽर्धलोचने । तावन्नगरनारीभिः शूर्पडिण्डिमवादनैः । निष्कास्यते प्रहृष्टाभिरलक्ष्मीः स्वगृहाङ्गणात्' ॥

अथ बलिपूजा ।

कार्तिकशुक्लप्रतिपदि गोक्रीडनमुक्तं निर्णयामृते । अस्यामेव रात्रौ बलेः पूजोक्ता हेमाद्रौ भविष्ये—'कृत्वैतत्सर्वमेवेह रात्रौ दैत्यपतेर्बलेः । पूजां कुर्यान्नृपः साक्षाद्भूमौ मण्डलके शुभे ॥ बलिमालिख्य दैत्येन्द्रं वर्णकैः पञ्चरङ्गकैः । गृहस्य मध्ये शालायां विशालायां ततोऽर्चयेत् ॥ लोकश्चाऽपि गृहस्यान्तः शय्यायां शुक्लतण्डुलैः । संस्थाप्य बलिराजानं फलैः पुष्पैस्तु पूजयेत् ॥' मन्त्रस्तु पाद्मे—'बलिराज ! नमस्तुभ्यं दैत्यदानववन्दित । इन्द्रशत्रोऽमराराते विष्णुसान्निध्यदो भव ॥' इति तथा—'बलिमुद्दिश्य दीयन्ते दानानि कुरुनन्दन ! । यानि तान्यक्षयाण्याहुर्मयैवं सम्प्रदर्शितम् ॥' इति । तदेतत्पूर्वविद्धप्रतिपदि कर्तव्यम् । 'पूर्वविद्धा प्रकर्तव्या शिवरात्रिर्बलेर्दिनम् ।' इति । हेमाद्रौ पाद्मोक्तेः । माधवोऽपि—'बल्युत्सवं च पूर्वेद्युरुपवासवदाचरेत् । इति । निर्णयामृतेऽपि—'या कुहूः प्रतिपन्मिश्रा तत्र गाः पूजयेन्नृप ! । पूजनात्त्रीणि वर्धन्ते प्रजा गावो महीपतिः ॥' इति । तथा—'भद्रायां गोकुलक्रीडा स देशो वै विनश्यति ॥' भद्रायां द्वितीयायाम् । तथा—'प्रतिपद्यग्निकरणं द्वितीयायां तु गोर्चनम् । क्षेत्रच्छेदं करिष्येतै वित्तनाशं कुलक्षयम् ॥' इति । तथा—'प्रतिपद्दर्शसंयोगे क्रीडनं तु गवां मतम् । परविद्धेषु यः कुर्यात्पुत्र-दार-धनक्षयः ॥' इति देवलवचनाच्च । एते च विधिप्रतिषेधाः पूर्वदिने प्रतिपदः सायाह्नव्यापित्वे द्वितीयदिने चन्द्रदर्शनसम्भवे च ज्ञेयाः । 'गवां क्रीडादिने यत्र रात्रौ दृश्येत चन्द्रमाः । सोमो राजा पशून्हन्ति सुरभिः पूजकांस्तथा ॥' इति पुराणसमुच्चयात् । दिनद्वये सायाह्नव्यापित्वे तु परैव ग्राह्या । 'वर्धमानतिथौ नन्दा यदा सार्धत्रियामिका । द्वितीयावृद्धिगामित्वादुत्तरा तत्र चोच्यते ॥' इति । तथा—'त्रियामगा दर्शतिथिर्भवेच्चेत्सार्धत्रियामा प्रतिपद्विवृद्धौ । दीपोत्सवे ते मुनिभिः प्रदिष्टे अतोऽन्यथा पूर्वयुते विधेये ॥' इति पुराणसमुच्चयादिति निर्णयामृतकारः । सार्धत्रियामिकेत्यनेन चन्द्रदर्शनाभाव उक्तः । द्वितीयायाः पञ्चधाविभक्तदिनचतुर्थांशरूपापरा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ह्वव्याप्तावेव चन्द्रदर्शनसम्भवात् । वयं त्वेतद्वचनद्वयं पूर्वविद्धासम्भवे वेदितव्यमिति ब्रूमः । दिनद्वये प्रतिपदः सायाह्नव्याप्त्यभावे तु पूर्वैव । रात्रौ बलिपूजाविधानेन कर्मकालव्यापित्वात् । परदिने चन्द्रोदये तन्निषेधादिति दिक् ।

मदनरत्ने तु पूर्वविद्धायां गोक्रीडा । नीराजनमङ्गलमालिके तूत्तरत्र कार्ये । 'कार्तिके शुक्लपक्षे तु विधानद्वितयं भवेत् । नारीनीराजनं प्रातः सायं मङ्गलमालिका ॥ यदा च प्रतिपत्स्वल्पा नारीनीराजनं भवेत् । द्वितीयायां तदा कुर्यात्सायं मङ्गलमालिकाम् ॥' इति ब्राह्मोक्तेः । 'लभ्यते यदि वा प्रातः प्रतिपद्धटिकाद्वयम् । तस्यां नीराजनं कार्यं सायं मङ्गलमालिका ॥' इति भविष्योक्तेः । 'प्रातर्वा यदि लभ्येत प्रतिपद्धटिका शुभा । द्वितीयायां तदा कुर्यात्सायं मङ्गलमालिकाम् ॥ कार्तिके शुक्लपक्षादौ त्वमावास्या घटीद्वयम् । देशभङ्गभयान्नैव कुर्यान्मङ्गलमालिकाम् ॥' इति देवीपुराणाच्चेत्युक्तम् ।

अत्रैव द्यूतं कर्तव्यम् ।

अत्र विशेषो हेमाद्रौ ब्राह्मे बलिप्रतिपदं प्रक्रम्य–'तस्माद्द्यूतं प्रकर्तव्यं प्रभाते तत्र मानवैः । तस्मिन् द्यूते जयो यस्य तस्य सम्वत्सरं जयः ॥ पराजयो विरुद्धश्च लाभनाशकरो भवेत् । दयिताभिश्च सहितैर्नेया सा च भवेन्निशा ॥' इति ।

अस्यां गोवर्धनपूजोत्सवः ।

अत्र गोवर्धनपूजादि मार्गपालीबन्धनादि चोक्तं हेमाद्रौ निर्णयामृते च स्कान्दे–'प्रातर्गोवर्धनं पूज्य द्यूतं चाऽपि समाचरेत् । भूषणीयास्तथा गावः पूज्याश्चावाहदोहनाः ॥' गोवर्धनश्च गोमयेन कार्यश्चित्रेण वा । मन्त्रस्तु–'गोवर्धन धराधार गोकुलत्राणकारण । बहुबाहुकृतच्छाय गवां कोटिप्रदो भव ॥' गोमन्त्रस्तु–'लक्ष्मीर्या लोकपालानां धेनुरूपेण संस्थिता । घृतं वहति यज्ञार्थे मम पापं व्यपोहतु ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अत्र मार्गपालीबन्धनम्।

तत्रैव स्कान्दे—'ततोऽपराह्णसमये पूर्वस्यां दिशि भारत!। मार्गपालीं प्रबध्नीयात्तुङ्गे स्तम्भेऽथ पादपे॥ कुशकाशमयीं दिव्यां लम्बकैर्बहुभिर्मुने। दर्शयित्वा गजानश्वान्सायमस्यास्तले नयेत्॥ कृतहोमे द्विजेन्द्रैस्तु बध्नीयान्मार्गपालिकाम्। नमस्कारं ततः कुर्यान्मन्त्रेणानेन सुव्रत॥ मार्गपालि! नमस्तेऽस्तु सर्वलोकसुखप्रदे। विधेयैः पुत्रदाराद्यैः पुनरेहि व्रतस्य मे। नीराजनं च तत्रैव कार्यं राष्ट्रजयप्रदम्॥ राजानो राजपुत्राश्च ब्राह्मणाः शूद्रजातयः। मार्गपालीं समुल्लङ्घ्य नीरुजः स्युः सुखान्विताः॥ तत्रैवादित्यपुराणे—'कुशकाशमयीं कुर्याद्वष्टिकां सुदृढां नवाम्। तामेकतो राजपुत्रा हीनवर्णास्तथान्यतः॥ गृहीत्वा कर्षयेयुस्तां यथासारं मुहुर्मुहुः। जयेत्र हीनजातीनां जयो राज्ञस्तु वत्सरम्॥' [वष्टिका सूक्ष्मारज्जुः]॥ इति॥

अथ यमद्वितीयानिर्णयः।

यमद्वितीया तु प्रतिपद्युता ग्राह्येत्युक्तं निर्णयामृतादौ। यमद्वितीया मध्याह्नव्यापिनी पूर्वविद्धा चेति हेमाद्रिः। अत्र विशेषो हेमाद्रौ स्कान्दे—'ऊर्जे शुक्लद्वितीयायामपराह्णेऽर्चयेद्यमम्। स्नानं कृत्वा भानुजायां यमलोकं न पश्यति॥' इति। 'ऊर्जे शुक्ले द्वितीयायां पूजितस्तर्पितो यमः। वेष्टितः किन्नरैर्हृष्टैस्तस्मै यच्छति वाञ्छितम्॥' तथा भविष्ये—'प्रथमा श्रावणे मासि तथा भाद्रपदेऽपरा। तृतीयाश्वयुजे मासि चतुर्थी कार्तिके भवेत्॥ श्रावणे कलुषा नाम तथा भाद्रे च गीर्मला। आश्विने प्रेतसञ्चारा कार्तिके याम्यका मता॥' इत्युक्त्वा प्रथमायां व्रतं द्वितीयायां सरस्वतीपूजा तृतीयायां श्राद्धमुक्त्वा चतुर्थ्यामुक्तम्—'कार्तिके शुक्लपक्षस्य द्वितीयायां युधिष्ठिरः। यमो यमुनया पूर्वं भोजितः स्वगृहेऽर्चितः॥ अतो यमद्वितीयेयं त्रिषु लोकेषु विश्रुता। अस्यां निजगृहे विप्र! न भोक्तव्यं ततो नरैः। स्नेहेन भगिनीहस्ताद्भोक्तव्यं पुष्टिवर्धनम्। दानानि च प्रदेयानि भगिनीभ्यो विधानतः॥ स्वर्णालङ्कारवस्त्रान्नपूजासत्कारभोजनैः। सर्वा भगिन्यः सम्पूज्या अभावे प्रतिपन्नकाः॥' प्रतिपन्नाः मातृभगिन्य इति हेमाद्रिः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'पितृव्यभगिनीहस्तात्प्रथमायां युधिष्ठिरः। मातुलस्य सुताहस्ताद्द्वितीयायां तथा नृप! ॥ पितुर्मातुः स्वसुः कन्ये तृतीयायां तयोः करात्। भोक्तव्यं सहजायाश्च भगिन्या हस्ततः परम् ॥ सर्वासु भगिनीहस्ताद्भोक्तव्यं बलवर्धनम्। यस्यां तिथौ यमुनया यमराजदेवः सम्भोजितः प्रतिजगत्स्वसृसौहृदेन। तस्यां स्वसुः करतलादिह यो भुनक्ति प्राप्नोति रत्नसुखधान्यमनुत्तमं सः ॥' गौडास्तु—'यमं च चित्रगुप्तं च यमदूतांश्च पूजयेत्। अर्घ्यश्चाऽत्र प्रदातव्यो यमाय सहजद्वयैः ॥' मन्त्रः—'एह्येहि मार्तण्डज पाशहस्त यमान्तकालोकधरामरेश। भ्रातृद्वितीयाकृतदेवपूजां गृहाण चाऽर्घ्यं भगवन्नमस्ते ॥ भ्रातस्तवानुजाताऽहं भुङ्क्ष्व भक्तमिदं शुभम्। प्रीतये यमराजस्य यमुनायां विशेषतः ॥' ज्येष्ठाग्रजातेति वदेदिति स्मार्ताः। इत्यन्नदानमित्यप्याहुः। ब्रह्माण्डपुराणेऽपि—'या तु भोजयते नारी भ्रातरं युग्मके तिथौ। अर्चयेच्चाऽपि ताम्बूलैर्न सा वैधव्यमाप्नुयात्। भ्रातुरायुःक्षयो राजन्न भवेत्तत्र कर्हिचित् ॥' इति ॥

कार्तिकशुक्लनवमीयुगादिः।

सा पौर्वाह्णिकी ग्राह्या। शुक्लपक्षस्थत्वात्। अत्राऽपि पिण्डरहितं श्राद्धं कर्तव्यम्। अन्यत्प्रागुक्तम्।

विष्णुत्रिरात्रव्रतम्।

अत्रैव विष्णुत्रिरात्रमुक्तं हेमाद्रौ पाद्मे—'कार्तिके शुक्लनवमीमवाप्य विजितेन्द्रियः। हरिं विधाय सौवर्णं तुलस्या सहितं विभुम् ॥ पूजयेद्विधिवद्भक्त्या व्रती तत्र दिनत्रयम्। एवं यथोक्तविधिना कुर्याद्वैवाहिकं विधिम् ॥' इति ॥

कार्तिकशुक्लैकादश्यां भीष्मपञ्चकव्रतम्।

उक्तं नारदीये—'अतो नरैः प्रयत्नेन कर्तव्यं भीष्मपञ्चकम्। कार्तिकस्यामले पक्षे स्नात्वा सम्यग्यतव्रतः ॥ एकादश्यां तु गृह्णीयाद्व्रतं पञ्चदिनात्मकम् ॥' इति। तद्विधिस्तु—गोमयेन स्नात्वा मौनी पञ्चामृतैः पञ्चगव्यैर्विष्णुं संस्नाप्य सम्पूज्य पायसं निवेद्य द्वादशाक्षरमष्टोत्तरशतं जप्त्वा—'ॐ नमो विष्णवे' इति षडक्षरेण घृताक्तान्यवान्व्री-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ह्रींश्चाष्टोत्तरशतं हुत्वा भूमौ स्वपेत् । एवं पञ्चदिनेषु कुर्यात् । विशेषस्त्वाद्येऽह्नि हरेः पादौ कमलैः सम्पूज्य त्रिर्गोमयं प्राश्यम् । द्वितीयेऽह्नि बिल्वपत्रैर्जानुनी सम्पूज्य गोमूत्रम्, त्रयोदश्यां भृङ्गराजेन नाभिं सम्पूज्य क्षीरम्, चतुर्दश्यां करवीरैः स्कन्धं सम्पूज्य दधि, पौर्णमास्यां होमान्ते लौहीं पापप्रतिमां खड्गचक्रहस्तां कृष्णवस्त्रेण वेष्टितां प्रस्थतिलोपरिस्थां कृत्वा धर्मराजनामभिः करवीरैः सम्पूज्य-'यदन्यजन्मनि कृतमिह जन्मनि वा पुनः । तत्सर्वं प्रशमं यातु मत्पापं तव पूजनात् ॥' इति पुष्पाञ्जलिं क्षिप्त्वा कृष्णप्रतिमां च सम्पूज्य विप्राय दत्वा विप्रान्सम्भोज्य दक्षिणां दत्वा पञ्चगव्यं प्राश्य पौर्णमास्यां नक्तं भुञ्जीतेति लघुनारदीये । पञ्चगव्यप्राशनं षडक्षरेणेति हेमाद्रिः । हेमाद्रौ भविष्ये तु-शाकैर्मुन्यन्नैर्वा पञ्चाऽहं वर्तनमुक्तम् । अन्तेऽप्युक्तम्-'यद्भीष्मपञ्चकमिति प्रथितं पृथिव्यामेकादशीप्रभृतिपञ्चदशीनिरुद्धम् । मुन्यन्नभोजनपरस्य नरस्य तस्मिन्निष्टं फलं दिशति पाण्डव शार्ङ्गधन्वा ॥' इति । तथा पाद्मे-'पञ्चाऽहं पञ्चगव्याशी भीष्मायार्घ्यं च पञ्चसु । अहःस्वपि तथा दद्यान्मन्त्रेणानेन सुव्रत । सत्यव्रताय शुचये गाङ्गेयाय महात्मने । भीष्मायैतद्ददाम्यर्घ्यमाजन्मब्रह्मचारिणे ॥' 'वैयाघ्रपद्यगोत्राय' [वैयाघ्रपद्यगोत्राय साङ्कृत्यप्रवराय च । गङ्गापुत्राय भीष्माय प्रदास्येऽहं तिलोदकं । अपुत्राय ददाम्येतत्सलिलं भीष्मवर्मणे ।] इति च । 'सव्येनानेन मन्त्रेण तर्पणं सार्ववर्णिकम् ।' इति ॥

कार्तिकशुक्लद्वादश्यां रेवतीनक्षत्रयोगरहितायां पारणं कार्यम् । तदुक्तम्—'आभाकासितपक्षेषु मैत्रश्रवणरेवती । सङ्गमे नहि भोक्तव्यं द्वादश द्वादशीर्हरेत् ॥' इति । यदा तु रेवतीयोगरहिता द्वादशी सर्वथा न लभ्यते, तदा रेवत्याश्चतुर्थपादं वर्जयेत् । वचनं तु प्रागुक्तम् । लघुनारदीये-'कार्तिके शुक्लपक्षस्य कृत्वा चैकादशीं नरः । प्रातर्दत्वा शुभान्कुम्भान्प्रयाति हरिमन्दिरम् ॥' मदनरत्ने वाराहे-'एकादशी सोमयुक्ता कार्तिके मासि भामिनि । उत्तराभाद्रसंयोगे अनन्ता सा प्रकीर्तिता ॥ तस्यां यत्क्रियते भद्रे ! सर्वमानन्त्यमश्नुते ॥'

प्रबोधोत्सवः ।

अस्यामेव रात्रौ देवोत्थापनमुक्तं हेमाद्रौ ब्राह्मे-'एकादश्यां च

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

शुक्लायां कार्तिके मासि केशवम् । प्रसुप्तं बोधयेद्रात्रौ श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ॥' इति ॥ मदनरत्ने भविष्ये—'कार्तिके शुक्लपक्षे तु एकादश्यां पृथासुत । मन्त्रेणानेन राजेन्द्र ! देवमुत्थापयेद्‌द्विजः ॥' रामार्चनचन्द्रिकादौ तु द्वादश्यामुक्तम् । 'पारणाहे पूर्वरात्रे घण्टादीन्वादयेन्मुहुः ।' इति । अत्र देशाचारतो व्यवस्था । 'तत्रैव देवदेवस्य स्नानं पूर्वं महद्‌भवेत् । महापूजां ततः कृत्वा देवमुत्थापयेत्सुधीः ॥' मन्त्रास्तु वाराहपुराणे उक्ताः—'ॐ ब्रह्मेन्द्ररुद्राग्निकुबेरसूर्यसोमादिभिर्वन्दित वन्दनीय । बुद्ध्यस्व देवेश जगन्निवास मन्त्रप्रभावेण सुखेन देव ॥ इयं तु द्वादशी देवप्रबोधार्थं विनिर्मिता ॥ त्वयैव सर्वलोकानां हितार्थं शेषशायिना ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द त्यज निद्रां जगत्पते । त्वयि सुप्ते जगन्नाथ जगत्सुप्तं भवेदिदम् ॥ उत्थिते चेष्टते सर्वमुत्तिष्ठोत्तिष्ठ माधव । गता मेघा वियच्चैव निर्मलं निर्मला दिशः ॥ शारदानि च पुष्पाणि गृहाण मम केशव ॥ इदं विष्णुरिति प्रोक्तो मन्त्र उत्थापने हरेः ॥' इति ।

चातुर्मास्यव्रतसमाप्तिः ।

एवं देवमुत्थाप्य तदग्रे चातुर्मास्यव्रतसमाप्तिं कुर्यात् । तदुक्तं भारते—'चतुर्धा गृह्य वै चीर्णं चातुर्मास्यव्रतं नरः । कार्तिके शुक्लपक्षे तु द्वादश्यां तत्समापयेत् ॥' लघुनारदीये—'चातुर्मास्यव्रतानां च समाप्तिः कार्तिके स्मृता ॥' मन्त्रश्च निर्णयामृते सनत्कुमारेणोक्तः—'इदं व्रतं मया देव कृतं प्रीत्यै तव प्रभो । न्यूनं सम्पूर्णतां यातु त्वत्प्रसादाज्जनार्दन ॥' इति ।

अथ वाराहोक्तो बोधिनीविधिः ।

एकादश्यां रात्रौ कुम्भे घृतपात्रोपरि हैमं माषमितं मत्स्यं पञ्चामृतेन संस्नाप्य कुङ्कुमपीतवस्त्रयुगपद्माद्यैः सम्पूज्य मत्स्यादिदशावतारान्सम्पूज्य जागरं कृत्वा प्रातर्देवमाचार्यं च वस्त्राद्यैः सम्पूज्य—'जगदादिर्जगद्रूपो जगदादिरनादिमान् । जगदाद्यो जगद्योनिः प्रीयतां मे जनार्दनः ॥' इति नत्वा दक्षिणां दत्वा ब्राह्मणान्भोजयेदिति । तथा ब्राह्मे—'महातूर्यरवे रात्रौ भ्रामयेत्स्य-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

न्दने स्थितम् । उत्थितं देवदेवेशं नगरे पार्थिवः स्वयम् ॥ चतुरो वार्षिकान्मासान्नियमं यस्य यत्कृतम् । कथयित्वा द्विजेभ्यस्तद्दद्याद्भक्त्या सदक्षिणम् ॥' यस्य भक्ष्यस्य नियमः कृतस्तद्द्रव्यं दद्यादित्यर्थः। इदं शुक्रास्तादावपि कार्यम् । आशौचे तु पूजामन्येन कारयेत् ।

कार्तिकशुक्लद्वादशी पौर्णमासी च मन्वादिः ।

कार्तिकशुक्लद्वादशी पौर्णमासी च मन्वादिः । सा पौर्वाह्णिकी ग्राह्या । अन्यत्प्रागुक्तम् ॥

वैकुण्ठचतुर्दशी ।

कार्तिकशुक्लचतुर्दशी वैकुण्ठसंज्ञा । सा विष्णुपूजायां रात्रिव्यापिनी ग्राह्या । दिनद्वये तद्व्याप्तौ निशीथप्रदोषोभयव्यापिनी ग्राह्या । तदुक्तं हेमाद्रौ भविष्ये—'कार्तिकस्य सिते पक्षे चतुर्दश्यां नराधिप ॥ सोपवासस्तु सम्पूज्य हरिं रात्रौ जितेन्द्रियः ॥' इति ॥

अस्यामेव विश्वेश्वरयात्रा ।

अस्या एव विश्वेश्वरप्रतिष्ठादिनत्वात्तत्प्रीत्यर्थं यदोपवासादि क्रियते तदाऽरुणोदयव्यापिनी ग्राह्या। तदुक्तं त्रिस्थलीसेतौ सनत्कुमारसंहितायाम्—'वर्षे च हेमलम्बाख्ये मासे श्रीमति कार्तिके । शुक्लपक्षे चतुर्दश्यामरुणाभ्युदयं प्रति ॥ महादेवतिथौ ब्राह्मे मुहूर्ते मणिकर्णिके। स्नात्वा विश्वेश्वरो देव्या विश्वेश्वरमपूजयत् ॥' इति । तत्पूर्वदिने चोपवासः कार्यः । 'ततः प्रभाते विमले कृत्वा पूजां महाद्भुताम् । दण्डपाणेर्महाधाम्नि वनेऽस्मिन्कृतपारणः ॥' इति तत्रैवोक्तेः।शिवरहस्येऽपि-- पूजाजागराद्युक्त्वोक्तम् —'ततोऽरुणोदये जाते स्नात्वा स्नात्वा च भस्मना । सन्ध्यां समाप्य विश्वेशं मामभ्यर्च्य यथाविधि ॥ मद्भक्तान्भोजयामासुर्ऋषयो बुभुजुस्ततः ॥' इति ।

अत्र कार्तिकव्रतोद्यापनम् ।

पाद्मे कार्तिकमाहात्म्ये उक्तम्—'अथोर्जव्रतिनः सम्यगुद्यापनविधिं शृणु । ऊर्जशुक्लचतुर्दश्यां कुर्यादुद्यापनं व्रती ॥ तुलस्या उपरिष्टात्तु कुर्यान्मण्डपिकां शुभाम् । तुलसीमूलदेशे च सर्वतोभद्रमेव

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

च ॥ तस्योपरिष्टात्कलशं पञ्चरत्नसमन्वितम् । पूजयेत्तत्र देवेशं सौवर्णं गुर्वनुज्ञया ॥ रात्रौ जागरणं कुर्याद्गीतवाद्यादिमङ्गलैः । ततस्तु पौर्णमास्यां वै सपत्नीकान्द्विजोत्तमान् ॥ त्रिंशन्मितानथैकं वा स्वशक्त्या वा निमन्त्रयेत् ॥ अतो देवा इति द्वाभ्यां जुहुयात्तिलपायसम् ॥ ततो गां कपिलां दद्यात्पूजयेद्विधिवद्गुरुम् ॥' इति ।

कार्तिकपौर्णिमा ।

कार्तिकी पौर्णमासी परा ग्राह्या । 'अमापौर्णमास्यौ परे' इति दीपिकोक्तेः । अत्र विशेषो हेमाद्रौ ब्राह्मे—'पुण्या महाकार्तिकी स्याज्जीवेन्द्वोः कृत्तिकासु च ।' तथा—'आग्नेयं तु यदा ऋक्षं कार्तिक्यां भवति क्वचित् । महती सा तिथिर्ज्ञेया स्नानदानेषु चोत्तमा ॥ यदा तु याम्यं भवति ऋक्षं तस्यां तिथौ क्वचित् । तिथिः साऽपि महापुण्या मुनिभिः परिकीर्तिता ॥ प्राजापत्यं यदा ऋक्षं तिथौ तस्यां नराधिप ! । सा महाकार्तिकी प्रोक्ता देवानामपि दुर्लभा ॥' इति । पाद्मे—'विशाखासु यदा भानुः कृत्तिकासु च चन्द्रमाः । स योगः पद्मको नाम पुष्करेष्वतिदुर्लभः । पद्मकं पुष्करे प्राप्य कपिलां यः प्रयच्छति । स हित्वा सर्वपापानि वैष्णवं लभते पदम् ॥' यमः—कार्तिक्यां पुष्करे स्नातः सर्वपापैः प्रमुच्यते । माघ्यां स्नातः प्रयागे तु मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ॥' अस्यामेव सायङ्काले मत्स्यावतारो जात इत्युक्तं पाद्मे कार्तिकमाहात्म्ये—'वरान्दत्वा यतो विष्णुर्मत्स्यरूप्यभवत्ततः । तस्यां दत्तं हुतं जप्तं तदक्षय्यफलं स्मृतम् ॥' इति ।

अत्र त्रिपुरोत्सवः ।

अत्र त्रिपुरोत्सव उक्तो भार्गवार्चनदीपिकायाम्—'पौर्णमास्यां तु सन्ध्यायां कर्तव्यस्त्रिपुरोत्सवः । दद्यादनेन मन्त्रेण प्रदीपांश्च सुरालये ॥ कीटाः पतङ्गा मशकाश्च वृक्षा जले स्थले ये विचरन्ति जीवाः । दृष्ट्वा प्रदीपं न च जन्मभागिनो भवन्ति नित्यं श्वपचा हि विप्राः ॥'

अत्र वृषोत्सर्गोऽतिप्रशस्तः ।

तदुक्तं मात्स्ये—'कार्तिक्यां यो वृषोत्सर्गं कृत्वा नक्तं समाचरेत् । शैवं पदमवाप्नोति शिवव्रतमिदं स्मृतम् ॥' इति ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अत्र कार्तिकेयदर्शनमुक्तम्।

काशीखण्डे—'कार्तिक्यां कृत्तिकायोगे यः कुर्यात्स्वामिदर्शनम्। सप्तजन्म भवेद्विप्रो धनाढ्यो वेदपारगः॥' इति श्रीकमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ द्वितीयपरिच्छेदे कार्तिकमासः॥

अथ मार्गशीर्षमासः।

वृश्चिके पूर्वाः षोडश घटिकाः पुण्याः। शेषं प्राग्वत्॥

अथ कालाष्टमी तत्रोपवासादिविधिः।

मार्गशीर्षकृष्णाष्टमी कालाष्टमी। सा च रात्रिव्यापिनी ग्राह्या। 'मार्गशीर्षासिताष्टम्यां कालभैरवसन्निधौ। उपोष्य जागरं कुर्वन्सर्वपापैः प्रमुच्यते॥' इति काशीखण्डाद्रात्रिव्रतत्वावगतेः। 'रुद्रव्रतेषु सर्वेषु कर्तव्या सन्मुखी तिथिः।' इति ब्रह्मवैवर्ताच्च। दिनद्वयेऽशतो रात्रिव्याप्तावुत्तरैव। भैरवोत्पत्तेः प्रदोषकालीनत्वादिति केचित्। तन्न। शिवरहस्ये मध्याऽह्ने भैरवोत्पत्तेः श्रवणात्। तथा च तत्रैव—'नित्ययात्रादिकं कृत्वा मध्याऽह्ने संस्थिते रवौ।' इत्युपक्रम्य ब्रह्मणा रुद्रेऽवज्ञाते उक्तम्—'तदोग्ररूपादनघान्मत्तः श्रीकालभैरवः। आविरासीत्तदा लोकान्भीषयन्नखिलानपि॥' इति। अत्रोपवास एव प्रधानमित्युक्तं तत्रैव—'उपोषणस्याङ्गभूतमर्घ्यदानमिह स्मृतम्। तथा जागरणं रात्रौ पूजा यामचतुष्टये॥' सन्ध्यायामपि पूजैवोक्ता। तेन मध्याह्नव्यापिनी युक्ता। दिनद्वयेऽशतः सम्पूर्णायां वा तद्व्याप्तौ पूर्वैव। पूर्वोक्तवचनात्। पारणा तु प्रातरेव। 'यामत्रयोर्ध्वगामिन्यां प्रातरेव हि पारणा।' इति वचनात्। अत्र च कालभैरवपूजोक्ता त्रिस्थलीसेतौ—'कृत्वा च विविधां पूजां महासम्भारविस्तरैः। नरो मार्गासिताष्टम्यां वार्षिकं विघ्नमुत्सृजेत्॥' तथा—'तीर्थे कालोदके स्नात्वा कृत्वा तर्पणमत्वरः। विलोक्य कालराजानं निरयादुद्धरेत्पितॄन्॥' इति। इयं च कार्तिक्यनन्तरा गौणचान्द्राभिप्रायेण॥

अथ मार्गशीर्षशुक्लपञ्चमी-नागपञ्चमी-निर्णयः।

मार्गशीर्षशुक्लपञ्चम्यां नागपूजोक्ता हेमाद्रौ स्कान्दे—'शुक्ला मार्ग-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

शिरे पुण्या श्रावणे या च पञ्चमी। स्नानदानैर्बहुफला नागलोकप्रदायिनी ॥' इति। इयं नागपूजायां षष्ठीयुतैव ग्राह्या। 'पञ्चमीनागपूजायां कार्या षष्ठीसमन्विता। तस्यां तु तुषिता नागा इतरा सचतुर्थिका ॥' इति मदनरत्ने वचनात् ॥

अथ चम्पाषष्ठीनिर्णयः।

मार्गशीर्षशुक्लषष्ठी चम्पाषष्ठीति महाराष्ट्रेषु प्रसिद्धा। सोत्तरयुता ग्राह्या। 'षण्मुन्योः' इति युग्मवाक्यात्। 'पूर्वाह्णे दैविकं कुर्यात्' इति वचनादस्य च दैवकर्मत्वात्। इयमेव योगविशेषेण चम्पेत्युच्यते। तदुक्तं ब्रह्माण्डपुराणे मल्लारिमाहात्म्ये—'मार्गे भाद्रपदे शुक्लाषष्ठी वैधृतिसंयुता। रविवारेण संयुक्ता सा चम्पेतीह कीर्तिता ॥' इति। विशाखाभौमयोगेन सा चम्पेतीह कीर्तिता।' इति मदनरत्ने पाठः। 'मार्गशीर्षेऽमले पक्षे षष्ठ्यां वारेंऽशुमालिनः। शततारागते चन्द्रे लिङ्गं स्याद्दृष्टिगोचरम् ॥' इति। इयं च योगवशेन पूर्वा परा वा कार्या। 'चम्पाषष्ठी सप्तमीयुता' इति दिवोदासः। इयमेव स्कन्दषष्ठी। सा पूर्वयुता। 'कृष्णाष्टमी स्कन्दषष्ठी शिवरात्रिश्चतुर्दशी। एताः पूर्वयुताः कार्यास्तिथ्यन्ते पारणं भवेत् ॥' इति भृगूक्तेः। परेऽह्नि रात्रावाद्ययाममध्ये पारणासम्भवे इदम्। अन्यथोत्तरैवेति दिवोदासः। अब्दपर्यन्तं षष्ठीषु—'सेनाविदारकस्कन्द महासेन महाबल। रुद्रोमाग्निज षड्वक्त्र गङ्गागर्भ नमोऽस्तु ते ॥' इति राजतं स्कन्दं सम्पूज्य विप्राय दद्यादिति दिवोदासः ॥

अथ पिशाचमोचनीश्राद्धविधिः।

मार्गशीर्षशुक्लचतुर्दश्यां पिशाचविमोचनीतीर्थे श्राद्धं त्रिस्थलीसेतौ भट्टचरणैरुक्तम्। तस्य प्राप्तपैशाच्यस्वपित्राद्युद्देश्यकत्वे पार्वणत्वादपराह्णव्यापिनी ग्राह्या। अज्ञातनामपिशाचाद्युद्देश्यकत्वे त्वेकोद्दिष्टत्वान्मध्याह्नव्यापिनीति। कुलधर्मव्रतादौ तूत्तरैव। 'चैत्रनभोगतेतरसिता स्यादूर्ध्वं इति दीपिकोक्तेः ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दत्तात्रयजयन्तिनिर्णयः ।

मार्गशीर्षपौर्णमास्यां दत्तात्रेयोत्पत्तिः। तदुक्तं स्कान्दे सह्याद्रिखण्डे—'मार्गशीर्षे तथा मासि दशमेऽह्नि सुनिर्मले। मृगशीर्षयुते पौर्णमास्यां ज्ञस्य च वासरे॥ जनयामास देदीप्यमानं पुत्रं सती शुभम् । तं विष्णुमागतं ज्ञात्वा अत्रिर्नामाकरोत्स्वयम् ॥ दत्तवान्स्वस्य पुत्रत्वाद्दत्तात्रेय इतीश्वरः ॥' इति। इयं प्रदोषव्यापिनी ग्राह्येति वृद्धाः ॥

मार्गशीर्षपौर्णिमानन्तराष्टमी अष्टका ।

एवं पौषादिमासत्रयेऽपि । 'हेमन्तशिशिरयोश्चतुर्णामपरपक्षाणामष्टमीष्वष्टका एकस्यां वा' इत्याश्वलायनोक्तेः । 'एकस्यामष्टम्यां वैका कार्या' इति हरदत्तः । क्वचित्पञ्चम्यप्युक्ता । 'प्रोष्ठपद्यष्टका भूयः पितृलोके भविष्यति ।' इति पाद्मवचनात् । तत्पूर्वसप्तमीषु पूर्वेद्युः तत्परनवमीष्वन्वष्टका च श्राद्धमुक्तं कालादर्शे—'मार्गशीर्षे च पौषे च माघे प्रौष्ठे च फाल्गुने। कृष्णपक्षे च पूर्वेद्युरन्वष्टक्यं तथाष्टका ॥' इति। यत्तु विष्णुः-'अमावास्यास्तिस्रोऽष्टकास्तिस्रोऽन्वष्टकाः' इति। यच्च कौर्मे-अमावास्याष्टकास्तिस्रः पौषमासादिषु त्रिषु।' इति, तच्चतुर्थ्यामनावश्यकत्वार्थम्। 'या चाऽप्यन्या चतुर्थी स्यात्तां च कुर्यात्प्रयत्नतः।' इति वायुब्रह्माण्डपुराणात्। 'श्राद्धमेतेष्वकुर्वाणो नरकं प्रतिपद्यते।' इति विष्णूक्तेरिति शूलपाणिः। शाखाभेदाद्व्यवस्थेति[1] तत्त्वम्। वायुब्रह्माण्डयोः—'आद्यापूपैः सदा कार्या मांसैरन्या सदा भवेत्। शाकैः कार्या तृतीया स्यादेष द्रव्यगतो विधिः ॥' पौषादिक्रमः। अन्वष्टका तु प्रागेव निर्णीता । तत्राऽष्टम्यपराह्णव्यापिनी ग्राह्या । 'अथान्वाच्छादनपर्यन्तं श्राद्धं पार्वणवद्भवेत् ।' इत्याश्वलायनकारिकोक्तेरपराह्णकालत्वाच्च

१—एवं चाऽश्वलायनभिन्नानां केषाञ्चित्फाल्गुनाष्टम्यां सर्वासु सप्तमीषु श्राद्धाकारणेऽपि न दोषः। 'स्वशाखाश्रयमुत्सृज्य पराशाखाश्रयं तु यः। कर्तुमिच्छति दुर्मेधा मोघं तत्तस्य चेष्टितम् ॥' इत्युक्तेरिति ज्ञेयम्।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पार्वणस्य। पूर्वेद्युरन्वष्टकाश्राद्धयोस्तु अष्टम्यनुरोधेन निर्णयः। अत एव सूत्रम्–'पूर्वेद्युः पितृभ्यो दद्यात् अपरेद्युरन्वष्टक्यम्' इति च। अत्र कामकालौ विश्वेदेवौ–'इष्टिश्राद्धे क्रतूदक्षावष्टम्यां कामकालौ' इति सायणीये शङ्खोक्तेः। अत्र श्राद्धाकरणे प्रायश्चित्तमुक्तमृग्विधाने। 'एभिर्द्युभिर्जपेन्मन्त्रं शतवारं तु तद्दिने। आन्वष्टक्यं यदा न्यूनं सम्पूर्णं याति सर्वथा॥' इति। अशक्तौ त्वाश्वलायनः–'अथ श्वोभूतेऽष्टकाः पशुना स्थालीपाकेन चाऽप्यनडुहो यवसमाहरेदग्निना वा कक्षमुपोषेदेषामेऽष्टकेति नत्वेवानष्टकः स्यात्' इति। मार्गशीर्षादिषु मलमासे सति तत्राष्टका न कार्या। चतुर्णामिति ग्रहणादित्युक्तं नारायणवृत्तौ। तथा काठकगृह्येऽपि–'महालयाष्टकाश्राद्धोपाकर्माद्यपि कर्म यत्। स्पष्टमासविशेषाख्याविहितं वर्जयेन्मले॥' इति॥

काम्यव्रतम्।

मार्गादिरविवारेषु काम्यं व्रतमुक्तं हेमाद्रौ। तत्र भक्ष्याण्युक्तानि सङ्ग्रहे सौरधर्मे–'पत्रत्रित्वं तुलस्यास्त्रिपलमथ घृतं मार्गशीर्षादिभक्ष्यं मुष्टीनां त्रिस्तिलानां त्रिपलदधि तथा दुग्धकं गोमयं च। त्रित्वं तोयाञ्जलीनां त्रिमरिचकमथो त्रिःपलाः सक्तवः स्युर्गोमूत्रं शर्करा सद्भविरिति विधिना भानुवारे क्रमेण॥' इति॥

इति श्रीकमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ द्वितीयपरिच्छेदे मार्गशीर्षमासः समाप्तः॥

अथ पौषमासः।

धनुःसङ्क्रमे पराः षोडश घटिकाः पुण्याः। अन्यत्प्राग्वत्। अत्रोत्सर्जननिर्णयो वक्तव्योऽप्युपाकर्मप्रसङ्गात्प्रागेवोक्तः॥

पौषशुक्लाष्टम्यां योगविशेषेण जपहोमादिविधिः।

कल्पतरौ भविष्ये–'पौषे मासे यदा देवि शुक्लाष्टम्यां बुधो भवेत्। तस्यां स्नानं जपो होमस्तर्पणं विप्रभोजनम्॥ मत्प्रीतये कृतं देवि शतसाहस्रिकं भवेत्।' अत्रैव रोहिण्यार्द्रायोगे पुण्यतमत्वं तत्रैव ज्ञेयम्॥ पौषशुक्लैकादशी मन्वादिः। सा चोक्ता प्राक्। पौषपौर्णिमानन्तराः सप्तम्यष्टमीनवम्योऽष्टकाद्याः प्रागुक्ताः॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अर्धोदयनिर्णयः ।

पौषामावास्यायामर्धोदयो योगविशेषः । तदुक्तं मदनरत्ने महाभारते–'अमार्कपातश्रवणैर्युक्ता चेत्पौषमाघयोः । अर्धोदयः स विज्ञेयः कोटिसूर्यग्रहैः समः ॥' इति पौषमाघयोर्मध्यवर्तिनी पौषीपौर्णमास्युत्तरामावास्येत्यर्थ इति भट्टाः । मदनरत्ने पौषस्य च माघस्य चेत्यर्थ उक्तः । तन्न । हेमाद्रिविरोधात् । तत्र हि माघ एवोक्तः । तथा—'दिवैव योगः शस्तोऽयं न तु रात्रौ कदाचन ।' इति । इदमर्धमन्यनिबन्धेष्वभावान्निर्णयामृतमात्रोक्तेर्निर्मूलमेव । तेन हेमाद्र्यादिमते रा१त्रावर्धोदयो भवत्येव । केचित्तु—किञ्चिदूनो महोदयः' इत्याहुस्तन्निर्मूलम् । हेमाद्रौ मदनरत्ने च स्कान्दे—'माघामायां व्यतीपाते आदित्ये विष्णुदैवते । अर्धोदयं तदित्याहुः सहस्रार्कग्रहैः समम् ॥' तत्रैव—'माघमासे कृष्णपक्षे पञ्चदश्यां रवेर्दिने । वैष्णवेन तु ऋक्षेण व्यतीपाते सुदुर्लभे ॥' व्रतं कुर्यादित्यग्रेऽन्वयः । तत्रैव-'ब्रह्मविष्णुमहेशानां सौवर्णीः पलसङ्ख्यया । प्रतिमास्तु प्रकर्तव्यास्तदर्धेन द्विजोत्तम ! ॥ सार्धं शतत्रयं शम्भोर्द्रोणानां तिलपर्वतः । कर्तव्यौ पर्वतौ विष्णुरुद्रयोः पूर्वसङ्ख्यया ॥' शम्भुरत्र ब्रह्मा । 'शय्यात्रयं ततः कुर्यादुपस्करसमन्वितम् ।' तिलैर्होमं कृत्वा प्रतिमां दद्यादित्युक्तं स्कान्दे–'अर्धोदये तु सम्प्राप्ते सर्वं गङ्गासमं जलम् । शुद्धात्मानो द्विजाः सर्वे भवेयुर्ब्रह्मसम्मिताः ॥ यत्किञ्चिद्दीयते दानं तद्दानं मेरुसन्निभम् ।' इति ।

अत्र दानादिविशेष उक्तः ।

अत्र दानविशेषो निर्णयामृते स्कान्दे–'चतुःषष्टिपलं मुख्यममत्रं तत्र कारयेत् । चत्वारिंशत्पलं वाऽथ पञ्चविंशतिरेव वा ॥' अमत्रं पात्रम् । तच्च कांस्यमयमित्युक्तं तत्रैव । 'एवं सुघटितं कार्यं कांस्यभाजनमुत्तमम् ।' इति । तथा-'निधाय पायसं तत्र पद्ममष्टदलं

१—वस्तुतस्तु–दिवैव योगः शस्तोऽयमुषःकालेऽपि वा यदि । न तु रात्रौ स विज्ञेयो नरैर्धर्मपरायणैः ॥' इति नागरखण्डाद्रात्रौ योगो निर्मूल एवेति नव्याः, इति टीकाशयः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

लिखेत् । पद्मस्य कर्णिकायां तु कर्षमात्रं सुवर्णकम् ॥ तदभावे तदर्धं वा तदर्धं वाऽपि कारयेत् । भूमौ तु तण्डुलैः शुद्धैः कृत्वाऽष्टदलमुत्तमम् ॥ अमन्त्रं स्थापयेत्तत्र ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् । तेषां पूजा ततः कार्या श्वेतमाल्यैस्तु शोभनैः । वस्त्रादिभिरलङ्कृत्य ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥' मन्त्रस्तु–'सुवर्णपायसामत्रं यस्मादेतत्त्रयीमयम् । आपत्तेस्तारकं यस्मात्तद्गृहाण द्विजोत्तम !॥ समुद्रमेखलां पृथ्वीं सस्यग्दातुश्च यत्फलम् । तत्फलं लभते मर्त्यः कृत्वेदं दानमुत्तमम् ॥' इति । इति श्रीकमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ द्वितीयपरिच्छेदे पौषमासः ॥

अथ माघमासः ।

अथ माघस्नानविधिः ।

अथ माघस्नानम् । तत्र विष्णुः–'तुलामकरमेषेषु प्रातःस्नायी सदा भवेत् । हविष्यं ब्रह्मचर्यं च माघस्नाने महाफलम् ॥' इति सौरमास उक्तः । ब्राह्मे तु सावन उक्तः—'एकादश्यां शुक्लपक्षे पौषमासे समारभेत् । द्वादश्यां पौर्णमास्यां वा शुक्लपक्षे समापनम् ॥' इति । पाद्मेऽपि–'पौषस्यैकादशीं शुक्लामारभ्य स्थण्डिलेशयः । मासमात्रं निराहारस्त्रिकालं स्नानमाचरेत् ॥ त्रिकालमर्चयेद्विष्णुं त्यक्तभोगो जितेन्द्रियः । माघस्यैकादशीं शुक्लां यावद्विद्याधरोत्तम ॥' इति । त्रिकालस्नानं मासोपवासविषयम् । निराहार इत्युक्तेः । पृथ्वीचन्द्रोदये त्वन्यथोक्तम् । विष्णुः– 'दर्शं वा पौर्णमासीं वा प्रारभ्य स्नानमाचरेत् । पुण्यान्यहानि त्रिंशत्तु मकरस्थे दिवाकरे ॥' इति । अत्र दर्शमिति शुक्लादिमुख्यचान्द्राभिप्रायेण । अयं तु पक्षो नेदानीं प्रचरति ॥

अत्राधिकारिणः ।

भविष्ये–'ब्रह्मचारी गृहस्थो वा वानप्रस्थोऽथ भिक्षुकः । बालवृद्धयुवानश्च नरनारीनपुंसकाः ॥ स्नात्वा माघे शुभे तीर्थे प्राप्नुवन्तीप्सितं फलम् ॥' पाद्मे—'सर्वेऽधिकारिणो ह्यत्र विष्णुभक्तौ यथा नृप !॥' ब्राह्मे–'उष्णोदकेन वा स्नानमशक्ये सति कुर्वते । दृढेषु सर्वगात्रेषु उष्णोदं न विशिष्यते ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अत्र कर्तव्याकर्तव्यभक्षणादि च निर्णयः ।

वैष्णवामृते गौडनिबन्धे च स्कान्दे—'पौष्यां तु समतीतायां यावद्भवति पूर्णिमा । माघमासस्य तावद्धि पूजा विष्णोर्विधीयते ॥ पितॄणां देवतानां च मूलकं नैव दापयेत् । ब्राह्मणो मूलकं भुक्त्वा चरेच्चान्द्रायणव्रतम् ॥ अन्यथा याति नरकं क्षत्रविट् शूद्र एव च । वर्जनीयं प्रयत्नेन मूलकं मदिरोपमम् ॥' यदा तु माघो मलमासो भवति तदा काम्यानां तत्र समाप्तिनिषेधान्मासद्वये स्नानं तन्नियमाश्च कार्याः । मासोपवासचान्द्रायणादि तु मलमास एव समापयेत् । तदुक्तं दीपिकायाम्—'नियतत्रिंशद्दिनत्वाच्छुभे मास्यारभ्य समापयेत मलिने मासोपवासव्रतम्' इति । मासोपवासपदं चान्द्रायणादेरुपलक्षणम् ॥

माघस्नाने मन्त्रः ।

स्नानारम्भे च मन्त्रो विष्णुनोक्तः—'तत्र चोत्थाय नियमं गृह्णीयाद्विधिपूर्वकम् । माघमासमिमं पूर्णं स्नास्येऽहं देव माधव ! ॥ तीर्थस्यास्य जले नित्यमिति सङ्कल्प्य चेतसि ।' इति प्रत्यहं मन्त्रश्च पाद्मे—'दुःखदारिद्र्यनाशाय श्रीविष्णोस्तोषणाय च । प्रातःस्नानं करोम्यद्य माघे पापविनाशनम् ॥ मकरस्थे रवौ माघे गोविन्दाच्युत माधव । स्नानेनानेन मे देव यथोक्तफलदो भव ॥ इमं मन्त्रं समुच्चार्य स्नायान्मौनसमन्वितः ।' इति । प्रत्यहं सूर्यायार्घ्यम् । मन्त्रस्तु पृथ्वीचन्द्रोदये पाद्मे—'सवित्रे प्रसवित्रे च परं धाम जले मम । त्वत्तेजसा परिभ्रष्टं पापं यातु सहस्रधा ॥' इति ।

माघस्नानकालः ।

स्नानकालश्च सूर्योदयः । त्रिस्थलीसेतौ—'मकरस्थे रवौ यो हि न स्नात्यभ्युदिते रवौ ।' इति । माघमासे रटन्त्यापः किञ्चिदभ्युदिते रवौ ।' इति च पाद्मवचनात् । 'सम्प्राप्ते माघमासे तु तपस्विजनवल्लभे । क्रोशन्ति सर्ववारीणि समुद्गच्छति भास्करे ॥ पुनीमः सर्वपापानि त्रिविधानि न संशयः । ' इति नारदीयोक्तेः । ' यो माघमास्युषसि सूर्यकराभितप्ते स्नानं समाचरति चारुनदीप्रवाहे । उद्धृत्य सप्तपुरुषा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

न्पितृमातृवंश्यान्स्वर्गं प्रयात्यमरदेहधरो नरोऽसौ ॥' इति भविष्योत्तरवचनाच्च । ब्राह्मे त्वरुणोदय उक्तः । 'अरुणोदये तु सम्प्राप्ते स्नानकाले विचक्षणः । माधवाङ्घ्रियुगं ध्यायन्यः स्नाति सुरपूजितः॥' इति । तथा-'अरुणोदयमारभ्य प्रातःकालावधि प्रभो । माघस्नानवतां पुण्यं क्रमात्तत्रावधारणा ॥ उत्तमं तु सनक्षत्रं मध्यमं लुप्ततारकम् । सवितर्युदिते भूप ततो हीनं प्रकीर्तितम् ॥' इति । तेनात्र शक्त्यपेक्षया व्यवस्था । इदं च स्नानं प्रयागेऽतिप्रशस्तम् । 'काश्याः शतगुणं प्रोक्तं गङ्गायमुनसङ्गमे । सहस्रगुणिता साऽपि भवेत्पश्चिमवाहिनी ॥ पश्चिमाभिमुखी गङ्गा कालिन्द्या सह सङ्गता । हन्ति कल्पकृतं पापं सा माघे नृप दुर्लभा ॥' इत्यादिपाद्मादिवचोभ्यः । विस्तरस्तु मत्पितामहकृतप्रयागसेतौ ज्ञेयः ॥ ब्राह्मे-'यत्र कुत्राऽपि यो माघे प्रयागस्मरणान्वितः । करोति मज्जनं तीर्थे स लभेद्गाङ्गमज्जनम् ॥' तथा समुद्रेऽप्यतिप्रशस्तम् । तदुक्तं पृथ्वीचन्द्रोदये प्रभासखण्डे-'माघे मासि च यः स्नायान्नैरन्तर्येण भावतः । पौण्डरीकफलं तस्य दिवसे दिवसे भवेत् ॥' माघस्नानं काम्यमेवेति भट्टाः । विष्णुवादिवाक्ये सदावश्यशब्दान्नित्यत्वावगतेर्नित्यकाम्यमिति तु युक्तम् । मासपर्यन्तं स्नानासम्भवे तु त्र्यहमेकाऽहं वा स्नायात् । 'महामाघीं पुरस्कृत्य सस्नौ तत्र दिनत्रयम् ।' इति लिङ्गात् । 'अस्मिन्योगे त्वशक्तोऽपि स्नायादपि दिनत्रयम् । प्रयागे माघमासे तु त्र्यहं स्नातस्य यत्फलम् ॥ नाश्वमेधसहस्रेण तत्फलं लभते भुवि ।' इति पाद्मादिवचनात् । अत्र मकरसङ्क्रमो रथसप्तमी माघीति त्र्यहमित्येके । माघशुक्लदशम्यादीत्यन्ये । मकराद्यत्र्यह इत्यपरे । माघमासाद्यत्र्यह इति केचित् । त्रयोदश्यादीति बहवः । 'महामाघीं पुरस्कृत्य सस्नौ तत्र दिनत्रयम् ।' इति पाद्मोक्तेः । एतस्यार्थवादत्वाद्यत्किञ्चिद्दिनत्रयमिति भट्टाः । तत्त्वं तु—'सन्दिग्धेषु वाक्यशेषात्' इति न्यायात्त्रयोदश्याद्येवेति । प्रयागं विनाऽपि पाद्मे-'अस्मिन्योगे त्वशक्तोऽपि स्नायादपि दिनत्रयम् ।' इति ।

माघस्नाने नियमाः ।

माघस्नाने नियमास्तु नारदीये-'न वह्निं सेवयेत्स्नातो ह्यस्नातो-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ऽपि वरानने । होमार्थं सेवयेद्वह्निं शीतार्थं न कदाचन ॥ अहन्यहनि दातव्यास्तिलाः शर्करयान्विताः । त्रिभागस्तु तिलानां हि चतुर्थः शर्करान्वितः । अनभ्यङ्गी वरारोहे सर्वमासं नयेद्व्रती ॥' तथा—'अप्रावृतशरीरस्तु यः कष्टं स्नानमाचरेत् । पदे पदेऽश्वमेधस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥' तथा—'शङ्खचक्रधरं देवं माधवं नाम पूजयेत् । वह्निं हुत्वा विधानेन ततस्त्वेकाशनो भवेत् ॥ भूशय्या ब्रह्मचर्येण शक्तः स्नानं समाचरेत् । अशक्तो ब्रह्मचर्यादौ स्वेच्छा सर्वत्र कथ्यते ॥' तथा—'तिल[1]स्नायी तिलोद्वर्ती तिलहोमी तिलोदकी । तिलभुक् तिलदाता च षट्तिलाः पापनाशनाः ॥' इति । प्रयागासम्भवे काश्यां दशाश्वमेधोत्तरस्थप्रयागतीर्थे स्नानमुक्तं काशीखण्डे—'काश्युद्भवे प्रयागे ये तपसि स्नान्ति मानवाः । दशाश्वमेधजनितं फलं तेष भवेद्ध्रुवम् ॥' इति ।

स्नानोत्तरकृत्यमुक्तम् ।

स्नानोत्तरं मदनपारिजाते विष्णुः—'काष्ठमौनान्नमस्कृत्य पूजये-' त्पुरुषोत्तमम् । अवश्यमेव कर्तव्यं माघस्नानमिति श्रुतिः ॥ भविष्ये—'तैलमामलकाश्चैव तीर्थे देयास्तु नित्यशः । ततः प्रज्वालयेद्वह्निं सेवनार्थं द्विजन्मनाम् ॥ एवं स्नानावसाने तु भोज्यं देयमवारितम् । भोजयेद्द्विजदाम्पत्यं भूषयेद्वस्त्रभूषणैः ॥ कम्बलाजिनरत्नानि वासांसि विविधानि च । चोलकानि च देयानि प्रच्छादनपटास्तथा ॥ उपानहौ तथा गुप्तमोचकौ पापमोचकौ । अनेन विधिना दद्यान्माधवः प्रीयतामिति ॥' पाद्मे—'भूमौ शयीत होतव्यमाज्यं तिलसमन्वितम् ॥' तथा—'अन्नं चैव यथाशक्त्या देयं माघे नराधिप ! । सुवर्णरक्तिकामात्रं तद्याद्वेदविदे तथा ॥' माघान्ते तु विशेषो नारदीये—'माघावसाने सुभगे षड्रसं भोजनं स्मृतम् । सूर्यो मे प्रीयतां देवो विष्णुमूर्तिर्निरञ्जनः ॥ दम्पत्योर्वाससी सूक्ष्मे सप्तधान्यसमन्विते । त्रिंशत्तु मोदका देयाः शर्करातिलसंयुताः ॥' इति । अत्र—'एकादशीविधानेन व्रतस्योद्यापनं तथा ।' इति पाद्मवचनात् पूर्वेऽह्नि उपवासपूजनादि कृत्वा परेऽह्नि तिलचर्वाज्यैरष्टोत्तरशतं होमं कृत्वा—

१—तिलस्नायीत्यनेन तिलयुक्तोदकेन स्नानं कर्तव्यमिति मूलोक्ताशयः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'सवित्रे प्रसवित्रे च—' इति पूर्वोक्तं मन्त्रमुक्त्वा—'दिवकार जगन्नाथ प्रभाकर नमोऽस्तु ते । परिपूर्णं कुरुष्वेह माघस्नानमुषः पते ॥' इति समापयेदिति संक्षेपः ॥

अथ मकरसंक्रान्तिनिर्णयः ।

मकरसङ्क्रान्तौ हेमाद्रिमते परतश्चत्वारिंशद्धटिकाः पुण्याः । 'त्रिंशत्कर्काटके नाड्यो मकरे तु दशाधिकाः ।' इति ब्रह्मवैवर्तात् । माधवमते तु विंशतिः । 'त्रिंशत्कर्काटके पूर्वा मकरे विंशतिः पराः ।' इति वृद्धवसिष्ठोक्तेः । यदा तु सूर्यास्तात्पूर्वं संक्रान्तिर्भवति तदोभयमते पूर्वमेव पुण्यकालः । रात्रौ तु प्रदोषे निशीथे वा मकर-संक्रमे माधवमते द्वितीयदिन एव पुण्यम् । 'यद्यस्तमयवेलायां मकरं याति भास्करः । प्रदोषे वाऽर्धरात्रे वा स्नानं दानं परेऽहनि ॥' इति वृद्धगार्ग्यवचनात् । अस्तमयं प्रदोषः । प्रदोषे पूर्वरात्रे । 'कार्मुकं तु परित्यज्य झषं संक्रमते रविः । प्रदोषे वाऽर्धरात्रे वा स्नानं दानं परेऽहनि ॥' इति भविष्योक्तेश्च । 'तदाभोगः परेऽहनि' इति हेमाद्रौ पाठः । कालादर्शनिर्णयामृतमदनपारिजातादयोऽप्येवमूचुः । दाक्षिणात्या-श्चैतदेवाद्रियन्ते । यत्तु हेमाद्रिणाद्यो वाशब्दो यथाऽर्थे द्वितीयस्तथाऽर्थे यथा प्रदोषे पूर्वद्युस्तथाऽर्धरात्रे परेऽह्नीत्युक्तं तस्मै नमोऽस्तु । तेन परेऽह्नि पुण्यं वक्तुं प्रदोषे इति । दिनद्वये पुण्य-निरासार्थमर्धरात्रग्रहणम् । हेमाद्रिस्मृत्यर्थसारानन्तभट्टादिमते तु निशीथात्पूर्वं पश्चाच्च संक्रान्तौ पूर्वदिने परदिने वा पुण्यम् । 'धनु-र्मीनावतिक्रम्य कन्यां च मिथुनं तथा । पूर्वापरविभागेन रात्रौ संक्रमणं यदा ॥ दिनान्ते पञ्च नाड्यस्तु तदा पुण्यतमाः स्मृताः । उदयेऽपि तथा पञ्च दैवे पित्र्ये च कर्मणि ॥' इति स्कान्दवचनात् । पूर्वापरविभागेनेति मकरकर्कभिन्नविषयम् । पूर्वोक्तवचोविरोधादिति मदनरत्ने उक्तम् । 'षडशीतिमुखेऽतीते अतीते चोत्तरायणे ।' इत्या-दिविरोधाच्च । तेन पूर्वैकवाक्यतयायमर्थः । रात्रौ पूर्वभागे मकरसं-क्रमे परेऽह्नि उदये पञ्च नाड्यः पुण्याः, रात्रावपरभागे कर्कसंक्रमे पूर्वदिनान्ते पञ्च नाड्य इति । एवं सर्वेषामविरोधः । मकरे सामा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

न्येन परदिने पुण्यत्वेऽपि पुण्यातिशयार्थमिदम्। यत्तु देवलयज्ञपार्श्वौ— 'आसन्नसंक्रमं पुण्यं दिनार्धं स्नानदानयोः। रात्रौ संक्रमणे भानोर्विषुवत्ययने दिवा ॥' इति। अत्र माधवः। अयने दिवा जाते तदर्धं पुण्यम्। कर्के पूर्वं मकरेऽन्त्यम्। एतन्मध्यदिनायनपरमिति ।हेमाद्रिस्तु—'रात्रौ विषुवत्यासन्नदिनार्धं पुण्यम्। अयने त्वासन्नदिनं पुण्यम्। दिने इति पाठे उभयत्र दिनार्धं पुण्यमित्याह। एतदेवोक्तं दीपिकायाम्— 'अथायनमधः पश्चान्निशीथाद्धवेद्यद्यासन्नमहस्तदर्धमथवा पुण्यम्' इति। तत्त्वं तु—आसन्नसंक्रममित्यस्य विषुवत्येवान्वयः। अयने रात्रौ सति दिने पुण्यम्। कस्मिन्नित्यपेक्षायां कर्के पूर्वेऽह्नि मकरे परेऽह्नि इति वाक्यान्तरवशादर्धे उच्यमानेन कोऽपि विरोधः। यत्त्वनन्तभट्टः 'अथ संक्रमणं भानोर्निशीथात्प्राग्यदा भवेत्। अयनं विषुवं तत्र प्राग्दिनान्तिमनाडिकाः॥ पञ्च पुण्यतमाः पश्चान्निशीथाच्चेद्भवेत्तथा। आद्याः परदिनस्यापि तद्वदित्येष निर्णय॥' इति। अपरार्केऽप्येवम्। 'अस्तं गते यदा सूर्ये झषं याति दिवाकरः। प्रदोषे वाऽर्धरात्रे वा तदा पुण्यं दिनद्वयम् ॥' इति बौधायनवचनादिनद्वयं वा पुण्यकालः। 'तदा पुण्यं दिनान्तरम्' इति मदनरत्ने पाठः। गुर्जरप्राच्योदीच्यास्त्विदमेवाद्रियन्ते। अत्रापि पूर्ववद्व्याख्येयम्। तिथितत्त्वादयो गौडग्रन्थास्तु— प्रदोषार्धरात्रभिन्ने रात्रेः पूर्वभागे पूर्वदिने परभागे च परदिने पुण्यमन्यसंक्रान्तिवत्, विशिष्य तयोर्[1]निर्देशात्। प्रदोषश्च—'प्रदोषोऽस्तमयादूर्ध्वं घटिकाद्वयमिष्यते।' इति वत्सोक्त इत्याहुः। तन्न। 'अस्तं गते' इति त्रितयवैयर्थ्यापत्तेः। अतः प्रदोषपदेन तद्भिन्नैव रात्रिरुच्यते। अत एव—'यावन्नोदयते रविः' इति वृद्धगार्ग्यादिभिर्दक्षिणायने पूर्वरात्रौ संक्रमे पूर्वदिनमुक्तम्। वत्सोक्तिरप्यध्ययनादिपरा। इह तु त्रिमुहूर्त एव प्रदोषः।

मकरे दानविशेषो हेमाद्रौ स्कान्दे—'धेनुं तिलमयीं राजन्दद्याद्यश्चोत्तरायणे। सर्वान्कामानवाप्नोति विन्दते परमं सुखम्॥' विष्णुधर्मे— 'उत्तरे त्वयने विप्रा वस्त्रदानं महाफलम्। तिलपूर्णमनड्वाहं दत्वा

१—तयोः प्रदोषार्धरात्रयोः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

रोगैः प्रमुच्यते ॥' इति । शिवरहस्येऽपि—'तस्यां कृष्णतिलैः स्नानं कार्यं चोद्वर्तनं शुभैः । तिला देयाश्च विप्रेभ्यः सर्वदैवोत्तरायणे ॥ तिलतैलेन दीपाश्च देयाः शिवगृहे शुभाः ॥' कल्पतरौ कालिकापुराणे—'होमं तिलैः प्रकुर्वीत सर्वदैवोत्तरायणे । तान्यो देवाय विप्रेभ्यो हाटकेन समं ददेत् ॥ उत्तरायणमासाद्य नरः कस्मात्स शोचति ॥' तथा मकरे रात्रावपि श्राद्धादि भवतीत्युक्तं प्राक् ।

माघामायामर्धोदयः ।

माघामायां योगविशेषोऽर्धोदयः प्रागेवोक्तः ॥ माघकृष्णचतुर्दश्यां यमतर्पणमुक्तं हेमाद्रौ यमेन—'अनर्काभ्युदिते काले माघकृष्णचतुर्दशीम् । स्नातः सन्तर्प्य तु यमं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥' इति ॥

माघशुक्लचतुर्थी-तिलचतुर्थी-निर्णयः

सा प्रदोषव्यापिनो ग्राह्या । 'माघशुक्लचतुर्थ्यां तु नक्तव्रतपरायणाः । ये त्वां ढुण्ढेऽर्चयिष्यन्ति तेऽर्च्याः स्युरसुरद्रुहाम् ॥' इति काशीखण्डात् । 'माघमासे चतुर्थ्यां तु तस्मिन्काल उपोषितः । अर्चयित्वा तु यो देवि जागरं तत्र कारयेत् ॥' इति त्रिस्थलीसेतौ लैङ्गाच्च । इयमेव कुन्दचतुर्थी । सा प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या । 'माघशुक्लचतुर्थ्यां तु कुन्दपुष्पैः सदाशिवम् । सम्पूज्य यो हि नक्ताशी स प्राप्नोति श्रियं नरः ॥' इति । कालादर्शे कौर्मोक्तेः ॥

श्रीपञ्चमी ।

माघशुक्लपञ्चमी[१] श्रीपञ्चमी । तदुक्तं हेमाद्रौ वाराहे—'माघशुक्लचतुर्थ्यां तु वरमाराध्य च श्रियः । पञ्चम्यां कुन्दकुसुमैः पूजां कुर्यात्समृद्धये ॥' इयं माधवमते पूर्वा, हेमाद्रिमते परा । चैत्रशुक्ले श्रीपञ्चमीति दिवोदासः ॥

१—अस्यामेव पञ्चम्यां रतिकामपूजादिर्वसन्तोत्सवः कार्यः । 'माघमासे सुरश्रेष्ठ ! शुक्लायां पञ्चमीतिथौ । रतिकामौ तु सम्पूज्य कर्तव्यः सुमहोत्सवः ॥ दानानि च प्रदेयानि तेन तुष्यति माधवः ॥' इति पुराणसमुच्चये सम्यग्व्याख्यातम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

माघशुक्लसप्तमी रथसप्तमी।

सा अरुणोदयव्यापिनी ग्राह्या। 'सूर्यग्रहणतुल्या तु शुक्ला माघस्य सप्तमी। अरुणोदयवेलायां तस्यां स्नानं महाफलम्॥' इति चन्द्रिकायां विष्णुवचनात्। अरुणोदयवेलायां शुक्ला माघस्य सप्तमी। प्रयागे यदि लभ्येत कोटिसूर्यग्रहैः समा॥' इति वचनाच्च। यत्तु दिवोदासीये–'अचला सप्तमी दुर्गा शिवरात्रिर्महाभरः। द्वादशी वत्सपूजायां सुखदा प्राग्युता सदा॥' इति षष्ठीयुतत्वमुक्तम्। तद्यदा पूर्वेऽह्नि घटिकाद्वयं षष्ठी सप्तमी च परेद्युः क्षयवशादरुणोदयात्पूर्वं समाप्यते तत्परं ज्ञेयम्। तत्र षष्ठ्यां सप्तमीक्षयं प्रवेश्यारुणोदये स्नानं कार्यम्। मदनरत्ने भविष्योत्तरे–'माघे मासि सिते पक्षे सप्तमी कोटिभास्करा। कुर्यात्स्नानार्घ्यदानाभ्यामायुरारोग्यसम्पदः॥'

अत्र विधिः।

अत्र विधिर्भविष्ये–'स्नात्वा षष्ठ्यामेकभक्तं सप्तम्यां निश्चलं जलम्। रात्र्यन्ते चालयेथास्त्वं दत्वा शिरसि दीपकम्॥' तथा जलं प्रक्रम्य—'न केन चाल्यते यावत्तावत्स्नानं समाचरेत्। सौवर्णे राजते पात्रे भक्त्यालाबुमयेऽथ वा॥ तैलेन वर्तिर्दातव्या महारजनरञ्जिता॥' महारजनं कुसुम्भम्। 'समाहितमना भूत्वा दत्वा शिरसि दीपकम्। भास्करं हृदये ध्यात्वा इमं मन्त्रमुदीरयेत्॥ नमस्ते रुद्ररूपाय रसानां पतये नमः। वरुणाय नमस्तेऽस्तु हरिवास नमोऽस्तु ते॥ जले परिहरेद्दीपं ध्यात्वा सन्तर्प्य देवताः।' इति। 'चन्दनेन लिखेत्पद्ममष्टपत्रं सकर्णिकम्। मध्ये शिवं सपत्नीकं प्रणवेन च संयुतम्॥' पूर्वादिदलेषु रविभानुविवस्वद्भास्करसवित्रर्कसहस्रकिरणसर्वात्मकान्सम्पूज्य गृहं गच्छेदिति। स्नानमन्त्रश्च काशीखण्डे–'यद्यज्जन्मकृतं पापं मया सप्तसु जन्मसु। तन्मे रोगं च शोकं च माकरी हन्तु सप्तमी॥ एतज्जन्मकृतं पापं यच्च जन्मान्तरार्जितम्। मनोवाक्कायजं यच्च ज्ञाताज्ञाते च ये पुनः॥ इति सप्तविधं पापं स्नानान्मे सप्तसप्तिके। सप्तव्याधिसमायुक्तं हर माकरि सप्तमि॥ एतन्मन्त्रत्रयं जप्त्वा स्नात्वा पादोदके नरः। केशवादित्यमालोक्य क्षणान्निःकलुषो भवेत्॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दिवोदासीये मदनरत्ने च इक्षुदण्डेन जलं चालयित्वा सप्तार्कपत्राणि बदरीपत्राणि च शिरसि निधाय पूर्वोक्तैर्मन्त्रैः स्नात्वा तिलपिष्टमयापूपैर्हैमं सूर्यं सम्पूज्य विप्राय दद्यात्। अर्घ्यमन्त्रो मदनरत्ने–'सप्तसप्तिवह प्रीत सप्तलोकप्रदीपन। सप्तमीसहितो देव गृहाणार्घ्यं दिवाकर ॥' ततः—'जननी सर्वलोकानां सप्तमी सप्तसप्तिके। सप्तव्याहृतिके देवि नमस्ते सूर्यमण्डले ॥' इति प्रार्थयेत्। सौरागमे–'अर्कपत्रैः सबदरैर्दूर्वाक्षतसचन्दनैः। अष्टाङ्गविधिना चार्घ्यं दद्यादादित्यतुष्टये ॥' अत्र दानविशेषो मदनरत्ने भविष्ये–'ताम्रपात्रे यथाशक्त्या मृन्मये वाऽथ भक्तिमान्। स्थापयेत्तिलपिष्टं च सघृतं सगुडं तथा। काञ्चनं तालकं कृत्वा अशक्तस्तिलपिष्टजम्। सञ्छाद्य रक्तवस्त्रेण पुष्पैर्धूपैरथार्चयेत् ॥' दानमन्त्रस्तु–'आदित्यस्य प्रसादेन प्रातःस्नानफलेन च। दुष्टदौर्भाग्यदुःखघ्नं मया दत्तं तु तालकम् ॥' तालकं कर्णाभरणमिति तत्रैवोक्तम्। दीपपात्रमिति हेमाद्रौ। तत्रैव भविष्योत्तरे–'एवंविधं रथवरं रथवाजियुक्तं हैमं च हैमशतदीधितिना समेतम्। दद्याच्च माघसितसप्तमिवासरे यः सोऽसङ्गचक्रगतिरेव महीं भुनक्ति ॥' इयं मन्वादिरपि। इयं च शुक्लपक्षस्थत्वात्पौर्वाह्णिकी ग्राह्या। यदा माघो मलमासो भवति तदा मासद्वये मन्वादिश्राद्धं कुर्यात्। 'मन्वादिकं तैर्थिकं च कुर्यान्मासद्वयेऽपि च।' इति स्मृतिचन्द्रिकोक्तेः ॥

माघशुक्लाष्टमी भीष्माष्टमी।

तदुक्तं हेमाद्रौ पाद्मे–'माघे मासि सिताष्टम्यां सतिलं भीष्मतर्पणम्। श्राद्धं च ये नराः कुर्युस्ते स्युः सन्ततिभागिनः ॥' इति। भारतेऽपि–'शुक्लाष्टम्यां तु माघस्य दद्याद्भीष्माय यो जलम्। सम्वत्सरकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥' इति धवलनिबन्धे स्मृतिः। 'अष्टम्यां तु सिते पक्षे भीष्माय तु तिलोदकम्। अन्नं च विधिवद्दद्युः सर्वे वर्णा द्विजातयः ॥' सर्ववर्णोक्तेर्द्विजातय इति सम्बोधनम्। तर्पणम-

१—'आपः क्षीरं कुशाग्राणि दध्यक्षततिलास्तथा। यवाः सिद्धार्थकाश्चेति अर्घ्योऽष्टाङ्गः प्रकीर्तितः।'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मन्त्रस्तत्रैव । 'भीष्मः शान्तनवो वीरः सत्यवादी जितेन्द्रियः । आभिरद्भिरवाप्नोति पुत्रपौत्रोचितां क्रियाम् ॥ वैयाघ्रपदगोत्राय साङ्कृत्यप्रवराय च । अपुत्राय ददाम्येतज्जलं भीष्माय वर्मणे ॥ वसूनामवताराय शन्तनोरात्मजाय च । अर्घ्यं ददामि भीष्माय आबालब्रह्मचारिणे ॥' एतज्जीवत्पितृकस्यापि भवति । 'जीवत्पिताऽपि कुर्वीत तर्पणं यमभीष्मयोः ।' इति पाद्मोक्तेरिति जीवत्पितृकनिर्णये[1] पितृचरणैरुक्तम् । एतच्चापसव्येन कार्यमिति दिवोदासीये । अत्र श्राद्धं काम्यं, तर्पणं च नित्यम् । 'ब्राह्मणाद्याश्च ये वर्णा दद्युर्भीष्माय नो जलम् । सम्वत्सरकृतं तेषां पुण्यं नश्यति सत्तम ॥' इति मदनरत्ने वचनात् ॥

माघशुक्लद्वादशी-भीष्मद्वादशी-निर्णयः ।

'त्वया कृतमिदं वीर तव नाम्ना भविष्यति । सा भीष्मद्वादशीत्येषा सर्वपापहरा शुभा ॥' इति हेमाद्रौ पाद्मवचनात् । इयं पूर्वयुता युग्मवाक्यात् ॥

माघी-पौर्णिमा-निर्णयः ।

माघी पूर्णिमा परेत्युक्तं प्राक् । तथा हेमाद्रौ ब्राह्मे—'मघास्थयोश्च जीवेन्द्वोर्महामाघोति कथ्यते ॥' तत्रैव ज्योतिषे—'मेषपृष्ठे[2] तथा सौरिः सिंहे च गुरुचन्द्रमाः । भास्करः श्रवणर्क्षे च महामाघीति सा स्मृता ॥' तथा भविष्ये—'वैशाखी कार्तिकी माघी तिथयोऽतीव पूजिताः ॥ स्नानदानविहीनास्ता न नेयाः पाण्डुनन्दन ॥' तथा—'तिलपात्राणि देयानि कञ्चुकाः कम्बलास्तथा ।' इति ॥

माघपूर्णिमानन्तराष्टमी माघी । अष्टका तन्निर्णयः, पर्वेद्युरन्वष्टकानिर्णयश्च पूर्वमुक्तः । मलमासे चैता न भवन्तीत्येतत्सर्वं मार्गशीर्षप्रकरणेऽभिहितम् । तथा चतसृष्वष्टकास्वशक्तावेषा आवश्यकी । 'हेमन्तशिशिरयोश्चतुर्णामपरपक्षाणामष्टमीष्वष्टका एकस्यां वा' इत्याश्वलायनोक्तेः । तथा माघाष्टकां प्रक्रम्य-'तामेकाष्टकेत्याचक्षते' इत्यापस्तम्बवचनाच्चेत्यादि प्रयोगपारिजाते ज्ञेयम् ॥ इति श्रीकमला-

१—अत्र जीवत्पितृकस्य नाधिकार इति कौस्तुभः । २—मेषपृष्ठे = मेषराशौ, इत्यर्थः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

करभट्टकृते निर्णयसिन्धौ द्वितीयपरिच्छेदे माघमासः समाप्तः ॥

अथ फाल्गुनमासः ।

कुम्भे षोडश घटिकाः पुण्याः शेषं प्राग्वत् । फाल्गुनकृष्णाष्टम्यां विशेषः कल्पतरौ—

अथ सीताष्टमी ।

'फाल्गुनस्य च मासस्य कृष्णाष्टम्यां महीपते ।' इत्युपक्रम्य—'जाता दाशरथेः पत्नी तस्मिन्नहनि जानकी । उपोषितो रघुपतिः समुद्रस्य तटे तदा ॥ रामपत्नी च सम्पूज्या सीता जनकनन्दिनी ॥'

अथ महाशिवरात्रिव्रतनिर्णयः ।

फाल्गुनकृष्णचतुर्दशी शिवरात्रिः । सा च केषुचिद्वचनेषु प्रदोषव्यापिनी ग्राह्येत्युक्तं, केषुचिन्निशीथव्यापिनी । तत्राऽऽद्या माधवीये—'त्रयोदश्यस्तगे सूर्ये चतसृष्वेव नाडिषु । भूतविद्धा तु या तत्र शिवरात्रिव्रतं चरेत् ॥' स्मृत्यन्तरेऽपि । 'प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या शिवरात्रिचतुर्दशी । रात्रौ जागरणं यस्मात्तस्मात्तां समुपोषयेत् ॥' अत्र प्रदोषो रात्रिः । उत्तरार्धे तस्या हेतुत्वोक्तेः । कामिकेऽपि—'आदित्यास्तमये काले अस्ति चेद्या चतुर्दशी । तद्रात्रिः शिवरात्रिः स्यात्सा भवेदुत्तमोत्तमा ॥' इति । द्वितीयाऽपि तत्रैव नारदसंहितायाम्—'अर्धरात्रियुता यत्र माघकृष्णचतुर्दशी । शिवरात्रिव्रतं तत्र सोऽश्वमेधफलं लभेत् ॥' स्मृत्यन्तरेऽपि—'भवेद्यत्र त्रयोदश्यां भूतव्याप्ता महानिशा । शिवरात्रिव्रतं तत्र कुर्याज्जागरणं तथा ॥' इति ईशानसंहितायाम्—'माघकृष्णचतुर्दश्यामादिदेवो महानिशि । शिवलिङ्गतयोद्भूतः कोटिसूर्यसमप्रभः ॥ तत्कालव्यापिनी ग्राह्या शिवरात्रिव्रते तिथिः ॥' इति । अर्धरात्रादधश्चोर्ध्वं युक्ता यत्र चतुर्दशी । तत्तिथावेव कुर्वीत शिवरात्रिव्रतं व्रती ॥ नार्धरात्रादधश्चोर्ध्वं युक्ता यत्र चतुर्दशी । नैव तत्र व्रतं कुर्यादायुरैश्वर्यहानितः॥' अर्धरात्रश्च द्वितीययामान्त्यतृतीययामाद्यघटीद्वयरूप इति माधवः । वचनं तूक्तं प्राक् । एवं सति पूर्वेद्युरेवोभयव्याप्तौ पूर्वैव । 'त्रयोदशी यदा देवि दिनभुक्तिप्रमाणतः । जागरे शिवरात्रिः स्यान्निशि पूर्णा चतुर्दशी ॥' इति स्कान्दोक्तेः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दिनभुक्तिरस्तमयः। 'जयन्ती शिवरात्रिश्च कार्ये भद्राजयान्विते।' इति स्कान्दाच्च। दिनद्वये निशीथव्याप्तौ[1] हेमाद्रिमते पूर्वा, 'अर्धरात्रात्पुरस्ताच्चेज्जयायोगो यदा भवेत्। पूर्वविद्धैव कर्तव्या शिवरात्रिः शिवप्रियैः॥' इति पाद्मवचनात्। मदनरत्नेऽप्येवम्। गौडा अप्येवमाहुः।

निर्णयामृते तु–सर्वापि शिवरात्रिः प्रदोषव्यापिन्येव। अर्धरात्रवाक्यानि कैमुतिकन्यायेन[2] प्रदोषस्तावकानीत्युक्तम्। तन्न, अर्धरात्रस्य पूर्वं कर्मकालत्वोक्तेः। परदिने प्रदोषनिशीथोभयव्याप्तिसत्त्वात्परैवेति तु माधवः। इदमेव च युक्तं प्रतीमः। परेद्युः प्रागुक्तार्धरात्रस्यैकदेशव्याप्तौ पूर्वेद्युः सम्पूर्णतद्व्याप्तौ च सत्यपि परेद्युः प्रदोषनिशीथोभययोगे पूर्वेद्युः सम्पूर्णव्याप्तेः पूर्वैव। 'व्याप्यार्धरात्रं यस्यां तु लभ्यते या चतुर्दशी। तस्यामेव व्रतं कार्यं मत्प्रसादार्थिभिर्नरैः॥ तदूर्ध्वाधोन्विता भूता सा कार्या व्रतिभिः सदा॥' इति माधवधृतेशानसंहितोक्तेः। पूर्वेद्युर्निशीथस्य परेद्युः प्रदोषस्यैकैकव्याप्तौ तु पूर्वैव। जयायोगस्य प्राशस्त्यात्। तच्चोक्तं नागरखण्डे–'माघफाल्गुनयोर्मध्ये असिता या चतुर्दशी। अनङ्गेन समायुक्ता कर्तव्या सा सदा तिथिः॥' इति। पाद्मे–'अर्धरात्रात्पुरस्ताच्चेज्जयायोगो यदा भवेत्। पूर्वविद्धैव कर्तव्या शिवरात्रिः शिवप्रियैः॥' इति। स्कान्देऽपि–'भवेद्यत्र त्रयोदश्यां भूतव्याप्ता महानिशा। शिवरात्रिव्रतं तत्र कुर्याज्जागरणं तथा॥' इति। 'महतामपि पापानां दृष्टा वै निष्कृतिः परा। न दृष्टा कुर्वतां पुंसां कुहूयुक्तां तिथिं शिवाम्॥' इति स्कादे–दर्शयोगस्य निन्दितत्वाच्च। यदा चतुर्दशी पूर्वेद्युर्निशीथादूर्ध्वं प्रवृत्ता परेद्युश्च निशीथादर्वागेव समाप्ता, तदा परेद्युरेकव्याप्तिसत्त्वात् परैव। 'माघासिते भूतदिनं हि राजन्नुपैति योगं यदि पञ्चदश्याः। जयाप्रयुक्तां न तु जातु कुर्याच्छिवस्य रात्रिं प्रियकृच्छिवस्य॥' इति वचनात्। एवं दिनद्वये निशीथप्रदोषव्याप्त्यभावे निशीथव्याप्तिसत्त्वात्पूर्वैव। तेन दिनद्वये निशीथ-

---

१—रात्रेरष्टमो मुहूर्तो निशीथः कथ्यते। २—कैमुतिकन्यायस्तु–यदि अर्धरात्रव्यापिन्या अपि ग्रहणं भवति तदा किमु प्रदोषव्यापिन्याः शङ्का। इति।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

व्याप्तौ प्रदोषव्याप्त्या निर्णयः। दिनद्वये प्रदोषव्याप्तौ निशीथेन निर्णयः। एकैकव्याप्तौ तु निशीथेन निर्णय इति। इयं च रविभौमसोमवारेषु शिवयोगे चाऽतिप्रशस्ता। हेमाद्रौ तीर्थखण्डे लैङ्गे—'फाल्गुनस्य चतुर्दश्यां कृष्णपक्षे समाहिताः। कृत्तिवासेश्वरं लिङ्गमर्चयन्ति शिवं शुभे॥ ते यान्ति परमं स्थानं सदाशिवमनामयम्॥'

शिवरात्रिव्रतपारणानिर्णयः।

शिवरात्रिपारणे तु विरुद्धवाक्यानि दृश्यन्ते। स्कान्दे—कृष्णाष्टमी स्कन्दषष्ठी शिवरात्रिश्चतुर्दशी। एताः पूर्वयुताः कार्यास्तिथ्यन्ते पारणं भवेत्॥ जन्माष्टमी रोहिणी च शिवरात्रिस्तथैव च। पूर्वविद्धैव कर्तव्या तिथिभान्ते च पारणम्॥' इति। तिथिमध्येऽपि पारणं स्कान्दे उक्तम्—'उपोषणं चतुर्दश्यां चतुर्दश्यां तु पारणम्। कृतैः सुकृतलक्षैश्च लभ्यते वाथवा न वा॥ ब्रह्माण्डोदरमध्ये तु यानि तीर्थानि सन्ति वै। संस्नातानि भवन्तीह भूतायां पारणे कृते। तिथीनामेव सर्वासामुपवासव्रतादिषु॥ तिथ्यन्ते पारणं कुर्याद्विना शिवचतुर्दशीम्॥' इति। अत्र यामत्रयादर्वाक् चतुर्दशीसमाप्तौ तदन्ते। तदूर्ध्वगामिन्यां तु प्रातस्तिथिमध्य एवेति हेमाद्रिमाधवादयो व्यवस्थामाहुः। तन्न। 'तिथ्यन्ते तिथिभान्ते वा पारणं यत्र चोदितम्। यामत्रयोर्ध्वगामिन्यां प्रातरेव हि पारणा॥' इत्यादि सामान्यवचनैरेव व्यवस्थासिद्धेरुभयविधवाक्यवैयर्थ्यापत्तेः। वयं तु तिथ्यन्ते पारणं भवेदिति कृष्णाष्टम्यादिविषयमेव, न तु शिवरात्रिविषयम्। तदुपादानं तु पूर्वयुतत्वमात्रकथनार्थम्। कथमन्यथा स्कान्दे एव शून्यहृदयवाक्यवत्तिथिमध्ये पारणविधानं घटते। तस्मात् 'विना शिवचतुर्दशीम्' इति पर्युदस्तत्वाच्छिवरात्र्याः सर्वप्रकारेषु तिथिमध्य एव पारणेति ब्रूमः। शिष्टाचारोऽप्येवमेव। दीपिकायां तु-रात्रावपि तिथ्यन्त एवोक्तम्-'व्रततिथेरन्ते निशीथेऽपि वाऽश्नीयात्' इति। मदनरत्नकालादर्शयोस्तु-'साह्नस्तमयपर्यन्तं व्यापिनी चेत्परेऽहनि। दिवैव पारणं कुर्यात्पारणे नैव दोषभाक्॥' इत्युक्तम्। तन्न। तिथिमध्ये पारणविधानान्निषेधे फलायोगाच्च तिथ्यन्तानपेक्षणाद्दोषाप्रसक्त्या चतुर्थपादासङ्गतेः। तेनेदं शिवरात्रिभिन्नव्रतपरं ज्ञेयम्।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

इदं व्रतं नित्यं काम्यं चेत्युक्तम्।

इदं च व्रतं संयोग[1]पृथक्त्वन्यायेन नित्यं काम्यं च। तथा च माधवीये स्कान्दे–'परात्परतरं नास्ति शिवरात्रिव्रतात्परम्। न पूजयति भक्त्येशं रुद्रं त्रिभुवनेश्वरम्॥ जन्तुर्जन्मसहस्रेषु भ्रमते नाऽत्र संशयः।' इत्यकरणे प्रत्यवायश्रवणात्। 'वर्षे वर्षे महादेवि नरो नारी पतिव्रता। शिवरात्रौ महादेवं नित्यं भक्त्या प्रपूजयेत्॥' इति वीप्साश्रुतेः। 'अर्णवो यदि वा शुष्येत्क्षीयते हिमवानपि। चलन्त्येते कदाचिद्वै निश्चलं हि शिवव्रतम्॥' इति वचनाच्च नित्यता। 'मम भक्तस्तु यो देवि शिवरात्रिमुपोषकः। गणत्वमक्षयं दिव्यमक्षयं शिवशासनम्॥ सर्वान्भुक्त्वा महाभोगांस्ततो मोक्षमवाप्नुयात्॥' इति स्कान्दात्। 'द्वादशाब्दिकमेतत्स्याच्चतुर्विंशाब्दिकं तु वा।' इति तत्रैवेशानसंहितावचनात्काम्यता। तत्रैव–'शिवरात्रिव्रतं नाम सर्वपापप्रणाशनम्। आचण्डालमनुष्याणां भुक्तिमुक्तिप्रदायकम्॥' अत्र जागरोपवासपूजाः समुदिताः व्रतं न तु प्रत्येकम्। समुदितानां फलसम्बन्धात्। यत्तु 'अथवा शिवरात्रिं च पूजाजागरणैर्नयेत्।' तथा–'अखण्डितव्रतो यो हि शिवरात्रिमुपोषयेत्। सर्वान्कामानवाप्नोति शिवेन सह मोदते॥ कश्चित्पुण्यविशेषेण व्रतहीनोऽपि यः पुमान्। जागरं कुरुते तत्र स रुद्रसमतां व्रजेत्॥' इत्यादिस्कान्दं तदनुकल्पत्वादशक्तपरम्॥

माघेतरप्रतिमासशिवरात्रिस्तु शिवरात्रिशब्दस्य माघकृष्णचतुर्दश्यामेव रूढत्वात्, 'माघमासस्य शेषे या प्रथमा फाल्गुनस्य च। कृष्णा चतुर्दशी सा तु शिवरात्रिः प्रकीर्तिता॥' इति हेमाद्रौ वचनाच्च नाऽयं निर्णयस्तत्रेति रात्रौ यामचतुष्टये पूजाविधानाद्यस्मिन्दिने अधिका रात्रिव्याप्तिः सा ग्राह्या। साम्ये तु पूर्वैवेति हेमाद्रिरूचिवान्। वस्तुतस्तु प्रतिमासकृष्णचतुर्दश्यामपि—'सर्वकामप्रदं कृष्णचतुर्दश्यां शिवव्रतम्।' इत्युपक्रम्य—'चतुर्दशाब्दं कर्तव्यं शिवरात्रिव्रतं शुभम्।' इति हेमाद्रौ कालोत्तरे शिवरात्रिशब्दप्रयोगात्। कौण्डपायिनामयनाग्निहोत्रे नैत्यकाग्निहोत्रधर्मा इव तद्धर्मप्राप्तिः स्यादेव। अतः

1—एकस्योभयार्थत्वे संयोगपृथक्त्वन्यायः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्रदोषनिशीथोभयव्याप्त्यैव निर्णय इति वयं प्रतीमः । अस्यारम्भो हेमाद्रौ स्कान्दे-'आदौ मार्गशिरे मासि दीपोत्सवदिनेऽपि वा । गृह्णीयान्माघमासे वा द्वादशैवमुपोषयेत् ॥' तथा-'दीपोत्सवे तथा माघे कृष्णा या तु चतुर्दशी । द्वादशस्वपि मासेषु प्रकुर्यादिह जागरम् ॥ एवं द्वादशवर्षेषु द्वादशैव तपोधनान् ॥' वरयेदिति शेषः ।

उद्यापनविधिः ।

चतुर्दश वा विप्रान् आचार्यं च वृत्वा—'कुम्भोपरि न्यसेद्देवमुमया सहितं शिवम् ॥ सौवर्णेऽप्यथ वा रौप्ये वृषभे संस्थितं शुभे ॥' इत्युक्तम् । हैमीं मूर्तिं सम्पूज्य स्थिरं चरं वा लिङ्गं पञ्चामृतसहस्रशतपञ्चाशत्तदर्धान्यतरकुम्भैः संस्नाप्य सम्पूज्य जागरं कृत्वा परेद्युस्तिलान्सहस्रं शतं वा हुत्वा विप्रेभ्यो वस्त्राणि द्वादश गाश्च दत्वा आचार्याय धेनुं शय्यां च दत्वा विप्रान्भोजयेदिति मदनरत्ने उक्तम् ॥

माघामावास्यायुगादिः ।

तदुक्तम्—'माघमासे त्वमावास्या' इति । अन्यत्प्राग्वत् । तथान्योऽपि विशेषो विष्णुपुराणे—'माघासिते पञ्चदशी कदाचिदुपैति योगं यदि वारुणेन । ऋक्षेण कालः स परः पितॄणां न ह्यल्पपुण्यैर्नृप लभ्यतेऽसौ ॥' इति । वारुणं शतभिषक् । इदं च कुम्भादित्ये ज्ञेयमिति हेमाद्रिः । भारते—'काले धनिष्ठा यदि नाम तस्मिन्भवेत्तु भूपाल तदा पितृभ्यः । दत्तं तिलान्नं प्रददाति तृप्तिं वर्षायुतं तत्कुलजैर्मनुष्यैः ॥' इति ॥

१—ब्राह्मे-'फाल्गुनस्यापरे पक्षे कुम्भस्थे दिवसाधिपे । जीवे धनुषि योगे च शोभने रविवासरे ॥ पुष्यर्क्षे यदि सम्पूर्णा गोविन्दद्वादशी मता ॥' तिथितत्त्वे-'फाल्गुने शुक्लपक्षे स्यात्पुष्यर्क्षे द्वादशी यदि । गोविन्दद्वादशी नाम महापातकनाशिनी । गोविन्दद्वादशीं प्राप्य गच्छेच्छ्रीपुरुषोत्तमम् । विनाऽऽयासेन राजेन्द्र ! मुक्तः सायुज्यमाप्नुयात् ॥' अत्र श्रीगोविन्दं सम्पूज्योपवासं कुर्यात् 'उपोष्य च जगन्नाथं नमेच्छ्रीपुरुषोत्तमम् ।' इत्युक्तेः । गङ्गास्नाने मन्त्रः पाद्मे-'महापातकसङ्घानि यानि पापानि सन्ति वै । गोविन्दद्वादशीं प्राप्य तानि मे हर जाह्नवि ! ॥' इत्यप्यन्यत्र विशेषः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

फाल्गुनपौर्णमासी-होलिका-निर्णयः ।

सा च सायाह्नव्यापिनी ग्राह्या। 'सायाह्ने होलिकां कुर्यात्पूर्वाह्णे क्रीडनं गवाम् ।' इति वचनादिति निर्णयामृते उक्तम् । ज्योतिर्निबन्धे तु—'प्रतिपद्भूतभद्रासु यार्चिता होलिका दिवा। सम्वत्सरं च तद्राष्ट्रं पुरं दहति साद्भुतम् ॥ प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या पौर्णिमा फाल्गुनी सदा। तस्यां भद्रामुखं त्यक्त्वा पूज्या होला निशामुखे ॥' इति नारदवचनात्प्रदोषव्यापिनीत्युक्तम्। हेमाद्रौ मदनरत्ने च भविष्ये—अस्यां निशागमे पार्थ ! संरक्ष्याः शिशवो गृहे। गोमयेनोपलिप्ते च सचतुष्के गृहाङ्गणे ॥' इत्यादिना तत्रैव तद्विधानाच्च। तेनेयं पूर्वविद्धा—'श्रावणी दुर्गनवमी दूर्वा चैव हुताशनी । पूर्वविद्धैव कर्तव्या शिवरात्रिर्बलेर्दिनम् ॥' इति बृहद्यमब्रह्मवैवर्तोक्तेश्च । दिनद्वये प्रदोषव्याप्तौ परैव। पूर्वदिने भद्रासत्त्वात्तत्र च होलिकानिषेधात्। तदुक्तं निर्णयामृते मदनरत्ने च पुराणसमुच्चये—'भद्रायां दीपिता होली राष्ट्रभङ्गं करोति वै। नगरस्य च नैवेष्टा तस्मात्तां परिवर्जयेत् ॥' तथा—'भद्रायां द्वे न कर्तव्ये श्रावणी फाल्गुनी तथा। श्रावणी नृपतिं हन्ति ग्रामं दहति फाल्गुनी ॥' तथा—'दिनार्धात्परतोऽपि स्यात्फाल्गुनी पूर्णिमा यदि । रात्रौ भद्रावसाने तु होलिका दीप्यते तदा ॥' इति। यदा तु पूर्वदिने चतुर्दशी प्रदोषव्यापिनी परदिने च क्षयवशात्सायाह्नात्प्रागेव पूर्णिमा समाप्यते, तदा पूर्वदिने सम्पूर्णरात्रौ भद्रासत्त्वात्तत्र च तन्निषेधात्परेऽहनि प्रतिपद्येव कुर्यात् । 'सार्धयामत्रयं वा स्याद्द्वितीयदिवसे यदा । प्रतिपद्वर्धमाना तु तदा सा होलिका स्मृता ॥' इति भविष्यवचनादिति निर्णयामृतकारः। मदनरत्नेऽप्येवम्। यत्तु—'वह्नौ वह्निं परित्यजेत्' इति भविष्यं। वह्नौ होलिकायां वह्निं प्रतिपदं वर्जयेदित्यर्थः। तदुक्तभिन्नविषयमिति तत्रैवोक्तम्। अन्ये तु तस्यां भद्रामुखं त्यक्त्वेत्यर्थः। 'प्रदोषव्यापिनी चेत्स्याद्यदा पूर्वदिने तदा। भद्रामुखं वर्जयित्वा होलिकायाः प्रदीपनम् ॥' इति नारदवचनात्। 'निशागमे प्रपूज्येत होलिका सर्वदा बुधैः। न दिवा पूजयेड्ढुण्ढां पूजिता दुःखदा भवेत् ॥' इति दिवोदासीये वचनात्। 'यामत्रयोर्ध्वयुक्ता चेत्प्रतिपत्तु

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भवेत्तिथिः । भद्रामुखं परित्यज्य कार्या होला मनीषिभिः ॥' इति विद्याविनोदेऽभिधानाच्च भद्रामुखं विहाय पूर्वदिन एव कार्येत्याहुः । भद्रामुखं तु—'नाड्यस्तु पञ्च वदनं गलकस्तथैका' इति रत्नमालोक्तं ज्ञेयम् । शिष्टाचारोऽप्येवमेव ।

अत्र चेच्चन्द्रग्रहणं तदा ततोर्वाङ्निशिभद्रावर्जपौर्णमास्यां होलिकादीपनम् । अथ परेऽह्नि ग्रस्तोदयस्तदा पूर्वदिने भद्रावर्जं रात्रौ चतुर्थयामे विष्टिपुच्छे वा होलिका कार्या । ग्रहोत्तरं प्रतिपत्सत्त्वात्तत्पूर्वं च दिवा होलानिषेधादिति दिवोदासचन्द्रप्रकाशौ । वस्तुतस्तु परदिने प्रदोषे पौर्णिमासीसत्त्वे कर्मकालस्पर्शे चतुर्थयामादिगौणकालग्रहणे मानाभावाद्भद्राभावाच्च ग्रहणकाल एव होला कार्या । न च 'सर्वेषामेव वर्णानां सूतकं राहुदर्शने । स्नात्वा कर्माणि कुर्वीत श्रृतमन्नं विवर्जयेत् ॥' इति निषेधात् कथं सूतके होलेति वाच्यम्, तस्योत्तरार्धशेषत्वात् । पूजामन्त्रस्तु—'असृक्पाभयसंत्रस्तैः कृता त्वं होलि बालिशैः । अतस्त्वां पूजयिष्यामि भूते भूतिप्रदा भव ॥'[2]

१—भद्रामुखपुच्छलक्षणं धर्मसिन्धौ—पूर्णिमायां भद्रायास्तृतीयपादान्ते घटीत्रयं पुच्छं । चतुर्थपादाद्यघटीपञ्चकं मुखं । तथा च मध्यममानेन षष्टिघटीमितायां पूर्णिमायां पूर्णिमाप्रवृत्त्युत्तरं सार्धैकोनविंशतिघटिकोत्तरं घटीत्रयं पुच्छं । सार्धद्वाविंशतिघटिकोत्तरं घटीपञ्चकं मुखं । तिथेश्चतुःषष्टिघटिकामितत्वे पूर्णिमाया एकविंशतिघटिकोत्तरं पुच्छं । चतुर्विंशतिघटिकोत्तरं मुखं । एवं तिथेर्मानान्तरेऽप्यूह्यम् ।

२—अत्र धर्मसिन्धौ तु पूर्वं सङ्कल्पाद्युक्त्वा शुष्काणां काष्ठानां गोमयपिण्डानां च राशिं कृत्वा वह्निना प्रदीप्य तत्र मन्त्रस्तु—'अस्माभिर्भयसंत्रस्तैः कृता त्वं होलिके यतः । अतस्त्वां पूजयिष्यामि भूते भूतिप्रदा भव ॥' इत्युक्तः । तत्र पूर्वार्धे भेददर्शनान्मन्त्रस्य सत्यता संदिग्धा भवति । परं तत्र सत्यासत्यनिर्णये सर्वथा सुधिय एव प्रभवः । अन्योऽपि पूजोत्तरं विशेषस्तत्रोक्तः । यथा—'तमग्निं त्रिः परिक्रम्य गायन्तु च हसन्तु च । जल्पन्तु स्वेच्छया लोका निःशङ्का यस्य यन्मतम् ॥' ज्योतिर्निबन्धे—'पञ्चमीप्रमुखास्तासु तिथयोऽनन्तपुण्यदाः । दश स्युः शोभनास्तासु काष्ठस्तेयं विधीयते ॥ चाण्डालसूतिकागेहाच्छिशुहारितवह्निना । प्राप्तायां पूर्णिमायां तु कुर्यात्तत्काष्ठदीपनम् ॥ ग्रामाद्बहिश्च मध्ये वा तूर्यनादसमन्वितः । स्नात्वा राजा शुचिर्भूत्वा स्वस्तिवाचनतत्परः ॥ दत्वा दानानि भूरीणि दीपयेद्धोलिकाचितिम् । ततोऽभ्युचय चितिं सर्वां साज्येन पयसा सुधीः । नारिकेलानि देयानि बीजपूरफलानि च । गीतवाद्यैस्तथा नृत्यै रात्रिः सा नीयते जनैः ॥ तमग्निं त्रिः परिक्रम्य शब्दैर्लिङ्गभगाङ्कितैः ॥ तेन शब्देन सा पापा राक्षसी तृप्तिमाप्नुयात् ॥' इति । होलिकादिनं, करिसंज्ञकं तदुत्तरदिनं च शुभे वर्ज्यम् । 'होलिकाग्रहणभावुकायनं प्रेतदाहदिवसोऽत्र पञ्चमः । तत्परं च करिसंज्ञकं दिनं वर्जितं सकलकर्मसूभयम् ॥' इति वचनादित्यपि विशेषस्तत्रैव ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

इति (यत्तु[1] वार्तिककारैर्होलिका आचारप्राप्तेत्युक्तम् । तत्र हेमाद्या-द्युदाहृतभविष्यवचनान्यसिद्धानि कृत्वाचिन्ता ज्ञेया । आर्त्यधिकरणवत् ।) हुताशनी मलमासे न भवति । इयं मन्वादिरपि । सा तु पौर्वाह्णिकी ग्राह्या । मलमासे सति मन्वादिश्राद्धं मासद्वये कार्य-मित्युक्तं प्राक् कृत्यचिन्तामणौ ब्राह्मे–'नरो दोलागतं दृष्ट्वा गोविन्दं पुरुषोत्तमम् । फाल्गुन्यां संयतो भूत्वा गोविन्दस्य पुरं व्रजेत् ॥'

अथ वसन्तोत्सवनिर्णयः ।

चैत्रकृष्णप्रतिपदि वसन्तोत्सवः । सा चौदयिकी ग्राह्या । 'प्रवृत्ते मधुमासे तु प्रतिपद्युदिते रवौ ।' इति भविष्योक्तेः । दिनद्वये तथात्वे पूर्वा । 'वत्सरादौ वसन्तादौ बलिराज्ये तथैव च । पूर्वविद्धैव कर्तव्या प्रतिपत्सर्वदा बुधैः॥' इति वृद्धवसिष्ठवचनात् । अत्र विशेषो हेमाद्रौ भविष्ये–'चैत्रे मासि महाबाहो पुण्ये तु प्रतिपद्दिने । यस्तत्र श्वपचं स्पृष्ट्वा स्नानं कुर्यान्नरोत्तमः ॥ न तस्य दुरितं किञ्चिन्नाधयो व्याधयो नृप ! ॥' इति । तथा—'प्रवृत्ते मधुमासे तु प्रतिपद्युदिते रवौ । कृत्वा चाऽवश्यकार्याणि सन्तर्प्य पितृदेवताः ॥ वन्दयेद्धोलिकाभूमिं सर्वदुःखोपशान्तये ॥' मन्त्रश्च–'वन्दितासि सुरेन्द्रेण ब्रह्मणा शङ्करेण च । अतस्त्वं पाहि नो देवि भूते भूतिप्रदा भव ॥' इति ।

आम्रकुसुमप्राशनविधिः ।

अत्र चूतकुसुमप्राशनमुक्तं तत्रैव पुराणसमुच्चये–'वृत्ते तुषारसमये सितपञ्चदश्यां प्रातर्वसन्तसमये समुपस्थिते च । संप्राश्य चूतकुसुमं सह चन्दनेन सत्यं हि पार्थ पुरुषोऽथ समाः सुखी स्यात् ॥' मन्त्रस्तु–'चूतमग्र्यं वसन्तस्य माकन्द कुसुमं तव । सचन्दनं पिबाम्यद्य सर्व-कामार्थसिद्धये ॥' इति ॥

चैत्रामावास्या-मन्वादिः ।

सा चापराह्णव्यापिनी ग्राह्या । कृष्णपक्षस्थत्वात् ॥ इति फाल्गुनमासः समाप्तः ॥

---

[1] अत्राऽयं धनुश्चिह्नान्तर्वर्ती भागः प्राचीनपुस्तकेष्वनुपलम्भात्प्रक्षिप्त इति गम्यते ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

एवं निरूपितमिदं गहनं तु कालतत्त्वं विचार्य वचनैश्च नयश्च सम्यक् ।
तद्दोषदृष्टिमपहाय विवेचनीयं विद्वद्भिरित्यविरतं प्रणतोऽस्मि तेषु ॥१॥

मया सद्वाऽसद्वा यदिह गदितं मन्दमतिना
किमेतच्छक्यं वाऽध्यवसितुमपि स्वल्पमतिना ।
तदेवं यत्किञ्चिद्गदितमिह विख्यातमहिमा
प्रतापोऽयं सर्वो विकसति तु पित्रोश्चरणयोः ॥ २ ॥

यो भाट्टतन्त्रगहनार्णवकर्णधारः शास्त्रान्तरेषु निखिलेष्वपि मर्मभेत्ता ।
योऽत्र श्रमः किल कृतः कमलाकरेण प्रीतोऽमुनाऽस्तु सुकृती बुधरामकृष्णः ३

इति श्रीमन्नारायणभट्टसूरिसूनु-रामकृष्णभट्टसुतदिन-
करभट्टानुज-भट्टकमलाकर-कृते निर्णय-सिन्धौ
सम्वत्सरकृत्यनिरूपणं नाम द्वितीयः
परिच्छेदः समाप्तः ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

* श्रीः *

निर्णयसिन्धौ

तृतीयः परिच्छेदः ।

अथ प्रकीर्णकनिर्णयः ।

श्रीरामकृष्णतनयः कमलाकरसंज्ञितः ।
निरूप्य तिथिकृत्यं तु प्रकीर्णं वक्तुमुद्यतः ॥ १ ॥

तत्राऽऽदौ संस्कारेषु गर्भाधानम् । तत्र प्रथमरजोदर्शने दुष्टमासग्रहणसंक्रमादिफलं, तत्र शान्त्यादि च पितृकृतं भट्टकृत-प्रयोगरत्ने ज्ञेयम् । किञ्चित्तूच्यते ।

गर्भाधानविधौ प्रथमरजोदर्शने वार-तिथि-लग्न-नक्षत्रादिफलम् ।

मदनरत्ने नारदः—'अमा रिक्ताष्टमी षष्ठी द्वादशी प्रतिपत्स्वपि । परिघस्य तु पूर्वार्धे व्यतीपाते च वैधृतौ ॥ सन्ध्यासूपप्लवे विष्ट्यामशुभं प्रथमार्तवम् । रोगी पतिव्रता दुःखी पुत्रिणी भोगभागिनी ॥ पति-व्रता क्लेशभागी सूर्यवारादिषु क्रमात् । वैधव्यं सुतलाभश्च मैत्रं शत्रुविवर्धनम् । मित्रलाभः शत्रुवृद्धिः कुलर्द्धिर्बन्धुनाशनम् । मरणं वंशवृद्धिश्च निराहारः कुलक्षयः ॥ तेजश्च सुतनाशश्च कुलहानि-स्तिथिक्रमात् ॥' गर्गः—'सुभगा चैव दुःशीला वन्ध्या पुत्रसमन्विता । धर्मयुक्ता व्रतघ्नी च परसन्तानमोदिनी ॥ सुपुत्रा चैव दुःपुत्रा पितृवे-श्मरता सदा । दीना प्रजावती चैव पुत्राढ्या चित्रकारिणी ॥ साध्वी पतिप्रिया नित्यं सुपुत्रा कष्टचारिणी । स्वकर्मनिरता हिंस्रा पुण्यपु-त्रादिसंयुता ॥ नित्यं धनचयासक्ता पुत्रधान्यसमन्विता । मूर्खा चाऽज्ञा पुण्यवती दस्रर्क्षादेः क्रमात्फलम् ॥' नारदः—'कुलीरवृषचापान्त्यनृयु-क्कन्यातुलाघटाः । राशयः शुभदा ज्ञेया नारीणां प्रथमार्तवे ॥' गर्गः—'सुभगा श्वेतवस्त्रा स्याद्दृढवस्त्रा पतिव्रता । क्षौमवस्त्रा क्षितीशा स्यान्नववस्त्रा सुखान्विता । दुर्भगा जीर्णवस्त्रा स्याद्रोगिणी रक्तवा-ससा । नीलाम्बरधरा नारी पुष्पिता विधवा ततः । वस्त्रे स्युर्विषमाः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

रक्तबिन्दवः पुत्रमाप्नुयात् । समाश्चेत्कन्यकाश्चेति फलं स्यात्प्रथमार्तवे ॥' सम्मार्जनी-काष्ठ-तृणादि-शूर्पान् हस्ते दधाना कुलटा तदा स्यात् । तल्पोपभोगे तपसि स्थिता चेद्दृष्टं रजो भाग्यवती तदा स्यात्' ॥ स्मृतिरत्ने–'शुभं चैव तु पूर्वाह्णे मध्याह्ने मध्यमं फलम् । अपराह्णे तु वैधव्यं पूर्वरात्रे शुभं भवेत्' इति । प्रथमे रजसि सर्वमिदमिति संस्कारमयूखे ।

अथ स्त्रीसंसर्गवर्जनमाह वसिष्ठः–प्रभूतदोषे यदि दृश्यते तत्पुष्पं तदा शान्तिककर्म कार्यम् । विवर्जयेदेव तदैकशय्यां यावद्रजोदर्शनमुत्तमेऽह्नि ॥' ज्योतिर्निबन्धे वसिष्ठः–'आद्यर्तौ पौषशुक्रोर्जमधुशुचिनभस्याः कुयुक्पापवारा रिक्तामार्काष्टषष्ठ्यः पितृपरसदने रात्रिसन्ध्यापराह्णाः । मिश्रोग्रा मूलतीक्ष्णं विवरमनरुणाल्पाधिकास्त्रं गराद्योत्पातः पापस्य लग्नं न सदरुणजरन्नीलचित्राम्बरं च ॥ आद्यर्तौ दुर्भगा नारी विष्कम्भे चेद्रजस्वला । वन्ध्या चैवाऽतिगण्डे च शूले शूलवती भवेत् ॥ गण्डे तु पुंश्चली नारी व्याघाते चाऽऽत्मघातिनी । वज्रे च स्वैरिणी प्रोक्ता पाते च पतिघातिनी ॥ परिघे मृतवन्ध्या च वैधृतौ पतिमारिणी । शेषाः शुभावहा योगा यथानामफलप्रदाः ॥'

अथ भुवनेश्वरीशान्तिविधिः ।

शान्तिमाह प्रयोगपारिजाते शौनकः—'सार्तवानां तु नारीणां शान्तिं वक्ष्यामि शौनकः । पञ्चमेऽह्नि चतुर्थे वा ग्रहयज्ञपुरःसरम् ॥ तस्मिन्नहनि कर्तव्य ऋतुहोमो विधानतः । आचार्यं वरयेत्प्राज्ञो भुवनेश्वरितुष्टये ॥ होमार्थं च जपार्थं च वरयेदृत्विजो बहून् । यजमानो द्विजैः सार्धं शान्तिहोमं समाचरेत् ॥ गृहादीशानदिग्भागे देवतापूजनाय च । द्रोणप्रमाणधान्येन व्रीहिराशित्रयं भवेत् । कुम्भत्रयं न्यसेद्राशौ तन्तुवस्त्रादिवेष्टितम् ॥ पूरयेत्तीर्थसलिलैः प्रतिकुम्भं पृथक्पृथक् । सूक्तेनाऽथ नवर्चेन प्रसुव आप इत्यथ । ऋचा याः प्रवतस्तद्वद्गायत्र्या च ततः क्रमात् ॥ मध्यकुम्भे क्षिपेद्धान्यमौष-

१—प्रथमदिननिर्णयस्तु पारिजाते चतुर्विंशतिमते— पूर्वाशयोस्तु रात्रौ चेज्जननं मरणं रजः । दृष्टं पूर्वदिनादित्थं तृतीये तूत्तरेऽहनि ॥ केचिद्दिवोदिते सूर्ये जननं मरणं तथा । रजो वा दृश्यते स्त्रीणां यस्याहस्तस्य शर्वरी ॥ अपरे त्वर्धरात्रात्प्राङ्मृतौ रजसि सूतके । पूर्वमेव दिनं प्राहुरूर्ध्वं चेदुत्तरेऽहनि ॥' इति । अत्र देशाचारतो व्यवस्था कर्त्तव्या ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

धानि च हेम च । ततश्च पञ्चरत्नानि गन्धपुष्पाक्षतादिकान् । औषधानि च वक्ष्यन्ते मुनिभिः शान्तिकारणात् । उदुम्बरः कुशो दूर्वा राजीव-वट-बिल्वकाः ॥ विष्णुक्रान्ताऽथ तुलसी बर्हिषं शङ्खपुष्पिका । शतावर्यश्वगन्धा च निर्गुण्डी सर्षपद्वयम् ॥ अपामार्गः पलाशश्च पनसो जीवकस्तथा । प्रियङ्गवश्च गोधूमा व्रीहयोऽश्वत्थ एव च ॥ क्षीरं दधि च सर्पिश्च पद्मपत्रं तथोत्पलम् । कुरण्टकत्रयं गुञ्जा वचा-भद्रकमुस्तकाः ॥ द्वात्रिंशदौषधानीह यथासम्भवमाहरेत् । मृत्तिकाश्चौषधादीनि तन्मन्त्रेण क्षिपेत्क्रमात् ॥ कुम्भोपरि न्यसेत्पात्रं कांस्यं मृद्वेणुताम्रजम् । भुवनेश्वरीं न्यसेत्तत्र इन्द्राणीं च पुरन्दरम् ॥ जपेद्गायत्रिमा होमाच्छ्रीसूक्तं च जपेत्ततः । स्पृशन्वै दक्षिणं कुम्भं ऋत्विगेको जपेदथ ॥ चत्वारि रुद्रसूक्तानि चतुर्मन्त्रोत्तराणि च । संस्पृशन्नुत्तरं कुम्भं श्रीरुद्रं रुद्रसङ्ख्यया ॥ शन्न इन्द्राग्नीसूक्तं च तत्रैव संस्पृशञ्जपेत् । कुम्भस्य पश्चिमे देशे शान्तिहोमं समाचरेत् ॥ दूर्वाभिस्तिलगोधूमैः पायसेन घृतेन च । तिसृभिश्चैव दूर्वाभिरेकैका चाऽऽहुतिर्भवेत् ॥ अष्टोत्तरसहस्रं वा शतमष्टोत्तरं तु वा । गायत्र्यैव तु होतव्यं हविरत्र चतुष्टयम् ॥ ततः स्विष्टकृतं हुत्वा समुद्रादूर्मिसूक्ततः । सन्तताभाज्यधारातां पूर्णाहुतिमथाऽऽचरेत् ॥ अथाऽभिषेकं कुर्वीत प्रतिकुम्भस्थितोदकैः । आपोहिष्ठेति नवभिः सूक्तेन च ततः परम् ॥ इन्द्रो अङ्गतृचेनैव पावमानैः क्रमेण तु । उभयं शृणवच्चनः स्वस्तिदाविश एकया ॥ त्र्यम्बकेन मन्त्रेण जातवेदस एकया । समुद्रज्येष्ठा इत्यादि त्रायन्तां च त्रिभिः क्रमात् ॥ इमा आपस्तृचेनैव देवस्यत्वेति मन्त्रतः । मन्त्रेणाऽथ तमीशानं त्वमग्ने रुद्र इत्यथ ॥ तमुष्टुहीति मन्त्रेण भुवनस्य पितरं तथा । याते रुद्रेति मन्त्रेण शिवसङ्कल्पमन्त्रतः ॥ इन्द्र त्वा वृषभं पञ्चमन्त्रैश्चैवाभिषेचयेत् । धेनुं पयस्विनीं दद्याद्वाचार्याय च भूषणैः ॥ सदक्षिणमनड्वाहं प्रदद्याद्रुद्रजापिने । महाशान्तिं प्रजप्याऽथ ब्राह्मणान्भोजयेदथ ॥' इति । नारदः—'तत्र शान्तिं प्रकुर्वीत घृत-दूर्वा-तिलाक्षतैः । प्रत्येकाष्टशतं चैव गायत्र्या जुहुयात्ततः ॥ स्वर्णगोभूतिलान्दद्यात्सर्वदोषापनुत्तये ॥' प्रकारान्तरं मदनरत्ने ज्ञेयम् । विस्तरभयान्नोच्यते । ग्रहणे रजोदर्शने तु जातकर्मप्रस्तावे शान्तिं वक्ष्यामः ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ प्रथमर्तौ विशेषः ।

स्मृतिचन्द्रिकायाम्—'प्रथमर्तौ तु पुष्पिण्याः पतिपुत्रवतीः स्त्रियः । अक्षतैरासनं कृत्वा तस्मिंस्तामुपवेशयेत् ॥ हरिद्रागन्धपुष्पादि दद्युस्ताम्बूलकं स्रजम् । दीपैर्नीराजनं कुर्यात्सदीपे वासयेद्गृहे । लवणापूपमुद्गादि दद्यात्ताभ्यः स्वशक्तितः ॥' इति ।

द्वितीयाद्यृतुषु तन्नियममाह—

पारिजाते दक्षः—'अञ्जनाभ्यञ्जने स्नानं प्रवासं दन्तधावनम् । न कुर्यात्सार्तवा नारी ग्रहाणामीक्षणं तथा ॥' अत्रिरपि—'वर्जयेन्मधु मांसं च पात्रे खर्वे च भोजनम् । गन्धमाल्ये दिवास्वापं ताम्बूलं चास्यशोधनम् ॥ दग्धे शरावे भुञ्जीत पेयं चाऽञ्जलिना पिबेत् ॥' मदनरत्ने हारीतः—'रजःप्राप्तावधः शयीत भूमौ कार्ष्णायसे पाणौ मृन्मये वाऽश्नीयात्' इति । विष्णुधर्मे—'आहारं गोरसानां च पुष्पालङ्कारधारणम् । अञ्जनं कङ्कतं गन्धान्पीठशय्याधिरोहणम् ॥ अग्निसंस्पर्शनं चैव वर्जयेत्सा दिनत्रयम् ॥' इति । तथा च प्रथमर्तौः पूर्वं स्त्रीगमनं न कार्यम् । 'प्राग्रजोदर्शनात्पत्नीं नेयाद्गत्वा पतत्यधः । व्यर्थीकारेण शुक्रस्य ब्रह्महत्यामवाप्नुयात् ॥' इति तत्रैवाऽऽश्वलायनोक्तेः । एतत्तु दशवर्षात्प्राग्ज्ञेयम् । प्रथमर्तौ गमने गौतमेन विशेषो दर्शितः—'गौरीमपि च रत्यर्थं गच्छेत्पुरुष आकुलः । अन्यथा वीर्यपातो हि सहस्रकुलपातकः ॥' अन्यथाऽपि तदिच्छया भवतीति विज्ञानेश्वरः ।

तत्र ऋतौ गमनमाह—

याज्ञवल्क्यः—'षोडशर्तुर्निशाः स्त्रीणां तस्मिन्युग्मासु संविशेत् ।' इति ।

अनृतावप्याह—

गौतमः—'ऋतावुपेयात्सर्वत्र वा प्रतिषिद्धवर्जम्' इति । मनुः—

१—'स्त्रीधर्मिणी त्रिरात्रं तु स्वमुखं नैव दर्शयेत् । स्ववाक्यं श्रावयेन्नापि यावत्स्नानान्न शुद्ध्यति ॥ सुस्नाता भर्तृवदनमीक्षेन्नान्यस्य कस्यचित् । अथवा मनसि ध्यात्वा पतिं भानुं विलोकयेत् ॥' इति याज्ञवल्क्योऽपि ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'ऋतुः स्वाभाविकः स्त्रीणां रात्रयः षोडश स्मृताः । तासामाद्याश्चतस्रस्तु निन्दितैकादशी तथा ॥ त्रयोदशी च शेषाः स्युः प्रशस्ता दश रात्रयः ॥' मदनरत्ने देवलः—'तस्मात्त्रिरात्रं चाण्डालीं पुष्पितां परिवर्जयेत् ।' इति ।

तत्र तिथ्यादीनाह—

श्रीधरः—'षष्ठ्यष्टमीं पञ्चदशीं चतुर्थीं चतुर्दशीमप्युभयत्र हित्वा । शेषाः शुभाः स्युस्तिथयो निषेके वाराः शशाङ्कार्कसितेन्दुजानाम् ॥' उभयत्र पक्षद्वये । आर्यो गुरुः, सितः शुक्रः, इन्दुजो बुधः । 'विष्णुप्रजेशरविमित्रसमीरपौष्णमूलोत्तरावरुणभानि निषेककार्ये । पूज्यानि पुष्पवसुशीतकराश्विचित्रादित्याश्च मध्यमफला विफलाः स्युरन्ये ॥' विष्णवादिदैवत्यनक्षत्राण्युक्तानि रत्नमालायाम्—'भेशा दस्रयमाग्निधातृशशिनः शर्वो दितिर्वाक्पतिः कद्रूजाः पितरो भगोऽर्यमरवी त्वष्ट्राह्वयो मारुतः । शक्राग्नी त्वथ मित्र इन्द्रनिर्ऋती तोयं च विश्वे विधिर्गोविन्दो वसवोऽम्बुपाजचरणाहिर्बुध्न्यपूषाभिधाः ॥' उत्तराशब्देनोत्तरात्रयम् । अत्र मूलस्य पूज्यत्वमुक्तम् । याज्ञवल्क्येन तु—'एवं गच्छन् स्त्रियं क्षामां[1] मघां मूलं च वर्जयेत् ।' इत्युक्तम् । तेन पूर्वत्र मूलं चिन्त्यम् ।

तत्र सम-विषम-रात्रिफलम् ।

अत्र 'समासु पुत्रा विषमासु कन्याः' इति ज्ञेयम् । 'युग्मासु[2] पुत्रा जायन्ते स्त्रियोऽयुग्मासु रात्रिषु ।' इति हेमाद्रौ शङ्खोक्तेः । तत्राऽप्युत्तरोत्तराः प्रशस्ताः । तदाहाऽऽपस्तम्बः—'तत्राऽप्युत्तरोत्तराः प्रशस्ताः' इति ।

१—क्षामां लब्धाहारादिना कृशामित्यर्थः । अत एव बृहस्पतिः स्त्रीपुंसयोराहारविशेषं निमित्तमाह—'स्त्रियाः शुक्राधिके स्त्री स्यात्पुमान् पुंसोऽधिके भवेत् । तस्माच्छुक्रविवृद्ध्यर्थं स्निग्धं भक्ष्यं च भक्षयेत् ॥ लब्धाहारां स्त्रियं कुर्यादेवं सञ्जनयेत्सुतम् ॥ इति । २—'यदा युग्मास्वपि रात्रिषु शोणिताधिक्यं तदा स्त्र्येव भवति पुरुषाकृतिः अयुग्मास्वपि शुक्राधिक्ये पुमानेव स्त्र्याकृतिः । कालस्य निमित्तत्वात्, शुक्रशोणितयोश्चोपादानकारणत्वेन प्राबल्यात्तस्मात्क्षामा कर्तव्या' इति मिताक्षरायामुक्तम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

चतुर्थ्यादिरात्रिफलम् ।

तत्रैव व्यासः—'रात्रौ चतुर्थ्यां पुत्रः स्यादल्पायुर्धनवर्जितः । पञ्चम्यां पुत्रिणी नारी षष्ठ्यां पुत्रस्तु मध्यमः ॥ सप्तम्यामप्रजा योषिदष्टम्यामीश्वरः पुमान् । नवम्यां सुभगा नारी दशम्यां प्रवरः सुतः ॥ एकादश्यामधर्मा स्त्री द्वादश्यां पुरुषोत्तमः । त्रयोदश्यां सुता पापा वर्णसङ्करकारिणी । धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च आत्मवेदी दृढव्रतः । प्रजायते चतुर्दश्यां पञ्चदश्यां पतिव्रता ॥ आश्रयः सर्वभूतानां षोडश्यां जायते पुमान् ॥' इति । अत्र चतुर्थदिननिषेधेऽपि—'स्नातां चतुर्थदिवसे रात्रौ गच्छेद्विचक्षणः ।' इति महाभारतोक्तेः । 'चतुर्थेऽहनि स्नातायां युग्मासु वा गर्भं रुंदधाति' इति हारीतोक्ते-र्विकल्पो ज्ञेयः । तत्राऽपि—'स्नानं रजस्वलायास्तु चतुर्थेऽहनि शस्यते । गम्या निवृत्ते रजसि नानिवृत्ते कथञ्चन ॥' इत्यापस्तम्बो-क्तेर्व्यवस्था ज्ञेया ।

अत्र सर्वासु युग्मासु गमनमावश्यकम् । युग्मास्विति बहुवचन-निर्देशादिति विज्ञानेश्वरः । तच्चैकस्यां रात्रौ सकृदेव कार्यम् । 'सुस्थ इन्दौ सकृत्पुत्रं लक्षण्यं जनयेत्पुमान् ।' इति याज्ञवल्क्योक्तेः । इदं चर्तौ गमनमन्यकाले प्रतिबन्धादिना गमनासम्भवे श्राद्धैकाश्यादावपि कार्यम् । 'ब्रह्मचार्येव पर्वाण्याद्याश्चतस्रश्च वर्जयेत्' इति याज्ञव-ल्क्योक्तेः । व्याख्यातं चेदं मिताक्षरायाम्—'यत्र श्राद्धादौ ब्रह्मचर्यं विहितं तत्राऽप्यृतौ गच्छतो न ब्रह्मचर्यस्खलनदोषः' इति । पर्वाणीति बहुत्वेनाष्टमीचतुर्दश्योर्ग्रहणमिति च । मदनरत्नेऽप्येवम् । यत्तु हेमाद्रौ शिवरहस्ये—' दिवा जन्मदिने चैव न कुर्यान्मैथुनं व्रती । श्राद्धं दत्त्वा च भुक्त्वा च श्रेयोऽर्थी न च पर्वसु ॥' इति । तदनृतुविषयम् ।

१—अत्र (**प्रभासखण्डे मरीचिः**—शुद्धा भर्तुश्चतुर्थेऽह्नि स्नानेन स्त्री रज-स्वला । दैवे कर्मणि पित्र्ये च पञ्चमेऽहनि शुद्ध्यति ॥' श्रौतकर्ममध्ये रजस्वला चेत्तत्र चतुर्थ-दिनेऽप्यधिकारः । 'अथ यदा त्रिरात्रिणी स्यादथैनामुपहूयेत' इत्यापस्तम्बसूत्रात् । 'चतुर्थेऽहनि गोमूत्रमिश्राभिरद्भिः स्नाता वासोयोक्त्रजालानि मन्त्रैर्धारयेत्' इति सोमेऽप्युक्तम् । एवं सर्वत्र श्रौतकर्मणीति धूर्तस्वामिरामाण्डारादयः) । इयान्विशेषः क्वचित्पुस्तके ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'ब्रह्मचार्येव भवति यत्र तत्राऽऽश्रमे वसन्'इति मनूक्तेः। दर्शादौ तु न भवत्येव पर्वणां पर्युदस्तत्वात्। माधवीये तु–'ऋतुकालं नियुक्तो वा नैव गच्छेत्स्त्रियं क्वचित्। तत्र गच्छन्समाप्नोति ह्यनिष्टफलमेव तु ॥' इति वृद्धमनूक्तेः श्राद्धे ब्रह्मचर्यं नियतमित्युक्तम्। पृथ्वीचन्द्रोदयेऽप्येवम्। एतत्सति सम्भवे ज्ञेयम्। अनेकभार्यस्यर्तुयौगपद्ये हेमाद्रौ कश्यपः–'यौगपद्ये तु तीर्थानां विवाहक्रमशो व्रजेत्। रक्षणार्थमपुत्रां वा ग्रहणक्रमशोऽपि वा ॥' इति। ग्रहणमृतुग्रहणम्। ऋग्विधाने—'विष्णुर्योनिं जपेत्सूक्तं योनिं स्पृष्ट्वा त्रिभिर्व्रती। गर्भाधानं ततः कुर्यात्सुपुत्रो जायते ध्रुवम् ॥'

अगमने दोषमाह—

पराशरः—ऋतुस्नातां तु यो भार्यां सन्निधौ नोपगच्छति। घोरायां भ्रूणहत्यायां पच्यते नाऽत्र संशयः ॥'

अस्यापवादमाह—

मदनरत्ने व्यासः—'व्याधितो बन्धनस्थो वा प्रवासेष्वथ पर्वसु। ऋतुकालेऽपि नारीणां भ्रूणहत्या प्रमुच्यते॥ वृद्धां वन्ध्यामसद्वृत्तां मृतापत्यामपुष्पिणीम्। कन्यासूं बहुपुत्रां च वर्जयेन्मुच्यते भयात् ॥' वृद्धां गतरजस्काम्।

गर्भाधानाङ्गहोमाकरणे प्रायश्चित्तमाह—

पारिजाते आश्वलायनः—'गर्भाधानस्याकरणात्तस्यां जातस्तु दुष्यति। अकृत्वा गां द्विजे दत्त्वा कुर्यात्पुंसवनं पतिः ॥' गर्भाधानं मलमासगुरुशुक्रास्तादावपि कार्यम्। 'उत्सवेषु च सर्वेषु सीमन्ते ऋतुजन्मसु। सुरासुरेज्ययोश्चैव मौढ्यदोषो न विद्यते ॥' इति ज्योतिर्निबन्धे भृगूक्तेः। ऋतुगमने पराशरः–'ऋतौ तु गर्भशङ्कित्वात्स्नानं मैथुनिनः स्मृतम्। अनृतौ तु यदा गच्छेच्छौचं मूत्रपुरीष-

---

१—'यत्र तत्राऽऽश्रमे वसन्निति वानप्रस्थापेक्षया। तस्य हि भार्यया सह गमनपक्षे ऋतुगमनं प्रसक्तम्। न च वनस्थभार्याया ऋतुर्न भवतीति वाच्यम्, 'वनं पञ्चाशतो व्रजेत्' इति, 'वर्षैरेकगुणां भार्यामुद्वहेत्त्रिगुणः पुमान्' इत्यादिशास्त्रपर्यालोचनया तत्सम्भवादिति मन्वर्थमुक्तावली।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वत् ॥' स्त्रीणां तु न स्नानम्। 'उभावप्यशुची स्यातां दम्पती शयनं गतौ। शयनादुत्थिता नारी शुचिः स्यादशुचिः पुमान् ॥' इति वृद्धशातातपोक्तेः ॥

रात्रौ रजसि जननादौ च निर्णयः।

अत्र कश्चिद्विशेष उच्यते। तत्र रात्रौ रजसि जननादौ च रात्रिं त्रिभागां कृत्वा आद्यभागद्वये चेत्पूर्वदिनं ग्राह्यं, परतस्तूत्तरदिनमिति मिताक्षरायाम्। यत्तु-'प्रागर्धरात्रात्प्राग्वा सूर्योदयात्पूर्वदिनं ग्राह्यम्' इत्युक्तं, तत्र देशाचाराद्व्यवस्था।

सप्तदशदिनात्प्राक् वा रोगजे रजोदर्शने निर्णयः।

तथा सप्तदशदिनपर्यन्तं पुना रजोदर्शने स्नानमात्रम्। अष्टादशे[1] एकरात्रं, एकोनविंशे द्व्यहः, विंशतिप्रभृति त्रिरात्रमिति तत एव ज्ञेयम्। यत्तु-'चतुर्दशदिनादर्वागशुचित्वं न विद्यते।' इति, तत्र स्नानप्रभृतित्वमभिप्रेतम्। एतच्च यस्या विंशतिदिनोत्तरं प्रायशो रजस्तत्रैव। यस्यास्त्वर्वाक् प्रायशो रजस्तत्रोक्तं स्मृत्यर्थसारे-'त्रयोदशदिनादूर्ध्वं प्रायो रजोवतीनामेकादशदिनात्प्रागशुचित्वं नाऽस्ति। एकादशदिने एकरात्रं, द्वादशे द्विरात्रं, ऊर्ध्वं त्रिरात्रम्' इति। प्रयोगपारिजातेऽप्येवम्। रोगजे तु तत्रैव विशेषः सङ्ग्रहे-'रोगेण यद्रजः स्त्रीणामन्वहं हि प्रवर्तते। नाऽशुचिस्तु भवेत्तेन यस्माद्वैकारिकं मतम् ॥' इति। कर्माधिकारस्तु रजोनिवृत्तावेव। 'साध्वाचारा न तावत्स्यात्स्नाताऽपि स्त्री रजस्वला। यावत्प्रवर्तमानं हि रजो नैव निवर्तते ॥' इति श्राद्धहेमाद्रौ शङ्खोक्तेः। तत्राऽपि स्वकालेऽशुचिरेवेत्याह—ऋष्यशृङ्गः—'रोगजे वर्तमानेऽपि काले निर्याति कालजम्। तस्मात्कालेऽप्रमत्ता स्यादन्यथा सङ्करो भवेत् ॥'

रजस्वलापरस्परस्पर्शे।

तथा रजस्वलाया रजस्वलान्तरस्पर्शेऽकामतः स्नानम्। कामत उपवासः पञ्चगव्याशनं च। असवर्णानां तु ब्राह्मण्याः क्षत्रियादिस्पर्शे

१-रजोवतीनामष्टादशदिनेऽपि त्रिरात्रमशुचित्वमित्युक्तमन्यत्र।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

क्रमेण कृच्छ्रार्धपादोनकृच्छ्रकृच्छ्राः, क्षत्रियादीनां तु कृच्छ्रपाद एव । क्षत्रियादीनां हीनवर्णास्पर्शे त्रिरात्रमुपवासः । वैश्याशूद्र्योः पूर्वया स्पर्शेऽहोरात्रं द्विरात्रं च । एतच्च कामतः । अकामतस्तु प्राक्शुद्धेरनशनम् । अकामतश्चाण्डालादिस्पर्शेष्वनशनमेव प्राक्शुद्धेः । कामतस्तु प्रथमेऽह्नि त्र्यहः द्वितीये द्व्यहस्तृतीय एकहः । श्वस्पर्शे तु द्व्यह एकाहो वा । भुञ्जानायाश्चाण्डालादिस्पर्शे षड्रात्रम् । उच्छिष्टयोः स्पर्शे तु कृच्छ्र इत्यादि मिताक्षरायां ज्ञेयम् । स्मृत्यर्थसारे तु—सर्वत्र बालापत्यायाः स्पर्शे स्नाने कृते भुक्तिः पश्चादनशनप्रत्याम्नाय इति । स्नानविधिं चाऽऽह—पराशरः—'स्नाने नैमित्तिके प्राप्ते नारी यदि रजस्वला । पात्रान्तरिततोयेन स्नानं कृत्वा व्रतं चरेत् ॥ सिक्तगात्रा भवेदद्भिः साङ्गोपाङ्गा कथञ्चन । न वस्त्रपीडनं कुर्यान्नान्यद्वासश्च धारयेत् ॥'

अथ रजस्वला-स्नान-विधानम् ।

दैवज्ञवल्लभः—'ब्रह्मानुराधाश्विनसौम्यभेषु हस्तानिलाखण्डलवासवेषु । विश्वार्यमर्क्षोत्तरभाद्रभेषु वराङ्गनास्नानविधिः प्रदिष्टः ॥' ज्वरे तूशनाः—'ज्वराभिभूता या नारी रजसा च परिप्लुता । कथं तस्या भवेच्छौचं शुद्धिः स्यात्केन कर्मणा ॥ चतुर्थेऽहनि सम्प्राप्ते स्पृशेदन्या तु तां स्त्रियम् । सा सचैलाऽवगाह्यापः स्नात्वा स्नात्वा पुनः स्पृशेत् ॥ दश द्वादशकृत्वो वा आचामेच्च पुनः पुनः । अन्ते च वाससां त्यागस्ततः शुद्धा भवेत्तु सा ॥' इति । इदं चातुरमात्रे ज्ञेयम् । 'आतुरे स्नान उत्पन्ने दशकृत्वो ह्यनातुरः ॥' इति पराशरोक्तेः । रजसोऽज्ञाने तु पराशरमाधवीये प्रजापतिः—'अविज्ञाते मले सा च मलवद्वसना यदि । कृतं गृहेषु दुष्टं स्याच्छुद्धिस्तस्यास्त्रिरात्रतः ॥' देवजानीये कारिकायाम्—'उच्छिष्टा तु द्विजातीनां रजः स्त्री यदि पश्यति । उपवासमधोच्छिष्टे ऊर्ध्वोच्छिष्टे त्र्यहं क्षिपेत् ॥' इति ।

१—मूत्रपुरीषोत्सर्गोत्तरमकृतप्रक्षालनादिशौचापूर्वावस्था अधरोच्छिष्टं भोजनोत्तरं मुखप्रक्षालनादितः प्राक्तन्यवस्था ऊर्ध्वोच्छिष्टमिति ज्ञेयम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ पुंसवन[1]विधिः ।

प्रयोगपारिजाते जातूकर्ण्यः—द्वितीये वा तृतीये वा मासि पुंसवनं भवेत् । व्यक्ते गर्भे भवेत्कार्यं सीमन्तेन सहाऽथवा ॥' बृहस्पतिः—'तृतीये मासि कर्तव्यं गृष्टेरन्यत्र शोभनम् । गृष्टेश्चतुर्थे मासे तु षष्ठे मास्यथ वाऽष्टमे ॥' सकृत्प्रसूता गृष्टिः । एतेन प्रतिगर्भमपि भवतीति ज्ञायते । बह्वृचकारिकाऽपि—'कर्ता स्याद्देवरस्तस्याः यस्याः पत्युरसम्भवः । आवर्तत इदं कर्म प्रतिगर्भमिति स्थितिः ॥' ब्राह्मे—'गर्भाधानादिसंस्कर्ता प[2]तिः श्रेष्ठतमः स्मृतः । अभावे स्वकुलीनः स्याद्बान्धवो वाऽन्यगोत्रजः ॥' मदनरत्ने सत्यव्रतः—'मृतो देशान्तरगतो भर्ता स्त्री यद्यसंस्कृता । देवरो वा गुरुर्वाऽपि वंश्यो वाऽपि समाचरेत् ॥'

पुंसवने नक्षत्र-तिथ्यादि निर्णयः ।

हेमाद्रौ यमः—'प्रथमे मासि द्वितीये वा यदा पुंनक्षत्रेण चन्द्रमा युक्तः स्यात्' इति । वराहः—'हस्तो मूलं श्रवणः पुनर्वसुर्मृगशिरस्तथा पुष्यः । पुंसंज्ञकेषु कार्येष्वेतानि शुभानि धिष्ण्यानि ॥' अनुराधाऽपि पुंनक्षत्रम् । 'अनूराधान् हविषा वर्धयन्तः' इति श्रुतेः । गर्गोऽपि—'पुन्नामा श्रवणस्तिष्यो हस्तश्चैव पुनर्वसुः । अभिजित्प्रौष्ठपाच्चैव अनूराधास्तथाश्वयुक् ॥' नृसिंहः—'रिक्तां पर्व च नवमीं त्यक्त्वा पुंसवने शुभाः ।' ज्योतिर्निबन्धे वसिष्ठः—'मृत्युश्च सौरेस्तनुहानिरिन्दोर्मृतप्रजा पुंसवने बुधस्य । काकी च वन्ध्या भवतीह शुक्रे स्त्री पुत्रलाभो रवि-भौम-जीवैः ॥'

१—एतदादिसंस्काराणां वेदविहितत्वमाहाश्वलायनः—'उपनिषदि गर्भलम्भनं पुंसवनमनवलोभनं च' इति । अस्य व्याख्यामाह वृत्तौ नारायणभट्टः 'गर्भो लभ्यते येन कर्मणा निषिक्तं वीर्यममोघं च भवति तद्गर्भलम्भनम् । पुमाँल्लब्धो जायते येन तत्पुंसवनम् । पुमांस्तु सन् येन नावलुप्यते तदनवलोभनम् । वर्णविकारो द्रष्टव्यः पृषोदरादित्वात् । एतानि कस्याश्चिदुपनिषद्याम्नातानि । न केवलमेतानि किं तर्हि गर्भाधानादय आत्मज्ञानपर्यन्ता आम्नाताः ।' इति । विशेषविधिश्च तत एव ज्ञेयः ।

२—'पतिः श्रेष्ठतमः स्मृतः' इत्येतस्य स्थाने 'पिता श्रेष्ठतमः स्मृतः' इति पाठः क्वचिद्दृश्यते ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अनवलोभनस्याप्ययमेव कालः। दीपिकायां तु 'चतुर्थेऽनवलोभनम्' इत्युक्तम्।

अथ सीमन्तः। हेमाद्रौ वैजवापः—अथ सीमन्तोन्नयनं चतुर्थे पञ्चमे षष्ठे च' इति। वसिष्ठः—चतुर्थे सप्तमे मासि षष्ठे वाप्यथवाष्टमे।' हेमाद्रौ शङ्खः-गर्भस्पन्दने सीमान्तोन्नयनं, यावद्वा न प्रसवः' कार्ष्णाजिनिः-'गर्भलम्भनमारभ्य यावन्न प्रसवस्तदा। सीमन्तोन्नयनं कुर्याच्छङ्खस्य वचनं यथा॥' मासश्चात्र सौरः सावनो वा। कालविधाने—'चतुर्थषष्ठाष्टममासभाजि सौरेण गर्भे प्रथमे विधेयम्। सीमन्तकर्म द्विजभामिनीनां मासेऽष्टमे विष्णुबलिं च कुर्यात्॥' वसिष्ठः—'चतुर्थे सावने मासि षष्ठे वाप्यथवाष्टमे।' ज्योतिर्निबन्धे नारदः—'अरिक्तापर्वदिवसे कुजजीवार्कवासरे॥' कालविधाने—'सीमन्ते तिष्यहस्तादितिहरिशशभृत्पौष्णब्रिध्युत्तराख्याः पक्षच्छिद्रं च रिक्तां पितृतिथिमपहायापराः स्युः प्रशस्ताः॥' अदितिः=पुनर्वसुः। पक्षच्छिद्रं चाह वसिष्ठः—'चतुर्दशी चतुर्थी च अष्टमी नवमी तथा। षष्ठी च द्वादशी चैव पक्षच्छिद्राह्वयाः स्मृताः॥ क्रमादेतासु तिथिषु वर्जनीयाश्च नाडिकाः। भूता५ष्ट८मनु१४ तत्त्वा२५ङ्क९दश१० शेषास्तु शोभनाः॥' कालनिर्णये—'शुभसंस्थे निशानाथे चतुर्थीचचतुर्दशीम्। पौर्णमासीं प्रशंसन्ति केचित्सीमन्तकर्मणि॥' बृहस्पतिः—'पूर्वपक्षः शुभः प्रोक्तः कृष्णश्चान्त्यत्रिकं विना। चतुर्दशी चतुर्थी च शुक्लपक्षे शुभप्रदे॥' नारदः-'विप्रक्षत्रिययोः कुर्याद्दिवा सीमन्तकर्मतत्। वैश्यशूद्रकयोरेतद्दिवा निश्यपि केचन॥' वाराः पूर्वोक्ता एव।

एतच्च सकृदेव कार्यमिति विज्ञानेश्वरः। 'सकृच्च संस्कृता नारी सर्वगर्भेषु संस्कृता'। इति देवलोक्तेः। सकृत्प्रतिगर्भं वा कार्यमिति हेमाद्रिः। 'सकृच्च कृतसंस्काराः सीमन्तेन द्विजस्त्रियः। यं यं गर्भं प्रसूयन्ते स सर्वः संस्कृतो भवेत्॥' इति हारीतोक्तेः। 'सीमन्तोन्नयनं कर्म न स्त्रीसंस्कार इष्यते। केचिद्गर्भस्य संस्कारात्प्रतिगर्भं प्रयुञ्जते॥' इति हेमाद्रौ विष्णुवचनाच्च। स एव—'स्त्री यद्यकृतसीमन्ता प्रसूयेत कथञ्चन। गृहीतपुत्रा

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विधिवत्पुनः संस्कारमर्हति ।' सीमन्ते भोजने प्रायश्चित्तमुक्तं पराशरमा-सीमन्ते भोजने प्रायश्चित्तम् । धवीये धौम्येन—'ब्रह्मौदने च सोमे च सीमन्तोन्नयने तथा । जातकर्मनवश्राद्धे भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥' ऋग्विधाने तु—'अरा इवे जपेन्मत्रं शतवारं न संशयः। सीमन्ते च यदा भुङ्क्ते मुच्यते किल्बिषात्तदा ॥' इति ।

अथ गर्भिणीतत्पतिधर्माः । वराहः—'सामिषमशनं यत्नात्प्रमदा परिवर्जयेदतः प्रभृति ।' गृह्यकारिका—'अङ्गारभस्मास्थिकपालचुल्लीशूर्पादिकेषूपविशेन्न नारी । सोलूखलाद्ये दृषदादिके वा यन्त्रे तुषाद्ये न तथोपविष्टा ॥ नो मार्जनीगोमयपिण्डकादौ कुर्यान्न वारिण्यवगाहनं सा । अङ्गारभूत्या न नखैर्लिखेत्क्ष्मां कलिं वपुर्भङ्गमथो न कुर्यात् ॥ नो मुक्तकेशी विवशाथ वा स्याद्भुङ्क्ते न संध्यावसरे न शेते ॥ नामङ्गलं वाक्यमुदीरयेत्सा शून्यालयं वृक्षतलं न यायात् ॥' विष्णुधर्मोत्तरे—'कटुतीक्ष्णकषायाणि अत्युष्णलवणानि च । आयासं च व्यवायं च गर्भिणी वर्जयेत्सदा । हेमाद्रौ कौण्डिन्यः—मुण्डनं पिण्डदानं च प्रेतकर्म च सर्वशः । न जीवत्पितृकः कुर्याद् गुर्विणीपतिरेव च॥ ' मिताक्षरायाम्-'उदन्वतोऽम्भसि स्नानं नखकेशादिकर्तनम् । अन्तर्वत्न्याः पतिः कुर्यान्न प्रजा जायते ध्रुवम् ॥' पृथ्वीचन्द्रोदये गारुडे—'गयायां पिण्डदानस्य न कदाचिन्निराक्रिया ॥' अत्र काले दाप्रत्ययस्मृतेर्निषिद्धकालस्यैवापवादो न तु जीवत्पितृकगर्भिणीपत्याशौचादिर्निमित्तस्य । निमित्तसंयोगस्य कालसंयोगाद्भेदेनापवादाभावात् । अग्निहोत्रवद्यावज्जीवपरत्वाभावात् । अन्यथाशौचेऽपि गयायात्रा श्राद्धं च स्यात् । यत्र निमित्तसंयोगस्यापवादो यथाशौचेऽग्निहोत्रादेः, यथा वा जीवत्पितृकस्यापवादो मातुर्गयान्वष्टकादौ तदेव भवति, नान्यदिति संक्षेपः ।

प्रयोगपारिजाते कश्यपः—'गर्भिणी कुञ्जराश्वादिशैलहर्म्याधिरोहणम् । व्यायामं शीघ्रगमनं शकटारोहणं त्यजेत् ॥ शोकं रक्तविमोक्षं च साध्वसं कुक्कुटासनम् । व्यवसायं दिवास्वापं रात्रौ जागरणं त्यजेत् ॥' मदनरत्ने

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्कान्दे—'हरिद्रां कुङ्कुमं चैव सिन्दूरं कज्जलं तथा। कूर्पासकं च ताम्बूलं माङ्गल्याभरणं शुभम् ॥ केशसंस्कारकवरी करकर्णविभूषणम् । भर्तुरायुष्यमिच्छन्ती वर्जयेद्गर्भिणी न हि ॥' बृहस्पतिः—'चतुर्थे मासि षष्ठे वाप्यष्टमे गर्भिणी यदा । यात्रा नित्यं विवर्ज्या स्यादाषाढे तु विशेषतः ॥' याज्ञवल्क्यः—'दौहृदस्याप्रदानेन गर्भो दोषमवाप्नुयात् । वैरूप्यं मरणं वापि तस्मात्कार्यं प्रियं स्त्रियाः ॥' दौहृदं=गर्भिणीप्रियम् । तत्रैवाश्वलायनः—'वपनं मैथुनं तीर्थं वर्जयेद्गर्भिणीपतिः। श्राद्धं च सप्तमान्मासादूर्ध्वं नान्यत्र वेदवित् ॥' श्राद्धं=तद्भोजनमिति प्रयोगपारिजातः । कालविधाने मुहूर्तदीपिकायां च—'क्षौरं शवानुगमनं नखकृन्तनं च युद्धादि वास्तुकरणं त्वतिदूरयानम् । उद्वाहमौपनयनं जलधेश्च गाहमायुःक्षयार्थमिति गर्भिणिकापतीनाम् ॥' रत्नसंग्रहे गालवः—'दहनं वपनं चैव चौलं वै गिरिरोहणम् । नाव आरोहणं चैव वर्जयेद् गर्भिणीपतिः ॥' अन्यत्रापि—'प्रव्यक्तगर्भापतिरब्धियानं मृतस्य वाहं क्षुरकर्मसङ्गम् । तस्यां तु यत्नेन गयादितीर्थं यागादिकं वास्तुविधिं न कुर्यात् ॥ प्रव्यक्तगर्भा वनिता भवेन्मासत्रयात्परम् । षण्मासात्परतः सूतिर्नवमेऽरिष्टवासिनी ॥'

अथ सूतिकागृहप्रवेशः । गर्गः—'रोहिण्यैन्दवपौष्णेषु स्वातीवरुणयोरपि । पुनर्वसौ पुष्यहस्तधनिष्ठात्र्युत्तरासु च ॥ मैत्रे त्वाष्ट्रे तथाश्विन्यां सूतिकागारवेशनम् ॥' एतच्च संभवे । 'प्रसूतिसमये काले सद्य एव प्रवेशयेत् ।' इति वसिष्ठोक्तेः । तच्च नैर्ऋत्यां कार्यम् । 'वारुण्यां भोजनगृहं नैर्ऋत्यां सूतिकागृहम् ।' इति वसिष्ठोक्तेः । विष्णुधर्मे—'दशाहं सूतिकागारमायुधैश्च विशेषतः । वह्निना तिन्दुकालातैः पूर्णकुम्भैः प्रदीपकैः । मुसलेन तथा वारिवर्णकैश्चित्रितेन च ॥' इति ।

अथ जातकर्म । पारिजाते वसिष्ठः—'श्रुत्वा जातं पिता पुत्रं सचैलं स्नानमाचरेत् ॥' मनुः—'प्राङ्नाभिवर्धनात्पुंसो जातकर्म विधीयते ।' वर्धनं=छेदनम् । हेमाद्रौ बैजवापः—'जन्मनोऽनन्तरं कार्यं जातकर्म यथाविधि । दैवादतीतकालं चेदतीते सूतके भवेत् ॥' स्त्रीचन्द्रोदयेप्

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विष्णुधर्मे—'अच्छिन्ननाभि कर्तव्यं श्राद्धं वै पुत्रजन्मनि ॥' पुत्रपदेन कन्यापि गृह्यते । तदाह तत्रैव कार्ष्णाजिनिः—'प्रादुर्भावे पुत्रपुत्र्योर्ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः । स्नात्वाऽनन्तरमात्मीयान् पितॄन् श्राद्धेन तर्पयेत् ॥' एतच्च रात्रावपि कार्यम् । 'पुत्रजन्मनि यात्रायां शर्वर्यां दत्तमक्षयम् ।' इति तत्रैव व्यासोक्तेः । बैजवापः—'जातमात्रकुमारस्य जातकर्म विधीयते । स्तनप्राशनतः पूर्वं नाभिकर्तनतोऽपि वा ॥' एतेन नैमित्तिकमपीदं जातेष्टिवदाशौचान्ते कार्यमिति शङ्का परास्ता । 'जाते कुमारे पितॄणामामोदात्पुण्यं तदहः । इति हारीतोक्तेश्च । अत्र श्राद्धमामेन हेम्ना वा कार्यमित्युक्तम् । पृथ्वीचन्द्रोदये आदित्यपुराणे–'जातश्राद्धे तु पक्वान्नं न दद्याद् ब्राह्मणेष्वपि ।' इति । हेमाद्रिस्तु—'पुत्रजन्मनि कुर्वीत श्राद्धं हेम्नैव बुद्धिमान् । न पक्वेन न चामेन कल्याणान्यभिकामयन् ॥' इति संवर्तोक्तेहेम्नैवेत्याह । एतच्च जननाशौचे मरणाशौचे च कार्यमित्याह मिताक्षरायां प्रजापतिः-'आशौचे तु समुत्पन्ने पुत्रजन्म यदा भवेत् । कर्तुस्तात्कालिकी शुद्धिः पूर्वाशौचेन शुद्ध्यति ॥' केचित्तु—'मृताशौचस्य मध्ये तु पुत्रजन्म यदा भवेत् । आशौचापगमे कार्यं जातकर्म यथाविधि ॥' इति स्मृतिसंग्रहोक्तेराशौचान्ते कार्यमित्याहुः । स्मृत्यर्थसारेऽपि विकल्प उक्तः—'मृदुध्रुवचरक्षिप्रभेष्वेषामुदयेषु च । गुरौ शुक्रेऽथवा केन्द्रे जातकर्म च नाम च ॥' मृद्वादिलक्षणमाह श्रीधरः—'रोहिण्युत्तरभं स्थिरं गिरिशमूलेन्द्रोरगा दारुणं क्षिप्रं चाश्विदिनेशपुष्यमनलेन्द्राग्नी तु साधारणम् । उग्रं पूर्वमघान्तकं मृदुगति त्वाष्ट्रान्त्यमैत्रं चरं विष्णुस्वातिशतोडुवस्वदितयः कुर्युः स्वसंज्ञाफलम् ॥' अत्र सर्वत्र जातकर्मनामकर्मादावुक्तकालातिक्रमे नक्षत्रादिकं ज्ञेयम् । 'देशकालोपघाताद्यैः कालातिक्रमणं यदि । अनस्तगेज्येन्दुसिते तत्कार्यं चोत्तरायणे ॥' इति मदनरत्ने नारदोक्तेः । बृहस्पतिरपि—'मुख्यालाभे विधिज्ञेन विधिश्चिन्त्योऽप्रमादतः । नक्षत्रतिथिलग्नानां विचार्यैवं पुनः पुनः ॥' सूतके संध्यादौ विशेषं वक्ष्यामः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ जन्मनि दुष्टकालाः। तत्र गण्डान्तो ज्योतिर्निबन्धे नारदः— 'पूर्णानन्दाख्ययोस्तिथ्योः सन्धिर्नाडीद्वयं तथा। गण्डान्तं मृत्युदं जन्मयात्रोद्वाहव्रतादिषु ॥ कुलीरसिंहयोः कीटचापयोर्मीनमेषयोः। गण्डान्तमन्तरालं स्याद्घटिकार्धं मृतिप्रदम् ॥ सार्पेन्द्रपौष्णभेष्वन्त्यषोडशांशा भसंधयः। तदग्रभेष्वाद्यपादा भानां गण्डान्तसंज्ञकाः ॥' रत्नमालायाम्— 'पौष्णाश्विन्योः सार्पपित्र्यर्क्षयोश्च यच्च ज्येष्ठामूलयोरन्तरालम्। तद्गण्डान्तं स्याच्चतुर्नाडिकं हि यात्राजन्मोद्वाहकालेष्वनिष्टम् ॥' रत्नसंग्रहे नवनीतारिष्टे—'सर्वेषां गण्डजातानां परित्यागो विधीयते। वर्जयेद्दर्शनं श्रावं तच्च षाण्मासिकं भवेत् ॥ तिथ्यर्क्षगण्डे पितृमातृनाशो लग्ने तु संधौ तनयस्य नाशः। सर्वेषु नो जीवति हन्ति बन्धूञ्जीवन्पुनः स्याद् बहुवारणाश्वः॥' अथैषां दानमुत्तरगार्ग्ये-'तिथिगण्डे त्वनड्वाहं नक्षत्रे धेनुरुच्यते। काञ्चनं लग्नगण्डे तु गण्डदोषो विनश्यति ॥ उत्तरे दुष्टजन्मनि दानम्। तिलपात्रं स्यात्पुष्ये गोदानमुच्यते। अजाप्रदानं त्वाष्ट्रे स्यात्पूर्वाषाढे च काञ्चनम् ॥ उत्तरापुष्यचित्रासु पूर्वाषाढोद्भवस्य च। कुर्याच्छान्तिं प्रयत्नेन नक्षत्राकरजां बुधः ॥

अथाश्लेषाफलम्। मूर्धास्यनेत्रगलकांसयुगं च बाहुहृज्जानुगुह्यपदमित्यहिदेहभागः। बाणाद्रिनेत्रहुतभुक्श्रुतिनागरुद्रषण्नन्दपञ्चशिरसः क्रमशस्तु नाड्यः॥ राज्यं पितृक्षयो मातृनाशः कामक्रियारतिः। पितृभक्तो बलो स्वघ्नस्त्यागी भोगी धनी क्रमात् ॥

अथ ज्येष्ठाफलम्। ब्रह्मयामले—'ज्येष्ठादौ जननीमाता द्वितीये जननीपिता। तृतीये जननीभ्राता स्वयं माता चतुर्थके ॥ आत्मानं पञ्चमे हन्ति षष्ठे गोत्रक्षयो भवेत्। सप्तमे चोभयकुलं ज्येष्ठभ्रातरमष्टमे ॥ नवमे श्वशुरं हन्ति सर्वं हन्ति दशांशके ॥' इति।

मूलफलम्। भल्लाटः—'अभुक्तमूलसंभवं परित्यजेत्तु बालकम्। समाष्टकं पिताथवा न तन्मुखं विलोकयेत् ॥ तदाद्यपादके पिता द्वितीयके जनन्यथ। धनक्षयस्तृतीयके चतुर्थकः शुभाव हः ॥ प्रतीपमन्त्यपादतः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

फलं तदेव सार्पभे।' अभुक्तमूलं त्वाह वृद्धवसिष्ठः-'ज्येष्ठान्ते घटिका चैका मूलादौ घटिकाद्वयम्। अभुक्तमूलमित्याहुस्तत्र जातं शिशुं त्यजेत्॥ केचिज्ज्येष्ठान्त्यं मूलाद्यं च पादमभुक्तमूलमाहुः। कश्यपसंहितायां त्वन्यथोक्तम्—'मूलाद्यपादजो हन्ति पितरं तु द्वितीयजः। मातरं स्वां तृतीयोऽर्थान्सुहृदं तत्तुरीयजः॥ फलं तदेव सार्पर्क्षे प्रतीपं त्वन्त्यपादतः॥'

अथ मूलवृक्षः। जयार्णवे—'मूलं स्तम्भं त्वचा शाखा पत्रं पुष्पं फलं शिखा। वेदाश्च मुनयश्चैव दिशश्च वसवस्तथा॥ नन्दा बाणा रसा रुद्रा मूलभेदः प्रकीर्तितः। मूले मूलविनाशाय स्तम्भे हानिर्धनक्षयः॥ त्वचि भ्रातृविनाशाय शाखा मातृविनाशकृत्। पत्रे सपरिवारः स्यात्पुष्पेषु नृपवल्लभः॥ फलेषु लभते राज्यं शिखायामल्पजीवितम्॥' अन्यत्र त्वन्यथोक्तम्—'मूले सप्तघटीषु मूलहननं, स्तम्भेऽष्टसु स्वक्षयं, त्वग्दिग्बन्धुविनाशनं, च विटपे रुद्रैर्हतो मातुलः। पत्रेऽर्कैः सुकृती, तु बाणकुसुमे मन्त्री, फले सागरै राजा, वह्निशिखाल्पमायुरिति सन्मूलाङ्घ्रिपे स्यात्फलम्॥' भूपालवल्लभः—'वृषालिसिंहेषु घटे च मूले दिवि स्थितं, युग्मतुलाङ्गनान्त्ये। पातालगं, मेषधनुःकुलीरनक्रेषु मर्त्येष्विति संस्मरन्ति॥ स्वर्गे मूले भवेद्राज्यं पाताले चेद्धनागमः। मर्त्यलोके यदा मूलं तदाशून्यं समादिशेत्॥'

वसिष्ठः—'नैर्ऋत्यभोद्भूतसुतः सुता वा क्षिप्रादवश्यं श्वशुरं निहन्ति। तदन्त्यपादे जनितो न हन्ति तस्योत्क्रमेणाहिभवे कलत्रम्॥ सुरेशताराजनिता धवाग्रजं द्विदैवताराजनिता तु देवरम्। पुरन्दरर्क्षे जनितः सुतस्तथा स्वस्याग्रजं हन्ति न पुत्रिका यदि॥' प्रयोगपारिजाते—'मूलजा श्वशुरं हन्ति व्यालजा च तदङ्गनाम्। माहेन्द्रजाग्रजं हन्ति देवरं तु द्विदैवजा॥' नृसिंहप्रसादे—'धवाग्रजं हन्ति सुरेन्द्रजाता तथैव पत्न्या भगिनीं पुमांश्च। द्विदैवजा देवरमाशु हन्याद्भार्यानुजामाशु निहन्ति सूनुः॥ पत्न्यग्रजामग्रजं वा हन्ति ज्येष्ठर्क्षजः पुमान्। तथा भार्यास्वसारं वा शालकं वा द्विदैवजः॥ कन्यका देवरं हन्ति विशाखान्त्यसमुद्भवा।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

आद्यपादत्रये नैव आद्यभे तु पुमान्भवेत् ॥ न हन्यादेवरं कन्या तुला-मिश्रा द्विदैवजा । तद्दत्तान्तोद्भवा वर्ज्या दुष्टा वृश्चिकपुच्छवत् ॥ चित्राद्यर्धे पुष्यमध्ये द्विपादे पूर्वाषाढाधिष्ण्यपादे तृतीये । जातः पुत्रश्चोत्तराद्ये विधत्ते मातापित्रोर्भ्रातरं बालनाशम् ॥ द्विमासं चोत्तरादोषः पुष्ये चैव त्रिमासकः । पूर्वाषाढाष्टमे मासि चित्रा षाण्मासिक फलम् ॥ नवमासं तथाश्लेषा मूले चाष्टकवर्षकम् । ज्येष्ठा पञ्चदशे मासि पुत्रदर्शनवर्जिता ॥,

वसिष्ठः—'व्यतीपातेऽङ्गहानिः स्यात्परिघे मृत्युमादिशेत् । वैधृतौ पितृहानिः स्यान्नष्टेन्दावन्धतां व्रजेत् ॥ मूले समूलनाशः स्यात्कुलनाशो धृतौ भवेत् । विकृताङ्गश्च हीनश्च संध्ययोरुभयोरपि ॥ पर्वण्यपि प्रसूतौ च सर्वारिष्टभयप्रदः । तद्वत्सदन्तजातश्च पादजातस्तथैव च ॥ विपरीत-प्रसूतौ तु नाभिनालेन वेष्टितः । राष्ट्रस्य नृपतेश्चैव स्वस्यापि च विना-शकः ॥ तस्माच्छान्तिं प्रकुर्वीत ग्रहाणां क्रूरचेतसाम् ॥' गर्गः—'कृष्णां चतुर्दशीं षोढां कुर्यादादौ शुभं स्मृतम् । द्वितीये पितरं हन्ति तृतीये हन्ति मातरम् ॥ चतुर्थे मातुलं हन्ति पञ्चमे वंशनाशनम् । षष्ठे तु धननाशः स्यादात्मनो वंशनाशनम् ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन शान्तिं कुर्याद्विधानतः ॥'

अथ पित्रोर्नक्षत्रे जन्मदोषः । तत्र देवकीर्तिः—'यद्येकस्मिन्धिष्ण्ये जायन्ते दुहितरोऽथ वा पुत्राः । पितुरन्तकरा ह्येते यद्यपरे प्रीतिरतुला स्यात् ॥' गर्गः—'एकस्मिन्नेव नक्षत्रे भ्रात्रोर्वा पितृपुत्रयोः । प्रसूतिश्चेत्त-योर्मृत्युर्भवेदेकस्य निश्चितम् ॥' शौनकः—'ग्रहणे चन्द्रसूर्यस्य प्रसूतिर्यदि जायते । व्याधिपीडा तदा स्त्रीणामादौ तु ऋतुदर्शनात् ॥ इत्थं सञ्जायते यस्य तस्य मृत्युर्न संशयः ॥' शान्तिस्तु—'तद्दक्षाधिपते रूपं सुवर्णेन प्रकल्पयेत् । सूर्यग्रहे सूर्यरूपं हैमं, चन्द्रं तु राजतम् ॥ राहुरूपं प्रकुर्वीत नागेनैव विचक्षणः ।' नागः=सीसम् । 'त्रयाणां चैव रूपाणां स्थापनं तत्र कारयेत् ॥' 'आकृष्णेन' 'आप्यायस्व' 'स्वर्भानोः' इति पूजामन्त्राः । नक्षत्रदेवतायास्तन्मन्त्रेण । 'संपूज्य तु यजेत्सूर्यं समिद्भिश्चार्कसंभवैः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तद्दोषनिरासार्थं चन्द्रग्रहे च पलाशैर्दूर्वाभी राहुमेव च ॥ समिद्भिः शान्त्यादिविधिः। ब्रह्मवृक्षस्य भेशाय जुहुयाद् बुधः। आज्येन चरुणा चैव तिलैश्च जुहुयात्ततः॥ पञ्चगव्यैः पञ्चरत्नैः पञ्चत्वक्पञ्चपल्लवैः। जलैरोषधिकल्कैश्च अभिषेकं समाचरेत्। मन्त्रैर्वारुणसंभूतैरापोहिष्ठादिभिस्त्रिभिः॥ इमं मे गङ्गे पुरतस्तत्त्वायामीति मन्त्रकैः। यजमानस्ततो दद्याद्भक्त्या प्रतिकृतित्रयम्॥' इति।

मात्स्ये—'अकालप्रसवा नार्यः कालातीतप्रजास्तथा। विकृतप्रसवाश्चैव युग्मप्रसवकास्तथा॥ अमानुषा अमुण्डाश्च अजातव्यञ्जनास्तथा। हीनाङ्गा अधिकाङ्गाश्च जायन्ते यदि वा स्त्रियः॥ पशवः पक्षिणश्चैव तथैव च सरीसृपाः। विनाशं तस्य देशस्य कुलस्य च विनिर्दिशेत्॥ निर्वासयेत्तान् नगरात्ततः शांतिं समाचरेत्॥ पाद्मे—'उपरि प्रथमं यस्य जायन्ते च शिशोर्द्विजाः। दन्तैर्वा सह यस्य स्याज्जन्म भार्गवसत्तम॥ द्वितीये च तृतीये च चतुर्थे पञ्चमे तथा। यदा दन्ताश्च जायन्ते मासे चैव महद्भयम्॥ मातरं पितरं वाथ खादेदात्मानमेव च। गजपृष्ठगतं बालं नौस्थं वा स्थापयेत् द्विज॥ तदभावे तु धर्मज्ञ काञ्चने वा वरानने। सर्वौषधैः सर्वगन्धैर्बीजैः पुष्पैः फलैस्तथा॥ पञ्चगव्येन रत्नैश्च पताकाभिश्च भार्गव। स्थालीपाकेन धातारं पूजयेत्तदनन्तरम्॥ सप्ताहं चात्र कर्तव्यं तथा ब्राह्मणभोजनम्। भद्रासने निवेश्यैनं मृद्भिर्मूलैः फलैस्तथा॥ सर्वौषधैः सर्वगन्धैः सर्वबीजैस्तथैव च। स्नापयेत्पूजयेच्चात्र वह्निं सोमं समीरणम्॥ पर्वतांश्च तथा ख्यातान् देवदेवं च केशवम्। एतेषामेव जुहुयाद् घृतमग्नौ यथाविधि॥ ब्राह्मणानां तु दातव्या ततः संपूज्य दक्षिणा॥' ब्रह्मयामले—'प्रथमं दन्तनिर्मुक्तिरूर्ध्वं बालस्य चेद् भवेत्। क्लेशाय मातुलस्येह तदा प्रोक्ता मनीषिभिः॥ सौवर्णं राजतं वापि ताम्रं कांस्यमयं तु वा। दध्योदनेन संपूर्णं पात्रं दद्याच्छिशोः करे॥ समन्त्रं भाजनं दत्त्वा स पश्येन्मातुलः शिशुम्॥ सालङ्कारं सवस्त्रं च शिशुमालिङ्ग्य सादरम्॥' तत्र मन्त्रः—'रक्ष मां भागिनेय त्वं रक्ष मे सकलं कुल। गृहीत्वा

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भाजनं सान्नं प्रसन्नो भव सर्वदा ॥ निर्विघ्नं कुरु कल्याणं निर्विघ्नां च स्वमातरम् । मय्यात्मानमधिष्ठाप्य चिरं जीव मया सह ॥ एवं कृते विधाने तु विघ्नः कोऽपि न जायते ॥' इति ।

अथ त्रिकप्रसवशान्तिः । शान्तिसर्वस्वे—'सुतत्रये सुता चेत्स्यात्तत्त्रये वा सुतो यदि । मातापित्रोः कुलस्यापि तदानिष्टं महद्भवेत् ॥ ज्येष्ठनाशो धने हानिर्दुःखं वा सुमहद् भवेत् । तत्र शान्तिं प्रकुर्वीत वित्तशाठ्य-विवर्जितः ॥ जातस्यैकादशाहे वा द्वादशाहे शुभे दिने । आचार्यमृत्विजो वृत्वा ग्रहयज्ञपुरःसरम् ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशेन्द्रप्रतिमाः स्वर्णतः कृताः । पूजयेद्धान्यराशिस्थकलशोपरि शक्तितः ॥ पञ्चमे कलशे रुद्रं पूजयेद्रुद्रसं-ख्यया । रुद्रसूक्तानि चत्वारि शान्तिसूक्तानि सर्वशः ॥ द्विज एको जपेद्धो-मकाले शुचिसमाहितः । आचार्यो जुहुयात्तत्र समिदाज्यतिलांश्चरुम् ॥ अष्टोत्तरसहस्रं वा शतं वा त्रिशतं तु वा । देवताभ्यश्चतुर्वक्त्रादिभ्यो ग्रह-पुरःसरम् । ब्रह्मादिमन्त्रैरिन्द्रस्य यत इन्द्र भयामहे । ततः स्विष्टकृतं हुत्वा बलिं पूर्णाहुतिं ततः ॥ अभिषेकं कुटुम्बस्य कृत्वाचार्यं प्रपूजयेत् । हिरण्यं धेनुरेका च ऋत्विजां दक्षिणा ततः ॥ आज्यस्य वीक्षणं कृत्वा शान्तिपाठं तु कारयेत् । प्रतिमा गुरवे दत्त्वा उपस्करसमन्विताः ॥ ब्राह्मणान्भोज-येच्छक्त्या दीनानाथांश्च तर्पयेत् । एवं शान्तिविधानेन सर्वारिष्टं प्रली-यते ॥' इति । अन्येषु मूलाद्यृक्षेषु शान्त्यादि प्रयोगपारिजाते मत्कृते शान्तिरत्ने च ज्ञेयम् ।

मिताक्षरायां मार्कण्डेयः—'रक्षणीया तथा षष्ठी निशा तत्र विशेषतः। रात्रौ जागरणं कार्यं जन्मदानां तथा बलिः ॥ पुरुषाः शस्त्रहस्ताश्च नृत्य-गीतैश्च योषितः । रात्रौ जागरणं कुर्युर्दशम्यां चैव सूतके ॥' व्यासः—सूतिकावासनिलया जन्मदा नाम देवताः । तासां यागनिमित्तं तु शुद्धिर्जन्मनि कीर्तिता ॥ प्रथमे दिवसे षष्ठे दशमे चैव सर्वदा । त्रिष्वेतेषु न कुर्वीत सूतकं पुत्रजन्मनि ॥'अप-रार्के ब्राह्मे—'कन्याश्चतस्रो राकाद्या वातघ्नी चैव पञ्चमी । क्रीडनार्था च

षष्ठीपूजनम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

बालानां षष्ठी च शिशुरक्षिणी ॥ खड्गे तु पूजनीया वै वैश्यैर्व्रात्यैर्द्विजातिभिः ॥' राका, अनुमतिः, सिनीवाली, कुहूरिति चतस्रः कन्या इत्यर्थः ।

अथ दत्तपुत्रपरिग्रहविधिः । परिजाते शौनकः—'अपुत्रो मृतपुत्रो वा पुत्रार्थं समुपोष्य च । वाससी कुण्डले दत्त्वा उष्णीषं चाङ्गुलीयकम्॥ बन्धूनन्नेन संभोज्य ब्राह्मणांश्च विशेषतः । अन्वाधानादि यत्तन्त्रं कृत्वाज्योत्पवनान्तकम् ॥ दातुः समक्षं गत्वा तु पुत्रं देहीति याचयेत् । दाने समर्थो दातास्मै ये यज्ञेनेति पञ्चभिः ॥ देवस्य त्वेति मन्त्रेण हस्ताभ्यां परिगृह्य च ॥ अङ्गादङ्गेत्यृचं जप्त्वा आघ्राय शिशुमूर्धनि ॥ गृहमध्ये तमादाय चरुं हुत्वा विधानतः । यस्त्वा हृदेत्यृचा चैव तुभ्यमग्र ऋचैकया ॥ सोमो दददित्येताभिः प्रत्यृचं पञ्चभिस्तथा । स्विष्टकृदादिहोमं च कृत्वा शेषं समापयेत् ॥' स च—'ब्राह्मणानां सपिण्डेषु कर्तव्यः पुत्रसंग्रहः । तदभावेऽसपिण्डो वा अन्यत्र तु न कारयेत् । मिताक्षरादौ तु व्याहृतिभिराज्येन होम उक्तः । स च होमोत्तरं जलपूर्वकं देयः, न वाङ्मात्रेण । 'व्याहृतिभिर्हुत्वा प्रतिगृह्णीयात्' इति वसिष्ठोक्तेः । 'माता पिता वा दद्यातां यमद्भिः पुत्रमापदि । सदृशं प्रीतिसंयुक्तं स ज्ञेयो दत्रिमः सुतः ॥' इति मनूक्तेः ।

तत्रैव वसिष्ठः—'न त्वेवैकं पुत्रं दद्यात्प्रतिगृह्णीयाद्वा, न स्त्री पुत्रं दद्यात्प्रतिगृह्णीयाद्वा, अन्यत्रानुज्ञायाद् भर्तुः' । इति इदं च भर्तृसत्त्वे । अन्यथा—'दद्यान्माता पिता वा यं स पुत्रो दत्रिमः स्मृतः। इति वत्सव्याससवचोविरोधः स्यात् । दानं प्रतिग्रहोपलक्षणम् । यत्तु समन्त्रकहोमस्य पुत्रप्रतिग्रहाङ्गत्वात् व्याहृत्यादिमन्त्रपाठे च स्त्रीशूद्रयोरनधिकारात् तयोदत्तकः पुत्रो न भवत्येवेति शुद्धिविवेके रुद्रधरेणोक्तम् । वाचस्पतिश्चैवमेवाह । तन्न । भर्तुरनुज्ञया स्त्रिया अपि प्रतिग्रहोक्तेः । यद्यपि मेधातिथिना भार्यात्ववददृष्टरूपं दत्तकत्वं होमसाध्यमुक्तम् । स्त्रियाश्च होमासंभवस्तथापि व्रतादिवाद्विप्रद्वारा होमादि कारयेदिति हरिनाथादयः । संबन्धतत्त्वेऽप्येवम् । एवं शूद्रस्यापि, 'स्त्रीशूद्राश्च सधर्माणः' इति स्मृतेः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अत एव शूद्रकर्तृकहोमो विप्रद्वारैव पराशरेणोक्तः । 'दक्षिणार्थं तु यो विप्रः शूद्रस्य जुहुयाद्धविः । ब्राह्मणस्तु भवेच्छूद्रः शूद्रस्तु ब्राह्मणो भवेत् ॥' अत्र माधवाचार्यः—'यो विप्रः शूद्रदक्षिणामादाय तदीयं हविः शान्तिपुष्ट्यादिसिद्धये वैदिकैर्मन्त्रैर्जुहोति तस्य विप्रस्यैव दोषः । शूद्रस्तु होमफलं लभेतैव' इति व्याचचक्षे ।

दत्तके विशेषः कालिकापुराणे — 'पितुर्गोत्रेण यः पुत्रः संस्कृतः पृथिवीपते । आचूडान्तं न पुत्रः स पुत्रतां याति चान्यतः ॥ चूडोपायनसंस्कारा निजगोत्रेण वै कृताः । दत्ताद्यास्तनयास्ते स्युरन्यथा दास उच्यते ॥ ऊर्ध्वं तु पञ्चमाद्वर्षान्न दत्ताद्याः सुता नृप ॥ गृहीत्वा पञ्चवर्षीयं पुत्रेष्टिं प्रथमं चरेत् ॥' पञ्चमोर्ध्वं तु स्वदानेच्छोरेव दानं, नान्यथा । 'विक्रयं चैव दानं च न नेयाः स्युरनिच्छवः । दाराः पुत्राश्च सर्वस्वमात्मनैव तु योजयेत् ॥' इति हेमाद्रिमाधवधृतव्यासदक्षादिवचनात् । यच्च याज्ञवल्क्यः—'स्वकुटुम्बाविरोधेन देयं दारसुतादृते ।' इति, तदूर्ध्वं स्वदानानिच्छुपुत्रपरम् । तेन सर्वस्वदाने स्वदानेच्छुदारपुत्रदानं सिद्धम् । यत्तु विश्वजिदधिकरणं षष्ठे । तत्र पुत्रादीनां ज्ञातित्वेन स्वशब्दवाच्यत्वात्पुत्रत्वेन दानमाशङ्क्य निराकृतम् । जन्यपुंस्त्वस्य दानेनानिष्पत्तेः । दासत्वेन दानं भवत्येव । तस्माद्यथेष्टविनियोगार्हत्वं स्वत्वं भवत्येव । पुत्रे स्वत्वाभावं वदन् पुत्रक्रयविक्रयादिशुनःशेपविक्रयादिश्रौतलिङ्गाद्दासक्रयविक्रयादिव्यवहारायोगात् मूर्ख एव । योऽपि 'नहि' ग्रभायारणः सुशेवोऽन्योदर्यो मनसा मन्तवा ३' इति श्रुतौ दत्तकनिषेधः, सोऽप्यौरसातिशयार्थः । अन्यथा शुनःशेपादिप्रतिग्रहश्रौतलिङ्गविरोधापत्तेः । 'उपेयां तव पुत्रताम्' इत्युक्तेः । इदं च श्रौतलिङ्गं स्वयंदत्तक्रीतपरं न दत्तकपरं द्वादशविधपुत्रमध्ये 'दत्तात्मा तु स्वयं दत्तः' 'क्रीतश्च ताभ्यां विक्रीतः' इति याज्ञवल्क्येन तयोर्दत्तकाद्भेदोक्तेः । तयोश्च 'दत्तौरसेतरेषां तु पुत्रत्वेन परिग्रहः' इति कलौ निषेधात् । तेन संस्कारोत्तरं दत्तको न भवत्येवेति सिद्धम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ यमलयोः संस्कारक्रमार्थं ज्येष्ठकनिष्ठभाव उच्यते। मनुः—'पुत्रः कनिष्ठो ज्येष्ठायां कनिष्ठायां च पूर्वजः। कथं तयोर्विभागः स्यादिति चेत्संशयो भवेत्॥ सदृशस्त्रीप्रजातानां पुत्राणामविशेषतः। न मातृतो ज्यैष्ठ्यमस्ति जन्मतो ज्यैष्ठ्यमुच्यते॥' तेन कनिष्ठायां पूर्वजात एव ज्येष्ठो न ज्येष्ठायां पश्चाज्जात इत्यर्थः। स एव श्राद्धाधिकारी। 'जन्मज्येष्ठेन चाह्वानं सुब्रह्मण्यास्वपि स्मृतम्। यमयोश्चैव गर्भेषु जन्मतो ज्येष्ठता मता॥' देवलः—'यस्य जातस्य यमयोः पश्यन्ति प्रथमं मुखम्। सन्तानः पितरश्चैव तस्मिन् ज्यैष्ठ्यं प्रतिष्ठितम्॥' भागवते तु—'द्वौ तदा भवतो गर्भौ सूतिर्वेशविपर्ययात्।' इत्युक्तेः पश्चादुत्पन्नस्य ज्यैष्ठ्यमुक्तम्। अत्र देशाचारतो व्यवस्था। पूर्वमेव तु युक्तम्। गर्भाष्टमे' इत्यादौ विशेषनिर्देशे एव गर्भग्रहणं नान्यत्र। अन्यथा तद्वैयर्थ्यात्।

अथ सूतिकास्नानम्। ज्योतिषे—'करेन्द्रभाग्यानिलवासवान्त्यमैत्रेन्दवाश्विध्रुवभेऽह्निपुंसाम्। तिथावरिक्ते शुभमामनन्ति प्रसूतिकास्नानविधिं मुनीन्द्राः॥'

अथ नामकर्म। मदनरत्ने बृहस्पतिः 'द्वादशे दशमे वापि जन्मतोऽपि त्रयोदशे। षोडशे विंशतौ चैव द्वात्रिंशे वर्णतः क्रमात्॥' याज्ञवल्क्यः—'अहन्येकादशे नाम' इति। हेमाद्रौ भविष्ये—'नामधेयं दशम्यां तु द्वादश्यां मासि केचन। अष्टादशेऽहनि तथा वदन्त्यन्ये मनीषिणः॥' दशम्यामतीतायामिति ज्ञेयम्। 'आशौचापगमे नामधेयम्' इति विष्णूक्तेः। गृह्यपरिशिष्टेऽपि—जननाद्दशरात्रे व्युष्टे शतरात्रे संवत्सरे वा नामकरणम्।' व्युष्टे=अतीते। ज्योतिर्निबन्धे गर्गः—'अमासंक्रान्तिविष्ट्यादौ प्राप्तकालेऽपि नाचरेत्॥' श्रीधरः—मित्रादित्यमघोत्तराशतभिषक्स्वातीधनिष्ठाच्युतप्राजेशाश्विशशाङ्कपौष्णदिनकृत्पुष्येषु राशौ स्थिरे। छिद्रां पञ्चदशीं विहाय नवमीं शुद्धेऽष्टमे भार्गवज्ञाचार्यामृतपादभागदिवसे नामानि कुर्याच्छिशोः॥' मनुः—'शर्मान्तं ब्राह्मणस्य स्याद्वर्मान्तं क्षत्रियस्य तु। वैश्यस्य धनसंयुक्तं शूद्रस्य प्रेष्यसंयुतम्॥' मदनरत्ने नारदीये—

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'सूतकान्ते नामकर्म विधेयं स्वकुलोचितम् । नाम पूर्वं तु मासस्य मङ्गलं सुसमाक्षरैः ॥ तत्रैव गार्ग्यः—'मासनाम गुरोर्नाम दद्याद् बालस्य वै पिता ॥' स्मृतिसङ्ग्रहे—'कृष्णोऽनन्तोऽच्युतश्चक्री वैकुण्ठोऽथ जनार्दनः ॥' उपेन्द्रो यज्ञपुरुषो वासुदेवस्तथा हरिः ॥ योगीशः पुण्डरीकाक्षो मासनामान्यनुक्रमात् ॥' अत्र मार्गशीर्षादिश्चैत्रादिर्वा क्रम इति मदनरत्ने । 'तन्मासनाम प्रथमं दद्यात्संबुध्य चैव हि । देवलायगजाश्वानां वृक्षाणां वापिकूपयोः ॥ सर्वापणानां पण्यानां चिह्नार्थं योषितां नृणाम् । काव्यानां च कवीनां च पश्वादीनां च सर्वशः ॥ राजप्रासादवस्तूनां नामकर्म विशिष्यते ॥' नाक्षत्रमपि नाम कार्यम् । 'अभिवादनीयं च समीक्षेत तन्मातापितरौ विद्यातामोपनयनात्' इत्याश्वलायनोक्तेः । 'कुलदेवतानक्षत्रसम्बद्धं पिता नाम कुर्यात्' इति मदनरत्ने शङ्खोक्तेः । तच्च नक्षत्रपादाक्षराद्यक्षरं कुर्यादित्युक्तं परिशिष्टे—'तदक्षरादिकं नाम यस्मिन् धिष्ण्ये यदक्षरम् ।' इति । सुदर्शनभाष्ये तु—'रोरेममृज्येचिषु वृद्धिरादौ ठात्पे च वान्त्यश्रवशाश्वयुक्षु । शेषेषु नाम्नोः कपरः स्वरोऽन्त्यः स्वाप्त्योरदीर्घः सविसर्ग इष्टः ॥' इत्युक्तम् । ठात्पे इति प्रोष्ठपदेत्यत्रादौ ठात्परे च वृद्धिः प्रौष्ठपाद इति । अन्त्यमपभरणीशब्दः श्रुतावुक्तः । तत्र श्रवणादौ च वाऽऽदिवृद्धिः । अपभरः आपभरण इत्यादि । मदनरत्ने वसिष्ठः—जन्माहे द्वादशाहे वा दशाहे विशेषतः । उत्तरारेवतीहस्तमूलपुष्याः सवारुणाः ॥ श्रवाणादितिमैत्रं च स्वाती मृगशिरस्तथा । प्राजापत्यं धनिष्ठा च प्रशस्ता नामकर्मणि ॥'

अथ दोलारोहः । पारिजाते बृहस्पतिः—'दोलारोहस्तु कर्तव्यो दशमे द्वादशेऽपि वा । षोडशे दिवसे वापि द्वाविंशे दिवसेऽपि वा ॥' ज्योतिर्निबन्धे—'करत्रये वैष्णवरेवतीष्वदितिद्वये वाश्विनकध्रुवेषु । कुर्याच्छिशूनां नृपतेश्च तद्वदान्दोलनं वै सुखिनो भवन्ति ॥' तत्रैव—'आन्दोलाशयने पुंसो द्वादशो दिवसः शुभः । त्रयोदशस्तु कन्याया न नक्षत्रविचारणा । अन्यस्मिन्दिवसे चेत्स्यात्तिर्यगास्ये प्रशस्यते ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ दुग्धपानम्। नृसिंहः—'एकत्रिंशद्दिने चैव पयः शङ्खेन पाययेन। अन्नप्राशननक्षत्रे दिवसोदयरात्रिषु ॥'

अथ कर्णवेधः। मदनरत्ने वसिष्ठश्रीधरौ—'मासे षष्ठे सप्तमे वाष्टमे वा वैध्यौ कर्णौ द्वादशे षोडशेऽह्नि। मध्येनाह्नः पूर्वभागे न रात्रौ नक्षत्रे द्वे द्वे तिथी वर्जयित्वा ॥' अत्र जन्ममासो वर्ज्यः। ज्योतिर्निबन्धे गर्गः—'मासे षष्ठे सप्तमे वाप्यष्टमे मासि वत्सरे। कर्णवेधं प्रशंसन्ति पुष्ट्यायुःश्रीविवृद्धये ॥ मदनरत्ने—प्रथमे सप्तमे मासि अष्टमे दशमेऽथवा द्वादशे चतथा कुर्यात्कर्णवेधं शुभावहम् ॥' हेमाद्रौ व्यासः—'कार्तिके पौषमासे वा चैत्रे वा फाल्गुनेऽपि वा। कर्णवेधं प्रशंसन्ति शुक्लपक्षे शुभे दिने ॥' श्रीधरः—'हरिहयकरचित्रासौम्यपौष्णोत्तरार्यादितिवसुषु घटाली सिंहवर्ज्ये सुलग्ने। शशिगुरुबुधकाव्यानां दिने पर्वरिक्तारहिततिथिषु शुद्धे नैधने कर्णवेधः ॥' मदनरत्ने बृहस्पतिः 'द्वितीया दशमी षष्ठी सप्तमी च त्रयोदशी। द्वादशी पञ्चमी शस्ता तृतीया कर्णवेधने ॥ सौवर्णी राजपुत्रस्य राजती विप्रवैश्ययोः। शूद्रस्य चायसी सूची मध्यमाष्टाङ्गुलात्मिका ॥' हेमाद्रौ देवलः—कर्णरन्ध्रे रवेश्छाया न विशेदग्रजन्मनः। तं दृष्ट्वा विलयं यान्ति पुण्यौघाश्च पुरातनाः ॥' शङ्खः—'अङ्गुष्ठमात्रसुषिरौ कर्णौ न भवतो यदि। तस्मै श्राद्धं न दातव्यं दत्तं चेदासुरं भवेत् ॥'

अथ ताम्बूलभक्षणम्। चण्डेश्वरः—'सार्धमासद्वये दद्यात्ताम्बूलं प्रथमं शिशोः। कर्पूरादिकसंमिश्रं विलासाय हिताय च ॥ मूलार्कचित्रकरतिष्यहरीन्द्रभेषु पौष्णे तथा मृगशिरोदितिवासवेषु। अर्केन्दुजीवभृगुबोधनवासरेषु ताम्बूलभक्षणविधिर्मुनिभि प्रदिष्टः ॥'

अथ निष्क्रमणम्। ज्योतिर्निबन्धे—'तृतीये वा चतुर्थे वा मासि निष्क्रमणं भवेत् ॥' यमः—'ततस्तृतीये कर्तव्यं मासि सूर्यस्य दर्शनम्। चतुर्थे मासि कर्तव्यं शिशोश्चन्द्रस्य दर्शनम् ॥' अत्र—'सूर्येन्द्वोः कर्मणी ये च तयोः श्राद्धं न विद्यते। इति छन्दोगपरिशिष्टात् 'छन्दोगानां निष्क्रमणे वृद्धिश्राद्धं नास्ति इति' इति कल्पतरुः। व्यासः—'मैत्रे पुष्यपुनर्वसु-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्रथमभे पौष्णेऽनुकूले विधौ हस्ते चैव सुरेश्वरे च मृगभे तारासु शस्तासु च । कुर्यान्निष्क्रमणं शिशोर्बुधगुरौ शुक्रे विरिक्ते तिथौ कन्याकुम्भतुला-मृगारिभवने सौम्यग्रहालोकिते ।।' मदनरत्ने—'अन्नप्राशनकाले वा कुर्या-निष्क्रमक्रियाम् ।। विष्णुधर्मे—'दिगीशानां दिने तत्र तथा चन्द्रार्कयो-र्द्विजः । पूजनं वासुदेवस्य गगनस्य च कारयेत् ।। बहिर्निष्कासयेत् गेहात् शङ्खपुण्याहनिस्वनैः ।। चन्द्रार्कयोर्दिगीशानां दिशां च गगनस्य च । निक्षे-पार्थमिमं दद्मि ते मे रक्षन्तु सर्वदा ।। अप्रमत्तं प्रमत्तं वा दिवारात्र-मथापि वा । रक्षन्तु सततं सर्वे देवाः शक्रपुरोगमाः ।।' माधवीये मार्क-ण्डेयः—'अग्रतोऽथ प्रविन्यस्य शिल्पभाण्डानि सर्वशः । शस्त्राणि चैव वस्त्राणि ततः पश्येत्तु लक्षणम् । प्रथमं यत्स्पृशेद् बालस्ततो भाण्डं स्वयं तदा । जीविका तस्य बालस्य तेनैव तु भविष्यति ।।' इति ।

अथोपवेशनम् । प्रयोगपारिजाते पाद्मे विष्णुधर्मे च—'पञ्चमे च तथा मासि भूमौ तमुपवेशयेत् । तत्र सर्वे ग्रहाः शस्ता भौमोऽप्यत्र विशे-षतः ।। उत्तरात्रितयं सौम्यं पुष्यर्क्षं शक्रदैवतम् । प्राजापत्यं च हस्तश्च शस्त-माश्विनमित्रभम् ।। वाराहं पूजयेद्देवं पृथिवीं च तथा द्विजः । रक्षैनंवसुधे देवि सदा सर्वगतं शुभे ।। आयुःप्रमाणं सकलं निक्षिपस्व हरिप्रिये । अचिरादायुषस्त्वस्य ये केचित्परिपन्थिनः ।। जीवितारोग्यवित्तेषु निर्द-हस्वाचिरेण तान् । वरेण्याशेषभूतानां माता त्वमसि कामधुक् ।। अजरा चाप्रमेया च सर्वभूतनमस्कृता ।। चराचराणां भूतानां प्रतिष्ठानाव्यया ह्यसि । कुमारं पाहि मातस्त्वं ब्रह्मा तदनुमन्यताम् ।।'

अथान्नप्राशनम् । पारिजाते नारदः—'जन्मतो मासि षष्ठे स्यात्सौरे-णान्नाशनं परम् । तदभावेऽष्टमे मासि नवमे दशमेऽपि वा ।। द्वादशे वापि कुर्वीत प्रथमान्नाशनं परम् । संवत्सरे वा संपूर्णे केचिदिच्छन्ति पण्डिताः ।।' मदनरत्ने लौगाक्षिः—'षष्ठेऽन्नप्राशनं जातेषु दन्तेषु वा' इति । शङ्खः—'संवत्सरेऽन्नप्राशनमर्धसंवत्सरे वा' इति । ज्योतिर्निबन्धे नारदः—षष्ठे वाप्यष्टमे मासि पुंसां स्त्रीणां तु पञ्चमे । सप्तमे मासि वा कार्यं नवान्नप्र-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

शनं शुभम् ॥ रिक्तां दिनत्रयं नन्दां द्वादशोमष्टमीममाम् । त्यक्त्वान्यतिथयः प्रोक्ताः सितजीवज्ञवासराः ॥ चन्द्रवारं प्रशंसन्ति कृष्णे चान्त्यत्रिकं विना ॥' श्रीधरः—'आदित्यतिष्यवसुसौम्यकरानिलाश्विचित्राजविष्णुवरुणोत्तरपौष्णमित्राः । बालान्नभाजनविधौ दशमे विशुद्धे छिद्रां विहाय नवमीं तिथयः शुभाः स्युः ॥' वसिष्ठः—'बालान्नभुक्तौ व्रतबन्धने च राज्ञाभिषेके खलु जन्मधिष्ण्यम् । शुभं त्वनिष्टं सततं विवाहे सीमन्तयात्रादिषु मङ्गलेषु ॥' मार्कंडेयविष्णुधर्मयोः—'ब्रह्माणं शङ्करं विष्णुं चन्द्रार्कौ च दिगीश्वरान् । भुवं दिशश्च संपूज्य हुत्वा वह्नौ तथा चरुम् ॥ देवतापुरतस्तस्य धात्र्युत्सङ्गगतस्य च । अलंकृतस्य दातव्यमन्नं पात्रे सकाञ्चनम् ॥ मध्वाज्यदधिसंयुक्तं प्राशयेत्पायसं तु वा ॥' इति ।

अथाब्दपूर्तिः । व्यवहारनिर्णये—'नवाम्बरो भूत्वा पूजयेच्च चिरायुषम् । मार्कण्डेयं नरो भक्त्या पूजयेत्प्रयतस्तथा ॥ ततो दीर्घायुषं व्यासं रामं द्रौणिं कृपं बलिम् । प्रह्लादं च हनूमन्तं विभीषणमथार्चयेत् ॥ स्वनक्षत्रं जन्मतिथिं प्राप्य संपूजयेन्नरः । षष्ठीं च दधिभक्तेन वर्षे वर्षे पुनः पुनः ॥' तिथितत्त्वे एतन्नामभिस्तिलहोमोऽप्युक्तः । आदित्यपुराणे—'सर्वैश्च जन्मदिवसे स्नानैर्मङ्गलवारिभिः । गुरुदेवाग्निविप्राश्च पूजनीयाः प्रयत्नतः ॥' स्वनक्षत्रं च पितरौ तथा देवः प्रजापतिः । प्रतिसंवत्सरं यत्ना

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्कर्तव्यश्च महोत्सवः ॥' कृत्यचिन्तामणौ--'गुडदुग्धतिलान्दद्याद्धस्ते ग्रन्थौ च बन्धयेत् । गुग्गुलं निम्बसिद्धार्थदूर्वागोरोचनादिकम् ॥ संपूज्य भानुविघ्नेशौ महर्षिं प्रार्थयेदिदम् । चिरंजीवी यथा त्वं भो भविष्यामि तथा मुने ॥ रूपवान् वित्तवांश्चैव श्रिया युक्तश्च सर्वदा । मार्कण्डेय नमस्तेऽस्तु सप्तकल्पान्तजीवन ॥ आयुरारोग्यसिद्ध्यर्थमस्माकं वरदो भव । सतिलं गुडसंमिश्रमञ्जल्यर्धमितं पयः ॥ मार्कण्डेयाद्वरं लब्ध्वा पिबाम्यायुर्विवृद्धये ॥' इति पयः पिबेत् । तिथितत्त्वे स्कान्दे--'खण्डनं नखकेशानां मैथुनाध्वागमौ तथा । आमिषं कलहं हिंसां वर्षवृद्धौ विवर्जयेत् ॥' तत्रैव दीपिकायाम्--'कृतान्तकुजयोर्वारे यस्य जन्मतिथिर्भवेत् । अनृक्षयोगसंप्राप्तौ विघ्नस्तस्य पदे पदे ॥' कृतान्तः=शनिः । 'तस्य सर्वौषधिस्नानं गुरुदेवाग्निपूजनम् ॥' वृद्धमनुः--'मृते जन्मनि संक्रान्तौ श्राद्धे जन्मदिने तथा । अस्पृश्यस्पर्शने चैव न स्नायादुष्णवारिणा ॥' अत्र जन्मतिथिरौदयिकी ग्राह्या । 'युगाद्या वर्षवृद्धिश्च सप्तमी पार्वतीप्रिया । रवेरुदयमीक्षन्ते न तत्र तिथियुग्मता ॥' इति कृत्यतत्त्वार्णववचनात् । विशेषो मत्कृतशूद्रधर्मे ज्ञेयः ।

अथ कटिसूत्रम् । प्रयोगपारिजाते ब्राह्मे--'प्रतिसंवत्सरान्तर्क्षे वक्ष्ये नृणां विधिं परम् । दत्त्वा गोभूहिरण्यादि तथा स्वर्णादिनिर्मितम् ॥ बध्नीयात्कटिसूत्रं च वासः संगृह्य नूतनम् । दूर्वाङ्कुरैरथाज्येन चरुणा वा पिनाकिनम् । आयुष्यहोमं कृत्वा च तर्पयेत्पितृदेवताः ।

अथ चौलम् । प्रयोगपारिजाते षड्गुरुशिष्यः--'जाताधिकाराजन्मादितृतीयेऽब्दे तु चौलकम् । आद्येऽब्दे कुर्वते केचित्पञ्चमेऽब्दे द्वितीयके ॥ उपनीत्या सहैवेति विकल्पाः कुलधर्मतः । बृहस्पतिः--'तृतीयेऽब्दे शिशोर्गर्भाज्जन्मतो वा विशेषतः । पञ्चमे सप्तमे वापि स्त्रियाः पुंसोऽपि वा समम् ॥' तत्रैव नारदः--'जन्मतस्तु तृतीयेऽब्दे श्रेष्ठमिच्छन्ति पण्डिताः । पञ्चमे सप्तमे वापि जन्मतो मध्यमं भवेत् ॥ अधमं गर्भतः स्यात्तु नवमैकादशेऽपि वा ॥' इति । पारिजाते बृहस्पतिः--'उत्तरायणगे सूर्ये विशेषात्सौम्यगोलके । शुक्लपक्षे शुभं प्रोक्तं कृष्णपक्षे शुभेतरत् ॥ अशुभोऽन्त्यत्रिभागः स्यात्कृष्णपक्षे त्रिधाकृते ।' तत्रैव वसिष्ठः--'द्वित्रिपञ्चमसप्तम्यामेकादश्यां तथैव च । दशम्यां च त्रयो-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दश्यां कार्यं क्षौरं विजानता ॥' नृसिंहीये–'षष्ठयष्टमी चतुर्थी च नवमी च चतुर्दशी। द्वादशी दर्शपूर्णे द्वे प्रतिपच्चैव निन्दिताः ॥' वसिष्ठः–'रवेरङ्गारकस्यैव सूर्यपुत्रस्य चैव हि। निन्दिता दिवसाः क्षौरे शेषाः कार्यकराः स्मृताः ॥' ज्योतिर्निबन्धे बृहस्पतिः–'पापग्रहाणां वारादौ विप्राणां शुभदं रवौ। क्षत्रियाणां क्षमासूनौ विट्शूद्राणां शनौ शुभम् ॥ हस्ताश्विविष्णुपौष्णाश्च श्रविष्ठादित्यपुष्यभम्। सौम्यचित्रे नवक्षौरे उत्तमा नव तारकाः ॥ त्रीण्युत्तराणि वायव्यं रोहिणी वारुणं तथा। क्षौरे षण्मध्यमाः प्रोक्ताः शेषा द्वादश गर्हिताः ॥ निधने जन्मनक्षत्रे वैनाशे चन्द्रसेऽष्टमे। विपत्करे वधे क्षौरं प्रत्यरे च विवर्जयेत् ॥' अथ लग्नशुद्धिरन्ये च योगा ज्योतिर्विद्भ्यो ज्ञेयाः। अन्ये च विशेषाः श्मश्रुकर्मनिर्णये वक्ष्यन्ते।

एतच्च शिशोर्मातरि गर्भिण्यां न कार्यम्। तदाह ज्योतिर्निबन्धे मदनरत्ने च वृद्धगार्ग्यः–'पुत्रचूडाकृतौ माता यदि सा गर्भिणी भवेत्। शस्त्रेण मृत्युमाप्नोति तस्मात्क्षौरं विवर्जयेत् ॥' अस्यापवादमाह तत्रैव नारदः–'सूनोर्मातरि गर्भिण्यां चूडाकर्म न कारयेत्। पञ्चाब्दात्प्रागथोर्ध्वं तु गर्भिण्यामपि कारयेत्। यदि गर्भविपत्तिः स्याच्छिशोर्वामरणं यदि। सहोपनीत्या कुर्याच्चेत्तदा दोषो न विद्यते ॥' बृहस्पतिः–'गर्भिण्यां मातरि शिशोः क्षौरकर्म न कारयेत्। व्रताभिषेकेऽप्येवं स्यात्कालो वेदव्रतेष्वपि ॥' अभिषेकः=समावर्तनम्। 'गर्भिण्यामपि पञ्चममासपर्यन्तं न दोष इत्युक्तं मुहूर्तदीपिकायां गर्गेण–'पञ्चममासादूर्ध्वं मातुर्गर्भस्य जायते मृत्युः' इति। मदनरत्ने बृहस्पतिः–'पुत्रचूडाकृतौ माता गर्भिणी यदि वा भवेत्। विपद्यते गुरुस्तत्र दम्पती शिशुरब्दतः ॥ गर्भे मातुः कुमारस्य न कुर्याच्चौलकर्म तु। पञ्चमासादधः कुर्यादत ऊर्ध्वं न कारयेत् ॥' गर्गः–'ज्वरस्योत्पादनं यस्य लग्नं तस्य न कारयेत्। दोषनिर्गमनात्पश्चात्स्वस्थो धर्मं समाचरेत् ॥' लग्नमिति मङ्गलोपलक्षणम्। ज्योतिर्गर्गः–'विवाहोत्सवयज्ञेषु माता यदि रजस्वला। तदा स मृत्युमाप्नोति पञ्चमं दिवसं विना ॥' वसिष्ठः–'यस्य माङ्गलिकं कार्यं तस्य माता रजस्वला।' अर्धं तदेव। तत्रैव बृहस्पतिः–'प्राप्तमभ्युदयश्राद्धं पुत्रसंस्कारकर्मणि। पत्नी रजस्वला चेत्स्यान्न कुर्यात्तत्पिता तदा ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पितेति कर्तृमात्रोपलक्षणम् । संकटे तु **वाक्यसारे** उक्तम्—'अलाभे सुमुहूर्तस्य रजोदोषे ह्युपस्थिते । श्रियं संपूज्य विधिवत्ततो मङ्गलमाचरेत् ॥'

एतच्च मण्डनोत्तरं न कार्यम् । 'न मण्डनाच्चापि हि मुण्डनं च गोत्रैकतायां यदि नाब्दभेदः ।' इति **मदनरत्ने वशिष्ठोक्तेः** । तत्रैव **कात्यायनः**—'कुले ऋतुत्रयादर्वाङ् मण्डनान्न तु मुण्डनम् । प्रवेशान्निर्गमो नेष्टो न कुर्यान्मङ्गलत्रयम् ॥' तथा **वृद्धमनुः**—'एकमातृजयोरेकवत्सरे पुरुषस्त्रियोः । न समानक्रियां कुर्यान्मातृभेदे विधीयते ॥' आशौचे तु **संग्रहे**—'संकटे समनुप्राप्ते सूतके समुपागते । कूष्माण्डीभिर्घृतं हुत्वा गां च दद्यात्पयस्विनीम् ॥ चूडोपनयनोद्वाहप्रतिष्ठादिकमाचरेत् ।' इति । **ज्योतिर्निबन्धे**—'षष्ठेऽब्दे षोडशे वर्षे विवाहाब्दे तथैव च । अन्तर्वत्न्यां च जायायां नेष्यते मुण्डनं क्वचित् ॥' अन्योऽपि विशेषो विवाहप्रकरणे वक्ष्यते । **दीपिकायाम्**—'न चूडा जन्मभाग्नेयदारुणेषु शनौ कुजे । प्रतिपद्भद्ररिक्तासु विद्यारम्भस्तु पञ्चमे ।'

प्रयोगरत्ने—'मध्ये शिरसि चूडा स्याद्वासिष्ठानां तु दक्षिणे । उभयोः पार्श्वयोरत्रिकश्यपानां शिखा मता ॥' माधवीयेऽप्येवम् । **आपस्तम्बस्त्वाह**—'तूष्णीं केशान्विनीय यथर्षि शिखा निदधाति । यथर्षि=प्रवरसंख्यया । तासां मध्यशिखावर्जमुपनयने वपनं कार्यम्, प्रतिदिशं प्रवपति' इत्युपनयने **तेनैवोक्तेः** । 'रिक्तो वा एषो न पिहितो यन्मुण्डस्तस्मै तदपिधानं यच्छिखा' इति **श्रुतेः** । 'विशिखो व्युपवीतश्च यत्करोति न तत्कृतम् ।' इति निषेधाच्च । सत्रे तु वचनात्सशिखं वपनमिति **सुदर्शनभाष्ये उक्तम्** । यत्तु—'कुमारा विशिखा इव' इति **लिङ्गं**, तच्छन्दोगपरम् । **अपरार्के मदनरत्ने च लौगाक्षिः**—'दक्षिणतः कमुञ्जा वसिष्ठानामुभयतोऽत्रिकश्यपानां मुण्डा भृगवः पञ्चचूडा आङ्गिरसो वाजिमेके मङ्गलार्थं शिखिनोऽन्ये यथाकुलधर्मं वा' इति । कमुञ्जा=शिखा । वाजिः=केशपंक्तिः । **स्मृतिदर्पणे**—'एका शिखा दक्षिणतो वसिष्ठगोत्रस्य पञ्चाङ्गिरसो भृगोस्तु । नैका शिखा कश्यपगोत्रजानां शिखोभयत्रापि यथाकुलं च ॥' एतच्छूद्रातिरिक्तविषयम् । 'शूद्रस्यानियताः केशवेशाः' इति **वसिष्ठोक्तेः** । यत्तु **पाद्मे**—'न शिखी नोपवीती स्यान्नोच्चरेत्संस्कृतां गिरम् । इति शूद्रमुपक्रम्योक्तम्, तदसच्छूद्रस्येति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

केचित् । विकल्प इति तु युक्तम् । अत एव हारीतः—'स्त्रीशूद्रौ तु शिखां छित्त्वा क्रोधाद्वै राग्यतोऽपि वा । प्राजापत्यं प्रकुर्यातां निष्कृतिर्नान्यथा भवेत् ॥' एतत्परिग्रहपक्षे । अत्र देशभेदाद्व्यवस्थेति दिक् ।

ज्योतिर्निबन्धे—'नर्मदोत्तरदेशे तु सिंहस्थे देवमन्त्रिणि । शुभकर्म न कुर्वीत निषेधो नास्ति दक्षिणे ॥' अत्र भोजने प्रायश्चित्तमुक्तं पराशरमाधवीये—'निवृत्ते चूडहोमे तु प्राङ् नामकरणात्तथा । चरेत्सांतपनं भुक्त्वा जातकर्मणि चैव हि ॥ अतोऽन्येषु तु संस्कारेषूपवासेन शुद्ध्यति ।' एवं संस्काराः स्त्रीणाममन्त्रकाः कार्याः । होमस्तु समन्त्रक इति प्रयोगपारिजाते । आश्वलायनोऽपि—'होमकृत्यं तु पुंवत्स्यात्स्त्रीणां चूडाकृतावपि ।' इति । मनुरपि—'अमन्त्रिका तु कार्येयं स्त्रीणामावृद-*शेषतः ।' इति । होमोऽप्यमन्त्रक इत्येके । 'संस्काराः स्त्रीणामहोमकास्तूष्णीं स्युः' इति स्मृत्यर्थसारे । होमो नेति वृत्तिकृत् ॥

अथ विद्यारम्भः । मदनरत्ने नृसिंहः—'अक्षरस्वीकृतिं कुर्यात्प्राप्ते पञ्चमहायने । उत्तरायणगे सूर्ये कुम्भमासं विवर्जयेत् ॥' दीपिकायाम्—'वर्षे पर्जन्यके काले षष्ठीं रिक्तां शनिं कुजम् । अनध्यायान्विना नत्वा देवं ग्रन्थकृतं गुरुम् ॥ श्रीधरः—'हस्तादित्यसमीरमित्रपुरजित्पौष्णाश्विचित्राच्युतेष्वारार्क्यंशदिनोदयादिरहिते राशौ स्थिरे चोभये । पक्षे पूर्णनिशाकरे प्रपिपदं रिक्तां विहायाष्टमीं षष्ठीमष्टमशुद्धभाजि भवने प्रोक्ताक्षरस्वीकृतिः ॥' विष्णुधर्मोत्तरे—'पूजयित्वा हरिं लक्ष्मीं तथा देवीं सरस्वतीम् । स्ववेदं सूत्रकारांश्च स्वां विद्यां च विशेषतः ॥ एतेषामेव देवानां नाम्ना तु जुहुयाद्धृतम् । दक्षिणाभिर्द्विजेन्द्राणां कर्तव्यं चात्र पूजनम् ॥' इति ॥

अथ धनुर्विद्या । दीपिकायाम्—'अदितिगुरुयमार्कस्वातिचित्राग्निपित्र्यध्रुवहरिवसुमूलेष्विन्दुभागान्त्यभेषु । शनिशशिबुधवारे विष्णुबोधे विपौषे सुसमयतिथियोगे चापविद्याप्रदानम् ॥'

अथानुपनीतस्य विशेषः । गौतमः—'प्रागुपनयनात्कामचारवादभक्षाः' इति । 'भक्षणं लशुनादेरपि' इति हरदत्तः । अपरार्के वृद्धशातातपः—'शिशोरभ्युक्षणं प्रोक्तं बालस्याचमनं स्मृतम् । रजस्वलादिसंस्पर्शे स्नानमेव कुमारके ॥ प्राक् चूडाकरणाद्बालः प्रागन्नप्राशनाच्छिशुः ।

---

* आवृत्=अनुष्ठानसरणिः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कुमारकस्तु विज्ञेयो यावन्मौञ्जीनिबन्धनम् ॥' आपस्तम्बोऽपि—'अन्नप्राशनात्प्रयतो भवत्यासंवत्सरादित्येके' इति । गौतमोऽपि—'न तदुपस्पर्शनादाशौचम् । तस्यानुपनीतस्य चाण्डालादिस्पृष्टस्यापि स्पर्शान्न स्नानम् । इदं च षष्ठवर्षात्प्राक्, ऊर्ध्वं तु स्नानं भवत्येव ।' 'बालस्य पञ्चमाद्वर्षाद्रक्षार्थं शौचमाचरेत् ।' इति स्मृतेः । कामचारादिकेऽप्येवम् । 'ऊनैकादशवर्षस्य पञ्चवर्षात्परस्य च । चरेद् गुरुः सुहृच्चैव प्रायश्चित्तं विशुद्धये ॥ अतो बालतरस्यास्य नापराधो न पातकम् ।' इति स्मृतेरिति हरदत्तः । स्मृत्यर्थसारेऽप्येवम् ।

अथोपनयनम् । आश्वलायनः--'गर्भाष्टमेऽष्टमे वाब्दे पञ्चमे सप्तमेऽपि वा । द्विजत्वं प्राप्नुयाद्विप्रो वर्षे त्वेकादशे नृपः ॥' मनुः--'ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यं विप्रस्य पञ्चमे । राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्यार्थार्थिनोऽष्टमे ॥' विष्णुः—'षष्ठे तु धनकामस्य विद्याकामस्य सप्तमे । अष्टमे सर्वकामस्य नवमे कान्तिमिच्छतः ॥' आपस्तम्बः—'गर्भाष्टमेषु ब्राह्मणमुपनयीत' बहुवचनं गर्भषष्ठगर्भसप्तमयोः प्राप्त्यर्थमिति सुदर्शनभाष्ये । केचित्तु विप्रस्य षष्ठं न मन्यन्ते । आपस्तम्बः--'अथ काम्यानि, सप्तमे ब्रह्मवर्चसकाममष्टम आयुष्कामं नवमे तेजस्कामं दशमेऽन्नाद्यकाममेकादश इन्द्रियकामं द्वादशे पशुकाममुपनयेत् ।' गौणकालमाह मनुः--'आषोडशाद् ब्राह्मणस्य सावित्री नातिवर्तते । आद्वाविंशात्क्षत्रबन्धोराचतुर्विंशतेर्विशः ॥' ज्योतिर्निबन्धे--'अग्रजा बाहुजा वैश्याः स्वावधेरूर्ध्वमब्दतः । अकृतोपनयाः सर्वे वृषला एव ते स्मृताः ॥'

गर्गः--'विप्रं वसन्ते क्षितिपं निदाघे वैश्यं घनान्ते व्रतिनं विदध्यात् । माघादिशुक्रान्तिकपञ्चमासाः साधारणा वा सकलद्विजानाम् ॥' हेमाद्रौ ज्योतिषे--'माघादिषु च मासेषु मौञ्जी पञ्चसु शस्यते ॥' कालादर्शे वृद्धगार्ग्यः--'माघादिमासषट्के तु मेखलाबन्धनं मतम् । चूडाकरणमन्नं च श्रावणादौ विवर्जयेत् ॥' मैत्रेयसूत्रेऽपि--'वसन्तो ग्रीष्मः शरदित्यृतवो वर्णानुपूर्व्येण माघादिषण्मासा वा सर्ववर्णानामेतदुदगयनमनयोर्विकल्पः' इति । अत्रेदं तत्त्वम्--नात्र वसन्तेनोत्तरायणस्य संकोचः । श्राद्धे दर्शस्यापराह्णविधिनेवाधाने वसन्तादेः कृत्तिकादिनेव सायंप्रातर्विधिना यावज्जीवविधेरिव युक्तः । आद्ययोः परस्परव्यभिचा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

रान्नियमः, अन्त्ये निमित्ते साङ्गकर्मोक्तेः कालापेक्षा। इह तूत्तरायणं विना वसन्तस्याभावान्न नियमः, न वा निमित्तत्वम्। न च 'एकं वृणीते' इतिवदव[1]युत्यानुवादः। तद्वद्वाक्यभेदापरिहारात्। उत्तरायणविधि-वैयर्थ्यात्त्वनुकल्पोऽयमिति। माघ आदिर्येषां पञ्चानाम्, एवं षट्।

पारिजाते बृहस्पतिः—'झषचापकुलीरस्थो जीवोऽप्यशुभगोचरः। अतिशोभनतां दद्याद्विवाहोपनयादिषु ॥' वृत्तशते—'न जन्मधिष्ण्ये न च जन्ममासे न जन्मकालीनदिने विदध्यात्। ज्येष्ठे न मासि प्रथमस्य सूनोस्तथा सुताया अपि मङ्गलानि ॥' राजमार्तण्डः—'जातं दिनं दूषयते वसिष्ठो ह्यष्टौ च गर्गो नियतं दशात्रिः। जातस्य पक्षं किल भागुरिश्च शेषाः प्रशस्ताः खलु जन्ममासि ॥ जन्ममासे तिथौ भे च विपरीतदले सति। कार्यं मङ्गलमित्याहुर्गर्गभार्गवशौनकाः ॥ जन्ममासनिषेधेऽपि दिनानि दश वर्जयेत्। आरभ्य जन्मदिवसाच्छुभाः स्युस्तिथयोऽपरे ॥' ग्रन्थान्तरे—'व्रते जन्मत्रिखारिस्थो जीवोऽपीष्टोऽर्चनात्सकृत्। शुभोऽ-तिकाले तुर्याष्टव्ययस्थो द्विगुणार्चनात् ॥ शुद्धिर्नैव गुरोर्यस्य वर्षे प्राप्तेऽ-ष्टमे यदि। चैत्रे मीनगते भानौ तस्योपनयनं शुभम् ॥ जन्मभादष्टमे सिंहे नीचे वा शत्रुभे गुरौ। मौञ्जीबन्धः शुभः प्रोक्तश्चैत्रे मीनगते रवौ ॥' नारदः—'बालस्य बलहीनोऽपि शान्त्या जीवो बलप्रदः। यथोक्तवत्सरे कार्यमनुक्ते चोपनायनम् ॥' शान्तिश्चाग्रे वक्ष्यते।

ज्योतिर्निबन्धे नृसिंहः—'तृतीया पञ्चमी षष्ठी द्वितीया चापि सप्तमी। पक्षयोरुभयोश्चैव विशेषेण सुपूजिताः ॥ [2]धर्मकामौ सिते पक्षे कृष्णे च प्रथमा तथा। शुक्लत्रयोदशीं केचिदिच्छन्ति मुनयस्तथा ॥' टोडरानन्दे वसिष्ठः—'नैमित्तिकमनध्यायं कृष्णे च प्रतिपद्दिनम्। मेखलाबन्धने शस्तं चौले वेदव्रतेष्वपि ॥ प्रशस्ता प्रतिपत्कृष्णे न पूर्वा परसंयुता ॥' एतदतीतकालस्यार्तस्य बटोरुपनयनविषयम्। 'प्रशस्ता प्रतिपत्कृष्णे कदाचिच्छुभगे विधौ। चन्द्रे बलयुते लग्ने वर्षाणामपि लङ्घने ॥' इति व्यासोक्ते—रित्याहुः। एवं सप्तम्यपि, तस्या गलग्रह-त्वोक्तेः।

बृहस्पतिः—'शुक्लपक्षः शुभः प्रोक्तः कृष्णश्चान्त्यत्रिकं विना ॥' तथा—'मिथुने संस्थिते भानौ ज्येष्ठमासो न दोषकृत् ॥' मदनरत्ने नारदः—

१—'अवयुत्य=पृथक्कृत्य'। २—धर्मकामौ=दशमीत्रयोदश्यौ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'विनर्तुना वसन्तेन कृष्णपक्षे गलग्रहे । अपराह्णे चोपनीतः पुनःसंस्कारमर्हति ॥' [1]अपराह्णस्त्रेधाविभक्तदिनतृतीयांश इत्युक्तं तत्रैव । वसन्ते गलग्रहो न दोषायेत्यर्थः । **नारदः**—'कृष्णपक्षे चतुर्थी च सप्तम्यादिदिनत्रयम् । त्रयोदशीचतुष्कं च अष्टावेते गलग्रहाः ॥' **वसिष्ठः**—'पापांशकगते चन्द्रे अरिनीचस्थितेऽपि च । अनध्याये चोपनीतः पुनःसंस्कारमर्हति ॥ अनध्यायस्य पूर्वेद्युस्तस्य चैवापरेऽहनि । व्रतबन्धं विसर्गं च विद्यारम्भं न कारयेत् ॥' **राजमार्तण्डः**—'आरम्भानन्तरं यत्र प्रत्यारम्भो न सिध्यति । गर्गादिमुनयः सर्वे तमेवाहुर्गलग्रहम् ॥' **ज्योतिर्निबन्धे**—'अष्टकासु च सर्वासु युगमन्वन्तरादिषु । अनध्यायं प्रकुर्वीत तथा सोपपदास्वपि ॥' **सोपपदास्तु स्मृत्यर्थसारे**—'सिता ज्येष्ठे द्वितीया च आश्विने दशमी सिता । चतुर्थी द्वादशी माघे एताः सोपपदाः स्मृताः ॥' एवं प्रदोषदिनं वर्ज्यम् । **प्रदोष**—स्वरूपमाह **गोभिलः**—'षष्ठी च द्वादशी चैव अर्धरात्रोननाडिका । प्रदोषमिह कुर्वीत तृतीया तूनयामिका ॥' **ज्योतिर्निबन्धे व्यासः**—'या चैत्रवैशाखसिता तृतीया माघस्य सप्तम्यथ फाल्गुनस्य । कृष्णे द्वितीयोपनये प्रशस्ता प्रोक्ता भरद्वाजमुनीन्द्रमुख्यैः ॥' अत्रापि कृष्णप्रतिपद्वज्ज्ञेयम् । यत्तु **बृहद्गार्ग्यः**—'अनध्याये प्रकुर्वीत यस्तु नैमित्तिको भवेत् । सप्तमी माघशुक्ले तु तृतीया चाक्षया तथा । बुधत्रयेन्दुवाराश्च शस्तानि व्रतबन्धने ॥' इति तत्प्रायश्चित्तार्थोपनयनविषयम् । 'स्वाध्यायवियुजो घस्राः कृष्णप्रतिपदादयः । प्रायश्चित्तनिमित्ते तु मेखलाबन्धने मताः ॥' इति तेनैवोक्तेरिति **निर्णयामृतकालादर्शौ** । यद्यपि 'अथोपेतपूर्वस्य' इत्युक्त्वा 'अनिरुक्तं परिदानं कालश्च' इत्या**श्वलायनेन** पुनरुपनयने कालनियम उक्तस्तथापि निमित्तान्तरमेव सः । तदानीमकरणे तु पूर्वोक्तकालो ज्ञेयः प्रतिवेदमुपनयने कालानियम इति तु युक्तम् । **गर्गः**—'ग्रहे रवीन्द्वोरवनिप्रकम्पे केतूद्गमोल्कापतनादिदोषे । व्रते दशाहानि वदन्ति तज्ज्ञास्त्रयोदशाहानि वदन्ति केचित् ॥' संकटे तु **चण्डेश्वरः**—'दाहे दिशां चैव धराप्रकम्पे वज्रप्रपातेऽथ विदारणे च । केतौ तथोल्कांशुकणप्रपाते त्र्यहं न कुर्याद्व्रतमङ्गलानि ॥'

१—तथा चोक्तं स्कान्दे—"उर्ध्वं सूर्योदयात् पूर्वं मुहूर्तानां तु पञ्चकम् । पूर्वाह्णः प्रथमः प्रोक्तो मध्याह्नस्तु ततः परम् । अपराह्णस्ततः प्रोक्तो मुहूर्तानां तु पञ्चकम् ॥"

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तत्रैव–'वेदव्रतोपनयने स्वाध्यायाध्ययने तथा। न दोषो यजुषां सोपपदास्वध्ययनेऽपि च ॥'

हेमाद्रौ ज्योतिषे–'हस्तत्रये पुष्यधनिष्ठयोश्च पौष्णाश्विसौम्यादितिविष्णुभेषु। शस्ते तिथौ चन्द्रबलेन युक्ते कार्यौ द्विजानां व्रतबन्धमोक्षौ ॥' ज्योतिर्निबन्धे नारदः–'श्रेष्ठान्यर्कत्रयान्त्येज्यचन्द्रादित्युत्तराणि च। विष्णुत्रयाश्विमित्राब्जयोनिभान्युपनायने ॥' बृहस्पतिः'त्रिषूत्तरेषु रोहिण्यां हस्ते मैत्रे च वासवे। त्वाष्ट्रे सौम्यपुनर्वस्वोरुत्तमं ह्युपनायनम् ॥' ज्योतिर्निबन्धे–'पूर्वाहस्तत्रये सार्पश्रुतिमूलेषु बह्वृचाम्। यजुषां पौष्णमैत्रार्कादित्यपुष्यमृदुध्रुवैः ॥ सामगानां हरीशार्कवसुपुष्योत्तराश्विभैः। धनिष्ठादितिमैत्रार्के ष्विन्दुपौष्णेष्वथर्वणाम् ॥' राजमार्तण्डस्तु ब्राह्मणस्य पुनर्वसुं निषेधति। 'ताराचन्द्रानुकूलेषु ग्रहाब्देषु शुभेष्वपि। पुनर्वसौ कृतो विप्रः पुनःसंस्कारमर्हति ॥'

ज्योतिर्निबन्धे नारदः–'सर्वेषां जीवशुक्रज्ञवाराः प्रोक्ता व्रते शुभाः। चन्द्रार्कौ मध्यमौ ज्ञेयौ सामबाहुजयोः कुजः ॥ शाखाधिपतिवारश्च शाखाधिपबलं तथा। शाखाधिपतिलग्नं च दुर्लभं त्रितयं व्रते ॥' शाखाधिपाश्च रत्नसंग्रहे–'ऋगथर्वसामयजुषामधिपा गुरुसौम्यभौमसिताः। जीवसितौ विप्राणां, क्षत्रस्यारोष्णगू, विशां चन्द्रः ॥' इति। पारिजाते बृहस्पतिः–'बह्वृचानां गुरोर्वारे यजुर्वेदजुषां कवेः। सामगानां धरासूनोरथर्वविदुषां रवेः ॥' अत्र लग्नशुद्ध्यादि दैवज्ञेभ्यो ज्ञेयम्। विस्तरभयान्नोच्यते।

लल्लः–'व्रतेऽह्नि पूर्वसंध्यायां वारिदो यदि गर्जति। तद्दिने स्यादनध्यायो व्रतं तत्र विवर्जयेत् ॥' ज्योतिर्निबन्धे–'नान्दीश्राद्धं कृतं चेत्स्यादनध्यायस्त्वकालिकः। तदोपनयनं कार्यं वेदारम्भं न कारयेत् ॥' एतद्बह्वृचातिरिक्तानाम्। तेषां तद्दिने वेदारम्भाभावात्। अतस्तेषामुपनयनं न भवत्येव। ऐतरेयोपनिषदि–'मृगादिज्येष्ठान्तं वर्षर्तुः, तं विना वर्षादौ त्रिरात्रमनध्यायः' इति वेदभाष्ये उक्तम्। 'एतच्च प्रातः स्तनिते, सायं स्तनिते तु दिवैव चरु श्रपयित्वा सायं संध्योत्तरं होमं कुर्यात्।' 'न संध्यागर्जिते काले न वृष्ट्युत्पातदूषिते। ब्रह्मौदनं पचेदग्नौ पक्वं चेन्न

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

निवर्तते । ब्रह्मौदनं पचेदग्नौ पक्वमन्नं न दुष्यति ।' इति **संग्रहोक्तेः** । इति **प्रयोगरत्ने भट्टचरणाः** ।

गर्जितादि-शान्तिः ।

अत्र शान्तिरप्युक्ता **नृसिंहप्रसादे**--'ब्रह्मौदनविधेः पूर्वं प्रदोषे गर्जितं यदि । तदा विघ्नकरं ज्ञेयं बटोरध्ययनस्य तत् ।। तस्य शान्तिप्रकारं तु वक्ष्ये शास्त्रानुसारतः । प्रधानं पायसं साज्यं द्रव्यं शान्तियजौ भवेत् ।। सूक्तं बृहस्पतेर्विद्वान्पठेत्प्रज्ञाविवृद्धये । गायत्री चैव मन्त्रः स्यात्प्रायश्चित्तं तु सर्पिषा ।। धेनुं सवत्सकां दद्यादाचार्याय पयस्विनीम् । ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्ततो ब्रह्मौदनं चरेत् ।।'

उपनयने चाधिकारिणो माधवीये वृद्धमनुनोक्ताः--'पिता पितामहो भ्राता ज्ञातयो गोत्रजाग्रजाः । उपायनेऽधिकारी स्यात्पूर्वाभावे परः परः ।।' **प्रयोगरत्ने**--'पितैवोपनयेत्पुत्रं तदभावे पितुः पिता । तदभावे पितुर्भ्राता तदभावे तु सोदरः ।।' पितेति विप्रपरं न क्षत्रियादेः । तेषां पुरोहित एव, उपनयनस्य दृष्टार्थत्वात् । तेषां चाध्यापनेऽनधिकारात् । अत्र पितृव्यस्य ज्येष्ठभ्रात्रभावेऽधिकारः । 'असंस्कृतास्तु संस्कार्या भ्रातृभिः पूर्वसंस्कृतैः' इति **याज्ञवल्क्योक्तेः** । तेनेदमविभक्तपरम्, पूर्वं तु विभक्तपरम् । मातू रजोदोषे तु प्रागुक्तम् ।

अथ षण्ढमूकादीनां विशेषः । **प्रयोगपारिजाते ब्राह्मे**--'ब्राह्मण्यां ब्राह्मणाज्जातो ब्राह्मणः स इति श्रुतिः । तस्माच्च षण्ढबधिरकुब्जवामनपङ्गुषु ।। जडगद्गदरोगार्तशुष्काङ्गविकलाङ्गिषु । मत्तोन्मत्तेषु मूकेषु शयनस्थे निरिन्द्रिये ।। ध्वस्तपुंस्त्वेषु चैतेषु संस्काराः स्युर्यथोचितम् । मत्तोन्मत्तौ न संस्कार्याविति केचित्प्रचक्षते ।। कर्मस्वनधिकाराच्च पातित्यं नास्ति चैतयोः। तदपत्यं च संस्कार्यमपरे त्वाहुरन्यथा ।। संस्कारमन्त्रहोमादीन्करोत्याचार्य एव तु । उपनेयांश्च विधिवदाचार्यस्य समीपतः ।। आनीयाग्निसमीपं वा सावित्रीं स्पृश्य वा जपेत् । कन्यास्वीकरणादन्यत्सर्वं विप्रेण कारयेत् ।। एवमेव द्विजैर्जातौ संस्कार्यौ कुण्डगोलकौ ।।' इति । **स्मृत्यर्थसारेऽप्येवम्** कुण्डगोलकयोः संस्कार्यत्वं श्राद्धे निषेधश्च क्षेत्रजपुत्रविषयः । अन्यस्य 'विप्रास्वेष विधिः स्मृतः' इति वचनात् अब्राह्मण्येनोपनयनाद्यप्राप्तेरित्यपरार्कः ।

उपनयनं च कुमारं भोजयित्वा कार्यम् । 'प्रागेवैनं तदहर्भोजयन्ति'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

इति **मदनपारिजाते गोभिलोक्तेः**। गायत्र्युपदेशश्चोत्तरतोऽग्नेः कार्यः। 'उत्तरेणाग्निमुपविशतः प्राङ् मुख आचार्यः प्रत्यङ् मुख इतरोऽधीहि भोः' इति **शाङ्खायनसूत्रोक्तेः**। यद्यपि **कात्यायनेन**—'अथास्मै सावित्रीमन्वाहोत्तरतोऽग्नेः प्रत्यङ् मुखाय' इत्युक्त्वा—'दक्षिणतस्तिष्ठत आसीनाय वैके' इति विकल्प उक्तः, तथापि **कातीयानामेव** सः। बह्वृचानां तूत्तर एव वेदैक्यात्। भिक्षायां विशेषमाह **कात्यायनः**—'मातरमेवाग्रे भिक्षेत। **पराशरमाधवीये**—'मातरं वा स्वसारं वा मातुर्वा भगिनीं निजाम्। भिक्षेत भिक्षां प्रथमं या चैनं न विमानयेत् ॥'

अथ संस्कारलोपे शौनकः—'आरभ्याधानमाचौलात्कालेऽतीते तु कर्मणाम्। व्याहृत्याग्निं तु संस्कृत्य हुत्वा कर्म यथाक्रमम् ॥ एतेष्वेकैकलोपे तु पादकृच्छ्रं समाचरेत्। चूडायामर्धकृच्छ्रं स्यादापदि त्वेवमीरितम् ॥ अनापदि तु सर्वत्र द्विगुणं द्विगुणं चरेत् ॥' **पारिजाते कात्यायनः**—'लुप्ते कर्मणि सर्वत्र प्रायश्चित्तं विधीयते। प्रायश्चित्ते कृते पश्चाल्लुप्तं कर्म समाचरेत् ॥' **स्मृत्यर्थसारे** चैवम्। **कारिकायां** तु—'प्रायश्चित्ते कृतेऽतीतं लुप्तं कर्म कृताकृतम्' इत्युक्तम्। 'प्रायश्चित्ते कृते पश्चादतीतमपि कर्म वै। कार्यमित्येक आचार्या नेत्यन्ये तु विपश्चितः ॥' इति। **त्रिकाण्डमण्डने** तु—'कालातीतेषु कार्येषु प्राप्तवत्स्वपरेषु च। कालातीतानि कृत्वैव विदध्यादुत्तराणि तु ॥' तत्र सर्वेषां तन्त्रेण नान्दीश्राद्धं कुर्यात्, देशकालकर्त्रैक्यात्। 'गणशः क्रियमाणानां मातॄणां पूजनं सकृत्। सकृदेव भवेच्छ्राद्धमादौ न पृथगादिषु ॥' इति **छन्दोगपरिशिष्टात्**। एतद्बहूनामपत्यानां युगपत्संस्कारकरणविषयमिति **बोपदेवः**। अतीतसंस्काराणां युगपत्करण **इत्यन्ये**। तत्रापि चौलस्योपनीत्या सहेति पक्षे उपनीतिदिन एवानुष्ठानं न पूर्वदिने, सहत्वस्य दिवसैक्ये सन्निकृष्टतरत्वात्। वृद्धाचारोऽप्येवम् ॥

उपनीतिदिने मध्याह्नसंध्यामाह **पारिजाते जैमिनिः**—'यावद्ब्रह्मोपदेशस्तु तावत्संध्यादिकं च न। ततो मध्याह्नसंध्यादि सर्वं कर्म समाचरेत् ॥' इति। ब्रह्म=गायत्री। यत्तु वचनम्—'उपायने तु कर्तव्यं सायंसंध्ये उपासनम्। आरभेद् ब्रह्मयज्ञं तु मध्याह्ने तु परेऽहनि ॥' इति, तच्छाखान्तरविषयमिति **पारिजातः**। विकल्प इति युक्तं पश्यामः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

उपनयनाग्निस्त्रिरात्रं धार्यः, 'त्र्यहमेतमग्निं धारयन्ति' इत्यापस्तम्बोक्तेः। **बौधायनसूत्रे** तु सदा धारणमप्युक्तम्-'उपनयनादिरग्निस्तमौपासनमित्याचक्षते, पाणिग्रहणादित्येके, नित्यो धार्योऽनुगतो निर्मन्थ्यः' इति। इदं जातारणिपक्षे। अन्यथा मन्थनासंभवात्॥ ब्रह्मयज्ञे विशेषमाह तत्रैव **जैमिनिः**--'अनुपाकृतवेदस्य कर्तव्यो ब्रह्मयज्ञकः। वेदस्थाने तु सावित्री गृह्यते तत्समा यतः॥' इति। येषां तद्दिन एव वेदारम्भस्तेषां नेदमिति दिक्।

अथ **ब्रह्मचारिधर्माः**। **याज्ञवल्क्यः**-'मधुमांसाञ्जनोच्छिष्टशुक्तस्त्रीप्राणिहिंसनम्। भास्करालोकनाश्लीलपरिवादादि वर्जयेत्॥' **मनुः**-'अभ्यङ्गमञ्जनं चाक्ष्णोरुपानच्छत्रधारणम्।' वर्जयेदिति प्रकृतम्। **पारिजाते कौर्मे**-'नादर्शं चैव वीक्षेत नाचरेद्दन्तधावनम्। गुरूच्छिष्टं भेषजार्थं प्रयुञ्जीत, न कामतः॥' एतन्निषिद्धमध्वादिविषयम्, अन्यस्य, गुरूच्छिष्टस्य सर्वदा प्राप्तेः। 'स चेद्व्याधीयीत कामं गुरोरुच्छिष्टं भेषजार्थं सर्वं प्राश्नीयात्।' इति **वसिष्ठोक्तेः**। ज्येष्ठभ्रातुरित्यपि ज्ञेयम्। 'पितुर्ज्येष्ठस्य च भ्रातुरुच्छिष्टं भोज्यम्' **इत्यापस्तम्बोक्तेः**। **गुरुपुत्रे तु स्मृत्यन्तरे उक्तम्**-'गुरुवद् गुरुपुत्रः स्यादन्यत्रोच्छिष्टभोजनात्॥' **प्रचेताः**-'ताम्बूलाभ्यञ्जनं चैव कांस्यपात्रे च भोजनम्। यतिश्च ब्रह्मचारी च विधवा च विवर्जयेत्॥'

यमः-'मेखलामजिनं दण्डमुपवीतं च नित्यशः। कौपीनं कटिसूत्रं च ब्रह्मचारी तु धारयेत्॥ अग्नीन्धनं भैक्ष्यचर्यामधःशय्यां गुरोर्हितम्॥' कुर्यादिति शेषः।

मेखलामाहाश्वलायनः-'तेषां मेखला मौञ्जी ब्राह्मणस्य धनुर्ज्या क्षत्रियस्यावी वैश्यस्य' इति। **आचार्यः**-'त्रिवृता मेखला कार्या त्रिवारं स्यात्समावृता। तद्ग्रन्थयस्त्रयः कार्याः पञ्च वा सप्त वा पुनः॥' **मनुः**--'मौञ्जी त्रिवृत्समा श्लक्ष्णा कार्या विप्रस्य मेखला। त्रिवृता ग्रन्थिनैकेन त्रिभिः पञ्चभिरेव वा॥ मौञ्ज्यभावे तु कर्तव्याः कुशाश्मन्तकबल्वजैः॥' अत्र प्रवरसंख्यानियम इति **वृद्धाः**।

अथ दण्डाः, मनुः--'ब्राह्मणो बैल्वपालाशौ क्षत्रियो वाटखादिरौ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पैप्पलौदुम्बरौ वैश्यो दण्डानर्हन्ति धर्मतः ॥' एषामभावे **गौतमः**--'यज्ञियो वा सर्वेषां मूर्धललाटनासाप्रमाणः' इति ॥

अजिनमाहाश्वलायनः--'अहतेन वाससा संवीतमैणेयेन वाऽजिनेन ब्राह्मणं रौरवेण क्षत्रियमाजेन वैश्यम्' इति। यद्यप्यैणेयशब्देन मृगीचर्मैवोच्यते 'एण्या ढञ्' इति **पाणिनिस्मृतेः**, 'ऐणेयमेण्याश्चर्माद्यमेणस्यैणमुभे त्रिषु।' इति **अमरकोशाच्च**। तथापि 'कृष्णरुरुबस्तान्यजिनानि' इति **शङ्खोक्तेः**, 'सर्वेषां वा रौरवम्' इति **यमोक्तेश्च**। मृगचर्मणा सह विकल्पो ज्ञेयः। वस्त्राजिनयोस्तु विकल्पः। 'कार्पासं वाऽविकृतम्' इति **गौतमोक्तेः**॥

अथ यज्ञोपवीतम्। **मनुः**--'कार्पासमुपवीतं स्याद्विप्रस्योर्ध्ववृतं त्रिवृत्॥' **पारिजाते देवलः**--'कार्पासक्षौमगोवालशणवल्वतृणादिकम्। यथासंभवतो धार्यमुपवीतं द्विजातिभिः॥ शुचौ देशे शुचिः सूत्रं संहताङ्गुलिमूलके। आवर्त्य षण्णवत्या तत्त्रिगुणीकृत्य यत्नतः॥ अब्लिङ्गकैस्त्रिभिः सम्यक् प्रक्षाल्योर्ध्ववृतं त्रिवृत्। अप्रदक्षिणमावृत्य सावित्र्या त्रिगुणीकृतम्॥ ततः प्रदक्षिणावर्तं समं स्यान्नवसूत्रकम्। त्रिरावेष्ट्य दृढं बद्ध्वा ब्रह्मविष्णवीश्वरान्नमेत्॥' तन्नवतन्तु कार्यम्। 'सावित्र्या त्रिगुणं कुर्यान्नवसूत्रं तु तद्भवेत्।' इति **तेनैवोक्तेः**। **छन्दोगपरिशिष्टे**--'त्रिवृदूर्ध्ववृतं कार्यं तन्तुत्रयमधोवृतम्। त्रिवृतं चोपवीतं स्यात्तस्यैको ग्रन्थिरिष्यते॥' ऊर्ध्ववृतं दक्षिणं करमूर्ध्वं कृत्वा वलितम्। **भृगुः**--'वामावर्तवलितं त्रिगुणं कृत्वा दक्षिणावर्तवलितं त्रिगुणं कार्यम्।' स एकस्तन्तुरेवं त्रितन्तुकमित्यर्थः। **कात्यायनः**--'पृष्ठदेशे च नाभ्यां च धृतं यद्विन्दते कटिम्। तद्धार्यमुपवीतं स्यान्नातिलम्बं न चोच्छ्रितम्॥' **वसिष्ठः**--'नाभेरूर्ध्वमनायुष्यमधो नाभेस्तपःक्षयः। तस्मान्नाभिसमं कुर्यादुपवीतं विचक्षणः॥' **पारिजाते देवलः**--'उपवीतं बटोरेकं द्वे तथेतरयोः स्मृते। एकमेव यतीनां स्यादिति शास्त्रस्य निश्चयः॥' **स एव**--'बहूनि वायुष्कामस्य'। तत्र मन्त्रमाह **स एव**--'यज्ञोपवीतमिति वा व्याहृत्या वापि धारयेत्॥' **हेमाद्रौ**--'यज्ञोपवीते द्वे धार्ये श्रौते स्मार्ते च कर्मणि। तृतीयमुत्तरीयार्थे वस्त्राभावे तदिष्यते॥' **देवलः**--'सावित्र्या दशकृत्वोऽद्भिर्मन्त्रिताभिस्तदुक्षयेत्। विच्छिन्नं चाप्यधो यातं भुक्त्वा निर्मि-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तमुत्सृजेत् ॥' **मनुः**--'मेखलामजिनं दण्डमुपवीतं कमण्डलुम्। अप्सु प्रास्य विनष्टानि गृहीतान्यानि मन्त्रतः ॥'

अथैतल्लोपे प्रायश्चित्तम् । **मनुः**--'अकृत्वा भैक्ष्यचरणमसमिध्य च पावकम् । अनातुरः सप्तरात्रमवकीर्णिव्रतं चरेत् ॥' अमत्या आपदि त्यागे तु **याज्ञवल्क्यः**--'भैक्ष्याग्निकार्ये त्यक्त्वा तु सप्तरात्रमनातुरः । कामावकीर्ण इत्याभ्यां जुहुयादाहुतिद्वयम् ॥ उपस्थानं ततः कुर्यात्समासिञ्चन्त्वनेन तु ।' मन्त्रास्तु **मिताक्षरायां** ज्ञेयाः । सकृल्लोपे तु **ऋग्विधाने**--'मानस्तोके जपेन्मन्त्रं शतसंख्यं शिवालये । अग्निकार्यं विना भुक्तौ न पापं ब्रह्मचारिणः ॥'**स्मृत्यर्थसारे** तु संध्याग्निकार्यलोपे स्नात्वाष्टसहस्रं जपः । भिक्षालोपेऽष्टशतम् । अभ्यासे द्विगुणं पुनःसंस्कारश्चेत्युक्तम् ॥ **अपरार्के संवर्तः**--'यः संध्यां चैव नोपास्ते अग्निकार्यं यथाविधि । गायत्र्यष्टसहस्रं तु जपेत्स्नात्वा समाहितः ॥'

अग्निकार्यं संध्याद्वये कार्यम् । 'अग्निकार्यं ततः कुर्यात्संध्ययोरुभयोरपि' इति **याज्ञवल्क्योक्तेः** । सायमेव वा, 'सायमेव वाग्निमिन्धीतेत्येके' इति **लौगाक्षिणोक्तेः** । **पारिजाते वृद्धशातातपः**-- 'ब्रह्मचारी तु योऽश्नीयान्मधु मांसं तथैव च । प्राजापत्यं चरेत्कृच्छ्रं व्रतशेषं समापयेत् ॥' **ऋग्विधाने**--'तं वो धिया जपेन्मन्त्रं लक्षं चैव शिवालये । ब्रह्मचारी स्वधर्मेषु न्यूनं चेत्पूर्णमेति तत् ॥'

स्त्रीसङ्गे तु मनुः--'अवकीर्णी तु काणेन गर्दभेन चतुष्पथे । स्थालीपाकविधानेन यजेद्वै निर्ऋतिं निशि ॥' विस्तरस्तु **मिताक्षरादौ** ज्ञेयः । **उपवीतनाशे तु हारीतः**--'मनोव्रतपतीभिश्चतस्र आज्याहुतीर्हुत्वा पुनः प्रतीयात् ।' तत्रैव **मरीचिः**--'ब्रह्मसूत्रं विना भुङ्क्ते विण्मूत्रे कुरुतेऽथ वा। गायत्र्यष्टसहस्रेण प्राणायामेन शुद्ध्यति ॥'

मनुः--'भोःशब्दं कीर्तयेदन्ते स्वस्य नाम्नोऽभिवादने । आयुष्मान् भव सौम्येति वाच्यो विप्रोऽभिवादने । अकारश्चास्य नाम्नोऽन्ते वाच्यः पूर्वाक्षरः प्लुतः ॥' शर्मन्निति नकारात्पूर्व इत्यर्थः । अभिवादनप्रत्यभिवादनादौ विशेषः **स्मृत्यर्थसारे पारिजातादौ ज्ञेयः** । **यमः**--'ज्यायानपि कनीयांसं संध्यायामभिवादयेत् । विना शिष्यं च पुत्रं च दौहित्रं दुहितुः पतिम् ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ **पुनरुपनयनम् पारिजाते शातातपः**--'लशुनं गृञ्जनं जग्ध्वा पलाण्डुं च तथा शुनः। उष्ट्रमानुषकेभाश्वरासभीक्षीरभोजनात्॥ उपायनं पुनः कुर्यात्तप्तकृच्छ्रं चरेन्मुहुः॥' इति **हेमाद्रौ वृद्धमनुः**--'जीवन्यदि समागच्छेद्धृतकुम्भे निमज्य च। उद्धृत्य स्नापयित्वास्य जातकर्मादि कारयेत्॥' तत्रैव **पाद्मे**--'प्रेतशय्याप्रतिग्राही पुनःसंस्कारमर्हति।' **चन्द्रिकायां बौधायनः**--'सिन्धुसौवीरसौराष्ट्रांस्तथा प्रत्यन्तवासिनः। अङ्गवङ्गकलिङ्गान्ध्रान् गत्वा संस्कारमर्हति॥' **हेमाद्रौ प्रायश्चित्तकाण्डे वृद्धगौतमः**--'खरमुष्ट्रं च महिषमनड्वाहमजं तथा। बस्तमारुह्य मुखजः क्रोशे चान्द्रं विनिर्दिशेत्॥' **मार्कण्डेयः**--'खरमारुह्य विप्रस्तु योजनं यदि गच्छति। तप्तकृच्छ्रत्रयं प्रोक्तं शरीरस्य विशोधनम्॥ पुनर्जन्म प्रकुर्वीत घृतगर्भविधानतः॥ **मदनरत्ने मिताक्षरायां च** स्नानमात्रमुक्तम्। **मनुः**--'अज्ञानात्प्राश्य विण्मूत्रं सुरासंसृष्टमेव च। पुनःसंस्कारमर्हन्ति त्रयो वर्णा द्विजातयः॥' **मिताक्षरायां पराशरः**--'यः प्रत्यवसितो विप्रः प्रव्रज्यातो विनिर्गतः। अनाशकनिवृत्तश्च गार्हस्थ्यं चेच्चिकीर्षति॥ स चरेत्त्रीणि कृच्छ्राणि त्रीणि चान्द्रायणानि च। जातकर्मादिभिः सर्वैः संस्कृतः शुद्धिमाप्नुयात्॥

बौधायनसूत्रे--'अथोपनीतस्य व्रतानि भवन्ति,--नान्यस्योच्छिष्टं भुञ्जीतान्यत्र पितृज्येष्ठाभ्यां, न स्त्रिया सह भुञ्जीत, मधुमांसश्राद्धसूतकान्नानि, दशाहसंधिनीक्षीरं, छत्राकनिर्यासौ, विलापनं, गणान्नं, गणिकान्नमिति। एतेषु पुनःसंस्कारः।' प्रतिषिद्धदेशगमनमित्येके। अथाप्युदाहरन्ति--'सुराष्ट्रसिन्धुसौवीरमवन्तीं दक्षिणापथम्। एतानि ब्राह्मणो गत्वा पुनःसंस्कारमर्हति॥' अथ पुनःसंस्कारं व्याख्यास्यामो देवयजनप्रभृत्याग्निमुखात्कृत्वा पालाशीं समिधमाज्येनाङ्क्त्वाभ्याधाय वाचयति'--पुनस्त्वादित्या रुद्रा वसवः० कामाः स्वाहा' इति। अथ व्रात्यप्रायश्चित्तो जुहोति यन्म आत्मनो मिन्दाभूत्० पुनरग्निश्चक्षुरदादिति द्वाभ्यामथ पक्वाज्जुहोति--'सप्त ते अग्ने समिधः सप्त जिह्वाः सप्त० घृतेन स्वाहा' इत्यथाज्याहुतीरुपजुहोति--'येन देवाः पवित्रेण०' इति तिसृभिरनुच्छन्दसं स्विष्टकृत्प्रभृति सिद्धमाधेनुवरदानादथापरमा परिदानात्कृत्वा पालाशीं समिधमाधायाथ व्रात्यप्रायश्चित्तो जुहोत्यथ व्याहृती-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

र्जुहोति । अथापरो ब्राह्मणवचनादेव सावित्र्या शतकृत्वो घृतमभिमंत्र्य प्राश्य कृतप्रायश्चित्तो भवति । गुरोर्वाप्युच्छिष्टं भुञ्जीत । अथाप्युदाहरन्ति--'वपनं दक्षिणादानं मेखलादण्डमजिनभैक्ष्यचर्याव्रतानि च निवर्तन्ते पुनःसंस्कारकर्मणि' इति ।

आश्वलायनगृह्येऽपि–'अथोपेतपूर्वस्य' इत्यादिना पुनःसंस्कार उक्तः । तथा पित्रादिव्यतिरेकेण ब्रह्मचारिणः प्रेतकर्मकरणे पुनरुपनयनमित्य**परार्कादयः** । **त्रिस्थलीसेतौ**–'कर्मनाशाजलस्पर्शात्करतोयाविलङ्घनात् । गण्डकीबाहुतरणात्पुनःसंस्कारमर्हति ॥' **गौडास्तु**–'करतोयाजलस्पर्शात्कर्मनाशाविलङ्घनात् ।' इति पठन्ति । तन्न । दानधर्मेषु करतोयास्नाने प्राशस्त्योक्तेः । करतोये सदानीरे सरिच्छ्रेष्ठेऽतिविश्रुते । आप्लावयसि पौराणां पापं हरकरोद्भवे ॥' इति **स्मृतिदर्पणचन्द्रिकालिखितस्नानमन्त्राच्च** । **पराशरः**–'अजिनं मेखला दण्डो भैक्ष्यचर्या व्रतानि च । निवर्तन्ते द्विजातीनां पुनःसंस्कारकर्मणि ॥' **हरदत्तस्तु**–'य एकं वेदमधीत्यान्यं वेदमध्येतुमिच्छति तस्य पुनरुपनयनम्, तेन प्रतिवेदमुपनयनं कर्तव्यम्' इत्याह । अन्ये नैतन्मन्यन्ते । 'सर्वेभ्यो वै वेदेभ्यः सावित्र्यनूच्यते' **इत्यापस्तम्बोक्तेः** ।

तद्विधिः कारिकायाम्–'वेदान्तरमधीत्यैव ऋग्वेदं ये त्वधीयते । उपनीतिरियं तेषामलंकरणवर्जिता ॥ यद्वैतदुपनीतस्य प्रायश्चित्तं यदा भवेत् । कृताकृतं च वपनं मेधाजननमेव च ॥ मेधाजननसद्भावे व्रतचर्या भवेदिह । अनुप्रवचनीयश्च तदभावे द्वयं न हि ॥ परिदानं न कार्यं स्यान्निमित्तानन्तरं त्विदम् । पूर्वस्या वाचयेत्स्थाने तत्सवितुर्वृणीमहे ॥' इति । यत्तु **हारीतः**–'द्विविधाः स्त्रियो ब्रह्मवादिन्यः सद्यो वध्वश्च । तत्र ब्रह्मवादिनीनामुपनयनमग्नीन्धनं वेदाध्ययनं स्वगृहे च भैक्ष्यचर्या' इति, 'सद्यो वधूनामुपनयनं कृत्वा विवाहः कार्यः' तद्युगान्तरविषयम् । 'पुराकल्पेषु नारीणां मौञ्जीबन्धनमिष्यते । अध्यापनं च वेदानां सावित्रीवाचनं तथा ।' इति **यमोक्तेः** ।

अथानध्यायाः । **पारिजाते बृहस्पतिः**–'प्रतिपत्सु चतुर्दश्यामष्टम्यां पर्वणोर्द्वयोः । श्वोऽनध्यायेऽद्य शर्वर्यां नाधीयीत कदाचन ॥' **नारदः**–'अयने विषुवे चैव शयने बोधने हरेः । अनध्यायस्तु कर्तव्यो

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मन्वादिषु युगादिषु ॥' **निर्णयामृते**–'चातुर्मास्यद्वितीयासु मन्वादिषु युगादिषु। अनध्यायस्तु कर्तव्यो या च सोपपदा तिथिः ॥' **गर्गः**–'शुचावूर्जे तपस्ये च या द्वितीया विधुक्षये। चातुर्मास्यद्वितीयास्ताः प्रवदन्ति मनीषिणः ॥' **स्मृत्यर्थसारेऽपि**–'आषाढीकार्तिकीफाल्गुनीसमीपस्थद्वितीयासु च' इति। **मनुः**–'उपाकर्मणि चोत्सर्गे त्रिरात्रं क्षपणं स्मृतम्। अष्टकासु त्वहोरात्रमृत्वन्तासु च रात्रिषु ॥' इति। उत्सर्गे तु–'मनूक्तपक्षिण्यहोरात्राभ्यां त्र्यहस्य विकल्पः' इति **विज्ञानेश्वरः**। अष्टकाशब्देन सप्तम्यादि त्रयं ज्ञेयम्। 'तिस्रोऽष्टकास्त्रिरात्रमन्त्यामेके' इति **गौतमोक्तेः**। 'ऋत्वन्तास्विति सौरऋत्वन्तासु, चान्द्रान्तस्य पर्वत्वेनैव निषेधसिद्धेः इति **सर्वज्ञनारायणः**। एते नित्याः।

नैमित्तिकानप्याह **याज्ञवल्क्यः**–'त्र्यहं प्रेतेष्वनध्यायः शिष्यर्त्विग्गुरुबन्धुषु। उपाकर्मणि चोत्सर्गे स्वशाखाश्रोत्रिये तथा ॥ संध्यागर्जितनिर्घातभूकम्पोल्कानिपातने। समाप्य वेदं द्युनिशमारण्यकमधीत्य च ॥ पञ्चदश्यां चतुर्दश्यामष्टम्यां राहुसूतके। ऋतुसंधिषु भुक्त्वा वा श्राद्धिकं प्रतिगृह्य च ॥ पशुमण्डूकनकुलश्वाहिमार्जारमूषकैः। कृतेऽन्तरे त्वहोरात्रं शक्रपाते तथोच्छ्रये ॥' ग्रहणे द्युनिशोक्तावपि ग्रस्तास्ते त्र्यहमित्युक्तं प्राक्।

स्मृत्यर्थसारे तु–रात्रौ तु ग्रहे तिस्रो रात्रीः, दिवा च त्र्यहम्।' इत्युक्तम्। ऋतुः = सौरः। भुक्त्वेत्युत्सवविषयम्। 'ऊर्ध्वं भोजनादुत्सवे' इति **गौतमोक्तेः**। श्राद्धिकं महैकोद्दिष्टभिन्नम्। तत्र तु त्र्यहमिति **मनुः**। **स्मृत्यर्थसारे चैवम्**। यत्तु–'पश्चाद्यन्तराये त्र्यहमुपवासो विप्रवासश्च' इति **गौतमोक्तं**, तत् प्रथमाध्ययने।

याज्ञवल्क्यः–'श्वक्रोष्टृगर्दभोलूकसामबाणार्तनिःस्वने। अमेध्यशवशूद्रान्त्यश्मशानपतितान्तिके ॥ देशेऽशुचावात्मनि च विद्युत्स्तनितसंप्लवे। भुक्त्वार्द्रपाणिरम्भोन्तरर्धरात्रेऽतिमारुते ॥ पांसुप्रवर्षे दिग्दाहे संध्यानीहारभीतिषु। धावतः पूतिगन्धे च शिष्टे च गृहमागते ॥ खरोष्ट्रयानहस्त्यश्वनौवृक्षगिरिरोहणे। सप्तत्रिंशदनध्यायानेतांस्तात्कालिकान्विदुः ॥' बाणो=वंशः। शततन्तुर्वीणेति **हरदत्तः**। अमेध्याः=सूतिकादयः। स्तनितं=गर्जः। वर्षातोऽन्यत्र गर्जवृष्टिविद्युतां यौगपद्ये आकालिकः, वर्षासु तात्कालिक इति **नारायणः**। संध्यागर्जे तु **हारीतः**–

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'सायंसंध्यास्तनिते रात्रिः, प्रातःसंध्यास्तनितेऽहोरात्रं, रात्रौ विद्युत्यपररात्र्यवधिः ।' विद्युति नक्तं चापररात्रात्' इति गौतमोक्तेः । 'तृतीयदिनांशोत्तरं तु विद्युति सर्वरात्रम्' इत्याह स एव । त्रिभागादिप्रवृत्तौ सर्वमिति, अर्धरात्रे मध्ययामद्वयमिति विज्ञानेश्वरः । मध्यदण्डचतुष्टय इति निर्णयामृते । मनुः—'न विवादे न कलहे न सेनायां न सङ्गरे । न भुक्तमात्रे नाजीर्णे न वमित्वा न सूतके ॥ रुधिरे च स्रुते गात्राच्छस्त्रेण च परिक्षते ॥' कौर्मे—'श्लेष्मातकस्य छायायां शाल्मलेर्मधुकस्य च । कदाचिदपि नाध्येयं कोविदारकपित्थयोः ॥' मनुः—'शयानः प्रौढपादश्च कृत्वा चैवावसक्थिकाम् । नाधीयीतामिषं जग्ध्वा सूतकान्नाद्यमेव च ॥' प्रौढपादः=पादोपरि पाददाता, आसनारूढपादो वेति हरदत्तः । सोपपदास्वपि प्रागुक्तम् । स्मृत्यर्थसारे—'श्रवणद्वादशीमहाभरण्योः प्रेतद्वितीयायां रथसप्तम्याभाकाशे शवदर्शने चाहोरात्रम् । असपिण्डे गुरौ मृते त्रिरात्रम् । आचार्ये उपाध्याये च पक्षिणी, आचार्यभार्यापुत्रशिष्येष्वहोरात्रम् । अभ्युत्पातेन गोविप्रमृतौ त्रिरात्रम् । अयने विषुवे च पक्षिणी, अकालवृष्टौ च । आरण्यमार्जारसर्पनकुलपञ्जनखादेरन्तरागमने त्रिरात्रम् । आरण्यश्वश्रृगालादि वानररजकादौ द्वादशरात्रम् । खरावराहोष्ट्रचाण्डालसूतिकोदक्याशवादौ मासम् । गोगवयाजानास्तिकादौ त्रिमासम् । शशमेषश्वपाकादौ षण्मासम् । गजगण्डसारससिंहव्याघ्रमहापापिकृतघ्नादावब्दमनध्यायः । शोभनदिने चानध्यायः । विवाहप्रतिष्ठोद्यापनादिष्वासमाप्तेः सगोत्राणामनध्यायः । 'उदयेऽस्तमये वापि मुहूर्तत्रयगामि यत् । तद्दिनं तदहोरात्रं चानध्यायविदो विदुः ॥ केचिदाहुः क्वचिद्देशे यावत्तद्दिननाडिकाः । तावदेव त्वनध्यायो न तन्मिश्रे दिनान्तरे ॥'

प्रदोषं त्वाह प्रजापतिः—'षष्ठी च द्वादशी चैव अर्धरात्रोननाडिका । प्रदोषे न त्वधीयीत तृतीया नवनाडिका ॥' निर्णयामृते गर्गः—'रात्रौ यामद्वयादर्वाक् सप्तमी वा त्रयोदशी । प्रदोषः स तु विज्ञेयः सर्वविद्याविगर्हितः ॥ रात्रौ नवसु नाडीषु चतुर्थी यदि दृश्यते । प्रदोषः स तु विज्ञेयः सर्वविद्याविगर्हितः ॥' कौर्मे—'अनध्यायस्तु नाङ्गेषु नेतिहासपुराणयोः । न धर्मशास्त्रेष्वन्येषु पर्वण्येतानि वर्जयेत् ॥' शौनकः—'नित्ये जपे च काम्ये च क्रतौ पारायणेऽपि च । नानध्यायोऽस्ति वेदानां ग्रहणे ग्राहणे स्मृतः ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

इत्यनध्यायाः ।

अथ महानाम्न्यादिव्रतम् । श्रीधरः–'तिथिनक्षत्रवारांशवर्गोदयनिरीक्षणम् । चौलवत्सर्वमाख्यातं सगोदानव्रतेषु च ॥' एषां लोपे शौनकः–'व्रतानि विधिना कृत्वा स्वशाखाध्ययनं चरेत् । अकृत्वाभ्यस्यते येन स पापी विधिघातकः ॥ प्रत्येकं कृच्छ्रमेकैकं चरित्वाज्याहुतीः शतम् । हुत्वा चैव तु गायत्र्या स्नायादित्याह शौनकः ॥' स्मृत्यर्थसारे तु–'त्रीन्षड् द्वादश वा कृच्छ्रान्कृत्वा पुनर्व्रतं चरेत्' इत्युक्तम् ।

अथ समावर्तनम् । सुरेश्वरः–'भौमभानुजयोर्वारे नक्षत्रे च व्रतोदिते । ताराचन्द्रविशुद्धौ च स्यात्समावर्तनक्रिया ॥' बौधायनसूत्रे तु–रोहिण्यां तिष्ये उत्तरयोः फल्गुन्योर्हस्ते चित्रायामैन्द्रे विशाखायां वा स्नायात्' इत्युक्तम् । वसिष्ठः–'स्नानं मध्याह्नकाले तु होरायां कारयेच्छुभम् । पूर्वाह्णे तदभावे तु कुर्यात्स्नानं यथाविधि ॥' 'सर्व ऋतवो विवाहस्य' इति सूत्रात् यदा दक्षिणायने विवाहस्तदा समावर्तनमपि तत्रैव । अन्यथोदगयने समावर्तने 'अनाश्रमी न तिष्ठेत' इति विरोधः स्यादित्युक्तं सुदर्शनभाष्ये । एतच्च ब्रह्मचारिव्रतलोपप्रायश्चित्तं कृत्वा कार्यम् । तदाह बौधायनः–'शौचसंध्यादर्भभिक्षाग्निकार्यराहित्यकौपीनोपवीतमेखलादण्डाजिनाधारणदिवास्वापच्छत्रपादुकास्रग्विधारणाङ्गोद्वर्तनानुलेपनाञ्जनद्यूतनृत्यगीतवाद्याभिरतौ ब्रह्मचारी कृच्छ्रत्रयं चरेत्, महाव्याहृतिहोमं पाहित्रयोदशहोमं च कुर्यात् ।' समावर्तनोत्तरं पूर्वमृतानां त्रिरात्रमाशौचं कार्यम् । 'आदिष्टी नोदकं कुर्यादा व्रतस्य समापनात् । समाप्ते तूदकं दत्त्वा त्रिरात्रमशुचिर्भवेत् ॥' इति मनूक्तेः । आदिष्टी ब्रह्मचारीति विज्ञानेश्वरः । ब्रह्मचर्ये यदि कश्चिन्न मृतस्तदा त्रिरात्रमध्ये विवाहः कार्योऽन्यथा नेति सिध्यति । जनने तु सत्यपि न त्रिरात्रम्, तत्रातिक्रान्ताशौचाभावादुदकं दत्त्वेति वचनाच्चेति दिक् । तत्रापि विकल्पः । 'पितर्यपि मृते नैषां दोषो भवति कर्हिचित् । आशौचं कर्मणोऽन्ते स्यात्र्यहं वा ब्रह्मचारिणाम् ॥' इति छन्दोगपरिशिष्टात् ।

स्नातकव्रतान्याह व्यासः–'यज्ञोपवीतद्वितयं सोदकं च कमण्डलुम् । छत्रं चोष्णीषममलं पादुके चाप्युपानहौ ॥ रौक्मे च कुण्डले वेदः कृत्तकेशनखः शुचिः ॥' वेदो=दर्भबटुः । मनुः–'उपानहौ च

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वासश्च धृतमन्यैर्न धारयेत् । उपवीतमलंकारं स्रजं करकमेव च ॥' अन्यान्यपि बह्वृचगृह्यस्मृत्यादिभ्यो ज्ञेयानि ।

अथ छुरिकाबन्धः । ज्योतिर्निबन्धे नारदः—'छुरिकाबन्धनं वक्ष्ये नृपाणां प्राक् करग्रहात् । विवाहोक्तेषु मासेषु शुक्लपक्षेऽप्यनस्तगे ॥ जीवे शुक्रे च भूपुत्रे चन्द्रताराबलान्विते । मौञ्जीबन्धर्क्षतिथिषु कुजवर्जितवासरे ॥' संग्रहे—'शूद्राणां राजपुत्राणां मौञ्ज्यभावेऽस्त्रबन्धनम् । मौञ्जीबन्धोक्ततिथ्यादौ कार्यं भौमदिनं विना ॥'

अथ विवाहः । याज्ञवल्क्यः—'अविप्लुतब्रह्मचर्यो लक्षण्यां स्त्रियमुद्वहेत् । अनन्यपूर्विकां कान्तामसपिण्डां यवीयसीम् ॥ अरोगिणीं भ्रातृमतीमसमानार्षगोत्रजाम् ॥ लक्षण्यां बाह्याभ्यन्तरलक्षणैर्युक्ताम् । बाह्यानि **काशीखण्डादौ** प्रसिद्धानि । आन्तराण्**याश्वलायनो**क्तानि 'अष्टौ पिण्डान्कृत्वा' इत्यादीनि ।

मनुः—'असपिण्डा च या मातुरसगोत्रा च या पितुः । साप्रशस्ता द्विजातीनां दारकर्मणि मैथुने ॥' दत्त्रिममातुर्गृहीता असपिण्डा सगोत्रा । तत्कुलनिवृत्तये चकारान्मातुरसगोत्रा दत्तस्य पितुर्जनककुले पितुरसगोत्रापि सपिण्डत्वान्निषिद्धेत्यन्यश्चकारः । असपिण्डा=सापिण्ड्यरहिताम् । तच्चैकशरीरावयवान्वयेन भवति । एकस्य हि पितुर्मातुर्वा शरीरस्यावयवाः पुत्रपौत्रादिषु साक्षात्परम्परया वा शुक्रशोणितादिरूपेणानुस्यूताः ।

(सापिण्ड्यनिर्णयः ।)

यद्यपि पत्न्याः पत्या सह भ्रातृपत्नीनां च परस्परं नैतत्संभवति, तथापि आधारत्वेनैकशरीरावयवान्वयोऽस्त्येव । 'अस्थिभिरस्थीनि' इति **मन्त्रलिङ्गात्** । एकस्य हि पितृशरीरस्यावयवाः पुत्रद्वारा तास्वाहिता इति **मदनरत्नपारिजातविज्ञानेश्वर** दय । **वाचस्पतिशुद्धिविवेकशूलपाण्यादिगौडमैथिलादयो**ऽप्येवम् । **श्रुतावपि**—'एतत्षाट्कौशिकं शरीरं त्रीणि पितृतस्त्रीणि मातृतोऽस्थिस्नायुमज्जानः पितृतस्त्वङ्मांसरुधिराणि मातृतः' इति, 'प्रजामनु प्रजायसे' इति च ।

चन्द्रिकाऽपरार्कमेधातिथिमाधवादयस्तु एकपिण्डदानक्रियान्वयित्वं सापिण्ड्यम् । 'लेपभाजश्चतुर्थाद्याः पित्राद्याः पिण्डभागिनः । पिण्डदः सप्तमस्तेषां सापिण्ड्यं साप्तपौरुषम् ॥' इति **मात्स्योक्तेः** । न च पितृ-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

व्यादिष्वेतन्नास्तीति वाच्यम्। तत्कर्तृकश्राद्धे देवतैक्येन तत्सत्त्वात्। देवदत्तकर्तृकश्राद्धे हि ये देवताभूतास्तेषां मध्ये यः कश्चिदन्यकर्तृकश्राद्धेऽनुप्रविशति तेषां सापिण्ड्यम्। तद्भार्याणामपि भर्तृकर्तृकश्राद्धे सहाधिकारित्वेन तदन्वयात्। 'एकत्वं सा गता भर्तुः पिण्डे गोत्रे च सूतके।' इति स्मृतेश्च। श्रुतीनां च वैराग्यार्थत्वात्तस्य सापिण्ड्यनिमित्तत्वे मानाभावात्। न च मातुलादिष्वेतन्नास्तीति वाच्यम्। मातामहरूपदेवतैक्यात्। ननु गुरुशिष्यादेरपि श्राद्धदेवतात्वात्सपिण्डत्वं स्यात्। किं बहुना। 'सर्वाभावे तु नृपतिः कारयेत्तस्य रिक्थतः।' इति मार्कण्डेयपुराणाद्राज्ञोऽपि श्राद्धकर्तृत्वात्सापिण्ड्यप्रसङ्गः। सत्यम्। पञ्चमात्सप्तमादूर्ध्वं मातृतः पितृतस्तथा।' इति याज्ञवल्क्यवचनेन मातापितृसंबन्ध एव तत्सत्त्वात्। ऊर्ध्वं 'सापिण्ड्यं निवर्तत' इति शेषः। ननु पञ्चमत्वाद्यत्र नियम्यते, न मातृत इत्यादि, वाक्यभेदात्। मैवम्। मातृकुले पञ्चमत्वस्य पितृकुले सप्तमत्वस्य च बोधने तुल्यत्वात्। पौरुषेयत्वाददोष इति चेत् तुल्यमन्यत्रापि, अन्यकर्तृके राज्ञस्तत्पितॄणां वा देवतात्वाभावाच्च। किंच अवयवान्वयपक्षे यथा योगरूढ्या परिहारस्तथेहापि। तेन मातृकुले पितृकुले चैकपिण्डदानक्रियान्वयित्वं सापिण्ड्यमित्याहुः। तेनैकस्य पित्रादयः षट् पुत्रादयश्च षट् सपिण्डा भवन्ति।

अत्र केचिदुभयतः सापिण्ड्यनिवृत्तावेवोद्वाहो नान्यथेत्याहुः। शुद्धिचिन्तामणिवाचस्पतिहरदत्तादयस्तु सगोत्रत्ववत्सापिण्ड्यस्य सप्रतियोगिकत्वेन संयोगवदुभयनिरूप्यत्वात् एकतो निवृत्तावन्यतो निवृत्तेरावश्यकत्वान्मूलपुरुषमारभ्याष्टमो वरो मूलपुरुषमारभ्य द्वितीयातृतीयादिकां कन्यामुद्वहेदित्याहुः। शिष्टास्तु न वधूवरयोः स्वतः सापिण्ड्यं, किंतु, कूटस्थसंततित्वात्तत्सापिण्ड्येनैव। अतोऽष्टमवरं प्रति कन्याया असापिण्ड्येऽपि कन्यायाः कूटस्थेन सापिण्ड्यात्तत्संततिस्थत्वाद्वरस्तां प्रति सपिण्ड एवेत्यविवाहः। सापिण्ड्यासापिण्ड्ययोः प्रतियोगिभेदेनाविरोधादित्याहुः। इदमेव च युक्तम्। आशौचेऽप्येवं सापिण्ड्यं ज्ञेयम्। यत्र तु मध्ये विच्छिन्नमपि सापिण्ड्यं मण्डूकप्लुतिवत्पुनरनुवर्तते। यथा कूटस्थात्पञ्चम्योः कन्ययोः पुत्रौ तत्र निवृत्तिः, तदपत्ययोस्त्वनुवृत्तिस्तत्रापि न सापिण्ड्यासापिण्ड्ययोर्दोषः, संबन्धिभेदात्। तेन तत्र न विवाहः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अत्र कूटस्थमारभ्य गणना कार्या। तदुक्तम्–'वध्वा वरस्य वा तातः कूटस्थाद्यदि सप्तमः। पञ्चमी चेत्तयोर्माता तत्सापिण्ड्यं निवर्तते ॥' इति। कूटस्थो=मूलपुरुषः। विश्वरूपनिबन्धे–'एवमुक्तप्रकारेण पितृबन्धुषु सप्तमात्। ऊर्ध्वमेव विवाह्यत्वं पञ्चमान्मातृबन्धुतः। संतानो भिद्यते यस्मात्पूर्वजादुभयत्र च। तमादाय गणेद्धीमान्वरं यावच्च कन्यकाम् ॥' स्मृतितत्त्वे नारदः–'आ सप्तमात्पञ्चमाच्च बन्धुभ्यः पितृमातृतः। अविवाह्या सगोत्रा च समानप्रवरा तथा ॥' अत्र बन्धुभ्य इति पञ्चमीनिर्देशात्पितुः पितृष्वसृपुत्रात्सप्तमीं, मातुः पितृष्वसृपुत्राच्च पञ्चमीमपि त्यजेत्। एवमन्यबन्धुषु ज्ञेयम्। तत्रापि त्रिगोत्रात्ययेऽर्वागपि विवाहं कुर्यात्। वक्ष्यमाणवचनात्। त्रिगोत्रगणना च मातामहगोत्रापेक्षया नतु स्वापेक्षया। अन्यथा पितुः पितामहदुहितुर्दौहित्रीपुत्री परिणेया स्यात्। वध्वाः मातामहगोत्रापेक्षया तु त्रिगोत्रान्तर्गतेन विवाहप्रसङ्ग इति संबन्धतत्त्वादयो गौडग्रन्थाः। संबन्धविवेके शूलपाणिरप्याह। पञ्चमात्सप्तमाच्चार्वागपि त्रिगोत्रान्तरिता विवाह्या। 'असंबद्धा भवेन्मातुः पिण्डेनैवोदकेन वा। सा विवाह्या द्विजातीनां त्रिगोत्रान्तरिता च या ॥' इति बृहन्मनूक्तेः। 'सन्निकर्षेऽपि कर्तव्यं त्रिगोत्रात्परतो यदि।' इति देवलोक्तेश्चेति। एतच्च दाक्षिणात्या न मन्यन्ते। यत्तु वसिष्ठः–'पञ्चमीं सप्तमीं चैव मातृतः पितृतस्तथा। इति, यच्च विष्णुपुराणम्–'पञ्चमीं मातृपक्षाच्च पितृपक्षाच्च सप्तमीम्। गृहस्थ उद्वहेत्कन्यां न्याय्येन विधिना नृप।' इति, तत् पञ्चमीं सप्तमीमतीत्येति व्याख्येयम्। 'पञ्चमे सप्तमे चैव येषां वैवाहिकी क्रिया। क्रियापरा अपि हि ते पतिताः शूद्रतां गताः ॥' इत्यपरार्के मरीचिवचनात्। हारलतायां शङ्खलिखितौ–'सपिण्डता तु सर्वेषां गोत्रतः साप्तपौरुषी। पिण्डश्चोदकदानं च आशौचं च तदानुगम् ॥' गोत्रं=संतानम्। आशौचं तानभिव्याप्य गच्छतीत्यर्थः।

शुद्धिविवेके शुद्धिचिन्तामणौ च ब्राह्मे–सर्वेषामेव वर्णानां विज्ञेया साप्तपौरुषी। सपिण्डता ततः पश्चात्समानोदकधर्मता ॥ ततः कालवशात्तत्र विस्मृतौ नामगोत्रतः। समानोदकसंज्ञा तु तावन्मात्रापि नश्यति ॥' सप्तोर्ध्वं त्रयः सोदकाः, ततो गोत्रजाः। तत्रैव ब्राह्मे–

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'अविभक्तधनास्त्वेते सपिण्डाः परिकीर्तिताः ॥' तेनाविभक्तधनाभावे विभक्तः सपिण्डो धनहारी, नान्यथेत्यर्थः। तेन विवाहे आशौचे धनग्रहणे च त्रिधा सापिण्ड्यं सिद्धम्। यत्तु–'पञ्चमीं मातृतः परिहरेत्सप्तमीं पितृतस्त्रीन्मातृतः, पञ्च पितृतो वा' इति **पैठीनसिस्मृतौ** 'त्रीनित्यनुकल्प' इति **माधवोक्तेः**, 'पञ्चमीं सप्तमीं चैव मातृतः पितृतस्तथा। दशभिः पुरुषैः ख्याताच्छ्रोत्रियाणां महाकुलात् ॥ उद्वहेत्सप्तमादूर्ध्वं तदभावे तु सप्तमीम्। पञ्चमीं तदभावे तु पितृपक्षेऽप्ययं विधिः ॥ सप्तमीं च तथा षष्ठीं पञ्चमीं च तथैव च। एवमुद्वाहयेत्कन्यां न दोषः शाकटायनः ॥ तृतीयां वा चतुर्थीं वा पक्षयोरुभयोरपि। विवाहयेन्मनुः प्राह पाराशर्योऽङ्गिरा यमः ॥ यस्तु देशानुरूपेण कुलमार्गेण चोद्वहेत्। नित्यं स व्यवहार्यः स्याद्वेदाच्चैतत्प्रदृश्यते ॥' इति **चतुर्विंशतिमतात्**, 'चतुर्थीमुद्वहेत्कन्यां चतुर्थः पञ्चमोऽपि वा। पराशरमते षष्ठीं पञ्चमो न तु पञ्चमीम् ॥' इति **पराशरोक्तेश्चा**नुकल्पत्वेनापदि पञ्चम्यादिपरिणयनं कार्यमिति प्रतीयते। अत्र हि तदभावे इति स्पष्टमेवानुकल्पत्वमुक्तम्, तन्न यथाश्रुतं ज्ञेयम्। पूर्वोक्त**मरीचि**वचोविरोधात्। वस्तुनि विकल्पासंभवात्। 'पञ्चमात्सप्तमाद्धीनान्यः कन्यामुद्वहेद्द्विजः। गुरुतल्पी स विज्ञेयः सगोत्रां चैवमुद्वहन् ॥' इति **विष्णूक्तेः**। पराशरस्य मूलाभावाच्च। तस्मान्**मदनपारिजाता**द्युक्तदिशा दत्तकसापत्नसंबन्धाद्यनुप्रवेशे ब्राह्मणादीनां क्षत्रियादिसपिण्डविषये वा पूर्वोक्तानि नेयानि, न त्वनुकल्प इति भ्रमितव्यम्।

यत्तु **स्मृतिचन्द्रिकामाधवादय** आहुः–'तृतीये संगच्छावहै, चतुर्थे संगच्छावहै' इति **शतपथश्रुतेः**, 'तृप्तां जुहुर्मातुलस्येव योषा भागस्ते पैतृष्वसेयी वपामिव' इति, 'गर्भे नु नौ जनिता दम्पतीकः' इति च **मन्त्रवर्णात्**, 'मातृस्वसृसुतां केचित्पितृष्वसृसुतां तथा। विवहन्ति क्वचिद्देशे संकोच्यापि सपिण्डताम् ॥' इति **शातातपोक्तेश्च** मातुलकन्योद्वाहः कार्यः। यद्यपि पितृष्वसृकन्योद्वाहोऽपि प्राप्तस्तथापि 'अस्वर्ग्यं लोकविद्विष्टं धर्म्यमप्याचरेन्न तु।' इति निषेधाद्वचनान्तरेण तदुद्वाहस्याविधानाच्च न कार्यः। अयं तु दाक्षिणात्यशिष्टाचारात्कार्य इति। न च पूर्वोक्तश्रुतीनामर्थवादमात्रता। मानान्तरेणासिद्धौ 'उपरि हि देवेभ्यो

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

धारयति' इतिवदनुवादानुपपत्त्या विधिकल्पनात्। यत्तु शातातपः–'मातुलस्य सुतामूढ्वा मातृगोत्रां तथैव च। समानप्रवरां चैव त्यक्त्वा चान्द्रायणं चरेत्॥' यच्च मनुः–'पैतृष्वसेयीभगिनीं स्वस्रीयां मातुरेव च। मातुश्च भ्रातुराप्तस्य गत्वा चान्द्रायणं चरेत्॥ एतास्तिस्रस्तु भार्यार्थे नोपयच्छेत बुद्धिमान्॥' यच्च व्यासः–'मातुः सपिण्डा यत्नेन वर्जनीयः द्विजातिभिः।' इति, तद्गान्धर्वादिविवाहोढमातृविषयम्। तत्र पितृगोत्रानिवृत्तेः। अत एव मार्कण्डेयपुराणम्–'गान्धर्वादिविवाहेषु पितृगोत्रेण धर्मवित्।' इति। ब्राह्मादिविवाहे तु परिणेयैवेति। भट्टसोमेश्वरोऽपि तृतीयेऽध्याये वाक्यपादे मातुलकन्योद्वाहमुदाहृत्य स्मृतिविरोधेनाचारप्राप्तस्यास्य वार्तिके बाधोक्तावपि पूर्वोक्तश्रौतलिङ्गबलीयस्त्वादस्य कर्तव्यतामाह। तदेतद्दत्तकस्य पालकदत्रिममातृसोदरकन्याविषयत्वेनासवर्णमातुलकन्याविषयत्वेन युगान्तरपरत्वेन चोपपन्नमपि अविचारितरमणीयं यथा, तथास्तु। तथापि कलौ तावन्निषिद्धमेव। 'गोत्रान्मातुः सपिण्डाच्च विवाहो गोवधस्तथा।' इत्यादिपुराणात्। माधवीये बौधायनोऽप्यस्य निन्दामाह–'पञ्चधा विप्रतिपत्तिर्दक्षिणतस्तथोत्तरत ऊर्णाविक्रयोऽनुपेतेन स्त्रिया च सह भोजनं पर्युषितभोजनं मातुलपितृष्वसृदुहितृपरिणयनम्' इति। 'अथोत्तरतः सीधुपानादिकमुक्त्वा इतर इतरस्मिन्कुर्वन्दुष्यति इतर इतरस्मिन्नि'ति, भट्टसोमेश्वरेणापि स्मृतिविरुद्धानां मातुलकन्योद्वाहादीनामस्माद्वचनादप्रामाण्यमित्युक्तम्। बृहस्पतिरपि–'उदूह्यते दाक्षिणात्यैर्मातुलस्य सुता द्विजैः। मत्स्यादाश्च नराः पूर्वे, व्यभिचाररताः स्त्रियः॥ उत्तरे मद्यपाश्चैव स्पृश्या नृणां रजस्वलाः॥' इत्यनाचारत्वमाह। अत एव हेमाद्रौ मात्स्ये कर्नाटकादीनां तत्कारिणां श्राद्धे निषेधः। बोपदेवेनापि लिखितं ब्राह्मम्–'यत्र मातुलजोद्वाही यत्र वै वृषलीपतिः। श्राद्धं न गच्छेत्तद्विप्राः कृतं यच्च निरामिषम्॥' इति। तस्मान्मातृतः पञ्च, पितृतः सप्त त्यक्त्वोद्वहेदिति सिद्धम्।

संबन्धविवेके सुमन्तुः–'ब्राह्मणानामेकपिण्डस्वधानामादशमाद्धर्मविच्छित्तिर्भवति, आसप्तमाद्रिक्थविच्छित्तिर्भवति, आतृतीयात्पिण्डविच्छित्तिः, अन्यथा पिण्डशौचक्रियाविच्छेदाद्ब्रह्महतुल्यो भवति।'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अस्यार्थमाह **शूलपाणिः**–'जीवत्पित्रादित्रिकस्य वृद्धप्रपितामहादयस्त्रयः श्राद्धदेवतात्वात्पिण्डभाजो भवन्ति, तदूर्ध्वं त्रयो नवपुरुषपर्यन्ता लेपभाजः, श्राद्धकर्ता च दशम इति दशमादूर्ध्वं सापिण्ड्यनिवृत्तिः। दशमादित्युपलक्षणम्। तेन पितृपितामहजीवने नवपुरुषपर्यन्तं, पितृजीवने चाष्टपुरुषपर्यन्तं सापिण्ड्यमिति ज्ञेयम्।' अपुत्रधनग्रहणे संनिहिताभावे सप्तपुरुषपर्यन्तमधिकारः। धनग्राहिणमारभ्य तृतीयः पौत्रः तदूर्ध्वं श्राद्धविच्छेदः। अन्यथा धनहारित्वेऽपुत्रश्राद्धाद्यकरणे ब्रह्महेत्यर्थः। आतृतीयादित्यनूढकन्याविषयम्, 'अप्रत्तानां तु स्त्रीणां त्रिपुरुषी विज्ञायते' इति **वसिष्ठोक्तेः**। एतच्चाशौचविषयं सापिण्ड्यं न तु विवाहादौ। तत्र पूर्वोक्तवचनैः पञ्चमत्वसप्तमत्वनियमादिति **मेधातिथिप्रमुखा दाक्षिणात्याः**। वाग्दानोत्तरमेतदिति **शुद्धिविवेकः**। मातृकुलविषयं कानीनकन्यकाविषयं चैतत्। अन्यथा–'अप्रत्तानां तथा स्त्रीणां सापिण्ड्यं साप्तपौरुषम्। प्रत्तानां भर्तृसापिण्ड्यं प्राह देवः प्रजापतिः॥' इति **कौर्मेण** विरोधः स्यादिति **रत्नाकरस्मृतितत्त्वादिगौडग्रन्थाः**। युक्तं चैतत्। अन्यथा कन्योत्पत्तौ पुरुषत्रयपर्यन्तमेव सूतकं स्यान्नोर्ध्वम्।

सापत्नमातामहकुले त्वाह **मिताक्षरायां शङ्खः**–'यद्येकजाता बहवः पृथक्क्षेत्राः पृथग्जनाः। एकपिण्डाः पृथक्शौचाः पिण्डस्त्वावर्तते त्रिषु॥' पृथक्क्षेत्राः=भिन्नजातीयस्त्रीषु जाताः। पृथग्जनाः=सजातीयभिन्नमातृषु जाताः। अत्र त्रिपुरुषं सापिण्ड्यमिति **विज्ञानेश्वरो** व्याचख्यौ। **पृथ्वीचन्द्रोदये सापिड्यदीपिकायां** चैवम्। **मदनपारिजाते** तु पृथक्क्षेत्रजाः=भिन्नमातृजाः, पृथग्जनाः=भिन्नजातीयाः। एतद्विजातीयसापत्नमातृकुलविषयम्। सवर्णसापत्नमातृकुले चतुःपुरुषं सापिण्ड्यम्। 'पञ्चमीं सप्तमीं चैव मातृतः पितृतस्तथा।' इति **वसिष्ठोक्तेः**। सप्तमीमिति ब्राह्मणादीनां क्षत्रियादिदारोत्पन्नपितृकुलविषयं चेत्युक्तं तत्स्वकपोलकल्पितत्वात् ग्रन्थान्तरविरोधाच्च निर्मूलम्, 'पितृपत्न्यः सर्वा मातरः' इत्युक्त्वा **सुमन्तुना** 'तदपत्यानि भागिनेयानि' इति पृथङ्निषेधाच्च। अन्यथा सपिण्डत्वेन निषेधात्सापत्नमातुलत्वादिनिर्देशो व्यर्थः। अत एव तेन **स्मृतिकौमुद्यां** सवर्णसापत्नमातामहकुलपरत्वेन तथैव **शङ्खवचनं** व्याख्यातम्। तेन **वासिष्ठं** 'पञ्चमीं सप्तमीमतीत्य' इति व्याख्येयम्। तस्मा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

त्प्राच्येव व्याख्या युक्ता । **प्रयोगरत्ने भट्टैः स्मृतितत्त्वादिगौडग्रन्थेषु** च सपत्नमातामहकुले यावदुक्तं वाचनिकमेव सापिण्ड्यमुक्तम् । यथाह **सुमन्तुः**—'मातृपितृसंबद्धा आ सप्तमादविवाह्या भवन्ति । आ पञ्चमादन्येषां, पितृपत्न्यः सर्वा मातरस्तद्भ्रातरो मातुलास्तद्भगिन्यो मातृष्वसारस्तदुहितरश्च भगिन्यस्तदपत्यानि भागिनेयानि । अन्यथा संकरकारिणः स्युस्तथाध्यापयितुरेतदेव' इति । आ पञ्चमादिति मातृकुले त्रिगोत्रान्तरितविषयं वेति **प्राच्याः** । **मात्स्ये**—'समानप्रवरा चैव शिष्यसंततिरेव च । ब्रह्मदातुर्गुरोश्चैव संततिः प्रतिषिध्यते ॥' तद्भगिन्यो मातृष्वसार इति तु आकरे न पठितम् । क्वचिद्वचनादविवाहः । यथा **गृह्यपरिशिष्टे**—'अविरुद्धसंबन्धामुपगच्छेत' इत्युक्त्वा विरुद्धसंबन्धः स्वयमेवोक्तः । यथा 'भार्या स्वसुर्दुहिता पितृव्यपत्नी स्वसा च' इति । **बौधायनः**—'मातुः सपत्न्या भगिनीं तत्सुतां च विवर्जयेत् । पितृव्यपत्न्या भगिनीं तत्सुतां च विवर्जयेत् ॥' अतो मातृष्वसुः सापत्नपुत्रकन्याप्यविवाह्या । 'सापत्नमातृकुलजाम्' इति **मदनपारिजातोक्ते**रिति **केचित्** ।

केचित्तु 'ज्येष्ठो भ्राता पितुः समः' इति **मनूक्ते**स्तत्पत्न्याः मातृत्वात्तत्पितुर्मातामहत्त्वाज्ज्येष्ठभ्रातृपत्नीभगिनी न विवाह्या । तथा—'उत्पादकब्रह्मदात्रोर्गरीयान्ब्रह्मदः पिता ।' इति **मनूक्ते**र्गुरुणा त्रिपुरुषं सापिण्ड्यं, सखापि निर्वाप्यः । अतस्तेषां कन्या नोद्वाह्याः । 'गायत्र्या उपदेष्टुश्च कन्यां नैवोद्वहेद् द्विजः । गुरोश्च कन्यां शिष्यो वा तत्संतत्यापि नेष्यते ॥ पुरुषत्रयपर्यन्तं भ्रात्रादेर्नैतदिष्यते । वाक्संबन्धकृतानां तु स्नेहसंबन्धभागिनाम् । विवाहोऽत्र न कर्तव्यो लोकगर्हा प्रसज्यते ।' इति **वचना**चेत्याहुः । नात्र मूलं चिन्त्यम् ।

दत्तकविषये तूच्यते । तत्र **गौतमः**—'ऊर्ध्वं सप्तमात्पितृबन्धुभ्यो बीजिनश्च मातृबन्धुभ्यः पञ्चमात्' इति बन्धुग्रहणान्न दत्तकमात्रपरमिदम्, किंतु संतानेऽपि । एतत्क्षेत्रजादिसर्वद्व्यामुष्यायणपरमिति **हरदत्तः** । अत्र **स्मृतिचन्द्रिका**—'नियोगात् य उत्पादयति तस्माद्बीजिनोऽप्यूर्ध्वं सप्तमादित्यर्थः' इति, दत्तकस्य जनकविषयमेतदिति **सापिण्ड्यमीमांसायाम्** । तेन दत्तकस्य जनककुले साप्तपौरुषं, जननीकुले पाञ्चपौरुषं सापिण्ड्यम्,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'दत्तक्रीतादिपुत्राणां बीजवप्तुः सपिण्डता । सप्तमी पञ्चमी चैव गोत्रित्वं पालकस्य च ॥' इति बृहन्मनूक्तेः, 'बीजिनश्च' इति गौतमोक्तेश्च । पालकपितृकुले तु पञ्चपुरुषम्, पालकमातृकुले त्रिपुरुषम् । तथा चापरार्के पैठीनसिः—'त्रीन्मातृतः पञ्च पितृतः पुरुषानतीत्योद्वहेत्' इति । एतत्स एव व्याचख्यौ—दत्तकादीन्पुत्रान् पितृपक्षतो निवृत्तपिण्डगोत्रार्षेयान्प्रेत्य तदुच्यते पञ्च पितृत इति, नान्यान्प्रति' इति । यत्तु वृद्धगौतमः—'स्वगोत्रेषु कृता ये स्युर्दत्तक्रीतादयः सुताः । विधिना गोत्रमायान्ति न सापिण्ड्यं विधीयते ॥' यच्च वसिष्ठः—'अन्यशाखोद्भवो दत्तः पुत्रश्चैवोपनायितः । स्वगोत्रेण स्वशाखोक्तविधिना स्यात्स्वशाखभाक् ॥' इति । यच्च नारदः—'धर्मार्थं वर्धिताः पुत्रास्तत्तद्गोत्रेण पुत्रवत् । अंशपिण्डविभागित्वं तेषु केवलमीरितम् ॥' तत् पालककुले साप्तपौरुषं सापिण्ड्यं नेत्येवंपरं, न तु सर्वथा सापिण्ड्यनिषेधपरमिति सापिण्ड्यमीमांसायाम् । मदनपारिजातादपि दत्तकानुप्रवेशेऽल्पं सापिण्ड्यं प्रतिभाति । तथाहि तेन त्रीनतीत्येत्युदाहृत्य यस्य माता दत्तपुत्री प्रतिग्रहीत्रा पुत्रीकृता तस्याः प्रतिग्रहीतृकुले त्रीनतीत्येति, पञ्च पितृत इति यस्य दत्तपुत्रः पिता तस्य दत्तास्य यज्जनककुलं तद्विषयमित्युक्तम् । वस्तुतस्तु पूर्ववचसां महानिबन्धेषु क्वाप्यनुपलम्भादपरार्कादिलिखिताभावात् पूर्वोक्तव्यवस्थायाश्च प्रातिभज्ञानतुल्यत्वाद्यैरेतल्लिखितं तेषामेव शोभते ।

मम तु पालककुले एकपिण्डदानक्रियान्वयित्वरूपं साप्तपौरुषमेव सापिण्ड्यम् । 'बीजिनश्च' इति गौतमोक्तेर्जनककुलेऽपि तावदेव । 'त्रीन् मातृतः' इत्यादि तु सवर्णसापत्नमातृकुलपरम्, 'यद्येकजाता बहवः' इति शाङ्खवाक्यत्वादिति युक्तं प्रतिभाति । अत एवास्य द्व्यामुष्यायणत्वं हेमाद्रिप्रवरमञ्जरीवृत्तिकृन्नारायणादिभिरुक्तम् । भट्टसोमेश्वरेणापि—'पृथायाः कुन्तिभोजस्य पालककन्यात्वेऽपि ऊर्ध्वं सप्तमात् पितृबन्धुभ्यो बीजिनश्च' इति गौतमोक्तेर्दत्त्रिमायाः पृथाया जनकस्य शूरसेनस्य कुलेऽपि साप्तपौरुषम्, पालककुलेऽपि तावदेव सापिड्यमुक्तम् 'अपि वा कारणाग्रहणे' इत्यत्र । सापिण्ड्यदीपिकायां तु दत्तक्रीतादीनां जनकगोत्रेणोपनयने कृते जनककुले साप्तपौरुषं सापिण्ड्यम्, पालक-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मातापितृकुले त्रिपुरुषम्, पिण्डनिर्वापान्निर्वाप्यलक्षणं त्रिपुरुषं सापिण्ड्यम्, पालकगोत्रेणोपनयने तत्कुले साप्तपौरुषमित्युक्तम्। तत्र 'चूडोपायनसंस्कारा निजगोत्रेण वै कृताः। दत्ताद्यास्तनयास्ते स्युरन्यथा दास उच्यते ॥' इति **कालिकापुराणादुपनयनोत्तरं** दत्तकनिषेधात् त्रिपुरुषमित्यत्रापि मूलं मृग्यमित्यलं बहुना।

मातापितृद्वारकसापिण्ड्यवतीनां कन्यानामियं संख्या **रामवाजपेयिनोक्ता**—'उद्वोढुः पितरौ पितुश्च पितरौ तज्जन्मकृद्दम्पतिद्वन्द्वं तस्य चतुष्कमष्ट च ततोऽप्यस्य क्रमात्षोडश। वंशारम्भकदम्पतीप्रमितिरित्यासप्तकक्षं रदा एकैकान्वयकन्यकाः पितृकुले त्वा सप्तकक्षं त्रुवे ।। यद्यप्येकस्य बहवः सुताः स्युस्तदपीह तु। संबन्धसाम्यादेकैव गणितेत्यवधार्यताम् ॥ एकस्मान्मिथुनात्सुतोऽथ दुहिता द्वन्द्वद्वयं तद्द्वयात्तस्माद् द्वन्द्वचतुष्कमष्ट च ततोऽतः षोडशाऽतो रदाः। यावत्सप्तमकक्षमग्निऋतवः कन्या इहैकान्वये ता दन्तैर्गुणिता रसैकखदृशो वंशे सपिण्डाः पितुः ॥ मातुर्जन्मददम्पती च मिथुनद्वन्द्वं तयोः सागरास्तस्याः पञ्चमकक्षमश्वमितिरित्येकान्वयः पुंसुते। द्वन्द्वाद् द्वन्द्वयुगं ततोऽब्धय इतोऽष्टौ पञ्चकक्षं शरक्षोण्यः सप्त गुणाः शराभ्रविधवो मातुः सपिण्डाः कुले ॥ कुलद्वयस्य कन्यकायुता मिथः सपिण्डकाः। हिमांशुदृग्धरादृशो विवाहकर्मवर्जिताः ॥' इति। एतच्च सर्ववर्णसाधारणम्, सर्वत्र सापिण्ड्यसद्भावादिति **विज्ञानेश्वरोक्तेः**। 'पञ्चमात्सप्तमादूर्ध्वं मातृतः पितृतः क्रमात्। सपिण्डता निवर्तेत सर्ववर्णेष्वयं विधिः ॥' इति **हरनाथधृतदेवलवचनाच्च**। **संबन्धतत्त्वे सुमन्तुः**—'पितृष्वसृसुतां मातृष्वसृसुतां मातुलसुतां मातृसगोत्रां समानार्षेयीं विवाह्य चान्द्रायणं चरेत्परित्यज्यैनां मातृवद्बिभृयात्' इति दिक्। ऋषेरिदमार्षं प्रवरः। गोत्रं प्रसिद्धम्। समाने आर्षगोत्रे यस्य तस्माज्जाता या न भवति ताम् ॥

अथ **संक्षेपेण गोत्रप्रवरनिर्णयः**। तौ च भिन्नौ निषेधे निमित्तम्, 'सगोत्राय दुहितरं न प्रयच्छेत्' इति **आपस्तम्बोक्तेः**, 'असमानप्रवरैर्विवाहः' इति **गौतमोक्तेश्च**। तत्र गोत्रलक्षणमाह **प्रवरमञ्जर्यां बौधायनः**—विश्वामित्रो जमदग्निर्भरद्वाजोऽथ गौतमः। अत्रिर्वसिष्ठः कश्यप इत्येते सप्त ऋषयः ॥ सप्तानामृषीणामगस्त्याष्टमानां यदपत्यं तद्गोत्रम्।'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

इति। यद्यपि केवलभार्गवेष्वार्ष्टिषेणादिषु केवलाङ्गिरसेषु हरितादिषु च नैतत्, भृग्वङ्गिरसोरुक्तेष्वनन्तर्गतेः; तथाप्यत्रेष्टापत्तिरेवेति केचित्। अत एव स्मृत्यर्थसारे प्रवरैक्यादेवात्राविवाह उक्तः। यद्यपि वसिष्ठादीनां न गोत्रत्वं युक्तम्, तेषां सप्तर्षित्वेन तदपत्यत्वाभावात्। तथापि तत्पूर्वभाविवासिष्ठाद्यपत्यत्वेन गोत्रत्वं युक्तम्। अत एव पूर्वेषां परेषां चैतद्गोत्रम्, अत्र विशेषोऽस्मत्कृतप्रवरदर्पणे ज्ञेयः।

प्रवरास्तु प्रवरणानि प्रवराः। कल्पकारा हि 'वासिष्ठेतिहोता', 'वसिष्ठवदित्यध्वर्युः' इत्यादिना येषां प्रवरणमामनन्ति ते प्रवराः। तच्च वरणं यद्यपि गोत्रभूतस्यापि क्वचिद्दृश्यते तथापि पूर्ववदृषिभेदो द्रष्टव्यः। अन्यथा तेषां त्र्यार्षेये 'एकार्षे' इत्यादिनिर्देशानुपपत्तेः। अन्ये तु तद्गोत्राणां त्र्यार्षेय इति भेदमाहुरिति दिक्। तत्त्वं तु गोत्रभूतस्य पितृपितामहप्रपितामहा एव प्रवराः 'पितैवाग्रेऽथ पुत्रोऽथ पौत्रः' इति शतपथश्रुतेः, 'परं परं प्रथमम्' इत्याश्वलायनोक्तेश्च। अत्र विशेषमाह बौधायनः--'एक एव ऋषिर्यावत्प्रवरेष्वनुवर्तते। तावत्समानगोत्रत्वमन्यत्र भृग्वङ्गिरसां गणात् इति। स्मृत्यर्थसारे--'म्रियमाणतया वापि सत्तया वानुवर्तनम्। एकस्य दृश्यते यत्र तद्गोत्रं तस्य कथ्यते॥' भृग्वङ्गिरोगणेषु तु माधवीये स्मृत्यन्तरे--'पञ्चार्षे त्रिषु सामान्यदविवाहस्त्रिषु द्वयोः। भृग्वङ्गिरोगणेष्वेव शेषेष्वेकोऽपि वारयेत्॥' शेषगोत्रेषु एकोऽपि समानः प्रवरो विवाहं वारयेदित्यर्थः। बौधायनोऽपि भृग्वङ्गिरसावधिकृत्य-'द्व्यार्षेयसन्निपातेऽविवाहस्त्र्यार्षेयाणां, त्र्यार्षेयसन्निपातेऽविवाहः पञ्चार्षेयाणाम् इति। भृग्वङ्गिरोगणेष्वपि जमदग्निगौतमभरद्वाजेष्वेकप्रवरसाम्ये सर्वेषामप्यसाम्ये वा सगोत्रत्वादेवाविवाह इति दिक्।

अथ गोत्राणि प्रवराश्चोच्यन्ते। तत्र बौधायनः--'गोत्राणां तु सहस्राणि प्रयुतान्यर्बुदानि च। ऊनपञ्चाशदेवैषा प्रवरा ऋषिदर्शनात्॥' तत्र सप्त भृगवः। वत्सा विदा आर्ष्टिषेणा यस्का मित्रयुवो वैन्याः शुनका इति। वत्सानां भार्गवच्यावनाप्रवानौर्वजामदग्न्येति, भार्गवौर्वजामदग्न्येति वा, भार्गवच्यावनाप्रवानेति वा। विदानां पञ्च। भार्गवच्यावना-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्रवानौर्वबैदेति, भार्गवौर्वजामदग्न्येति वा। एतौ द्वौ जामदग्न्यसंज्ञौ। आर्ष्टिषेणानां भार्गवच्यावनाप्रवार्ष्टिषेणानूपेति, भार्गवार्ष्टिषेणानूपेति वा। एषां त्रयाणां परस्परमविवाहः। वात्स्यानां भार्गवच्यावनाप्रवानेति। वत्स-पुरोधसयः पञ्च। भार्गवच्यावनाप्रवानवात्सपौरोधसेति। वैजवनिमथि तयोः पञ्च। भार्गवच्यावनाप्रवानबैजमथितेति। एते त्रयः क्वचित्। एषामपि पूर्वैरविवाहः। अत्र तत्तद्गणस्था ऋषयोऽन्यश्च विशेषो मत्कृते प्रवरदर्पणे ज्ञेयः। यस्कानां भार्गववैतहव्यसावेतसेति। मित्रयुवां भार्गववाध्र्यश्च-दैवोदासेति, भार्गवच्यावनदैवोदासेति वा, वाध्र्यश्वेत्येको वा। वैन्यानां भार्गववैन्यपार्थेति। एत एव श्यैताः। शुनकानां शुनकेति वा गार्त्सम-देति वा भार्गवगार्त्समदेति द्वौ वा। भार्गवशौनहोत्रगार्त्समदेति त्रयो वा। वेदविश्वज्योतिषां भार्गववेदवैश्वज्योतिषेति। शाठरमाठराणां भार्गवशाठरमाठरेति। एतौ द्वौ क्वचित्। यस्कादीनां स्वगणं त्यक्त्वा सर्वैर्विवाहः। तदुक्तं स्मृत्यर्थसारे–'यस्का मित्रयुवो वैन्याः शुनकाः प्रवरैक्यतः। स्वं स्वं हित्वा गणं सर्वे विवहेयुः परावरैः॥' इति॥

भृगवः सप्त ७

ते च वत्सा बिदा आर्ष्टिषेणा यस्का मित्रयुवो वैन्याः शुनका इति।

वत्साः–मार्कण्डेयेत्यादीनि द्विशताधिकानि गोत्राणि सन्ति ते च वत्सास्तेषां—'भार्गवच्यावनाप्रवानौर्वजामदग्न्येति' पञ्च प्रवराः, अथवा 'भार्गवौर्वजामदग्न्येति' त्रयः, अथवा 'भार्गवच्यावना-प्रवानेति' त्रयः।

बिदाः–शेलावटेत्यादीनि विंशत्यधिकानि गोत्राणि सन्ति, ते च बिदा-स्तेषां—'भार्गवच्यावनाप्रवानौर्वबैदेति' पञ्च प्रवराः, अथवा 'भार्गवौर्वजामदग्न्येति' त्रयः।

आर्ष्टिषेणाः–नैऋतिग्राम्यायणेत्यादि विंशत्यधिका आर्ष्टिषेणास्तेषां—'भार्गवच्यावनाप्रवानार्ष्टिषेणानूपेति' पञ्च प्रवराः, अथवा 'भार्गवा-र्ष्टिषेणानूपेति' त्रयः। वत्सबिदार्ष्टिषेणानां प्रवरत्रयसाम्यात्परस्परं विवाहो न भवति।

वात्स्याः–'भार्गवच्यावनाप्रवानेति' त्रयः प्रवराः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वत्सपुरोधसः—'भार्गवच्यावनाप्रवानवात्सपौरोधसेति' पञ्च।

बैजवनिमथिताः—'भार्गवच्यावनाप्रवानबैज (वन) मथितेति' पञ्च।

वात्स्य-वत्सपुरोधस-बैजमथितेति क्वचिद्गणत्रयमधिकम्। एषां परस्परं उपरिनिर्दिष्टगणत्रयेण च विवाहो न भवति।

यस्काः—मौनमूकेत्यादित्रिपञ्चाशद्भ्योऽधिका यस्कास्तेषां—'भार्गववैतहव्यसावेतसेति' त्रयः प्रवराः।

मित्रयुवः—रैष्णायन-सापिण्डिनेति त्रिंशद्भ्योऽधिका मित्रयुवस्तेषां—'भार्गववाध्र्यश्वदैवोदासेति' त्रयः, अथवा 'भार्गवच्यावनदैवोदासेति' त्रयः, अथवा 'वाध्र्यश्वेति' एकः।

वैन्याः—पार्थबाष्कलश्येता वैन्यास्तेषां—'भार्गववैन्यपार्थेति' त्रयः प्रवराः।

शुनकाः—गार्त्समदयज्ञपतीत्यादिसप्तदशाधिकाः शुनकास्तेषां—'शौनकेति' एकः, अथवा 'गार्त्समदेति' एकः, अथवा 'भार्गवगार्त्समदेति' द्वौ, अथवा 'भार्गवशौनहोत्रगार्त्समदेति' त्रयः।

क्वचिद्गणद्वयमधिकम्।

वेदविश्वज्यौतिषाः—एषां—'भार्गववेदवैश्वज्योतिषेति' त्रयः।

शाठरमाठराः—एषां—'भार्गवशाठरमाठरेति' त्रयः।

अथाङ्गिरसः। ते **गौतमाः**, **भरद्वाजाः**, **केवलाङ्गिरस**श्चेति त्रिधा। अत्र **गौतमा दश**—आयास्याः, शरद्वन्ताः, कौमण्डाः, दीर्घतमसः, औशनसः, कारेणुपालेयाः, राहूगणाः, सोमराजकाः, वामदेवाः, बृहदुक्थाश्चेति। तत्रायास्यानामाङ्गिरसायास्यगौतमेति। शरद्वतानामाङ्गिरसगौतमशारद्वतेति। कौमण्डानामाङ्गिरसौतथ्यकाक्षीवतगौतमकौमाण्डेति वा, आङ्गिरसायास्यौशिजगौतमकाक्षीवतेति वा, आङ्गिरसौतथ्यगौतमौशिजकाक्षीवतेति वा, आङ्गिरसौशिजकाक्षीववेति त्रयो वा। दीर्घतमसामाङ्गिरसौतथ्यकाक्षीवतगौतमदैर्घतमसेति, आङ्गिरसौतथ्यदैर्घतमसेति त्रयो वा। औशनसानामाङ्गिरसगौतमौशनसेति त्रयः। कारेणुपालेयानामाङ्गिरसगौतमकारेणुपालेति त्रयः। राहूगणानामाङ्गिर-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

सराहूगणगौतमेति । सोमराजकानामाङ्गिरससोमराजकगौतमेति । वामदेवानामाङ्गिरसबामदेव्यगौतमेति । बृहदुक्थानामाङ्गिरसबार्हदुक्थगौतमेति, आङ्गिरसवामदेवबार्हदुक्थेति वा । उतथ्यानामाङ्गिरसौतथ्यगौतमेति । औशिजानामाङ्गिरसौशिजकाक्षीवतेत्यापस्तम्बः । आङ्गिरसायास्यौशिजगौतमकाक्षीवतेति **कात्यायनः** । **एतौ द्वौ क्वचित्** । राघुवानामाङ्गिरसराघुवगौतमेति **केचित्** । तत्र मूलं चिन्त्यम् । एषां सर्वेषां गौतमानामविवाहः ।

आङ्गिरसगणः--

ते च-गौतम-भरद्वाज-केवलाङ्गिरसेति त्रिविधाः ।

गौतमा दश १०

आयास्याः--श्रोणिवेध-मूढरथेत्याद्या अष्टादशभ्योऽधिका आयास्यास्तेषां-'आङ्गिरसायास्यगौतमेति' त्रयः ।

शरद्वताः--आभिजितरौहिण्येत्यादि सप्तत्यधिकाः शरद्वतास्तेषां-'आङ्गिरसगौतमशारद्वतेति' त्रयः ।

कौमण्डाः--मासन्थरेषण-मांसुराक्षेत्यादिदशभ्योऽधिकाः कौमण्डास्तेषां-'आङ्गिरसौतथ्यकाक्षीवतगौतमकौमाण्डेति' पञ्च, अथवा 'आङ्गिरसायास्यौशिजगौतमकाक्षीवतेति' पञ्च, अथवा 'आङ्गिरसौतथ्यगौतमौशिजकाक्षीवतेति' पञ्च, अथवा 'आङ्गिरसौशिजकाक्षीवतेति' त्रयः ।

दीर्घतमसः--एषां--आङ्गिरसौतथ्यकाक्षीवतगौतमदैर्घतमसेति' पञ्च, अथवा 'आङ्गिरसौतथ्यदैर्घतमसेति' त्रयः ।

औशनसः--दिश्य इत्यादयो नवाधिका औशनसस्तेषां-'आङ्गिरसगौतमौशनसेति' त्रयः ।

कारेणुपालेयाः--वास्तव्यश्वेतीय इत्यादयः सप्ताधिकाः कारेणुपालयस्तेषां--'आङ्गिरसगौतमकारेणुपालेति' त्रयः ।

राहूगणाः--एषां--'आङ्गिरसराहूगणगौतमेति' त्रयः ।

सोमराजकाः--एषां--'आङ्गिरससोमराजकगौतमेति' त्रयः ।

वामदेवाः--एषां--'आङ्गिरसवामदेव्यगौतमेति' त्रयः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

बृहदुक्थाः—एषां—'आङ्गिरसबार्हदुक्थगौतमेति' त्रयः। अथवा 'आङ्गिरसवामदेवबार्हदुक्थेति' त्रयः।

क्वचिद्गणद्वयमधिकम्।

उतथ्याः—एषां—'आङ्गिरसौतथ्यगौतमेति' त्रयः।

औशिजाः—एषां—'आङ्गिरसौशिजकाक्षीवतेति' त्रय इत्यापस्तम्बः, 'आङ्गिरसायास्यौशिजगौतमकाक्षीवतेति' पञ्चेति कात्यायनः।

राघु (यु) वाः—एषां—'आङ्गिरसराघु (यु) वगौतमेति' त्रय इति केचित्। अत्र मूलं चिन्त्यम्। एषां सर्वेषां गौतमानां परस्परं विवाहो न भवति।

अथ भरद्वाजाः। ते चत्वारः। भरद्वाजाः, गर्गाः, ऋक्षाः, कपय इति। भरद्वाजानामाङ्गिरसबार्हस्पत्यभारद्वाजेति त्रयः। गर्गाणामाङ्गिरसबार्हस्पत्यभारद्वाजसैन्यगार्ग्येति पञ्च, आङ्गिरससैन्यगार्ग्येति त्रयो वा, अन्त्ययोर्व्यत्ययो वा, भारद्वाजगार्ग्यसैन्येति वा। गर्गभेदानामाङ्गिरसतैत्तिरिकापिभुवेति। ऋक्षाणां कपिलानां चाङ्गिरसबार्हस्पत्यभरद्वाजवान्दनमातवचसेति पञ्च, आङ्गिरसवान्दनमातवचसेति त्रयो वा। कपीनामाङ्गिरसामहीयवौरुक्षयसेति। आत्मभुवामाङ्गिरसभारद्वाजबार्हस्पत्यमन्त्रवरात्मभुवेति पञ्च। अयं क्वचित्। भरद्वाजानां सर्वेषामविवाहः॥

भरद्वाजगणाश्चत्वारः ४

भरद्वाजाः—क्षाम्यायणदेवाश्च इत्यादयः षष्ट्युत्तरशताधिका भरद्वाजास्तेषां—'आङ्गिरसबार्हस्पत्यभारद्वाजेति' त्रयः।

गर्गाः—सांभरायणसखीनय इत्यादयः पञ्चाशदधिका गर्गास्तेषां—'आङ्गिरसबार्हस्पत्यभारद्वाजसैन्यगार्ग्येति' पञ्च, अथवा 'आङ्गिरससैन्यगार्ग्येति' त्रयः, अथवा 'आङ्गिरसगार्ग्यसैन्येति' त्रयः, अथवा 'भारद्वाजगार्ग्यसैन्येति' त्रयः। गर्गभेदानां—'आङ्गिरसतैत्तिरिकापिभुवेति' त्रयः।

ऋक्षाः—रौक्षायणकपिलेत्यादयो नवाधिका ऋक्षास्तेषां—'आङ्गिरसबार्हस्पत्यभरद्वाजवान्दनमातवचसेति' पञ्च, अथवा 'आङ्गिरसवान्दनमातवचसेति' त्रयः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कपयः–स्वस्तितरादिदण्डिन्नित्यादयः पञ्चविंशत्यधिकाः कपयस्तेषां–'आङ्गिरसामहीयवौरुक्षयसेति' त्रयः ।

आत्मभुवः–एषां–'आङ्गिरसभारद्वाजवार्हस्पत्यमन्त्रवरात्मभुवेति' पञ्च । अयं गणः क्वचित् । एषां सर्वभरद्वाजानां परस्परं विवाहो न भवति ।

अथ केवलाङ्गिरसः । ते च षट्–हारिताः, कुत्साः, कण्वाः, रथीतराः, मुद्गलाः, विष्णुवृद्धाश्चेति । हारितानां आङ्गिरसाम्बरीषयौवनाश्वेति, आद्यो मान्धाता वा । कुत्सानामाङ्गिरसमान्धातृकौत्सेति, कण्वानामाङ्गिरसाजमीढकाण्वेति, आङ्गिरसघोरकाण्वेति वा । रथीतराणामाङ्गिरसवैरूपराथीतरेति, आङ्गिरसवैरूपपार्षदश्वेति वा अष्टादंष्ट्रपार्षदश्ववैरूपेति वा, अन्त्ययोर्व्यत्ययो वा । मुद्गलानामाङ्गिरसभार्म्यश्वमौद्गल्येति, आद्यस्तार्क्ष्यो वा, आङ्गिरसतार्क्ष्यमौद्गल्येति वा । विष्णुवृद्धानामाङ्गिरसपौरुकुत्स्यत्रासदस्यवेति । एषां स्वगणं विहाय सर्वैर्विवाहो भवति । हारितकुत्सयोस्तु न भवति ।

केवलाङ्गिरसां गणाः ६

हारिताः--सौभग-नैयगवेत्यादयो द्वात्रिंशदधिका हारितास्तेषां–'आङ्गिरसाम्बरीषयौवनाश्वेति' त्रयः, अथवा तिसृणां प्रवराणां मध्ये आदिमस्थाने 'मान्धाता' अस्ति ।

कुत्साः--एषां–'आङ्गिरसमान्धातृकौत्सेति' त्रयः ।

कण्वाः--औपमर्कटबाष्कलेत्यादय एकविंशत्यधिकाः कण्वास्तेषां 'आङ्गिरसाजमीढकाण्वेति' त्रयः, अथवा 'आङ्गिरसघोरकाण्वेति' त्रयः ।

रथीतराः--हस्तिदनैतिरक्षीत्यादयश्चतुर्दशभ्योऽधिका रथीतरास्तेषां–'आङ्गिरसवैरूपराथीतरेति' त्रयः अथवा 'आङ्गिरसवैरूपपार्षदश्वेति' त्रयः, अथवा 'अष्टादंष्ट्रपार्षदश्ववैरूपेति' त्रयः, अथवान्त्यद्वयोर्विपर्यासोऽस्ति ।

मुद्गलाः--सात्यमुग्रीत्यादयोऽष्टादशभ्योऽधिका मुद्गलास्तेषां–'आङ्गिरसभार्म्यश्वमौद्गल्येति' त्रयः, अथवा प्रथमस्तार्क्ष्यः, अथवा 'आङ्गिरसतार्क्ष्यमौद्गल्येति' त्रयः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विष्णुवृद्धाः—शठ भरणेत्यादयः पञ्चविंशत्यधिका विष्णुवृद्धास्तेषां— 'आङ्गिरसपौरुकुत्स्यत्रासदस्यवेति' त्रयः ।

अथात्रयः । ते चत्वारः । अत्रयः, वाद्भुतकाः, गविष्ठिराः, मुद्गला इति । आद्यानामात्रेयार्चनानसश्यावाश्वेति । वाद्भुतकानां आत्रेयार्चनानसवाद्भुतकेति । धनंजयानामात्रेयार्चनानसधानञ्जयेति क्वचित् । गविष्ठिराणामात्रेयार्चनानसगाविष्ठिरेति, आत्रेयगाविष्ठिरपौर्वातिथेति वा । मुद्गलानामात्रेयार्चनानसपौर्वातिथेति । वामरथ्यसुमङ्गलबैजवापानामात्रेयार्चनानसातिथेति, आत्रेयार्चनानसगाविष्ठिरेति वा । सुमङ्गलानामत्रिसुमङ्गलश्यावाश्वेति केचित् । अत्रेः पुत्रिकापुत्राणामात्रेयवामरथ्यपौत्रिकेति । अत्रीणां सर्वेषामविवाहः ।

अत्रयश्चत्वारः ४

अत्रयः—भूरीत्यादयश्चतुर्नवतिभ्योऽधिका अत्रयस्तेषां—'आत्रेयार्चनानसश्यावाश्वेति' त्रयः ।

वाद्भुतकाः—एषां—'आत्रेयार्चनानसवाद्भुतकेति' त्रयः ।

धनंजयाः—एषां —'आत्रेयार्चनानसधानञ्जयेति' त्रयः । अयं गणः क्वचित् ।

गविष्ठिराः—दक्षि-भलन्दनेत्यादयश्चतुर्विंशतिभ्योऽधिका गविष्ठिरास्तेषां— 'आत्रेयार्चनानसगाविष्ठिरेति' त्रयः । अथवा 'आत्रेयगाविष्ठिरपौर्वातिथेति' त्रयः ।

मुद्गलाः—शालिसंधि-अर्णवेत्यादयो दशभ्योऽधिका मुद्गलास्तेषां—'आत्रेयार्चनानसपौर्वातिथेति' त्रयः ।

वामरथ्य-सुमङ्गल-बैजवापाः—एषां—'आत्रेयार्चनानसातिथेति' त्रयः, अथवा 'आत्रेयार्चनानसगाविष्ठिरेति' त्रयः ।

सुमङ्गलाः—एषां—'अत्रिसुमङ्गलश्यावाश्वेति' त्रयः, इमे चत्वारो गणाः केचिदाहुः ।

वालेयाः—कौद्रेय-शौभ्रेय-वामरथ्येत्यादयोऽत्रेः पुत्रिकापुत्रास्तेषां—'आत्रेयवामरथ्यपौत्रिकेति' त्रयः । सर्वेषामत्रीणां सगोत्रत्वात्सप्रवरत्वाच्च

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

परस्परं विवाहो न भवति । अत्रेः पुत्रिकापुत्राणां च वासिष्ठ-विश्वामित्राभ्यां सह विवाहो न भवति ।

अथ विश्वामित्राः । ते दश—कुशिकाः, लोहिताः, रौक्षकाः, कामकायनाः, अजाः, कताः, धनंजयाः, अघमर्षणाः, पूरणाः, इन्द्रकौशिका इति । कुशिकानां वैश्वामित्रदेवरातौदलेति । लोहितानां वैश्वामित्राष्टकलौहितेति, अन्त्ययोर्व्यत्ययो वा, वैश्वामित्रमाधुच्छन्दसाष्टकेति वा, वैश्वामित्राष्टकेति द्वौ वा । रौक्षकाणां वैश्वामित्रगाथिनरैवणेति, वैश्वामित्ररौक्षकरैवणेति वा । कामकायनानां वैश्वामित्रदेवश्रवसदैवतरसेति । अजानां वैश्वामित्रमाधुच्छन्दसाजेति, वैश्वामित्राश्मरथवाधूलेति वा । धनंजयानां विश्वामित्रमाधुच्छन्दसधानंजयेति, वैश्वामित्रमाधुच्छन्दसाघमर्षणेति वा । कतानां वैश्वामित्रकात्यात्कीलेति । अघमर्षणानां वैश्वामित्राघमर्षणकौशिकेति । पूरणानां वैश्वामित्रपौरणेति द्वौ, वैश्वामित्रदेवरातपौरणेति वा । इन्द्रकौशिकानां वैश्वामित्रेन्द्रकौशिकेति द्वौ । एते बौधायनोक्ताः । रौहिणानां वैश्वामित्रमाधुच्छन्दसरौहिणेति । रेणूनां वैश्वामित्रगाथिनरैणवेति । वेणूनां वैश्वामित्रगाथिनवैणवेति । जह्नूनां वैश्वामित्रशालङ्कायनकौशिकेति । आश्मरथ्यानां वैश्वामित्राश्मरथ्यवाधूलेति । उदवेणूनां वैश्वामित्रगाथिनवै (रै) णवेति । एते आश्वलायनमात्स्योक्ताः । अन्यैस्त्वन्येऽपि षड्गणा उक्ताः । तेऽन्यत्र मत्कृतौ ज्ञेयाः । एषां विश्वामित्राणामविवाहः ।

विश्वामित्रगणाः १०

कुशिकाः-पार्णजङ्घ-वारक्येत्यादयः सप्ततिभ्योऽधिकाः कुशिकास्तेषां—'वैश्वामित्रदेवरातौदलेति' त्रयः प्रवराः ।

लोहिताः—कूडकय-चाक्रवर्णायनेत्यादयः पञ्चभ्योऽधिका लोहितास्तेषां—'वैश्वामित्राष्टककलौहितेति' त्रयः, अथवान्तिमद्वयोर्विपर्यासः, अथवा 'वैश्वामित्रमाधुच्छन्दसाष्टकेति' त्रयः, अथवा 'वैश्वामित्राष्टकेति' द्वौ ।

रौक्षकाः-एषां 'वैश्वामित्रगाथिनरैवणेति' त्रयः, अथवा 'वैश्वामित्ररौक्षकरैवणेति' त्रयः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कामकायनाः--देवश्रवस्—देवतरसेत्यादिपञ्चभ्योऽधिकाः कामकायनास्तेषां—'वैश्वामित्रदेवश्रवसदैवतरसेति' त्रयः।

अजाः--एषां—वैश्वामित्रमाधुच्छन्दसाजेति' त्रयः, अथवा 'वैश्वामित्राश्मरथवाधूलेति' त्रयः।

कताः--औदुम्बरिशैशिरीत्यादयो विंशतिभ्योऽधिकाः कतास्तेषां—'वैश्वामित्रकात्यात्कीलेति' त्रयः।

धनंजयाः--पार्थिव-बन्धुलेत्यादयः सप्तभ्योऽधिका धनंजयास्तेषां—'विश्वामित्रमाधुच्छन्दसधानंजयेति' त्रयः, अथवा 'वैश्वामित्रमाधुच्छन्दसाघमर्षणेति' त्रयः।

अघमर्षणाः--एषां—'वैश्वामित्राघमर्षणकौशिकेति' त्रयः।

पूरणाः--एषां—'वैश्वामित्रपौरणेति' द्वौ, अथवा 'वैश्वामित्रदेवरातपौरणेति' त्रयः।

इन्द्रकौशिकाः—एषां—'वैश्वामित्रेन्द्रकौशिकेति' द्वौ।

इमे बौधायनोक्ता ज्ञेयाः।

रौहिणाः—एषां—'वैश्वामित्रमाधुच्छन्दसरौहिणेति' त्रयः।

रेणवः—एषां—'वैश्वामित्रगाथिनरैणवेति' त्रयः।

वेणवः—एषां—'वैश्वामित्रगाथिनवैणवेति' त्रयः।

जह्नवः—एषां—'वैश्वामित्रशालङ्कायनकौशिकेति' त्रयः।

आश्मरथ्याः—एषां—'वैश्वामित्राश्मरथ्यवाधूलेति त्रयः।

उद्वेणवः—एषां—'वैश्वामित्रगाथिनवै (रै) णवेति' त्रयः।

अथ कश्यपाः। ते पञ्च—निध्रुवाः, कश्यपाः, रेभाः, शण्डिलाः, लौगाक्षयश्च। निध्रुवाणां काश्यपावत्सारनैध्रुवेति। कश्यपानां काश्यपावत्सारासितेति। रेभाणां काश्यपावत्साररैभ्येति। शण्डिलानां काश्यपावत्सारशाण्डिल्येति। अन्त्यस्थाने देवलो वा, सितो वा, शाण्डिलासितदेवलेति वा, काश्यपासितदेवलेति वा, अन्त्ययोर्व्यत्ययो वा, देवलासितेति द्वौ वा। लौगाक्षीन् वक्ष्यामः। एषां कश्यपानामविवाहः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कश्यपाः ५

निध्रुवाः—इमे चत्वारिंशदधिकशताधिकास्तेषां—'काश्यपावत्सारनैध्रुवेति' त्रयः ।

कश्यपाः—एषां—'काश्यपावत्सारासितेति' त्रयः ।

रेभाः—एषां—'काश्यपावत्साररैभ्येति' त्रयः ।

शण्डिलाः—कोहल-औदमेघेत्यादि षष्ट्यधिकाः शण्डिलास्तेषां-काश्यपावत्सारशाण्डिल्येति' त्रयः, अथवान्तिमो 'देवलोऽसितो' वा, अथवा 'शाण्डिलासितदेवलेति' त्रयः, अथवा, 'काश्यपासितदेवलेति', अथवान्तिमयोर्द्वयोर्विपर्यासः, अथवा 'देवलासितेति' द्वौ ।

लौगाक्षिः—इमान् द्विगोत्रिष्वग्रे कथयिष्यामः ।

अथ वसिष्ठाः । ते पञ्च । वसिष्ठाः, कुण्डिनाः, उपमन्यवः, पराशराः, जातूकर्ण्याश्चेति । वासिष्ठानां वासिष्ठेन्द्रप्रमदाभरद्वस्विति, वासिष्ठेत्येको वा । कुण्डिनानां वासिष्ठमैत्रावरुणकौण्डिन्येति । उपमन्यूनां वासिष्ठेन्द्रप्रमदाभरद्वस्विति, वासिष्ठाभरद्वस्विन्द्रप्रमदेति वा, आद्ययोर्व्यत्ययो वा । पराशराणां वासिष्ठशाक्त्यपाराशर्येति । जातूकर्ण्यानां वासिष्ठात्रिजातूकर्ण्येति । वासिष्ठानां सर्वेषामविवाहः, अन्त्यस्यात्रिभिश्च ।

वसिष्ठाः ५

वसिष्ठाः—वैतालकवि-रकीत्यादयः षष्ठ्यधिका वसिष्ठास्तेषां—वासिष्ठेन्द्रप्रमदाभरद्वस्विति' त्रयः अथवा वासिष्ठेति' एकः प्रवरः ।

कुण्डिनाः—लोहितायन-गुग्गुलीत्यादयः पञ्चविंशतिभ्योऽधिकाः कुण्डिनास्तेषां—'वासिष्ठमैत्रावरुणकौण्डिन्येति' त्रयः ।

उपमन्यवः—औदलय इत्यादयः सप्ततिभ्योधिका उपमन्यवस्तेषां—'वासिष्ठेन्द्रप्रमदाभरद्वस्विति' त्रयः, अथवा 'वासिष्ठाभरद्वस्विन्द्रप्रमदेति' त्रयः, अथवादिमद्वयोर्विपर्यासः ।

पराशराः—काण्ड(ण्डू)शय—वाजीत्यादयः सप्तचत्वारिंशद्भ्योऽधिकाः पराशरास्तेषां—'वासिष्ठशाक्त्यपाराशर्येति' त्रयः ।

जातूकर्ण्यः—एषां—'वासिष्ठात्रिजातूकर्ण्येति' त्रयः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथागस्त्याः । ते चत्वारः । इध्मवाहाः, साम्भवाहाः, सोमवाहाः, यज्ञवाहाश्चेति । आद्यानामागस्त्यदार्ढ्यच्युतैध्मवाहेति, आगस्त्येत्येको वा । सोमवाहानामागस्त्यदार्ढ्यच्युतसोमवाहेति । साम्भवाहानां साम्भवाहोऽन्त्यः । यज्ञवाहानां यज्ञवाहोऽन्त्यः । आद्यौ पूर्वोक्तावेव । सारवाहानां तदन्तास्त्रयः । दर्भवाहानां तदन्तास्त्रयः । अगस्तीनामागस्त्यमाहेन्द्रमायोभुवेति । पूर्णमासानामागस्त्यपौर्णमासपारणेति । हिमोदकानामागस्त्यहैमवर्चिहैमोदकेति । पाणिकानामागस्त्यपैनायकपाणिकेति । एते षट् क्वचित् । अगस्तीनां सर्वेषामविवाहः ।

अगस्त्याः ४

इध्मवाहाः—विशालाद्य—स्फालायनेत्यादयः पञ्चाशद्भ्योऽधिका इध्मवाहास्तेषां 'आगस्त्यदार्ढ्यच्युतेध्मवाहेति' त्रयः, अथवा 'आगस्त्येति' एकः ।

साम्भवाहाः—एषां—'आगस्त्यदार्ढ्यच्युतसाम्भवाहेति त्रयः ।

सोमवाहाः—एषां—'आगस्त्यदार्ढ्यच्युतसोमवाहेति' त्रयः ।

यज्ञवाहाः—एषां—'आगस्त्यदार्ढ्यच्युतयज्ञवाहेति' त्रयः ।

सारवाहाः—एषां—'आगस्त्यदार्ढ्यच्युतसारवाहेति' त्रयः ।

दर्भवाहाः—एषां—'आगस्त्यदार्ढ्यच्युतदर्भवाहेति' त्रयः ।

अगस्तयः—एषां—'आगस्त्यमाहेन्द्रमायोभुवेति' त्रयः ।

पूर्णमासाः—एषां—'आगस्त्यपौर्णमासपारणेति' त्रयः ।

हिमोदकाः—एषां—'आगस्त्यहैमवर्चिहैमोदकेति' त्रयः ।

पानिकाः—एषां—'आगस्त्यपैनायकपाणिकेति' त्रयः ।

सारवाहेभ्योऽग्रे षट्गणाः क्वचित् ।

अथ द्विगोत्राः । शौङ्गशैशिरीणामाङ्गिरसबार्हस्पत्यभारद्वाजकात्याक्षीलेति पञ्च, कात्याक्षीलयोः स्थाने शौङ्गशैशिरिर्वा । आङ्गिरसकात्याक्षीलेति त्रयो वा । एषां भरद्वाजैर्विश्वामित्रैश्चाविवाहः । एवं कपिलानां कतानां च । संकृतिपूतिमाषादीनां आङ्गिरसगौरिवीतिसांकृत्येति,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

शाक्त्यगौरिवीतिसांकृत्येति वा, (अन्त्ययोर्व्यत्ययो वा)। एषां स्वगणस्थैर्वसिष्ठैः शौङ्गशैशिरैर्लौगाक्षिभिश्चाविवाहः । कश्यपैरपीति प्रयोगपारिजाते । लौगाक्षीणां काश्यपावत्सारवासिष्ठेति, काश्यपावत्साराऽसितेति वा । एतेऽहर्वसिष्ठा नक्तंकश्यपाः । एषां वसिष्ठैः कश्यपैः संकृतिभिश्चाविवाहः । देवरातस्य जामदग्न्यैर्विश्वामित्रैश्चाविवाह इति प्रयोगपारिजाते । तदयुक्तम् । बह्वृचश्रुतौ—'यथैवाङ्गिरसः सन्नुपेयां तव पुत्रताम् । आङ्गिरसो जन्मनास्याजीगर्तिः श्रुतः कविः ॥' इत्यङ्गिरोगणस्थत्वेन भार्गवजामदग्न्यत्वस्मृतेर्हरिवंशादिस्मृतेश्च बाधात् । तेन द्वौ देवरातौ एक आङ्गिरसः श्रुत्युक्तः । अन्यो भार्गवः । तयोः कल्पभेदेऽप्याङ्गिरसेन देवरातेन जामदग्न्यैर्भवत्येव विवाहः । भार्गवेण तु नेति तत्त्वम् । धनंजयानां विश्वामित्रैरत्रिभिश्चाविवाहः । जातूकर्ण्यानां वसिष्ठैरत्रिभिश्चाविवाहः । एवं दत्तक्रीतकृत्रिमस्वयंदत्तपुत्रिकापुत्रादीनाम् । उत्पादकपालकयोः पित्रोर्गोत्रप्रवरा वर्ज्या इति प्रवरमञ्जरीनारायणवृत्तिप्रयोगपारिजातादयः । अत्र सर्वत्रोपपत्तयो मूलं च मत्कृते प्रवरदर्पणे ज्ञेयमिति दिक् ।

क्षत्रियवैश्ययोस्तु पुरोहितगोत्रप्रवरावेवेति सर्वसिद्धान्तः । यद्यपि बह्वृचपरिशिष्टे कपिभरद्वाजयोर्विवाह उक्तस्तथापि—'भरद्वाजाश्च कपयो गर्गा रौक्षायणा इति । चत्वारोऽपि भरद्वाजगोत्रैक्यान्नान्वयुर्मिथः ॥ कपिगर्गभरद्वाजा मिथो रौक्षायणा द्विजाः । नोद्वहेयुः सगोत्रत्वात्प्रवरैक्याच्च कुत्रचित् ॥' इति स्मृत्यर्थसाराद्युक्तेरविवाह एव तयोरिति ।

स्वगोत्राद्यज्ञाने तु सत्याषाढः—'अथाज्ञानबन्धोः पुरोहितप्रवरेणाचार्यप्रवरेण वेति' । 'आचार्यगोत्रप्रवरानभिज्ञस्तु द्विजः स्वयम् । दत्त्वात्मानं तु कस्मैचित्तद्गोत्रप्रवरो भवेत् ॥ यद्वा स्वगोत्रप्रवरविधुरो जामदग्निजः । विवाहं च न तेनैव गोत्रेण तु समाचरेत् ॥' इति कश्चित् । दिवोदासीयेऽपि—'स्वगोत्रप्रवराज्ञाने जमदग्निमुपाश्रयेत् ॥'

अथ मातृगोत्रवर्जननिर्णयः । शातातपः—'मातुलस्य सुतामूढ्वा मातृगोत्रां तथैव च । समानप्रवरां चैव गत्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥' यद्यपि—'सगोत्रां मातुरप्येके नेच्छन्त्युद्वाहकर्मणि । जन्मनाम्नोरविज्ञानेऽप्युद्वहेदविशङ्कितः ॥' इति व्यासोक्तेरज्ञातनामत्वेन सगोत्रत्वदोषस्तथापि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नेदं कलौ प्रवर्तते । 'गोत्रान्मातुः सपिण्डाच्च विवाहो गोवधस्तथा ।' इति कलिवर्ज्यत्वोक्तेः । इदं मातृगोत्रवर्जनं माध्यन्दिनीयानामेव । 'मातृगोत्रं माध्यन्दिनीयानामपुत्रायाश्च' इति सत्याषाढोक्तेरिति कश्चित् । तन्निर्मूलम् । अत एवाह प्रवरमञ्जरीकारः--'दोषस्यातिगुरुत्वात्सर्वेषां मातृगोत्रं वर्ज्यम्' इति । यत्तु 'एकस्मिन्प्रवरे तुल्ये मातृगोत्रे वरस्य च । तमुद्वाहं न कुर्वीत सा कन्या भगिनी स्मृता । इति मातृकुले प्रवरचिन्तनमुक्तं, तदासुरादिविवाहोढापरमिति दिक् । विस्तरस्तु ग्रन्थान्तरेभ्यो ज्ञेयः ।

सगोत्रादिविवाहे प्रायश्चित्तं स्मृत्यर्थसारे--'इत्थं सगोत्रसंबन्धविवाहविषये स्थिते । यदि कश्चिज्ज्ञानतस्तां कन्यामूढ्वोपगच्छति ॥ गुरुतल्पव्रताच्छुद्ध्येद्गर्भस्तज्जोऽन्त्यतां व्रजेत् । भोगतस्तां परित्यज्य पालयेज्जननीमिव । अज्ञानादैन्दवैः शुद्ध्येत्रिभिर्गर्भस्तु काश्यपः ॥' एवं सापिण्ड्येऽपि--'सपिण्डापत्यदारेषु प्राणत्यागो विधीयते ।' इति बृहद्यमोक्तेः । तिथितत्त्वे बौधायनः--'सपिण्डां सगोत्रां चेदमत्योपयच्छेन्मातृवदेनां बिभृयात् ॥'

कन्याविवाहकाल उक्तो ज्योतिर्निबन्धे--'षडब्दमध्ये नोद्वाह्या कन्या वर्षद्वयं यतः । सोमो भुङ्क्ते ततस्तद्वद्गन्धर्वश्च तथाऽनलः ॥' राजमार्तण्डः--'अयुग्मे दुर्भगा नारी युग्मे तु विधवा भवेत् । तस्माद्गर्भान्विते युग्मे विवाहे सा पतिव्रता ॥ मासत्रयादूर्ध्वमयुग्मवर्षे युग्मेऽपि मासत्रयमेव यावत् । विवाहशुद्धिं प्रवदन्ति सन्तो वात्स्यादयः स्त्रीजनिजन्ममासात् ॥' पराशरमाधवीये तु--'जन्मतो गर्भाधानाद्वा पञ्चमाब्दात्परं शुभम् । कुमारीवरणं दानं मेखलाबन्धनं तथा ॥' इत्युक्तम् । संबन्धतत्त्वे यमः--'कन्या द्वादशवर्षाणि याऽप्रदत्ता वसेद् गृहे । ब्रह्महत्या पितुस्तस्याः सा कन्या वरयेत्स्वयम् ॥ भारते--'त्रिंशद्वर्षः षोडशाब्दां भार्यां विन्देत नग्निकाम्* । द्व्यष्टवर्षोऽष्टवर्षां वा धर्मे सीदति

* नग्निकालक्षणं तूक्तं गृह्यसंग्रहे--'नग्निकां तु वदेत् कन्यां यावन्नर्तुमती भवेत् । ऋतुमती त्वनग्निका तां प्रयच्छेत्तु नग्निकाम् ॥ अप्राप्ता रजसो गौरी प्राप्ते रजसि रोहिणी । अव्यञ्जिता भवेत् कन्या कुचहीना च नग्निका ॥' इति । तथा रजोदर्शनात्प्रागेव विवाहकारणमुक्तं तत्रैव । यथा--'व्यञ्जनैस्तु समुत्पन्नैः सोमो भुञ्जीत कन्यकाम् । पयोधरैस्तु गन्धर्वा रजसाऽग्निः प्रकीर्तितः ॥ तस्मादव्यञ्जनोपेतामरजामपयोधराम् । अभुक्तां चैव सोमाद्यैः कन्यका तु प्रशस्यते ॥' इति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

सत्वरः ॥' अतोऽप्रवृत्ते रजसि कन्यां दद्यात्पिता सकृत् ॥' **तत्रैव**--सप्तसंवत्सरादूर्ध्वं विवाहः सार्ववर्णिकः। कन्यायाः शस्यते राजन्नन्यथा धर्मगर्हितः ॥' **राजमार्तण्डः**--राहुग्रस्ते तथा युद्धे पितॄणां प्राणसंशये। अतिप्रौढा च या कन्या चन्द्रलग्नबलेन तु ॥' **मनुः** -'त्रिंशद्वर्षो वहेत्कन्यां हृद्यां द्वादशवार्षिकीम्। त्र्यष्टवर्षोऽष्टवर्षां वा धर्मे सीदति सत्वरः ॥' यद्यपि—'विवाहस्त्वष्टवर्षीयाः कन्यायाः शस्यते बुधैः।' इति **संवर्तोक्तेः**, 'अत ऊर्ध्वं रजस्वला' इत्यादेश्च दशवर्षादूर्ध्वं विवाहो निषिद्धः, तथापि दातुरभावे द्वादशषोडशाब्दे ज्ञेये। 'त्रीणि वर्षाण्यृतुमती काङ्क्षेत पितृशासनम्। इति **पराशरमाधवीये बौधायनोक्तेश्च**। **मनुः**--'स्त्रीसंबन्धे दशैतानि कुलानि परिवर्जयेत्। हीनक्रियं निःपुरुषं निश्छन्दो रोमशार्शसम् ॥ क्षय्यामयाव्यपस्मारिश्वित्रिकुष्ठिकुलानि च। नर्क्षवृक्षनदीनाम्नीं नान्त्यपर्वतनामिकाम् ॥ न पक्ष्यहिप्रेष्यनाम्नीं न बिभीषणनामिकाम् ॥' **यमः**--'तस्मादुद्वाहयेत्कन्यां यावन्नर्तुमती भवेत्।' **तथा** मूलजादीनां फलं प्रागुक्तम्। **तथा** वर्णवश्यग्रहमैत्र्यादिघटितविचारो ज्योतिर्विद्भ्यो ज्ञेयः। विस्तरात्तु नोच्यते।

अथ गुर्वर्कबलम्। **ज्योतिर्निबन्धे गर्गः**--'स्त्रीणां गुरुबलं श्रेष्ठं पुरुषाणां रवेर्बलम्। तयोश्चन्द्रबलं श्रेष्ठमिति गर्गेण भाषितम् ॥ जन्मत्रिदशमारिस्थः पूजया शुभदो गुरुः। विवाहेऽथ चतुर्थाष्टद्वादशस्थो मृतिप्रदः ॥' **देवलः**-'नष्टात्मजा धनवती विधवा कुशीला पुत्रान्विता हतधवा सुभगा विपुत्रा। स्वामिप्रिया विगतपुत्रधवा धनाढ्या वन्ध्या भवेत्सुरगुरौ क्रमशोभिजन्मा ॥' **बृहस्पतिः**--'झपचापकुलीरस्थो जीवोऽप्यशुभगोचरः। अतिशोभनतां दद्याद्विवाहोपनयादिषु ॥' **लल्लः**--'द्वादशदशमचतुर्थे जन्मनि षष्ठाष्टमे तृतीये च। प्राप्ते पाणिग्रहणे जीवे वैधव्यमाप्नोति ॥' **गर्गः**--सर्वत्रापि शुभं दद्याद् द्वादशाब्दात्परं गुरुः। पञ्चषष्ठाब्दयोरेव शुभगोचरता मता ॥ सप्तमात्पञ्चवर्षेषु स्वोच्चस्वर्क्षगतो यदि। अशुभोऽपि शुभं दद्याच्छुभऋक्षेषु किं पुनः ॥ रजस्वलायाः कन्याया गुरुशुद्धिं न चिन्तयेत्। अष्टमेऽपि प्रकर्तव्यो विवाहस्त्रिगुणार्चनात् ॥ अर्कगुर्वोबलं गौर्या रोहिण्यर्कबला स्मृता। कन्या चन्द्रबला

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्रोक्ता वृषली लग्नतो बला ॥ अष्टवर्षा भवेद्गौरी नववर्षा च रोहिणी ॥ दशवर्षा भवेत्कन्या अत ऊर्ध्वं रजस्वला ॥'

अथ बृहस्पतिशान्तिः । शौनकः--'कन्यकोद्वाहकाले तु आनुकूल्यं न विद्यते । ब्राह्मणस्योपनयने गुरोर्विधिरुदाहृतः ॥ सुवर्णेन गुरुं कृत्वा पीतवस्त्रेण वेष्टयेत् । ईशान्यां धवलं कुम्भं धान्योपरि निधाय च ॥ दमनं मधुपुष्पं च पलाशं चैव सर्षपान् । मांसी गुडूच्यपामार्गौ विडङ्गी शङ्खिनी वचा ॥ सहदेवी हरिक्रान्ता सर्वौषधिशतावरी । बला च सहदेवी च निशाद्वितयमेव च ॥ कृत्वाज्यभागपर्यन्तं स्वशाखोक्तविधानतः । ग्रहोक्तमण्डलेऽभ्यर्च्य पीतपुष्पाक्षतादिभिः ॥ देवपूजोत्तरे काले ततः कुम्भानुमन्त्रणम् । अश्वत्थसमिधश्चाज्यं पायसं सर्पिषा युतम् ॥ यवव्रीहितिलाः साज्या मन्त्रेणैव बृहस्पतेः । अष्टोत्तरशतं सर्वं होमशेषं समापयेत् ॥ पुत्रदारसमेतस्य अभिषेकं समाचरेत् । कुम्भाभिमन्त्रणोक्तैश्च समुद्रज्येष्ठमन्त्रतः ॥ प्रतिमां कुम्भवस्त्रं च आचार्याय निवेदयेत् ॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाच्छुभदः स्यान्न संशयः ॥'

इति बृहस्पतिशान्तिः ॥

शौनकः-गुर्वादित्ये व्यतीपाते वक्रातीचारगो गुरौ । नष्टे शशिनि शुक्रे वा बाले वृद्धेऽथवा गुरौ ॥ पौषे चैत्रेऽथ वर्षासु शरद्यधिकमासके । केतूद्गमे निरंशेऽर्के सिंहस्थेऽमरमन्त्रिणि ॥ विवाहव्रतयात्रादिपुरहर्म्यगृहादिकम् । क्षौरं विद्योपविद्यां च यत्नतः परिवर्जयेत् ॥ मदनपारिजाते ज्योतिःसागरे–'बाले शुक्रे वृद्धे शुक्रे वृद्धे जीवे नष्टे जीवे । बाले जीवे जीवे सिंहे सिंहादित्ये जीवादित्ये ॥ तथा मलिम्लुचे मासि सुराचार्येऽतिचारगे । वापीकूपविवाहादिक्रियाः प्रागुदितास्त्यजेत् ॥ सिंहस्थं मकरस्थं च गुरुं यत्नेन वर्जयेत् ॥' लल्लः–'अतिचारगतो जीवस्तं राशिं नैव चेत्पुनः । लुप्तः संवत्सरो ज्ञेयः सर्वकर्मबहिष्कृतः ॥' सिंहस्थगुरोरपवादमाह पराशरः–'गोदाभागीरथीमध्ये नोद्वाहः सिंहगे गुरौ । मघास्थे सर्वदेशेषु तथा मीनगते रवौ ॥' वसिष्ठोऽपि–विवाहो दक्षिणे कूले गौतम्यां, नेतरत्र तु । भागीरथ्युत्तरे कूले गौतम्या दक्षिणे तथा । विवाहो व्रतबन्धश्च सिंहस्थेज्ये न दुष्यति ॥'

कन्यादातृक्रममाह याज्ञवल्क्यः'पिता पितामहो भ्राता सकुल्यो

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

जननी तथा । कन्याप्रदः पूर्वनाशे प्रकृतिस्थः परः परः ॥ अप्रयच्छन्स-माप्नोति भ्रूणहत्यामृतावृतौ । गम्यं त्वभावे दातॄणां कन्या कुर्यात्स्वयं-वरम् ॥ भ्रातॄणां संस्कृतानामेवाधिकारमाह स एव याज्ञवल्क्यः—असंस्कृतास्तु संस्कार्या भ्रातृभिः पूर्वसंस्कृतैः । भगिन्यश्च निजादंशाद-त्त्वांशं तु तुरीयकम् ॥' अत्र चकारेण पूर्वसंस्कृतैरित्यस्यानुवृत्तेर्विवाह-पर्याप्तद्रव्यदाने स्वांशचतुर्थभागदाने वा संस्कृतग्रहणं व्यर्थं स्यात्, अतः कर्तृनियमोऽयम् । तेनानुपनीतभ्रातृमात्रादिसत्त्वे मात्रादेरेवाधिकारो न भ्रातुरित्युक्तं संबन्धतत्त्वादौ । कन्यास्वयंवरे मातुर्दातृत्वे च ताभ्या-मेव नान्दीश्राद्धं कार्यम् । तत्र च स्वयं प्रधानसंकल्पमात्रं कृत्वाऽन्यद्ब्रा-ह्मणद्वारा कारयेदिति प्रयोगपारिजाते । वरस्तु संस्कृतभ्रात्राद्यभावे स्वयमेव नान्दीश्राद्धं कुर्यात् न माता । 'पुत्रेषु विद्यमानेषु नान्यं वै कारयेत्स्वधाम् ।' इति निषेधात् । उपनयनेन कर्माधिकारस्य जातत्वा-च्चेति पृथ्वीचन्द्रोदय. । माधवीयेऽपरार्के च नारदः—'पिता दद्या-त्स्वयं कन्यां भ्राता वाऽनुमते पितुः । मातामहो मातुलश्च सकुल्यो बान्धवस्तथा ॥ माता त्वभावे सर्वेषां प्रकृतौ यदि वर्तते । तस्यामप्रकृति-स्थायां कन्यां दद्युः स्वजातयः ॥ सकुल्यः पितृपक्षीयो बान्धवो मातृ-वंशजः ॥ मदनपारिजाते कात्यायनः—'स्वयमेवौरसीं दद्यात्पित्रभावे स्वबान्धवाः । मातामहस्ततोऽन्यां हि माता वा धर्मजां सुताम् ॥', ततोऽन्यामौरसीभिन्नां धर्मजां नियोगात्क्षेत्रजां मातामहो माता मातुलो वा दद्यात् । तेनौरसीदाने पितृबन्धुषु सत्सु मातामहादीनां नाधिकारः अनुमतिं विना । अस्यापवादस्तत्रैव—'दीर्घप्रवासयुक्तेषु पौगण्डेषु च बन्धुषु ॥ माता तु समये दद्यादौरसीमपि कन्यकाम् ॥ मनुः—'यदा तु नैव कश्चित्स्यात्कन्या राजानमाव्रजेत्' ।

परकीयकन्यादाने विशेषो मदनरत्ने स्कान्दे—'आत्मीकृत्य सुवर्णेन परकीयां तु कन्यकाम् । धर्मेण विधिना दानमसगोत्रेऽपि युज्यते ॥' अत्र प्रकृतिस्थग्रहणादप्रकृतिस्थेन कृतमकृतमेव । 'स्वतन्त्रो यदि तत्कार्यं कुर्यादप्रकृतिं गतः । तदप्यकृतमेव स्यादस्वातन्त्र्यस्य हेतुतः ॥' इत्यपरार्के नारदोक्तेः । यदि तु सप्तपदीविवाहहोमादि प्रधानं जातं तदाङ्गवैकल्येऽपि नावृत्तिर्विवाहस्य । गौडा अप्येवमाहुः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तत्रैव **मरीचिः**—'गौरीं ददन्नाकपृष्ठं, वैकुण्ठं रोहिणी ददत्। कन्यां ददद् ब्रह्मलोकं रौरवं तु रजस्वलाम्।'

अथ मासनिर्णयः। तत्र जन्ममासे विशेषः प्रागुक्तः। **ज्योतिःप्रकाशे व्यासः**—'माघफाल्गुनवैशाखे यद्यूढा मार्गशीर्षके। ज्येष्ठे वाषाढमासे च सुभगा वित्तसंयुता॥ श्रावणे वापि पौषे वा कन्या भाद्रपदे तथा। चैत्राश्वयुक्कार्तिकेषु याति वैधव्यतां लघु॥' **नारदः**—'माघफाल्गुनवैशाखज्येष्ठमासाः शुभप्रदाः। कार्तिको मार्गशीर्षश्च मध्यमौ, निन्दिताः परे' इति॥ **वसिष्ठः**—'पौषेऽपि कुर्यान्मकरस्थितेऽर्के चैत्रे भवेन्मेषगतो यदा स्यात्। प्रशस्तमाषाढकृतं विवाहं वदन्ति गर्गा मिथुनस्थितेऽर्के॥' **आचार्यचूडामणौ ज्योतिर्गर्गराजमार्तण्डौ**—'माङ्गल्येषु विवाहेषु कन्यासंवरणेषु च॥ दश मासाः प्रशस्यन्ते चैत्रपौषविवर्जिताः॥' **आपस्तम्बः**—'सर्वे ऋतवो विवाहस्य शैशिरौ मासौ परिहाप्योत्तमं च नैदाघम्।' 'अत्र माघफाल्गुनाषाढवर्जं नव मासा मुख्यः कालः' इति **सुदर्शनभाष्ये इडविलायां ब्रह्मविद्यातीर्थै**श्चोक्तम्। **बौधायनसूत्रेऽपि**—'सर्वे मासा विवाहस्य, शुचितपस्तपस्यवर्जम्' इत्येके। तेन 'पूर्वोत्तरौ शिशिरसंबन्धिनौ मासौ पौषचैत्रौ विहाय' इति **निर्णयामृतव्याख्यानं** मौर्ख्यकृतमित्युपेक्ष्यम्। निशि चेत्सर्वेषु द्वादशस्वपि मासेषूद्वहेदिति **कालादर्शः**। ये तु ज्योतिषे माघादिविधयस्ते गृह्यसूत्राणां द्विजपरत्वेन प्राबल्याच्छूद्रादिपराः। **ज्योतिषे**—'वात्स्यो वर्षमनूनमिच्छति तथा रैभ्योऽयनं चोत्तरं श्रीवासन्तमृतुं विहाय मुनयो माण्डव्यशिष्या जगुः। चैत्रं प्रोज्झ्य पराशरः परिणये पौषं च दौर्भाग्यदं ह्याषाढादि चतुष्टयं न हितदं कैश्चित्प्रदिष्टं बुधैः॥' **चण्डेश्वरः**—'मार्गे मासि तथा ज्येष्ठे क्षौरं परिणयं व्रतम्। ज्येष्ठपुत्रदुहित्रोस्तु यत्नेन परिवर्जयेत्॥ कृत्तिकास्थं रविं त्यक्त्वा ज्येष्ठपुत्रस्य कारयेत्। उत्सवादिषु कार्येषु दिनानि दश वर्जयेत्॥' **रत्नकोशे**—'जन्मर्क्षे जन्मदिवसे जन्ममासे शुभं त्यजेत्। ज्येष्ठे मास्याद्यगर्भस्य शुभं वर्ज्यं स्त्रिया अपि॥' **पराशरः**—'अज्येष्ठा कन्यका यत्र ज्येष्ठपुत्रो वरो यदि। व्यत्ययो वा तयोस्तत्र ज्येष्ठमासः शुभप्रदः॥' **मिहिरः**—'ज्येष्ठस्य ज्येष्ठकन्याया

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विवाहो न प्रशस्यते। तयोरन्यतरे ज्येष्ठे ज्येष्ठो मासः प्रशस्यते ॥ द्वौ ज्येष्ठौ मध्यमौ प्रोक्तावेकं ज्येष्ठं शुभावहम्। ज्येष्ठत्रयं न कुर्वीत विवाहे सर्वसंमतम् ॥' यत्तु—'सार्वकालमेके विवाहम्' इति, तदासुरादिविवाहविषयम्। 'धर्म्येषु विवाहेषु कालपरीक्षणं, नाधर्म्येषु' इति गृह्यपरिशिष्टात्। रत्नमालायामप्येवम्। तेनासुरादयो माघचैत्रादिनिषिद्धकालेष्वपि भवन्ति। मासाः सौराः, 'सौरो मासो विवाहादौ' इत्युक्तेः। 'झषो न निन्द्यो यदि फाल्गुने स्यादजस्तु वैशाखगतो न निन्द्यः।' इति त्वपवादः।

अथ दश दोषाः। व्यवहारोच्चये—'वेधश्च लत्ता च तथैव पातः खर्जूरवेधो दशयोगचक्रम्। युतिश्च जामित्रमुपग्रहश्च बाणाख्यवज्रं च दशैव दोषाः ॥' एषां लक्षणं ज्योतिषे ज्ञेयम्। अतिचारगे गुरौ तु वसिष्ठः—'अतिचारगते जीवे वर्जयेत्तदनन्तरम्। विवाहादिषु कार्येषु अष्टात्रिंशतिवासरान् ॥'। रत्नमालायाम्—'एकपञ्चनवयुग्मषड्दशत्रीणि सप्तचतुरष्टलाभगः। द्वादशाजवृषभादिराशितो घातचन्द्र इति कीर्तितो बुधैः ॥' नारदः—'भूबाणनन्दहस्ताश्च रसदिग्वह्निशैलजाः। वेदा वसुशिवादित्या घातचन्द्रो यथाक्रमम् ॥ यात्रायां युद्धकार्येषु घातचन्द्रं विवर्जयेत्। विवाहे सर्वमाङ्गल्ये चौलादौ व्रतबन्धने ॥ घातचन्द्रो नैव चिन्त्य इति पाराशरोऽब्रवीत् ॥' ज्योतिर्निबन्धे—'विवाहचौलव्रतबन्धयज्ञे पट्टाभिषेके च तथैव राज्ञाम्। सीमन्तयात्रासु तथैव जाते नो चिन्तनीयः खलु घातचन्द्रः ॥' नारदः—'अकालजा भवेयुश्चेद्विद्युन्नीहारवृष्टयः। प्रत्यर्कपरिवेषेन्द्रचापाभ्रध्वनयो यदि ॥ दोषाय मङ्गले नूनं न दोषायैव कालजाः ॥' अकालवृष्टिस्वरूपमाह लल्लः—'पौषादिचतुरो मासाः प्रोक्ता वृष्टिरकालजा।' इति। शार्ङ्गधरः—'निर्घाते क्षितिचलने ग्रहयुद्धे राहुदर्शने चैव। आ पञ्चदिनात्कन्या परिणीता नाशमुपयाति ॥ उल्कापातेन्द्रचापप्रबलघनरजोधूमनिर्घातविद्युद्वृष्टिप्रत्यर्कदोषादिषु सकलबुधैस्त्याज्यमेवैकरात्रम्। दुःस्वप्ने दुर्निमित्ते ह्यशुभफलदृशो दुर्मनोभ्रान्तबुद्धौ चौले मौञ्जीनिबन्धे परिणयनविधौ सर्वदा त्याज्यमेव ॥' ज्योतिः प्रकाशे—'अर्वाक् षोडश नाड्यः संक्रान्ते पुण्यदाः परतः। उपनयनव्रतयात्रापरिणयनादौ विवर्ज्यास्ताः ॥' गर्गः—'दिग्दाहे दिन-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मेकं च ग्रहे सप्तदिनानि तु । भूकम्पे च समुत्पन्ने त्र्यहमेव तु वर्जयेत् ॥ उल्कापाते त्रिदिवसं धूमे पञ्च दिनानि च । वज्रपाते चैकदिनं वर्जयेत्सर्वकर्मसु ॥ दर्शनादर्शनाद्राहुकेत्वोः सप्तदिनं त्यजेत् । यावत्केतूद्गमस्तावदशुभः समयो भवेत् ॥' अस्यापवादोऽद्भुतसागरे–'अथ दिवसत्रयमध्ये मृदु पानीयं यदा भवति । उत्पातदोषशमनं तदैव संप्राहुराचार्याः ॥', संबन्धतत्त्वे–'भूकम्पादेर्न दोषोऽस्ति वृद्धिश्राद्धे कृते सति ।'

अथापरिहार्ये कन्यावैधव्ययोगे विशेष उच्यते । मार्कण्डेयपुराणे–'बालवैधव्ययोगे तु कुम्भद्रुप्रतिमादिभिः । कृत्वा लग्नं रहः पश्चात्कन्योद्वाह्येति चापरे ॥' अत्र पुनर्भूदोषाभाव उक्तो विधानखण्डे–स्वर्णाम्बुपिप्पलानां च प्रतिमा विष्णुरूपिणी । तया सह विवाहे तु पुनर्भूत्वं न जायते ॥' सूर्यारुणसंवादे–'विवाहात्पूर्वकाले च चन्द्रताराबलान्विते । विवाहोक्ते च तां कन्यां कुम्भेन सह चोद्वहेत् ॥ सूत्रेण वेष्टयेत्पश्चाद्दशतन्तुविधानतः । कुङ्कुमालंकृतं देहं तयोरेकान्तमन्दिरे ॥ ततः कुम्भं च निःसार्य प्रभञ्ज्य सलिलाशये । ततोऽभिषेचनं कुर्यात्पञ्चपल्लववारिभिः ॥' कुम्भप्रार्थना तत्रैव–'वरुणाङ्गस्वरूपाय जीवनानां समाश्रय । पतिं जीवय कन्यायाश्चिरं पुत्रसुखं कुरु ॥ देहि विष्णो वरं देव कन्यां पालय दुःखतः । ततोऽलंकारवस्त्राढ्यां वराय प्रतिपादयेत् ॥

कुम्भविवाहः

इति कुम्भविवाहः ॥

मूर्तिदानमपि तत्रैवोक्तम्–'ब्राह्मणं साधुमामन्त्र्य संपूज्य विविधार्हणैः । तस्मै दद्याद्विधानेन विष्णोर्मूर्तिं चतुर्भुजाम् ॥ शुद्धवर्णसुवर्णेन वित्तशक्त्याथ वा पुनः । निर्मितां रुचिरां शङ्खगदाचक्राब्जसंयुताम् ॥ दधानां वाससी पीते कुसुदोत्पलमालिनीम् । सदक्षिणां च तां दद्यान्मन्त्रमेतमुदीरयेत् ॥ यन्मया प्रांचजनुषि घ्नन्त्या पतिसमागमम् । विषोपविषशस्त्राद्यैर्हतो वातिविरक्तया ॥ प्राप्यमानं महाघोरं यशःसौख्यधनापहम् । वैधव्याद्यतिदुःखौघनाशाय शुभलब्धये ॥ बहुसौभाग्यलब्ध्यै च महाविष्णोरिमां तनुम् । सौवर्णीं निर्मितां शक्त्या तुभ्यं संप्रददे द्विज ॥ अनघाद्याहमस्मीति त्रिवारं प्रजपेदिति । एवमस्त्विति तस्याशीर्गृहीत्वा

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्वगृहं विशेत्। ततो वैवाहिकं कुर्याद्विधिं दाता मृगीदृशः॥' अन्येऽप्यश्वत्थविवाहवृक्षसेचनादयस्तत्रैव ज्ञेयाः। विस्तरभयान्नोच्यन्ते।

अथ प्रतिकूलादि। ज्योतिर्निबन्धे गर्गः—'कृते तु निश्चये पश्चान्मृत्युर्भवति कस्यचित्। तदा न मङ्गलं कुर्यात्कृते वैधव्यमाप्नुयात्॥' ज्योतिर्मेधातिथिः—'वधूवरार्थे घटिते सुनिश्चिते वरस्य गेहेऽप्यथ कन्यकायाः। मृत्युर्यदि स्यान्मनुजस्य कस्यचित्तदा न कार्यं खलु मङ्गलं बुधैः॥' मङ्गलं=विवाहः। स्मृतिचन्द्रिकायाम्—'कृते वाङ्निश्चये पश्चान्मृत्युर्भवति गोत्रिणः। तदा न मङ्गलं कार्यं नारीवैधव्यदं ध्रुवम्॥' भृगुः—'वाग्दानानन्तरं यत्र कुलयोः कस्यचिन्मृतिः। तदोद्वाहो नैव कार्यः स्ववंशक्षयदोषतः॥' शौनकः—'वरवध्वोः पिता माता पितृव्यश्च सहोदरः। एतेषां प्रतिकूलं च महाविघ्नप्रदं भवेत्॥ पिता पितामहश्चैव माता चैव पितामही। पितृव्यः स्त्रीसुतौ भ्राता भगिनी चाविवाहिता॥ एभिरत्र विपन्नैश्च प्रतिकूलं बुधैः स्मृतम्। अन्यैरपि विपन्नैस्तु केचिदूचुर्न तद्भवेत्॥' माण्डव्यः—'वाग्दानानन्तरं माता पिता भ्राता विपद्यते। विवाहो नैव कर्तव्यः स्ववंशस्थितिमिच्छता।

संकटे तु मेधातिथिः—'वाग्दानानन्तरं यत्र कुलयोः कस्यचिन्मृतिः। तदा संवत्सरादूर्ध्वं विवाहः शुभदो भवेत्॥' स्मृतिरत्नावल्याम्—'पितुरब्दमशौचं स्यात्तदर्धं मातुरेव च। मासत्रयं तु भार्यायास्तदर्धं भ्रातृपुत्रयोः॥ अन्येषां तु सपिण्डानामाशौचं मासमीरितम्। तदन्ते शान्तिकं कृत्वा ततो लग्नं विधीयते॥' ज्योतिःप्रकाशे—'प्रतिकूलेऽपि कर्तव्यो विवाहो मासतः परम्। शान्तिं विधाय गां दत्त्वा वाग्दानादि चरेत्पुनः॥' शान्ति=विनायकशान्तिम्। तथा च मेधातिथिः—'संकटे समनुप्राप्ते याज्ञवल्क्येन योगिना। शान्तिरुक्ता गणेशस्य कृत्वा तां शुभमाचरेत्॥' इति॥ 'प्रतिकूले न कर्तव्यो गच्छेद्यावदृतुत्रयम्। प्रतिकूलेऽपि कर्तव्यमित्याहुर्बहुविप्लवे॥ प्रतिकूले सपिण्डस्य मासमेकं विवर्जयेत्॥' ज्योतिःसागरे—'दुर्भिक्षे राष्ट्रभङ्गे च पित्रोर्वा प्राणसंशये। प्रौढायामपि कन्यायां नानुकूल्यं प्रतीक्ष्यते॥' मेधातिथिः—'पुरुषत्रयपर्यन्तं प्रतिकूलं स्वगोत्रिणाम्। प्रवेशान्निर्गमस्तद्वत्तथा मण्डनमुण्डने॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्रेतकर्माण्यनिर्वर्त्य चरेन्नाभ्युदयक्रियाम्। आचतुर्थं ततः पुंसि पञ्चमे शुभदं भवेत्॥'

अथ **रजोदोषे निर्णयः**। **माधवीये**—'प्रारम्भात्प्राग्विवाहस्य माता यदि रजस्वला। निवृत्तिस्तस्य कर्तव्या सहत्वश्रुतिचोदनात्॥ प्रारम्भात्= नान्दीश्राद्धात्। 'नान्दीमुखं विवाहादौ' इत्यादिना तस्यैव प्रारम्भोक्तेः। **मेधातिथिः**—'चौले च व्रतबन्धे च विवाहे यज्ञकर्मणि। भार्या रजस्वला यस्य प्रायस्तस्य न शोभनम्॥ वधूवरान्यतमयोर्जननी चेद्रजस्वला। तस्याः शुद्धेः परं कार्यं माङ्गल्यं मनुरब्रवीत्॥' **वृद्धमनुः**—'विवाहव्रत-चूडासु माता यदि रजस्वला। तदा न मङ्गलं कार्यं शुद्धौ कार्यं शुभेप्सुभिः॥' **गर्गः**—'यस्योद्वाहादिमाङ्गल्ये माता यदि रजस्वला। तदा न तत्प्रकर्तव्यमायुःक्षयकरं यतः॥' नान्दीश्राद्धोत्तरं रजोदोषे तु **कपर्दिकारिकासु**—'सूतिकोदक्ययोः शुद्ध्यै गां दद्याद्धोमपूर्वकम्। प्राप्ते कर्मणि शुद्धिः स्यादितरस्मिन्न शुद्ध्यति॥ अलाभे सुमुहूर्तस्य रजोदोषे च संगते। श्रियं संपूज्य तत्कुर्यात्पाणिग्रहणमङ्गलम्॥ हैमीं माषमितां पद्मां श्रीसूक्त-विधिनार्चयेत्॥ प्रत्यृचं पायसं हुत्वा अभिषेकं समाचरेत्॥' इति। **सूतकादिसंकटे** तु कूष्माण्डीभिर्घृतं हुत्वा पयस्विनीं गां च दत्त्वा विवाहादि कुर्यादिति च वक्ष्यते।

अथैकक्रियानिर्णयः। **ज्योतिर्निबन्धे वृद्धमनुः**—'एकमातृजयोरेकवत्सरे पुरुषस्त्रियोः। न समानक्रियां कुर्यान्मातृभेदे विधीयते॥' एतेन एकस्य पुंसो बिवाहद्वयमेकदिने निषिद्धं, मातृभेदाभावात्। **नारदः**—'पुत्रोद्वाहात्परं पुत्रीविवाहो न ऋतुत्रये। न तयोर्व्रतमुद्वाहान्मण्डनादपि मुण्डनम्॥' **वराहः**—'विवाहस्त्वेकजातानां षण्मासाभ्यन्तरे यदि। असंशय त्रिभिर्वर्षैस्तत्रैका विधवा भवेत्॥' **मदनरत्ने वसिष्ठः**—'न पुंविवाहोर्ध्वमृतुत्रयेऽपि विवाहकार्यं दुहितुः प्रकुर्यात्। न मण्डनाच्चापि हि मुण्डनं च गोत्रैकतायां यदि नाब्दभेदः॥ एकोदरभ्रातृविवाह-कृत्यं स्वसुर्न पाणिग्रहणं विधेयम्। षण्मासमध्ये मुनयः समूचुर्न मुण्डनं मण्डनतोऽपि कार्यम्॥' **एतदपवादस्तत्रैव**—'ऋतुत्रयस्य मध्ये चेदन्याब्दस्य प्रवेशनम्। तदा ह्येकोदरस्यापि विवाहस्तु प्रशस्यते॥' सारा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वल्याम्–'फाल्गुने चैत्रमासे तु पुत्रोद्वाहोपनायने । भेदादब्दस्य कुर्वीत नर्तुत्रयविलङ्घनम् ॥' संहिताप्रदीपे–'ऊर्ध्वं विवाहात्तनयस्य नैव कार्यो विवाहो दुहितुः समार्धम् ॥ अप्राप्य कन्यां श्वशुरालयं च वधू प्रवेश्या स्वगृहं च नादौ ॥' मदनरत्ने वसिष्ठः–'द्विशोभनं त्वेकगृहेऽपि नेष्टं शुभं तु पश्चान्नवभिर्दिनैस्तु । आवश्यकं शोभनमुत्सवो वा द्वारेऽथवाचार्यविभेदतो वा ॥ एकोदरप्रसूतानां नाग्निकार्यत्रयं भवेत् । भिन्नोदरप्रसूतानां नेतिशातातपोऽब्रवीत् ॥' ज्योतिर्निबन्धे कात्यायनः–'कुले ऋतुत्रयादर्वाङ् मण्डनान्न तु मुण्डनम् । प्रवेशान्निर्गमो नेष्टो न कुर्यान्मङ्गलत्रयम् ॥ कुर्वन्ति मुनयः केचिदन्यस्मिन्वत्सरे लघु । लघु वा गुरु वा कार्यं प्राप्तं नैमित्तिकं तु यत् ॥ पुत्रोद्वाहः प्रवेशाख्यः कन्योद्वाहस्तु निर्गमः । मुण्डनं चौलमित्युक्तं व्रतोद्वाहौ तु मङ्गलम् ॥ चौलं मुण्डनमेवोक्तं वर्जयेन्मण्डनात्परम् । मौञ्जी चोभयतः कार्या यतो मौञ्जी न मुण्डनम् ॥ अभिन्नवत्सरेऽपि स्यात्तदहस्तत्र भेदयेत् । अभेदे तु विनाशः स्यान्न कुर्यादेकमण्डपे ।'

संकटे तु कपर्दिकारिकासु वराहमिहिरश्च–'उद्वाह्य पुत्रीं न पिता विदध्यात्पुत्र्यन्तरस्योद्वहनं कदाचित् । यावच्चतुर्थं दिनमत्र पूर्वं समाप्य चान्योद्वहनं विदध्यात् ॥' कश्यपः–'मौञ्जीबन्धस्तथोद्वाहः षण्मासाभ्यन्तरेऽपि वा । पुत्र्युद्वाहं न कुर्वीत विभक्तानां न दोषकृत् ॥' ज्योतिर्निबन्धे–'विवाहमारभ्य चतुर्थिमध्ये श्राद्धं दिनं दर्शदिनं यदि स्यात् । वैधव्यमाप्नोति तदाशु कन्या जीवेत्पतिश्चेदनपत्यता स्यात् ॥' तथा–'विवाहमध्ये यदि चेत्क्षयाहस्तत्र स्वमुख्याः पितरो न यान्ति । वृत्ते विवाहे परतस्तु कुर्याच्छ्राद्धं स्वधाभिर्न तु दूषयेत्तम् ॥', 'ये वा भद्रं दूषयन्ति स्वधाभिः ।' इति श्रुतेश्च । मासिकविषये कालहेमाद्रौ शाट्यायनिः–'प्रेतश्राद्धानि सर्वाणि सपिण्डीकरणं तथा । अपकृष्यापि कुर्वीत कर्तुं नान्दीमुखं द्विजः ॥' वृद्धिं विनापकर्षे दोषमाह तत्रैवोशनाः–'वृद्धिश्राद्धविहीनस्तु प्रेतश्राद्धानि यश्चरेत् । स श्राद्धी नरके घोरे पितृभिः सह मज्जति ॥' मेधातिथिः–'प्रेतकर्माण्यनिर्वर्त्य चरेन्नाभ्युदयक्रियाम् । आचतुर्थं ततः पुंसि पञ्चमे शुभदं भवेत् ॥' स्मृत्यन्तरे–'सपिण्डीकरणादर्वागपकृष्य कृतान्यपि । पुनरप्यपकृष्यन्ते वृद्ध्युत्तरनिषेधनात् ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्मृतिसारावल्याम्—'भ्रातृयुगे स्वसृयुगे भ्रातृस्वसृयुगे तथा। एकस्मिन्मण्डपे चैव न कुर्यान्मण्डनद्वयम्॥' सहोदरविषयमेतत्। **यमः**—'एकोदरप्रसूतानामेकस्मिन्वासरे पुनः। विवाहो नैव कुर्वीत मण्डनोपरि मुण्डनम्॥' **गार्ग्यः**—'भ्रातृयुगे स्वसृयुगे भ्रातृस्वसृयुगे तथा। न कुर्यान्मङ्गलं किंचिदेकस्मिन्मण्डपेऽहनि॥ एकस्मिन्वासरे प्राप्ते कुर्याद्यमलजातयोः। क्षौरं चैव विवाहं च मौञ्जीबन्धनमेव च॥' **ज्योतिर्विवरणे**—'एकोदरयोर्द्वयोरेकदिनोद्वहने भवेन्नाशः। नद्यन्तर एकदिने केऽप्याहुः संकटे च शुभम्॥ ऊर्ध्वं विवाहाच्छुभदो नरस्य नारीविवाहो न ऋतुत्रयं स्यात्। नारीविवाहात्तदहेऽपि शस्तं नरस्य पाणिग्रहमाहुरार्याः॥' भिन्नमातृजयोस्तु एकवासरे विवाहमाह **मेधातिथिः**—'पृथङ्मातृजयोः कार्यो विवाहस्त्वेकवासरे। एकस्मिन्मण्डपे कार्यः पृथग्वेदिकयोस्तथा॥ †पुष्पपट्टिकयोः कार्यं दर्शनं न शिरःस्थयोः। भगिनीभ्यामुभाभ्यां च यावत्सप्तपदी भवेत्॥' यमयोस्तु विशेषो **भट्टकारिकायाम्**—'एकस्मिन्वत्सरे चैकवासरे मण्डपे तथा। कर्तव्यं मङ्गलं स्वस्रोर्भ्रात्रोर्यमलजातयोः॥' **ज्योतिर्निबन्धे नारदः**—'प्रत्युद्वाहो नैव कार्यो नैकस्मै दुहितृद्वयम्। न चैकजन्ययोः पुंसोरेकजन्ये तु कन्यके॥ नैवं कदाचिदुद्वाहो नैकदा मुण्डनद्वयम्। नैकजन्ये तु कन्ये द्वे पुत्रयोरेकजन्ययोः॥ न पुत्रीद्वयमेकस्मै प्रदद्यात्तु कदाचन॥' इति॥

कन्याया रजोदर्शने तु अपरार्के संवर्तः—'माता चैव पिता चैव ज्येष्ठभ्राता तथैव च। त्रयस्ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम्॥' **हारीतः**—'पितुर्गेहे तु या कन्या रजः पश्यत्यसंस्कृता। सा कन्या वृषली ज्ञेया तत्पतिर्वृषलीपतिः॥' **देवलात्रिकश्यपाः**—पूर्वार्धं तदेव। 'भ्रूणहत्या पितुस्तस्याः सा कन्या वृषली स्मृता॥' यस्तां समुद्वहेत्कन्यां ब्राह्मणो ज्ञानदुर्बलः। अश्राद्धेयमपाङ्क्तेयं तं विद्याद् वृषलीपतिम्॥' **माधवीये बौधायनः**—'त्रीणि वर्षाण्यृतुमती काङ्क्षेत पितृशासनम्॥' **विष्णुः**—

---

† उभाभ्यां भगिनीभ्यां शिरःस्थयोः पुष्पपट्टिकयोर्दर्शनं न कार्यम्: एतावता परस्परवरशिरःस्थपुष्पपट्टिकदर्शनं परस्परकन्ययोर्निषिद्धम्' इति व्याख्यातमत्रैव टीकायाम्।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'ऋतुत्रयमुपास्यैव कन्या कुर्यात्स्वयंवरम् ॥' अत्र वरस्य दोषाभावमाह **यमः**--'कन्या द्वादश वर्षाणि याऽप्रदत्ता वसेद् गृहे । भ्रूणहत्या पितुस्तस्याः सा कन्या वरयेत्स्वयम् ॥ एवं चोपनतां पत्नीं नावमन्येत्कदाचन । न तु तां बन्धकीं विद्वान्मनुः स्वायंभुवोऽब्रवीत् ॥' **मनुः**--'अलंकारं नाददीत पितृदत्तं स्वयंवरे । पितृदत्तं मातृदत्तं स्तेयी स्याद्यदि तं हरेत् ॥' वरं प्रत्याह --'पित्रे न दद्याच्छुल्कं तु कन्यामृतुमतीं हरन् । स हि स्वाम्यादतिक्रामेदृतूनां प्रतिबोधनात् ॥'

अत्र **प्रायश्चित्तमुक्तमाश्वलायनेन**--'कन्यामृतुमतीं शुद्धां कृत्वा निष्कृतिमात्मनः । शुचिं च कारयित्वा तामुद्वहेदानृशंस्यधीः ॥ पिता ऋतून्स्वपुत्र्यास्तु गणयेदादितः सुधीः । दानावधि गृहे यत्नात्पालयेच्च रजोवतीम् ॥ दद्यात्तदृतुसंख्या गाः शक्तः कन्यापिता यदि । दातव्यैकापि निःस्वेन दाने तस्या यथाविधि ॥ दद्याद्वा ब्राह्मणेष्वन्नमतिनिःस्वः सदक्षिणम् । तस्यातीतर्तुसंख्येषु वराय प्रतिपादयेत् ॥ उपोष्य त्रिदिनं कन्या रात्रौ पीत्वा गवां पयः । अदृष्टरजसे दद्यात्कन्यायै रत्नभूषणम् ॥ तामुद्वहन्वरश्चापि कूष्माण्डैर्जुहुयाद् द्विजः ॥' इति **मदनपारिजाते यज्ञपार्श्वः**--'विवाहे वितते तन्त्रे होमकाल उपस्थिते । कन्यामृतुमतीं दृष्ट्वा कथं कुर्वन्ति याज्ञिकाः ॥ स्नापयित्वा तु तां कन्यामर्चयित्वा यथाविधि । युञ्जानामाहुतिं हुत्वा ततस्तन्त्रं प्रवर्तयेत् ॥' **बौधायनसूत्रम्**-'अथ यदि कन्योपसाद्यमाना चोह्यमाना वा रजस्वला स्यात्तामनुमन्त्रयेत् । पुमांसौ मित्रावरुणौ पुमांसावश्विनावुभौ । पुनानिन्द्रश्च सूर्यश्च पुमांसं च दधात्वियम् ।' इति । अथ द्वादशरात्रमलंकृत्य प्राशयेत्पञ्चगव्यमथ शुद्धां कृत्वा विवहेत् ।

अत्र **गान्धर्वाद्यष्टौ विवाहाः**, तद्व्यवस्था चाकरे ज्ञेया । **मनुः**--'षडानुपूर्व्या विप्रस्य क्षत्रस्य चतुरोऽवरान् । विट्शूद्रयोस्तु तानेव विद्याद्धर्म्यानराक्षसान् ॥' चतुर आसुरगान्धर्वराक्षसपैशाचान् । तान राक्षसवर्ज्यान्वैश्यशूद्रयोः । **स एव**--'आसुरं वैश्यशूद्रयोः' । **हेमाद्रौ पैठीनसिः**--'राक्षसो वैश्यस्य, पैशाचः शूद्रस्य ।' **प्रचेताः**--'पैशाचोऽसंस्कृतप्रसूतानां प्रतिलोमजानां च' । **मनुः**--'राज्ञस्तथासुरो वैश्ये शूद्रे चान्त्यस्तु गर्हितः ।' क्षत्रियादेः संकटे पैशाचमाह **माधवीये वत्सः**--'सर्वो-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पायैरसाध्या स्यात्सुकन्या पुरुषस्य या। चौर्येणापि विवाहेन सा विवाह्या रहःस्थिता ॥' गन्धर्वादिविवाहेष्वप्युदकपूर्वकं दानमाह तत्रैव यमः--'नोदकेन न वा वाचा कन्यायाः पतिरुच्यते। पाणिग्रहणसंस्कारात्पतित्वं सप्तमे पदे ॥' पराशरमाधवीये देवलोऽपि--'गन्धर्वादिविवाहेषु पुनर्वैवाहिको विधिः। कर्तव्यश्च त्रिभिर्वर्णैः समर्थेनाग्निसाक्षिकः ॥' त्रैवर्णिकेगान्धर्वादौ विप्रवर्जमधिकार उक्तः। तत्रैव परिशिष्टे--'गान्धर्वासुरपैशाचा विवाहो राक्षसश्च यः। पूर्वं परिश्रयस्तेषु पश्चाद्धोमो विधीयते ॥' अतो होमादावकृते भार्यात्वाभावाद्वरान्तराय देया। तथाच तत्रैव वसिष्ठबौधायनौ--'बलादपहृता कन्या मन्त्रैर्यदि न संस्कृता। अन्यस्मै विधिवद्देया यथा कन्या तथैव सा ॥' इति। अत्र मन्त्रसंस्काराभावेऽन्यस्मै दानस्य सर्वविवाहेषु साम्याद्बलादपहारे राक्षसपैशाचयोर्विशेषवचनं व्यर्थम्। तेन तयोर्यदि न संस्कृता संस्कृता वेत्यावृत्य कन्यानुमत्यभावेऽन्यस्मै देयेति व्याख्येयम्। मदनपारिजाते नारदः--'पाणिग्रहणिका मन्त्रा नियतं दारलक्षणम्। तेषां च निष्ठा विज्ञेया विद्वद्भिः सप्तमे पदे ॥' स्मृतिचन्द्रिकायामपरार्के चैवम्।

आशौचे तु याज्ञवल्क्यः--'दाने विवाहे यज्ञे च संग्रामे देशविप्लवे। आपद्यपि च कष्टायां सद्यः शौचं विधीयते ॥' केषामित्यपेक्षिते ब्रह्मपुराणे उक्तम्--'दातुः प्रतिग्रहीतुश्च कन्यादाने च नो भवेत्। विवाहयिष्णोः कन्याया लाजहोमादिकर्मणि ॥' इति। 'व्रतयज्ञविवाहेषु श्राद्धे होमेऽर्चने जपे। आरब्धे सूतकं न स्यादनारब्धे तु सूतकम् ॥' इति विष्णुवचनाच्च। प्रारम्भस्तेनैवोक्तः--'प्रारम्भो वरणं यज्ञे संकल्पो व्रतसत्रयोः। नान्दीमुखं विवाहादौ श्राद्धे पाकपरिक्रिया ॥' इति। वरणमिति मधुपर्कपरम्। 'गृहीतमधुपर्कस्य यजमानाच्च ऋत्विजः। पश्चादशौचे पतिते न भवेदिति निश्चयः ॥' इति ब्राह्मोक्तेः। मधुपर्कात्पूर्वं तु भवत्येवाशौचमिति शुद्धिविवेकः। रामाण्डारभाष्येऽप्येवम्। नान्दीमुखावधिश्च स्मृत्यन्तरे--'एकविंशत्यहर्यज्ञे विवाहे दश वासराः। त्रिषट्चौलोपनयने नान्दीश्राद्धं विधीयते ॥' आरम्भाभावेऽपि लग्नान्तराभावे गद्यविष्णुः--'न सूतके प्राप्ते देवप्रतिष्ठाविवाहयोः पूर्वसंभृतयोरपि ।' इति ॥ अत्र प्रायश्चित्तम्। प्रायश्चित्तमाह मदनपारिजाते विष्णुः--'अनारब्ध-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विशुद्धयर्थं कूष्माण्डैर्जुहुयाद्घृतम् । गां दद्यात्पञ्चगव्याशी ततः शुद्धयति सूतकी ॥' संग्रहेऽपि--'संकटे समनुप्राप्ते सूतके समुपागते । कूष्माण्डीभिर्घृतं हुत्वा गां च दद्यात्पयस्विनीम् ॥ चूडोपनयनोद्वाहप्रतिष्ठादिकमाचरेत् । यदैव सूतकप्राप्तिस्तदैवाभ्युदयक्रिया ॥'

अन्नादिषु विशेषः षट्त्रिंशन्मते–'विवाहोत्सवयज्ञेषु त्वन्तरा मृतसूतके । परैरन्नं प्रदातव्यं भोक्तव्यं च द्विजोत्तमैः ॥' परैः=असगोत्रैः । 'भुञ्जानेषु तु विप्रेषु त्वन्तरा मृतसूतके । अन्यगेहोदकाचान्ताः सर्वे ते शुचयः स्मृताः ॥' एतदाशौचात्पूर्वमपृथक्कृतान्नविषयम् । तत्र शेषमन्नं त्याज्यमित्यर्थः । पृथक्कृतेषु तु बृहस्पतिराह–'विवाहोत्सवयज्ञेषु त्वन्तरा मृतसूतके । पूर्वसंकल्पितान्नेषु न दोषः परिकीर्तितः ॥' इति ॥

धर्मार्थं विवाहकरणे फलमुक्तं महाभारते–'ज्ञात्वा स्ववित्तसामर्थ्यमेकं चोद्वाहयेद् द्विजम् । तेनाप्याप्नोति तत्स्थानं शिवभक्तो नरो ध्रुवम् ॥' अपरार्के दक्षः–'मातापितृविहीनं तु संस्कारोद्वाहनादिभिः । यः स्थापयति तस्येह पुण्यसंख्या न विद्यते ॥' मदनरत्ने भविष्ये–'विवाहादिक्रियाकाले तत्क्रियासिद्धिकारणम् । यः प्रयच्छति धर्मज्ञः सोऽश्वमेधफलं लभेत् ।'

कन्यागृहे भोजननिषेधोऽपि तत्रैव–'अप्रजायां तु कन्यायां न भुञ्जीत कदाचन । दौहित्रस्य मुखं दृष्ट्वा किमर्थमनुशोचति ॥' अपरार्के आदित्यपुराणे–'विष्णुं जामातरं मन्ये तस्य कोपं न कारयेत् । अप्रजायां तु कन्यायां नाश्नीयात्तस्य वै गृहे ॥ ब्रह्मदेयां न वै कन्यां दत्त्वाश्नीयात्कदाचन । अथ भुञ्जीत मोहाच्चेत्पूयाशे नरके वसेत् ॥ तत्रैव कश्यपः–'अहतं यन्त्रनिर्मुक्तं वासः प्रोक्तं स्वयं भुवा । शस्तं तन्माङ्गलिक्येषु तावत्कालं न सर्वदा ॥' यन्त्रनिर्मुक्तं=नूतनम् ।

विवाहमध्ये स्त्रिया सह भोजनेऽपि न दोष इत्याह हेमाद्रौ प्रायश्चित्तकाण्डे गालवः–'विवाहकाले यात्रायां पथि चौरसमाकुले । असहायो भवेद्विप्रस्तदा कार्यं द्विजन्मभिः ॥ एकयानसमारोह एकपात्रे च भोजनम् । विवाहे पथि यात्रायां कृत्वा विप्रो न दोषभाक् ॥ अन्यथा दोषमाप्नोति पश्चाच्चान्द्रायणं चरेत् ॥' मिताक्षरायामप्येवम् । रत्न-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मालायाम्–'मूलमैत्रमृगरोहिणीकरैः पौष्णमारुतमघोत्तरान्वितैः। भौमसौरिरविवारवर्जिते पाणिपीडनविधिर्विधीयते॥' अत्रानिष्टनक्षत्रादौ दानमुक्तं **ज्योतिष**–'विपत्तारे गुडं दद्यान्निधने तिलकाञ्चनम्। प्रत्यरे लवणं दद्याच्छागं दद्यात्त्रिजन्मसु॥ चन्द्रे च शङ्खं लवणं च तारे तिथौ विरुद्धे त्वथ तन्दुलांश्च। धान्यं च दद्यात्करणे च वारे योगे विरुद्धे कनकं प्रदेयम्।'

विवाहमण्डपमाह वसिष्ठः–'षोडशारत्निकं कुर्याच्चतुर्द्वारोपशोभितम्। मण्डपं तोरणैर्युक्तं तत्र वेदिं प्रकल्पयेत्॥ अष्टहस्तं तु रचयेन्मण्डपं वा द्विषट्करम्॥' **दैवज्ञमनोहरः**–'चित्रा विशाखा शततारकाश्विनी ज्येष्ठाभरण्यौ शिवभाच्चतुष्टयम्। हित्वा प्रशस्तं फलतैलवेदिकाप्रदानकं कण्डनमण्डपादिकम्॥' **हेमाद्रौ व्यासः**–'कण्डनदलनयवारकमण्डपमृद्वेदिवर्णकाद्यखिलम्। तत्संबन्धिगतागतमृक्षे वैवाहिके कुर्यात्॥' यवारकं='चिकसा' इति प्रसिद्धम्। 'वैवाहिके तु दिवसे शुभे वाथ तिथौ शुभे। चतुर्थिकं प्रकुर्वीत विधिदृष्टेन कर्मणा।'

वेदिमाह नारदः–'हस्तोच्छ्रितां चतुर्हस्तैश्चतुरस्रां समन्ततः। स्तम्भैश्चतुर्भिः सुश्लक्ष्णां वामभागे तु सद्मनि॥ समां तथा चतुर्दिक्षु सोपानैरतिशोभिताम्। प्रागुदक्प्रवणारम्भां स्तम्भैर्हंसशुकादिभिः॥ एवंविधामारुरुक्षेन्मिथुनं साग्निवेदिकाम्॥' इति। **सप्तर्षिमते**–'मङ्गलेषु च सर्वेषु मण्डपो गृहमानतः। कार्यः षोडशहस्तो वा द्विषट्हस्तो दशावधि॥ स्तम्भैश्चतुर्भिरेवात्र वेदी मध्ये प्रतिष्ठिता॥ हस्तो वध्वाः। सोपानं पश्चिमतः उपरिभागे उक्तपरिमाणाद्भिन्नम्।

अथ मृदाहरणम्। ज्योतिर्निबन्धे नारदः–'कर्तव्यं मङ्गलेष्वादौ मङ्गलायाङ्कुरार्पणम्। नवमे सप्तमे वापि पञ्चमे दिवसेऽपि वा॥ तृतीये बीजनक्षत्रे शुभवारे शुभोदये। सम्यग्गृहाण्यलंकृत्य वितानध्वजतोरणैः॥ सह वादित्रनृत्याद्यैर्गत्वा प्रागुत्तरां दिशम्। तत्र मृत्सिकतां श्लक्ष्णां गृहीत्वा पुनरागतः॥ मृन्मयेष्वथवा वैणवेषु पात्रेषु योजयेत्। अनेकबीजसंयुक्तां तोयपुष्पोपशोभिताम्॥' **शौनकः**–'आधानं गर्भसंस्कारं जातकर्म च नाम च। हित्वान्यत्र विधातव्यं मङ्गलेऽङ्कुरवापनम्॥' **बृहस्पतिः**–'आत्यन्तिकेषु कार्येषु कार्यं सद्योऽङ्कुरार्पणम्॥' तत्रैव वाग्दानं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

हरिद्रावन्दनं च कार्यम् । ज्योतिःप्रकाशे—'चतुर्थो मण्डपः श्रेष्ठः सप्तमः पञ्चमस्तथा । नवमैकादशौ श्रेष्ठौ नेष्टौ षष्ठतृतीयकौ ॥ विवाहभे स्वोदये वा कन्यावरणमाचरेत् ॥' वरस्यापि वरणमाह चण्डेश्वरः—'उपवीतं फलं पुष्पं वासांसि विविधानि च । देयं वराय वरणे कन्याभ्रात्रा द्विजेन वा ॥' इति ।

वाग्दानोत्तरं वरमरणेऽपरार्कस्मृतिचन्द्रिकायां वसिष्ठः—'अद्भिर्वाचा च दत्तायां म्रियेतोर्ध्वं वरो यदि । न च मन्त्रोपनीता स्यात्कुमारी पितुरेव सा ॥' यत्तु नारदः—'उद्वाहितापि सा कन्या न चेत्संप्राप्तमैथुना । पुनःसंस्कारमर्हेत यथा कन्या तथैव सा ॥' इति । यच्च कात्यायनः—'वरो यद्यन्यजातीयः पतितः क्लीब एव च । विकर्मस्थः सगोत्रो वा दासो दीर्घामयोऽपि वा ॥ ऊढापि देया सान्यस्मै सहावरणभूषणा ॥' इति । इदं कलौ निषिद्धम । 'देवरेण सुतोत्पत्तिर्दत्ता कन्या न दीयते ।' इत्यादिपुराणे कलौ निषेधात् । दत्ताशब्द ऊढापरः 'ऊढायाः पुनरुद्वाहम्' इति हेमाद्रावुक्तेः । अत एव सगोत्रासपिण्डादिविवाहेऽपि—'भोगतस्तां परित्यज्य पालयेज्जननीमिव ।' इत्युक्तम् ।

देशान्तरगमने तु कात्यायनः—'वरयित्वा तु यः कश्चित्प्रणश्येत्पुरुषो यदा । ऋत्वागमांस्त्रीनतीत्य कन्यान्यं वरयेद्वरम् ॥' अपरार्के नारदोऽपि—'प्रतिगृह्य तु यः कन्यां वरो देशान्तरं व्रजेत् । त्रीनृतून्समतिक्रम्य कन्यान्यं वरयेद्वरम् ॥' शुल्कदानेतु मनुवसिष्ठौ—'कन्यायां दत्तशुल्कायां म्रियते यदि शुल्कदः । देवराय प्रदातव्या यदि कन्यानुमन्यते ॥' चन्द्रिकायां कात्यायनः—'प्रदाय शुल्कं गच्छेद्यः कन्यायाः स्त्रीधनं तथा । धार्या सा वर्षमेकं तु देयान्यस्मै विधानतः ॥ अनेकेभ्यो हि दत्तायामनूढायां तु तत्र वै । पूर्वागतश्च सर्वेषां लभेताद्यवरस्तु ताम् ॥ पश्चाद्वरेण यद्दत्तं तस्याः प्रतिलभेत सः । अथागच्छेन्नवोढायां दत्तं पूर्ववरो हरेत् ॥' याज्ञवल्क्यः—'सकृत्प्रदीयते कन्या हरंस्तां चौरदण्डभाक् । दत्तामपि हरेत्पूर्वाच्छ्रेयांश्चेद्वर आव्रजेत् ॥' पूर्वस्य दोषसत्त्वे इदमिति विज्ञानेश्वरः । संबन्धतत्त्वे वसिष्ठः—'कुलशीलविहीनस्य पश्चाद्धि पतितस्य च । अपस्मारिविधर्मस्य रोगिणां वेषधारिणाम् ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दत्तामपि हरेत्कन्यां सगोत्रोढां तथैव च ॥' मनुः—'षण्ढान्धबधिरादीनां विवाहोऽस्ति यथोचितम्। विवाहासंभवे तेषां कनिष्ठो विवहेत्तदा। पितृव्यपुत्रे सापत्ने परदारसुतेषु च। विवाहाधानयज्ञादौ परिवेदो न दूषणम् ॥' अन्यद्वक्तव्यं विस्तरभीतेर्नोच्यते इति दिक्।

अत्र नान्दीश्राद्धे विशेषं तदधिकारिविशेषं चाग्रे वक्ष्यामः। इदं चाद्यविवाहे पिता कुर्याद् द्वितीयादौ वर एव, 'नान्दीश्राद्धं पिता कुर्यादाद्ये पाणिग्रहे पुनः। अत ऊर्ध्वं प्रकुर्वीत स्वयमेव तु नान्दिकम् ॥ इति स्मृतेः। त्रिकाण्डमण्डनोऽपि—'पित्रे स्तु जीवतोः कुर्यात्पुनः पाणिग्रहं यदा। पितुर्नान्दीमुखश्राद्धं नोक्तं तस्य मनीषिभिः ॥' रेणुककारिका—'उक्तकाले विवाहाङ्गं कुर्यान्नान्दीमुखं पिता। देशान्तरे विवाहश्चेत्तत्र गत्वा भवेदिदम्।'

लग्नघटीस्थापनमाह नारदः—'षडङ्गुलमितोत्सेधं द्वादशाङ्गुलमायतम्। कुर्यात्पातालवत्ताम्रपात्रं तद्दशभिः पलैः ॥ ताम्रपात्रे जलैः पूर्णे मृत्पात्रे वाथवा शुभे। मण्डलार्धोदयं वीक्ष्य रवेस्तत्र विनिक्षिपेत् ॥' तत्र मन्त्रः—'मुख्यं त्वमसि यन्त्राणां ब्रह्मणा निर्मितं पुरा। भव भावाय दंपयोः कालसाधनकारणम् ॥' इति।

वरस्य मधुपर्कमाह याज्ञवल्क्यः—'प्रतिसंवत्सरं त्वर्च्याः स्नातकाचार्यपार्थिवाः। प्रियो विवाह्यश्च तथा यज्ञं प्रत्यृत्विजः पुनः ॥' अत्र विशेषो गृह्यपरिशिष्टे—'वरस्य या भवेच्छाखा तच्छाखागृह्यचोदितः। मधुपर्कः प्रदातव्यो ह्यन्यशाखेऽपि दातरि ॥' अत्र वरदातृशब्दौ ऋत्विगाद्युपलक्षणम्। तदाहुः—'अर्च्यशाखया मधुपर्कः' इति। 'अर्च्यस्य यच्छाखीयं कर्म तच्छाखया मधुपर्कः' इति याज्ञिकाः। जयन्तस्तु 'वरणवत्सर्वत्र यजमानशाखयैव मधुपर्कः' इत्याह। तत्तु नाद्रियन्ते वृद्धाः। अत्र 'पञ्चाशता भवेद् ब्रह्मा तदर्धेन तु विष्टरः' इत्यादिगृह्यपरिशिष्टादेर्विष्टरादिलक्षणं मधुपर्कादिविधिश्च स्वगृह्यादेर्ज्ञेयः।

कन्यादाने प्रपितामहपूर्वकमित्युक्तं स्मृत्यर्थसारे—'नान्दीमुखे विवाहे च प्रपितामहपूर्वकम्। नामसंकीर्तयेद्विद्वानन्यत्र पितृपूर्वकम्॥' नान्दीमुखे इति बह्वृचाद्यतिरिक्तविषयम्, गृह्यपरिशिष्टे पित्राद्यानुलोम्याम्नानात्। व्यासः—'भुक्त्वा समुद्वहेत्कन्यां सावित्रीग्रहणं तथा। उपोषितः सुतां

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दद्यादर्चिताय द्विजाय तु ॥' भुक्त्वेति मधुपर्के वैधभोजनपरम्। **गृह्यपरिशिष्टे**–'कन्यां वरयमाणानामेष धर्मो विधीयते। प्रत्यङ्मुखा वरयन्ति प्रतिगृह्णन्ति प्राङ्मुखाः ॥' **मदनरत्ने ऋष्यशृङ्गः**–'वरगोत्रं समुच्चार्य प्रपितामहपूर्वकम्। नाम संकीर्तयेद्विद्वान्कन्यायाश्चैवमेव हि ॥ तिष्ठेत्पूर्वमुखो दाता वरः प्रत्यङ्मुखो भवेत्। मधुपर्कार्चितायैनां तस्मै दद्यात्सदक्षिणाम् ॥ उदपात्रं ततो गृह्य मन्त्रेणानेन दापयेत् ॥ 'गौरीं कन्यामिमां विप्र यथाशक्ति विभूषिताम्। गोत्राय शर्मणे तुभ्यं दत्तां विप्र समाश्रय ॥' भूमिं गां चैव दासीं च वासांसि च स्वशक्तितः। महिषीं वाजिनश्चैव दद्यात्स्वर्णमणीनपि ॥ ततः स्वगृह्यविधिना होमाद्यं कर्म कारयेत्। यथाचारं विधेयानि माङ्गल्यकुतुकानि च ॥' एतत्कन्यादानं त्रिः कार्यमिति **शौनकः**।

गृहप्रवेशनीयहोमे विशेषमाहाश्वलायनः–'अर्धरात्रे व्यतीते तु परेद्युः प्रातरेव हि। गृहप्रवेशनीयः स्यादिति यज्ञविदो विदुः ॥' इति। औपासनहोमे विशेषमाह **शौनकः**–'यदि रात्रौ विवाहाग्निरुत्पन्नः स्यात्तथा सति। उपक्रम्योत्तरस्याह्नः सायं परिचरेदमुम् ॥' यदि रात्रौ नवनाडीमध्येऽग्न्युत्पत्तिस्तदा तदैव होमारम्भः, तदुत्तरं चेत्परदिने सायमारम्भ इति **सुदर्शनभाष्ये** उक्तम्।

अथ देवकोत्थापनम्। 'समे च दिवसे कुर्याद्देवकोत्थापनं बुधः। षष्ठं च विषमं नेष्टं मुक्त्वा पञ्चमसप्तमौ।'

निर्णयदीपे गार्ग्यः–'नान्दीश्राद्धे कृते पश्चाद्यावन्मातृविसर्जनम्। दर्शश्राद्धं क्षयश्राद्धं स्नानं शीतोदकेन च ॥ अपसव्यं स्वधाकारं नित्यश्राद्धं तथैव च। ब्रह्मयज्ञं चाध्ययनं नदीसीमातिलङ्घनम् ॥ उपवासं व्रतं चैव श्राद्धभोजनमेव च।, नैव कुर्युः सपिण्डाश्च मण्डपोद्वासनावधि ॥' **बृहस्पतिः**–'तीर्थे विवाहे यात्रायां संग्रामे देशविप्लवे। नगरग्रामदाहे च स्पृष्टास्पृष्टिर्न दुष्यति ॥' **योगियाज्ञवल्क्यः**–'न स्नायादुत्सवेऽतीते मङ्गलं विनिवर्त्य च। अनुव्रज्य सुहृद्बन्धूनर्चयित्वेष्टदेवताम् ॥' **ज्योतिषे**–'स्नानं सचैलं तिलमिश्रकर्म प्रेतानुयानं कलशप्रदानम्। अपूर्वतीर्थामरदर्शनं च विवर्जयेन्मङ्गलतोऽब्दमेकम् ॥ मासषट्कं विवाहादौ व्रतप्रारम्भणेऽपि च। जीर्णभाण्डादि न त्याज्यं गृहसंमार्जनं तथा ॥ ऊर्ध्वं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विवाहात्पुत्रस्य तथा च व्रतबन्धनात्। आत्मनो मुण्डनं नैव वर्षं वर्षार्धमेव च ॥ अभ्यङ्गे सूतके चैव विवाहे पुत्रजन्मनि। माङ्गल्येषु च सर्वेषु न धार्यं गोपिचन्दनम्।'

ज्योतिर्निबन्धे–'उद्वाहात्प्रथमे शुचौ यदि वसेद्भर्तुर्गृहे कन्यका हन्यात्तज्जननीं क्षये निजतनुं ज्येष्ठे पतिज्येष्ठकम्। पौषे च श्वशुरं पतिं च मलिने चैत्रे स्वपित्रालये तिष्ठन्ती पितरं निहन्ति न भयं तेषामभावे भवेत् ॥' **निबन्धे**–'विवाहात्प्रथमे पौषे आषाढे चाधिमासके। न सा भर्तुर्गृहे तिष्ठेच्चैत्रे पितृगृहे तथा ॥' **हेमाद्रौ स्मृत्यन्तरे**–'विवाहव्रतचूडासु वर्षमर्धं तदर्धकम्। पिण्डदानं मृदा स्नानं न कुर्यात्तिलतर्पणम् ॥' **तथा**–अर्धं पूर्ववत्। 'सपिण्डा नैव कुर्वीरन्नद्भिः स्नानमृतुत्रये ॥ तीर्थे संवत्सरे प्रेते पितृयज्ञे महालये। कृतोद्वाहोऽपि कुर्वीत पिण्डनिर्वपणं सदा ॥'

अथ वधूप्रवेशः। **जयतुङ्गे**—'मार्गशीर्षे तथा माघे माधवे ज्येष्ठसंज्ञके। सुप्रशस्ते भवेद्वेश्मप्रवेशो नवयोषिताम् ॥' **नारदः**–'आरभ्योद्वाहदिवसात्षष्ठे वाप्यष्टमे दिने। वधूप्रवेशः संपत्त्यै दशमेऽथ समे दिने ॥' **संग्रहे**–'विवाहमारभ्य वधूप्रवेशो युग्मे तिथौ षोडशवासरान्तात्। ऊर्ध्वं ततोऽब्देऽयुजि पञ्चमान्तादतः परस्तान्नियमो न चास्ति ॥' **नारदः**–'समे वर्षे समे मासि यदि नारी गृहं व्रजेत्। आयुष्यं हरते भर्तुः सा नारी मरणं व्रजेत् ॥' **प्रयोगरत्ने तु**—'वधूप्रवेशः प्रथमे तृतीये शुभप्रदः पञ्चमकेऽथ वाह्नि। द्वितीयके वाथ चतुर्थके वा षष्ठे वियोगामयदुःखदः स्यात् ॥' इत्युक्तं, तत्र मूलं चिन्त्यम्। **वृद्धवसिष्ठोऽपि**–'षष्ठाष्टमे वा दशमे दिने वा विवाहमारभ्य वधूप्रवेशः। पञ्चाङ्गसंशुद्धदिनं विनापि विधावसद्गोचरगेऽपि कार्यः ॥' **लल्लः**–'स्वभवनपुरप्रवेशे देशानां विप्लवे तथोद्वाहे। नववध्वा गृहगमने प्रतिशुक्रविचारणा नास्ति ॥' **माण्डव्यः**–'नित्ययाने गृहे जीर्णे प्राशनान्तेषु सप्तसु। वधूप्रवेशे माङ्गल्ये न मौढ्यं गुरुशुक्रयोः ॥' **ज्योतिःप्रकाशे**–'वामे शुक्रे नवोढायाः सुखं, हानिश्च दक्षिणे। धनं धान्यं च पृष्ठस्थे, सर्वनाशः पुरः स्थिते ॥ नवोढायास्तु वैधव्यं यदुक्तं संमुखे

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भृगौ। तदेव विबुधैर्ज्ञेयं केवलं तु द्विरागमे ॥ पूर्वतोऽभ्युदिते शुक्रे प्रयायादक्षिणापरे। पश्चादभ्युदिते चैव यायात्पूर्वोत्तरे दिशौ ॥' व्यवहारतत्त्वे–'पौष्णात्कराच्च श्रवणाच्च युग्मे हस्तत्रये मूलमघोत्तरासु। पुष्ये च मैत्रे च वधूप्रवेशो रिक्तेतरे व्यर्ककुजे च शस्तः ॥' गर्गः– 'व्यतीपाते च संक्रान्तौ ग्रहणे वैधृतावपि। श्राद्धं विना शुभं नैव प्राप्तकालेऽपि मानवः ॥' तथा–'अमासंक्रान्तिविष्ट्यादौ प्राप्तकालेऽपि नाचरेत् ॥' इति।

अथ द्विरागमनम्। ऋक्षोच्चये–'माघफाल्गुनवैशाखे शुक्लपक्षे शुभे दिने। गुर्वादित्यविशुद्धौ स्यान्नित्यं पत्नीद्विरागमः ॥' बादरायणः– 'नीहारांशुदिनोत्तरादितिगुरुब्रह्मानुराधाश्विनीशक्रे भास्करवायुविष्णुवरुणत्वाष्ट्रे प्रशस्ते तिथौ ॥ कुम्भाजालिगते रवौ शुभकरे प्राप्तोदये भार्गवे जीवज्ञारफुजितां दिने नववधूवेश्मप्रवेशः शुभः ॥'

अथ पुनर्विवाहः। श्रीधरीये–'पुनर्विवाहं वक्ष्यामि दम्पत्योः शुभवृद्धिदम्। लग्नेन्दुलग्नयोर्दोषे ग्रहतारादिसंभवे ॥ अन्येष्वशुभकालेषु दुष्टयोगादिसंभवे। विवाहे चापि दम्पत्योराशौचादिसमुद्भवे ॥ तस्य दोषस्य शान्त्यर्थं पुनर्वैवाह्यमिष्यते ॥' याज्ञवल्क्यः–'सुरापी व्याधिता धूर्ता वन्ध्यार्थघ्न्यप्रियंवदा। स्त्रीप्रसूश्चाधिवेत्तव्या पुरुषद्वेषिणी तथा ॥' मनुः–'वन्ध्याष्टमेऽधिवेत्तव्या दशमे तु मृतप्रजा। एकादशे स्त्रीजननी सद्यस्त्वप्रियवादिनी ॥' संग्रहे तु–'अप्रजां दशमे वर्षे स्त्रीप्रजां द्वादशे त्यजेत्। मृतप्रजां पञ्चदशे सद्यस्त्वप्रियवादिनीम् ॥' याज्ञवल्क्यः– 'एकामुत्क्रम्य कामार्थमन्यां लब्धुं य इच्छति। समर्थस्तोषयित्वार्थैः पूर्वोढामपरां व्रजेत् ॥ आज्ञासंपादिनीं दक्षां वीरसूं प्रियवादिनीम्। त्यजन्दाप्यस्तृतीयांशमद्रव्यो भरणं स्त्रियाः ॥' मनुः–'अधिविन्ना तु या नारी निर्गच्छेद्रोषिता गृहात्। सा सद्यः संनिरोद्धव्या त्याज्या वा कुलसन्निधौ ॥' इति। हेमाद्रौ कात्यायनः–'अग्निशिष्टादिशुश्रूषां बहुबहुभार्यस्य ,भार्यः सवर्णया। कारयेत्तद्बहुत्वं चेज्ज्येष्ठया गर्हिता धर्मे पत्नी। न चेत् ॥' याज्ञवल्क्यः–'सत्यामन्यां सवर्णायां धर्मकार्यं न कारयेत्। सवर्णासु विधौ धर्म्ये ज्येष्ठया न विनेतरा।'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

द्वितीयविवाहहोमेऽग्निमाह **कात्यायनः**–'सदारोऽन्यान्पुनर्दारानुद्वोढुं कारणान्तरात्। यदीच्छेदग्निमान्कर्तुं क होमोऽस्य विधीयते॥ स्वेऽग्नावेव भवेद्धोमो लौकिके न कदाचन॥' **त्रिकाण्डमण्डनोऽपि**–'आद्यायां विद्यमानायां द्वितीयामुद्वहेद्यदि। तदा वैवाहिकं कर्म कुर्यादावसथेऽग्निमान्॥' **सुदर्शनभाष्ये** तु–'द्वितीयविवाहहोमो लौकिक एव न पूर्वौपासने' इत्युक्तम्। इदं चासंभवे।

तत्र **चाग्निद्वयसंसर्गः** कार्यः। तदाह **शौनकः**–'अथाग्न्योर्गृह्ययोर्योगं सपत्नीभेदजातयोः। सहाधिकारसिद्ध्यर्थमहं वक्ष्यामि शौनकः॥ अरोगामुद्वहेत्कन्यां धर्मलोपभयात्स्वयम्। कृते तत्र विवाहे च व्रतान्ते तु परेऽहनि॥ पृथक्स्थण्डिलयोरग्निं समाधाय यथाविधि। तन्त्रं कृत्वाज्यभागान्तमन्वाधानादिकं ततः॥ जुहुयात्पूर्वपत्न्यग्नौ तयान्वारब्ध आहुतीः। अग्निमीडे पुरोहितं सूक्तेन नवर्चेन तु॥ समिध्येनं समारोप्य अयं ते योनिरित्यृचा। प्रत्यवरोहेत्यनया कनिष्ठाग्नौ निधाय तम्॥ आज्यभागान्ततन्त्रादि कृत्वारभ्य तदादितः। समन्वारब्ध एताभ्यां पत्नीभ्यां जुहुयाद्धृतम्॥ चतुर्गृहीतमेताभिर्ऋग्भिः षड्भिर्यथाक्रमम्। अग्नावग्निश्चरतीत्यग्निनाग्निः समिध्यते॥ अस्तीदमिति तिसृभिः पाहि नो अग्न एकया। ततः स्विष्टकृदारभ्य होमशेषं समापयेत्॥ गोयुगं दक्षिणा देया श्रोत्रियायाहिताग्नये। पत्न्योरेका यदि मृता दग्ध्वा तेनैव तां पुनः॥ आदधीतान्यया सार्धमाधानविधिना गृही॥' इति।

बौधायनसूत्रे तु–'अथ यदि गृहस्थो द्वे भार्ये विन्देत कथं तत्र कुर्यादिति, यस्मिन् काले विन्देतोभावग्नी परिचरेदपराग्निमुपसमाधाय परिस्तीर्याज्यं विलाप्य स्रुचि चतुर्गृहीतं गृहीत्वाऽन्वारब्धायां जुहोति नमस्त ऋषेरादाव्यधायै त्वा स्वधायै त्वा मान इन्द्राभिमतस्त्वदृष्ट्वारिष्टां स एव ब्रह्मन्न वेद सुस्बाहेत्यथाऽयं ते योनिर्ऋत्विय इति समिधि समारोपयेत्। पूर्वाग्निमुपसमाधायाजुह्वान उद्बुध्यस्वाग्न इति समिधमाधाय परिस्तीर्य स्रुचि चतुर्गृहीत्वा द्वयोर्भार्ययोरन्वारब्धयोर्यजमानोऽभिमृशति यो ब्रह्मा ब्रह्मण इत्येतेन सूक्तेनैकं चतुर्गृहीतं जुहोत्यग्निमुखात्कृत्वा पक्वाज्जुहोति संमितं संकल्पेथामिति पुरोनुवाक्यामनूच्याग्ने पुरीष्ये इति याज्यया जुहोत्यथाज्याहुतीरुपजुहोति पुरीष्यमस्तमित्यन्तादनुवाकस्य स्विष्टकृत्प्रभृति सिद्धमाधेनुवरदानादथाग्रेणाग्निं दर्भस्तम्बे हुतशेषं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

निदधाति ब्रह्मजज्ञानं पिताविराजामिति द्वाभ्यां संसर्गविधिः कार्यः ।' इति ।

द्वितीयादिविवाहे काल उक्तः संग्रहे—'प्रमदामृतिवासरादितः पुनरुद्वाहविधिर्वरस्य च । विषमे परिवत्सरे शुभो युगले चापि मृतिप्रदो भवेत् ॥'

तृतीयविवाहे निषेधो मात्स्ये—'उद्वहेद्रतिसिद्ध्यर्थं तृतीयां न कदाचन । मोहादज्ञानतो वापि यदि गच्छेत्तु मानुषीम् ॥ नश्यत्येव न संदेहो गर्गस्य वचनं यथा ।' इति । संग्रहे—'तृतीयां यदि चोद्वाहेत्तर्हि सा विधवा भवेत् । चतुर्थादिविवाहार्थं तृतीयेऽर्कं समुद्वहेत् ।'

तद्विधिस्तु—'रविशन्योर्हस्ते वा वरः संकल्प्य स्वस्तिवाचनं नान्दीश्राद्धं कृत्वाचार्यं वृत्वा आकृष्णेनेति छायायुतं सूर्यमर्के संपूज्य गुडौदनं दत्त्वा वस्त्रेण तन्तुभिरावेष्ट्य,—'त्रिलोकवासिन्सप्ताश्व छायया सहितो रवे । तृतीयोद्वाहजं दोषं निवारय सुखं कुरु ॥' इति संप्रार्थ्य जलेन त्रिः सिञ्चेत् । 'मम प्रीतिकरा येयं मया सृष्टा पुरातनी । अर्कजा ब्रह्मणा सृष्टा अस्माकं प्रति रक्षतु ॥ नमस्ते मङ्गले देवि नमः सवितुरात्मजे । त्राहि मां कृपया देवि पत्नी त्वं म इहागता ॥ अर्क त्वं ब्रह्मणा सृष्टः सर्वप्राणिहिताय च । वृक्षाणामादिभूतस्त्वं देवानां प्रीतिवर्धनः ॥ तृतीयोद्वाहजं पापं मृत्युं चाशु विनाशय ॥' इति । तत आचार्यः—'काश्यपगोत्रामादित्यस्य प्रपौत्रीं सवितुः पौत्रीमर्कस्य पुत्रीमर्ककन्याममुकगोत्राय वराय दास्ये' इति वाग्दानं कृत्वा वरस्य मधुपर्कं कृत्वाऽन्तःपटं धृत्वा 'स्वस्तिन' इति सूक्तं जप्त्वा पूर्ववत्कन्यां दत्त्वा 'अर्ककन्यामिमां०' इत्यूहेन कन्यादानमन्त्रमुक्त्वा दक्षिणां दद्यात् । ततो गायत्र्या वेष्टितसूत्रेण बृहत्सामेति मन्त्रेण कङ्कणं बद्ध्वाऽर्कस्य चतुर्दिक्षु कुम्भेषु विष्णुं संपूज्याग्निं प्रतिष्ठाप्याघारान्ते संगोभिरति बृहस्पतये, यस्मै त्वा कामकामायेत्यृचाऽग्नये व्यस्तसमस्तव्याहृतिभिराज्यं हुत्वाचार्याय गोयुगं दत्त्वा,—'मया कृतमिदं कर्म स्थावरेषु जरायुणा । अर्काऽपत्यानि नो देहि तत्सर्वं क्षन्तुमर्हसि ॥' इति नमेत' इति ।दक्।

इति निर्णयसिन्धौ विवाहप्रकरणं समाप्तम् ॥

अथाधानम् । रत्नमालायाम्—'प्राजापत्ये पूषभे सद्विदैवे पुष्ये ज्येष्ठास्वैन्दवे कृत्तिकासु । अग्न्याधानं ह्युत्तराणां त्रयेऽपि चित्रादित्ये

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कीर्तितं गर्गमुख्यैः ॥' **आश्वलायनः**–'अग्न्याधेयं कृत्तिकासु रोहिण्यां मृगशिरसि फल्गुनीषु विशाखयोरुत्तरयोः प्रोष्ठपदयोरेतेषां कस्मिंश्चिद्वसन्ते पर्वणि ब्राह्मण आदधीत ग्रीष्मवर्षाशरत्सु क्षत्रियवैश्योपकुष्टा यस्मिन्कस्मिंश्चिद्दृतावादधीत सोमेन यक्ष्यमाणो नर्तुं पृच्छेन्न नक्षत्रम् ।

सोमाधाने ऋत्वाद्यनालोचनमार्तपरम् । 'अथो खलु यदैवैनँ श्रद्धोपनमेद्थादधीत सैवास्यर्द्धिः' इति । सोमेन यक्ष्यमाणो नर्तुं पृच्छेन्न नक्षत्रं तदेतदार्तस्यातिवेलं वा श्रद्धायुक्तस्य भवति' इति **बौधायनोक्तेरिति** । **मदनरत्ने वृद्धगार्ग्यः**–'पुष्याग्नेयत्र्युत्तरादित्यपौष्णज्येष्ठाचित्रार्कद्विदैवेन्दुभेषु ॥ कुर्युर्वह्न्याधानमाद्यं वसन्तग्रीष्मोष्मान्तेष्वेव विप्रादिवर्णाः ॥' **कालादर्शे**–'अग्निहोत्रं दर्शपूर्णमासावप्युत्तरायणे । उपक्रम्य यथाकालमुपासीरन्द्विजातयः ॥ सोमं च पशुबन्धं च सर्वांश्च विकृतीरपि । सौम्यायने यथाकालं विदध्युर्गृहमेधिनः ॥' अत्र विशेषः पूर्वमुक्तः ।

अग्निहोत्रकाल उक्तश्छन्दोगपरिशिष्टे–'उदितेऽनुदिते चैव समयाध्युषिते तथा । सर्वथा वर्तते यज्ञ इतीयं वैदिकी श्रुतिः ॥' एतेषां स्वरूपं **तत्रैव**–'रात्रेस्तु षोडशे भागे ग्रहनक्षत्रभूषिते । कालं त्वनुदितं ज्ञात्वा होमं कुर्याद्विचक्षणः ॥ तथा प्रभातसमये नष्टे नक्षत्रमण्डले । रविर्यावन्न दृश्येत समयाध्युषितं च तत् ॥ रेखामात्रं प्रदृश्येत रश्मिभिश्च समन्वितः । उदितं तद्विजानीयात्तत्र होमं प्रकल्पयेत् ॥' **आश्वलायनः**–'उपादये व्युषिते उदिते वा' सायं तु स एव 'अस्तमिते होमः' इति । गौणकालमाह स एव –'प्रदोषान्तो होमकालः, सङ्गवान्तः प्रातः' इति । **छन्दोगपरिशिष्टे**–'यावत्सम्यङ्न भाव्यन्ते नभस्यृक्षाणि सर्वतः । न च लोहितिमापैति तावत्सायं तु हूयते ॥' औपासनेऽप्येवम् , 'तस्याग्निहोत्रेण प्रादुष्करणहोमकालो व्याख्यातौ' इत्याश्वलायनोक्तेः ।

अथावसथ्याधानम् । **पारस्करः**–'आवसथ्याधानं दारकाले, दायाद्यकाल एकेषाम्' इति । दायाद्यकालो=विभागकालः । **मदनरत्ने व्यासः**–'अग्निर्वैवाहिको येन न गृहीतः प्रमादिना । पितर्युपरते तेन ग्रहीतव्यः प्रयत्नतः ॥ योऽगृहीत्वा विवाहाग्निं गृहस्थ इति मन्यते । अन्नं तस्य न भोक्तव्यं वृथापाको हि स स्मृतः ॥' ज्येष्ठभ्रातरि पितरि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वा साग्नौ कनिष्ठस्य पुत्रस्य वाग्न्यभावेऽपि न दोषः। तदाह तत्रैव **गार्ग्यः**–'पितृपाकोपजीवी वा भ्रातृपाकोपजीविकः। ज्ञानाध्ययननिष्ठो वा न दुष्येताग्निना विना।'

गृहस्थस्याप्यध्ययनमाह सत्यव्रतः–'अनधीत्य द्विजो वेदं स्नात्वोद्वाह्य यथा तथा। अधीते ब्रह्मचर्येण साङ्गं वेदं गुरोर्गृहे॥' इदं चाधानं ज्येष्ठेऽकृताधाने न कार्यम्। 'दाराग्निहोत्रसंयोगं कुरुते योऽग्रजे स्थिते। परिवेत्ता स विज्ञेयः, परिवित्तिस्तु पूर्वजः॥' इति **मनुशातातपोक्तेः**। स्मार्तेऽप्येवम्। 'सोदर्ये तिष्ठति ज्येष्ठे न कुर्याद्दारसंग्रहम्। आवसथ्यं तथाधानं पतितस्तु तथा भवेत्॥' इति तत्रैव **गार्ग्योक्तेः**। आज्ञायां त्वदोषमाह **सुमन्तुः**–'ज्येष्ठो भ्राता यदा तिष्ठेदाधानं नैव चाश्रयेत्। अनुज्ञातस्तु कुर्वीत शङ्खस्य वचनं यथा॥' **वृद्धवसिष्ठः**–'अग्रजस्तु यदाऽनग्निरादध्याद नुजः कथम्। अग्रजानुमतः कुर्यादग्निहोत्रं यथाविधि॥' **हारीतः**–'सोदराणां तु सर्वेषां परिवेत्ता कथं भवेत्। दारैस्तु परिविद्यन्ते नाग्निहोत्रेण नेज्यया॥' अधिकारिणोऽपि भ्रातुरनुज्ञया कुर्यादिति **मदनपारिजातः**। विवाहस्त्वनुज्ञयापि नेत्यर्थः। सोदरोक्तेरसोदराणां सापत्नदत्तकादीनां न दोषः। तदाह **हेमाद्रौ वसिष्ठः**–'पितृव्यपुत्रान्सापत्नान्परनारीसुतास्तथा। दाराग्निहोत्रसंयोगे न दोषः परिवेदने॥' परनारीसुताः=दत्तकादयः। देशान्तरे विशेषमाह **स एव**,–'अष्टौ दश द्वादशवर्षाणि वा ज्येष्ठभ्रातरमनिविष्टमप्रतीक्षमाणः प्रायश्चित्ती भवति' इति।

ज्येष्ठभ्रातर्यकृताधाने कनिष्ठस्यानधिकारः।

अग्रजानुमतेऽनुजस्याधिकारः।

क्लीबादावप्यदोषमाह **कात्यायनः**–'देशान्तरस्थक्लीबैकवृषणानसहोदरान्। वेश्यानिष्ठांश्च पतितशूद्रतुल्यातिरोगिणः॥ जडमूकान्धबधिरकुब्जवामनखञ्जकान्। अतिवृद्धानभार्यांश्च कृषिसक्तान्नृपस्य च॥ धनवृद्धिप्रसक्तांश्च कामतोऽकारिणस्तथा। कुटिलोन्मत्तचोरांश्च परिविन्दन्न दुष्यति॥' **आशार्केऽपि**–'उन्मत्तः किल्बिषी कुष्ठी पतितः क्लीब एव वा। राजयक्ष्मामयावी च न न्याय्यः स्यात्प्रतीक्षितुम्॥' एवं ज्येष्ठे छिन्नहस्तादावपि न परिवेत्तृत्वम्। तदाह **त्रिकाण्डमण्डनः**–'दर्शेष्टिं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पौर्णमासेष्टिं सोमेज्यामग्निसंग्रहम् । अग्निहोत्रविवाहं च प्रयोगे प्रथमे स्थितिः ।। न कुर्याज्जनके ज्येष्ठे सोंदरे चाप्यकुर्वति । क्षेत्रजादावनी-* जाने विद्यमानेऽपि सोदरे ।। नाधिकारविघातोऽस्ति भिन्नोदर्येऽपि चौरसे । पङ्ग्वन्धमूकबधिरपतितोन्माददूषणे ।। संन्यस्ते छिन्नहस्तादौ यद्वा षण्ढादिदूषणे । जनके सोदरे ज्येष्ठे कुर्यादेवेतरः क्रियाम् ।।' इति, 'आरोहतं दशतं शकरीर्मम' इत्याधाने मन्त्रवर्णाच्च । शकरीः=अङ्गुलीः । तन्त्ररत्नेऽप्युक्तम्–'अङ्गवैकल्यात्पूर्वमाहिताग्नित्वेऽधिक्रियेतैव नित्येषु । आधानं तु न कुर्यात्तस्य नैमित्तिकत्वात्' इति । एवं चतुरङ्गुलेऽपि । षडङ्गुलकाणविवर्णादेस्त्वस्येवाधिकारः । एकादशसु दशान्तर्गतेः । 'शरीरकाश्यं वा विप्रतिषिद्धम्' इति हिरण्यकेशिसूत्रे कर्माशक्तिहेतोरेवाङ्गवैकल्यस्य निषेधात् । अत एव कात्यायनसूत्रे–'याज्यश्च प्रथमैस्त्रिभिर्गुणैः' इति न्यूनाङ्गस्याप्यधिकार उक्तः । अपरार्के उशनाः–'पिता पितामहो यस्य अग्रजो वाथ कस्यचित् । तपोऽग्निहोत्रमन्त्रेषु न दोषः परिवेदने ।।' पितुराज्ञायामप्यदोषमाह मदनरत्ने सुमन्तुः–'पित्रा यस्य तु नाधातं कथं पुत्रस्तु कारयेत् । अग्निहोत्रेऽधिकारोऽस्ति शङ्खस्य वचनं यथा ।।' इति नाधातं=नाधानं कृतमित्यर्थः । एतदाज्ञायामेवेति हेमाद्रिः । यत्तु–'पितुः सत्यप्यनुज्ञाने नादधीत कदाचन ।' इति, तत्सत्यधिकारे ज्ञेयम् ।।

अथ शूद्रसंस्काराः । यमः–'शूद्रोऽप्येवंविधः कार्यो विना मन्त्रेण संस्कृतः । न केनचित्समसृजच्छन्दसा तं प्रजापतिः ।।' छन्दसा=मन्त्रेण । व्यासोऽपि–'गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तो जातकर्म च । नामक्रिया निष्क्रमोऽन्नप्राशनं वपनक्रिया ।। कर्णवेधो व्रतादेशो वेदारम्भक्रियाविधिः । केशान्तः स्नानमुद्वाहो विवाहाग्निपरिग्रहः ।। त्रेताग्निसंग्रहश्चैव संस्काराः षोडश स्मृताः ।।' इत्युक्त्वाह–'नवैताः कर्णवेधान्ता मन्त्रवर्जं स्त्रियाः क्रियाः । विवाहो मन्त्रतस्तस्याः शूद्रस्यामन्त्रतो दश ।। इति । मदनरत्ने-हिरण्यगर्भदाने तु–'गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तोन्नयनं तथा । कुर्युर्हिरण्यगर्भस्य ततस्ते द्विजपुंगवाः ।।' इत्युक्त्वा–'जातकर्मादिकाः कुर्यात्क्रियाः षोडश चापराः ।' इत्यत्र 'स्त्रियाः जातकर्मनामकरणनिष्क्रमणान्नप्राशनचूडा-

* अनीजानः=यागमकुर्वाणः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

उत्सर्गविधिश्चोक्तो बह्वृचपरिशिष्टे—'अथातो वापीकूपतडागयज्ञं व्याख्यास्यामः पुण्येह्न्युदकसमीपेऽग्निं समाधाय वारुणं चरुं श्रपयित्वाज्यभागान्ते आज्याहुतीर्जुहुयात् । समुद्रज्येष्ठेति प्रत्यृचं, ततो हविषाष्टौ तत्त्वायामीति पञ्च, त्वं नो अग्ने इति द्वे, इमं मे वरुणेति च स्विष्टकृतं नवमम् । मार्जनान्ते धेनुं तारयेत् । अवतीर्यमाणामनुमन्त्रयेत । 'इदं सलिलं पवित्रं कुरुष्व शुद्धाः पूता अमृताः सन्तु नित्यम् । मां तारयन्ती कुरु तीर्थाभिषेकं लोकाल्लोकं तरते तीर्यते च ॥' इति पुच्छाग्रान्वारब्ध उत्तीर्यापो अस्मान्मातरः शुन्धयन्त्वित्यथापराजितायां दिश्युत्थापयेत्सूयवसाद्भगवतीति हिंकृतं चेद्धिंकृण्वतीत्यलङ्कृतां विप्राय दद्यादितरां वा शक्त्या दक्षिणां तत उत्सृजेद्देवपितृमनुष्याः प्रीयन्तामिति ब्राह्मणान्भोजयित्वा स्वस्त्ययनं वाचयीत' इति । विस्तरस्तु मात्स्योक्तोऽस्मत्कृतजलाशयोत्सर्गविधौ ज्ञेयः । कूपादेरुत्सर्गाकरणे दोष उक्तो भविष्ये—'सदा जलं पवित्रं स्यादपवित्रमसंस्कृतम् । कुशाग्रेणापि राजेन्द्र न स्प्रष्टव्यमसंस्कृतम् ॥' तथा—'वापीकूपतडागादौ यज्जलं स्यादसंस्कृतम् । अपेयं तद्भवेत्सर्वं पीत्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥'

अथ वृक्षारोपणम् । चण्डेश्वरः—'आदित्यचान्द्रपितृतिष्यविशाखपौष्णमूलोत्तरात्रयतुरङ्गमवारुणाश्च । एतेषु तारकगणेषु हितं नराणां वृक्षादिरोपणमिहोपदिशन्ति धीराः ॥'

अथ मूर्तिप्रतिष्ठा । वसिष्ठः—'हस्तत्रये मित्रहरित्रये च पौष्णद्वयादित्यसुरेज्यभेषु । तिस्रोत्तराधातृशशाङ्कभेषु सर्वामरस्थापनमुत्तमं स्यात् ॥' मात्स्ये—'चैत्रे वा फाल्गुने वापि ज्येष्ठे वा माधवे तथा । माघे वा सर्वदेवानां प्रतिष्ठा शुभदा भवेत् ॥' नारदस्तु चैत्रं निषेधति । 'विचैत्रेष्वेव मासेषु माघादिषु च पञ्चसु ।' इति । तेनात्र विकल्पः । अत्र माघमासो विष्णुप्रतिष्ठाव्यतिरिक्तविषयः । 'माघे कर्तुर्विनाशाय फाल्गुने शुभदा भवेत् ।' इति विष्णुधर्मोक्तेरिति हेमाद्रिः । मात्स्ये—'दृढा धनकरी स्फीता तथा प्रतिपदि स्मृता । द्वितीयायां धनोपेता तृतीयायां धनप्रदा ॥ चतुर्थ्यां नाशमाप्नोति यमस्य स्यात्सुखावहा । विनायकस्य देवस्य तथा तत्र हितप्रदा ॥ पञ्चम्यां श्रीयुता कर्तुर्वरदा च तथा भवेत् । षष्ठ्यां लक्ष्मीयुता नित्यं सप्तम्यां रोगनाशिनी ॥ अष्टम्यां धान्यबहुला नवम्यां च विनश्यति । भद्रकाल्याः कृता तत्र कर्तुर्भवति तुष्टये ॥ धर्मवृद्धिकरी ज्ञेया दशम्यां तु तथा तिथौ । एकादश्यां तथा युक्ता द्वादश्यां सर्वकामदा ॥ त्रयोदश्यां तथा ज्ञेया चतुर्दश्यां विनश्यति । कृष्णपक्षे पञ्चदश्यां कर्तुः क्षयकरी

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भवेत् ॥ पञ्चदश्यां तथा शुक्ले सर्वकामकरी भवेत् । आषाढे द्वे तथा मूलमुत्तरात्रयमेव च ॥ ज्येष्ठाश्रवणरोहिण्यः पूर्वाभाद्रपदा तथा । हस्तोऽश्विनी रेवती च पुष्यो मृगशिरस्तथा ॥ अनूराधा तथा स्वाती प्रतिष्ठासु प्रशस्यते ॥' श्रीपतिः–'रोहिण्युत्तरपौष्णवैष्णवकरादित्याश्विनीवासवानूराधैन्दवजीवभेषु गदितं विष्णोः प्रतिष्ठापनम् । पुष्यश्रुत्यभिजित्सुरेश्वरकयोर्वित्ताधिपस्कन्दयोर्मैत्रे तिग्मरुचेः करे निरृतिभे दुर्गादिकानां शुभम् ॥ गणपरिवृढरक्षोयक्षभूतासुराणां प्रथमफणिसरस्वत्यादिकानां च पौष्णे । श्रवसि सुगतनाम्नो वासवे लोकपानां निगदितमखिलानां स्थापनं च स्थिरेषु ॥ तेजस्विनी क्षेमकृदग्निदाहविधायिनी स्याद्धनदा दृढा च । आनन्दकृत्कल्पविनाशिनी च सूर्यादिवारेषु भवेत्प्रतिष्ठा ॥' माधवीये वैखानसः–'मातृभैरववाराहनरसिंहत्रिविक्रमाः । महिषासुरहन्त्र्यश्च स्थाप्या वै दक्षिणायने ॥' वैशब्दोऽप्यर्थे ।

लिङ्गप्रतिष्ठायां विशेषो हेमाद्रौ लक्षणसमुच्चये–'उत्तराशागते भानौ लिङ्गस्थापनमुत्तमम् । दक्षिणे त्वयने पूज्य त्रिवर्षार्धे भयावहम् ॥ स्वगृहे स्थापनं नेष्टं तस्माद्वै दक्षिणायने । स्थापनं तु प्रकर्तव्यं शिशिरादावृतुत्रये ॥ प्रावृषि स्थापितं लिङ्गं भवेद्वरदयोगदम् ॥ हेमन्ते ज्ञानदं चैव लिङ्गस्यारोपणं मतम् ॥' रत्नावल्याम्–'माघफाल्गुनवैशाखज्येष्ठाषाढेषु पञ्चसु । मासेषु शुक्लपक्षेषु लिङ्गस्थापनमुत्तमम् ॥' विष्णोरप्याह तत्रैव वैखानसः–'मार्गशीर्षादिमासौ द्वौ निन्दितौ ब्रह्मणा पुरा । मासेषु फाल्गुनः श्रेष्ठश्चैत्रो वैशाख एव च ॥ वृषे वाप्यश्वयुङ्मासे श्रावणे मासि वा भवेत् ॥' बौधायनसूत्रे विष्णुप्रतिष्ठामुपक्रम्य–'द्वादश्यां श्रोणायां वा यानि चान्यानि पुण्यनक्षत्राणि' इति । कृत्तिकादिविशाखान्तेष्वित्यर्थः । सर्वदेवेषु मासविशेषो हेमाद्रौ विष्णुधर्मे–'माघे कर्तुर्विनाशाय फाल्गुने शुभदा भवेत् । लोकानन्दकरी चैत्रे वैशाखे वरसंयुता ॥ आज्ञायुता सदा ज्येष्ठे आषाढे धर्मवृद्धिदा । श्रावणे धनहीना स्यात्प्रोष्ठपादे विनश्यति ॥ आश्विने नाशमाप्नोति वह्निना कार्तिके तथा । सौम्ये सौभाग्यमतुलं पौषे पुष्टिरनुत्तमा ॥ दोषान्विताधिमासे स्यात्कर्तुरात्मन एव च ॥' इति । अत्र श्रावणाश्विनयोर्निषेधो मार्गशीर्षविधिश्च विष्णुव्यतिरिक्तविषयः । पूर्वोक्तवचनादिति हेमाद्रिः । माघश्रावणभाद्रपदनिषेधः शिवव्यतिरिक्तविषयः । तत्र तस्योक्तेः । देवीस्थापने तत्रैव विशेषो देवीपुराणे–'देव्या सावेऽश्विने मासे उत्तमा सर्वकामदा । तथा–'न तिथिर्न च नक्षत्रं नोपवासोऽत्र कारणम् । सर्वकालं प्रकर्तव्यं कृष्णपक्षे विशेषतः ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अन्यश्चात्र विचारो हेमाद्रौ ज्ञेयः। नारदः—'हन्त्यर्थहीना कर्तारं मन्त्रहीना तु ऋत्विजम्। स्त्रियं लक्षणहीना तु न प्रतिष्ठासमो रिपुः॥'

अत्राधिकारिण उक्ताः कृत्यकल्पतरौ देवीपुराणे—'वर्णाश्रमविभेदेन देवाः स्थाप्यास्तु नान्यथा। ब्रह्मा तु ब्राह्मणैः स्थाप्यो गायत्रीसहितः प्रभुः॥ चतुर्वर्णैस्तथा विष्णुः प्रतिष्ठाप्यः सुखार्थिभिः। भैरवोऽपि चतुर्वर्णैरन्त्यजानां तथा मतः॥ मातरः सर्वलोकैस्तु स्थाप्याः पूज्याः सुरोत्तमाः। लिङ्गं गृही यतिर्वापि संस्थाप्य तु यजेत्सदा॥' शिवसर्वस्वे भविष्ये—'यस्तु पूजयते लिङ्गं देवादिं मां जगत्पतिम्। ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो वा मत्परायणः॥ तस्य प्रीतः प्रदास्यामि शुभाँल्लोकाननुत्तमान्॥' तिथितत्त्वे स्कान्दे—'शूद्रः कर्माणि यो नित्यं स्वीयानि कुरुते प्रिये। तस्याहमर्चां गृह्णामि चन्द्रखण्डविभूषिते। ब्रह्मचारी गृहस्थो वा वानप्रस्थश्च सुव्रते। एवं दिने दिने देवं पूजयेदम्बिकापतिम्॥ संन्यासी देवदेवेशं प्रणवेनैव पूजयेत्। नमोन्तेन शिवेनैव स्त्रीणां पूजा विधीयते॥' एतच्च पुराणप्रसिद्धजीर्णलिङ्गपूजाविषयम्। यानि तु त्रिस्थलीसेतौ नारदीये—'यः शूद्रेणार्चितं लिङ्गं विष्णुं वा प्रणमेन्नरः। न तस्य निष्कृतिर्दृष्टा प्रायश्चित्तायुतैरपि॥ नमेद्यः शूद्रसंस्पृष्टं लिङ्गं वा हरिमेव वा। स सर्वयातनाभोगी यावदाचन्द्रतारकम्॥ पाखण्डपूजितं लिङ्गं नत्वा पाखण्डतां व्रजेत्। आभीरपूजितं लिङ्गं नत्वा नरकमश्नुते॥ योषिद्भिः पूजितं लिङ्गं विष्णुं वापि नमेत्तु यः। स कोटिकुलसंयुक्तमाकल्पं रौरवं वसेत्॥' इत्यादीनि, तानि नूतनस्थापितलिङ्गादिविषयाणि। 'यदा प्रतिष्ठितं लिङ्गं मन्त्रविद्भिर्यथाविधि। तदाप्रभृति शूद्रश्च योषिद्वापि न संस्पृशेत्॥' इति तत्रैवोक्तेः।

प्रतिष्ठायां तु शूद्रादीनां नाधिकारः। 'स्त्रीणामनुपनीतानां शूद्राणां च जनेश्वर। स्थापने नाधिकारोऽस्ति विष्णोर्वा शङ्करस्य वा॥ यः शूद्रसंस्कृतं लिङ्गं विष्णुं वापि नमेन्नरः। इहैवानन्तदुःखानि पश्यत्यामुष्मिके किमु॥ शूद्रो वानुपनीतो वा स्त्रियो वा पतितोऽपि वा। केशवं वा शिवं वापि स्पृष्ट्वा नरकमश्नुते॥' इति बृहन्नारदीयस्कान्दोक्तेरिति त्रिस्थलीसेतौ पितामहचरणाः। चतुर्वर्णैरिति पूर्वोक्तवचनाद्विष्ण्वादिप्रतिष्ठायां शूद्रस्य विकल्प इति युक्तं पश्यामः। तत्रैव गौतमः—'शिवार्चनं सदाप्येवं शुचिः कुर्यादुदङ्मुखः॥' वाचस्पतिधृतम्—'प्राक्पश्चिमोदगास्यस्तु प्रातः सायं निशासु च।' इति प्रयोगपारिजाते। गृह्यपरिशिष्टे—'प्रतिमाः प्राङ्मुखीरुदङ्मुखो यजेतान्यत्र प्राङ्मुखः'। एतच्च स्थिरप्रतिमाविषयम्। अन्यत्र चलार्चासु

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ प्रतिमाः भार्गवार्चनदीपिकायां भविष्ये—'सौवर्णी राजती ताम्री मृन्मयी च तथा भवेत्। पाषाणधातुयुक्ता वा रीतिकांस्यमयी तथा॥' रीतिः पित्तलम्। 'शुद्धदारुमयी वापि देवतार्चा प्रशस्यते। अङ्गुष्ठपर्वादारभ्य वितस्तिं यावदेव तु॥ गृहेषु प्रतिमा कार्या नाधिका शस्यते बुधैः॥' पञ्चरात्रे तु—'मृद्दारुलाक्षागोमेदमधूच्छिष्टमयी न तु।' इति निषेध उक्तः। भागवते—'शैली दारुमयी लौही लेप्या लेख्या च सैकती। मनोमयी मणिमयी प्रतिमाष्टविधा स्मृता॥' काष्ठं मधुकस्यैव। 'तत्र काष्ठेषु मधुकमानीय च वसुन्धरे। कृत्वा तत्प्रतिमां चैव प्रतिष्ठाविधिनार्चयेत्॥' इति वाराहोक्तेः। देवीपुराणे—'सप्ताङ्गुलं समारभ्य यावच्च द्वादशाङ्गुलम्। गृहेष्वर्चा समाख्याता प्रासादे त्वधिका शुभा॥'

तिथितत्त्वे कालिकापुराणे—'प्रतिमायाः कपोलौ द्वौ स्पृष्ट्वा दक्षिणपाणिना। प्राणप्रतिष्ठां कुर्वीत तस्य देवस्य वा हरेः॥ अन्येषामपि देवानां प्रतिमासु च पार्थिव। प्राणप्रतिष्ठा कर्तव्या तस्यां देवत्वसिद्धये॥ वासुदेवस्य बीजेन तद्विष्णोरित्यनेन च। तथैव हृदयेऽङ्गुष्ठं दत्वा शश्वच्च मन्त्रवित्॥ एभिर्मन्त्रैः प्रतिष्ठां तु हृदयेऽपि समाचरेत्। अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च॥ अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन॥' हयशीर्षपञ्चरात्रे—'अर्चकस्य तपोयोगादर्चनस्यातिशायनात्। आभिरूप्याच्च बिम्बानां देवः सान्निध्यमृच्छति॥' प्रयोगपारिजाते व्यासः—'प्रतिमापट्टयन्त्राणां नित्यं स्नानं न कारयेत्। कारयेत्पर्वदिवसे यदा वा मलधारणम्॥'

लिङ्गे विशेषस्तिथितत्त्वे भविष्ये—'मृद्भस्मगोशकृत्पिष्टताम्रकांस्यमयं तथा। कृत्वा लिङ्गं सकृत्पूज्य वसेत्कल्पायुतं दिवि॥ वार्क्षं वित्तप्रदं लिङ्गं स्फाटिकं सर्वकामदम्। कृत्वा पूजय विप्रेन्द्र लप्स्यसे वाञ्छित फलम्॥' तत्रैव कालकौमुद्यां स्कान्दे—'अक्षादल्पपरीमाणं न लिङ्गं कुत्रचिन्नरः। कुर्वीताङ्गुष्ठतो ह्रस्वं न कदाचित्समाचरेत्॥' अक्षोऽशीतिगुञ्जाः। 'गुञ्जाः पञ्चाल्पमाषकः। ते षोडशाक्षः कर्षोऽस्त्री' इत्यमरकोशात्। प्रयोगपारिजाते क्रियासारे—'नवाष्टसप्ताङ्गुलिकं लिङ्गं श्रेष्ठमिहोच्यते। षट्पञ्चकचतुर्मानं मध्यमं त्रिविधं स्मृतम्। त्रिद्व्येकाङ्गुलिमानं यत्त्रिविधं तत्कनीयसम्। एवं नवविधं प्रोक्तं चरलिङ्गं यथाक्रमम्॥'

अथ पञ्चसूत्रीनिर्णयः। गौतमीतन्त्रे—'लिङ्गमस्तकविस्तारो लिङ्गोच्छ्रायसमो मतः। परिधिस्तत्त्रिगुणितस्तद्वत्पीठं व्यवस्थितम्॥ प्रणालिका तथैव स्यात्पञ्चसूत्रविनिर्णयः॥' अत्रेदं तत्त्वम्। लिङ्गमस्तकवि-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

स्तारं लिङ्गोच्चतासमं कृत्वा तत्त्रिगुणसूत्रवेष्टनार्हं लिङ्गस्थौल्यं कृत्वा तत्समं वृत्तं चतुरस्रं वा पीठविस्तारमधश्चोर्ध्वं च कुर्यात्। पीठोच्चता तु लिङ्गोच्चतातो द्विगुणा। पीठमध्ये लिङ्गाद्द्विगुणस्थूलं पीठोच्चतातृतीयांशेन कण्ठं कृत्वा तस्योर्ध्वं अधश्च शमं वप्रद्वयं त्रयं वा कृत्वा लिङ्गविस्तारषष्ठांशेन पीठोपरि बाह्यमेखलां कृत्वा तदन्तःसंलग्नं तत्समं खातं कृत्वा पीठाद्बहिर्लिङ्गसमदीर्घां पीठार्धदीर्घां वा मूले दैर्घ्यसमविस्तारां तृतीयांशेन मध्ये खातां पीठवत्समेखलां प्रणालिकां कुर्यादिति। अत्र मूलं सिद्धान्तशेखरे शैवागमे च ज्ञेयम्।

तिथितत्त्वे ब्राह्मे—'सर्वत्रैव प्रशस्तोऽब्जः शिवसूर्यार्चनं विना॥'

गृहे शङ्खशालग्रामादिपूजनम्

तत्रैव वाराहपाद्मयोः - गृहे लिङ्गद्वयं नार्च्यं शालग्रामद्वयं तथा। द्वे चक्रे द्वारकायास्तु नार्च्ये सूर्यद्वयं तथा॥ शक्तित्रयं तथा नार्च्यं गणेशत्रयमेव च। द्वौ शङ्खौ नार्चयेच्चैव भग्नां च प्रतिमां तथा॥ नार्चयेच्च तथा मत्स्यकूर्मादिदशकं तथा। गृहेऽग्निदग्धा भग्नाश्च नार्चाः पूज्या वसुन्धरे॥ एतासां पूजनान्नित्यमुद्वेगं प्राप्नुयाद् गृही। शालग्रामाः समाः पूज्याः समेषु द्वितयं नहि॥ विषमा नैव पूज्याः स्युर्विषमेष्वेक एव हि। शालग्रामशिला भग्ना पूजनीया सचक्रका॥ खण्डिता स्फुटिता वापि शालग्रामशिला शुभा॥' वाराहे—'दद्याद्भक्त्या यो देवि शालग्रामशिलां नरः। सुवर्णसहितां दिव्यां पृथ्वीदानफलं लभेत्॥' तत्रैव--'यः पुनः पूजयेद्भक्त्या शालग्रामशिलाशतम्। तत्फलं नैव शक्तोऽहं वक्तुं वर्षशतैरपि॥' विष्णुपुराणे—'ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्च पृथिवीपते। स्वधर्मतत्परो विष्णुमाराधयति नान्यथा॥'

अविभक्तानां पृथग्देवपूजामाह प्रयोगपारिजाते आश्वलायनः—'पृथगप्येकपाकानां ब्रह्मयज्ञो द्विजातिनाम्। अग्निहोत्रं सुरार्चा च संध्या नित्यं भवेत्पृथक्॥' तत्रैव विष्णुधर्मे—'शालग्रामशिलां वापि चक्राङ्कितशिलां तथा। ब्राह्मणः पूजयेन्नित्यं क्षत्रियादिर्न पूजयेत्॥' इदं स्पर्शसहितपूजाविषयम्। 'शूद्रो वानुपनीतो वा स्त्रियो वा पतितोऽपि वा। केशवं वा शिवं वापि स्पृष्ट्वा नरकमश्नुते॥ ब्राह्मण्यपि हरं विष्णुं न स्पृशेच्छ्रेय इच्छती। सनाथा मृतनाथा वा तस्या नास्तीह निष्कृतिः॥ स्त्रीणामनुपनीतानां शूद्राणां च जनेश्वर। स्पर्शने नाधिकारोऽस्ति विष्णोर्वा शङ्करस्य च॥' इति स्कान्दात्। स्पर्शरहिता तु तयोर्भवत्येव। 'शालग्रामं न स्पृशेत्तु हीनवर्णो वसुन्धरे। स्त्रीशूद्रकरसंस्पर्शो वज्रस्पर्शाधिको मतः॥ मोहाद्यः संस्पृशेच्छूद्रो योषिद्वापि कदाचन। स्वपते नरके

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

घोरे यावदाभूतसंप्लवम् ॥ यदि भक्तिर्भवेत्तस्य स्त्रीणां वापि वसुन्धरे। दूरादेवास्पृशन्पूजां कारयेत्सुसमाहितः ॥' इति वाराहोक्तेः। शालग्रामशिलामात्रे निर्बन्धो न प्रतिमादौ। 'सर्ववर्णैस्तु संपूज्याः प्रतिमाः सर्वदेवताः। लिङ्गान्यपि तु पूज्यानि मणिभिः कल्पितानि च ॥' इति तत्रैवोक्तेः। 'चत्वारो ब्राह्मणैः पूज्यास्त्रयो राजन्यजातिभिः। वैश्यैर्द्वाविव संपूज्यौ तथैकः शूद्रजातिभिः ॥' इति स्कान्दात्। अन्ये तु दीक्षितविषयत्वेन व्यवस्थामाहुः। विष्णुधर्मे—'तयोरसंभवेर्चा वै सा चेह नवधा स्मृता। रत्नजा हेमजा चैव राजती ताम्रजा तथा ॥ रैतिक्यर्चा तथा लौही शैलजा द्रुमजा तथा। अथमाधमा च विज्ञेया मृन्मया प्रतिमा च या ॥' एषां फलानि तत्रैव ज्ञेयानि। 'नार्च्या गृहेऽश्मजा मूर्तिश्चतुरङ्गुलतोऽधिका। न वितस्त्यधिका धातुसंभवा श्रेय इच्छता ॥ एवंलक्षणसंपन्ना पारम्पर्यक्रमागता। उत्तमा सा तु विज्ञेया गुरुदत्तापि तत्समा ॥' तत्रैव पाद्मे शालग्रामं प्रक्रम्य—'तत्राप्यामलकीतुल्या पूजा सूक्ष्मैव या भवेत्। यथा यथा शिला सूक्ष्मा तथा स्यात्तु महत्फलम् ॥' तथा—'यवमात्रं तु गर्तः स्याद्यवार्धं लिङ्गमुच्यते। शिवनाभिरिति ख्यातस्त्रिषु लोकेषु दुर्लभः ॥' तत्रैव—'शालग्राममयी मुद्रा संस्थिता यत्र कुत्रचित्। वाराणस्या यवाधिक्यं समन्ताद्योजनत्रयम् ॥ यो मृतस्तत्समीपे तु मृतो वा नीयतेऽन्तिकम्। स वै मोक्षमवाप्नोति सत्यं सत्यं न चान्यथा ॥' तत्रैव—'चक्राङ्कमिथुनं पूज्यं नैकं चक्राङ्कमर्चयेत्। चक्राङ्कमिथुनात्सार्धं शालग्रामं प्रपूजयेत् ॥' तत्रैव वाराहे—'म्लेच्छदेशे शुचौ वापि चक्राङ्का यत्र तिष्ठति। योजनानां तथा त्रीणि मम क्षेत्रं वसुन्धरे ॥ तत्रैव शालग्रामं प्रक्रम्य—'क्रयक्रीता परिज्ञेया मध्यमा याचिताऽधमा ॥' प्रयोगपारिजाते वाराहे—'एवंलक्षणसंपन्ना पारम्पर्यक्रमागता। उत्तमा सा तु विज्ञेया गुरुदत्तापि तत्समा ॥'

अथ पार्थिवपूजा नन्दिपुराणे—आयुष्मान्बलवाञ्श्रीमान्पुत्रवान्धनवान्सुखी। वरमिष्टं लभेल्लिङ्गं पार्थिवं यः समर्चयेत् ॥ तस्मात्तु पार्थिवं लिङ्गं ज्ञेयं सर्वार्थसाधकम् ॥' तत्रैव—'गोभूहिरण्यवस्त्रादिबलिपुष्पनिवेदने। ज्ञेयो नमः शिवायेति मन्त्रः सर्वार्थसाधकः ॥ सर्वमन्त्राधिकश्चायमोङ्काराद्यः षडक्षरः ॥' भविष्ये—'मूर्तयोऽष्टौ शिवस्यैता पूर्वादिक्रमयोगतः। आग्नेय्यन्ताः प्रपूज्यास्तु वेद्यां लिङ्गे शिवं यजेत् ॥' अत्र—'न प्राचीमग्रतः शंभोः' इति रुद्रयामले निषेधात् नान्तरालं प्राची किन्तु प्रसिद्धैव। तिथितत्त्वे देवीपुराणे—'मृदाहरणसंघट्टे प्रतिष्ठाह्वानमेव

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

च । स्नपनं पूजनं चैव विसर्जनमतः परम् ॥ हरो महेश्वरश्चैव शूलपाणिः पिनाकधृक् । शिवः पशुपतिश्चैव महादेव इति क्रमः ॥' स्कान्दे—'शुष्काण्यपि च पत्राणि श्रीवृक्षस्य निवेदयेत् ।' तत्रैव भविष्ये—'धत्तूरःकैश्च यो लिङ्गं सकृत्पूजयते नरः । स गोलक्षफलं प्राप्य शिवलोके महीयते ॥' योगिनीतन्त्रे—'शिवागारे झल्लकं च सूर्यागारे च शङ्खकम् । दुर्गागारे वंशवाद्यं मधूरीं न च वादयेत् ॥' श्राद्धहेमाद्रौ स्कान्दे—'स्पृष्ट्वा रुद्रस्य निर्माल्यं वाससा आप्लुतः शुचिः ।' प्रयोगपारिजाते क्रियासारे—मध्यमानामिकामध्ये पुष्पं संगृह्य पूजयेत् । अङ्गुष्ठतर्जन्यग्राभ्यां निर्माल्यमपनोदयेत् ॥ अपनीतं च निर्माल्यं चण्डेशाय निवेदयेत् । अशून्यमस्तकं लिङ्गं सदा कुर्वीत पूजकः ॥' शूलपाणौ लैङ्गे—वरं प्राणपरित्यागः शिरसो वापि कर्तनम् । न चैवापूज्य भुञ्जीत शिवलिङ्गे महेश्वरम् ॥ सूतके मृतके चैव न त्याज्यं शिवपूजनम् ॥ तिथितत्त्वे लैङ्गे—'विना भस्मत्रिपुण्ड्रेण विना रुद्राक्षमालया । पूजितोऽपि महादेवो न स्यात्तस्य फलप्रदः ॥ तस्मान्मृदापि कर्तव्यं ललाटे वै त्रिपुण्ड्रकम् ॥'

रुद्राक्षधारणे विशेषः शिवरहस्ये—'एकवक्त्रः शिवः साक्षाद् ब्रह्महत्यां व्यपोहति । अवध्यत्वं प्रतिस्रोतो वह्निस्तम्भं करोति च ॥ द्विवक्त्रो हरगौरी स्याद्गोवधाद्यघनाशकृत् । त्रिवक्त्रो ह्यग्निजन्माथ पापराशिं प्रणाशयेत् ॥ चतुर्वक्त्रः स्वयं ब्रह्मा नरहत्यां व्यपोहति । पञ्चवक्त्रस्तु कालाग्निरगम्याभक्ष्यपापनुत् ॥ षड्वक्त्रस्तु गुहो ज्ञेयो भ्रूणहत्यादि नाशयेत् । सप्तवक्त्रस्त्वनन्तः स्यात्स्वर्णस्तेयादिपापहृत् ॥ विनायकोऽष्टवक्त्रः स्यात्सर्वानृतविनाशकृत् । भैरवो नववक्त्रस्तु शिवसायुज्यकारकः ॥ दशवक्त्रः स्मृतो विष्णुर्भूतप्रेतभयावहः ॥ एकादशमुखो रुद्रो नानायज्ञफलप्रदः । द्वादशास्यस्तथादित्यः सर्वरोगनिबर्हणः ॥ त्रयोदशमुखः कामः सर्वकामफलप्रदः । चतुर्दशास्यः श्रीकण्ठो वंशोद्धारकरः परः ॥' इति ।

तथा—विना मन्त्रेण यो धत्ते रुद्राक्षं भुवि मानवः । स याति नरकान्घोरान्यावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥ पञ्चामृतं पञ्चगव्यं स्नानकाले प्रयोजयेत् । रुद्राक्षस्य प्रतिष्ठायां मन्त्रं पञ्चाक्षरं तथा ॥ त्र्यम्बकादिकमन्त्रं च तथा तत्र प्रयोजयेत् ॥ यद्वा 'ॐ अघोर ॐ ह्रैं अघोरतर ॐ ह्रौं ह्रां नमस्ते रुद्ररूपाय ह्रैं स्वाहा' अनेनाभिमन्त्र्य धारयेत् । तथा 'अष्टोत्तरशतं कार्याश्चतुःपञ्चाशदेव वा । सप्तविंशतिमाना वा ततो हीनाधमाः स्मृताः ॥ प्रजापतिः-'मोक्षार्थी पञ्चविंशत्या धनार्थी त्रिंशता जपेत् । पुष्ट्यर्थी पञ्चविंशत्या पञ्चदश्याभिचारिके ॥ सप्तविंशतिरुद्राक्षमालया देहसंस्थया ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

यत्करोति नरः पुण्यं सर्वं कोटिगुणं भवेत् ॥ यो ददाति द्विजेभ्यश्च रुद्राक्षं भुवि सन्मुखम् । तस्य प्रीतो भवेद्रुद्रः स्वपदं च प्रयच्छति ॥' इति । पदार्थादर्शे बोपदेवः –'रुद्राक्षान्कण्ठदेशे दशनपरिमितान्मस्तके विंशती द्वे षट् षट् कर्णप्रदेशे करयुगलकृते द्वादश द्वादशैव । बाह्वोरिन्दोः कलाभिर्नयनयुगकृते एकमेकं शिखायां वक्षस्यष्टाधिकं यः कलयति शतकं स स्वयं नीलकण्ठः ॥'

हेमाद्रौ शिवधर्मे—'स्नानं पलशतं ज्ञेयमभ्यङ्गः पञ्चविंशतिः । पलानां द्वे सहस्रे तु महास्नानं प्रकीर्तितम् ॥ पञ्चविंशत्पलं लिङ्गे अभ्यङ्गं कारयेद् धन। शिवस्य सर्पिषा स्नानं प्रोक्तं पलशतेन च ॥ तावता मधुना चैव दध्ना चैव ततः पुनः। तावतैव च क्षीरेण गव्येनैव भवेत्ततः ॥ भूयः सार्धसहस्रेण पलानामैक्षवेण च । रसेन कारयेत्स्नानं भक्त्या चोष्णाम्बुना ततः ॥' विष्णवादौ तु स्कान्दे–'क्षीराद्दशगुणं दध्ना घृतेनैव दशोत्तरम् । घृताद्दशगुणं क्षौद्रं क्षौद्राच्चैक्षवजं तथा ॥ ब्राह्मे–'देवानां प्रतिमा यत्र घृताभ्यङ्गक्षमा भवेत् । पलानि तत्र देयानि श्रद्धया पञ्चविंशतिः ॥' इदं क्रोडीकृताभिप्रायेण । तत्रैव सङ्ग्रहे–विष्वक्सेनाय दातव्यं नैवेद्यस्य शतांशकम् । पादोदकं प्रसादं च लिङ्गे चण्डेश्वराय तु ।'

पञ्चायतनसन्निवेशमाह बोपदेवः पदार्थादर्शश्च—शंभौ मध्यगते हरीनहरभूदेव्यो हरौ शङ्करेभास्येनागसुता रवौ हरगणेशाजाम्बिकाः स्थापिता । देव्यां विष्णुहरेभवक्त्ररवयो लम्बोदरेऽजेश्वरेनाम्बाः शङ्करभागतोऽतिसुखदा व्यस्तास्तु हानिप्रदाः ।' शङ्कर भागतः ईशानकोणादारभ्य प्रदक्षिणमित्यर्थः । अत्र दिक्स्वरूपमुक्तं प्रयोगपारिजाते मन्त्रशास्त्रे—'देवस्य मुखमारभ्य दिशं प्राचीं प्रकल्पयेत् । तदादि परिवाराणामङ्गाद्यावरणस्थितिः ॥' तत्र क्रमः पाद्मे–'रविर्विनायकश्चण्डी ईशो विष्णुस्तु पञ्चमः । अनुक्रमेण पूज्यन्ते व्युत्क्रमे तु महद्भयम् ॥' तथा—'पूज्यपूजकयोर्मध्ये प्राची प्रोक्ता विचक्षणैः ॥'

अथ केशवादिमूर्तयः बोपदेवः—केविगोवादापुह्वपेप्रजाच्युकृममात्रिना । वाधोनृहसानिश्रीपाशाच्चगे वि गपे चपे ॥' अत्र केविगवित्याद्यैः केशवविष्णवादिचतुर्विंशतिमूर्तयोऽभिधीयन्ते । शात् शङ्खात् चगे चक्रगदे ज्ञेये इत्यर्थः। शिष्टे भुजे पद्मं त्वर्थतः सिद्धम् ॥ अत्र दक्षिणोर्ध्वकरक्रमेण ज्ञेयम् । 'दक्षिणोर्ध्वकरक्रमात्' इति हेमाद्रौ वचनात् तेन हेमाद्रिणा संवादः । विशब्देन विपरीतं गचे इत्यर्थः । अत्रापि शादित्यनुवृत्तिः । शङ्खाद्गदाचक्रे इत्यर्थः । गपे इत्यत्रापि शादनुवर्तते । शङ्खाद्गदापद्मे इत्यर्थः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विपरीते पद्मगदे इत्यत्रापि शङ्खाज्ज्ञेये। चपे चक्रपद्मे शङ्खाचक्रपद्मे इत्यर्थः। वि इत्यत्रापि पद्मचक्रे इत्यर्थः। तेन चगे इत्यष्टौ मूर्तयः। गपे इत्यष्टौ मूर्तयः। चपे इत्यत्र च। अत्र मूलं हेमाद्रौ ज्ञेयम्।

अथ बौधायनसूत्रं त्रैविक्रमीं चानुसृत्य लिङ्गार्चाप्रतिष्ठोच्यते-यजमानः पूर्वोक्तकाले पूर्वेद्युः दशद्वादशषोडशान्यतरहस्तं मण्डपं कृत्वाग्नेये हस्तमात्रं चतुरस्रं कुण्डं स्थण्डिलं वा पूर्वतो हस्तमात्रां वेदीं नैऋते वास्तुमण्डपं मध्ये वेदीं तदुपरि सर्वतोभद्रं कृत्वा प्राणानायस्यास्यां मूर्तौ लिंगे वा देवस्य सान्निध्यसिद्ध्यर्थं दीर्घायुर्लक्ष्मीसर्वकामसमृध्यक्षय्यसुखकामोऽमुकमूर्तिप्रतिष्ठां करिष्ये-इति सङ्कल्प्य गणेशपूजनपुण्याहवाचनमातृकापूजननान्दीश्राद्धानि कृत्वाचार्यं चतुरो ऋत्विजश्च वृत्वा वस्त्राद्यैः पूजयेत्। अथाचार्यो यदत्र संस्थितमिति सर्षपान् विकीर्यापोहिष्ठेति कुशोदकेन भूमिं प्रोक्ष्य देवा आयान्तु, यातुधाना अपयान्तु, विष्णो देवयजनं रक्षस्वेति भूमौ प्रादेशं कृत्वाऽस्मत्कृततुलापद्धतिमार्गेण मण्डपप्रतिष्ठां कृत्वाऽकृत्वा वा पूर्वरात्रौ हिरण्योपधानं देवं पञ्चगव्यहिरण्ययवदूर्वाश्वत्थपलाशपर्णान्युदकुम्भे प्रक्षिप्य ताभिरद्भिरापोहिष्ठेति तिसृभिर्हिरण्यवर्णा इति चतसृभिः पवमानः सुवर्जन इत्युवाकेनाभिषिच्य व्याहृतिभिरिदं विष्णुरिति फलयवदूर्वाः समर्प्य रक्षोहणमिति हस्ते कङ्कणं बद्ध्वा वाससाच्छाद्य अवतेहेड उदुत्तममिति जलेऽधिवासयेत्'। इदं बौधायनोक्तम्।

ततश्चललिङ्गे अर्चायां वा अत्राग्निं प्रतिष्ठाप्य गोक्षीरे नीवारचरुं कृत्वा विष्णुश्चेत् कृसरमपि श्रपयित्वाज्यभागान्ते पलाशोदुम्बराश्वत्थशम्यपामार्गसमिद्भिः आज्येन चरुणा तिलैर्वा प्रत्येकमष्टाविंशतिमष्टौ वाहुतीर्लोकपालमूर्तिपतिभ्यो हुत्वा स्थाप्यदेवमन्त्रेण पूर्वोक्तसमित्तिलनैवारचर्वाज्यैरष्टसहस्रमष्टशतमष्टाविंशतिं वा हुत्वा 'अग्निर्यजुर्भिः' इत्यनुवाकेन दशाहुतीर्जुहुयात्। प्रतिद्रव्यहोमान्ते देवं पादनाभिशिरस्सु स्पृशेत्। आज्यहोमे चोत्तरतः सजलकुम्भे संपातान्नयेत्। तेषां मन्त्राः इन्द्रायेन्दो इतीन्द्रस्य। स्योनेति पृथिवीमूर्तेः। अघोरेभ्य इति तत्पतेः शर्वस्य। अग्न आयाहित्यग्नेः। अग्निं दूतमित्यग्निमूर्तेः। नमः शर्वाय च पशुपतये चेति पशुपतेः। यमाय सोममिति यमस्य। असिहिवीरिति यजमानमूर्तेः। स्तुहि श्रुतं तत्पतेः उग्रस्य। असुन्वन्तं निऋतेः। आकृष्णेन सूर्यमूर्तेः। यो रुद्रो अग्नौ इति तत्पते रुद्रस्य। इमं मे वरुणस्य। शं नो देवी जलमूर्तेः। नमो भवायेति भवस्य। आनो नियुद्भिरिति वायोः। वात आ वातु वायुमूर्तेः। तमीशानं तत्पतेरीशानस्य। आप्यायस्वेति कुबेरस्य। वयं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

सोमेति सोममूर्तेः । तत्पुरुषाय महादेवस्य । अभित्वा ईशानस्य । आदित्प्रत्नस्येत्याकाशस्य । नम उग्राय चेति तत्पतेर्भीमस्य । ततो देवस्य पादौ स्पृशेत् । एवं द्वितीये हुत्वा नाभिं, तृतीये मध्यं, चतुर्थे उरः, पञ्चमे शिरः, स्पृष्ट्वा प्रतिपर्यायं संपातजलेन देवमभिषिञ्चेत् । ततः स्विष्टकृदादिहोमशेषं समाप्यार्चां शोधयेत् । स्थिरलिंगार्चादौ तु नेदानीमग्निस्थापनहोमादि कार्यम् ।

ततो देवं नत्वा 'स्वागतं देवदेवेश विश्वरूप नमोऽस्तु ते । शुद्धेऽपि त्वदधिष्ठाने शुद्धिं कुर्मः सहस्व ताम् ॥' इति संप्रार्थ्य 'उत्तिष्ठ ब्राह्मणस्पते' इति सर्त्विगुत्थाप्य पूर्वमकृतेऽग्न्युत्तारणे अधुना वा कार्यम् । 'अग्निः सप्तिम्' इति सूक्तमग्निपदहीनं पठित्वा तत्सहितं पुनः पठेत् । एवमष्टसहस्रमष्टशतमष्टाविंशति वा पठन् जलं पातयेत् । ततोऽर्चां द्वादशवारं मृदा जलेन च प्रक्षाल्य मन्त्रवत्पञ्चगव्यं कृत्वा 'पयः पृथिव्याम्' 'आवो राजानम्' इति च संस्नाप्य 'आप्यायस्व, दधिक्राव्णः, तेजोसि, मधुवाता आयं गौः, इति पञ्चामृतैः संस्नाप्य लिंगं चेत्–'नमस्ते रुद्र मन्यवे' इत्यष्टाभिः संस्नाप्य घृतेनाभ्यज्योद्वर्तनेनोद्वर्त्योष्णोदकेन प्रक्षाल्य गन्धं दत्त्वा संपातोदकेनाभिषिच्य सपल्लवैश्चतुर्भिः कुम्भैः 'आपो हि ष्ठा' इति त्रिभिः 'आकलशेषु' इति च प्रत्येकं, 'समुद्रज्येष्ठा' इति चतुर्भिः, आकलशेषु' इति च मिलितैः संस्नाप्यौदुम्बरादिपीठेऽर्चामुपवेश्य परितोऽष्टदिक्षु सजलकुम्भान्संस्थाप्य तेषु गन्धपुष्पदूर्वाः क्षिप्त्वा आद्ये सप्तमृदः, द्वितीये पुष्करपर्णसमीविकङ्कताश्मन्तकत्वचः पल्लवाश्च, तृतीयादिषु सप्तधान्यं पञ्चरत्नफलपुष्पाणि कुशदूर्वागोरोचनसम्पातोदकगन्धफलसर्वौषधीः क्षिप्त्वा क्रमेण 'आपो हि ष्ठा' इति तिसृभिः, 'हिरण्यवर्णाः' इति चतसृभिः, पवमानानुवाकेन चाभिषिच्यैककुम्भे शमीपलाशवटखदिरबिल्वाश्वत्थविकङ्कतपनसाम्रशिरीषोदुम्बराणां पल्लवान् कषायांश्च क्षिप्त्वा 'अश्वत्थेव' इत्यभिषिच्य पञ्चरत्नोदकेन 'हिरण्यवर्णाः' इति संस्नाप्य वाससी दत्त्वा उपवीतादि दीपान्तं कृत्वा 'हिरण्यगर्भः' य आत्मदा, यः प्राणतः, यस्येमे, येन द्यौः, यं क्रन्दसी, आपो ह यत्, यश्चिदापो' इत्यष्टौ पिष्टदीपान् दत्त्वा सुवर्णशलाकया तैजसपात्रस्थं मधु घृतं च गृहीत्वा 'चित्रं देवानां' 'तेजोसि, इति मन्त्राभ्यां 'ॐ नमो भगवते तुभ्यं शिवाय हरये नमः । हिरण्यरेतसे विष्णो विश्वरूपाय ते नमः ॥' इति च दक्षिणसव्ये देवनेत्रे मन्त्रावृत्त्या लिखेत् । 'अञ्जन्ति त्वा' इत्यञ्जनेन मधुना वाङ्क्त्वा देवस्य त्वा सवितुः प्रसवे० इन्द्रस्येन्द्रियेणानज्मि' इति मध्वाज्यशर्कराभिरङ्क्त्वा

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तेनैवाञ्जनेन पुनरञ्जयेत्। स्थिरलिंगे तु स्वर्णसूच्या गन्धेन 'ॐ नमो भगवते रुद्राय हिरण्यरेतसे पराय परमात्मने विश्वरूपायोमाप्रियाय नमः, इत्यञ्जनादिनाञ्जयेत्। ततः आदर्शभद्रयादि दर्शयेत्। ततः कर्ता आचार्याय गामृत्विग्भ्यश्च दक्षिणां दद्यात्। अथाचार्यः प्रत्यृचमादौ प्रणवं वदन् पुरुषसूक्तेन स्तुत्वा वंशपात्रे पञ्चवर्णौदनेन देवस्य नीराजनं कारयित्वा रुद्राय चतुष्पथादौ दद्यात्। मन्त्रस्तु—ॐनमो रुद्राय सर्वभूतादिपतये दीप्तशूलधरायोमादयिताय विश्वाधिपतये रुद्राय वै नमो नमः। शिवमगर्हितं कर्मास्तु स्वाहा' इति। अश्वत्थपर्णे भूतेभ्यो नम इति। केचिदेतद्रात्रौ स्थिरप्रतिष्ठायामिच्छन्ति।

अथाचार्यः सर्वतोभद्रे देवानावाहयेत्। मध्ये-ब्रह्माणम्। पूर्वादिदिक्षु इन्द्रादिलोकपालान्। ईशानेन्द्राद्यन्तरालेषु वसून्, रुद्रान्, आदित्यान्, अश्विनौ, विश्वान्देवान्, पितॄन्, नागान्, स्कन्दवृषौ। ब्रह्मेशानाद्यन्तरालेषु-दक्षं, विष्णुं, दुर्गां, स्वधाकारं, मृत्युरोगान्, समुद्रान्, सरितः, मरुतः, गणाधिपं चेति। मध्ये एव पृथिवीं मेरुं संस्थाप्य देवं चावाह्य प्रागादि—वज्रं, शक्तिं, दण्डं, खड्गं, पाशम्, अङ्कुशं, गदां, शूलम्। तद्बाह्ये-गौतमं, भरद्वाजं, विश्वामित्रं, कश्यपं, जमदग्निं, वसिष्ठम्, अत्रिम्, अरुन्धतीं च। तद्बाह्ये—नवग्रहान्। तद्बाह्ये-ऐन्द्रीं, कौमारीं, ब्राह्मीं, वाराहीं, चामुण्डां, वैष्णवीं, माहेश्वरीं, वैनायकीमिति। एताः नामभिरावाह्य संपूज्य अर्चायां देवं तन्मन्त्रेणावाह्य मण्डलमध्येऽर्चां 'सुप्रतिष्ठो भव' इति निवेश्य संपूज्य वह्नौ मण्डलदेवतानां नामभिस्तिलाज्येन दशदशाहुतीर्हुत्वा पुष्पाञ्जलिं समर्प्य 'नमो महत्०' इति देवं नत्वा मण्डलादुत्तरतः स्वस्तिके मञ्चकं तदुपरि शय्यां कृत्वा 'उत्तिष्ठ' इति देवमुत्थाप्य मङ्गलघोषैः शय्यायां देवमारोप्य पुरुषसूक्तोत्तरनारायणाभ्यां स्तुत्वा देवे न्यासं कुर्यात्। तद्यथा-पुरुषात्मने नमः। प्राणात्मने० 'प्रकृतितत्त्वाय०' बुद्धितत्त्वाय० अहङ्कारतत्त्वाय०, मनस्तत्त्वा० इति सर्वाङ्गे। प्रकृतितत्त्वाय०, बुद्धितत्त्वाय० हृदि। शब्दतत्त्वाय० शिरसि। स्पर्शतत्त्वाय० त्वचि। रूपतत्त्वाय० हृदि। एवं हृद्येव रसगन्धश्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणवाक्पाणिपादपायूपस्थपृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशसत्वरजस्तमोदेहतत्त्वानि विन्यसेत्। ततः पुरुषसूक्तस्याद्यमृग्द्वयं करयोः। तदुत्तरं जान्वोः। तदुत्तरं कट्योः। 'तं यज्ञम्' इति तिस्रः नाभिहृत्कण्ठेषु। 'तस्मादश्वा' इति द्वयं बाह्वोः। 'ब्राह्मणोऽस्य' इति द्वयं नासयोः। 'नाभ्या' इति द्वयमक्ष्णोः। अन्त्यां शिरसि। केचित्तत्त्वन्यासमन्यथा आहुः। पुरुषप्रकृतिमहदह-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ङ्कारतत्त्वानि । शब्दस्पर्शरूपरसगन्धतन्मात्राणि । आकाशवायुतेजोऽप्पृथिवीश्रोत्रत्वक्चक्षूरसनाघ्राणवाक्पाणिपादपायूपस्थमनस्तत्त्वानीति । केचिदेतानि स्थिरलिङ्गादावेच्छन्ति । ततः 'सुखशायी भव' इति शय्यायां देवं स्वापयित्वा 'मण्डलशय्ययोरन्तराले न गन्तव्यम्' इति प्रैषं दत्त्वा स्विष्टकृदादिहोमशेषं समाप्य मण्डलदेवताभ्यो नामभिः पायसेन चरुणा वा बलीन् दद्यात् । नीवारचरुशेषे दिग्बलिम् । नेदं स्थिरप्रतिष्ठायाम् ।

स्थिरलिङ्गार्चादौ त्वयं विशेषः । 'अग्निस्थानहोमवर्ज्यं सर्वं पूर्ववत्कृत्वा इदानीमग्निस्थापनं कृत्वा पूर्वोक्तहोमं कुर्यात् । नात्र नैवारश्चरुः । विष्णुश्चेत्पूर्वोक्तहोमं कृत्वा पुरुषसूक्तेन प्रत्यृचमाज्यं हुत्वा इदंविष्णुरिति पादौ स्पृष्ट्वा, पुनस्ता एव हुत्वा विष्णोर्नुकम्' इति नाभिं स्पृष्ट्वा, पुनस्ता एव हुत्वा, 'अतो देवा' इति शिरः स्पृष्ट्वा पुनस्ता एव हुत्वा पुरुषसूक्तेन सर्वाङ्गं स्पृशेत् । स्थिरलिङ्गं चेदग्निस्थापनादि पूर्वोक्तसमिदाज्यतिलाहुतीर्हुत्वा 'या त इषुः' इत्यनुवाकान्तेन 'द्रापे' 'सहस्राणि' इत्यनुवाकाभ्यां च प्रत्यृचमाज्यं हुत्वा 'सर्वो वै रुद्रः' इति मूलं स्पृशेत् । पुनस्ता एव हुत्वा 'कद्रुद्राय' इति मध्यम् । पुनस्ता एव हुत्वा 'नमो हिरण्यबाहवे' इत्यग्रम् । पुनस्ता एव हुत्वा सर्वरुद्रेण सर्वाङ्गं स्पृशेत् । ततो 'धामन्त' इति पूर्णाहुतिं जुहुयान्न वा । एवमधिवासनं कृत्वा परेद्युः सद्यो वा पीठिकां स्नापयित्वा 'महीमूषु' इत्यावाह्य 'अदितिर्द्यौः' इति स्तुत्वा 'ह्रीं नमः' इति संपूज्य तेनैव पूर्णाहुतिं हुत्वा । 'उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते' इति देवमुत्थाप्य पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा पुरुषसूक्तेन स्तुत्वा 'उदुत्यम्' इत्युत्थाप्य 'कनिक्रदत्' इति सूक्तेन विष्णुं 'सद्योजातम्' इति पञ्चानुवाकैर्लिङ्गं गृहं प्रवेश्य पीठिकायां इन्द्रादिनामभिरष्टरत्नानि क्षिप्त्वा सप्तधान्यरूप्यवृषमनःशिलाः क्षिप्त्वा पायसेन संलिप्य प्रणवेनाङ्गन्यासं कृत्वा सुवर्णशलाकामन्तरितां कृत्वा सुलग्ने 'ॐ प्रतितिष्ठ परमेश्वर' इत्युक्त्वा 'अतो देवा' इति विष्णुं रुद्रेण च लिङ्गं स्थापयेत् । ततः प्राणप्रतिष्ठा ।

चलार्चादौ त्वधिवासनान्ते परेद्युः 'उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते' इति देवमुत्थाप्य पुरुषसूक्तोत्तरनारायणाभ्यां स्तुत्वा घृते व्रीहिचरुं कृत्वा तद्देवतामन्त्रेण दशाहुतीर्हुत्वा नामभिर्जुहुयात् । अग्नये स्वाहा । सोमाय स्वाहा । धन्वन्तरये स्वाहा । कुह्वै स्वाहा । अनुमत्यै स्वाहा । प्रजापतये स्वाहा । परमेष्ठिने स्वाहा । ब्रह्मणे स्वाहा । अग्नये स्वाहा । सोमाय स्वाहा । अग्नयेऽन्नादाय स्वाहा । अग्नयेऽन्नपतये स्वाहा । प्रजापतये स्वाहा । विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा । सर्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा । भूर्भुवःस्वः स्वाहा । अग्नये

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्विष्टकृते-इति। ततः 'सप्त ते अग्ने' 'पुनस्त्वा' इत्याभ्यां पूर्णाहुतिः। ततः आचार्यो 'या ओषधीः' इति पुष्पफलसर्वौषधीः समर्प्य संपातोदकं ताम्रपात्रे आदाय देवमन्त्रेण शतवारमभिमन्त्र्य तेनैवाभिषिञ्चेत्। ततः 'उत्तिष्ठ' इति देवमुत्थाप्य 'विश्वतश्चक्षुः' इत्युपस्थाय देवं ध्यात्वा जपेत्। ब्रह्मणे नमः। एवम्-विष्णवे० रुद्राय० इन्द्रादीनष्टौ, वसुभ्यो रुद्रेभ्य आदित्येभ्योऽश्विभ्यां मरुद्भ्यः कुबेराय गङ्गादिमहानदीभ्योऽग्नीषोमाभ्यामिन्द्राग्निभ्यां द्यावापृथिवीभ्यां धन्वन्तरये सर्वेशाय विश्वेभ्यो देवभ्यो ब्रह्मणे नम इति। ततः संपातोदकेन यजमानमभिषिच्य देवं ध्यात्वा 'ॐप्रतितिष्ठ परमेश्वर' इति पुष्पाञ्जलिं निवेद्य सच्चिदानन्दं ब्रह्मैव भक्तानुग्रहाय गृहीतविग्रहं करचरणाद्यवयविनं शङ्खचक्राद्यायुधवन्तं निजवाहनाद्युपेतं निजहृत्कमलेऽवस्थितं सर्वलोकसाक्षिणमणीयांसं परमेष्ठ्यसि परमां श्रियं गमय' इति मन्त्रेण पुष्पाञ्जलावागतं विभाव्यार्चायां विन्यस्य प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्।

यथा—अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि क्रियामयवपुःप्राणाख्या देवता आं बीजम् ह्रीं शक्तिः क्रों कीलकम् प्राणप्रतिष्ठायां विनियोगः। ततः ऋष्यादीन् क्रमेण शिरोमुखहृदयगुह्यपादेषु विन्यस्य 'ॐ कं खं गं घं ङं अं पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशात्मने आं हृदयाय नमः। ॐ चं छं जं झं ञं इं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने ईं शिरसे स्वाहा। ॐ टं ठं डं ढं णं उं श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणात्मने ऊं शिखायै वषट्। ॐ तं थं दं धं नं एं वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने ऐं कवचाय हुम्। ॐ पं फं बं भं मं ओं वचनादानविहरणोत्सर्गानन्दात्मने औं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं अं मनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तात्मने अः अस्त्राय फट्। एवमात्मनि देवे च कृत्वा देवं स्पृष्ट्वा जपेत्। ॐ आं ह्रीं क्रों अं यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य प्राणा इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रों अं यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों अं यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य सर्वेंद्रियाणि। ॐ आं ह्रीं क्रों अं यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रघ्राणप्राणा इहागत्य स्वस्तये सुखेन सुचिरं तिष्ठन्तु स्वाहेति। ततोऽर्चाहृद्यङ्गुष्ठं दत्त्वा जपेत्। 'अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च। अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन॥' इति। ततः प्रणवेन संरुध्य सजीवं ध्यात्वा 'ध्रुवा द्यौः' इति तृचं जप्त्वा कर्णे गायत्रीं देवमन्त्रं च जप्त्वा पुरुषसूक्तेनोपस्थाय

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पादनाभिशिरःसु स्पृष्ट्वा 'इहैवैधि' इति त्रिर्जपेत् । ततः कर्ता 'स्वागतं देवदेवेश मद्भाग्यात्त्वमिहागतः । प्राकृतं त्वमदृष्ट्वा मां बालवत्परिपालय ॥ धर्मार्थकामसिद्ध्यर्थं स्थिरो भव शुभाय नः । सान्निध्यं तु सदा देव स्वार्चायां परिकल्पय ॥ यावच्चन्द्रावनीसूर्यास्तिष्ठन्त्यप्रतिघातिनः । तावत्त्वयात्र देवेश स्थेयं भक्तानुकम्पया ॥ भगवन् देवदेवेश त्वं पिता सर्वदेहिनाम् । येन रूपेण भगवंस्त्वया व्याप्तं चराचरम् ॥ तेन रूपेण देवेश स्वार्चायां सन्निधो भव ॥' इति नमेत् । एतदन्तं सर्वदेवानां समानम् । देवमन्त्रश्च मूलमन्त्रो वैदिको वा ग्राह्यः ।

अथाचार्यः कर्ता वा लिङ्गमर्चां वा ॐ भूः पुरुषमावाहयामि । ॐ भुवः पुरुषमावाहयामि । ॐ सुवः पुरुषमावाहयामि । ॐ भूर्भुवः सुवः पुरुषमावाहयामीत्यावाह्य प्रणवेनासनं दत्त्वा तेनैव दूर्वाश्यामाकविष्णुक्रान्तापद्ममिश्रं पाद्यम् । 'इमा आपः शिवतमाः पूताः पूततमा मेध्या मेध्यतमा अमृता अमृतरसाः पाद्यास्ता जुषतां प्रतिगृह्यतां प्रतिगृह्णातु भगवान् महाविष्णुर्विष्णवे नमः' इति पाद्यम् । 'भगवान् महादेवो रुद्राय नमः' इति लिङ्गे । एवं देवतान्तरेषूह्यम् । 'इमा आपः आचमनीयास्ता जुषताम्' इत्याचमनीयम् । अर्घ्या इत्यर्घ्यम् । ततो वेदमन्त्रैः संस्नाप्य 'इदं विष्णुः' इति विष्णौ । 'नमो अस्तु नीलग्रीवाय' इति लिङ्गे प्रतिसरं विस्रंस्य वस्त्रं यज्ञोपवीतं च दत्त्वा 'इमे गन्धाः शुभा दिव्याः सर्वगन्धैरलंकृताः । पूता ब्रह्मपवित्रेण पूताः सूर्यस्य रश्मिभिः ॥' इति गन्धम् । 'इमे माल्याः शुभा दिव्याः सर्वमाल्यैरलंकृताः । पूता० इत्यादिमाल्यम् । 'इमे पुष्पाः शुभा' इत्यादि पुष्पम् । 'वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो धूप उत्तमः । आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥' प्रतिगृह्णात्वित्यादि धूपम् । 'ज्योतिः शुक्रं च तेजश्च देवानां सततं प्रियः । प्रज्योतिः सर्वभूतानां दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥' इति दीपं दत्त्वा विष्णौ सङ्कर्षणवासुदेवप्रद्युम्नानिरुद्धपुरुषोत्तमाधोक्षजनृसिंहाच्युतजनार्दनोपेन्द्रहरि श्रीकृष्णेतिद्वादशनामभिः केशवादिद्वादशनामभिर्वा पुष्पाणि समर्प्य तैरेव तर्पणं कृत्वा पायसगुडौदनचित्रौदनानि 'पवित्रं ते विततम्' इति निवेद्य सङ्कर्षणादिपूर्वोक्तनामभिर्द्वादश कृसराहुतीर्हुत्वा तेनैव शार्ङ्गिणे श्रियै सरस्वत्यै विष्णवे इति हुत्वा 'विष्णोर्नु कं वीर्याणि' 'तदस्य प्रियमभिपाथो' 'प्रतद्विष्णुस्तवते वीर्येण' 'परो मात्रया तन्वा वृधानः' । 'विचक्रमे पृथिवीमेष एताम्' । 'त्रिर्देवः पृथिवीमेष एताम्' इति जुहुयात् । पुनः द्वादशनामभिर्जुहुयात् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

लिङ्गे तु-दीपान्तं कृत्वा भवाय देवाय० शर्वाय० ईशानाय० पशुपतये० रुद्राय० उग्राय० भीमाय० महते देवाय नम इति पुष्पाणि दत्त्वा तैरेव तर्पणं कृत्वा 'पवित्रं ते' इति पायसं गुडौदनं च निवेद्य पूर्वोक्तनामभिः कृसरं हुत्वा 'भवस्य देवस्य पत्न्यै स्वाहा' इत्याद्यष्टाभिर्गुडौदनं हुत्वा 'भवस्य देवस्य सुताय स्वाहा' इत्याद्यैर्हरिद्रादनं हुत्वा 'त्र्यम्बकं यजामहे०'। 'मानो महान्तमुत मानो०'। मानस्तोके तनये०'। आरात्ते गोघ्नमुत पूरुषघ्ने० । 'विकिरिद्र विलोहित० । 'सहस्राणि सहस्रशो' इति द्वादश ५तैर्हुत्वा 'शिवाय शङ्कराय सहमानाय शितिकण्ठाय कपर्दिने ताम्राय अरुणाय अपगुरमाणाय हिरण्यबाहवे सष्पिञ्जराय बभ्लुशाय हिरण्याय' इति च जुहुयात्। ततः स्विष्टकृदादिहोमशेषं समाप्य पूर्वोक्तसर्वहविर्भिर्विष्णवे लिङ्गाय वा बलिं दद्यात् । मन्त्रस्तु—'त्वामेकमाद्यं पुरुषं पुरातनं नारायणं विश्वसृजं यजामहे । त्वमेव यज्ञो विहितो विधेयस्त्वमात्मनात्मन् प्रतिगृह्णीष्व हव्यम् ॥' इति । लिङ्गे तु-नारायणपदे रुद्रं शिवमिति वदेत् । ततोऽश्वत्थपर्णे भूर्भुवःस्वरोमिति हुतशेषं निधाय प्रदक्षिणीकृत्य विश्वभुजे आत्मने परमात्मने नमः— इति नत्वा आचार्याय शतं तदर्धं तदर्धं द्वादश तिस्र एकां वा गां दत्त्वा ऋत्विग्भ्योऽपि दक्षिणां दत्त्वा शतं द्वादश वा ब्राह्मणान् भोजयेदिति संक्षेपः। प्रासादमात्रे नूतने तु-मात्स्योक्तजलाशयप्रतिष्ठाविधिमेव कुर्यात्। गोरुत्तारणपात्रीप्रक्षेपादि तु न भवति द्वारलोपात्। वारुणहोमस्थाने वास्तुहोमः। अन्यत्तद्वदेव। इति भट्टकमलाकरकृतौ लिङ्गार्चाप्रतिष्ठाविधिः।

अथ पुनःप्रतिष्ठा। तामधिकृत्य हयशीर्षपञ्चरात्रे-'चाण्डालमद्यस्पर्शदूषिता वाह्नाथवा। अपुण्यजनसंस्पृष्टा विप्रक्षतजदूषिता ॥' संस्कार्येति शेषः। पदार्थादर्शे ब्राह्मे-'खण्डिते स्फुटिते दग्धे भ्रष्टे मानविवर्जिते। यागहीने पशुस्पृष्टे पतिते दुष्टभूमिषु ॥ अन्यमन्त्रार्चिते चैव पतितस्पर्शदूषिते। दशस्वेतेषु नो चक्रुः सन्निधानं दिवौकसः ॥' यागः पूजा। पशुगर्दभादिः। पञ्चरात्रे-'खण्डिता स्फुटिता दग्धा यस्मादर्चा भयावहा। तस्मात्समुद्धरेत्तां तु पूर्वोक्तविधिना नरः ॥' अर्चाभङ्गादावुपवासः कार्यः। 'न राज्ञो विप्लवेऽश्नीयात्सुरार्चाविप्लवे तथा।' इति विष्णुधर्मोक्तेः। सिद्धान्तशेखरे-'चौरचण्डालपतितश्वोदक्यास्पर्शने सति। शवाद्युपहते चैव प्रतिष्ठां पुनराचरेत् ॥' पञ्चरात्रे-'अङ्गादङ्गादिसन्धाने प्रतिष्ठां पुनराचरेत्। जलाधिवासविहितनेत्रोन्मीलनवर्जिताम् ॥' शुद्धिविवेके विष्णुः-'द्रव्य-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वत्कृतशौचानां देवतार्चानां भूयः प्रतिष्ठापनेन शुद्धिः' इति । अर्चाः प्रतिमाः । तद्द्रव्यस्य ताम्रादेरुक्तशौचं कृत्वा पुनःप्रतिष्ठां कुर्यादित्यर्थः । स्मृत्यर्थसारेऽप्येवम् ।

तद्विधिर्बौधायनसूत्रे—'पूर्वप्रतिष्ठितस्याबुद्धिपूर्वमेकरात्रं द्विरात्रमेकमासं द्विमासं वार्चनादिविच्छेदे शूद्ररजस्वलाद्युपस्पर्शने पूर्वोक्ते काले पुण्याहं वाचयित्वा युग्मान्ब्राह्मणान्भोजयित्वा निशायां जलाधिवाशं कृत्वा श्वोभूते कलशपूर्णेन पञ्चगव्येन तत्तन्मन्त्रैः स्नापयित्वाऽन्यं कलशं शुद्धोदकेनापूर्य तस्मिन्नवरत्नानि प्रक्षिप्य तं कलशं तत्तद्गायत्र्याष्टसहस्रमष्टशतमष्टाविंशतिवारं वाभिमन्त्र्य तेनोदकेन देवं स्नापयेत्ततः शुद्धोदकेन स्नापयेदष्टसहस्रमष्टशतमष्टाविंशतिं वा पुरुषसूक्तेन मूलमन्त्रेण च । ततः पुष्पाणि दत्त्वा यथासंभवमर्चयित्वा गुडौदनं निवेदयेत्' इति । बुद्धिपूर्वं तु विच्छेदे पूर्वोक्तां प्रतिष्ठां पुनः कुर्यात् । पूर्वोक्तविष्णुवचनात् । इदं मलमासशुक्रास्तादावपि कार्यमिति मदनरत्ने हेमाद्रौ च । देवार्चाप्रासादभेदने तु शूलपाणौ काश्यपः—'वापीकूपारामसेतुसभातडागवप्रदेवतायतनभेदने प्रायश्चित्तं चतस्र आज्याहुतीर्जुहुयात् । 'इदं विष्णुः' 'मानस्तोके' 'विष्णोः कर्माणि' 'पादोऽस्य' इति 'यां देवतामुत्सादयति तस्यै देवतायै ब्राह्मणान्भोजयेत्' इति । शङ्खलिखितौ—'प्रतिमारामकूपसंक्रमध्वजसेतुनिपातभङ्गेषु तत्समुत्थानं प्रतिसंस्कारोऽष्टशतं च निपातितानाम्' इति । समुत्थानं प्रतिक्रिया । प्रतिसंस्कारः पुनःप्रतिष्ठा । अष्टशतं पणा दण्डश्चेत्यर्थः ।

अथ जीर्णोद्धारः । स च लिङ्गादौ दग्धे भग्ने चलिते वा कार्यः । अयं चानादिसिद्धप्रतिष्ठितलिङ्गादौ भङ्गादिदुष्टेऽपि न कार्यः । तत्र तु महाभिषेकं कुर्यादिति त्रिविक्रमः । कर्तामुकदेवस्य जीर्णोद्धारं करिष्ये इत्युक्त्वा पुण्याहं वाचयित्वा नान्दीश्राद्धान्तं कृत्वा आचार्यमृत्विजश्च वृत्वा पीठे मण्डलदेवता आवाह्य लिङ्गे--ॐ व्यापकेश्वरहृदयाय नमः । ॐ व्यापकेश्वरशिरसे स्वाहेत्येवं षडङ्गं कृत्वा देवतान्तरे मूलमन्त्रेण षडङ्गं कृत्वा अर्चयेत् । अघोरमन्त्रमष्टोत्तरशतं जप्त्वाऽग्निं प्रतिष्ठाप्याघोरेण घृतसर्षपैः सहस्रं हुत्वा इन्द्रादिभ्यो नाम्ना बलिं दत्त्वा जीर्णदेवं प्रणवेन संपूज्य साज्यतिलैर्ब्रह्मादिमण्डलदेवतानां होमं पूर्वोक्तं कृत्वा देवं प्रार्थयेत्—'जीर्णभग्नमिदं देव सर्वदोषावहं नृणाम् । अस्योद्धारे कृते शान्तिः शास्त्रेऽस्मिन्कथिता त्वया ॥ जीर्णोद्धारविधानं च नृपराष्ट्रहितावहम् । तदधस्तिष्ठतां देव प्रहरामि तवाज्ञया ॥' इति । ततः क्षीराज्य-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मधुदूर्वाभिः समिद्भिश्चाष्टोत्तरसहस्रमष्टोत्तरशतं वा देवमन्त्रेण हुत्वाऽङ्गानां दशांशेन लिङ्गचालनार्थं सहस्रं शतं वा पायसेन हुत्वा लिङ्गं प्रार्थयेत्—'लिङ्गरूपं समागत्य येनेदं समधिष्ठितम् । यायास्त्वं संमितं स्थानं सन्त्यज्यैव शिवाज्ञया ॥ अत्र स्थाने च या विद्या सर्वविद्येश्वरैर्युता । शिवेन सह सन्तिष्ठ' इति मन्त्रितजलेनाभिषिच्य विसजयेत्। ततोऽस्त्रमन्त्रितेन खनित्रेण खात्वा लिङ्गमादाय नद्यादौ वामदेवेन लिङ्गं प्रणवेन मूर्तिं क्षिपेत्। दारुजं तु मधुनाऽभ्यज्याघोरेण दहेत्। हेमरत्नादिमयं तु दग्धं चलितं वा पुनस्तत्रैव स्थापयेत् । ततः शान्त्यै अघोरेण तिलैः सहस्रं हुत्वा प्रार्थयेत्—'भगवन्भूतभव्येशलोकनाथ जगत्पते । जीर्णलिङ्गसमुद्धारः कृतस्तवाज्ञया मया ॥ अग्निना दारुजं दग्धं क्षिप्तं शैलादिकं जले । प्रायश्चित्ताय देवेश अघोरास्त्रेण तर्पितम् ॥ ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि यथोक्तं न कृतं यदि । तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥' ततो यजमानः प्रार्थयेत्—'गोविप्रशिल्पिभूतानामाचार्यस्य च यज्वनः । शान्तिर्भवतु देवेश अच्छिद्रं जायतामिदम् ॥' मूर्तौ तु विशेषः—'त्वत्प्रसादेन निर्विघ्नं देहं निर्मापयत्यसौ । वासं कुरु सुरश्रेष्ठ तावत्त्वं चाल्पके गृहे ॥ वसन्क्लेशं सहित्वेह मूर्तिं वै तव पूर्ववत् ॥ यावत्कारयते भक्तः कुरु तस्य च वाञ्छितम् ॥' इति । ततो नवां मूर्तिं लिङ्गं वा कृत्वोक्तविधिना स्थापयेत् । मूलं त्वग्निपुराणे स्पष्टम् । इति जीर्णोद्धारः ।

अथ तुलसीग्रहणम् । देवयाज्ञिककृते स्मृतिसारे—'वैधृतौ च व्यतीपाते भौमभार्गवभानुषु । पर्वद्वये च संक्रान्तौ द्वादश्यां सूतकद्वये ॥ तुलसीं ये विचिन्वन्ति ते छिन्दन्ति हरेः शिरः ॥' विष्णुधर्मोत्तरे—'रविवारं विना दूर्वां तुलसीं द्वादशीं विना । जीवितस्याविनाशाय प्रविचिन्वीत धर्मवित् ॥' तथा—'संक्रान्तावर्कपक्षान्ते द्वादश्यां निशि सन्ध्ययोः । यैश्छिन्नं तुलसीपत्रं तैश्छिन्नं हरिमस्तकम् ॥' पाद्मे—'द्वादश्यां तुलसीपत्रं धात्रीपत्रं च कार्तिके । लुनाति स नरो गच्छेन्निरयानतिगर्हितान् ॥' रुद्रयामले—'द्वादश्यां च दिवास्वापस्तुलस्यवचयस्तथा । विष्णोश्चैव दिवा स्नानं वर्जनीयं सदा बुधैः ॥' विष्णुधर्मे—'न छिन्द्यात्तुलसीं विप्रो द्वादश्यां वैष्णवः क्वचित् । देवार्थे तुलसीच्छेदो होमार्थे समिधां तथा ॥ इन्दुक्षये न दुष्येत गवार्थे तु तृणस्य च ॥' ग्रहणमन्त्रस्तु पाद्मे—'तुलस्यमृतजन्मासि सदा त्वं केशवप्रिये । केशवार्थं विचिन्वानि वरदा भव शोभने ॥' इति । पारिजाते दक्षः—'समित्पुष्पकुशादीनां द्वितीयः प्रहरो मतः' ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ पुष्पादेः पर्युषितत्वम् । भार्गवार्चने भविष्ये—'प्रहरं तिष्ठते जाती करवीरमहर्निशम् । तुलस्यां बिल्वपत्रेषु सर्वेषु जलजेषु च ॥ न पर्युषितदोषोऽस्ति मालाकारगृहेऽपि च ॥' बृहन्नारदीये—'वर्ज्यं पर्युषितं पुष्पं वर्ज्यं पर्युषितं जलम् । न वर्ज्यं तुलसीपत्रं न वर्ज्यं जाह्नवीजलम् ॥' तत्रैव पाद्मे—'तुलसी पर्युषिता नैव बिल्वं तु त्रिदिनावधि । पद्मं पञ्च-दिनात्त्याज्यं शेषं पर्युषितं विदुः ॥' स्कान्दे—'पालाशं दिनमेकं तु पङ्कजं च दिनत्रयम् । पञ्चाहं बिल्वपत्रं च दशाहं तुलसीदलम् ॥' पदार्थादर्शे वोपदेवस्त्वन्यथाह—'बिल्वापामार्गजातीतुलसिशमिशताकेतकीभृङ्गदूर्वा-मन्दाम्भोजाहिदर्भामुनितिलतसरब्रह्मकह्लारमल्लयः । चम्पाश्वारातिकुम्भी-दमनमरुबका बिल्वतोऽहानि शस्तास्त्रिंश ३० त्र्ये ३ का १ र्य ६ रीशो ११ दधि ४ निधि ९ वसु ८ भू १ भू १ यमा २ भूय एवम् ॥' अस्यार्थः-शता शतावरी । मन्दः मन्दारः । अहिर्नागकेशरः । मुनिरगस्त्यः । अश्वारातिः करवीरः । कुम्भी पाटलेति कैदेवनिघण्टुः । अरयः षट् । ईशा एकादश । उदधयश्चत्वारः । निधयो नव । वसवोऽष्टौ । भू एकः । यमौ द्वौ । बिल्वमारभ्याऽहिपर्यन्तं गणयित्वा दर्भमारभ्य पुनस्त्रिंशदादि-गणयेदित्यर्थः । एतद्दिनोत्तरं पर्युषितानीत्यर्थः । टोडरानन्दे स्कान्दे दमनमुपक्रम्य—'तस्य माला भगवतः परमप्रीतिकारिणी । शुष्का पर्यु-षिता वापि न दुष्टा भवति क्वचित् ॥' तिथितत्त्वे मात्स्ये—'बिल्वपत्रं च माध्यं च तमालामलकीदले । कह्लारं तुलसी चैव पद्मं च मुनिपुष्पकम् ॥ एतत्पर्युषितं न स्यात्कुशाश्च कलिकास्तथा ॥' स्मृतिसारावल्याम्—'जल-जानां च सर्वेषां पत्राणामहतस्य च । कुशपुष्पस्य रजतसुवर्णकृतयोरपि ॥ न पर्युषितदोषोऽस्ति तीर्थतोयस्य चैव हि । मुकुलैर्नार्चयेद्देवं पङ्क-जैर्जलजैर्विना ॥'

अथ शिवनिर्माल्यनिर्णयः । सिद्धान्तशेखरे—'धराहिरण्यगोरत्नताम्ररौ-प्यांशुकादिकान् । विहाय शेषं निर्माल्यं चण्डेशाय निवेदयेत् । अन्यद-न्नादि पानीयं ताम्बूलं गन्धपुष्पकम् । दद्याच्चण्डाय निर्माल्यं शिवभुक्तं तु सर्वशः ॥ आचार्यशिवचण्डानामाज्ञाभङ्गे तु लक्षकम् । धनस्य भक्षणे तेषां पादोनं लक्षमीरितम् ॥ निर्माल्ये भक्षिते लक्षपादतः शुद्धिरीरिता । दानं च भक्षणसमं तदर्धं तदुपेक्षणे ॥ आकामाद्भक्षणे यद्वा निर्माल्यस्य जपेत्सुधीः । ब्रह्मपञ्चकसाहस्रं धर्मेण सहितं ततः । कामतो भक्षणे दीक्षा प्रायश्चित्तं न चान्यतः । निर्माल्यलङ्घनेऽघोरं प्रजपेदयुतं ततः ॥ स्पर्शश्च लङ्घनसमो विक्रयो भक्षणेन च ॥' स्मृत्यर्थसारेऽपि—'शैवसौरनिर्माल्ये

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नैवेद्यभक्षणे चान्द्रम्, अभ्यासे द्विगुणम्, मत्याभ्यासे प्रतपनम्। अन्य-निर्माल्येऽप्यनापद्येवम्' इति। इदं च ज्योतिर्लिङ्गाद्यतिरिक्तविषयम्। तथा च पुरुषार्थप्रबोधे भविष्ये–'ज्योतिर्लिङ्गं विना लिङ्गं यः पूजयति सत्तमः। तस्य नैवेद्यनिर्माल्यभक्षणात्तप्तकृच्छ्रकम्॥ शालग्रामोद्भवे लिङ्गे बाणलिङ्गे स्वयम्भुवि। रसलिङ्गे तथार्षे च सुरसिद्धप्रतिष्ठिते॥ हृदये चन्द्रकान्ते च स्वर्णरौप्यादिनिर्मिते। शिवदीक्षावता भक्तेनेदं भक्ष्यमितीर्यते॥' तथा—'बाणलिङ्गे स्वयंभूते चन्द्रकान्ते हृदि स्थिते। चान्द्रायणसमं ज्ञेयं शंभोर्नैवेद्यभक्षणम्॥ लिङ्गे स्वयम्भुवे बाणे रत्नजे रसनिर्मिते। सिद्धप्रतिष्ठिते चैव न चण्डाधिकृतिर्भवेत्॥ यत्र चण्डाधि-कारोऽस्ति तद्भोक्तव्यं न मानवैः। चण्डाधिकारो नो यत्र भोक्तव्यं तत्र भक्तितः॥' त्रैविक्रम्याम्—'बाणलिंगे च लौहे च सिद्धलिंगे स्वयम्भुवि। प्रतिमासु च सर्वासु न चण्डोऽधिकृतो भवेत्॥' अत्र 'ब्रह्महापि शुचि-र्भूत्वा निर्माल्यं यस्तु धारयेत्। तस्य पापं महच्छीघ्रं नाशयिष्ये महा-व्रते॥' इति स्कान्दादशुचिना न ग्राह्यं शिवनिर्माल्यं किन्तु स्नात्वेति स्मार्ताः। अनुपनीतेन न ग्राह्यमिति श्रीदत्ताः। शिवदीक्षाहीनैर्न ग्राह्य-मिति शैवाः। तिथितत्त्वे हेमाद्रौ परिशिष्टे—'अग्राह्यं शिवनैवेद्यं पत्रं पुष्पं फलं जलम्। शालग्रामशिलासंगात्सर्वं याति पवित्रताम्॥' पञ्चायतन-पूजायां तन्त्रेण च निवेदितमित्यर्थः॥ शिवपुराणे—'ये वीरभद्रशपिताः शिवभक्तिपराङ्मुखाः। शंभोरन्यत्र देवेषु ये भक्ता ये न दीक्षिताः॥ तेषामनर्हमीशस्य तत्प्रसादचतुष्टयम्॥' काशीखण्डे—'जलस्य धारणं मूर्ध्नि विश्वेशस्नानजन्मनः। एष जालन्धरो बन्धः समस्तसुरवल्लभः॥' तथा—'स्नापयित्वा विधानेन यो लिंगेस्नपनोदकम्। त्रिः पिबेत्त्रिविधं पापं तस्येहाशु विनश्यति॥ लिंगेस्नपनवार्भिर्यः कुर्यान्मूर्ध्न्यभिषेचनम्। गङ्गास्नानफलं तस्य जायतेऽत्र विपाप्मनः॥' इदं पूर्ववाक्यवशाद्विश्वेश्वर-विषयमिति केचित्। काशीस्थपुराणप्रसिद्धसर्वलिङ्गविषयम्। काशी-खण्डे रत्नेश्वराख्याने तथैव दर्शनादित्यन्ये।

अथ कृषिः। राजमार्तण्डः—'ऋक्षेषूत्तरपौष्णवैष्णवमघामूलानु-राधाश्विनीप्राजापत्यकरद्विदैवतगुरुप्रालेयपादेषु च। निर्दोषैर्वृषभैर्हलैश्च सुमनोमालाभिरभ्यर्चितैर्दत्त्वा क्षेत्रपतेर्बलिं हलधरः क्षेत्रं ततः कर्षयेत्॥ प्राजेशश्रवणोत्तरादितिमघामार्तण्डतिष्याश्विनी पौष्णानुष्णमरीचयः शतभिषक् स्वाती विशाखा तथा। जीवार्केन्दुनन्दनदिने लग्ने च सौम्योदये सस्यानां वपने तथैव लवने शस्तास्तथा रोपणे॥' चण्डे-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

श्वरः—'हस्तचित्रादितिस्वाती रेवत्यां श्रवणत्रये । स्थिरलग्ने गुरोर्वारे बीजं धार्यं ज्ञशुक्रयोः ॥' ॐधनदाय सर्वलोकहिताय देहि मे धान्यं स्वाहा'। लेखयित्वा इमं मन्त्रं धान्यागारे निधापयेत् । सस्यवृद्धिं परां कुर्यात्पूजितं प्रतिपूजयेत् ॥ दक्षिणदिङ्मुखगमनं गमनमभिनवासु नारीषु। व्ययमपि सस्यधनानां न बुधा बुधवासरे कुर्युः॥ शनिवारे च नो कार्यो धनधान्यव्ययो बुधैः ॥'

अथ वस्त्रम् । श्रीपतिः—'रोहिणीषु करपञ्चकेऽश्विभे त्र्युत्तरासु च पुनर्वसुद्वये । रेवतीषु वसुदैवते च भे नव्यवस्त्रपरिधानमिष्यते ॥ जीर्णं रवौ सततमम्बुभिरार्द्रमिन्दौ भौमे शुचे बुधदिने तु भवेद्धनाय । ज्ञानाय मन्त्रिणि भृगौ प्रियसंगमाय मन्दे मलाय च नवाम्बरधारणं स्यात् ॥ रोहिणीगुरुपुनर्वसूत्तरे या बिभर्ति नववस्त्रभूषणे । सा न योषिदवलम्बते पतिं स्नानमाचरति वारुणेऽपि या ॥'

अथालङ्कारवलयादि । दैवज्ञवल्लभः—'नासत्यपूषवसुभिः करपञ्चकेन मार्तण्डभौमगुरुदानवमन्त्रिवारे । मुक्तासुवर्णमणिविद्रुमशङ्खदन्तरक्ताम्बराणि विधृतानि भवन्ति सिद्ध्यै ॥' ज्योतिर्निबन्धे – हस्तानुराधमृगपूषधनिष्ठयुक्तचित्रोत्तरासु च पुनर्वसुरोहिणीषु । लग्ने स्थिरे रविसुतेन्दुजजीववारे हेमादिधारणविधिः कथितो नराणाम् ॥' तत्रैव श्रीपतिः–'पौष्णाश्विनीवसुकरादिषु पञ्चकेषु कौसुम्भहेममणिविद्रुमकाचशङ्खाः । नार्या धृताः सुतसुखार्थकरा भवन्ति ब्राह्मोत्तरादितिगुरुष्वसुखाय भर्तुः॥' तत्रैव—'शङ्खादिवररत्नानि पुष्यादित्युत्तरासु च । रोहिण्यां नैव गृह्णीत भर्तुर्जीवितकाङ्क्षिणी ॥'

अथ सूचीकर्म । 'वासवादितिभत्वाष्ट्रमैत्रचन्द्राश्विनीषु च । सूचीकर्म तनुत्राणमेभिर्ऋक्षैः प्रशस्यते ॥'

अथ शय्या । 'हस्तादितिब्रह्मगुरूत्तराणि पौष्णाश्विमूलेन्दुभचित्रभानि । वारेषु जीवेन्दुसितेन्दुजानां शय्यासनारम्भणमुत्तमं स्यात् ॥'

अथ शस्त्रधारणम् । 'पुष्ये चादितिचित्रपद्मतनये शक्रोत्तरा रेवतीस्वातीवाजिविशाखमित्रसहिते भानौ गुरौ भार्गवे । कुम्भे कीटगृहे वृषे मृगपतौ चेन्दौ शुभैर्वीक्षिते सन्नाहः शरखड्गकुन्तछुरिका धार्या नृपाणां हिताः ॥'

अथ स्वामिसेवा । चण्डेश्वरः – 'रोहिण्युत्तरपौष्णेषु वसुवारुणयोरपि । सेवेत स्वामिनं भृत्यः शुभवारोदये तथा ॥' ज्योतिर्निबन्धे –

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दासीदासादिभृत्यानां कुर्यात्संग्रहणं बुधैः । स्थिरलग्ने शुभैर्दृष्टे मन्दवारे विशेषतः ॥'

अथ गजाश्वदोलाः । स एव—'पौष्णप्रजेशादितिभद्वयानि हस्तादिषट्कश्रवणोत्तराणि । दोलादिमातङ्गतुरङ्गमाणामारोहणेऽभीष्टफलप्रदानि ॥'

अथ नृत्यम्—'हस्तः पुष्यो वासवं रोहिणी च ज्येष्ठा पौष्णं वारुणं चोत्तराश्च । पूर्वाचार्यैः कीर्तितश्चक्रवर्ती नृत्यारम्भे शोभनोऽयं भवर्गः ॥' अथ राजदर्शनम् । श्रीपतिः—'मृगाश्विपुष्यश्रवणश्रविष्ठाहस्तध्रुवत्वाष्ट्रभपूषभानि । मैत्रेण युक्तानि नरेश्वराणां विलोकने भानि शुभप्रदानि ॥'

अथ क्रयविक्रयौ । 'भाद्रद्वयत्रिदशमन्त्रिदिवाकरेषु मूलानिलोत्तरतुरंगमरेवतीषु । सारङ्गपाणिरजनीकरमैत्रभेषु लाभः सदैव भवति क्रयविक्रयाभ्याम् ॥' वस्त्रे तु—'चित्रा शतभिषा स्वाती रेवती चाश्विनी शुभा । श्रवणश्च तथा प्रोक्ता वस्त्राणां क्रयणे शुभाः ॥'

अथ सेतुः । 'स्वातीयुक्ते मन्दवारे वृषलग्ने शुभे दिने । सेतूनां बन्धनं कार्यं ध्रुवभे चार्कजीवयोः ॥'

अथ पशुकृत्यम् । श्रीपतिः—'चित्रोत्तरावैष्णवरोहिणीषु चतुर्दशीदर्शदिनाष्टमीषु । स्थानप्रवेशं गमनं विदध्यात् पुमान् पशूनां न कदाचिदेव ॥' चण्डेश्वरः—'हस्तमूलविशाखासु रेवत्यां श्रवणे तथा । मैत्रे च वारुणे श्रेष्ठं पशुक्रयणमुच्यते ॥ पूर्वात्रयामृतमयूखहुताशनेषु इन्द्राग्निवाजिवसुवारुणशङ्करेषु । एतेषु गोमहिषदन्तितुरङ्गमादिनानाप्रकारपशुजातिगतिः प्रशस्ता ॥'

अथ गजदन्तच्छेदः । ज्योतिर्निबन्धे 'त्वाष्ट्रे वैष्णव अश्विन्यामादित्ये वसुदैवते । दन्तिनां शुभदं कर्म पुष्ये हस्ते च कर्तनम् ॥'

अथ निक्षेपः । 'भरणी त्रीणि पूर्वाणि आर्द्राश्लेषा मघा तथा । चित्रा ज्येष्ठा विशाखा च मूलं मृगपुनर्वसू ॥ एभिर्दत्तं प्रयुक्तं च यद्यन्निक्षिप्यते धनम् । पृष्ठतो धावमानस्य निर्धनो नोपपद्यते ॥'

अथ ऋणमोक्षः । श्रीधरः—'वागीशमन्ददिवसांशकलग्नयुक्ते रिक्तासु मन्ददिवसे कुलिकोदये च । मैत्रद्वितीयपदमैत्रमुहूर्तयुक्ते राश्युद्गमे च ऋणमोक्षमुशन्ति सन्तः ॥'

अथ राजमुद्रा । 'मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु भेषु योगे प्रशस्ते शनिचन्द्रवर्जम् । वारे तिथौ पूर्णजयाह्वये च मुद्राप्रतिष्ठा शुभदा हि राज्ञाम् ॥'

अथ नौः । चण्डेश्वरः—'पौष्णाश्विनीतुरगवारुणमित्रचित्राशीतोष्ण-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

रश्मिवसवोऽनलवन्त्यमूनि। वारे च जीवभृगुनन्दनके प्रशस्ते नौकादि-संघटनवाहनमेषु कुर्यात्॥'

अथ भोगः। 'गुरुभरविभानुराधाविधातृपौष्णाश्विरोहिणीषु स्यात्। स्वात्युत्तरासु कुर्याच्छयनासनभोगभोगादि॥'

अथ श्मश्रुकर्म। श्रीपतिः—'पुष्ये पौष्णे चाश्विनीष्वैन्दवे च शाक्रे हस्ताद्ये त्रिके भेप्यदित्याम्। चौरं कार्यं वैष्णवादित्रये च मुक्त्वा भौमादित्यपातङ्गिवारान्॥ न स्नातभुक्तोत्कटभूषितानामभ्यक्तयात्रासमरोत्सुकानाम्। चौरं विदध्यान्निशि संध्ययोर्वा जिजीविषूणां नवमे न चाह्नि॥' त्रिस्थलीसेतौ वृद्धगार्ग्यः—'रव्यारसौरवारेषु रात्रौ पाते व्रताहनि। श्राद्धाहःप्रतिपद्रिक्ताभद्राः चौरेषु वर्जयेत्।' गार्ग्यः—षष्ठ्यथमापूर्णिमापातचतुर्दश्यष्टमी तथा। आसु सन्निहितं पापं त्रिषु तैले भगे क्षुरे॥' राजमार्तण्डः—'देवकार्ये पितुः श्राद्धे रवेरंशपरिक्षये। चौरकर्म न कुर्वीत जन्ममासे च जन्मभे॥' बृहस्पतिः—'राजकार्ये नियुक्तानां नराणां भूपजीविनाम्। श्मश्रुलोमनखच्छेदे नास्ति कालविशोधनम्॥' तथा—'चौरं नैमित्तिकं कार्यं निषेधे सत्यपि ध्रुवम्। पित्रादिमृतिदीक्षासु प्रायश्चित्ते च तीर्थके॥' केचित्तूत्तरार्धमन्यथा पठन्ति 'मुण्डनस्य निषेधेऽपि कर्तनं तु विधीयते।' इति। नारदः—'नृपविप्राज्ञया यज्ञे मरणे बन्धमोक्षणे। उद्वाहेऽखिलवारर्क्षे तिथिषु चौरमिष्टदम्॥' भारते—'प्राङ्मुखः श्मश्रुकर्माणि कारयीत समाहितः। उदङ्मुखोऽथवा भूत्वा तथायुर्विन्दते महत्॥' अपरार्के—'उदङ्मुखः प्राङ्मुखो वा वपनं कारयेत्सुधीः। केशश्मश्रुलोमनखान्युदक्संस्थानि वापयेत्॥ दक्षिणं कर्णमारभ्य धर्मार्थं पापसंक्षये। शिखाद्ये नवसंस्कारे शिखाद्यन्तं शिरो वपेत्॥' यतीनां तु विशेषो निगमे—'कक्षोपस्थशिखावर्जमृतुसन्धिषु वापयेत्।' इति। अन्येऽपि विधिप्रतिषेधाः प्रागुक्ताः।

अथेन्धनसंग्रहः—'ब्रह्मानिलार्कमघमूलत्रिपूर्वरौद्रपौष्णानुराधगुरुविष्णुविशाखयुक्ते। वारे कुजार्कभृगुनन्दनसोमजानां श्रेष्ठेन्धनस्य करणं भवति प्रशस्तम्।

अथ नवान्नम्। श्रीपतिः—'रेवतीश्रुतिपुनर्वसुहस्तत्राह्मतः पृथगपि द्वितये च। त्र्युत्तरेषु गदितं पृथुकानां प्राशनं नवनवान्नविधानम्॥'

अथ नवभोजनपात्रम्। ज्योतिर्निबन्धे—'भोज्यपात्रं सुधासिन्धौ घटयेद्वा समाहरेत्। तत्रान्नप्राशनप्रोक्ते काले भोजनमाचरेत्॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ नवपर्णफलादिभक्षणम्। चण्डेश्वरः—'मूलाश्विमैत्रकरतिष्यहरीन्द्रभेषु पौष्णोत्तरैन्दवपुनर्वसुवासवेषु। वारेषु भूमितनयार्कजवारवर्जे ताम्बूलनूतनफलाद्यशनं हिताय॥'

अथ होमे आहुतिपातः। ज्योतिषे—'तरणिविद्भृगुभास्करिचन्द्रमाः कुजसुरेज्यविधुन्तुदकेतवः। रविभतो दिनभं गणयेत्क्रमात् प्रतिखगं त्रितयं त्रितयं न्यसेत्॥ दिनकरार्कितमःकुजकेतवो हुतभुजे न शुभास्त्वितरे शुभाः। दहनचक्रमिदं प्रविलोक्यतां हवनकर्मणि सर्वसमृद्धये॥' अत्र शान्तिरुक्ता विष्णुधर्मे—'क्रूरग्रहमुखे चैव सञ्जाते हवने शुभे। शान्तिं विधाय गां दद्याद् ब्राह्मणाय कुटुम्बिने॥ आयसीं प्रतिमां कृत्वा निक्षिपेत्तामधोमुखीम्। गोमूत्रमधुगन्धाद्यैरर्चितां प्रतिमां ततः॥ स्वस्थां निधाय संपूज्य तत्र होमो विधीयते॥' अत्रापवादः क्रियासारे—'नित्ये नैमित्तिके दुर्गाहोमादौ न विचारयेत्।'

अथ ज्वरादौ फलम्। श्रीपतिः—'स्वात्याश्लेषारौद्रपूर्वासु शाक्रे रोगोत्पत्तिर्जायते यस्य पुंसः। तद्भैषज्यव्यापृतो निष्प्रयत्नः स्याद् गधाब्धेज्वरादौ फलं लब्धजन्मापि वैद्यः॥ व्याध्युत्पत्तिर्यस्य पौष्णे समैत्रे परिहारश्च। प्राणत्राणं जायते तस्य कृच्छ्रात्। वैश्वे सौम्ये रोगमुक्तिस्तु मासाद्विंशत्या स्याद्वासराणां मघासु॥ पक्षाद्धस्ते वासवे सद्विदैवे मूलाश्विन्योरग्निधिष्ण्ये नवाहात्। याम्ये त्वाष्ट्रे वैष्णवे वारुणे च नैरुज्यं स्यान्नूनमेकादशाहात्॥ आहिर्बुध्न्ये तिष्यसंज्ञे यमाख्ये प्राजापत्यादित्ययोः सप्तरात्रात्। रोगान्मुक्तिर्जायते मानवानां निःसंदिग्धं जल्पितं गर्गमुख्यः॥' ज्योतिषे—'एकाहो निधनं दशाहमनलाद्बाणा वियत्पर्वताः सप्ताङ्का विलयश्च मासयुगुलं मासो मृतिः पक्षकः। द्वौ मासावथ विंशतिर्दश निशाः पक्षान्तपक्षा नखा मासौ पक्षदशान्तपक्षककुभः पीडादिनान्यश्विभात्॥' दैवज्ञः—'उरगवरुणरौद्रा वासवेन्द्रत्रिपूर्वा यमदहनविशाखाः पापवारेण युक्ताः। तिथिषु नवमीषष्ठी द्वादशी वा चतुर्थी भवति मरणयोगो रोगिणां कालहेतुः॥' अत्र शान्तिः—कुम्भे हैमीं नक्षत्रदेवताप्रतिमां संपूज्य द्वादशदलेषु सङ्कर्षणादिद्वादशमूर्तीर्द्वादशादित्यान् वा संपूज्य दूर्वासमित्तिलक्षीराज्यैर्गायत्र्या तद्देवतायै अष्टोत्तरशतं हुत्वा दध्योदनं बलिं दत्त्वाचार्याय गां प्रतिमां च दत्त्वा विप्रान् भोजयेदिति संक्षेपः। विशेषस्तु व्रतहेमाद्रौ पदार्थादर्शे च ज्ञेयः।

अथ भेषजम्। चण्डेश्वरः—'मूलानुराधमृगतिष्यपुनर्वसौ च पौष्णा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

श्विनीश्रवणशुक्रकरत्रये च। वारेषु वाक्पतिदिनेषु सितेन्दुशस्ते भैषज्यभक्षणममीषु हितं नराणाम् ॥'

अथारोग्यस्नानम्। श्रीपतिः—'इन्दोर्वारे भार्गवे च ध्रुवेषु सार्पादित्यस्वातियुक्तेषु भेषु। पित्र्ये चान्ते वापि कुर्यात्कदाचिन्नैव स्नानं रोगनिर्मुक्तजन्तुः॥ चरे विलग्ने रविभौमवारे रिक्ते तिथौ स्याद्बहुले च पक्षे। धिष्ण्ये चरे रोगनिपीडितानां स्नानं नराणां निरुजत्वकारि॥'

अथ दन्तधावनम्। पृथ्वीचन्द्रोदये विष्णुः—'प्रतिपद्दर्शषष्ठीषु चतुर्दश्यष्टमीषु च। नवम्यां भानुवारे च दन्तकाष्ठं विवर्जयेत्॥' नारदः—'चतुर्दश्यष्टमीपौर्णमासीसंक्रमणेषु च। नन्दासु च नवम्यां च दन्तकाष्ठं विवर्जयेत्॥ श्राद्धे यज्ञे च नियमे तथा प्रोषितभर्तृका। व्यतीपाते च संक्रान्त्यां नन्दाभूताष्टपर्वसु॥ तैलं क्षौरं रतिं मांसं दन्तकाष्ठं च वर्जयेत्॥' वसिष्ठः—'शन्यर्कशुक्रवारेषु कुजाहे व्रतवासरे। जन्माहे श्राद्धदिवसे दन्तकाष्ठं विवर्जयेत्॥' हेमाद्रौ स्कान्दे—'अभ्यङ्गे जलधिस्नाने दन्तधावनमैथुने। जाते च निधने चैव तत्कालव्यापिनी तिथिः॥' संवर्तः—'रवौ विवाह आशौचे वर्जयेद्दन्तधावनम्॥' व्यासः—'अलाभे दन्तकाष्ठानां निषिद्धायां तथा तिथौ। अपां द्वादशगण्डूषैर्विदध्याद्दन्तधावनम्॥'

अथामलकस्नानम्। व्यासः—'श्रीकामः सर्वदा स्नानं कुर्वीतामलकैर्नरः। सप्तमीं नवमीं चैव पर्वकालं विवर्जयेत्॥ चन्द्रसूर्योपरागे च स्नानमामलकैस्त्यजेत्॥' क्रतुः—'षष्ठी च सप्तमी चैव नवमी च त्रयोदशी। संक्रान्तौ रविवारे च स्नानमामलकैस्त्यजेत्॥' यत्तु—'नवमी दशमी चैव तृतीया च त्रयोदशी। प्रतिपद्द्वादशी कृष्णा स्नानं तासु विवर्जयेत्॥' यच्च 'दर्शे स्नानं न कुर्वीत मातापित्रोः सुजीवतोः। पुत्रः कुर्वन्निराचष्टे पित्रोरुन्नतिजीविते॥' इति कण्वयमाद्यैः स्नानमात्रं निषिद्धम्। तद्भोगार्थस्नानपरं न नित्यनैमित्तिकपरमिति हेमाद्रिः।

अथ तैलस्नाननिषेधः। कात्यायनः—'पक्षादौ च रवौ षष्ठ्यां रिक्तायां च तथा तिथौ। तैलेनाभ्यज्यमानस्तु चतुर्भिः परिहीयते॥' गर्गः—'पञ्चदश्यां चतुर्दश्यामष्टम्यां रविसंक्रमे। द्वादश्यां सप्तमीषष्ठ्योस्तैलस्पर्शं विवर्जयेत्॥ न च कुर्यात्तृतीयायां त्रयोदश्यां तिथौ तथा। शाश्वतीं गतिमन्विच्छन् दशम्यामपि पण्डितः॥' तत्रैवायुर्वेदे—'षष्ठ्यां दिनक्षयेऽष्टम्यामेकादश्यां च पर्वसु। द्वादश्यां च चतुर्दश्यां पञ्चम्यां प्रतिपत्तिथौ॥ व्रते श्राद्धदिने जन्मत्रितये श्रवणार्द्रयोः। ज्येष्ठोत्तराफाल्गुनीषु व्यतीपाते

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

च वैधृतौ ॥ विष्टियोगे च संक्रान्तौ मन्वादिषु युगादिषु। नाभ्यङ्गं तत्र बालानां वृद्धानां तु न दोषकृत् ॥' इति। व्यवहारतत्त्वे—'संक्रान्तिभद्राव्यतिपातवैधृतिषष्ठ्यष्टमीपर्वसु नार्कभूसुते। स्नाने द्वितीया दशमी च गर्हिताः षष्ठ्याद्यमाद्या रदधावनेऽधमाः ॥' अस्यापवादमाह तत्रैव प्रचेताः—'सार्षपं गन्धतैलं च यत्तैलं पुष्पवासितम्। अन्यद्रव्ययुतं तैलं न दुष्यति कदाचन ॥' आयुर्वेदे—'निषिद्धतिथिवारर्क्षग्रहणेष्वपि रात्रिषु। किञ्चिद्रोघृतयुक्तं वा विप्रपादरजोन्वितम् ॥ भानौ दूर्वान्वितं भौमे भूयुक्तं पुष्पयुग्गुरौ ॥ सर्वेषां सर्वदा तैलमभ्यङ्गेषु न दुष्यति ॥' मङ्गलेष्वप्यदोषः। 'माङ्गल्यं विद्यते स्नानं वृद्धिपर्वोत्सवेषु च। स्नेहपात्रसमायुक्तं मध्याह्नात् प्राक्तदिष्यते ॥' इति मदनपारिजाते कात्यायनोक्तेः। हेमाद्रौ बृहन्मनुः—'तैलाभ्यङ्गो नार्कवारे न भौमे नो संक्रान्तौ वैधृतौ विष्टिषष्ठ्योः। पर्वस्वष्टम्यां च नेष्टः स इष्टः प्रोक्तान्मुक्त्वा वासरे सूर्यसूनोः ॥' तिलस्नाननिषेधस्तु षट्त्रिंशन्मते—'तथा सप्तम्यमावास्यासंक्रान्तिग्रहजन्मसु। धनपुत्रकलत्रार्थी तिलपिष्टं न संस्पृशेत् ॥'

अथ गृहारम्भः। ज्योतिर्निबन्धे बादरायणः—'वैशाखे फाल्गुने पौषे श्रावणे मार्गशीर्षके। सूत्रारम्भः शिलान्यासः स्तम्भारम्भः प्रशस्यते ॥' नारदः—नारदः—'सौम्यफाल्गुनवैशाखमाघश्रावणकार्तिकाः। मासाः स्युर्गृहनिर्माणे पुत्रारोग्यधनप्रदाः ॥' अत्र वृषसिंहवृश्चिकाः वैशाखश्रावणकार्तिकाः सौरा ज्ञेया इति कालादर्शः। तत्रैव कारणतन्त्रे—'स्थिरमासे स्थिरे राशौ स्थिरंशे नववेश्मनाम्। कुर्वीत स्थापनं शङ्कोः स्तम्भस्थापनमेव वा ॥' कार्तिकनिषेधस्तुलापरः। 'कुम्भे मासेऽपि सर्वेषां मन्दिराणामुपक्रमम्। महर्षयः प्रशंसन्ति धान्यागारं विहाय च ॥' निषेधो धान्यगृहपरः। 'पाकभोजनशालादौ मार्गशीर्षश्च फाल्गुनः। रथ्यागेहसठादौ च सहस्यः शुचिरेव तु ॥' पौषाषाढनिषेधस्तु प्रधानगृहपरः। 'न प्रधानगृहारम्भं कुर्यात्पौषे शुचावपि।' इति तत्रैवोक्तेः। ज्योतिस्तत्त्वे—'पूर्वापरास्यन्तु नभोऽन्त्यपौषे याम्योत्तरास्यं सहसि द्वितीये। कार्यं गृहं जीवबुधर्क्षगार्कनीचास्तगौ जीवसितौ च हित्वा ॥' रत्नमालायाम्—'कर्कनक्रहरिकुम्भगतेऽर्के पूर्वपश्चिममुखानि गृहाणि। तौलिमेषवृषवृश्चिकयाते दक्षिणोत्तरमुखानि वदन्ति ॥' दैवज्ञवल्लभः—'शोकं धान्यं पञ्चतां निःपशुत्वं स्वापं नैःस्वं संगरं भृत्यनाशम्। स्वं श्रीप्राप्तिं वह्निभीतिं च लक्ष्मीं कुर्युश्चैत्राद्या गृहारम्भकाले ॥'

गर्गः—'त्र्युत्तरामृगरोहिण्यां पुष्ये मैत्रे करत्रये। धनिष्ठाद्वितये पौष्णे

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

गृहारम्भः प्रशस्यते ॥ रोहिण्यां श्रवणत्रयेऽदितियुगे हस्तत्रये मूलके रेवत्युत्तरफल्गुनीष्वुरगमे मैत्रोत्तराषाढयोः। शस्तं वास्तु कुजार्कवर्जितदिने गोकुम्भसिंहे मुखे कन्यायां मिथुने नभःशुचिसहोराधोर्जके फाल्गुने ॥' कालादर्शे सनत्कुमारः—'आदित्यभौमवर्जं तु सर्वे वाराः शुभप्रदाः।' वास्तुशास्त्रे—'मार्गशीर्षे तथा पौषे वैशाखे श्रावणे तथा। फाल्गुने च कृतं वेश्म सर्वसंपत्प्रदं भवेत् ॥ कार्तिके माघमासे च चैत्रे ज्येष्ठे तथाश्विने। मास्याषाढे भाद्रपदे न कुर्यात्सर्वथा गृहम् ॥ द्वितीया च तृतीया च पञ्चमी सप्तमी तथा। त्रयोदशी च दशमी पूर्णा चैकादशी तथा ॥ वेश्मारम्भे शुभाय स्युर्विशेषाच्छुक्लपक्षगाः ॥' व्यवहारसारे—'शिलान्यासः प्रकर्तव्यो गृहाणां श्रवणे मृगे। पौष्णे हस्ते च रोहिण्यां पुष्याश्विन्युत्तरात्रये ॥' वास्तुप्रदीपे—'अधोमुखैर्भैर्विदधीत खातं शिलास्तथैवोर्ध्वमुखैश्च पट्टम्। तिर्यङ्मुखैर्द्वारकपाटयानं गृहप्रवेशो मृदुभिध्रुवैश्च ॥' लल्लः—'स्नानं च पाकं शयनं च भोज्यं गजालयं वाजिगृहं धनस्य। देवस्य पूर्वादिदिशि क्रमेण मध्ये सभा भूपनिवेशनाय ॥' शिल्पशास्त्रे—'कन्यासिंहे तुलायां भुजगपतिमुखं शम्भुकोणेऽग्निखातं वायव्ये स्यात्तदास्यं त्वलिधनमकरे ईशखातं वदन्ति। कुम्भे मीने च मेषे निर्ऋतिदिशि मुखं खातवायव्यकोणे चाग्नेः कोणे मुखं वै वृषमिथुनगते कर्कटे रक्षखातम् ॥' तत्त्वचिन्तामणौ—'यत्र दैर्घ्यं गृहादीनां द्वात्रिंशद्धस्ततोऽधिकम्। न तत्र चिन्तयेद्धीमान् गुणानायव्ययादिकान् ॥' राजमार्तण्डः—'आयव्ययौ मासशुद्धिं तृणागारे न चिन्तयेत्। शिलान्यासादि नो कुर्यात्तथागारे पुरातने ॥' व्यवहारतत्त्वे—'निषिद्धेष्वपि कालेषु स्वानुकूले शुभे दिने। तृणकाष्ठगृहारम्भे मासदोषो न विद्यते ॥' चण्डेश्वरः—'पूर्णादित्वष्टमीं यावत्पूर्वास्यं वर्जयेद्गृहम्। उत्तरास्यं न कुर्वीत नवम्यादिचतुर्दशीम् ॥ अमावास्याष्टमीं यावत्पश्चिमास्यं विवर्जयेत्। नवम्यादौ तथा याम्यं यावत्कृष्णचतुर्दशीम् ॥ ध्रुवं दृष्ट्वाथवा स्मृत्वा कर्तव्यं वास्तुरोपणम्। सायाह्नवर्ज्यदिवसे रात्रौ त्यक्त्वा महानिशाम् ॥' वराहः—दक्षिणपूर्वे कोणे कृत्वा पूजां शिलां न्यसेत्प्रथमाम्। शेषाः प्रदक्षिणेन स्तम्भाश्चैवं समुत्थाप्याः ॥' कालादर्शे वास्तुशास्त्रे—'खाते चैव शिलान्यासे वृषचक्रं प्रशस्यते।' तच्चोक्तं शान्तिरत्ने—'चतुर्हस्तप्रमाणं तु खात्वा गर्तं समन्ततः। कुम्भोदकैः सेचयेयुः शान्तिपाठपुरःसरम् ॥ तत ईशानदिग्भागे साक्षतं रत्नपञ्चकम्। साज्यं कुम्भं स्थिरं मुक्त्वा वास्तुपूजनपूर्वकम् ॥ कुम्भोपरि शिलान्यासः कर्तव्यस्तदनन्तरम्।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ गृहप्रवेशः । बृहस्पतिः—'नन्दायां दक्षिणद्वारं भद्रायां पश्चिमेन तु । जयायामुत्तरद्वारं पूर्णायां पूर्वतो विशेत् ॥' वसिष्ठः—'कृत्वा शुक्रं पृष्ठतो वामतोऽर्कं विप्रान्पूज्यानग्रतः पूर्णकुम्भम् । हर्म्यं रम्यं तोरणस्रग्वितानैः स्त्रीभिः स्रग्वी गीतवाद्यैर्विशेच्च ॥' व्यवहारतत्त्वे—'सौम्यायने श्रावणमार्गपौषे जन्मर्क्षलग्नोपचयोदयेंऽशे । वामं गतेऽर्के गृहवास्तुपूजां कृत्वा विशेद्वेश्म भकूटशुद्धम् ॥' वास्तुशास्त्रे-'लग्नात्प्रागादितो दिक्षु द्वौ द्वौ राशी नियोजयेत् । एकमेकं न्यसेत्कोणे सूर्यं वामं विचिन्तयेत् ॥' वसिष्ठः 'चन्द्रजार्यसितवासरेषु च श्रीकरं सुतमहार्थलाभदम् । सूर्यसूनुदिवसे स्थिरप्रदं किं तु चौरभयमत्र निर्दिशेत् ॥' रत्नकोशे-'पुष्ये धनिष्ठामृगवारुणेषु स्वायंभुवर्क्षे त्रिषु चोत्तरासु । अक्षीणचन्द्रे शुभदो नृपस्य तिथावरिक्ते च गृहप्रवेशः ॥' नारदः—'प्रवेशो मध्यमो ज्ञेयः सौम्यकार्तिकमासयोः । माघफाल्गुनवैशाखज्येष्ठमासेषु शोभनः ॥ अकपाटमनाच्छन्नमदत्तबलिभोजनम् । गृहं न प्रविशेद्धीमानापदामाकरो हि तत् ॥' ज्येष्ठः क्षुद्रगृहपरः । वृद्धगार्ग्यः—'भानोश्च भौमस्य विहाय वारौ शूलादियोगानशुभांश्चवापि । रिक्ता तिथिश्चापि मृदुध्रुवर्क्षे सौम्यायने च प्रविशेद्गृहाणि ॥' रत्नमालायाम्—'त्वाष्ट्रमित्रशशिपूषदैवतान्यामनन्ति मुनयो मृदून्यथ । मैत्रगे हरति भूषणाम्बरोद्गीतमङ्गलविधानमेषु च ॥' रोहिण्युत्तरात्रयं च ध्रुवाणि । प्रवेशश्च वास्तुपूजां कृत्वा कार्यः । 'जीर्णोद्धारे तथोद्याने तथा गृहनिवेशने । नवप्रासादभवने प्रासादपरिवर्तने ॥ द्वाराभिवर्तने तद्वत्प्रासादेषु गृहेषु च । वास्तूपशमनं कुर्यात्पूर्वमेव विचक्षणः ॥' इति मात्स्योक्तेः । तत्रैव—'कृत्वाग्रतो द्विजवरानथ पूर्णकुम्भं दध्यक्षताम्रदलपुष्पफलोपशोभम् । दत्त्वा हिरण्यवसनानि तथा द्विजेभ्यो माङ्गल्यशान्तिनिलयं स्वगृहं विशेच्च ॥ गृह्योक्तहोमविधिना बलिकर्म कुर्यात्प्रासादवास्तुशमने च विधिर्य उक्तः । सन्तर्पयेद्द्विजवरानथ भक्ष्यभोज्यैः शुक्लाम्बरः स्वभवनं प्रविशेत्सुरूपम् ॥'

अथ कलिवर्ज्यानि बृहन्नारदीये—'समुद्रयातुः स्वीकारः कमण्डलुविधारणम् । द्विजानामसवर्णासु कन्यासूपयमस्तथा ॥ देवराच्च सुतोत्पत्तिर्मधुपर्के पशोर्वधः । मांसदानं तथा श्राद्धे वानप्रस्थाश्रमस्तथा ॥ दत्ताक्षतायाः कन्यायाः पुनर्दानं परस्य च । दीर्घकालं ब्रह्मचर्यं नरमेधाश्वमेधकौ ॥ महाप्रस्थानगमनं गोमेधश्च तथा मखः । इमान्धर्मान्कलियुगे वर्ज्यानाहुर्मनीषिणः ॥' कमण्डलुः 'सोदकं च कमण्डलुम्' इत्युक्तः मृन्मयो वा । दत्ता ऊढा । 'ऊढायाः पुनरुद्वाहं ज्येष्ठांशं गोवधस्तथा ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कलौ पञ्च न कुर्वीत भ्रातृजायां कमण्डलुम् ॥' इति हेमाद्रौ वचनात् ऊढायाः 'पुरा पुरुषसंयोगान्मृते देयेति केचन' इत्यादिभिर्विवाह्यतोक्ता। हेमाद्रौ ब्राह्मे—गोत्रान्मातुः सपिण्डाच्च विवाहो गोवधस्तथा। नराश्वमेधौ मद्यं च कलौ वर्ज्यं द्विजातिभिः ॥' गोत्राद्गोत्रजायाः पितृष्वसुः, मातृसपिण्डान्मातुलात्तत्कन्याया विवाहः कलौ न कार्यः। तेन यानि तद्विधायकानि तानि युगान्तरविषयाणि। तथा च व्यासः—'तृतीयां मातृतः कन्यां तृतीयां पितृतस्तथा। शुल्केन चोद्वहिष्यन्ति विप्राः पापविमोहिताः ॥' इति कलौ तन्निन्दामाह। मातृतस्तृतीयां मातुलकन्यामित्यर्थः। उक्तं चैतत्प्राक् 'मद्यं स्त्रीभ्यश्च सुरामाचासम्' इत्यादिना विहितमपि वर्ज्यम्।

हेमाद्रौ आदित्यपुराणे—विधवायां प्रजोत्पत्तौ देवरस्य नियोजनम्। बालायाः क्षतयोन्यास्तु वरेणान्येन संस्कृतिः॥ कन्यानामसवर्णानां विवाहश्च द्विजन्मभिः। आततायिद्विजाग्र्याणां धर्मयुद्धेन हिंसनम् ॥ द्विजस्याब्धौ तु नौयातुः शोधितस्यापि संग्रहः। सत्रदीक्षा च सर्वेषां कमण्डलुविधारणम्। महाप्रस्थानगमनं गोसंज्ञप्तिश्च गोसवे। सौत्रामण्यामपि सुराग्रहणस्य च संग्रहः ॥ अग्निहोत्रहवण्याश्च लेहो लीढापरिग्रहः। वृत्तस्वाध्यायसापेक्षमघसंकोचनं तथा ॥ प्रायश्चित्तविधानं च विप्राणां मरणान्तिकम्। संसर्गदोषस्तेयान्यमहापातकनिष्कृतिः ॥' संसर्गदोषः 'तत्संसर्गी च पञ्चमः' इत्युक्तः। स्तेयं च तदन्यानि महापातकानि ब्रह्महत्यासुरापगुरुतल्पानि त्रीणि। तेषां कामकृतानां मरणान्तिकं प्रायश्चित्तं विप्राणां कलौ नेत्यर्थः। मरणान्तिके हि जातिवधनिमित्तं द्वादशाब्दद्विगुणं ब्रह्मवधनिमित्तं च द्विगुणं भवति तत् 'चतुर्थे नास्ति निष्कृतिः' इति निषिद्धम्। न चात्महत्याविधिना तद्बाधः तेन ह्यात्महत्यानिमित्तस्यैव बाधो न जातिवधनिमित्तस्य भिन्नविषयत्वात्। संसर्गिणस्तु कामतोऽपि व्रतस्यैवोक्तेर्न मरणान्तिकम्। नापि स्तेये। तत्र राज्ञो वधकर्तृत्वात् तेन तयोर्मरणान्तिकाभावात् तयोरेव निष्कृतिर्नान्येषां त्रयाणाम्। युगान्तरे तु कलौ निषेधबलात्प्रवृत्तिः। एकद्विप्रपरं न क्षत्रियादेः। तदुक्तम् 'विप्राणां मरणान्तिकम्' इति। विशेषोऽस्मत्कृते प्रायश्चित्तरत्ने ज्ञेयः। 'वरातिथिपितृभ्यश्च पशूपाकरणक्रिया। दत्तौरसेतरेषां तु पुत्रत्वेन परिग्रहः ॥ सवर्णान्याङ्गनादुष्टैः संसर्गः शोधितैरपि। अयोनौ संग्रहे वृत्ते परित्यागो गुरुस्त्रियः ॥ परोद्देशात्मसंत्याग उद्दिष्टस्यापि वर्जनम्। प्रतिमाभ्यर्चनार्थाय सङ्कल्पश्च सधर्मकः ॥ अस्थिसञ्चयनादूर्ध्वमङ्गस्पर्शनमेव च। शामित्रं चैव विप्राणां सोमविक्रयणं तथा ॥ षड्भक्ता-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नशने चान्नहरणं हीनकर्मणः ॥ माधवीये पृथ्वीचन्द्रोदये च—'शूद्रेषु दासगोपालकुलमित्रार्धसीरिणाम् । भोज्यान्नता गृहस्थस्य तीर्थसेवातिदूरतः ॥ शिष्यस्य गुरुदारेषु गुरुवद्वृत्तिशीलता । आपद्वृत्तिर्द्विजाग्र्याणामश्वस्तनिकता तथा ॥ प्रजार्थे तु द्विजाग्र्याणां प्रजारणिपरिग्रहः । ब्राह्मणानां प्रवासित्वं मुखाग्निधमनक्रिया ॥ बलात्कारादिदुष्टस्त्रीसंग्रहो विधिचोदितः । यतेश्च सर्ववर्णेषु भिक्षाचार्याविधानतः ॥ नवोदके दशाहं च दक्षिणा गुरुचोदिता । ब्राह्मणादिषु शूद्रस्य पचनादिक्रियापि च ॥ भृग्वग्निपतनैश्चैव वृद्धादिमरणं तथा । गोतृप्तिशिष्टे पयसि शिष्टैराचमनक्रिया ॥ पितापुत्रविरोधेषु साक्षिणां दण्डकल्पनम् । यतेः सायंगृहत्वं च सूरिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ एतानि लोकगुप्त्यर्थं कलेरादौ महात्मभिः । निवर्तितानि विद्वद्भिर्व्यवस्थापूर्वकं बुधैः ॥' सुराग्रहणस्य तत्कर्तुः संग्रहो व्यवहारकः । नच मद्यं चेति सामान्येन निषिद्धस्याऽनेनोपसंहार इति वाच्यम् । निषेधस्य निवृत्तिमात्रफलत्वेन विशेषानपेक्षत्वात् । 'न हिंस्यात्' इत्यस्य 'न ब्राह्मणं हन्यात्' इत्यनेनोपसंहारे हिंसान्तरस्यादोषत्वापत्तेश्च । निरूपितं चैतद्धेमाद्रिणाऽन्यत्रेत्युपरम्यते । सुराग्रहस्योद्देश्यस्य सौत्रामणिविशेषणाविवक्षया वाजपेयेपि निषेधः । सौत्रामण्यां तु 'पयोग्रहा वा स्युः' इत्यापस्तम्बोक्तैर्वैकल्पिकपयोग्रहैरप्यधिकारः । वाजपेये तु तत्प्राप्तौ मानाभावात् सोमसुरयोः सहत्यागेनांशे सुराद्रव्यत्वात्तत्प्रख्यतया यागनामत्वेन तां विना संज्ञायोगात् कलौ नाधिकार इति युक्तं प्रतीमः । त्रिकाण्डमण्डनादिलिखनं तु निर्मूलमनाकरं च । वृत्तेति 'एकाहाद्ब्राह्मणः शुद्ध्येद्योऽग्निवेदसमन्वितः ।' इति उक्तः । अघाशस्योचस्य संकोचः । 'न तस्य निष्कृतिर्दृष्टा भृग्वग्निपतनादृते ।' इत्युक्तस्य प्रायश्चित्तस्य विधानं उपदेशः । 'कलौ कर्तैव लिप्यते' इति व्यासोक्तेः । पतितसंसर्गे दोषसत्वेऽपि पातित्यं नेत्यर्थः । अन्यथा 'संसर्गः शोधितैरपि' इति विरोधापत्तेः । स्तेयभिन्ने महापापे रहस्यकृते प्रायश्चित्तं नेत्यर्थः । सवर्णान्या असवर्णा क्षत्रियादिस्तया दुष्टैः अयोनौ शिष्यादौ 'चतस्रस्तु परित्याज्याः शिष्यगा गुरुगा च या' इत्युक्तस्त्यागः परोद्देशेन ब्राह्मणाद्यर्थमात्मनस्त्यागः । यद्वा परोद्देशात्मत्यागो गोदानं 'मनसा पात्रमुद्दिश्य' इत्युक्तम् । उद्दिष्टस्य त्यक्तस्य वर्जनं 'प्रतिग्रहसमर्थोऽपि' इत्युक्तम् । वेतनग्रहणेन प्रतिमापूजा । 'स्वाशौचकालाद्विज्ञेयं स्पर्शनं तु त्रिभागतः ।' इत्युक्तः स्पर्शः । षडिति । 'उपोषितस्त्र्यहं स्थित्वा धान्यमब्राह्मणाद्धरेत् ।' इत्युक्तमन्नचौर्यम् । आपदि क्षात्रादिवृत्तिः । 'मुखेनैव धमेदग्निम्' इत्युक्तं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

धमनम् । 'दशाहेनैव शुद्ध्येत भूमिष्ठं च नवोदकम् ।' इत्युक्तो दशाहः । 'गुरवे तु वरं दत्वा' इत्युक्ता दक्षिणा । शूद्रेषु दासगोपालेति । 'कन्दूपक्वं स्नेहपक्वं यच्च दुग्धेन पाचितम् । एतान्यशूद्रान्नभुजो भोज्यानि मनुरब्रवीत् ॥' इत्यपरार्के सुमन्तूक्ता शूद्रस्य पाकक्रिया । 'पितापुत्रविवादे तु साक्षिणां त्रिपणो दमः ।' इत्युक्तः । सायंगृहत्वं 'विधूमे सन्नमुसले' इत्युक्तम् । पृथ्वीचन्द्रेण तु—अटन्ति वसुधां विप्राः पृथिवीदर्शनाय च । अनिकेता ह्यनाहारा यत्र सायंगृहास्तु ते ॥' इति विष्णुपुराणोक्तो निषिद्धः । तेनाज्ञातशीलपान्थादेः श्राद्धादौ विनियोगो न कार्यः कलावित्यर्थ उक्तः । एतानि वर्ज्यानीत्यर्थः ।

निगमः—'अग्निहोत्रं गवालम्भं संन्यासं पलपैतृकम् । देवराच्च सुतोत्पत्तिः कलौ पञ्च विवर्जयेत् ॥' अग्निहोत्रं तदर्थमाधानम् । एतच्च सर्वाधानपरम् । 'अर्धाधानं स्मृतं श्रौतस्मार्ताग्न्योस्तु पृथक्कृतिः । सर्वाधानं तयोरैक्यकृतिः पूर्वयुगाश्रिता ॥' इति लौगाक्षिवचनादिति स्मृतिचन्द्रिकायाम् । एतेन 'चत्वार्यब्दसहस्राणि चत्वार्यब्दशतानि च । कलेर्यदा गमिष्यन्ति तदा त्रेतापरिग्रहः ॥ संन्यासश्च न कर्तव्यो ब्राह्मणेन विजानता ॥' इति व्यासवचनं व्याख्यातम् । सर्वाधानेऽपि विशेषमाह देवलः—'यावद्वर्णविभागोऽस्ति यावद्वेदः प्रवर्तते । संन्यासं चाग्निहोत्रं च तावत्कुर्यात्कलौ युगे ॥' इति । अत्र पूर्वयुगाश्रितेति लौगाक्षिवाक्ये पूर्वयुगानि कृतादीनीत्येकोर्थः । अन्ये तु युगस्य पूर्वं कलेः पूर्वभागः । स 'चत्वार्यब्दसहस्राणि' इति पूर्वोक्तवाक्याच्चतुश्चत्वारिंशच्छतवर्षावच्छिन्नः । तस्मिन्भागे सर्वाधानं कार्यम् । तदुत्तरं तु यावद्वर्णविभागोऽस्तीति वाक्यात् वर्णविभागपर्यन्तमर्धाधानमित्याहुः । संन्यासस्त्रिदण्डः ।

इति श्रीमन्नारायणभट्टसूरिसूनुरामकृष्णभट्टात्मजदिनकरभट्टानुजकमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ कलिवर्ज्यानि समाप्तानि ।

तृतीयपरिच्छेदपूर्वभागः समाप्तः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

॥ श्रीः ॥

निर्णयसिन्धौ

तृतीयपरिच्छेद उत्तरार्धम् ।

श्राद्धप्रकरणम् ।

अथ श्राद्धनिर्णयः । नानानिबन्धवैमत्यभ्रान्तचित्तोद्दिधीर्षया । कमलाकरसंज्ञेन क्रियते श्राद्धनिर्णयः ॥ तत्स्वरूपमाह पृथ्वीचन्द्रोदये मरीचिः—'प्रेतं पितॄँश्च निर्दिश्य भोज्यं यत्प्रियमात्मनः । श्रद्धया दीयते यत्र तच्छ्राद्धं परिकीर्तितम् ॥' ब्राह्मणस्वीकारान्तश्चतुर्थ्यन्तपदोपनीतपित्राद्युद्देश्यकस्त्यागः श्राद्धमित्यर्थः । तत्र यद्यपि होमपिण्डभोजनानि प्रधानमिति हेमाद्रिः । होमश्च पिण्डदानं च तथा ब्राह्मणभोजनम् । श्राद्धशब्दाभिधेयं स्यादेकस्मिन्नौपचारिकम् ॥' इति श्रीधरश्च । तथापि कश्चिद्विशेषं वक्ष्यामः । निमित्तभेदे भोजनस्य पिण्डानां वा निषेधो न प्राधान्यं विरुणद्धि । असोमयाजिनो दधिपयोयागवत् । यच्च शूलपाणिः— नित्यश्राद्धमदैवं स्यादर्घ्यपिण्डविवर्जितम् ।' इति हारीतीये नित्यश्राद्धमघादौ पिण्डनिषेधोऽस्ति । नच प्राप्तिं विना सः । नचातिदेशं विना प्राप्तिः । नचाङ्गत्वेन विनातिदेशः । प्रधानस्यानतिदेशात् । सप्तमे उपकारकत्वेनातिदेशोक्तेः । तेन भोजनं प्रधानम्, पिण्डोऽङ्गम् । पिण्डदानमात्रविधिस्त्वङ्गभूतात्कर्मान्तरमेव प्रकरणान्तरन्यायादिति । तन्न । 'जातश्राद्धे न दद्यात्तु पक्वान्नं ब्राह्मणेष्वपि । न पक्वं भोजयेद्विप्रान्सच्छूद्रोऽपि कदाचन ॥' इत्याद्यैर्जातश्राद्धशूद्रश्राद्धादौ भोजनस्य निषेधेनाङ्गत्वापत्तेः— 'न तौ पशौ करोति' इतिवदुपजीव्यविरोधेन विकल्पापत्तेश्च । तेन श्राद्धशब्दाभिधेयत्वेनोभयप्राप्तौ निषेधः पर्युदासो वा 'दीक्षितो न ददाति न जुहोति' 'नासोमयाजी सन्नयेत्' इतिवदिति तत्त्वम् । धर्मप्रदीपेऽपि-यजुषां पिण्डदानं तु बह्वृचानां द्विजार्चनम् । श्राद्धशब्दाभिधेयं स्यादुभयं सामवेदिनाम् ॥' तच्च 'पितॄन् यजेत, पितृभ्यो दद्यात्' इत्युभयप्रयोगदर्शनाद्यागदानोभयात्मकम् । 'पितरो देवता' इति पित्रुद्देश्यकत्वाद्यागत्वं,

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

र्विप्रापेक्षया च दानत्वमित्यविरुद्धम्। एतेन नायं यागः। देवतोद्देशेन त्यागो यागः यागोद्देश्या च देवतेत्यात्माश्रयादिति गौडमतमपास्तम्। वैधशब्दविशेषोद्देश्यत्वस्य तस्येदमिति स्वत्वारोपप्रतियोगित्वस्य वा देवतात्वात्। तत्रैव सुमन्तुः—'श्राद्धात्परतरं नान्यच्छ्रेयस्करमुदाहृतम्।' आदित्यपुराणे–'न सन्ति पितरश्चेति कृत्वा मनसि यो नरः। श्राद्धं न कुरुते तत्र तस्य रक्तं पिबन्ति ते॥'

तद्भेदानाह विश्वामित्रः-'नित्यं नैमित्तिकं काम्यं वृद्धिश्राद्धं सपिण्डनम्। पार्वणं चेति विज्ञेयं गोष्ठ्यां शुद्ध्यर्थमष्टमम्॥ कर्माङ्गं नवमं प्रोक्तं दैविकं दशमं स्मृतम्। यात्रास्वेकादशं प्रोक्तं पुष्ट्यर्थं द्वादशं स्मृतम्॥' इति॥ एषां लक्षणानि भविष्ये-'अहन्यहनि यच्छ्राद्धं तन्नित्यमिति श्राद्धलक्षणानि। कीर्तितम्। वैश्वदेवविहीनं तदशक्तावुदकेन तु॥ एकोद्दिष्टं तु यच्छ्राद्धं तन्नैमित्तिकमुच्यते। तदप्यदैवं कर्तव्यमयुग्मान्भोजयेद्द्विजान्॥ कामाय विहितं काम्यमभिप्रेतार्थसिद्धये। वृद्धौ यत्क्रियते श्राद्धं वृद्धिश्राद्धं तदुच्यते॥ गन्धोदकतिलैर्मिश्रं कुर्यात्पात्रचतुष्टयम्। अर्घ्यार्थं पितृपात्रेषु प्रेतपात्रं प्रसेचयेत्॥ ये समाना इति द्वाभ्यामेतज्ज्ञेयं सपिण्डनम्। नित्येन तुल्यं शेषं स्यादेकोद्दिष्टं स्त्रिया अपि॥' एतदुभयमेव स्त्रियाः। तेन स्त्रीकर्तृकं स्त्रीसंप्रदानकं चेत्युभयनियम इति कल्पतरुः। अमावास्यां यत्क्रियते तत्पार्वणमिति स्मृतम्। क्रियते वा पर्वणि यत्तत्पार्वणमिति स्थितिः॥' अत्र पर्व 'चतुर्दश्यष्टमी चैव अमावास्या च पूर्णिमा। पर्वाण्येतानि राजेन्द्र रविसंक्रमणं तथा॥' इति विष्णुपुराणोक्तं संक्रान्त्यादि। 'गोष्ठ्यां यत्क्रियते श्राद्धं गोष्ठीश्राद्धं तदुच्यते। बहूनां विदुषां संपत्सुखार्थं पितृतृप्तये॥ क्रियते शुद्धये यत्तु ब्राह्मणानां तु भोजनम्। शुद्ध्यर्थमिति तत्प्रोक्तं वैनतेय मनीषिभिः॥ निषेककाले सोमे च सीमन्तोन्नयने तथा। ज्ञेयं पुंसवने चैव श्राद्धं कर्माङ्गमेव च॥ देवानुद्दिश्य यच्छ्राद्धं तत्तु दैविकमुच्यते। गच्छन्देशान्तरं यस्तु श्राद्धं कुर्यात्तु सर्पिषा॥ यात्रार्थमिति तत्प्रोक्तं प्रवेशे च न संशयः। शरीरोपचये श्राद्धमर्थोपचय एव च॥ पुष्ट्यर्थमेतद्विज्ञेयमौपचायिकमुच्यते॥' गोष्ठ्यां श्राद्धकर्तृसमुदाये संभूय सामग्रीसंपादनेन श्राद्धमित्यर्थः। युगपत्तीर्थादिप्राप्तौ विदुषां श्राद्धसंपदा सुखार्थं भिन्नपाकाशक्तौ बहुपितृकश्राद्धमेकः कुर्यादिति कल्पतरुः शङ्खधरश्च। शुद्धिश्राद्धं प्रायश्चित्ताङ्गमिति मैथिलाः। अत्र पार्वणैकोद्दिष्टवृद्धिसपिण्डीकरणात्मकं चतुर्विधमेव मुख्यम्। तस्यैवायं प्रपञ्चः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ श्राद्धदेशाः। मनुः–'शुचिदेशं विविक्तं तु गोमयेनोपलेपयेत्। दक्षिणाप्रवणं चैव प्रयत्नेनोपपादयेत्॥' पृथ्वीचन्द्रोदये विष्णुधर्मे–'दक्षिणाप्रवणे देशे तीर्थादौ च गृहेऽपि वा। भूसंस्कारादिसंयुक्ते श्राद्धं कुर्यात्प्रयत्नतः॥' तत्रैव प्रभासखण्डे–'तीर्थादष्टगुणं पुण्यं स्वगृहे ददतः शुभे।' भारते–'तस्य देशाः कुरुक्षेत्रं गया गङ्गा सरस्वती। प्रभासं पुष्करं चेति तेषु श्राद्ध महाफलम्॥' स्कान्दे–'तुलसीकाननच्छाया यत्र यत्र भवेद्द्विज। तत्र श्राद्धं प्रदातव्यं पितृणां तृप्तिहेतवे॥' माधवीये श्राद्धोपक्रमे व्यासः–'महोदधौ प्रयागे च काश्यां च कुरुजाङ्गले'। शङ्खः–'गङ्गायमुनयोस्तीरे पयोष्ण्यमरकण्टके। नर्मदा बाहुदातीरे भृगुलिङ्गे हिमालये॥ गङ्गाद्वारे प्रयागे च नैमिषे पुष्करे तथा। सन्निहत्यां च गयायां च दत्तमक्षय्यतां व्रजेत्॥ अपि जायेत सोऽस्माकं कुले कश्चिन्नरोत्तमः। गयाशीर्षे वटे श्राद्धं यो नो दद्यात्समाहितः॥ एष्टव्या बहवः पुत्रा यद्येकोऽपि गयां व्रजेत्। यजेत वाश्वमेधेन नीलं वा वृषमुत्सृजेत्॥' आदित्यपुराणे–'पञ्चक्रोशं गयाक्षेत्रं क्रोशमेकं गयाशिरः। महानद्याः पश्चिमेन यावद्गृध्रेश्वरो गिरिः। उत्तरे ब्रह्मयूपस्य यावद्दक्षिणमानसम्। एतद्गयाशिरो नाम त्रिषु लोकेषु विश्रुतम्॥' इति। शूलपाणौ बृहस्पतिः 'गङ्गायां धर्मपृष्ठे च सरसि ब्रह्मणस्तथा। गयाशीर्षेऽक्षयवटे पितृणां दत्तमक्षयम्॥ धर्मारण्यं धर्मपृष्ठं धेनुकारण्यमेव च। दृष्ट्वैतानि पितॄंश्चार्चन्वंशान्विंशतिमुद्धरेत्॥' त्रिस्थलीसेतौ वायवीये–'शमीपत्रप्रमाणेन पिण्डं दद्याद्गयाशिरे। उद्धरेत्सप्त गोत्राणि कुलमेकोत्तरं शतम्॥' सप्तगोत्राणि तु–'पिता माता च भार्या च भगिनी दुहिता तथा। पितृमातृष्वसा चैव सप्त गोत्राणि वै विदुः॥' इति। एषां गोत्राणामेकोत्तरशतं कुलं पुरुषा इत्यर्थः। ते चोक्तास्तत्रैव—'तत्त्वानि विंशति नृपा द्वादशैकादशा दश। अष्टाविति च गोत्राणां कुलमेकोत्तरं शतम्॥' तत्त्वानि चतुर्विंशतिः। ते च द्वादश पूर्वा द्वादश पराः। एवमग्रेऽपि प्रयोगपारिजाते पाद्मे—'शालग्रामसयी मुद्रा संस्थिता यत्र कुत्रचित्। वाराणस्या यवाधिक्यं समन्ताद्योजनत्रयम्॥' तथा–'यत्किञ्चित्पैतृकं कुर्यात्सपिण्डं वा तदन्तिके। विष्णुलोकं स गच्छेत्तु लभते शाश्वते पदम्॥' तत्रैव वाराहे—'म्लेच्छदेशे शुचौ वापि चक्राङ्को यत्र तिष्ठति। योजनानां तथा त्रीणि मम क्षेत्रं वसुन्धरे॥ चक्राङ्कस्य तु सान्निध्यं यत्कर्म क्रियते नरैः। स्नानं दानं तपः श्राद्धं सर्वमक्षयतां व्रजेत्॥'

अथ निषिद्धदेशाः। पृथ्वीचन्द्रोदये स्कान्दे—'त्रिशङ्कोर्वर्जयेद्देशं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

सर्वं द्वादशयोजनम्। उत्तरेण महानद्या दक्षिणेन तु कीकटान्॥ देशस्त्रैशङ्कवो नाम श्राद्धकर्मणि वर्जितः॥' वायवीये—'प्रणष्टाश्रमधर्माश्च देशा वर्ज्याः प्रयत्नतः। यमः—'रूक्षं कृमिहतं क्लिन्नं संकीर्णानिष्टगन्धिकम्। देशं त्वनिष्टशब्दं च वर्जयेच्छ्राद्धकर्मणि॥' तत्रैव शङ्खः—गोगजाश्वादिजुष्टेषु कृत्रिमायां तथा भुवि। न कुर्याच्छ्राद्धमेतेषु पारक्यासु च भूमिषु॥' यमः—'परकीयप्रदेशेषु पितॄणां निर्वपेत्तु यः। तद्भूमिस्वामिपितृभिः श्राद्धकर्म विहन्यते॥' ब्राह्मभारतयोरपि—'परकीयगृहे यस्तु स्वान्पितॄंस्तर्पयेद्यदि। तद्भूमिस्वामिनस्तस्य हरन्ति पितरो बलात्॥ अग्रभागं ततस्तेभ्यो दद्यान्मूल्यं च जीवितम्॥' श्राद्धार्हाणामग्रभागं श्राद्धं तदनर्हाणां शूद्राणां तु मूल्यमिति केचित्। षोडशीपिण्डेऽबान्धवानामपि पिण्डोक्तेः, 'येऽबान्धवा वा' इत्यादितर्पणबाधापत्तेश्च नामगोत्रपूर्वं श्राद्धनिषेधो नान्यत्रेति गौडाः। विप्रासुतस्य शूद्रापुत्रश्राद्धनिषेधो नान्यत्र। अग्रदानं चान्नत्यागात्पूर्वं कार्यमिति मैथिलाः। तन्न। अग्रभागस्य श्राद्धपरत्वे मानाभावात्। अन्नदाने च निषेधाभावात्। त्यागात्पूर्वं करणेऽनङ्गेन व्यवधानापत्तेः। अङ्गत्वे च मानाभावात्। इदं च स्वाम्यनुज्ञाभावे। तदुक्तं तत्रैव ब्राह्मे—'स्वनुलिप्तेषु गेहेषु स्वेष्वनुज्ञापितेषु च। श्राद्धमेतेषु दातव्यं वर्ज्यमेतेषु नोच्यते॥ किरातेषु कलिङ्गेषु कौङ्कणेषु खसेष्वपि। सिन्धोरुत्तरकूलेषु नर्मदायाश्च दक्षिणे॥ पूर्वेण करतोयाया न देयं श्राद्धमुच्यते॥' इदं काम्यविषयम्। अन्यथा तत्रत्यानां सर्वश्राद्धाकरणापत्तेः॥ नर्मदादक्षिणेऽपवादः स्कान्दे—'सह्यस्य चोद्भवो यत्र यत्र गोदावरी नदी। पृथिव्यामपि कृत्स्नायां स प्रदेशोऽतिपावनः॥' परकीयत्वापवादः। आदित्यपुराणे—'अटवी पर्वताः पुण्या नदीतीराणि यानि च। सर्वाण्यस्वामिकान्याहुर्नहि तेषु परिग्रहः॥ वनानि गरियो नद्यस्तीर्थान्यायतनानि च। देवखाताश्च गर्ताश्च न स्वाम्यं तेषु विद्यते॥' स्मृतिसारे—'नैकवासा न च द्वीपे नान्तरिक्षे कदाचन। श्रुतिस्मृत्युदितं कर्म न कुर्यादशुचिः क्वचित्॥' दिवोदासीये—'म्लेच्छदेशे तथा रात्रौ संध्यायां विप्रवर्जिते। न श्राद्धमाचरेद्विद्वान्न चाकाशे कथञ्चन॥

अथ श्राद्धकालाः। ते च संक्रान्तियुगादिमहालयादयः प्रायेण पूर्वपरिच्छेदद्वये उक्ता एव। केचित्तूच्यन्ते। पृथ्वीचन्द्रोदये वृद्धपराशरः—'श्राद्धं वृद्धावचन्द्रेभच्छायाग्रहणसंक्रमे। नवोदके नवान्ने च नवच्छन्ने तथा गृहे॥ नवेक्षवेषु चेहन्ते पितरो हि मघास्वपि। पितरः स्पृहयन्त्यन्नमष्टकासु मघासु च॥' इति शातातपपाठः। नवोदके नवकूपवाप्या-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दाविति केचित्। वर्षोपक्रमे आर्द्राप्रवेशे इति गौडाः। नवान्नश्राद्धे विशेषो ज्योतिषे—'ज्येष्ठशेषागते सूर्ये मृगनेत्रानिशात्मके। नवान्नैर्भोजनश्राद्धं जन्मचन्द्रतिथौ न च॥ आश्लेषाकृत्तिकाज्येष्ठामूलाजपदगेषु च। गुरुभौमदिने रिक्ते तिथौ नाद्यान्नवौदनम्॥' तत्रैव—'वृश्चिके शुक्लपक्षे तु नवान्नं शस्यते बुधैः।' अतः कृष्णपक्षे नेति गौडाः। मैथिलास्तु 'अकृताग्रहणं चैव धान्यजातं नरोत्तम।' इति वाराहोक्तेः प्रतिधान्यं श्राद्धमाहुः। तन्न। जातपदस्य श्राद्धयोग्यसमूहपरत्वात्। हेमाद्रौ जातूकर्ण्यः—'ग्रहोपरागे च सूते जाते पित्र्ये गयायामयनद्वये च। नित्यं च शङ्खे च तथैव पद्मे दत्तं भवेन्निष्कसहस्रतुल्यम्॥ शङ्खं प्राहुरमावास्यां क्षीणचन्द्रां द्विजोत्तमाः। अष्टकासु भवेत्पद्मं तत्र दत्तं तथाऽक्षयम्॥' तत्रैव शङ्खः—'यदा विष्टिर्व्यतीपातो भानुवारस्तथैव च। पद्मकं नाम तत्प्रोक्तमयनाच्च चतुर्गुणम्॥'

याज्ञवल्क्यः—'अमावास्याष्टका वृद्धिः कृष्णपक्षोऽयनद्वयम्। द्रव्यं ब्राह्मणसंपत्तिर्विषुवत्सूर्यसंक्रमः॥ व्यतीपातो गजच्छाया ग्रहणं चन्द्रसूर्ययोः। श्राद्धं प्रति रुचिश्चैव श्राद्धकालाः प्रकीर्तिताः॥' कृष्णपक्षः सर्वोऽपि। 'शाकेनाप्यपरपक्षं नातिक्रमेत् मासि मासि वाऽशनम्' इति श्रुतेः। 'ऊर्ध्वं चतुर्थ्या यदहः संपद्यते ऋते चतुर्दशीम्' इति कात्यायनोक्तेः, मासिमासि कार्यम्, अपरपक्षस्यापराह्णः श्रेयान् इत्यापस्तम्बोक्तेश्च वीप्सया सर्वं कृष्णपक्षेषु नित्यम्। तेनोपसंहारान्महालयपरत्वं परास्तम्। अत्र प्रत्यहं, पञ्चम्यादि, यदहःसंपत्तिर्वा इति त्रयः पक्षाः। यदैकदिने श्राद्धं तदा दार्शं पृथगेव। याज्ञवल्क्येनामावास्यायाः पृथङ्निर्देशात्। एतेन 'कृष्णपक्षे यदहः संपद्यते अमावास्यायां तु विशेषेण' इति निगमोक्तेर्गुणोऽपरपक्षश्राद्धस्यामावास्येति शूलपाणिमतमपास्तम्। 'अशक्तौ दर्शेनापि मासिश्राद्धसिद्धिः' इति नारायणवृत्तिः। निरग्निकानां कस्मिंश्चिद्दिने। आहिताग्नेस्तु दर्श एव। 'न दर्शेन विना श्राद्धमाहिताग्नेर्द्विजन्मनः।' इति मनूक्तेः। सर्वकृष्णपक्षाशक्तौ मात्स्ये—'अनेन विधिना श्राद्धं त्रिरब्दस्येह निर्वपेत्। कन्याकुम्भवृषस्थेऽर्के कृष्णपक्षे च सर्वदा॥' कर्कोऽपि—'आहिताग्नेः संवत्सरे त्रिःश्राद्धनियमः' इति। देवलः—'अनेन विधिना श्राद्धं कुर्यात्संवत्सरं सकृत्। द्विश्चतुर्वा यथाश्राद्धं मासेमासे दिनेदिने॥' कृष्णपक्षेष्वपि महालयस्य श्रेष्ठत्वम्। तच्चोक्तं प्राक्। व्यतीपाते विशेषमाह हेमाद्रौ शङ्खः—'फलं लक्षं समुत्पत्तौ भ्रमणे कोटिरुच्यते। पतने शतकोट्यस्तु पाते वै दत्तमक्षयम्॥' ज्योतिःशास्त्रे—'द्वाविंशतिस्तथोत्पत्तौ

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भ्रमणे चैकविंशतिः । पतने दश नाड्यस्तु पतिते सप्त नाडिकाः ॥' अन्त्यौ च द्वौ व्यतीपातौ प्रागुक्तौ । हेमाद्रौ मार्कण्डेयः—'यदा च श्रोत्रियोऽभ्येति गृहं वेदविदग्निचित् । तेनैकेनापि कर्तव्यं श्राद्धं च विषुवच्छुभे ॥' इदं चापिण्डं कार्यमिति हेमाद्रिः । एतज्जीवत्पितृकोऽपि कुर्यात् । 'उद्वाहे पुत्रजनने पित्र्येष्ट्यां सौमिके मखे । तीर्थे ब्राह्मण आयाते षडेते जीवतः पितुः ॥' इति मैत्रायणीयपरिशिष्टोक्तेः ।

तिथिविशेषे फलविशेषो याज्ञवल्क्येनोक्तः—'कन्यां कन्यावेदिनश्च पशून्वै सत्सुतानपि । द्यूतं कृषिं च वाणिज्यं द्विशफैकशफांस्तथा ॥ ब्रह्मवर्चस्विनः पुत्रान्स्वर्णरौप्ये सकुप्यके । ज्ञातिश्रैष्ठ्यं सर्वकामानाप्नोति श्राद्धदः सदा ॥ प्रतिपत्प्रभृतिष्वेकां वर्जयित्वा चतुर्दशीम् ॥' एताः कृष्णपक्षस्था एव । महालये तु फलभूमेति पृथ्वीचन्द्रोदयः । पौर्णमास्यां हेमाद्रौ पितामहः—'अमावास्याव्यतीपातपौर्णमास्यष्टकासु च । विद्वान्श्राद्धमकुर्वाणो नरकं प्रतिपद्यते ॥' एतन्माघ्यादिपरम् । 'व्रीहिपाके च कर्तव्यं यवपाके च पार्थिव । पौर्णमासी तथा माघी श्रावणी च नृपोत्तम । प्रौष्ठपद्यामतीतायां तथा कृष्णत्रयोदशी । एतांस्तु श्राद्धकालान्वै नित्यानाह प्रजापतिः ॥' इति विष्णुधर्मोक्तेः । विष्णुः—'माघी प्रौष्ठपद्यूर्ध्वं कृष्णा त्रयोदशी' इति । अत्र माघी पौर्णमासीति कल्पतरुः । 'श्रावण्यूर्ध्वमपि मघायोगसंभवात्त्रयोदशीविशेषणम्' इति गौडाः । नक्षत्रेष्वपि याज्ञवल्क्यः—'स्वर्गं ह्यपत्यमोजश्च शौर्यं क्षेत्रं बलं तथा । पुत्रान्श्रैष्ठ्यं च सौभाग्यं समृद्धिं मुख्यतां शुभम् ॥ प्रवृत्तचक्रतां वापि वाणिज्यप्रभृतीनपि । अरोगित्वं यशो वीतशोकतां परमां गतिम् ॥ धनं वेदान्भिषक्सिद्धिं कुप्यं गामप्यजाविकम् । अश्वानायुश्च विधिवद्यः श्राद्धं संप्रयच्छति । कृत्तिकादिभरण्यन्तं स कामान्प्राप्नुयादिमान् ॥' फलान्तराण्यपि महाभारतकौर्मादेर्ज्ञेयानि । माधवीये मरीचिः—'कृत्तिकादिषु ऋक्षेषु श्राद्धे यत्फलमीरितम् । विष्कम्भादिषु योगेषु तदेव फलमिष्यते ॥' बृहस्पतिः—'आरोग्यं चैव सौभाग्यं शत्रूणां च पराजितम् । सर्वान्कामान्प्रियां विद्यां धनमायुर्यथाक्रमम् ॥ सूर्यादिदिवसेष्वेतच्छ्राद्धकृल्लभते फलम् । बवादिकरणेष्वेतच्छ्राद्धकृल्लभते फलम् ॥' अन्यानि च षण्णवतिश्राद्धादीनि प्रागुक्तानि । मार्कण्डेयपुराणे—'श्राद्धार्हद्रव्यसंपत्तौ तथा दुःस्वप्रदर्शने । जन्मर्क्षे ग्रहपीडासु श्राद्धं कुर्वीत चेच्छया ॥

अथ श्राद्धाधिकारिणः । चन्द्रिकायां सुमन्तुः—'मातुः पितुः प्रकुर्वीत संस्थितस्यौरसः सुतः । पैतृमेधिकसंस्कारं मन्त्रपूर्वकमादृतः ॥' तत्रैव

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

हेमाद्रौ शङ्खः—'पितुः पुत्रेण कर्तव्या पिण्डदानोदकक्रिया। पुत्राभावे तु पत्नी स्यात्तदभावे तु सोदरः॥' अत्र यद्यपि पुत्रपदं क्षेत्रजादिद्वादशविध पुत्रपरम्। ते च द्वादश पुत्रा याज्ञवल्क्येनोक्ताः—औरसो धर्मपत्नीजस्तत्समः पुत्रिकासुतः। क्षेत्रजः क्षेत्रजातस्तु सगोत्रेणेतरेण वा॥ गृहे प्रच्छन्न उत्पन्नो गूढजस्तु सुतः स्मृतः। कानीनः कन्यकाजातो मातामहसुतः स्मृतः॥ अक्षतायां क्षतायां वा जातः पौनर्भवस्तथा। दद्यान्माता पिता वा यं स पुत्रो दत्तको भवेत्॥ क्रीतश्च ताभ्यां विक्रीतः कृत्रिमः स्यात्स्वयंकृतः। दत्तात्मातुः स्वयं दत्तो गर्भे विन्नः सहोढजः॥ उत्सृष्टो गृह्यते यस्तु सोऽपविद्धो भवेत्सुतः। पिण्डदोंऽशहरश्चैषां पूर्वाभावे परः परः॥' इति तथापि 'दत्तौरसेतरेषां तु पुत्रत्वेन परिग्रहः। इति हेमाद्रावादित्यपुराणे कलावितरेषां पुत्रत्वनिषेधादौरसदत्तकपरमेव। यद्यपि 'पिण्डदोंशहरश्चैषां पूर्वाभावे परः परः।' इति याज्ञवल्क्योक्तेरौरसाभावे दत्तकप्राप्तिः, तथाप्यौरसाभावे पौत्रः तदभावे प्रपौत्रः तदभावे दत्तकादयः इति ज्ञेयम्। 'पुत्रेण लोकान् जयति पौत्रेणानन्त्यमश्नुते। अथ पुत्रस्य पौत्रेण ब्रध्नस्याप्नोति विष्टपम्॥' इति जीमूतवाहनधृतवसिष्ठहारीतशङ्खलिखितोक्तेः। 'लोकानन्त्यं दिवः प्राप्तिं पुत्रपौत्रप्रपौत्रकैः।' इति याज्ञवल्क्योक्तेश्च। 'पुत्रः पौत्रश्च तत्पुत्रः पुत्रिकापुत्र एव च। पत्नी भ्राता च तज्जश्च पिता माता स्नुषा तथा॥ भगिनी भागिनेयश्च सपिण्डः सोदकस्तथा। असन्निधाने पूर्वेषामुत्तरे पिण्डदाः स्मृताः॥' इति स्मृतिसंग्रहे प्रपौत्रानन्तरं पुत्रिकापुत्रोक्तेस्तत्समत्वाच्च दत्तकस्य। यद्यपि बृहस्पतिना—'पौत्रश्च पुत्रिकापुत्रः स्वर्गप्राप्तिकरावुभौ। रिक्थे च पिण्डदाने च समौ तौ परिकीर्तितौ॥' इति पौत्रसाम्यमुक्तम्। याज्ञवल्क्येन च 'औरसो धर्मपत्नीजस्तत्समः पुत्रिकासुतः।' इति औरससाम्यम्, तथापि 'लोके राजसमो मन्त्री' इत्यादौ किञ्चिन्न्यूने समशब्दप्रयोगात् गौणमुख्ययोः साम्यायोगाच्च स्तुत्यर्थं तत् नतु समविकल्प इति भ्रमितव्यम्। 'पुत्रः पौत्रः प्रपौत्रो वा भ्राता वा भ्रातृसन्ततिः। सपिण्डसन्ततिर्वापि क्रियार्हा नृप जायते॥ तेषामभावे सर्वेषां समानोदकसन्ततिः। मातृपक्षसपिण्डेन सम्बन्धो यो जलेन वा॥ कुलद्वयेऽपि चोच्छिन्ने स्त्रीभिः कार्या क्रिया नृप। तत्संघातगतैर्वापि तद्रिक्थात्कारयेन्नृपः॥' इति विष्णुपुराणाच्चेति। प्रपौत्रानन्तरं दत्तकादय इति पृथ्वीचन्द्रमदनरत्नकालादर्शादयः। मदनपारिजातेप्येवम्।

बोपदेवरुद्रधरादयस्तु-'पुत्रेषु विद्यमानेषु नान्यो वै कारयेत्स्वधाम्।'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

इति सुमन्तूक्तौ 'पितामहः पितुः पश्चात्पञ्चत्वं यदि गच्चति। पौत्रेणैकादशाहादि कर्तव्यं श्राद्धषोडशम् ॥ नैतत्पौत्रेण कर्तव्यं पुत्रवांश्चेत्पितामहः ॥' इति। छन्दोगपरिशिष्टे च पुत्रशब्दस्य द्वादशविधसुतपरत्वात् 'पूर्वाभावे परः परः' इत्यस्यानन्यपरत्वाच्च दत्तकाद्यभावे पौत्रादीनामप्यधिकार इत्याहुः, तद्गौणमुख्ययोः साम्यायोगाद्दत्तके सति पौत्रस्यांशहरत्वस्याप्यभावापत्तेः पुत्रपदस्यौरसमात्रपरत्वाच्चिन्त्यम् । अत एव निषेधादुपनीतपौत्रसत्त्वेप्यनुपनीतपुत्रस्यैवाधिकारः । 'औरसश्चानुपनीतोऽपि कुर्यात्' इत्याह। पृथ्वीचन्द्रोदये सुमन्तुः–'श्राद्धं कुर्यादवश्यं तु प्रमीतपितृको द्विजः। व्रतस्थो वाव्रतस्थो वा एक एव भवेद्यदि ॥' वृद्धमनुः–'कुर्यादनुपनीतोऽपि श्राद्धमेको हि यः सुतः। पितृयज्ञाहुतिं पाणौ जुहुयाद्ब्राह्मस्य सः ॥' एको मुख्य औरस इत्यर्थः। मनुः–'नह्यस्मिन्युज्यते कर्म किञ्चिदामौञ्जिबन्धनात्। नाभिव्याहारयेद्ब्रह्म स्वधानिनयनादृते ॥' ब्रह्म वेदः। सुमन्तुरपि–'नाभिव्याहारयेद्ब्रह्म यावन्मौञ्जी निबध्यते। मन्त्राननुपनीतोऽपि पठेदेवैक औरसः ॥' अयं मन्त्रपाठस्त्रिवर्षकृतचूडस्यैव 'अनुपेतोऽपि कुर्वीत मन्त्रवत् पैतमेधिकम्। यद्यसौ कृतचूडः स्याद्यदि स्याच्च त्रिवत्सरः ॥' इति सुमन्तूक्तेः। यत्तु व्याघ्रः–'कृतचूडस्तु कुर्वीत उदके पिण्डमेव च। स्वधाकारं प्रयुञ्जीत वेदोच्चारं न कारयेत् ॥' इति। यच्च स्मृतिसंग्रहे–'कृतचूडोऽनुपेतश्च पित्रोः श्राद्धं समाचरेत्। उदाहरस्वधाकारं न तु वेदाक्षराण्यसौ ॥' इति। तत्प्रथमवर्षचूडाविषयमिति माधवमदनरत्नपृथ्वीचन्द्राः। त्रिवर्षोर्ध्वं मन्त्रवत्त्वस्य विकल्प इति चन्द्रिकावोपदेवश्च। दत्तकादिपरो निषेध इति वयम्।

मदनरत्ने स्कान्दे–'यज्ञेषु मन्त्रवत्कर्म पत्नीकुर्याद्यथा नृप। तथौर्ध्वदैहिकं कर्म कुर्यात्सा धर्मसंस्कृता ॥' अशक्तौ तु कात्यायनः–'असंस्कृते तु पत्न्या च ह्यग्निदानं समन्त्रकम्। कर्तव्यमितरत्सर्वं कारयेदन्यमेव हि ॥' पुत्रश्च न जन्मतोऽधिकारी किन्तु वर्षोत्तरमित्याह कालादर्शः–'चौलादाद्याब्दिकादर्वाक् न कुर्यात्पैतृमेधिकम्। मदनरत्ने सुमन्तुरपि-'पुत्रश्चोत्पत्तिमात्रेण संस्कुर्यादृणमोचनात् ॥ पितरं नाब्दिकाच्चौलात्पैतृमेधेन कर्मणा ॥' एतच्चौरसस्यैव। दत्तकादीनां तूपनीतानामेवाधिकार इति कालादर्शः। पृथ्वीचन्द्रोदयेऽपि स्कान्दे–'पित्रोरनुपनीतोऽपि विदध्यादौरसः सुतः। और्ध्वदेहिकमन्ये तु संस्कृता श्राद्धकारिणः ॥' इति। अन्यत्रापि दर्शमहालयादावनुपनीतस्याधिकारोऽस्माभिः पूर्वमुक्तः। प्रपौत्राभावे दत्तकादय एकादश पुत्राः। तदभावे भर्तुः पत्नी तस्याश्च। सः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अपुत्रा शयनं भर्तुः पालयन्ती व्रते स्थिता। पत्न्येव दद्यात्तत्पिण्डं कृत्स्नमंशं लभेत च॥' इति वृद्धमनूक्तेः। 'भार्यापिण्डं पतिर्दद्याद्भर्त्रे भार्या तथैव च। श्वश्र्वादेश्च स्नुषा चैव तदभावे सपिण्डकाः॥' इति। पुत्राभावे तु पत्नी स्यात्पत्न्यभावे तु सोदरः।' इति च हेमाद्रौ शङ्खोक्तेः। पृथ्वीचन्द्रोदयस्तु—'कानीनगूढसहजपुनर्भूतनयाश्च ये। पत्न्यभावेऽधिकुर्युस्ते अप्रशस्ताः स्मृता हि ते॥' स्मृतिसंग्रहात् पत्न्यभावे कानीनादय इत्याह।

पत्युरपि सपत्नीपुत्रे सति नाधिकारः। 'पितृपत्न्यः सर्वा मातरः' इति सुमन्तूक्तेः। 'विदध्यादौरस पुत्रो जनन्या और्ध्वदेहिकम्। तदभावे सपत्नीजः क्षेत्रजाद्यास्तथा स्मृताः॥ तेषामभावे तु पतिस्तदभावे सपिण्डकाः॥' इति मदनरत्ने कात्यायनोक्तेश्च। 'बह्वीनामेकपत्नीनामेष एव विधिः स्मृतः। एका चेत्पुत्रिणी तासां सर्वासां पिण्डदस्तु सः॥ इति बृहस्पतिवचनाच्च। अपरार्केऽप्येवम्। तेन यच्छुद्धिविवेके उक्तं 'सत्यपि सपत्नीपुत्रे पत्युरेवाधिकारः'इति तन्निरस्तम्। यच्च तत्रैव कात्यायनः-' न भार्यायाः पतिर्दद्यादपुत्राया अपि क्वचित्।' यच्च विष्णुपुराणम्—'कुलद्वयेऽपि चोत्सन्ने स्त्रीभिः कार्या क्रिया नृप। इति, यच्च मार्कण्डेयपुराणम् 'सर्वाभावे स्त्रियः कुर्युः स्वभर्तृणाममन्त्रकम्।' इति तदासुरादिविवाहोढाविषयम्। 'धर्म्यैर्विवाहैरूढा या सा पत्नी परिकीर्तिता। क्रयक्रीता तु या नारी न सा पत्न्यभिधीयते॥ न सा दैवे न सा पित्र्ये दासीं तां मुनयो विदुः॥' इति माधवीये शातातपोक्तेः। यत्तु शुद्धिरत्नाकरः शूलपाणिश्च-'अपुत्रस्य च या पुत्री सापि पिण्डप्रदा भवेत्। तस्य पिण्डान्दशैकं वा एकाहेनैव निक्षिपेत्॥ इति जाबालोक्तेः। 'भर्तुर्धनहरा पत्नी तां विना दुहिता स्मृता। अङ्गादङ्गात्संभवति पुत्रवद् हिता नृणाम्॥' इति बृहस्पतिना दुहितुर्धनहारित्वोक्तेश्च 'पुत्राभावे कन्या तदभावे सपत्नीपुत्रः' इत्याहतुः। तत् पूर्वविरोधात् 'मातुर्दुहितरः शेषमृणात्ताभ्य ऋतेऽन्वये।' इति दुहितुर्मातृधनग्राहित्वेन पुत्रस्य तच्छ्राद्धानधिकारापत्तेश्चोपेक्ष्यम्। वचनं तु भ्रातृपुत्राद्यभावविषयम्। पत्न्यभावे अविभक्तस्य सोदरः पूर्वोक्तशङ्खवचनात् विभक्तस्य तु दुहिता धनहारित्वात्, पूर्वोक्तजाबालवचनाच्च। तत्राप्यूढानूढसमवाये ऊढैव। ऽदुहिता पुत्रवत्कुर्यान्मातापित्रोस्तु संस्कृता। आशौचमुदकं पिण्डमेकोद्दिष्टं सदा तयोः॥' इति भरद्वाजोक्तेः। तदभावे दौहित्रः धनहारित्वात्। 'मातापित्रोरुपाध्यायाचार्ययोरौर्ध्वदेहिकम्। कुर्वन्मातामहस्यापि व्रती न

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भ्रश्यते व्रतात् ॥' इति चन्द्रिकायां वृद्धमनूक्तेः। 'यथा व्रतस्थोऽपि सुतः पितुः कुर्यात्क्रियां नृप। उदकाद्यां महाबाहो दौहित्रोऽपि तथार्हति ॥' इत्यपरार्के भविष्योक्तेश्च। एतद्धनहारिण आवश्यक नान्यस्येत्याह तत्रैव स्कन्दः—'श्राद्धं मातामहानां तु अवश्यं धनहारिणा। दौहित्रेणार्थनिष्कृत्यै कर्तव्यं पूर्वमुत्तरम् ॥' इति। तेन दौहित्रोऽत्र पुत्रीकृत इति देवयाज्ञिकोक्तिः—परास्ता। अत्र पत्नीदौहित्रसमवायेंशहरत्वात्पत्न्येव कुर्यात्।

दौहित्रभ्रातृपुत्रसत्त्वे विभक्तस्य दौहित्रः, अविभागे भ्रातृपुत्रः। भ्रातृतत्पुत्रसत्त्वे कनिष्ठश्चेत् भ्रातैव ज्येष्ठश्चेत्तत्पुत्रः कुर्यादिति दाक्षिणात्यग्रन्थाः। हारलतादौ तु—'भ्रातुर्भ्राता स्वयं चक्रे तद्भार्या चेन्न विद्यते। तस्य भ्रातृसुतश्चक्रे यस्य नास्ति सहोदरः ॥' इति ब्राह्मोक्तेः। 'पत्नी कुर्यात्सुताभावे पत्न्यभावे सहोदरः।' इति कौर्माच्च ज्येष्ठभ्रातैव कुर्यान्न तत्पुत्रः। यत्तु 'नानुजस्य तथाग्रजः' इति तत्कनिष्ठभ्रातृसत्त्वविषयम्। यच्च मनुः—'सर्वेषामेकजातानामेकश्चेत्पुत्रवान्भवेत्। सर्वांस्तांस्तेन पुत्रेण पुत्रिणो मनुरब्रवीत् ॥' इति। तत्सहोदराभावविषयमित्युक्तम्। एतेन पुत्रत्वातिदेशोऽयम्। अतस्तस्मिन्सति एकादश पुत्राः प्रतिनिधयो न कार्याः। स एव पिण्डदोंऽशहरश्चेति वाचस्पतिमनुटीकाकल्पतरुरत्नाकरादयः परास्ताः। 'द्वादशविधपुत्राभावे पत्नीदुहितरः' इति याज्ञवल्क्योक्तेश्च। तस्माद्दत्तपुत्रप्रशंसेयमिति विज्ञानेश्वरः। अविभक्तविषयं वा। मदनरत्ने स्मृतिसंग्रहे—'पुत्रः कुर्यात्पितुः श्राद्धं पत्नी च तदसन्निधौ। धनहार्यथ दौहित्रस्ततो भ्राता च तत्सुतः ॥ भ्रात्रोः सहोदरो भ्राता कुर्याद्दाहादि तत्सुतः। ततस्त्वसोदरो भ्राता तदभावे च तत्सुतः ॥' इति। भ्रातृपुत्राभावे क्रमेण पितृमातृस्नुषास्वसृतत्पुत्रादयः धनहारित्वात्। भगिनीतत्सुतयोर्विशेषमाह मदनरत्ने कात्यायनः—'अनुजा अग्रजावापि भ्रातुः कुर्वीत संक्रियाम्। ततः स्वसोदरात्तद्वत्क्रमेण तनयस्तयोः ॥' अपरार्के कार्ष्णाजिनिः—'पुत्रः शिष्योऽथवा पत्नी पिता भ्राता स्नुषा गुरुः। स्त्रीहारी धनहारी च कुर्यात्पिण्डोदकक्रियाम् ॥' मार्कण्डेयपुराणे- 'पुत्रो भ्राता च तत्पुत्रः पत्नी माता तथा पिता। वित्ताभावेऽपि शिष्यश्च कुर्वीरन्नौर्ध्वदेहिकम् ॥' तेन धनहारी एतद्भिन्न इति कालादर्शः। अत्र पाठक्रमो न विवक्षितः पूर्ववाक्येष्वथ-ततःशब्दादिभिः श्रौतक्रमोक्तेः 'अज जिह्वाया अथ वक्षसः' इतिवत्।

पृथ्वीचन्द्रोदये वृद्धमनुः-'स्नुषास्वस्त्रीयतत्पुत्रज्ञातिसम्बन्धिबान्धवाः। पुत्राभावे तु कुर्वीरन्सपिण्डान्तं यथाविधि ॥' मार्कण्डेयपुराणे—'पुत्रा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

द्युत्सन्नबन्धोश्च सखापि श्वशुरस्य च । जामाता स्नेहवत्कुर्यादखिलं पैतृमेधिकम् ।।' चन्द्रिकायां वृद्धशातातपः—'मातुलो भागिनेयश्च स्वस्रीयो मातुलस्य च । श्वशुरस्य गुरोश्चैव सख्युर्मातामहस्य च ॥ एतेषां चैव भार्याणां स्वसुर्मातुः पितुस्तथा । श्राद्धमेषां तु कर्तव्यमिति वेदविदो विदुः ।।' शुद्धिविवेके पृथ्वीचन्द्रोदये च ब्राह्मे—'दत्तानां वाप्यदत्तानां कन्यानां कुरुते पिता । चतुर्थेऽहनि तास्तेषां कुर्वीरन्सुसमाहिताः ।। दत्ता वाग्दत्ताः । 'मातामहानां दौहित्राः कुर्वन्त्यहनि चापरे । तेऽपि तेषां प्रकुर्वन्ति द्वितीयेऽहनि सर्वदा ।। जामातुः श्वशुराश्चक्रुस्तेषां तेऽपि च संयताः । मित्राणां तदपत्यानां श्रोत्रियाणां गुरोस्तथा ।। भागिनेयसुतानां च सर्वेषां त्वपरेऽहनि । राज्ञोऽसति सपिण्डे तु निरपत्ये पुरोहितः ।। मन्त्री वा तदशौचं तु पुरा चीर्त्वा करोति सः ।।' अत्र द्वितीयाहादौ श्राद्धविधानमस्थिसञ्चयनपरम् । कालादर्शे—'दाहादिमन्त्रवत्पित्रोर्विदध्यादौरसः सुतः । तदभावे तु पौत्रश्च प्रपौत्रः पुत्रिकासुतः ।। दौहित्रो धनहारी च भ्राता तत्पुत्र एव च । पिता माता स्नुषा चैव स्वसा तत्पुत्र एव च ।। सपिण्डः सोदको मातुः सपिण्डश्च सहोदकः । स्त्री च शिष्यर्त्विगाचार्या जामाता च सखापि च ।। उत्सन्नबन्धो रिक्थेन कारयेदवनीपतिः ।।' गौतमः—'पुत्राभावे सपिण्डा मातृसपिण्डाः शिष्याश्च दद्युस्तदभावे ऋत्विगाचार्यौ' । यत्तु चन्द्रिकायां वृद्धशातातपः—'प्रीत्या श्राद्धं प्रकर्तव्यं सर्वेषां वर्णलिङ्गिनाम् ।' इति तत्सवर्णविषयम् ।' 'ब्राह्मणस्त्वन्यवर्णानां न कुर्यात्कर्म किञ्चन । कामाल्लोभाद्भयान्मोहात्कृत्वा तज्जातितां व्रजेत् ।।' इति ब्राह्मोक्तेः । 'न ब्राह्मणेन कर्तव्यं शूद्रस्याप्यौर्ध्वदेहिकम् । शूद्रेण वा ब्राह्मणस्य विना पारशवात्क्वचित् ।।' इति पारस्करोक्तेश्च । पारशवः ऊढशूद्रापुत्रः ।

अत्रेदं तत्त्वम् । सर्वत्र पुत्रादेः पूर्वस्याभावे पत्न्यादेरधिकार उक्तः । तत्राभावोऽसन्निधिर्नाशश्चोच्यते । अतएव पूर्वत्र 'असन्निधाने पूर्वेषाम्' इत्युक्तम् । तत्रासन्निधौ पत्न्यादेः सर्वाधिकारे प्राप्ते 'प्रोषितावसिते पुत्रः कालादपि चिरादपि । एकादशाद्याः क्रमशो ज्येष्ठस्य विधिवत्क्रियाः ।।' 'ज्येष्ठेनैव तु यत्कृतम्' इत्याद्यैर्देशान्तरेऽपवादात्पुत्रनाश एव पत्न्यादेः सपिण्डनादावधिकारः । असन्निधौ तु तत्पूर्वमेव नोर्ध्वम् । अतोऽनधिकारिणा भ्रात्रादिना कृतमप्यकृतमेवेति पुनरावर्तनीयम् । मासिकापकर्षोप्यावर्तनीयः । एकादशाहमासिकानि नावर्तन्ते । 'तज्ज्यायसापि कर्तव्यं सपिण्डीकरणं पुनः ।' इतिवदावृत्तिविधानाभावादिति केचित् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तन्न। अस्य निर्मूलत्वात्। अतस्तदपि कनिष्ठकृतमावर्तते 'वृद्धिश्रौत-पिण्डपितृयज्ञार्थं तु कृतं नावर्तते। नासपिण्ड्याऽग्निमान्पुत्रः पितृयज्ञं समाचरेत्। न पार्वणं नाभ्युदयं कुर्वन्न लभते फलम्॥ इति' 'वृद्धयु त्तर-निषेधनात्' इति 'भ्राता वा भ्रातृपुत्रो वा' इत्यादिहारीतादिवचोभ्यः कनिष्ठादेरप्यधिकारात्। यथात्र ज्येष्ठकर्तृत्वबाधस्तथा पुत्रकर्तृत्वस्यापि बाधः। सपिण्डने तु बहुवक्तव्यं तन्निर्णये वक्ष्यामः।

अधिकारविशेषेण क्रियाव्यवस्थोक्ता विष्णुपुराणे—'पूर्वाः क्रिया मध्यमाश्च तथा चैवोत्तराः क्रियाः। त्रिप्रकाराः क्रियाः ह्येतास्तासां भेदाञ्छृणुष्व मे॥ आदाहाद्द्वादशाहाच्च मध्ये याः स्युः क्रिया नृप। ताः पूर्वा मध्यमा मासि मास्येकोद्दिष्टसंज्ञिताः॥ प्रेते पितृत्वमापन्ने सपिण्डीकरणादनु। क्रियन्ते याः क्रियाः पुत्रैः प्रोच्यन्ते ता नृपोत्तराः॥ पितृमातृसपिण्डैश्च समानसलिलैस्तथा। तत्संघातगतैश्चैव राज्ञा वा धनहारिणा॥ पूर्वा मध्याश्च कर्तव्याः पुत्राद्यैरेव चोत्तराः। दौहित्रैर्वा नरश्रेष्ठ कार्यास्तत्तनयैस्तथा॥ मृताहनि तु कर्तव्याः स्त्रीणामप्युत्तराः क्रियाः॥' दौहित्रतत्पुत्रयोर्धनहारिणोरिदम्। एवमन्यस्य धनहर्तुः 'यश्चार्थहरः स पिण्डदायी' इत्यापस्तम्बोक्तेः। 'प्रेतस्य प्रेतकार्याणि अकृत्वा धनहारकः। वर्णानां यद्वधे प्रोक्तं तद्व्रतं प्रयतश्चरेत्॥' इति पृथ्वीचन्द्रोदये व्याघ्रपादोक्तेः। मदनरत्ने स्कान्देऽपि—'मलमेतन्मनु-ष्याणां द्रविणं यत्प्रकीर्तितम्।' इत्युक्त्वा 'ऋषिभिस्तस्य निर्दिष्टा निष्कृतिः पावनी परा। आदेहपतनात्तस्य कुर्यात्पिण्डोदकक्रियाम्॥' इत्युक्तम्। क्रियानिबन्धे कात्यायनः—'न च माता न च पिता कुर्यात्पुत्रस्य पैतृकम्। नाग्रजश्च तथा भ्राता भ्रातॄणां तु कनीयसाम्॥' पृथ्वीचन्द्रोदये बौधायनः—'पित्रा श्राद्धं न कर्तव्यं पुत्राणां तु कथञ्चन। भ्रात्रा चैव न कर्तव्यं भ्रातॄणां च कनीयसाम्॥ यदि स्नेहेन कुर्यातां सपिण्डी-करणं विना। गयायां तु विशेषेण ज्यायानपि समाचरेत्॥' अन्याभावे पित्रादिरपि कुर्यात्। 'उत्सन्नबान्धवं प्रेतं पिता भ्राताथवाग्रजः। जननी चापि संस्कुर्यान्महदेनोऽन्यथा भवेत्॥" इति सुमन्तूक्तेः।

ब्रह्मचारिणां तु शुद्धिविवेके पृथ्वीचन्द्रोदये च ब्राह्मे—'असमाप्त-व्रतस्यापि कर्तव्यं ब्रह्मचारिणः। श्राद्धं तु मातापितृभिर्नतु तेषां करोति सः॥' श्राद्धं मासिकाब्दिकादि सर्वं कार्यमित्यर्थः। नत्विति निषेधो-ऽन्यसत्त्वे। यत्तु छन्दोगपरिशिष्टे—'न त्यजेत्सूतके कर्म ब्रह्मचारी स्वयं क्वचित्। न दीक्षणात्परं यज्ञे न कृच्छ्रादि तपश्चरन्॥ पितर्यपि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मृते नैषां दोषो भवति कर्हिचित् । आशौचं कर्मणोऽन्ते स्यात्त्र्यहं या ब्रह्मचारिणाम् ॥' यच्च याज्ञवल्क्यः—'न ब्रह्मचारिणः कुर्युरुदकं पतितास्तथा ॥' इति तदप्यन्यसत्त्वे । अन्याभावे तु ब्रह्मचारिणापि कार्यं पूर्वोक्तवृद्धमनुवचनात् । 'आचार्यपित्रुपाध्यायान्निर्हृत्यापि व्रती व्रती । सङ्कटान्नं च नाश्नीयान्न च तैः सह संवसेत् ॥' इति तेनैवोक्तेः । 'ब्रह्मचारिणः शवकर्मिणो व्रतान्निवृत्तिरन्यत्र मातापित्रोः' इति वसिष्ठोक्तेः । अत्राशौचमेकाहं वक्ष्यामः । प्रागुपनयनान्मृतस्य तु पञ्चवर्षोत्तरं सपिण्डीकरणवर्ज्यं षोडशश्राद्धादि सर्वं कार्यमित्युक्तं देवजानीये । 'असंस्कृतानां भूमौ पिण्डं दद्यात्संस्कृतानां कुशेषु' इति प्रचेतोवचनाच्च । एतच्चाग्रे वक्ष्यामः ।

अविभक्तानां विशेषमाह पृथ्वीचन्द्रोदये मरीचिः—'बहवः स्युर्यदा पुत्राः पितुरेकत्र वासिनः । सर्वेषां तु मतं कृत्वा ज्येष्ठेनैव तु यत्कृतम् ॥ द्रव्येण चाविभक्तेन सर्वैरेव कृतं भवेत् ॥' ज्येष्ठस्य कर्तृत्वेऽपि सर्वे फलभागिन इत्यर्थः । तेन ये ब्रह्मचर्यपरान्नवर्जनादयः फलसंस्कारास्ते सर्वेषां भवन्तीति सिद्धम् । संसृष्टिनामप्येवम् तुल्यत्वात् । विभक्तानां विशेषमाहोशनाः—'नवश्राद्धं सपिण्डत्वं श्राद्धान्यपि च षोडश । एकेनैव तु कार्याणि संविभक्तधनेष्वपि ॥' लघुहारीतः—'सपिण्डीकरणान्तानि यानि श्राद्धानि षोडश । पृथङ्नैव सुताः कुर्युः पृथग्द्रव्या अपि क्वचित् ॥ ऊर्ध्वं सपिण्डीकरणात्सर्वे कुर्युः पृथक्पृथक् ॥' मदनरत्ने—विभक्तास्तु पृथक्कुर्युः प्रतिसंवत्सरादिकम् । एकेनैवाविभक्तेषु कृते सर्वैस्तु तत्कृतम् ॥' एतेनाब्दिकादिष्वविभक्तानामनियम इति वदन् शूलपाणिः परास्तः ।

दत्तकस्तु जनकस्य पुत्राद्यभावे दद्यान्न तत्सत्त्वे । 'गोत्ररिक्थे जनयितुर्न भजेद्दत्त्रिमः सुतः । गोत्ररिक्थानुगः पिण्डो व्यपैति ददतः स्वधा ॥' इति मनूक्तेः । इदं जनकस्य पुत्रसत्त्वविषयम् । एतच्च प्रवरमञ्जर्यां कात्यायनलौगाक्षिभ्यां स्पष्टमुक्तम् । अथ ये दत्तक्रीतकृत्रिमपुत्रिकापुत्राः परपरिग्रहेणानार्षेया जातास्ते द्व्यामुष्यायणा भवन्ति । यथा 'शौङ्गशैशिरीणां यानि चान्यान्येवं समुत्पन्नानि कुलानि भवन्ति' इत्यादिना द्वयोः पित्रोः प्रवरानुक्त्वोक्तम् । 'अथ यद्येषां स्वासु भार्यास्वपत्यं न स्याद्रिक्थं हरेयुः पिण्डं चैभ्यस्त्रिपुरुषं दद्युर्यद्युभयोर्न स्यादुभाभ्यामेव दद्युरेकस्मिञ्श्राद्धे पृथगुद्दिश्यैकपिण्डे द्वावनुकीर्तयेत्परिगृहीतारं चोत्पादयितारं चातृतीयात्पुरुषात्' इति । हेमाद्रौ कार्ष्णाजिनिः–'यावन्तः पितृवर्ग्याः स्युस्तावद्भिर्दत्तकादयः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्रेतानां योजमं कुर्युः स्वकीयैः पितृभिः सह॥ द्वाभ्यां सहाथ तत्पुत्राः पौत्रास्त्वेकेन तत्समम्। चतुर्थपुरुषे छन्दस्तस्मादेषा त्रिपूरुषी॥ साधारणेषु कालेषु विशेषो नास्ति वर्गिणाम्। मृताहे त्वेकमुद्दिश्य कुर्युः श्राद्धं यथाविधि॥' इति। अस्यार्थमाह हेमाद्रिः—दत्तकादयः जनकपालकयोः कुले प्रेतानां स्ववर्गीयैः सपिण्डनं कुर्युः। दत्तकानां पुत्रास्तु पितुर्दत्तकस्य पितृभ्यां जनकपालकाभ्यां स्वपितामहाभ्यां सपिण्डनं कुर्युः। तेषां पौत्राः स्वपितरं दत्तकेन पितामहेन तज्जनकेन च सपिण्डयेयुः। चतुर्थोऽपि तत्कुलस्थ एव। तेषां प्रपौत्रस्तु दत्तकस्य प्रपितामहस्य पालककुलस्थं चतुर्थं योजयेन्न वा। छन्द इच्छा। दर्शमहालयादौ तु द्वयोः पित्रोः पितामहयोः प्रपितामहयोर्वा श्राद्धं देयम्। तत्र द्वयोः पित्राद्योः पृथक्पिण्डदानं द्वयोरुद्देशेनैको वेति। अत्र केचित् आवयोरयमिति परिभाष्य यो दत्तस्तस्येदं द्वयोः पित्रोः श्राद्धम्। यस्त्वपरिभाष्य दत्तः स ग्रहीतुरेव स पालकायैव दद्यादित्याहुः। अत्र मूलं त एव प्रष्टव्याः।

वस्तुतस्तु जनकस्य पुत्रपत्न्याद्यभावे दत्तको द्वयोर्दद्यादन्यथा पालकायैव प्रागुक्तकात्यायनवचनात्। मानवीयमप्येतद्विषयमेव। गोत्रं तु श्राद्धे पालकस्यैव विवाहादौ तूभयोरित्यादि मत्कृतप्रवरदर्पणे ज्ञेयम्। यस्तु मूल्यक्रीतायां परभार्यायां दास्यां चोत्पन्नः स बीजिन एव दद्यात्। मूल्यं विना स्वयमुपनतायां तु क्षेत्रिण एव। तदुक्तं पृथ्वीचन्द्रोदये कौर्मे—'अनियोगात्सुतो यस्तु शुल्कतो जायते त्विह। प्रदद्याद्बीजिने पिण्डं क्षेत्रिणे तु ततोन्यथा॥' इति। क्षेत्रजादेर्विशेषस्तु कलौ तदभावान्नोच्यत इति दिक्। जारजानां विशेषमाहापरार्के नारदः—'जायन्ते त्वनियुक्तायामेकेन बहुभिस्तथा। अरिक्थभाजस्ते सर्वे बीजिनामेव ते सुताः॥ दद्युस्ते बीजिने पिण्डं माता चेच्छुल्कतो हृता। अशुल्कोपहृतायां तु पिण्डदा वोढुरेव ते॥

धर्मार्थे श्राद्धकरणे फलमाह चन्द्रिकायां शातातपः—'प्रीत्या श्राद्धं तु कर्तव्यं सर्वेषां वर्णलिङ्गिनाम्। एवं कुर्वन्नरः सम्यङ् महतीं श्रियमाप्नुयात्॥' गयायामपि तत्रैव ब्रह्मवैवर्ते—'आत्मजो वाथवान्योऽपि गयाशीर्षे यदा तदा। यन्नाम्ना पातयेत्पिण्डं तन्नयेद्ब्रह्मशाश्वतम्॥' एतच्च यदा फलभूमार्थिना द्विस्त्रिर्वा क्रियते तदा प्रेतशिलाश्राद्धवर्ज्यं कुर्यात्। तस्य प्रेतत्वविमोक्षार्थत्वात् तस्य च जातत्वादिति केचित्। वस्तुतस्तु संन्यासिश्राद्धवदत्रापि सर्वं कार्यम् साङ्गेऽधिकारादिति युक्तं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्रतीमः। संन्यस्तपित्रादिस्तु पितुः पित्रादिभ्यः सर्वश्राद्धेषु दद्यादित्युक्तं प्राक्। वक्ष्यते च जीवत्पितृकश्राद्धे।

अत्र स्त्रीशूद्राणां श्राद्धं मन्त्रवर्ज्यं तूष्णीं भवति। 'स्त्रीणाममन्त्रकं श्राद्धं तथा शूद्रासुतस्य च। प्राग्द्विजाश्च व्रतादेशात्ते च कुर्युस्तथैव तत् ॥' इति हेमाद्रौ मरीचिवचनात्। 'अयमेव विधिः प्रोक्तः शूद्राणां मन्त्रवर्जितः। अमन्त्रस्य तु शूद्रस्य विप्रो मन्त्रेण गृह्यते ॥' इति ब्राह्मोक्तेश्च। गृह्यते संबद्ध्यते। अस्य श्राद्धप्रकरणे पाठेऽपि परिभाषात्वान्न प्रकरणेन संकोचो युक्तः। तेन शूद्रस्य स्नानदानादावपि विप्रेण मन्त्रपाठः कार्यः। अमन्त्रस्येति विशेषणात्स्त्रिया अपीति शूलपाणिः। यत्तु तेनोक्तं 'मन्त्रजन्यनियमादृष्टसिद्धिस्तु नमस्कारेण अनुमतोऽस्य नमस्कारो मन्त्रः' गौतमोक्तेरिति। तन्न। दृष्टद्वारैव हि तत्प्राप्तिर्न स्वातन्त्र्येण। अन्यथा नखविपूतेष्ववघातजन्यादृष्टार्थं सोऽपि क्रियेतेति यत्किञ्चिदेतत्। तेन 'पितृणां नामगोत्रतः' इत्यादौ यत्र द्विजानामपि नाममन्त्र उक्तस्तत्र प्रतिप्रसवमात्रार्थं युक्तं न तिलावपनादावपि। अत्र केचित्। वैदिकमन्त्रो विप्रस्य, पौराणस्तु शूद्रैः पठनीयः। न हि वेदेष्वधिकारः क्वचिच्छूद्रस्य विद्यते। पुराणेष्वधिकारो मे दर्शितो ब्राह्मणैरिह ॥' इति तत्रैव पाद्मोक्तेरित्याहुः। गौडा अप्येवम्। तन्न। 'नाध्येतव्यमिदं शास्त्रं वृषलस्य तु सन्निधौ।' इति कौर्मे पुराणनिषेधेन वेदस्य दूरापास्तत्वात्। 'अध्येतव्यं ब्राह्मणेन वैश्येन क्षत्रियेण च। श्रोतव्यमेव शूद्रेण नाध्येतव्यं कदाचन ॥ श्रौतं स्मार्तं च वै धर्मं प्रोक्तमस्मिन्नृगोत्तम। तस्माच्छूद्रैर्विना विप्रं न श्रोतव्यं कदाचन ॥' इति तत्रैव पुराणाधिकारे भविष्योक्तेश्च। एतेन 'नाध्येतव्यम्' इति निषेधो मन्त्रेतरपुराणपर इति श्रीदत्तादिमतमपास्तम्। तेन पौराणमन्त्राणामेव विप्रेण पाठो न वैदिकानामिति सिद्धम्। द्विजद्विजस्त्रीणां स्त्रियस्तु सङ्कल्पमात्रं स्वयं कृत्वा वैदिकमन्त्रयुक्तं सर्वं विशेषः ब्राह्मणद्वारा कारयेयुरिति प्रयोगपारिजातः। अतएव स्त्रीणामित्यकृतविवाहस्त्रीपरमिति हेमाद्रिराह। 'अनुपनीतस्तु वैदिकमन्त्रयुक्तं सर्वं स्वयमेव कुर्यात्' इत्युक्तं प्राक्। यत्तु 'प्राग्द्विजाश्च व्रतादेशात्' इति तदशक्तविषयमचूडविषयं वा इति दिक्। शूद्रस्य तु सदामश्राद्धमेव। 'सदा चैव तु शूद्राणामामश्राद्धं विधीयते।' इति सुमन्तूक्तेः। पृथ्वीचन्द्रोदये मात्स्येऽपि—'एवं शूद्रोऽपि सामान्यं वृद्धिश्राद्धं च सर्वदा। नमस्कारेण मन्त्रेण कुर्यादामान्नवत्सदा ॥' तत्रैव वृद्धपराशरः—'आमान्नेन तु शूद्रस्य तूष्णीं तु द्विजपूजनम्। कृत्वा श्राद्धं तु निर्वाप्य सजातीनाश-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

येदथ ॥' स एव—'आमं शूद्रस्य पक्वान्नं पक्वमुच्छिष्टमुच्यते ।' हेमाद्रौ भविष्ये—'धर्मेप्सवस्तु धर्मज्ञा यदि शूद्राः प्रकुर्वते । अग्नौकरणमन्त्रश्च नमस्कारो विधीयते ॥ आवाहनादि कर्तव्यं यथा शूद्रेण तच्छृणु । देवानां देवनाम्ना तु पितृणां नामगोत्रतः ॥ पिण्डादीन्निर्वपेद्धीर नामतो गोत्रतस्तथा ॥' शूद्राणां गोत्राभावेऽपि काश्यपं गोत्रं ज्ञेयम् । 'तस्मादाहुः सर्वाः प्रजाः काश्यप्यः' इति श्रुतेः । 'गोत्रनाशे तु काश्यपः' इति व्यघ्रपादोक्तेश्चेति हेमाद्रिः । एवमन्यत्र गोत्राज्ञाने । एवं तर्पणादिषु च ज्ञेयम् । तत्रैव भविष्ये—'शूद्रस्तु गृहपाकेन न पिण्डान्निर्वपेत्तथा । सक्तु मूलं फलं तस्य पायसं वा भवेत्स्मृतम् ॥' गौतमः—'अनुमतोऽस्य नमस्कारो मन्त्रः' इति । 'देवताभ्यः पितृभ्यश्च' इत्ययं नमस्कारमन्त्र इति केचित् । विज्ञानेश्वरोप्येवमाह । हेमाद्रिस्तु—'शूद्रोप्यमन्त्रवत्कुर्यादनेन विधिना बुधः ।' इति मात्स्ये मन्त्रनिषेधान्नाममन्त्रेणेत्याह । पृथ्वीचन्द्रोदये स्कान्दे—'राजकार्ये नियुक्तस्य बन्धनिग्रहवर्तिनः । व्यसनेषु च सर्वेषु श्राद्धं विप्रेण कारयेत् ॥' यत्तु भारते राजधर्मेषु—'यवनाः किराता गान्धाराश्चीनाः शबरबर्बराः । शकास्तुषाराः कङ्काश्च पह्लवाश्चान्ध्रमद्रकाः ।' इत्युक्त्वा 'ब्रह्मक्षत्रप्रसूताश्च वैश्याः शूद्राश्च मानवाः । कथं धर्मांश्चरिष्यन्ति सर्वे विषयवासिनः ॥' इति चोक्त्वा 'वेदधर्मक्रियाश्चैव तेषां धर्मो विधीयते । पितयज्ञास्तथा कूपाः प्रपाश्च शयनानि च ॥ दानानि च यथाकालं द्विजेभ्यो विसृजेत्सदा ॥' तथा 'दक्षिणासर्वयज्ञानां दातव्या भूतिमिच्छता । पाकयज्ञा महार्हाश्च कर्तव्याः सर्वदस्युभिः ॥' इति म्लेच्छादीनां श्राद्धविधानं, तदपि सजातीयभोजनद्रव्यदानादिपरं न तु श्राद्धपरमिति ।'

इति श्रीमन्नारायणभट्टसूरिसूनुरामकृष्णभट्टात्मजकमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ श्राद्धाधिकारिनिर्णयः ।

अथ पितरः । हेमाद्रौ मात्स्यदेवलौ—'नामगोत्रं पितृणां तु प्रापकं हव्यकव्ययोः । अग्निष्वात्तादयस्तेषामाधिपत्ये व्यवस्थिताः ॥ नाममन्त्रास्तदादेशा भवान्तरगतानपि । प्राणिनः प्रीणयन्त्येव तदाहारत्वमागतान् ॥ देवो यदि पिता जातः शुभकर्मानुयोगतः । तस्यान्नममृतं भूत्वा देवत्वेप्यनुगच्छति ॥ गान्धर्वे भोगरूपेण पशुत्वे च तृणं भवेत् । श्राद्धान्नं वायुरूपेण नागत्वेप्युपतिष्ठति ॥ पानं भवति यक्षत्वे राक्षसत्वे तथामिषम् । दनुजत्वे तथा मद्यं प्रेतत्वे रुधिरोदकम् ॥ मनुष्यत्वेऽन्नपानादि नामाभोगकरं भवेत् ॥' अत्र पित्रादिशब्दैर्जनकादीनामेव देवतात्वमुच्यते न

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वस्वादीनाम्। 'असावेतत्ते इति यजनानस्य पित्रे' इति शतपथश्रुतेः। 'यस्य पिता प्रेतः स्यात्स पित्रे पिण्डं निधाय' इति विष्ण्वादिस्मृतेश्च। यत्तु मनुदेवलौ—'वसवः पितरो ज्ञेया रुद्रा ज्ञेयाः पितामहाः। प्रपितामहास्तथादित्याः श्रुतिरेषा सनातनी॥' यच्च याज्ञवल्क्यः—'वसुरुद्रादितिसुताः पितरः श्राद्धदेवताः।' तदभेदध्यानार्थम्। यानि तु हेमाद्रौ नन्दिपुराणे—'विष्णुः पितास्य जगतो दिव्यो यज्ञः स एव च। ब्रह्मा पितामहो ज्ञेयो ह्यहं च प्रपितामहः॥' इति। यच्च भविष्ये—'अनिरुद्धः स्वयं ज्ञेयः प्रद्युम्नश्च पिता स्मृतः। सङ्कर्षणस्तज्जनको वासुदेवस्तु तत्पिता॥' स्वयं कर्ता। यत्तु तत्रैव-'प्रथमो वरुणो ज्ञेयः प्राजापत्यस्तथापरः। तृतीयोऽग्निः स्मृतः पिण्डो ह्येष पिण्डविधिः स्मृतः॥' यच्च मनुः-'सोमपा नाम विप्राणां क्षत्रियाणां हविर्भुजः। वैश्यानामाज्यपा नाम शूद्राणां तु सुकालिनः॥' यच्चादित्यपुराणे—'मासाश्च पितरो ज्ञेया ऋतवश्च पितामहाः। संवत्सरः प्रजानां च सुष्ट्वेकः प्रपितामहः॥ यच्च नन्दिपुराणे—'अग्निष्वात्ता ब्राह्मणानां पितरः परिकीर्तिताः। राज्ञां बर्हिषदो नाम विशां काव्याः प्रकीर्तिताः॥ सुकालिनस्तु शूद्राणां व्यामा म्लेच्छान्त्यजादिषु॥' अत्रावाहनादिषु पित्रादयः समुच्चयेन विकल्पेन वा यथाचारं तत्तद्देवतारूपेण वाच्याः- इति हेमाद्र्यादयः।

हेमाद्रौ ब्राह्मे-पार्वणं कुरुते यस्तु केवलं पितृहेतुकम्। मातामह्यं न कुरुते पितृहा स प्रजायते॥ धौम्यः-पितरो यत्र पूज्यन्ते तत्र मातामहा ध्रुवम्। अविशेषेण कर्तव्यं विशेषान्नरकं व्रजेत्॥' अस्यापवादमाह कात्यायनः-कर्षूसमन्वितं मुक्त्वा तथाद्यं श्राद्धषोडशम्। प्रत्याब्दिकं तु शेषेषु पिण्डाः स्युः षडिति स्थितिः॥' कर्षूसमन्वितं सपिण्डीकरणम्। दर्शादौ सपत्नीकानामेव देवतात्वम्। 'स्वेन भर्त्रा समं श्राद्धं माता भुङ्क्ते सुधासमम्। पितामही च स्वेनैव तथैव प्रपितामही॥' इति तत्रैवोक्तेः। चन्द्रिकायां चतुर्विंशतिमते-'क्षयाहं वर्जयित्वैकं स्त्रीणां नास्ति पृथक् क्रिया। केचिदिच्छन्ति नारीणां पृथक् श्राद्धं महर्षयः॥ अन्वष्टकासु वृद्धौ च गयायां च क्षयेऽहनि। अत्र मातुः पृथक् श्राद्धमन्यत्र पतिना सह॥' इति कात्यायनोक्तेश्च अस्य निर्मूलतां वदन्तो गौडास्त्वज्ञा एव। 'अत्रभाग इत्यध्याहारः। अन्यथा सपतिकायै मात्रे इति प्रयोगापत्तेः। अत्र मातृशब्दो जनन्यामेव मुख्यः। तेन सपत्नमातृभ्यो न दद्यात्। एवं पितामह्यादिशब्दैः पितृजनन्यादय एवोच्यन्ते इति तत्सपत्नीभ्यो न देयम्' इति हेमाद्रिः। 'कारुण्येन तु महालयादौ देयम्' इति स एव।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ विश्वेदेवाः। हेमाद्रौ शङ्खबृहस्पती—इष्टिश्राद्धे क्रतूदक्षौ सत्यौ नान्दीमुखे वसू। नैमित्तिके कामकालौ काम्ये च धुरिलोचनौ॥ पुरूरवार्द्रवौ चैव पार्वणे समुदाहृतौ॥' तत्रैव 'उत्पत्तिं नाम चैतेषां न विदुर्ये द्विजातयः। अयमुच्चारणीयस्तैः श्लोकः श्रद्धासमन्वितैः॥ आगच्छन्तु महाभागा विश्वेदेवा महाबलाः। ये अत्र विहिताः श्राद्धे सावधाना भवन्तु ते॥' इति। इष्टिश्राद्धं श्राद्धं प्रति रुचिरित्युक्तम्' इति कल्पतरुः आधानादिकर्माङ्गमित्यन्ये। नैमित्तिकमेकोद्दिष्टम्। 'एकोद्दिष्टं तु यच्छ्राद्धं तन्नैमित्तिकमुच्यते।' इति भविष्योक्तेः। एतद्यद्यपि 'एकोद्दिष्टं देवहीनम्' इति तत्र विश्वेदेवनिषेधस्तथापि नवश्राद्धे द्वादशमासिके च कामकालौ ज्ञेयौ। नवश्राद्धं दशाहानि नवमिश्रं तु षड्ऋतून्। अतः परं पुराणं वै त्रिविधं श्राद्धमुच्यते॥ यस्मिन्नेव पुराणे वा विश्वेदेवा न लेभिरे। आसुरं तद्भवेच्छ्राद्धं वृषलं मन्त्रवर्जितम्॥' इति बह्वृचपरिशिष्टात्। एतच्च बह्वृचानामेव तेषामेवोक्तेः। अन्येषां तु 'नात्र विश्वेदेवाः' इति कात्यायनोक्तेस्तन्निषेध एवेति पृथ्वीचन्द्रोदयः। अन्ये तु नैमित्तिकं सपिण्डीकरणमाहुः। भविष्ये—यद्यप्येकोद्दिष्टं तच्छब्देनोक्तं, तथापि 'तदप्यदैवं कर्तव्यमयुग्मान्भोजयेद्द्विजान्।' इति तत्रैव विश्वेदेवनिषेधात्। यद्यपि सपिण्डीकरणेंऽशत एकोद्दिष्टत्वं तथापि 'सपिण्डीकरणश्राद्धं देवपूर्वं नियोजयेत्'। इति वचनात्तत्परत्वम्। हेमाद्रावादित्यपुराणे 'विश्वेदेवौ क्रतुर्दक्षः सर्वास्विष्टिषु कीर्तितौ। नित्ये नान्दीमुखे श्राद्धे वसू सत्यौ च पैतृके॥ नवान्नलम्भने देवौ कामकालौ सदैव हि। अपि कन्यागते सूर्ये काम्ये च धुरिलोचनौ। पुरूरवार्द्रवौ चैव विश्वेदेवौ तु पार्वणे॥' क्वचिद्विश्वेदेवापवादमाह हेमाद्रौ शातातपः—'नित्यं श्राद्धमदैवं स्यादेकोद्दिष्टं तथैव च। मातुःश्राद्धं च युग्मैः स्याददैवं प्राङ्मुखैः पृथक्॥ योजयेद्देवपूर्वाणि श्राद्धान्यन्यानि यत्नतः॥' नान्दीश्राद्धे भिन्नप्रयोगपक्षे मातुः श्राद्धमदैवमिति हेमाद्रिः।

अथ विप्राः। ते चोत्तममध्यमाधमभेदेन त्रिविधाः। तत्राद्याः। अत्र मदीयाः श्लोकाः। त्रिणाचिकेतस्त्रिमधुश्च बह्वृचोऽप्याथर्वणो याजुषसामगौ च। षडङ्गविच्च त्रिसुपर्णवेत्ताऽप्यथर्वशीर्ष्णोऽध्ययनेरतश्च॥ शतायुर्वेदार्थविदौ प्रवक्ता स्याद्ब्रह्मचारी च तथाग्निचिच्च। सीदद्वृत्तिः सत्यवाक्पूरुषैः स्वैर्मातापित्रोः पञ्चभिः ख्यातवंशः। पत्नीयुक्तो ज्येष्ठसामा पुराणवेत्ता पुत्री चेतिहासेष्वभिज्ञः। योगी भिक्षुः सामगो ब्रह्मवेत्ता पञ्चाग्निश्च श्रोत्रियस्तत्सुतो वा॥ शम्भुध्यायी श्रीशपादाब्जसेवी पान्थश्चैते

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तूत्तमाः संप्रदिष्टाः । भिक्षुर्योगी पान्थ एते त्वलभ्याभाग्याल्लब्धाश्चेत्तदाभोजनीयाः ॥ श्राद्धे विप्रेषूपविष्टेषु पश्चात्संप्राप्ताश्चेद्विप्रपङ्क्तौ तु भोज्याः ॥' अत्र मूलं हेमाद्रौ ज्ञेयम् । तत्रैव नारदः—'यो वै यतीननादृत्य भोजयेदितरान् द्विजान् । विजानन्वसतो ग्रामे कव्यं तद्याति राक्षसान् ॥' दीपकलिकयां दक्षः—'विना मांसेन मधुना विना दक्षिणयाशिषा । परिपूर्णं भवेच्छ्राद्धं यतिषु श्राद्धभोजिषु ॥' एतच्च ज्ञानिविषयम् । 'त्रिणाचिकेतस्त्रिसुपर्णो यजुर्वेदैकदेशौ तद्व्रतेन तदध्यायिनौ, यस्य सप्त पूर्वे सोमपाः स त्रिसुपर्णः' इति बोपदेवः । सत्रिमधुऋग्वेदैकदेशस्तदध्यायी । केचिन्नाचिकेतं चयनं त्रिः कृतवानित्यर्थमाहुस्तद्धेमाद्रिविरुद्धम् । हेमाद्रौ गौतमः—'युवभ्यो दानं प्रथमं पितृवयसः' इत्येके । मात्स्ये मनुः—'यश्च व्याकुरुते वाचं यश्च मीमांसतेऽध्वरम् । सामस्वरविधिज्ञश्च पङ्क्तिपावनपावनाः ॥' कौर्मे-'असमानप्रवरको ह्यसगोत्रस्तथैव च । असंबन्धी च विज्ञेयो ब्राह्मणः श्राद्धसिद्धये ॥ गारुडे— श्राद्धेषु विनियोज्यास्ते ब्राह्मणा ब्राह्मवित्तमाः । ये योनिगोत्रमन्त्रान्तेवासिसम्बन्धवर्जिताः ॥' मनुः—'तं मित्रं भोजयेच्छ्राद्धे धनैः कार्योऽस्य संग्रहः । नारिं न मित्रं यो विद्यात्तं तु श्राद्धे निमन्त्रयेत् ॥' द्वयोर्भ्रात्रोः श्राद्धे भोजनं निषिद्धम् । 'पितृपुत्रौ भ्रातरौ द्वौ निरग्निं गुर्विणीपतिम् । सगोत्रप्रवरं चैव श्राद्धेषु परिवर्जयेत् ॥' इति श्राद्धदीपकलिकायां जातूकर्ण्योक्तेः ॥

अथ मध्यमाः । हेमाद्रौ कौर्मगार्ग्यौ—'नैकगोत्रे हविर्दद्याद्यथा कन्या तथा हविः । अभावे ह्यन्यगोत्राणामेकगोत्रांस्तु भोजयेत् ॥ अत्र केचित्स्वशाखीयान्मुख्यानाहुः पठन्ति च । निमन्त्रयीत पूर्वेद्युः स्वशाखीयान्द्विजोत्तमान् ॥ स्वशाखीयद्विजाभावे द्विजानन्यान्निमन्त्रयेत् ॥' इति । इदं तु निर्मूलत्वाद्धेमाद्रिणा दूषितत्वाच्चोपेक्ष्यम् । मनुरपि—'यत्नेन भोजयेच्छ्राद्धे ब्राह्मणं वेदपारगम् । शाखान्तगमथाध्वर्युं छन्दोगं वा समाप्तिगम् ॥ एषामन्यतमो यस्य भुञ्जीत श्राद्धमर्चितः । पितृणां तस्य तृप्तिः स्याच्छाश्वती साप्तपौरुषी ॥' अत्र मामकः श्लोकः—'मातामहो मातुलभागिनेयदौहित्रजामातृगुरुस्वशिष्याः । ऋत्विक् च याज्यश्वशुरौ स्ववन्धुश्यालागुणाढ्यास्त्वनुकल्पभूताः ॥' बन्धवो मातृष्वसृपितृष्वसृमातुलपुत्रा इति बोपदेवः । अत्र मूलं हेमाद्रौ ज्ञेयम् । सगुणस्वस्रीयाद्यतिक्रमे दोष एव । सप्तपूर्वान्सप्तपरान्पुरुषानात्मना सह । अतिक्रम्य द्विजानेतान्नरके पातयेत्खग ॥ सम्बन्धिनस्तथा सर्वान्दौहित्रं विट्पतिं तथा । भागिनेयं विशेषेण तथा बन्धुं खगाधिप ॥' इति मदनरत्ने भविष्योक्तेः । अत

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

एव याज्ञवल्क्यः—'ब्राह्मणप्रातिवेश्यानामेतदेवानिमन्त्रणे' इति गुणयतिक्रमे दशपणं दण्डमाह । आसन्नमात्रपरमिदम् । मूर्खे तु न दोषः । 'ब्राह्मणातिक्रमो नास्ति मूर्खे चैव विवर्जिते । ज्वलन्तमग्निमुत्सृज्य नहि भस्मनि हूयते ॥' इति कात्यायनोक्तेः विप्रस्यापि दोषः । 'अविद्वान्प्रतिगृह्णानो भस्मीभवति दारुवत् ।' इति मनूक्तेः । अपरार्के अत्रिः—'षड्भ्यस्तु पुरुषेभ्योऽर्वागश्राद्धेयास्तु गोत्रिणः । षड्भ्यस्तु परतो भोज्याः श्राद्धे स्युर्गोत्रजा अपि ॥' एतच्च ब्राह्मणालाभे, अपिशब्दात् । असंभवे हेमाद्रौ गौतमः—'शिष्यांश्चैके सगोत्रांश्च भोजयेदूर्ध्वं त्रिभ्यो गुणवतः' । आपस्तम्बः—'ब्राह्मणान्भोजयेद्योनिगोत्रमन्त्रान्तेवास्यसम्बन्धिनः । गुणहान्यां तु परेषां समुदितः सोदर्योऽपि भोजयितव्यः ॥ एतेनान्तेवासिनो व्याख्याताः' इति । अत्र विशेषमाहात्रिः—'पिता पितामहो भ्राता पुत्रो वाथ सपिण्डकः । न परस्परमर्घ्याः स्युर्न श्राद्धे ऋत्विजस्तथा ॥ ऋत्विक्पुत्रादयोऽप्येते सकुल्या ब्राह्मणाः स्मृताः । वैश्वदेवे न योक्तव्या यद्येते गुणवत्तराः ॥ सगोत्रा न नियोक्तव्याः स्त्रियश्चैव विशेषतः ॥' इति ।

अथ वर्ज्याः । अत्र मामकाः श्लोकाः—'वर्ज्यान् प्रवक्ष्ये त्वथ रोगिवैरिहीनाधिकाङ्गान्कितवान्कृतघ्नान् । नक्षत्रशास्त्रेण च जीवमानान्भैषज्यभृत्त्यापि च राजभृत्यान् ॥ संगीतकायस्थकुसीदवृत्त्या वेदक्रयेणापि कवित्ववृत्त्या । देवार्चनेनापि च जीवमानान्स्वाध्यायदाराग्निसुतोज्झकाणान् ॥ दुर्वालखल्वाटकुनख्यधर्मिनटांश्च पौनर्भवकृष्णदन्तान् । अगारदाही गरदः समुद्रयायी च कुण्डाश्यथ कूटकारी ॥ बालांश्च योऽध्यापयते स्वपुत्रादवाप्तविद्यस्त्वथ कुण्डगोलौ । अग्रेदिधिष्वाः पतिरस्त्रकर्ता सोमक्रयी तैलिककेकराक्षौ ॥ युद्धाचार्यः पक्षिणां पोषकश्च स्रोतोभेत्ता वृक्षसंरोपकश्च । मेषाणां वा माहिषाणां च पुष्ट्या स्वीयस्त्रीषु प्रहितैर्यश्च जारैः । जीवत्यध्येतुश्च दत्तानुयोगाद्द्रव्यप्राप्त्यै वेदमुद्घाटयन्तः ॥ ग्रामयाजिपशुकेशविक्रयीस्तेनशिल्पिपतितवादकारकान् । अर्थकामरतशूद्रयाजकश्मश्रुहीनजटिमुण्डिनिर्घृणान् ॥ यस्य चैव गृहिणी रजस्वला स्वार्थपाकरतशापदायकान् । क्लीबकुष्ठयतिविलोहितेक्षणान्कुब्जवामनमृषाभिशापिनः ॥ पुत्रहीनमथ कूटसाक्षिणं प्रातिहाविकमयाज्ययाकम् । स्वात्मदातृपरिवेत्तृयाजकस्तेनहिंस्रकमुखान्विवर्जयेत् ॥' अत्र मूलं हेमाद्रौ पृथ्वीचन्द्रोदये च ज्ञेयम् । भारते दानधर्मेषु श्राद्धवर्ज्यविप्राधिकारे-'कितवो भ्रूणहा यक्ष्मी पशुपालो निराकृतिः । ग्राम्यप्रेष्यो वार्धुषिको गायकः सर्वविक्रयी ॥ सामुद्रिको राजभृत्यस्तैलिकः कूटकारकः । पित्रा

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विवदमानश्च यस्य चोपपतिर्गृहे ॥ अभिशस्तस्तथा स्तेनः शिल्पं यश्चोपजीवति । पर्वकारश्च सूची च मित्रध्रुक् पारदारिकः ॥ अव्रतानामुपाध्यायः काण्डपृष्ठस्तथैव च । श्वभिश्च यः परिक्रामेद्यः शुना दष्ट एव च ॥ परिवित्तिस्तथा स्तेनो दुश्चर्मा गुरुतल्पगः । कुशीलको देवलको नक्षत्रैर्यश्च जीवति ॥ ईदृशा ब्राह्मणा ज्ञेया अपाङ्क्तेया युधिष्ठिर ॥' तथा—'ऋणकर्ता च यो राजन्यश्च वार्धुषिको नरः ।' काण्डपृष्ठः स्वशाखां त्यक्त्वा परशाखयोपनीतस्तदध्यायो च । क्षत्रियवैश्यवृत्तौ नारदस्तु—'तस्यामेव तु यो वृत्तो ब्राह्मणो वसते रसात् । काण्डपृष्ठश्च्युतो मार्गात्सोऽपाङ्क्तेयः प्रकीर्तितः ॥' इत्याह । हारीतः—'शूद्रापुत्राः स्वयंदत्ता ये चैते क्रीतकाः सुताः । ते सर्वे मनुना प्रोक्ताः काण्डपृष्ठा न संशयः ॥'

अन्येऽपि हेमाद्रौ मात्स्ये—'त्रिशङ्कून्बर्बरानन्ध्रांश्चीनद्रविडकौङ्कणान् । कर्णाटकांस्तथाभीरान्कालीङ्गांश्च विवर्जयेत् ॥' तत्रैव सौरपुराणे—'अङ्गवङ्गकलिङ्गांश्च सौराष्ट्रान् गुर्जरांस्तथा । आभीरान्कौङ्कणांश्चैव ब्राह्मणांस्तु विवर्जयेत् ॥' चन्द्रिकायां यमः—'काणाः कुब्जाश्च षण्ढाश्च कृतघ्ना गुरुतल्पगाः । मानकूटास्तुलाकूटाः शिल्पिनो ग्रामयाजकाः ॥ राजभृत्यान्धबधिरमूकखल्वाटपङ्गवः । वणिजो मधुहर्तारो गरदा वनदाहकाः ॥ समयानां च भेत्तारः प्रदाने ये निवारकाः । प्रव्रज्योपनिवृत्ताश्च वृथा प्रव्रजिताश्च ये । यश्च प्रव्रजिताज्जातः प्रव्रज्यावसितश्च यः । अवकीर्णी च वीरघ्नो गुरुघ्नः पितृदूषकः ॥' श्राद्धकाशिकायां कात्यायनः—'द्विर्नग्नः कीलदुश्चर्मा शुक्लोऽतिकपिलस्तथा । छिन्नोष्ठश्छिन्नलिङ्गश्च नैव केतनमर्हति ॥' द्विर्नग्नः पित्रोर्वंशे त्रिपुरुषं विच्छिन्नवेदाग्निः । हेमाद्रौ मरीचिः—'अविद्धकर्णः कृष्णाश्च लम्बकर्णस्तथैव च । वर्जनीयाः प्रयत्नेन ब्राह्मणाः श्राद्धकर्मणि ॥' ब्राह्मे—'मूकश्च पूतिनासश्च छिन्नाङ्गश्चाधिकाङ्गुलिः । गलरोगी च गडुमान्स्फुटिताङ्गश्च सज्वरः ॥ षण्डतूपरमन्दांश्च श्राद्धे श्वेतान्विवर्जयेत् ॥' लम्बकर्ण चाह तत्रैव गोभिलः—'हनुमूलादधः कर्णौ लम्बौ तु परिकीर्तितौ । द्व्यङ्गुलौ त्र्यङ्गुलौ शस्ताविति शातातपोऽब्रवीत् ॥' चन्द्रिकायां यमः—'द्व्यङ्गुलातीतकर्णस्य भुञ्जते पितरो न तु ।' षण्डश्चात्र चन्द्रिकोक्तः सप्तविधो ग्राह्यः । यथा—'षण्ढको वातजः षण्ढः पण्डः क्लीबो नपुंसकः । कीलकश्चेति सप्तैव क्लीबभेदाः प्रकीर्तिताः ॥' पराशरमाधवीये तु चतुर्दशविधा उक्ताः । तेषां स्वरूपाणि तत्रैव ज्ञेयानि ।

चन्द्रिकायां शातातपः—'अग्निष्टोमादिभिर्यज्ञैर्ये यजन्त्यल्पदक्षिणैः । तेषामन्नं न भोक्तव्यमपाङ्क्तास्ते प्रकीर्तिताः ॥' एतच्च शक्तौ सत्याम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अपरार्के भारते—'अव्रती कितवः स्तेनः प्राणिविक्रयकोऽपि वा। पश्चाच्चेत्पीतवान्सोमं सोऽपि केतनमर्हति ॥' श्राद्धदीपकलिकायां यमः—'अपत्नीकश्च वर्ज्यः स्यात्सपत्नीकोऽप्यनग्निकः।' तत्रैवाश्वलायनः—'प्रतिमाविक्रयं यो वै करोति पतितस्तु सः। जीवनार्थं परास्थीनि धृत्वा तीर्थं प्रयाति यः ॥ मातापित्रोर्विना सोऽपि पतितः परिकीर्तितः ॥' तत्रैव जातूकर्ण्यः—'यत्र मातुलजोद्वाही यत्र वा वृषलीपतिः। श्राद्धं न गच्छेत्तद्विप्रः कृतं यच्च निरामिषम् ॥ पितृपुत्रौ भ्रातरौ द्वौ निरग्निं गुर्विणीपतिम्। सगोत्रप्रवरं चैव श्राद्धेषु परिवर्जयेत् ॥' बृहन्नारदीये—'शङ्खं चक्रं मृदा यस्तु कुर्यात्तप्तायसेन वा। स शूद्रवद्बहिःकार्यः सर्वस्माद्द्विजकर्मणः ॥ शङ्खचक्राद्यङ्कनं च गीतनृत्यादिकं तथा। एकजातेरयं धर्मो न जातु स्याद्द्विजन्मनः ॥' तेन ये तप्तमुद्रादिविधयस्ते शूद्रविषया इति। पृथ्वीचन्द्रोदये—'शिवकेशवयोरङ्कान् शूलचक्रादिकान्द्विजः। न धारयेत मतिमान्वैदिके वर्त्मनि स्थितः ॥' इत्याश्वलायनोक्तेश्च। नृत्यं चोदराद्यर्थं निषिद्धमिति श्रीधरस्वामी। अन्येऽपि निषेधा निबन्धेषु ज्ञेया इति दिक्।

अत्र विप्राणां ग्राह्यत्वोक्त्यैव तद्वर्ज्यानां निषेधे सिद्धे पुनर्वर्ज्यपरिगणनं निषिद्धवर्ज्यनिर्गुणप्राप्त्यर्थमिति विज्ञानेश्वरः। कुष्ठिकाणादेरपवादो हेमाद्रौ वसिष्ठः—'अपि चेन्मन्त्रविद्युक्तः शरीरैः पङ्क्तिदूषणैः। अदूष्यं तं यमः प्राह पङ्क्तिपावन एव सः ॥' क्वचिद्विप्राणां जातिमात्रेण ग्राह्यत्वमुक्तम्। चन्द्रिकायामाग्नेये—'यदि पुत्रो गयां गच्छेत्कदाचित्कालपर्ययात्। तानेव भोजयेद्विप्रान्ब्रह्मणा ये प्रकल्पिताः ॥ ब्राह्मणा कृतसंस्थाना विप्रा ब्रह्मसमाः स्मृताः ॥ अमानुषा गयाविप्रा ब्रह्मणा ये प्रकल्पिताः। तेषु तुष्टेषु सन्तुष्टाः पितृभिः सह देवताः ॥' तत्रैव—'न विचार्यं कुलं शीलं विद्या च तप एव च। पूजितैस्तैस्तु सन्तुष्टा देवाः सपितृगुह्यकाः ॥' गयायां निर्गुणा अपि ते एव भोज्या इति हेमाद्रौ। अक्षय्यवटश्राद्ध एव तन्नियमो नान्यत्रेति त्रिस्थलीसतौ पितामहचरणाः। पृथ्वीचन्द्रोदयेऽपि पाद्मे—'तीर्थेषु ब्राह्मणं नैव परीक्षेत कदाचन। अन्नार्थिनमनुप्राप्तं भोज्यं तं मनुरब्रवीत् ॥' स्कान्देऽपि—'ब्राह्मणान्न परीक्षेत तीर्थे क्षेत्रनिवासिनः।' मनुः—'न ब्राह्मणं परीक्षेत दैवे कर्मणि धर्मवित्। पित्र्ये कर्मणि तु प्राप्ते परीक्षेत प्रयत्नतः ॥' असंभवपरमेतदिति मेधातिथिः। हेमाद्रौ व्यासः—'गायत्रीसारमात्रोऽपि वरं विप्रः सुयन्त्रितः। नायन्त्रितश्चतुर्वेदी सर्वाशी सर्वविक्रयी ॥ काणाः कूटाश्च कुब्जाश्च दरिद्रा व्याधितास्तथा। सर्वे श्राद्धे नियोक्तव्या मिश्रिता वेदपारगैः ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ विप्रानिमन्त्रणम् । चन्द्रिकायां वाराहे—'वस्त्रशौचादिकर्तव्यं श्वः कर्तास्मीति जानता । स्थानोपलेपनं कृत्वा ततो विप्रान्निमन्त्रयेत् ।। दन्तकाष्ठं च विसृजेद्‍ब्रह्मचारी शुचिर्भवेत् ।।' तत्रैव प्रचेताः—'दक्षिणं चरणं विप्रः सव्यं वै क्षत्रियस्तथा । पादावादाय वैश्यो द्वौ शूद्रः प्रणतिपूर्वकम् ।।' बृहस्पतिः—'उपवीती ततो भूत्वा देवार्थं तु द्विजोत्तमान् । अपसव्येन पित्र्येऽथ स्वयं शिष्योऽथवा सुतः ।।' प्रचेताः—'सवर्णं प्रेषयेदाप्तं द्विजानां तु निमन्त्रणे ।' पृथ्वीचन्द्रोदये स्कान्दे—'राजकार्ये नियुक्तस्य बन्धनिग्रहवर्तिनः । व्यसनेषु च सर्वेषु श्राद्धं विप्रेण कारयेत् ।।' चन्द्रिकायां यमः—'अभोज्यं ब्राह्मणस्यान्नं वृषलेन निमन्त्रितम् । तथैव वृषलस्यान्नं ब्राह्मणेन निमन्त्रितम् ।।' तत्रैव पैठीनसिः—'सप्त पञ्च द्वौ वा श्रोत्रियान्निमन्त्रयेत्' । आश्वलायनसूत्रेऽपि—'एकैकमेकैकस्य द्वौ द्वौ त्रींस्त्रीन्वा वृद्धौ फलभूयस्त्वम्' । द्वाविति वृद्धिश्राद्धे । गौतमः—'नवावरान् भोजयेदयुजो वा यथोत्साहम्' । याज्ञवल्क्यः—'द्वौ दैवे प्राक् त्रयः पित्र्ये उदगेकैकमेव वा । मातामहानामप्येवं तन्त्रं वा वैश्वदेविकं ।।' दीपकलिकायां पराशरः—'संपत्तावथ पात्राणामेकैकस्य त्रयस्त्रयः । पित्रादेर्ब्राह्मणाः प्रोक्ताश्चत्वारो वैश्वदेविके' ।। वृद्धयाज्ञवल्क्यः—'दशैकं पञ्च वा विप्रान् पार्वणे विनियोजयेत् ।।' अत्र वैश्वदेवे द्वौ चतुरो वोपवेश्य पित्रादीनामेकैकस्य स्थाने एकं त्रीन् पञ्च सप्त नव वोपवेशयेदिति निष्कृष्टोर्थः । मनुः—'द्वौ दैवे पितृकृत्ये त्रीनेकैकमुभयत्र वा । भोजयेत्सुसमृद्धोऽपि न प्रसज्जेत विस्तरे ।। सत्क्रियां देशकालौ च शौचं ब्राह्मणसंपदः । पञ्चैतान्विस्तरो हन्ति तस्मान्नेहेत विस्तरम् ।।' पृथ्वीचन्द्रोदये शातातपः—'द्वौ दैवेऽथर्वणौ विप्रौ प्राङ्मुखावुपवेशयेत् । पित्र्ये तूदङ्मुखांस्त्रींश्च बह्वृचाध्वर्युसामगान् ।।' अत्यशक्तौ हेमाद्रौ देवलः—'एकेनापि हि विप्रेण षट्पिण्डं श्राद्धमाचरेत् । षडर्घ्यान् दापयेत्तत्र षड्भ्यो दद्यात्तथा हविः ।।' गोभिलः—'यद्येकं भोजयेच्छ्राद्धे छन्दोगं तत्र भोजयेत् । ऋचो यजूंषि सामानि त्रितयं तत्र विद्यते ।।'

अत्र वैश्वदेवे विशेषमाह तत्रैव वसिष्ठः—'यद्येकं भोजयच्छ्राद्धे दैवं तत्र कथं भवेत् । अन्नं पात्रे समुद्धृत्य सर्वस्य प्रकृतस्य च ।। देवतायतने कृत्वा ततः श्राद्धं समाचरेत् । प्रास्येदग्नौ तदन्नं तु दद्याद्वा ब्रह्मचारिणे ।। एतच्च सपिण्डीकरणवर्ज्यं ज्ञेयम् । 'नत्वेवैकं सर्वेषां काममनाद्ये' इत्याश्वलायनोक्तेः । अस्यार्थ उक्तो नारायणवृत्तौ—'आद्यं सपिण्डीकरणं तद्वर्ज्येषु श्राद्धेषु त्रयाणामेकं भोजयेत् । सपिण्डीकरणे तु नियतं त्रिभिर्भवितव्यमिति । अनाद्ये पार्वणवर्जिते वा अभोजने आमहेमश्राद्धादौ वा । अन्ना-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भावे चेति व्याख्यान्तरं तत्रैव ज्ञेयम्। कारिकापि—'दैवे पित्र्येऽथ वैकैकं सपिण्डीकरणं विना।' इति। अत्रैकविप्रे साग्नेर्विशेषमाह पृथ्वीचन्द्रोदये प्रचेताः—'एकस्मिन् ब्राह्मणे दैवे साग्नेरग्निर्भवेत्सदा। अनग्नेः कुशमुष्टिः स्याच्छ्राद्धकर्मणि सर्वतः॥' सर्वथा विप्रालाभे तत्रैव हेमाद्रौ च सत्यव्रतः—'निधाय दर्भनिचयमासनेषु समाहितः। प्रैषानुप्रेषसंयुक्तं सर्वं श्राद्धं प्रकल्पयेत्॥' 'अत्रानन्यभावात्सत्रे इव ऋत्विक्कार्ये यजमानविधौ न दक्षिणा' इति केचित्। तन्न। अदृष्टार्थाया दक्षिणायाः प्राप्तेः। 'सर्वं तत्त्रिजटे तुभ्यं यच्च श्राद्धमदक्षिणम्।' इति पाद्मात्। 'विदध्याद्धौत्रमन्यश्चेद्दक्षिणार्धहरो भवेत्। स्वयं चेदुभयं कुर्यादन्यस्मै प्रतिपादयेत्॥' इति छन्दोगपरिशिष्टाच्च। एवं यतिश्राद्धेऽपि कात्यायनः—'यज्ञवस्तुनि मुष्टौ च स्तम्भे दर्भवटौ तथा। दर्भसंख्या न विहिता विष्टरास्तरणेषु च॥' मातृश्राद्धे तु विप्रालाभे सुवासिन्योऽपि भोजनीया इत्याहापरार्के वृद्धवसिष्ठः—'मातृश्राद्धे तु विप्राणामलाभे पूजयेदपि। पतिपुत्रान्विता भव्या योषितोऽष्टौ कुलोद्भवाः॥' इति। अष्टाविति वृद्धिश्राद्धविषयम्।

पाद्मे उत्तरखण्डे—'सकृदभ्यर्चितं लिङ्गं शालग्रामशिलां च यः। पीठे संस्थापयित्वा तु श्राद्धं च कुरुते नरः॥ पितरस्तस्य तिष्ठन्ति कल्पकोटिशतं दिवि॥' चन्द्रिकायां मात्स्ये—'पठन्निमन्त्र्य नियमान् श्रावयेत्पैतृकान् बुधः। अक्रोधनैः शौचपरैः सततं ब्रह्मचारिभिः। भवितव्यं भवद्भिश्च मया च श्राद्धकारिणा॥' यत्तु मनुः—'सर्वायासविनिर्मुक्तैः कामक्रोधविवर्जितैः। भवितव्यं भवद्भिर्नः श्वोभूते श्राद्धकर्मणि॥' इति तत्पूर्वेद्युर्निमन्त्रणपरं न तदहः। तत्रैव देवलः—'असंभवे परेद्युर्वा ब्राह्मणांस्तान्निमन्त्रयेत्। अज्ञातीनसमानार्षानयुग्मानात्मशक्तितः॥' कात्यायनः—'अनिन्द्येनामन्त्रितो नापक्रामेत्केतनं गृह्यशक्तः।'

अथ श्राद्धकर्तृभोक्तृनियमाः। तत्र निमन्त्रितविप्रत्यागेऽपरार्के यमः—'केतनं कारयित्वा तु योऽतिपातयति द्विजम्। ब्रह्महत्यामवाप्नोति शूद्रयोनौ च जायते॥ आमन्त्र्य ब्राह्मणं यस्तु यथान्यायं न पूजयेत्। अतिकृच्छ्रासु घोरासु तिर्यग्योनिषु जायते॥' प्रमादात्त्यागे तु हारीतः—प्रमादाद्विस्मृतं ज्ञात्वा प्रसाद्यैनं प्रयत्नतः। तर्पयित्वा यथान्यायं सर्वं तत् फलमश्नुते॥' प्रमादाभावे तु नारायणः—'एतस्मिन्नेनसि प्राप्ते ब्राह्मणो नियतः शुचिः। यतिचान्द्रायणं कृत्वा तस्मात्पापात्प्रमुच्यते॥' यमः—'आमन्त्रितस्तु यो विप्रो भोक्तुमन्यत्र गच्छति। नरकाणां शतं गत्वा चाण्डालेष्वभिजायते॥' तत्रैव देवलः—'पूर्वं निमन्त्रितोऽन्येन कुर्याद-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

न्यंप्रतिग्रहम् । भुक्ताहारोऽथवा भुङ्क्ते सुकृतं तस्य नश्यति ॥' यदि विप्रो विलम्बेत तदोक्तमादित्यपुराणे—'आमन्त्रितश्चिरं नैव कुर्याद्विप्रः कदाचन । देवतानां पितॄणां च दातुरन्नस्य चैव हि ॥ चिरकारी भवेद्द्रोही पच्यते नरकाग्निना ॥' पृथ्वीचन्द्रोदये यमः—'निमन्त्रितस्तु यो विप्रो ह्यध्वानं याति दुर्मतिः । भवन्ति पितरस्तस्य तं मासं पांसुभोजनाः ॥ आमन्त्रितस्तु यः श्राद्धे हिंसां वै कुरुते द्विजः । पितरस्तस्य तं मासं भवन्ति रुधिराशनाः ॥ आमन्त्रितस्तु यः श्राद्धे भारमुद्वहते द्विजः । पितरस्तस्य तं मासं भवन्ति स्वेदभोजनाः ॥ निमन्त्रितस्तु यो विप्रः प्रकुर्यात्कलहं यदि । पितरस्तस्य तं मासं भवन्ति मलभोजनाः ॥

शङ्खः—निमन्त्रितस्तु यः श्राद्धे मैथुनं सेवते द्विजः । श्राद्धं दत्त्वा च भुक्त्वा च युक्तः स्यान्महतैनसा ॥' मैथुनं ऋतावपि निषिद्धम् । 'ऋतुकाले नियुक्तो वै नैव गच्छेत्स्त्रियं क्वचित् । तत्र गच्छन्नवाप्नोति ह्यनिष्टानि फलानि तु ॥' इति तत्र माधवीये च वृद्धमनूक्तेः । श्राद्धं करिष्यन् कृत्वा वा भुक्त्वा वापि निमन्त्रितः । उपोष्य च तथा भुक्त्वा नोपेयाच्च ऋतावपि ॥ भोक्ष्यन् करिष्यन् श्वः श्राद्धं पूर्वरात्रौ प्रयत्नतः । व्यवायं भोजनं चापि ऋतावपि विवर्जयेत् ॥' इति तत्रैवाश्वलायनोक्तेश्च । विज्ञानेश्वरेण तु श्राद्धे ऋतौ गच्छतोऽपि न दोष इत्युक्तं तत्त्वगतिकगतित्वे ज्ञेयम् । बृहस्पतिः—'द्विनिशं ब्रह्मचारी स्याच्छ्राद्धकृद्ब्राह्मणैः सह । अन्यथा वर्तमानौ तु स्यातां निरयगामिनौ ॥ पुनर्भोजनमध्वानं भारमायासमैथुनम् । श्राद्धकृच्छ्राद्धभुक् चैव सर्वमेतद्विवर्जयेत् । स्वाध्यायं कहलं चैव दिवास्वापं तथैव च ॥' यत्तु श्राद्धकारिकायां पुराणसमुच्चये—'कृत्वा तु रुधिरस्रावं न विद्वान् श्राद्धमाचरेत् । एकं द्वे त्रीणि वा विद्वान् दिनानि परिवर्जयेत् ॥' इतिन्निर्मूलम् । पृथ्वीचन्द्रोदये यमः—'पुनर्भोजनमध्वानं भाराध्ययनमैथुनम् । संध्यां प्रतिग्रहं होमं श्राद्धभोक्ताऽष्ट वर्जयेत् ॥' इति । संध्यानिषेधः प्रायश्चित्तात् पूर्वं ज्ञेयः । यथाहोशनाः—दशकृत्वः पिबेदापो गायत्र्या श्राद्धभुक् द्विजः । ततः संध्यामुपासीत जपेच्च जुहुयादपि ॥' गौडास्तु—'सायंसंध्यां परान्नं च छेदनं च वनस्पतेः । अमावास्यां न कुर्वीत रात्रिभोजनमेव च ॥ द्यूतं च कलहं चैव सायंसन्ध्यां दिवाशयम् । श्राद्धकर्ता च भोक्ता च पुनर्भुक्तिं च वर्जयेत्' इति कामधेनौ वाराहाद्युक्तेः—श्राद्धकर्तुरपि सायंसंध्यानिषेधमाहुः । शिष्टास्तु निर्मूलत्वमाहुः । होमनिषेधस्तु स्वाविषयः । 'सूतके च प्रवासे च अशक्तौ श्राद्धभोजने । एवमादिनिमित्तेषु हावयेन्न तु हापयेत् ॥' इति छन्दोगपरिशिष्टात् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तत्रैवादित्यपुराणे—'निमन्त्रितस्तु न श्राद्धे कुर्याद्भार्यादिताडनम् ।' चन्द्रिकायां प्रचेताः—'श्राद्धभुक् प्रातरुत्थाय प्रकुर्याद्दन्तधावनम् । श्राद्धकर्ता न कुर्वीत दन्तानां धावनं बुधः ।।' हेमाद्रौ जाबालिः—'दन्तधावनताम्बूले तैलाभ्यङ्गमभोजनम् । रत्यौषधपरान्नं च श्राद्धकृत्सप्त वर्जयेत् ।।' इति । विष्णुरहस्ये—'श्राद्धोपवासदिवसे खादित्वा दन्तधावनम् । गायत्र्या शतसंपूतमम्बु प्राश्य विशुध्यति ।। पुनर्भोजनमध्वानं यानमायासमैथुनम् । दानप्रतिग्रहौ होमं श्राद्धभुक् त्वष्ट वर्जयेत् ।। सोमोत्पत्तौ—'वनस्पतिगते सोमे यस्तु हिंस्याद्वनस्पतिम् । घोरायां भ्रूणहत्यायां युज्यते नात्र संशयः ।।' एतद्विहितेध्मादिव्यतिरेकेण । वनस्पतिगते सोमेऽनड्डुहो यस्तु वाहयेत् । नाश्नन्ति पितरस्तस्य दश वर्षाणि पञ्च च ।। वनस्पतिगते सोमे मन्थानं यस्तु कारयेत् । गावस्तस्य प्रणश्यन्ति चिरकालमुपस्थिताः ।।' वनस्पतिगतस्वरूपमाह पृथ्वीचन्द्रोदये व्यासः—'त्रिमुहूर्तं वसेदर्के त्रिमुहूर्तं वसेज्जले । त्रिमुहूर्तं वसेद्गोषु त्रिमुहूर्तं वनस्पतौ ।।' कालिकायां वृद्धमनुः—निमन्त्र्य विप्रांस्तदहर्वर्जयेन्मैथुनं क्षुरम् । प्रमत्ततां च स्वाध्यायं क्रोधाशौचे तथानृतम् ।।' केचिन्निमन्त्रणात्पूर्वं शुद्ध्यर्थं पूर्वेद्युः क्षौरं कुर्वन्ति तत्र मूलं मृग्यम् । मरीचिः—'षष्ठ्यां पर्वसु पक्षादौ रिक्ताभद्रातिथिष्वपि । पाते श्राद्धे व्रताहे च क्षौरं वर्ज्यं निशासु च ।।' यदा कर्तुरशक्त्या तत्पुत्रशिष्यादिः श्राद्धं करोति, तदा कर्त्रा प्रतिनिधिना च प्रागुक्तनियमाः कार्याः । 'न शक्नोति स्वयं कर्तुं यदा ह्यनवकाशतः । श्राद्धं शिष्येण पुत्रेण तदान्येनापि कारयेत् ।। नियमाना चरेत्सोऽपि नियतांश्च वसुन्धरे । यजमानोऽपि तान्सर्वानाचरेत्सुसमाहितः ।।' इति हेमाद्रौ वाराहोक्तः । स्त्रियास्तु पाद्मे-'मुक्तकच्छा तु या नारी मुक्तकेशी तथैव च । हसते वदते चैव निराशाः पितरो गताः ।।' आश्वलायनः-'श्राद्धेह्नि भोजयेद्वास्तौ न बालानपि यत्नतः । प्राक्पिण्डदानाद्गन्धाद्यैर्नालंकुर्यात्स्वविग्रहम् ।।' वास्तौ गृहे ।

अथ श्राद्धवस्तूनि । तत्रादौ कुशाः पृथ्वीचन्द्रोदये दक्षः-'समित्पुष्पकुशादीनां द्वितीयः परिकीर्तितः' अष्टधा भक्ते दिने द्वितीयो भाग इत्यर्थः । तत्रैव यमः-'समूलस्तु भवेद्दर्भः पितृणां श्राद्धकर्मणि । मूलेन लोकान् जयति शक्रस्य सुमहात्मनः।।' व्यासः-'तर्पणादीनि कर्माणि पितृणां यानि कानिचित् । तानि स्युर्द्विगुणैर्दर्भैः सप्तपत्रैर्विशेषतः ।। शालङ्कायनः-'सपिण्डीकरणं यावदृजुदर्भैः पितृक्रिया । सपिण्डीकरणादूर्ध्वं द्विगुणैर्विधिवद्भवेत् ।।' शङ्खः—'अनन्तर्गर्भिणं साग्रं कौशं द्विदलमेव च । प्रादेशमात्रं विज्ञेयं पवित्रं यत्र कुत्रचित् ।।' हारीतः—

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'पवित्रं ब्राह्मणस्यैव चतुर्भिर्दर्भपिञ्जुलैः। एकैकं न्यूनमुद्दिष्टं वर्णे वर्णे यथाक्रमम् ॥' स्मृत्यर्थसारे—'सर्वेषां वा भवेद्द्वाभ्यां पवित्रं ग्रन्थितं नवम् ॥' रत्नावल्याम्—'द्वयोस्तु पर्वणोर्मध्ये पवित्रं धारयेद्बुधः ॥' हेमाद्रौ स्कान्दे—'अनामिकाधृता दर्भा ह्येकानामिकयापि वा। द्वाभ्यामनामिकाभ्यां तु धार्ये दर्भपवित्रके ॥' पवित्राभावे तु तत्रैव सुमन्तुः—'समूलाग्रौ विगर्भौ तु कुशौ द्वौ दक्षिणे करे। सव्ये चैव तथा त्रीन्वै बिभृयात्सर्वकर्मसु ॥' बौधायनः—'हस्तयोरुभयोर्द्वौ द्वावासनेऽपि तथैव च।' दर्भग्रहणे मन्त्रमाह शङ्खः—'विरिञ्चिना सहोत्पन्न परमेष्ठीतिसर्गजः। नुद पापानि सर्वाणि मम स्वस्तिकरो भव ॥' स्मृत्यर्थसारे—'हुंफट्कारेण मन्त्रेण सकृच्छित्त्वा समुद्धरेत्।' भारद्वाजः—'प्रेतक्रियार्थं पित्रर्थमभिचारार्थमेव च। दक्षिणाभिमुखश्छिन्द्यात्प्राचीनावीतिको द्विजः ॥' कुशाभावेऽपरार्के सुमन्तुः—'कुशाः काशाः शरो गुन्द्रो यवा दूर्वाथ बल्वजाः। गोकेशमुञ्जकुन्दाश्च पूर्वाभावे परः परः ॥' काशादौ विशेषमाह शङ्खः—'काशहस्तस्तु नाचामेत्कदाचिद्विधिशङ्कया। प्रायश्चित्तेन युज्येत दूर्वाहस्तस्तथैव च ॥' पृथ्वीचन्द्रोदये यमः—'मासिमास्युद्धृता दर्भा मासिमास्येव चोदिताः।' षट्त्रिंशन्मते—'मासेन स्यादमावास्या दर्भो ग्राह्यो नवः स्मृतः।' गृह्यपरिशिष्टे—'ये च पिण्डाश्रिता दर्भा यैः कृतं पितृतर्पणम्। अमेध्याशुचिलिप्ता ये तेषां त्यागो विधीयते ॥' लघुहारीतः—पथि दर्भाश्रिता दर्भा ये दर्भा यज्ञभूमिषु। स्तरणासनपिण्डेषु षट् कुशान् परिवर्जयेत् ॥ ब्रह्मयज्ञे च ये दर्भा ये दर्भाः पितृतर्पणे। धृता मूत्रपुरीषाभ्यां तेषां त्यागो विधीयते ॥' हेमाद्रौ—'अन्यानि च पवित्राणि कुशदूर्वात्मकानि च।' हेमात्मकपवित्रस्य ह्येकां नार्हन्ति वै कलाम् ॥'

अथ हविः। हेमाद्रौ प्रचेताः—'कृष्णमाषास्तिलाश्चैव श्रेष्ठाः स्युर्यवशालयः। महायवा व्रीहियवास्तथैव च मधूलिकाः ॥ कृष्णाः श्वेताश्च लोहाश्च ग्राह्याः स्युः श्राद्धकर्मणि ॥' महायवा वेणुबीजम्। मधूलिका यावनाला इति हेमाद्रिः कल्पतरुश्च। भारते—'वर्धमानतिलं श्राद्धमक्षय्यं मनुरब्रवीत्। सर्वकामैः स यजते यस्तिलैर्यजते पितॄन् ॥' चन्द्रिकायां देवलः—'इष्टापूर्ते मृताहे च दर्शवृद्ध्यष्टकासु च। पात्रेभ्यस्तेषु कालेषु देयं नैव कुभोजनम् ॥' सायणीये—'अगोधूमं च यच्छ्राद्धं माषमुद्गविवर्जितम्। तैलपक्वेन रहितं कृतमप्यकृतं भवेत् ॥' हेमाद्रावत्रिः—'अगोधूमं च यच्छ्राद्धं कृतमप्यकृतं भवेत्।' तत्रैव ब्राह्मे—यवैर्व्रीहितिलैर्माषैर्गोधूमैश्चणकैस्तथा। सन्तर्पयेत् पितॄन् मुद्गैः श्यामाकैः सर्षपद्रवैः ॥ नीवारैर्हरिश्या-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

माकैः प्रियङ्गुभिरथार्चयेत् ॥' हेमाद्रौ कार्ष्णाजिनिः—'यदिष्टं जीवतश्चासीत्तद्द्यात्तस्य यत्नतः । स तृप्तो दुस्तरं मार्गं ततो याति न संशयः ॥' कलिकायामाश्वलायनः—'कदल्यादिफलैः शस्तैर्मूलैरार्द्रादिकैरपि । गोरसैर्मधुना दध्ना श्राद्धे सन्तर्पयेत् पितॄन् ॥ कदल्याम्रफलादीनि श्राद्धे संपादयेत्सुधीः ॥'

हेमाद्रौ पृथ्वीचन्द्रोदये च मार्कण्डेयः—'गोधूमैरिक्षुभिर्मुद्गैः सतीनैश्चणकैरपि । श्राद्धेषु दत्तैः प्रीयन्ते मासमेकं पितामहाः ॥ विदार्या च भरुण्डैश्च तिलैः शृङ्गाटकैस्तथा । कञ्चुकैश्च तथा कन्दैः कर्कन्धूबदरैरपि ॥ पालेवतैरारुकैश्चाप्यक्षोटैः पनसैस्तथा । काकोल्या क्षीरकाकोल्या तथा पिण्डालकैः शुभैः ॥ लाजाभिश्च सधानाभिस्त्रपुसैर्वारुचिर्भटैः । सर्षपाराजशाकाभ्यामिङ्गुदै राजजम्बुभिः ॥ प्रियालामलकैर्मुख्यैः फल्गुभिश्च तिलण्टकैः । वेत्राङ्कुरैस्तालकन्दैश्चक्रिकाक्षीरिकावचैः ॥ लोचैः समोचैर्लकुचैस्तथा वै बीजपूरकैः । मुञ्जातकैः पद्मफलैर्भक्ष्यभोज्यैश्च संस्कृतैः ॥ रागखाण्डवचोष्यैश्च त्रिजातकसमन्वितैः । दत्तैस्तु मासं प्रीयन्ते श्राद्धेषु पितरो नृणाम् ॥' एषां कोशहेमाद्र्यादिव्याख्या वैद्यकाद्यनुसारेण मध्यदेशभाषया नामान्युच्यन्ते । सतीनैः कलायैः 'कलायस्तु सतीनकः' इत्यमरः । वटूरीति प्रसिद्धैः । विदार्या तत्कन्देन । भरुण्डं जलजं मखाणा इति श्राद्धमञ्जर्याम् । भूकूष्माण्डमित्यन्ये । शृङ्गाटकं सिंवाडा । कञ्चनारः । कन्दः सूरणः 'अर्शोघ्नः सूरण कन्दः' इत्यमरः । कर्कन्धूः वन्यं सूक्ष्मं बदरम् । पालेवतं कोशातकी । आरुकं अरुई । अक्षोटं अखरोटः । काकोलीक्षीरकाकोल्यौ गौडेषु प्रसिद्धौ । पिण्डालकं सुथनी । महाराष्ट्राणां मोहलकन्द इति प्रसिद्धम् । त्रपुसादयस्त्रयः कर्कटीभेदाः । चिर्भटं खबुजम् । सर्षपा इति दीर्घश्छान्दसः । प्रियालं चिरौंजी । फल्गु उदुम्बरम् । तिलण्टकं पटोलकम् । तालकन्दः कन्दविशेषः । चक्रिका तिन्तिणी विम्बा । क्षीरिका खीरिणी । मोचं कदलीफलम् । लकुचं वडहरम् । मुञ्जातकं गौडदेशे प्रसिद्धं फलम् । पद्मफलं गट्टा । रागखाण्डवः 'पिप्पलीशुण्ठियुक्तस्तु मुद्गयूषस्तु खाण्डवः । रागखाण्डवतां याति शर्करासंयुतं तु तत् ॥' इत्युक्तः पानविशेषः । त्रिजातं-लवङ्गैलापत्रकाणि । मदनरत्ने कौर्मे—कालशाकं च वास्तूकं मूलकं कृष्णनालिका ।' प्रशस्तानीति शेषः ।

हेमाद्रौ पृथ्वीचन्द्रोदये च वायुपुराणे—'कालशाकं महाशाकं द्रोणशाकं तथार्द्रकम् । बिल्वामलकमृद्वीकापनसाम्रातदाडिमम् ॥ चव्यं पालिवताक्षोटं खर्जूरं च कसेरुकम् । कोविदारश्च कन्दश्च पटोलं बृहतीफलम् ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पिप्पली मरिचं चैव एला शुण्ठी च सैन्धवम्। शर्करागुडकर्पूरबदरीद्रोणपत्रकम् ॥' तथा 'मधुकं रामठं चैव कर्पूरं गुडमेव च। श्राद्धकर्मणि शस्तानि सैन्धवं त्रपुसं तथा ॥' रामठं हिङ्गु। 'कसेरुः कोविदारश्च तालकन्दस्तथा बिसम्। तमालं शतकन्दश्च मध्वालुः शातकन्दकम् ॥ कालेयं कालशाकं च सुनिषण्णं सुवर्चलम्। मांसं शाकं दधि क्षीरं चाम्बुवेत्राङ्कुरस्तथा ॥ कट्फलं कौङ्कणी द्राक्षा तिन्दुकं मोचमेव च। अलाबु ग्रीवकं चारं कर्कन्धुर्मधुसाह्वयम् ॥ वैकङ्कतं नारिकेलं शृङ्गाटकपरूषकम्। पिप्पलीमरिचे चैव पटोलं बृहतीफलम् ॥ एवमादीनि चान्यानि स्वादूनि मधुराणि च। नागरं चार्द्रकं देयं दीर्घमूलकमेव च ॥' इति। तथा—'शर्कराक्षीरसंयुक्ताः पृथुका नित्यमक्षयाः।' द्रोणशाकं 'गूम' इति प्रसिद्धम्। मृद्वीका द्राक्षा। आम्रातं आंबाडा इति प्रसिद्धो वृक्षः तत्फलं च। पालिवतं जम्बीरम् पालिआलमिति गौडप्रसिद्धं वा। खर्जूरं खजूर इति प्रसिद्धम्। कसेरुः जलजः कन्दः। कोविदारः कञ्चनारसदृशः। तालकन्दः तालमूली। बिसं भसीडम्। शतकन्दः शतावरी। शालुकं सेरुकीति प्रसिद्धम्। कालेयं करालसंज्ञः शाकः। दारुहरिद्रा वेति पृथ्वीचन्द्रोदयः। सुनिषण्णं कर्कटीसदृशं सुलटिया इति गौडप्रसिद्धम्। सुवर्चलं शाकविशेषः। कट्फलं श्रीपर्णीवृक्षफलम्। कौङ्कणी अम्लरसा द्राक्षा। तिन्दुकं डिण्डिसमिति कैश्चित् तिन्दुफलं वा। ग्रीवकं फलविशेषः। चारं क्षुद्रतालम्। मधुसाह्वयं मधूकपुष्पं फलं वा। वैकङ्कतं चैञ्चीति गौडख्यातम्। परूषकं परूसमिति प्रसिद्धम्। नागरं शुण्ठी। पृथ्वीचन्द्रोदये ब्राह्मे—'आम्रमाम्रातकं विल्वं दाडिमं बीजपूरकम्। प्राचीनामलकं क्षीरं नारिकेरं परूषकम् ॥ नारङ्गकं च खर्जूरं द्राक्षा नीलकपित्थकम्। एतानि फलजातानि श्राद्धे देयानि यत्नतः ॥' मात्स्ये—'अन्नं तु सदधिक्षीरं गोघृतं शर्करान्वितम्। मासं प्रीणाति सर्वान्वै पितॄनित्याह केशवः ॥'

याज्ञवल्क्यः—हविष्यान्नेन वै मासं पायसेन तु वत्सरम्। मत्स्यहारिणकौरभ्रशाकुनच्छागपार्षतैः ॥ ऐणरौरववाराहशाशैर्मांसैर्यथाक्रमम्। मासवृद्ध्याभितृप्यन्ति दत्तैरिह पितामहाः ॥ खड्गामिषं महाशल्कं मधु मुन्यन्नमेव च। लोहामिषं कालशाकं मांसं वाध्रीणसस्य च ॥' निगमः—'त्रिःपिबं त्विन्द्रियक्षीणं श्वेतं वृद्धमजापतिम्। वाध्रीणसं तु तं प्राहुर्याज्ञिकाः श्राद्धकर्मणि ॥' वाध्रीणसो जरच्छाग इति मेधातिथिः। कात्यायनः—'छागोस्रमेषानालभ्य शेषाणि क्रीत्वा लब्ध्वा वा स्वयं मृतानाहृत्य पचेत्।' कौर्मे—'क्रीत्वा लब्ध्वा स्वयं वाथ मृतानाहृत्य वा द्विजः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दद्याच्छ्राद्धे प्रयत्नेन तदस्याक्षय्यमुच्यते ॥' श्राद्धे दत्तस्य मांसस्याभक्षणे दोषमाह मनुः—नियुक्तस्तु यथान्यायं यो मांसं नात्ति मानवः । स प्रेत्य पशुतां याति संभवानेकविंशतिः ॥' अत्र बहुषु वचनेषु श्राद्धे मांसमधुनोः प्राशस्त्योक्तेः । 'विना मांसेन यच्छ्राद्धं कृतमप्यकृतं भवेत् ।' इति हेमाद्रौ देवलोक्तेः । 'यच्छ्राद्धं मधुना हीनं तद्रसैः सकलैरपि । मिष्टान्नैरपि संयुक्तं पितृणां नैव तृप्तये ॥ अणुमात्रमपि श्राद्धे यदि न स्याच्च माक्षिकम् । नामापि कीर्तनीयं स्यात् पितृणां प्रीतये ततः ॥' इति हेमाद्रौ ब्राह्मोक्तेश्च मांसमधुनोः श्राद्धे नियतत्वं गम्यते । गौडनिबन्धे मात्स्यसुमन्तू—'मध्वभावे गुडो देयः क्षीरस्य च तथा दधि । न लभ्यते घृतं यत्र कुर्यात् घृतवतीजपम् ॥' श्राद्धकलिकायां नागरखण्डे—'कथञ्चिद्यदि विप्रेभ्यो न दत्तं भोजने मधु । पिण्डास्तु नैव दातव्याः कदाचिन्मधुना विना ॥' बृहत्पराशरस्तु मांसं निषेधति—'यस्तु प्राणिवधं कृत्वा मांसैस्तर्पयते पितॄन् । स विद्वांश्चन्दनं दग्ध्वा कुर्यादङ्गारविक्रयम् ॥ क्षिप्त्वा कूपे यथा किञ्चिद्बाल आदातुमिच्छति । पतत्यज्ञानतः सोऽपि मांसेन श्राद्धकृत्तथा ॥' स एव—'सर्वथान्नं यदा न स्यात्तदैवामिषमाश्रयेत् । ब्राह्मणश्च स्वयं नाद्यात्तच्च श्राद्धिहतं यदि ॥' भागवतेऽपि—'न दद्यादामिषं श्राद्धे न चाद्या-द्धर्मतत्त्ववित् । मुन्यन्नैः स्यात्परा प्रीतिर्यथा न पशुहिंसया ॥' तथेति शेषः । अत्र केचित्—'मुन्यन्नं ब्राह्मणस्योक्तं मांसं क्षत्रियवैश्ययोः । मधु-प्रदानं शूद्रस्य सर्वेषां वाऽविरोधि यत् ॥ इति हेमाद्रौ पुलस्त्योक्त्या व्यवस्थामाहुः ।

पृथ्वीचन्द्रोदयस्तु—'अक्षता गोपशुश्चैव श्राद्धे मांसं तथा मधु । देवराच्च सुतोत्पत्तिः कलौ पञ्च विवर्जयेत् ॥' इति निगमोक्तेः । 'वरा-ऽतिथिपितृभ्यश्च पशूपाकरणक्रिया ।' इति कलिवर्ज्येषु हेमाद्रावादित्य-पुराणात् । 'मांसदानं तथा श्राद्धे वानप्रस्थाश्रमस्तथा ।' इत्युक्त्वा 'इमान्धर्मान्कलियुगे वर्ज्यानाहुर्मनीषिणः ।' इति बृहन्नारदीयेऽभिधा-नाच्च मांसविधिः कलिव्यतिरिक्तविषयः । कलौ मांसनिषेधानां च देशा-चाराद्व्यवस्था । तथा च बृहन्नारदीये श्राद्धं प्रकृत्य—'यथाचारं प्रदेयं तु मधु मांसादिकं तथा । देशाचाराः परिग्राह्यास्तत्तद्देशीयजैर्नरैः ॥ अन्यथा पतितो ज्ञेयः सर्वधर्मबहिष्कृतः ॥' इति । 'यस्मिन्देशे पुरे ग्रामे त्रैविद्ये न-गरेऽपि वा । यो यत्र विहितो धर्मस्तं धर्मं न विचारयेत् ॥' इति भृगूक्ते-श्चेत्याह । तन्न । होलाकाधिकरणन्यायेन देशविशेषव्यवस्थापकपदकल्प-नायोगात् । निरूपितं चैतत् पितामहचरणैर्मांसमीमांसायामिति दिक् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मनुः—'संवत्सरं तु गव्येन पयसा पायसेन च । वार्ध्रीणसस्य मांसेन तृप्तिर्द्वादशवार्षिकी । त्रिःपिबं त्विन्द्रियक्षीणं श्वेतं वृद्धमजापतिम् । वार्ध्रीणसं तु तं प्राहुर्याज्ञिकाः श्राद्धकर्मणि ॥' क्षीरादौ विशेषमाह हेमाद्रौ सुमन्तुः—'पयो दधि घृतं चैव गवां श्राद्धेषु पावनम् । महिषीणां घृतं प्राहुः श्रेष्ठं न तु पयः क्वचित् ॥' याज्ञवल्क्यः—'सन्धिन्यनिर्दशाऽवत्सागोपयः परिवर्जयेत् । औष्ट्रमैकशफं स्त्रैणमारण्यकमथाविकम् ॥' हेमाद्रौ हारीतः—'नवसूतायाःसप्तरात्रादित्येके, दशरात्रादित्यपरे, मासेनोपेयुषं भवतीति धर्मविदः' । एतद्रजोभावपरम् । देवलः—'अजाविमहिषीणां तु पयः श्राद्धेषु वर्जयेत् । विकारान् पयसश्चैव माहिषं तु घृतं हितम् ॥' तत्रैव ब्राह्मे—'माहिषं चामरं मार्गमाविकैकशफोद्भवम् । स्त्रैणमौष्ट्रं पाचितं च दधि क्षीरं त्यजेद्धृतम् ॥ सगुडं मरिचाक्तं तु तथा पर्युषितं दधि । दीर्णं तक्रमपेतं च नष्टास्वादं च फेनवत् ॥' इति । माहिषापवादोऽपरार्के ब्राह्मे—'देयं तक्रं तु साद्यस्कं नवनीतादनुद्धृतम् । आरण्यमहिषीक्षीरं शर्करास्रुतिसंयुतम् ॥ मध्वक्तं तु हितं चैव दद्यात्तदमृतं यतः ॥' स्रुतिः क्षीरशरः । श्राद्धकौमुद्यां चैवम् । यद्यपि याज्ञवल्क्येन—'अन्नं पर्युषितं भोज्यं स्नेहाक्तं चिरसंस्थितम् । अस्नेहा अपि गोधूमयवगोरसविक्रियाः ॥' इति पर्युषितं दध्यादि भोज्यमुक्तम्, तथापि गुडमरीचाक्तस्य पर्युषितदोषोऽत्रोच्यत इति हेमाद्रिः । तत्रैव ब्राह्मे—'कालशाकं तन्दुलीयं वास्तुकं मूलकं तथा । शाकमारण्यकं चैव दद्याच्छ्राद्धेषु नित्यशः ॥' तन्दुलीयं सूक्ष्मपत्रमिति हेमाद्रिः । महाराष्ट्राणां माठ इति प्रसिद्धम् । आरण्यकं फांजीचूचादि । तत्रैव—'दाडिमं मागधी चैव नागरार्द्रकतिन्तिणी । आम्रातकं जीरकं च कुबरं चैव योजयेत् ॥' मागधी पिप्पली । नागरं शुण्ठी । कुबरं कुस्तुम्बरं धणिया इति प्रसिद्धम् । वायवीये—'अगस्त्यस्य शिखास्ताम्राः कषायाः सर्व एव च ।' शिखा नवपल्लवाः । प्रभासखण्डे—'आरामस्य तु सीमन्ताः कलायाः सर्व एव च ।' सीमन्ताः नवपल्लवाः । कौर्मे—'तमालं शतकन्दं च मध्वालुः शीतकन्दली ।' मध्वालुः मोहलकन्दः । शीतकन्दली रातालू इति प्रसिद्धम् ।

अथ वर्ज्यम् । मार्कण्डेयपुराणे—'यच्चोत्कोचादिना प्राप्तं पतिताद्युदुपार्जितम् । अन्यायकन्याशुल्कार्थं द्रव्यं चात्र विगर्हितम् ॥ पित्रर्थं मे प्रथच्छस्वेत्युक्त्वा यच्चाप्युपाहृतम् ॥' चन्द्रोदये शङ्खः—भूस्तृणं सुरसा शिग्रु पालङ्की मृचुकं तथा । कूष्माण्डालाबुवार्ताककोविदारांश्च वर्जयेत् ॥ पिप्पलीं मरिचं चैव तथा वै पिण्डमूलकम् । कृतं च लवणं सर्वं वंशाग्रं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

च विवर्जयेत् ।। राजमाषान् मसूरांश्च कोद्रवान् कोरदूषकान् । लोहितान् वृक्षनिर्यासान् श्राद्धकर्मणि वर्जयेत् ।।' भूस्तृणं काश्मीरदेशे प्रसिद्धम् । सुरसा निर्गुण्डीति माधवः । तुलसीति पृथ्वीचन्द्रोदयः । सा च भक्ष्यत्वेन निषिद्धा न पुष्पत्वेनेति गौडाः । पालङ्की पालक इति प्रसिद्धा । भृचुकं जलजः शाकः ससुकम् इति पाठे खदिरशाक इति हेमाद्रिः । मरीचान्यार्द्राणीति हेमाद्रिः । कृतलवणं सांभरभिन्नम् । 'सैन्धवं लवणं चैव तथा मानससंभवम्' । 'यच्च सामुद्रिकं भवेत्' इति शूलपाणौ पाठः । 'पवित्रे परमे ह्येते प्रत्यक्षे अपि नित्यशः ।' इति वायवीयोक्तेः । मानसं साम्भरम् । यत्तु भविष्यम्—'तर्जन्या दन्तकाष्ठं च प्रत्यक्षं लवणं तथा' इति । तत्र क्षारलवणं खारी प्रसिद्धं निषिद्धम् । 'भुक्त्वा तु क्षारलवणं त्रिरात्रं तु वने वसेत्' इति ब्राह्मोक्तेरिति शूलपाणिः । क्षीरलवणमिति पाठात् क्षीरमिश्रं लवणं निषिद्धमिति वाचस्पतिः । राजमाषाः चवली इति प्रसिद्धाः । कोरदूषकः वनकोद्रवः । चन्द्रिकायां शङ्खः—'पिण्डालकं च तुण्डीरं करमर्दं च नालिकम् । कूष्माण्डं बहुबीजानि श्राद्धे दत्वा व्रजत्यधः ।।' पिण्डालकं महाराष्ट्रेषु पेण्डरमिति प्रसिद्धम् । तुण्डीरं बिम्बीफलमिति कैदेवः । करमर्दं करवन्दमिति प्रसिद्धम् । तत्रैव 'बिडालोच्छिष्टमाघ्रातं श्राद्धे यत्नेन वर्जयेत् । कूष्माण्डं महिषीक्षीरमाढक्यो राजसर्षपाः । चणका राजमाषाश्च घ्नन्ति श्राद्धं न संशयः ।।'

वृद्धपराशरः—'करीरफलपुष्पाणि विडङ्गमरिचानि च । जम्भारिका सजम्बीरा सुपक्वं बीजपूरकम् ।। जम्ब्वलाबूनि पिप्पल्यः पटोलं पिण्डमूलकम् । मसूराञ्जनपुष्पं च श्राद्धे दत्वा पतत्यधः ।।' जम्बूः सूक्ष्मा । माधवीये चतुर्विंशतिमते—'यावनालान् कुलित्थांश्च वर्जयन्ति विपश्चितः ।' यावनालः जोंधला । अत्र यानि चणकादीनि विहितनिषिद्धानि तेषां विकल्पः । अन्यथा 'श्यामाकैः चणकैः शाकैर्नीवारैश्च प्रियङ्गुभिः । गोधूमैश्च तिलैर्मुद्गैर्मासं प्रीणयते पितॄन् ।।' इति । 'गोधूमैरिक्षुभिर्मुद्गैः सतीनैश्चणकैरपि ।' इति हेमाद्रौ कौर्मविष्णुधर्मादिविरोधः स्यात् । पिप्पलीमरीचादेस्तु प्रत्यक्षस्य निषेधो नत्वन्यद्रव्यमिश्रस्य । 'सौवीरतिक्तैर्लवणादिभिस्तु पाकस्य सिद्धिमहतीह यैस्तु । तद्बीजपूरान् मरिचादियोगात्सिद्धं प्रदेयं न तु दुष्यतीह ।।' इति पृथ्वीचन्द्रोदये वृद्धपराशरोक्तेः । तत्रैव 'दातुश्च यस्मिन्मनसोऽभिलाषः श्रद्धा भवेद्यत्र च दीयमाने । श्राद्धेषु देयं विधिवत्तदेव तदक्षयमक्षय्यमिति ब्रुवन्ति ।।' एतन्निषिद्धेतरविषयम् । चन्द्रिकायाम्—'कृष्णधान्यानि सर्वाणि वर्जयेच्छ्राद्धकर्मणि । न वर्जयेत्

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तिलांश्चैव मुद्गमाषांस्तथैव च ॥' मात्स्ये—'मसूरशणनिष्पावराजमाष-कुसुम्भिकाः । पद्मबिल्वार्कधत्तूरपारिभद्राटरूषकाः ॥ न देयाः पितृ-कार्येषु पयश्चाजाविकं तथा । कोद्रवोद्दारवरककपित्थमधुकातसी ॥ एता-न्यपि न देयानि पितृभ्यः श्राद्धमिच्छता ॥' निष्पावाः वल्लाः । यत्तु मार्कण्डेयः—'प्रियङ्गवः कोविदारा निष्षावाश्चात्र शोभनाः ।' इति । तत्र निष्पावः श्वेतशिम्बीति दानसागरे श्राद्धप्रकाशे चोक्तम् । बिल्वं च रक्तं निषिद्धम् । 'जम्बीरं रक्तबिल्वं च शालस्यापि फलं त्यजेत् ।' इति ब्राह्मोक्तेः । 'पारभद्रे निम्बतरुः' इत्यमरः । रक्तमन्दार इति हेमाद्रिः । आटरूषो वासा तत्पुष्पम् । उद्दारः काञ्चनारः । मधुकं ज्येष्ठीमध्विति चन्द्रिका । वरका वनमुद्गाः ।

हेमाद्रौ ब्रह्माण्डे—'आसनारूढमन्नाद्यं पादोपहतमेव च । अमेध्यै-र्जङ्गमैः स्पृष्टं शुष्कं पर्युषितं च यत् ॥ द्विःस्विन्नं परिदग्धं च तथैवाग्राव-लेहितम् । शर्कराकीटपाषाणैः केशैर्यच्चाप्युपद्रुतम् ॥ पिण्याकं मथितं चैव तथातिलवणं च यत् । सिद्धाः कृताश्च ये भक्ष्याः प्रत्यक्षलवणीकृताः ॥ वाससा चोपधूतानि वर्ज्यानि श्राद्धकर्मणि ॥' द्विःस्विन्नं यत्सकृत्पाकेन भक्ष्यमपि हिङ्गुजीरकादि संस्कारार्थं पुनः पच्यते तद्वर्ज्यम् । यत्तु तिक्त-शाकान्नविकारादि द्विःपाकेनैव भक्षणार्हं तन्न निषिद्धम् । अग्रावलेहि-तमास्वादितपूर्वम् । पर्युषितस्य सदा निषेधेऽपि पुनर्वचनम् 'अपूपाश्च करम्भाश्च धाना वटकसक्तवः । शाकं मांसमपूपं च सूपं कृसरमेव च ॥ यवागूः पायसं चैव यच्चान्यत्स्नेहसंयुतम् । सर्वं पर्युषितं भोज्यं भुक्तं चेत्परिवर्जयेत् ॥' इति । माधवीये यमोक्तवटकादेरपि पर्युषितस्य निषे-धार्थमिति चन्द्रिकादयः । वर्ज्येषु विश्वामित्रः—'कपित्थं कुसुमं चैव नारिकेलं च पैनिकम् । जम्बूफलादि पक्वं च पिण्याकं तन्दुलीयकम् ॥' हेमाद्रौ षट्त्रिंशन्मते—'वर्ज्या मर्कटकाः श्राद्धे राजमाषास्तथैव च ।' मर्कटकाः लाका इति प्रसिद्धाः । पैठीनसिः—'वृन्ताकं नलिकापोतकुसुम्भा-श्मन्तकानि च । शाकानामभक्ष्याः' इति । पोतं पोई इति प्रसिद्धम् । (कुसुम्भ कुरडु इति महाराष्ट्रे प्रसिद्धम्) । मार्कण्डेयः—'वर्ज्याश्चाभिषवा नित्यं शतपुष्पा गवेधुकाः । जम्बीरकं फलं वर्ज्यं कोविदाराश्च नित्यशः ॥' अभिषवः सूक्तम्—इति चन्द्रिका । संधानकमिति पृथ्वीचन्द्रः । शतपुष्पा ओवा इति प्रसिद्धम् । शाठ्यायनः—'मारिषं नालिका चैव रक्ता या च कलम्बिका । असुरान्नमिदं सर्वं पितृणां नोपतिष्ठते ॥' मारिषं मध्यदेशे मरुसा इति, महाराष्ट्रेषु राजगिरा इति च प्रसिद्धम् । कलम्बिका वेण्वा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कृतिपन्ना । तत्रैव 'गान्धारिका पटोलानि श्राद्धकर्मणि वर्जयेत् ।' गान्धारिका तन्दुलीयमिति चन्द्रिका । 'जवासाख्या दुरालभा इति कैदेवः । भारते—'हिङ्गुद्रव्येषु शाकेषु अलाबुं लशुनं तथा । कुकुण्डकान्यलाबूनि कृष्णं लवणमेव च ॥' पुनरलाबुग्रहणमुभयालाबुनिषेधार्थमिति पृथ्वीचन्द्रः । कुकुण्डकं वर्तुलं छत्राकम् । तत्रैव—'कुस्तुम्बुरुं कलिङ्गोत्थं वर्जयेदाम्लवेतसम् ।'

हेमाद्रौ ब्राह्मे—'वार्ताकं पञ्चशिम्बं च लोमशानि फलानि च । कलिङ्गं रक्तचारं च वीणाकं धृतचारकम् ॥ कपालं काचमारी च करञ्जं पिण्डमूलकम् । गृञ्जनं चुक्रिकां चैव गाजरं जीवकं तथा ॥' वृन्ताकं-श्वेतम् । 'कण्डूरां श्वेतवृन्ताकं कुम्भाण्डं च विवर्जयेत् ।' इति देवलोक्तेः । तेन कृष्णस्यानिषेध इति चन्द्रिकामाधवौ । वस्तुतस्तु सदा श्वेतनिषेधात् पुनः श्राद्धे निषेधो व्यर्थः । तेन भक्ष्यस्य कृष्णवृन्ताकस्यापि निषेधार्थमिदमिति वयम् । कण्डूरा कपिकच्छूः । कुम्भाण्डं वृत्तालाबुः । पञ्चशिम्बं वल्लमसूरराजमाषमठकुलित्थाः । लोमशानि कपित्थानि । रक्तचारं लोहितचारफलम् । वीणाकं कृष्णदीर्घकर्कटी । धृतचारकं चिरस्थितचारफलं चारोलीति प्रसिद्धम् । कपालं नारिकेलम् । काचारकचुवृक्षफलम् । मारीचम् आर्द्रमरीचानि । गृञ्जनं पलाण्डुभेदः पश्चिमदिशि प्रसिद्धः न तु गाजरम् । तस्य पृथगुक्तेः । हेमाद्रिणा तु गृञ्जनं गाजरमेवोक्तम् । गौडश्राद्धकौमुद्यामप्येवं तच्चिन्त्यम् । चुक्रिका चिरकालशुक्तं पानकम् । चन्द्रिकायां हरीतः—'न वटप्लक्षोदुम्बरशेलुदधित्थनीपमातुलिङ्गानि भक्षयेत् ।' शेलुः श्लेष्मातकः भोकरसंज्ञः । दधित्थं कपित्थम् । स्मृतिसारे—'क्षीरे तु लवणं दत्त्वा उच्छिष्टेऽपि च यद् घृतम् । स्नानं रजकतीर्थेषु ताम्रे गव्यं सुरासमम् ॥' गौडनिबन्धसागरे स्मृतिः—'नारिकेरोदकं कांस्ये ताम्रपात्रे स्थितं मधु । गव्यं च ताम्रपात्रस्थं मद्यतुल्यं घृतं विना ॥' 'ताम्रपात्रे घृतं मांसं यच्च गव्यं घृतेतरत् । आमिषं तु गवां मांसं दधि मद्यं पयो रजः ॥ द्रव्यान्तरयुतं मांसं पयसा संयुतं दधि । पयोऽनुद्धृतसारं च ताम्रपात्रे न दुष्यति ॥'

अथ जलम् । याज्ञवल्क्यः—'शुचि गोतृप्तिकृत्तोयं प्रकृतिस्थं महीगतम् ।' वर्ज्यं जलमुक्तं हेमाद्रौ ब्रह्माण्डे—'दुर्गन्धि फेनिलं क्षारं पङ्किलं पल्वलोदकम् । न भवेद्यत्र गोतृप्तिर्नक्तं यच्चाप्युपाहृतम् ॥ यन्न सर्वार्थसुत्सृष्टं यच्चाभोज्यनिपानजम् । यद्वर्ज्यं सलिलं तात सदैव श्राद्धकर्मणि ॥' निपानो जलाशयः । शुद्धितत्त्वे शङ्खः—'स्नानमाचमनं दानं देवतापितृतर्पणम् । शूद्रोदकैर्न कुर्वीत तथा मेघाद्विनिःसृतैः ॥ हेमाद्रावादित्यपुराणे—

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'चिरं पर्युषितं वापि शूद्रस्पृष्टमथापि वा। जाह्नव्याः स्नानदानादौ पुनात्येव सदा पयः ॥' कात्यायनः—अपो निशि न गृह्णीयान्न पिबेच्च कदाचन। उद्धृत्याग्निमुपर्यग्नेर्धाम्नो धाम्न इतीरयेत्॥' रजोदोषे तु प्रागुक्तं नारदीये—'त्यजेत्पर्युषितं पुष्पं त्यजेत्पर्युषितं जलम्। न त्यजेज्जाह्नवीतोयं तुलसीबिल्वपद्मकम्॥'

अन्यान्यपि पृथ्वीचन्द्रोदये मात्स्ये—'मध्याह्नः खड्गपात्रं च तथा नेपालकम्बलः। रौप्यं दर्भास्तिला गावो दौहित्रश्चाष्टमः स्मृतः॥ पापं कुत्सितमित्याहुस्तस्य सन्तापकारिणः। अष्टावेते यतस्तस्मात्कुतपा इति विश्रुताः॥' ब्राह्मे—'यतिस्त्रिदण्डी करणं राजतं पात्रमेव च। दौहित्रं कुतपः कालश्छागः कृष्णाजिनं तथा॥' शस्तानीति शेषः। दौहित्रं खड्गपात्रमिति कल्पतरुः। अपरार्के स्मृत्यन्तरे—'अपत्यं दुहितुश्चैव खड्गपात्रं तथैव च। घृतं च कपिलाया गोर्दौहित्रमिति कीर्तितम्॥' ब्रह्माण्डे—'अमावास्यागते सोमे या तु खादति गौस्तृणम्। तस्या गोर्यद्भवेत् क्षीरं तद्दौहित्रमुदाहृतम्॥' स्मृतिसंग्रहे—'उच्छिष्टं शिवनिर्माल्यं वान्तं च मृतकर्पटम्। श्राद्धे सप्त पवित्राणि दौहित्रः कुतपस्तिलाः॥' उच्छिष्टं वत्सस्य दुग्धमित्यर्थः। शिवनिर्माल्यं गङ्गोदकम्। वान्तं मधु। मृतकर्पटं तसरीपट्टम्।

तिलेष्वापस्तम्बः—'अटव्यां ये समुत्पन्ना अकृष्टफलितास्तथा। ते वै श्राद्धे पवित्राः स्युस्तिलास्ते न तिलास्तिलाः॥' अभावे ग्राम्याः। 'गौराः कृष्णास्तथारण्यास्तथैव त्रिविधास्तिलाः॥' इति ब्राह्मोक्तेः।

अथ वर्ज्यानि चन्द्रिकायां यमः—कुक्कुटो विड्वराहश्च काकश्चाथ बिडालकः। वृषलीपतिश्च वृषलः षण्ढोऽवीरा रजस्वला॥ एते तु श्राद्धकाले वै वर्जनीयाः प्रयत्नतः। खञ्जः काणः कुणिः श्वित्री दातुः प्रेष्यकरस्तथा॥ न्यूनाङ्गोऽप्यतिरिक्ताङ्गस्तमप्यपनयेत्ततः॥' वायवीये—'अन्नं पश्येयुरेते तु यदि वै हव्यकव्ययोः। उत्सृष्टव्यं प्रधानार्थं संस्कारस्त्वापदि स्मृतः'। सुमन्तुः—'चाण्डालादिवीक्षितमन्नमभोज्यमन्यत्र मृद्भस्महिरण्योदकस्पर्शात्।' तत्रैव जमदग्निः—'शुद्धवत्योऽथ कूष्माण्ड्यः पावमान्यस्तरत्समाः। पूतेन वारिणा दर्भैरन्नदोषमपोनुदेत्॥' चन्द्रोदये—'पादुकोपानहौ छत्रं चित्ररक्ताम्बरं तथा। रक्तपुष्पं च मार्जारं श्राद्धभूमौ विवर्जयेत्॥' निर्णयदीपे—'घण्टानिनादो हयसन्निधानं शम्बूकशङ्खं कदलीदलं च। उन्मत्तजात्यर्कहयारिजानि श्राद्धस्य वैगुण्यकराण्यमूनि॥' हयारिजं महिषीक्षीरादि।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अथ श्राद्धदिनकृत्यम् । चन्द्रोदये उशनाः—'गोमयोदकैर्भूमिभाजनशौचं कुर्यात् ।' पराशरः—'काञ्जिकं दधि तक्रं च शृतं वाश्शृतमेव च । पूर्वमेव न दातव्यमेकोद्दिष्टेऽथ पार्वणे ॥' हेमाद्रौ पराशरः—'गृहाग्निशिशुदेवानां ब्रह्मचारितपस्विनाम् । तावन्न दीयते किञ्चिद्यावत्पिण्डान्न निर्वपेत् ॥' कौर्मे—तिलानवकिरेत्तत्र सर्वतो बन्धयेदजान् ।' तत्रैव देवलः—'तथैव यन्त्रितो दाता प्रातः स्नात्वा सहाम्बरः । आरभेत नवैः पात्रैरन्नारम्भं च बान्धवैः ॥' अत्रात्मनेपदात्स्वयमेव पाकः कार्यः । अशक्तौ पत्न्या, तदभावे बान्धवैः । ततस्तानि पपाचाशु सीता जनकनन्दिनी ।' इति पाद्मलिङ्गादिति हेमाद्रिः । श्राद्धदीपकलिकायामाश्वलायनः-'समानप्रवरैर्मिश्रैः सपिण्डैश्च गुणान्वितैः । कृतोपकारिभिश्चैव पाककार्यं प्रशस्यते ॥' व्यासः—'गृहिणी चैव सुस्नाता पाकं कुर्यात्प्रयत्नतः । निष्पन्नेषु च पाकेषु पुनः स्नानं समाचरेत् ॥' पृथ्वीचन्द्रोदये ब्राह्मे—'रजस्वलां च पाखण्डां पुंश्चलीं पतितां तथा । त्यजेच्छूद्रां तथा वन्ध्यां विधवां चान्यगोत्रजाम् ॥ व्यङ्गकर्णीं चतुर्थाहःस्नातामपि रजस्वलाम् । वर्जयेच्छ्राद्धपाकार्थममातृपितृवंशजाम् ॥' मातृपितृवंशजभिन्नां त्यजेदित्यर्थः । स्मृतिसारे-'न पाकं कारयेत् पुत्रीमन्यां वाप्यगोत्रजाम् । मृतवन्ध्यां च गर्भघ्नीं गर्भिणीं चैव दुर्मुखीम् ॥'

पाकभाण्डानि तु हेमाद्रौ नागरखण्डे—'सौवर्णान्यथ रौप्याणि कांस्यताम्रोद्भवानि च । मार्तिक्यान्यपि भव्यानि नूतनानि दृढानि च ॥' तत्रैव आदित्यपुराणे—'पचेदन्नानि सुस्नातः पात्रेषु शुचिषु स्वयम् । स्वर्णादिधातुजातेषु मृन्मयेष्वपि वा द्विजः ॥ अच्छिद्रेष्वविलिप्तेषु तथानुपहतेषु च । नायसेषु न भिन्नेषु दूषितेष्वपि कर्हिचित् ॥ पूर्वं कृतोपयोगेषु मृन्मयेषु न तु क्वचित् ॥' वायुपुराणे—'न कदाचित्पचेदन्नमयःस्थालीषु पैतृकम् । अयसो दर्शनादेव पितरोऽपि द्रवन्ति हि ॥ कालायसं विशेषेण निन्दन्ति पितृकर्मणि । फलानां चैव शाकानां छेदनार्थानि यानि तु ॥ महानसेऽपि शस्त्राणि तेषामेव हि सन्निधिः । इष्यते नेतरस्यात्र शस्त्रमात्रस्य दर्शनम् ॥ श्राद्धदेशे तु विदुषा पितृणां प्रीतिमिच्छता । महानसे नियुक्तानामपि कार्यं न दर्शनम् ॥ तत्रैव—'पचमानस्तु भाण्डेषु भक्त्या ताम्रमयेषु च । समुद्धरति वै घोरात् पितॄन् दुःखमहार्णवात् ॥ तैजसानामभावे तु पिठरे मृन्मयेऽपि च । नवे शुचौ प्रकुर्वीत पाकं पित्रर्थमादरात् ।' तत्रैवादित्यपुराणे-'पक्वान्नस्थापनार्थे तु शस्यन्ते दारुजान्यपि । दर्व्यादीन्यपि कार्याणि यज्ञियैरपि दारुभिः ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

यमः-'विवाहे प्रेतकार्ये च मातापित्रोः-क्षयेऽहनि। नवभाण्डानि कुर्वीत यज्ञकाले विशेषतः ॥'

अथ पाकाग्निः। हेमाद्रौ प्रजापतिः—'औपासनेनान्नसिद्धिरग्नौकरणमेव च।' पृथ्वीचन्द्रोदयेऽङ्गिराः—'शालाग्नौ तु पचेदन्नं लौकिके वापि नित्यशः। यस्मिन्नग्नौ पचेदन्नं तस्मिन् होमो विधीयते ॥' मनुः-वैवाहिकेऽग्नौ कुर्वीत गृह्यं कर्म यथाविधि। पञ्चयज्ञविधानं च पक्तिं चान्वाहिकीं द्विजः ॥' श्राद्धस्य गृह्यत्वं चोक्तमपरार्केण। अत्र विशेषः कर्मप्रदीपे—'प्रातर्होमं तु निर्वर्त्य समुद्धृत्य हुताशनात्। शेषं महानसे कृत्वा तत्र पाकं समाचरेत् ॥ पाकान्तेऽग्निं तमाहृत्य गृह्याग्नौ तु पुनः क्षिपेत्। ततोऽस्मिन्वैश्वदेवादि कर्म कुर्यादतन्द्रितः ॥' तदभावे लौकिके। 'ततः पचेयुरन्नानि निर्वापानन्तरं शनैः। वैवाहिकेऽग्नावन्यत्र लौकिके वापि संयतः ॥' इति कालिकायां संग्रहोक्तेः। पित्रर्थं निर्वापं कृत्वेत्यर्थः। अत एव हेमाद्रौ वायुपुराणे-'पित्रर्थं निर्वपेद्भूमौ कूर्चे वा दर्भसंस्कृते ॥' इति। तत्रैव पाद्ममात्स्ययोः-'अग्निमान्निर्वपेत्पैत्रं चरुं वा सममुष्टिभिः। पितृभ्यो निर्वपामीति सर्वं दक्षिणतो न्यसेत् ॥' चरुग्रहणान्न शाकादाविति हेमाद्रिः। पिण्डपितृयज्ञार्थपाकविषयोऽयं निर्वाप इति तु युक्तम्। अयं चेतरेषामस्ति। आश्वलायनानां तु 'गुरुणाभिमृता अन्यतो वाऽपक्षीयमाणा अमावास्यायां शान्तिकर्म कुर्वीरन्' इत्यादिसूत्रेण पचनाग्नेस्त्यागमुक्त्वा 'इहैवायमितरो जातवेदाः' इत्यर्धर्चेन, 'शमीमयीभ्यामरणिभ्यामग्निं मन्थयेत्स पचनाग्निर्भवति' इति सूत्रे वृत्तौ चोक्तेः पचनाग्नावेव पाकः। वोधायनेनाप्युक्तम्—'आहृतपचनाग्निमौपासनं वाभिप्रव्रजन्ति' इति। स्मार्ताग्नौ पाकस्त्वन्यशाखाविषय इति केचित्। वस्तुतस्तु पूर्वोक्तस्य सर्वाधानविषयत्वं युक्तम्। शिष्टाचारेऽपि न पचनो दृश्यते, अर्धाधानविलायामपि सर्वाधानपक्षे वैश्वदेवश्राद्धं च पचने कुर्यात् अन्यथौपासने इत्युक्तम्। अग्नौकरणं तु प्रयोगपारिजातादिभिराब्दिकादिसर्वश्राद्धेषु पिण्डपितृयज्ञव्यतिषङ्गोक्तेर्लौकिके पचने वा पाके कृतेऽपि गृह्याग्नौ पक्वचरुणैव कार्यमिति प्रतिभाति। मदनरत्नेप्येवम्। विधुरोत्सन्नाग्न्यादेस्तु पृष्ठोदिविधानेनाग्निसंपादनमित्युक्तं हरिहरभाष्ये इति पाकाग्निः।

चन्द्रिकायां मार्कण्डेयः—'अह्नः षट्सु मुहूर्तेषु गतेषु प्रयतान्द्विजान्। प्रत्येकं प्रेषयेत्तेषां प्रदायामलकोदकम् ॥' देवलः—'ततो निवृत्ते मध्याह्ने श्राद्धदिनकृत्यम्। कृत्तरोमनखान् द्विजान्। अभिगम्य यथान्यायं प्रयच्छेद्दन्तधावनम् ॥ तैलमभ्यञ्जनं स्नानं स्नानीयं च पृथग्विधम्। पात्रैरौ-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दुम्बरैर्दद्याद्वैश्वदेविकपूर्वकम् ॥' औदुम्बरैस्ताम्रमयैः । 'अत्र चौरासलकस्नानादि निषिद्धतिथ्यादिव्यतिरिक्तविषयम्' इति हेमाद्रिर्माधवश्च । यत्तु चन्द्रिकायां प्रचेताः–'तैलमुद्वर्तनं स्नानं दद्यात्पूर्वाह्ण एव च । श्राद्धभुग्भ्यो नखश्मश्रुच्छेदनं तु न कारयेत् ॥' इति, तन्निषिद्धतिथ्यादिविषयम् । निषिद्धतिथ्यादि तु प्रागुक्तम् । अभ्यङ्गे तु कलिकायां कात्यायनः–'तैलमुद्वर्तने देयं ब्राह्मणेभ्यः प्रयत्नतः । तैरभ्यङ्गश्च कर्तव्यो वर्ज्यं कालं न चिन्तयेत् ॥' अपरार्के प्रचेताः—'स्नातोऽधिकारी भवति दैवे पित्र्ये च कर्मणि । श्राद्धकृच्छुक्लवासाः स्यान्मौनी च विजितेन्द्रियः ॥' हेमाद्रौ जाबालिः–ताम्बूलं दन्तकाष्ठं च स्नेहस्नानमभोजनम् । रत्यौषधं परान्नानि श्राद्धकर्ता विवर्जयेत् ॥' वस्त्रे विशेषमाह तत्रैव भृगुः—'नग्नः स्यान्मलवद्वासा नग्नः कौपीनकेवलः । द्विकच्छोऽनुत्तरीयश्च अकच्छोऽवस्त्र एव च ॥ नग्नः काषायवासाः स्यान्नग्नश्चार्द्रपटः स्मृतः । नग्नो द्विगुणवस्त्रः स्यान्नग्नो रक्तपटः स्मृतः ॥ नग्नस्तु स्निग्धवस्त्रः स्यान्नग्नः स्यूतपटस्तथा ॥'

ततः कर्ता ऊर्ध्वपुण्ड्रं कुर्यात् । 'जपे होमे तथा दाने स्वाध्याये पितृकर्मणि । तत्सर्वं नश्यति क्षिप्रमूर्ध्वपुण्ड्रं विना कृतम् ॥' इति हेमाद्रावुक्तेः । 'यज्ञो दानं तपो होमः स्वाध्यायः पितृकर्म च । वृथा भवति विप्रेन्द्रा ऊर्ध्वपुण्ड्रं विना कृतम् ॥' इति बृहन्नारदीयात् । 'ऊर्ध्वं च तिलकं कुर्यात् दैवे पित्र्ये च कर्मणि ।' इति वृद्धपराशरोक्तेश्च । अन्ये तु–'ऊर्ध्वपुण्ड्रं द्विजातीनामग्निहोत्रसमो विधिः । श्राद्धकाले तु संप्राप्ते कर्ता भोक्ता च तत्त्यजेत् ॥ वामहस्ते च दर्भास्तु गृहे रङ्गावलिं तथा । ललाटे तिलकं दृष्ट्वा निराशाः पितरो गताः ॥' इति संग्रहोक्तेः । 'ऊर्ध्वपुण्ड्रं त्रिपुण्ड्रं वा चन्द्राकारमथापि वा । श्राद्धकर्ता न कुर्वीत यावत्पिण्डान्न निर्वपेत् ॥' इति । विश्वप्रकाशे वचनाच्च न कार्यमित्याहुः । अत्राचाराद्व्यवस्था । अत एव बृहन्नारदीये 'ऊर्ध्वपुण्ड्रं च तुलसीं श्राद्धे नेच्छन्ति केचन ।' इति । ऊर्ध्वपुण्ड्रविधिर्विप्रविषयः । निषेधः कर्तृपर इति पृथ्वीचन्द्रः । यत्तु हेमाद्रौ देवलः–ललाटे पुण्ड्रकं दृष्ट्वा स्कन्धे माल्यं तथैव च । निराशाः पितरो यान्ति दृष्ट्वा च वृषलीपतिम् ॥ इति तद्गन्धेन त्रिपुण्ड्रविषयम् । प्राक्पिण्डदानाद्गन्धाद्यैर्नालंकुर्यात्स्वविग्रहम् ।' इत्याश्वलायनोक्तेः । पुण्ड्रं वर्तुलमित्यपरार्के मदनरत्ने च । पृथ्वीचन्द्रस्तु पुण्ड्रं त्रिपुण्ड्रम् । 'ऊर्ध्वं च तिलकं कुर्यान्न कुर्याद्वै त्रिपुण्ड्रकम् । निराशा पितरो यान्ति दृष्ट्वा चैव त्रिपुण्ड्रकम् ॥' इति बृहत्पराशरोक्तेः । भोक्तुस्तिर्यग्लेपो भवत्येव । 'वर्जयेत्तिलकं भाले श्राद्धकाले च सर्वदा । तिर्यगप्यूर्ध्वपुण्ड्रं वा धार-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

येत्तु प्रयत्नतः ॥' इति व्यासोक्तेरित्याह । पृथ्वीचन्द्रोदये ब्राह्मे-'सदर्भेण तु हस्तेन यः कुर्यात्तिलकं बुधः । आचम्य स विशुद्ध्येत दर्भत्यागेन चैव हि ॥' श्राद्धारम्भकालमाहापरार्के गौतमः-'आरभ्य कुतपे श्राद्धं कुर्यादारौहिणं बुधः । विधिज्ञो विधिमास्थाय रौहिणं तु न लङ्घयेत् ॥' एतदेकोद्दिष्टे । पार्वणे तूक्तं मात्स्ये—'ऊर्ध्वं मुहूर्तात्कुतपाद्यन्मुहूर्तचतुष्टयम् । मुहूर्तपञ्चकं ह्येतत्स्वधाभवनमिष्यते ॥' तथा-'मध्याह्ने सर्वदा यस्मान्मन्दीभवति भास्करः । तस्मादनन्तफलदस्तत्रारम्भो विशिष्यते ॥'

अथ श्राद्धपरिभाषा । चन्द्रिकायां कात्यायनः-'दक्षिणं पातयेज्जानु देवान् परिचरन् सदा । पातयेदितरं जानु पितृन् परिचरन् सदा ॥' बौधायनः—'प्रदक्षिणं तु देवानां पितृणामप्रदक्षिणम् । देवानामृजवो दर्भाः पितृणां द्विगुणास्तथा ॥' पृथ्वीचन्द्रोदये शङ्खः—'आवाहनार्घ्यसंकल्पे पिण्डदानान्नदानयोः । पिण्डाभ्यञ्जनकाले तु तथैवाञ्जनकर्मणि । अक्षय्यासनयोः पाद्ये गोत्रं नाम प्रकाशयेत् ॥' तत्रैव परिशिष्टे-'दक्षिणा पिण्डदाने च गन्धधूपाक्षये तथा । संकल्पे चासने दीपे अञ्जनाभ्यञ्जने तथा ॥ अन्नार्घ्यदानाद्यन्तेषु गोत्रं नाम च कीर्तयेत् ॥' कलिकायां संग्रहे-'आसनावाहने पाद्ये अन्नदाने तथैव च । अक्षय्ये पिण्डदाने च षट्सु नामानि कीर्तयेत् ॥' मात्स्ये--'सम्बन्धं प्रथमं ब्रूयाद्गोत्रं नाम तथैव च । पश्चाद्रूपं विजानीयात् क्रम एष सनातनः ॥' तत्रैव- सकारेण तु वक्तव्यं गोत्रं सर्वत्र धीमता । सकारः कुतपो ज्ञेयस्तस्माद्यत्नेन तं वदेत् ॥' यथा काश्यपसगोत्रेति । 'पराशरसगोत्रस्य वृद्धस्य तु महात्मनः । भिक्षोः पञ्चशिखस्याहं शिष्यः परमधार्मिकः ॥' इति मोक्षधर्मेषु प्रयोगाच्च । तेन गोत्रसगोत्रयोः पर्यायत्वाच्छाखाभेदाद्व्यवस्थेति शूलपाणिः । एतद्येषामाम्नातं तेषामेव । हेमाद्रौ बृहत्प्रचेताः-'गोत्रं स्वरान्तं सर्वत्र गोत्रस्याक्षय्यकर्मणि । गोत्रस्तु तर्पणे प्रोक्त एवं दाता न मुह्यति ॥ सर्वत्रैव पितः प्रोक्तः पिता तर्पणकर्मणि । पितुरक्षय्यकाले तु पित्र्ये संकल्पने तथा ॥ शर्मन्नर्घ्यादिके कार्ये शर्मा तर्पणकर्मणि । शर्मणोऽक्षय्यकाले तु पितृणां दत्तमक्षयम् ॥' स्वरान्तं सम्बुद्ध्यन्तमिति हेमाद्रिः । तत्रैव चन्द्रिकायां च स्मृत्यन्तरे—'गोत्रस्य त्वपरिज्ञाने काश्यपं गोत्रमुच्यते । यस्मादाह श्रुतिः सर्वाः प्रजाः कश्यपसम्भवाः ॥' यत्तु सत्याषाढः—'अथाज्ञातबन्धोः पुरोहितगोत्रेणाचार्यगोत्रेण वा' इति तद्विवाहपरम् । नामोच्चारणे विशेषमाह हेमाद्रौ बौधायनः—'शर्मान्तं ब्राह्मणस्योक्तं वर्मान्तं क्षत्रियस्य तु । गुप्तान्तं चैव वैश्यस्य दासान्तं शूद्रजन्मनः ॥' पित्रादिनामाज्ञाने तत्रैव-'पृथिवीषत्पिता

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वाच्यस्तत्पिता चान्तरिं त्वसत् । अभिधानापरिज्ञाने दिविषत्प्रपितामहः ॥ पित्रादीनां नाम यदा पुत्रैर्न ज्ञायते तदा ॥' आपस्तम्बसूत्रेप्येवम् । एतदन्यशाखापरम् । आश्वलायनानां तूक्तं तत्सूत्रे—'यदि नामान्यविद्वांस्तत्पितृपितामहप्रपितामहेति ब्रूयात् ।' तत्कारिकापि—'नामादि चेन्न जानीयात्ततेत्यादि वदेत् क्रमात् ।' ततेति सम्बन्धमात्रपरम् । तेन पितृव्यादावपि तथेति गौडाः । स्त्रीणां तु दान्तं नाम ज्ञेयम् । 'दान्तं नाम स्त्रीणाम्' इति पृथ्वीचन्द्रोदये गोभिलोक्तेः । केचिद् देवीशब्दान्तमाहुः । अन्ये तु देवीदा इति द्वयोः समुच्चयमाहुः ।

हेमाद्रौ नारायणः—'विभक्तिभिस्तु यत्किञ्चिद्दीयते पितृदैवते । तत्सर्वं सफलं ज्ञेयं विपरीतं निरर्थकम् ॥' चन्द्रिकास्मृत्यर्थसारयोश्च नारदीये—'अक्षय्यासनयोः षष्ठी द्वितीयावाहने तथा । अन्नदाने चतुर्थी स्याच्छेषाः सम्बुद्धयः स्मृताः ॥' यत्तु व्यासः—'चतुर्थी चासने नित्यं संकल्पे च विधीयते । प्रथमा तपणे प्रोक्ता सम्बुद्धिमपरे जगुः ॥' इति अत्र शाखाभेदाद्व्यवस्थेति हेमाद्रिः । हेमाद्रौ भृगुः—'अर्घ्यावनेजनं पिण्डमन्नं प्रत्यवनेजनम् । सम्बुद्धिं तत्र कुर्वीत शेषे षष्ठी विधीयते ॥' तत्रैव मातुर्विशेषो नागरखण्डे—'मातर्मात्रे तथा मातुरासने कल्पनेऽक्षये । गोत्रे गोत्रायै गोत्रायाः प्रथमाद्या विभक्तयः ॥'

हेमाद्रौ प्रभासखण्डे—"यज्ञोपवीतिना कार्यं दैवं कर्म प्रदक्षिणम् । प्राचीनावीतिना कार्यं पितृकर्माऽप्रदक्षिणम् ॥' अनुपनीतस्त्रीशूद्रादेस्तूत्तरीयेणैव सव्यापसव्ये ज्ञेये । तस्योपवीतस्थानीयत्वात् । 'अपसव्यं क्रमाद्वस्त्रं कृत्वा कश्चित्सगोत्रजः ।' इति ब्राह्माच्चेति वाचस्पतिः । यत्तु केचित् 'सदोपवीतिना भाव्यम्' इत्यस्य पुरुषार्थत्वात् प्राचीनावीतकालेप्युपवीतान्तरेण तत्कार्यमेवेति । तन्न । विशेषबाधात् । जमदग्निः—'सूक्तं स्तोत्रजपं त्यक्त्वा पिण्डाघ्राणं च दक्षिणाम । आह्वानं स्वागतं चार्घ्यं विना च परिवेषणम् ॥ विसर्जनं सौमनस्यमाशिषां प्रार्थनं तथा । विप्रप्रदक्षिणां चैव स्वस्तिवाचनकं विना ॥ पितॄनुद्दिश्य कर्तव्यं प्राचीनावीतिना सदा ॥' हेमाद्रौ संग्रहे—'आदौ विप्राङ्घ्रिशौचान्तेऽभ्यर्चने विकिरे कृते । पिण्डान्न्युप्यार्चयित्वा च विसर्ज्य ब्राह्मणांस्तथा ॥ आचामेच्छ्राद्धकर्ता च स्थानेष्वेतेषु सप्तसु । आद्यन्तयोर्द्विराचामेच्छेषेषु तु सकृत्सकृत् ॥' तत्रैव—'श्राद्धारम्भेऽवसाने च पादशौचार्चनान्तयोः । विकिरे पिण्डदाने च षट्स्वाचमनमिष्यते ॥' आश्वलायनः—'दानाध्ययनदेवार्चाजपहोमव्रतादिकान् । न कुर्याच्छ्राद्धदिवसे प्राग्विप्राणां विसर्जनात् ॥' एतन्नि-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

त्यवर्ज्यमिति बोपदेवः। इदं विष्णुभिन्नदेवपरम्। विष्णोर्निवेदितान्नेन यष्टव्यं देवतान्तरम्। पितृभ्यश्चापि तद्देयं तदानन्त्याय कल्पते ॥ पितृशेषं तु यो दद्याद्धरये परमात्मने। रेतोधाः पितरस्तस्य भवन्ति क्लेशभागिनः॥' इति स्कान्दात्। 'पितरः सर्वे मनुष्या विष्णुनाशितमन्नमश्नन्ति' इति श्रुतेः। 'यः श्राद्धकाले हरिभुक्तशेषं ददाति भक्त्या पितृदेवतानाम्। तेनैव पिण्डांस्तुलसीविमिश्रानाकल्पकोटिं पितरस्तु तृप्ताः ॥' इति ब्राह्मोक्तेश्चेति श्रीधरस्वामिनृसिंहपरिचर्यादयः। एतत्सर्वं निबन्धविरोधान्निर्मूलम्।

अत्र विशेषो हेमाद्रौ विष्णुधर्मे–'श्राद्धाह्नि तु समभ्यर्च्य नृवराहं जनार्दनम्।' शिवपुराणे–'पूजयित्वा शिवं भक्त्या पितृश्राद्धं प्रकल्पयेत्। पूर्वनिषेधस्तु विहितभिन्नपरः। तथा हेमाद्रौ–'देवार्चा दक्षिणाङ्गादिः पादजान्वंसमूर्धसु। शिरोंसजानुपादेषु वामाङ्गादिषु पैतृकम्॥' कलिकायां स्मृत्यन्तरे—'श्राद्धारम्भे तु ये दर्भाः पादशौचे विसर्जयेत्। अर्चनादौ तु ये दर्भा उच्छिष्टान्ते विसर्जयेत्॥ मार्जनादौ तु ये दर्भाः पिण्डोत्थाने विसर्जयेत्। उत्तानादौ तु ये दर्भा दक्षिणान्ते विसर्जयेत्॥ प्रार्थनादौ तु ये दर्भा नमस्कारे विसर्जयेत्॥'

ऊहमाह विष्णुः–'मातामहानामप्येवं श्राद्धं कुर्याद्विचक्षणः। मन्त्रोहेन यथान्यायं शेषाणां मन्त्रवर्जितम्॥' यथान्यायमिति यत्र बहुवचनान्तः पितृशब्दस्तत्र सर्वपितृवाचित्वान्नोहः। तत्रापि'शुन्धन्तां पितरः'इत्यत्रोह एव। सर्वपितृवाचित्वे उत्तरमन्त्रद्वयवैयर्थ्यात्। बहुवचनं तु नोह्यते। प्रकृतावसमर्थत्वात्पाशानितिवत्। ऋगन्ते च नोहः। तस्मादृचं नोहेदिति निषेधात्। एकोद्दिष्टेप्येवम्। प्रेतैकोद्दिष्टे तु 'एकवन्मन्त्रानूहेतैकोद्दिष्टे' इति विष्णूक्तेरूहः। अत्र बहुवचनस्याप्यूहो वचनात्। वृद्धयादौ तु विशेषं वक्ष्यामः। शेषाणामिति पितृव्याद्येकोद्दिष्टो आवाहनादिमन्त्रवर्ज्यं कार्यमिति कल्पतरुः। ऊहयोग्यपितृपदवान् मन्त्र एव तत्र प्रयोज्यो न तूहः। नापि पितृपदरहितः प्रयोज्य इति शूलपाणिः। अर्थान्तरं चोक्तं प्राक्। बह्वृचकारिकापि–'अर्घ्यप्रदानमन्त्रे तु मात्रादिपदमावपेत्। शुन्धन्तामिति पित्रादौ मात्रादिपदमावपेत्॥' मातृश्राद्धे पिण्डदाने 'ये च त्वामत्रानु' इत्यत्र नोह इति वृत्तिकृत्। तथा—'मातुः श्राद्धेप्यनूहेन कुर्यात्पिण्डानुमन्त्रणम्। दशदानमुपस्थानं तद्वत्कार्यमिति स्थितिः॥ प्रवाहणमनूहेन तद्वत्प्राशनमिष्यते॥' तथा—'आयन्तुनस्तिलोऽसीति उशन्तस्त्वेति यानि तु। अनूह्यः पितृशब्दोऽत्र पितृसामान्यवाचकः॥' आपस्तम्बानां तु वक्ष्यते।

हेमाद्रौ मार्कण्डेयः—'स्नातः स्नातान् समाहूतान् स्वागतेनार्चयेत्

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पृथक्।' कलिकायां नारदीये—'प्रायश्चित्तविशुद्धात्मा तेभ्योऽनुज्ञां प्रगृह्य च। दद्याद्वै ब्रह्मदण्डार्थं हिरण्यं कुशमेव च॥' तत्रैव संग्रहे—'तिथिवारादिकं ज्ञात्वा सङ्कल्प्य च यथाविधि। प्राचीनावीतिना कार्यं सर्वं सङ्कल्पनादिकम्॥ सम्बन्धं प्रथमं ब्रूयान्नामगोत्रे तथैव च। वस्वादिरूपतां चापि स्वपितॄणामनुक्रमात्॥' चन्द्रोदये नारदीये—'श्राद्धार्थं समनुप्राप्तान् विप्रान् भूयो निमन्त्रयेत्।' आपस्तम्बस्तु-'पूर्वेद्युर्निमन्त्रणं परेद्युर्द्वितीयं तृतीयमामन्त्रणम्' इत्याह। यूयं मया निमन्त्रणीया इति निवेदनरूपं आद्यम्। तद्विधिमाह शौनकः—'गृहीत्वामुकसंज्ञस्यामुकगोत्रस्य चामुके। श्राद्धे तु वैश्वदेवार्थं करणीयः क्षणस्त्वया॥ इत्येवं श्राद्धकृद्ब्रूयादोंतथेति वदेत्तु सः। श्राद्धस्य कर्ता स ब्रूयात्तं प्राप्नोतु भवानिति॥ स वदेत् प्राप्नवानीति इतरस्तं प्रति द्विजः॥' देवौ पार्वणे पुरूरवार्द्रवौ वाच्यौ 'पित्रादेरप्यनेनैव वृणीत विधिना द्विजान्।' ततः कर्ता बह्वृचोऽनाहिताग्निः पिण्डपितृयज्ञं परिस्तरणादीध्माधानान्तं कुर्यात्। 'अर्धाधानिनोप्येवम्' इति प्रयोगपारिजाते परिशिष्टे च। भाष्यकारमते आब्दिकेप्येवम्। वृत्तिकारमते नेदम्।

हेमाद्रौ शम्भुः—'संमार्जितोपलिप्ते तु द्वारि कुर्वीत मण्डले। उदक्प्लवमुदीच्यं स्याद्दक्षिणं दक्षिणाप्लवम्॥' व्याघ्रः—'उत्तरेऽक्षतसंयुक्तान् पूर्वाग्रान् विन्यसेत् कुशान्। दक्षिणे दक्षिणाग्रांस्तु सतिलान् विन्यसेत् कुशान्॥' तत्रैव बौधायनः—'चतुरस्रं त्रिकोणं च वर्तुलं चार्धचन्द्रकम्। कर्तव्यमानुपूर्व्येण ब्राह्मणादिषु मण्डलम्॥' तत्रैव लौगाक्षिः—'हस्तद्वयमितं कार्यं वैश्वदेविकमण्डलम्। दक्षिणे च चतुर्हस्तं पितॄणामङ्घ्रिशोधने॥' कलिकायां संग्रहे तु-प्रादेशमात्रं देवानां चतुरस्रं तु मण्डलम्। त्यक्त्वा षडङ्गुलं तस्माद्दक्षिणे वर्तुलं तथा॥' इत्युक्तम्। यत्तु स्मृत्यन्तरे—'गर्तः पञ्चाङ्गुलो विप्र जानुमात्रो महीभुजि। प्रादेशमात्रो वैश्ये च साधिकः स तु शूद्रके॥ तिर्यगूर्ध्वप्रमाणेन व्याख्यातो दैवपित्र्ययोः। चतुरस्रं वर्तुलं च कथितं गर्तलक्षणम्॥ पादप्रक्षालनं प्रोक्तमुपवेश्यासने द्विजान्। तिष्ठंश्चेत् क्षालनं कुर्यान्निराशाः पितरो गताः॥' इति तत्समूलत्वे मण्डलाग्रे पृथक् ज्ञेयम्। तत्र गोमये हेमाद्रौ भृगुः—'अत्यन्तजीर्णदेहाया वन्ध्यायाश्च विशेषतः। आर्ताया नवसूताया न गोर्गोमयमाहरेत्॥' मात्स्ये-'अक्षताभिः सपुष्पाभिस्तदभ्यर्च्यापसव्यवत्। विप्राणां क्षालयेत्पादावभिवन्द्य पुनः पुनः॥ प्रत्यङ्मुखस्थितः कुर्याद्विप्रपादाभिषेचनम्॥' तत्रैव भविष्ये—'प्रक्षालयेद्विप्रपादान् शन्नोदेवीरित्यापृ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पृथ्वीचन्द्रोदये वृद्धवसिष्ठः-'न कुशग्रन्थिहस्तस्तु पाद्यं दद्याद्विचक्षणः ।' कलिकायां संग्रहे-ततः प्रक्षालयेत्पादौ भार्यास्त्रावितवारिणा ।' तथा— 'श्राद्धकाले यदा पत्नी वामे नीरप्रदा भवेत् । आसुरं तद्भवेच्छ्राद्धं पितृणां नोपतिष्ठते ॥' तत्रैव-'नाधः प्रक्षालयेत्पादौ कर्ता पित्रादिकर्मसु ॥' पाद्यानन्तरमर्घ्यमपि दद्यादिति हेमाद्रिः । तत्रैव लौगाक्षिः-'मण्डलादुत्तरे देशे दद्यादाचमनीयकम् ।' तत्रैव 'विधाय क्षालनं तेषां द्विराचमनमिष्यते । स्वयं चापि द्विराचामेद्विधिज्ञः श्रद्धयान्वितः ॥, हेमाद्रौ नारदीये-'यत्राचमनवारीणि पादप्रक्षालनोदकैः । सङ्गच्छन्ते बुधाः श्राद्धमासुरं तत्प्रचक्षते ॥'

हेमाद्रौ व्यासः-'सव्येनैवासनं धृत्वा दक्षिणे दक्षिणं करम् । व्याहृतीभिः समस्ताभिरासनेपूपवेशयेत् ॥ समाध्वमिति चैत्रोक्त्वा दक्षिणं जानु संस्पृशन् । आस्यतामिति तान्ब्रूयादासनं संस्पृशन्नपि ॥' हेमाद्रौ शातातपः-'द्वौ दैवेऽथर्वणौ विप्रौ प्राङ्मुखावुपवेशयेत् । पित्र्ये तूदङ्मुखांस्त्रींश्च बह्वृचाध्वर्युसामगान् ॥' याज्ञवल्क्यः-द्वौ दैवे प्राक्त्रयः पित्र्ये उदगेकैकमेव वा ।' यत्तु हेमाद्रौ हारीतः-'दक्षिणाग्रदर्भेषु प्राङ्मुखान् ब्राह्मणान् भोजयेत् उदङ्मुखानित्येके' इति तन्मैत्रायणीयविषयम् । 'प्राङ्मुखान् भोजयेदुदङ्मुखानित्येके' इति तत्परिशिष्टात् विकल्प इति हेमाद्रिः । माधवीये यमः-'भिक्षुको ब्रह्मचारी वा भोजनार्थमुपस्थितः । उपविष्टेष्वनुप्राप्तः कामं तमपि भोजयेत् ॥' कौर्मे—अतिथिर्यस्य नाश्नाति न तच्छ्राद्धं प्रचक्षते ।' विप्रनियमो माधवीये—'पवित्रपाणयः सर्वे ते च मौनव्रतान्विताः । उच्छिष्टोच्छिष्टसंस्पर्शं वर्जयन्तः परस्परम् ॥'

तत्रासनानि । पृथ्वीचन्द्रोदये यमः-'आसनं कुतपं दद्यादितरद्वा पवित्रकम् ।'हेमाद्रौ चमत्कारखण्डे—पितृणां घटितं हैमं राजतं वापि चासनम् । येन ताम्रमयं दत्तमासनं पितृकर्मणि ॥ स वै दिव्यासनारूढो नहि प्रच्यवते दिवः ॥' हेमाद्रौ नागरखण्डे—'अयःशङ्कुमयं पीठं प्रदेयं नोपवेशने ।' कलिकायां संग्रहे—'क्षौमं दुकूलं नैपालमाविकं दारुजं तथा । तार्णं पार्णं बृसीं चैव विष्टरादि च विन्यसेत् ॥ अग्निदग्धान्यायसानि भग्नानि च विवर्जयेत् ॥' हेमाद्रौ छागलेयः—'पश्चाद्भागादुपक्रम्य प्राच्यां पङ्क्तिर्यथा भवेत् । दक्षिणासंस्थिता ह्येषा पितृणां श्राद्धकर्मणि ॥' पुलस्त्यः—'श्रीपर्णी वारुणी क्षीरी जम्बुकाम्रकदम्बकम् । सप्तमं बाकुलं पीठं पितृणां दत्तमक्षयम् ॥' संग्रहे—शमी च काश्मरीं शेलुः कदम्बो वारुणस्तथा । पञ्चासनानि शस्तानि श्राद्धे देवार्चने

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तथा ॥' कारिका—'द्वौ दैवे प्राङ्मुखौ पित्र्ये त्रीन्विप्रानुदगाननान् ।' पैठीनसिः—'कुतपः श्राद्धवेलायां श्रोत्रियो यदि दृश्यते ।' आश्वलायनः- नीवीवासोदशान्तेन स्वरक्षार्थं प्रबन्धयेत् ।' वृद्धयाज्ञवल्क्यस्तु--'दक्षिणे कटिदेशे तु तिलैः सह कुशत्रयम् ।' यत्तु कातीयम्—'नीवी कार्या दशागुप्तिर्वामकुक्षौ कुशैः सह । इति तद्वृद्धिश्राद्धे । 'पितॄणां दक्षिणे पार्श्वे विपरीता तु दैविके ।' इति स्मृत्यन्तरात् । वामे दक्षिणे वेत्याचाराद्व्यवस्थेति मदनपारिजाते ।

आचार्यः—प्राणायामत्रयं कृत्वा गायत्रीस्मरणं तथा । श्राद्धं कर्तास्मीति वदेद्विप्रैर्वाच्यं कुरुष्व च ॥ ' ब्राह्मे—'ततस्तिलान् गृहे तस्मिन् विकिरेच्चाप्रदक्षिणम् । श्रद्धया परया युक्तो जपेदपहता इति ॥' स्मृत्यर्थसारे- अपहता इति । 'तिलान्विकीर्य उदीरतामित्यृचा प्रोक्षेत् ।' पराशरः— 'तद्विष्णोरिति मन्त्रेण गायत्र्या च प्रयत्नतः । प्रोक्षयेदन्नजातं तु शूद्रदृष्ट्यादिशुद्धये ॥ ' हेमाद्रौ ब्रह्माण्डे—श्राद्धभूमौ गयां ध्यात्वा ध्यात्वा देवं गदाधरम् । वस्वादींश्च पितॄन् ध्यात्वा ततः श्राद्धं प्रवर्तते ॥ देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च । नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमो नमः ॥ आदिमध्यावसानेषु त्रिरावृत्तं जपेद्बुधः । पितरः क्षिप्रमायान्ति राक्षसाः प्रद्रवन्ति च ॥' तत्रैव स्कान्दे—'तिला रक्षन्त्वसुरान् दर्भा रक्षन्तु राक्षसान् । पङ्क्तिं वै श्रोत्रियो रक्षेदतिथिः सर्वरक्षकः ॥'वसिष्ठः— 'शुद्धवतीभिः कूष्माण्डीभिः पावमानीभिश्च पाकादि प्रोक्षयेत् । इति ।

अथ देवार्चा । तत्र प्रत्युपचारमाद्यन्तयोरपो दद्यादित्युक्तं वृत्तौ स्मृत्यर्थसारे च हेमाद्रौ ब्राह्मे—'आसनेष्वासनं दद्याद्वामे वा दक्षिणेऽपि वा । पितृकर्मणि वामे च दैवे दद्यात्तु दक्षिणे ॥' प्रचेताः—'आसनेष्वासनं दद्यान्नतु पाणौ कदाचन । धर्मोसीत्यथ मन्त्रेण गृह्णीयुस्ते तु तान् कुशान् ॥ ' 'धर्मोऽसि विशिराजा प्रतिष्ठितः, इति मन्त्रः । गालवः- दर्भानादाय हस्ताभ्यां गृहीत्वा दक्षिणे करे । दैवे क्षणः क्रियतां तु निरङ्गुष्ठं करं ततः ॥ ओंतथेति द्विजा ब्रूयुस्ते प्राप्नोतु भवानिति । कर्ता ब्रूयात्ततो विप्रः प्राप्नवानीति वै वदेत् ॥' पृथ्वीचन्द्रोदये बृहन्नारदीये— 'यवैर्दर्भैश्च विश्वेषां देवानामिदमासनम् । दत्त्वेति भूयो दद्याद्वै दैवे क्षण इति क्षणम् ॥' 'तच्च षष्ठ्या चतुर्थ्या वा कार्यम्' इति स एव । ततोर्घ्यं कल्पयेत्' इति मन्वादयः । शौनकजयन्ताभ्यामर्घ्यरहितस्य देवार्चनस्योक्तेः । 'आश्वलायनानां दैवेऽर्घ्यदानं न' इति बोपदेवः । तन्न ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

परिशिष्टप्रयोगपारिजातविरोधात् । वृद्धिश्राद्धे तु दैवेष्यर्घ्यं दद्यात् । 'देवेभ्योऽपि पृथग्दद्यादिहार्घ्यं श्रुतिचोदनात् ।' इति शौनकोक्तेः ।

अथार्घ्यपात्रम् । पृथ्वीचन्द्रोदये मात्स्यपाद्मयोः—'पात्रं वनस्पतिमयं तथा पर्णमयं पुनः । जलजं वापि कुर्वीत तथा सागरसंभवम् ॥' ब्राह्मे—सौवर्णताम्ररौप्याश्मस्फाटिकं शङ्खशुक्तयः । भिन्नान्यपि हि योज्यानि पात्राणि पितृकर्मणि ॥' हेमाद्रौ प्रजापतिः—सौवर्णं राजतं ताम्रं खड्गं मणिमयं तथा । यज्ञियं चमसं वापि अर्घ्यार्थं पूरयेद्बुधः ॥' अत्र विप्रैकत्वद्वित्वचतुष्ट्वादावर्घ्यपात्रे द्वे एव । मानवसूत्रे तु—'द्वे दैविके त्रीणि पित्र्ये एकैकमुभयत्र वा' इत्युक्तम् तदेकविप्रपरं पात्रालाभपरं चेति हेमाद्रिः । मदनरत्ने तु दैवे एकपात्रमुक्तम् । पृथ्वीचन्द्रोदयोऽपि—'त्रीणि पैतृकपात्राणि द्वे द्वे वै वैश्वदेविके ।' इति बृहत्पराशरोक्तेर्द्वे एवेत्याह । बह्वृचानां तु दैवे विप्रद्वित्वेप्येकमर्घ्यपात्रमर्धशो दद्यादित्युक्तं परिशिष्टे प्रयोगपारिजाते च । कलिकायां हारीतः—'दत्तमक्षय्यतां याति खाड्गेनार्घ्यं तु यत्कृतम् ' वृद्धमनुः—'मृन्मयं दारुजं पात्रमयः पात्रं च यद्भवेत् । राजतं दैविके कार्ये शिलापात्रं च वर्जयेत् ॥' पुराणसमुच्चये—'मृत्स्नाभवं तथा कांस्यमारक्तं जन्तुसंभवम् । त्रपुसीसलोहभवं सदा पात्रं च वर्जयेत् ॥' तत्रैव—'अष्टाङ्गुलं भवेत्पात्रं पितॄणां राजतं शुभम् । दशाङ्गुलं तु देवानां सौवर्णं शक्तितः कृतम् ॥ स्थापयेदर्घ्यपात्रे द्वे न्युब्जे तत्र कुशोपरि । द्वे द्वे पवित्रे विधिवत्पात्रयोश्चोपरि क्षिपेत् ॥' यज्ञपार्श्वः—'पवित्रेस्थेति मन्त्रेण पवित्रे छेदयेत्तु ते । ओषधीमन्तरे कृत्वा अङ्गुष्ठाङ्गुलिपर्वणोः ॥ स्फ्येन काष्ठेन लोहेन न मृन्मयनखादिभिः ॥' वसिष्ठः—'तूष्णीं प्रोक्ष्याम्भसा पात्रे कुर्यादूर्ध्वबिले ततः । पूरयेत्पात्रयुग्मं तु कृत्वोपरि पवित्रके ॥'

वृद्धपराशरः—'पात्रद्वयमथार्घ्यार्थं तैजसं चैकवस्तुनः । प्राङ्मुखोऽमरतीर्थेन शन्नोदेव्योदकं क्षिपेत् ॥ यवोसीति यवांस्तत्र तूष्णीं पुष्पाणि चन्दनम् ॥' मानवसूत्रे—'शुमनसः प्रक्षिप्योत्पूय यवान् प्रक्षिप्य' इति । यवोसीति मन्त्रः । पाद्मे—'यवोसि धान्यराजो वा वारुणो मधुमिश्रितः । निर्णोदः सर्वपापानां पवित्रमृषिभिः स्मृतः ॥' 'राजो वा वारुणो मधुसंयुतः' इति परिशिष्टपाठः । गोभिलेन तु—'यवोसि सोमदैवत्यः' इति तिलमन्त्रोऽत्र स्वाहायुक्तः । हेमाद्रौ यमः—'यवहस्तस्ततो देवान् विज्ञाप्यावाहनं प्रति । आवाहयेदनुज्ञातो विश्वेदेवास इत्यृचा ॥' वृद्धपराशरः—'ततः सव्यकरं न्यस्य विप्रदक्षिणजानुनि । देवानावाहयिष्ये-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ऽहमिति वाचमुदीरयेत् । आवाहयेत्यनुज्ञातो विश्वेदेवास आगत । विश्वेदेवाः शृणुतेममिति मन्त्रद्वयं पठेत् ॥' श्राद्धविशेषे विश्वेदेवानामज्ञाने हेमाद्रौ बृहस्पतिः—'उत्पत्तिं नाम चैतेषां न विदुर्ये द्विजातयः । अयमुच्चारणीयस्तैर्मन्त्रः श्रद्धासमन्वितैः ॥ आगच्छन्तु महाभागा विश्वेदेवा महाबलाः । ये अत्र विहिताः श्राद्धे सावधाना भवन्तु ते ॥' इदं चावाहनमर्घ्यपात्रासादनात्प्राक् हेमाद्रिणोक्तम् । तत्र कातीयैः प्राकार्यं तथैव तत्सूत्रात् । अन्यैस्तदुत्तरम् । पृथ्वीचन्द्रोदये शङ्खः—'सयवं पुष्पमादाय चरणादिशिरोन्तकम् । अर्चयेत्यर्चनं कुर्यादन्तरे चोदकं तथा ॥' पित्र्ये तु मूर्धादिपादान्तम् । 'पादप्रभृति मूर्धान्तं दैविके पूजनं भवेत् । शिरःप्रभृति पादान्तं नमो व इति पैतृके ॥' इति मदनरत्ने प्रचेतसोक्तेः । कलिकायां संग्रहे—'तिष्ठन् कृताञ्जलिर्भूत्वा पठेन्मन्त्रं समाहितः । विश्वेदेवाः शृणुत इत्यागच्छन्त्वपरं ततः ॥' हेमाद्रौ जातूकर्ण्यः—'ततोऽर्घ्यपात्रसंपत्तिं वाचयित्वा द्विजोत्तमान् । तदग्रे चार्घ्यपात्रं तु स्वाहार्घ्या इति विन्यसेत् ॥' गार्ग्यः—'दत्वा हस्ते पवित्रं च कृत्वा पूजां च पादतः । या दिव्या इति मन्त्रेण हस्तेष्वर्घ्यं विनिक्षिपेत् ॥' संग्रहे—'विश्वेदेवा इदं वोर्घ्यमिति दानं समादिशेत् ।' तदन्ते स्वाहा नम इति वाच्यम् । 'या दिव्या इति मन्त्रेण स्वाहाकारं नमोन्तकम् ।' इति हेमाद्रौ नागरखण्डात् । आथर्वणसूत्रे तु—'पाद्यमर्घ्यमाचमनीयमिति द्विजकरे निनयेत्' इत्यस्यैव त्रयमुक्तम् । गभस्तिः—'अर्घ्यं पिण्डप्रदानं च स्वस्त्यक्षय्ये तथैव च । गन्धपुष्पादिकं सर्वं हस्तेनैव तु दापयेत् ॥' प्रतिविप्रं या दिव्येत्यावृत्तिः । बह्वृचानां त्वनेन दत्ताघ्यर्यानुमन्त्रणम् । ततः पात्रं देवेभ्यः स्थानमसीति न्युब्जमुत्तानं वा कार्यमिति गारुडे उक्तम् । एतदापस्तम्बानां नियतमन्येषां न ।

हेमाद्रौ विष्णुधर्मे—'गन्धैः पुष्पैश्च धूपैश्च वस्त्रैश्चाप्यथ भूषणैः । अर्चयेद्ब्राह्मणान् शक्त्या श्रद्दधानः समाहितः ॥' पृथ्वीचन्द्रोदये मार्कण्डेयः—चन्दनागरुकर्पूरकुङ्कुमानि प्रदापयेत् ।' विष्णुः—'चन्दनकुङ्कुमकर्पूरागरुपद्मकान्यनुलेपनाय' इति । व्यासः—'अपवित्रकरो गन्धैर्गन्धद्वारेति पूजयेत् ।' कलिकायां स्मृतिः—'गन्धद्वारेति वै गन्धमायने ते च पुष्पकम् । धूरसीत्यमुना धूपमुद्दीप्यस्वेति दीपकम् ॥ युवं वस्त्राणि मन्त्रेण वस्त्रं दद्यात्प्रयत्नतः । आसने स्वासनं ब्रूयादर्घ्येऽस्त्वर्घ्यं द्विजोत्तमः ॥ सुगन्धिश्च सुपुष्पाणि सुमाल्यानि सुधूपकः । सुज्योतिश्चैव दीपे तु स्वाच्छादनमिति क्रमः ॥' विप्राणां गन्धेन वर्तुलं त्रिपुण्ड्रं वा न

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कार्यम् । हेमाद्रौ देवलः—ललाटे पुण्ड्रकं दृष्ट्वा स्कन्धे मालां तथैव च । निराशाः पितरो यान्ति दृष्ट्वा च वृषलीपतिम् ॥' पुण्ड्रकं वर्तुलमित्यपरार्के। मदनरत्ने च—'पुण्ड्रं त्रिपुण्ड्रं वर्तुलमर्धचन्द्रं च ।' 'ऊर्ध्वं च तिलकं कुर्यान्न कुर्याद्वै त्रिपुण्ड्रकम् । ऊर्ध्वं च तिलकं कुर्याद्दैवे पित्र्ये च कर्मणि ॥ निराशाः पितरो यान्ति दृष्ट्वा चैव त्रिपुण्ड्रकम् ॥' इति वृद्ध-पराशरोक्तेः । तिर्यग्लेपो भवत्येव । 'वर्जयेत्तिलकं भाले श्राद्धकाले च सर्वदा । तिर्यगप्यूर्ध्वपुण्ड्रं वा धारयेत्तु प्रयत्नतः ॥' इति व्यासोक्तेरिति पृथ्वीचन्द्रः । यत्तु नारदीये—'ऊर्ध्वपुण्ड्रं च तुलसीं श्राद्धे नेच्छन्ति केचन ।' इति । तत् कर्तृपरम् । हेमाद्रौ ब्राह्मे—'पूतीकं मृगनाभिं च रोचनां रक्तचन्दनम् । कालीयकं तूग्रगन्धं तुरुष्कं चापि वर्जयेत् ॥' कस्तूर्यां विकल्प इति हेमाद्रिः । वृद्धशातातपः—'पवित्रं तु करे कृत्वा यः समालभते द्विजान् । राक्षसानां भवेच्छ्राद्धं निराशैः पितृभिर्गतैः ॥' पुष्पं तु ब्राह्मे—'जातीचम्पकलोध्राश्च मल्लिका बाणबर्बरी । चूताशोकाट-रूषं च तुलसी शतपत्रकम् ॥ कुब्जकं तगरं चैव भृङ्गमारण्यकेतकी । यूथिकामतिमुक्तं च श्राद्धे योग्यानि भो द्विजाः ॥ कमलं कुमुदं पद्मं पुण्डरीकं च यत्नतः । इन्दीवरं कोकनदं कह्लारं च निवेदयेत् ॥' हेमाद्रौ वायुभविष्ययोः—'सुकुमारैः किसलयैर्यवदूर्वाङ्कुरैरपि । संपूजनीयाः पितरः श्रेयस्कामेन सर्वदा ॥' स्कान्दे—'जातिश्च सर्वा दातव्या मल्लिका श्वेतयूथिका । जलोद्भवानि सर्वाणि कुसुमानि च चम्पकम् ॥' तत्रैव वृद्धमनुः—'न नियुक्तः शिखावर्ज्यं माल्यं शिरसि धारयेत् ।'

वर्ज्यानि पृथ्वीचन्द्रोदये भविष्ये—'केतकीं तुलसीपत्रं बिल्वपत्रं च वर्जयेत् । द्रोणं च करवीरं च धत्तूरं किंशुकं तथा' । माधवीये स्मृत्यर्थसारे च तुलसी निषिद्धा । तुलसीनिषेधो निर्मूल इति हेमाद्रिः । समूलत्वेऽपि पिण्डपरः । 'तुलसीगन्धमाघ्राय पितरस्तुष्टमानसाः । प्रयान्ति गरुडारूढास्तत्पदं चक्रपाणिनः ॥' इति प्रयोगपारिजाते पाद्मोक्तेरिति बोपदेवः । वृद्धपराशरः—'न जातीकुसुमैर्विद्वान् बिल्व-पत्रैश्च नार्चयेत् । जपादिकुसुमं भिण्टी रूपिका सकुरण्टकाः ॥ पुष्पाणि वर्जनीयानि श्राद्धकर्मणि नित्यशः ।' हेमाद्रौ शङ्खः—'उग्रग-न्धीन्यगन्धीनि चैत्यवृक्षोद्भवानि च । पुष्पाणि वर्जनीयानि रक्तव-र्णानि यानि च ॥ जलोद्भवानि देयानि रक्तान्यपि विशेषतः ।' अङ्गिराः—'न जातीकुसुमानि दद्यान्न कदलीपत्रम् ।' इति जात्यां विकल्प इति हेमाद्रिः । निषेधः पिण्डविषयः । कुन्दं शंभौ च नो

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दद्यान्नोन्मत्तं गरुडध्वजे । पिण्डे जाती च नो दद्याद्देवीमर्केण नार्चयेत् ॥' इति वृद्धयाज्ञवल्क्योक्तेरिति बोपदेवः । स्मृतिसारे—'आगस्त्यं भृङ्गराजं च तुलसी शतपत्रिका । चम्पकं तिलपुष्पं च षडेते पितृवल्लभाः ॥ केतकीं करवीरं च बकुलं कुन्दकं तथा । पाटलां चैव जातीं च श्राद्धे यत्नेन वर्जयेत् ॥' केचित्पिण्डे तुलसीमाहुः—'पितृपिण्डार्चनं श्राद्धे यैः कृतं तुलसीदलैः । प्रीणिताः पितरस्तैस्तु यावच्चन्द्रार्कमेदिनी ॥' इति मार्कण्डेयोक्तेः ।

धूपस्तत्रैव विष्णुधर्मे—'धूपस्तु गुग्गुलुर्देयस्तथा चन्दनसारजः । अगरुश्च सकर्पूरस्तुरुष्कत्वक् तथैव च ॥' विष्णुः—'घृतमधुयुक्तं गुग्गुलुं श्रीखण्डदेवदारुसरलादि दद्यात् ।' इति । तत्रैव देवलः—'ये हि प्राण्यङ्गजा धूपा हस्तवाताहताश्च ये । न ते श्राद्धे नियोक्तव्या ये च के चोग्रगन्धयः ॥ घृतं न केवलं दद्याद् दुष्टं वा तृणगुग्गुलुम् ॥' दीपमाह विष्णुः—'घृतेन दीपो दातव्यस्तिलतैलेन वा पुनः । वसामेदोद्भवं दीपं प्रयत्नेन विवर्जयेत् ॥' वस्त्रं ब्राह्मे—'कौशेयं क्षौमकार्पासं दुकूलमहतं तथा । श्राद्धेष्वेतानि यो दद्यात्कामानाप्नोति चोत्तमान् ॥' हेमाद्रौ ब्रह्मवैवर्ते—'यज्ञोपवीतं दातव्यं वस्त्राभावे विजानता । पितृभ्यो वस्त्रदानस्य फलं तेनाश्नुतेऽखिलम् ॥' तत्रैव पाद्मे—'निष्क्रयो वा यथाशक्ति वस्त्राभावे प्रदीयते ।' अन्यान्यपि च देयानि । तत्रैव कालिकापुराणे—'धात्वादि-

श्राद्धे देयवस्तुनिर्णयः ।

निर्मिता रम्या दीपिकाः श्राद्धकर्मणि । पितॄनुद्दिश्य यो दद्यात्स भवेद्भाजनं श्रियः ॥ यो धूपदानं पात्रं तु पात्रमारार्तिकस्य च । दद्यात्पितृभ्यः प्रयतस्तस्य स्वर्गेऽक्षया गतिः ॥' विष्णुधर्मे—'यः कञ्चुकं तथोष्णीषं पितृभ्यः प्रतिपादयेत् । ज्वरोद्भवानि दुःखानि स कदाचिन्न पश्यति ॥ स्त्रीणां श्राद्धे तु सिन्दूरं दद्युश्चण्डातकानि च । निमन्त्रिताभ्यः स्त्रीभ्यो वै ते स्युः सौभाग्यसंयुताः ॥' हेमाद्रावादित्यपुराणे—'न कृष्णवर्णं दातव्यं नापि कार्पाससंभवम् । पितृभ्यो नापि मलिनं नोपभुक्तं कदाचन ॥ न छिद्रितं नापदशं न धौतं कारुणापि च ।' कार्पासनिषेधोऽन्यसंभवे । तत्रैव—पितॄन् सत्कृत्य वासोभिर्दद्याद्यज्ञोपवीतकम् । यज्ञोपवीतदानेन विना श्राद्धं तु निष्फलम् ॥' एतद्यतिस्त्रीशूद्रस्त्रीश्राद्धेऽपि देयमिति हेमाद्रिः । तत्रैव नृसिंहपुराणे—'कमण्डलुं ताम्रमयं श्राद्धेषु प्रददाति यः । काष्ठेन निर्मितं वापि नारिकेलमथापि वा ॥ दद्यात् कमण्डलुं श्राद्धे स श्रीमानभिजायते । यो मृत्तिकाविरचितान् श्राद्धेषु च घटान् शुभान् ॥ प्रदद्यात्करकान्वापि सोऽक्षयं विन्दते सुखम् ॥' तत्रैव—'उपानच्छत्रवस्त्राणि भुक्तिपात्रं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कमण्डलुम् । शयनासनयानानि दर्पणव्यजनानि च ॥ अन्नं सुसंस्कृतं गन्धांस्ताम्बूलं दीपचामरे । पितृभ्यो यः प्रयच्छेत्तु विष्णुलोकं स गच्छति ॥' सौरपुराणे—'चामरं तालवृन्तं च श्वेतच्छत्रं च दर्पणम् । दत्त्वा पितृणामेतानि भूमिपालो भवेदिह ॥' तत्रैव नन्दिपुराणे—'अलंकारा प्रदातव्या यथाशक्ति हिरण्मयाः । केयूर-हार-कटक-मुद्रिका-कुण्डलादयः ॥' तथा 'स्त्रीश्राद्धेषु प्रदेयाः स्युरलङ्कारास्तु योषिताम् । मञ्जीरमेखलादामकर्णिकाकङ्कणादयः ॥ आदर्शव्यजनच्छत्रशयनासनपादुकाः । मनोज्ञाः पट्टवासाश्च सुगन्धाश्चूर्णमुष्टयः ॥ अङ्गारधानिकाः शीते योगपट्टाश्च यष्टयः । कटिसूत्राणि रौप्याणि मेखलाश्चैव कम्बलाः ॥ कर्पूरादेश्च भाण्डानि ताम्बूलायतनं तथा । भोजनाधारयन्त्राणि पतद्ग्राहांस्तथैव च । तथाञ्जनशलाकाश्च केशानां च प्रसाधनम् । एतान् दद्यात्तु यः सम्यक् सोऽश्वमेधफलं लभेत् ॥' स्कान्दे--'सौवर्णं राजतं वापि कांस्येनाप्यथ निर्मितम् । दत्त्वा भोजनपात्रं तु सम्राट् भवति भूतले ॥' वामनपुराणे—'बन्दीकृतास्तु ये केचित्स्वयं वा यदि वा परैः । येन केनाप्युपायेन यस्तान्मोचयते नरः ॥ पितरस्तस्य गच्छन्ति शाश्वतं पदमव्ययम् ॥' पराशरः—'वाचयेत्परिपूर्णत्वं वासो दत्त्वा विधानतः ।'

नारदीये—'देवैश्च समनुज्ञातो यजेत्पितृगणं त्वथ ।' तत्र पित्र्ये आसनाद्यशेषमर्चनकाण्डं वैश्वदेविकं ज्ञेयम् । विशेषस्तूच्यते । 'तत्रासने द्विगुणभुग्नाः कुशाः । अत्रावाहनमासनात्पूर्वं वार्घ्यपूरणोत्तरं वाग्नौकरणोत्तरं वेति स्मृतिषु पक्षा उक्ताः । एषां शाखाभेदेन व्यवस्था । द्वितीयपक्ष एव बहुसंमतः । तत्रार्घ्यमाहाश्वलायनः—'तैजसाश्ममयमृन्मयेषु अर्घ्यविचारः । त्रिषु पात्रेष्वेकद्रव्येषु वा दर्भान्तर्हितेष्वप आसिच्य शन्नोदेवीरभिष्टय इत्यनुमन्त्रितासु तिलानावपति—'तिलोऽसि सोमदेवत्यो गोसवे देवनिर्मितः । प्रत्नवद्भिः प्रत्तः स्वधया पितॄनिमाँल्लोकान् प्रीणयाहि नः स्वधा नमः' इति । अश्ममयं स्फाटिकादि । मृन्मयं हस्तकृतमेव । 'कुलालचक्रनिष्पन्नमासुरं दैविकं न तत् । तदेव हस्तघटितं दैविकं केवलं तथा ॥' इति छन्दोगपरिशिष्टात् । अन्यान्यपि पात्राणि पूर्वमुक्तानि । मनुः—अन्नाभावे द्विजाभावे यद्येको ब्राह्मणो भवेत् । पात्राण्यासादयेत्त्रीणि न तु ब्राह्मणसंख्यया ॥' दत्तकादेः कर्तुर्द्विपितृत्वादावपि वचनात् त्रीण्येव पात्राणीति हरिहरः । माधवीये वैजवापः—'अर्घ्ये पितॄणां त्रीण्येव कुर्यात्पात्राणि धर्मवित् । एकस्मिन्वा बहुषु वा ब्राह्मणेषु यथाविधि ॥' हेमाद्रावप्येवम् । अत्रानुमन्त्रणं सकृत् । तिलोसीत्य-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्य प्रतिपात्रमावृत्तिः पितृशब्दस्यानूहश्चेति वृत्तिकृत्। दर्भश्च त्रिगुणं पवित्रम्। 'तिस्रस्तिस्रः शलाकास्तु पितृपात्रेषु पार्वणे। एकोद्दिष्टे शलाकैकां निधायोदकमाहरेत्॥' इति हेमाद्रौ चतुर्विंशतिमतात्। तत्रैव विष्णुः—'दक्षिणाग्रदर्भेषु दक्षिणापवर्गचमसेषु पवित्रान्तर्हितेष्वप आसिञ्चेत्। 'शन्नो देवीरिति मन्त्रेण जलसेचनं बह्वृचभिन्नविषयम्।' अत्रास्मिन्पक्षे प्रतिपात्रं मन्त्रावृत्तिः।

कारिकायाम्—'गन्धपुष्पाणि चैतेषु पात्रेषु प्रक्षिपेदथ।' ब्राह्मे—'जलं क्षीरं दधि घृतं तिलतण्डुलसर्षपान्। कुशाग्रमधुपुष्पाणि दत्त्वाचामेत्ततः स्वयम्॥' जातूकर्ण्यः—'ततोऽर्घ्यपात्रसंपत्तिं वाचयित्वा द्विजोत्तमान्। तदग्रे चार्घ्यपात्राणि स्वधार्घ्या इति विन्यसेत्॥' ततस्तिलहस्तो विप्रसव्यजानौ दक्षिणकरं न्यस्यावाहनं पृच्छेत्। अत्र गोत्रसम्बन्धनामानि द्वितीयान्तत्वं च प्रागुक्तम्। बैजवापगृह्ये-'तिष्ठन् पितॄनावाहयिष्यामीत्यामन्त्र्य।' कौर्मे-'अपसव्यं ततः कृत्वा पितॄणां दक्षिणामुखः। आवाहनं ततः कुर्यादुशन्तस्त्वेत्यृचा बुधः॥ आवाह्य तदनुज्ञातो जपेदायन्तुनस्ततः॥' अत्र सव्यस्यापि प्रागुक्तेर्विकल्पः। अत्राद्यमन्त्रावृत्त्याऽस्मत्पितरममुकशर्माणममुकगोत्रं वसुरूपमावाहयामीत्युक्त्वा मूर्धादिपादान्तं तिलान्विकीर्य-'आयन्तुनः' इति सर्वान्ते सकृज्जपेदिति निबन्धः। अत्रोपवेशनसंवेशनपाद्यार्घ्याचमनीयान्यपि हेमाद्रिणोक्तानि तान्यथर्ववेदिना नियतानि, नान्येषाम्। तेषां च प्रपितामहादिपित्रन्तं प्रातिलोम्येन सर्वः प्रयोगः।

वाराहे—'गन्धपुष्पार्चनं कृत्वा दद्याद्धस्ते तिलोदकम्।' गार्ग्यः—'शिरस्तः पादतो वापि सम्यगभ्यर्चयेत्ततः।' 'ततः 'स्वधार्घ्या' इति पितृपितामहादिविप्राग्रे प्रत्येकं निवेदयेत्' इति कारिकायां वृत्तौ च। आश्वलायनः—'प्रसव्येनेतरपाण्यङ्गुष्ठान्तरेणोपवीतित्वाद्दक्षिणेन वा सव्योपगृहीतेन पितरिदं ते अर्घ्यं, पितामहेदं ते अर्घ्यं प्रपितामहेदं ते अर्घ्यमित्यप्पूर्वं ताः प्रतिग्राहयिष्यन् सकृत्सकृत्स्वधा अर्घ्या इति प्रसृष्टा अनुमन्त्रयीत। 'या दिव्या आपः पृथिवि संबभूवुर्या अन्तरिक्ष्या उत पार्थिवीर्याः। हिरण्यवर्णा यज्ञियास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु॥' इति। अर्घ्यादि प्राग्गन्धादेर्यज्ञोपवीतमेव। अर्घ्यदानात् प्रागन्या अपो दद्यात्। यद्यप्यत्र सव्येन दक्षिणेन वार्घ्यं दद्यादित्युक्तं तथा दक्षिणेनेत्यभिमतोऽर्थः। कारिकायां वृत्तौ चैवम्। 'पित्रादेस्त्रिभिः पौत्रैर्दद्यात्। पितुः स्थाने

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विप्रत्रयं चेदेकमर्घ्यं विभज्य दद्यात्। त्रयाणां 'स्वधा अर्घ्याः' इति सकृत्प्रश्नः। एवं पैतामहादावपि। अन्यजलदानमर्घ्यमन्त्राश्च प्रतिविप्रमावर्तन्ते। तेषु गन्धादौ च प्रतिविप्रं पदार्थानुसमयः काण्डानुसमयो वा। पित्रादित्रयाणामेकविप्रपक्षे त्रिभिः पात्रैरेकस्यैवार्घ्यं दद्यात्' इति वृत्तिः। कारिकापि–स्वधाऽर्घ्या इत्यपोर्घ्यास्ता उपवीती निवेदयेत्।' निवेदनात्प्राक् प्राचीनावीतमेवेत्यर्थः। 'अर्घ्यं सशेषमादाय दक्षिणेन तु पाणिना। सव्यहस्तगृहीतेन निनयेत् पितृतीर्थतः॥ दत्त्वा दत्त्वा निनीतास्ता यादिव्यार्चानुमन्त्रयेत्।' यत्तु—'यादिव्या इति मन्त्रेण हस्तेष्वर्घ्यं विनिक्षिपेत्॥' इति। यच्च वाराहे–'तिलाम्बुना चापसव्यं दद्यादर्घ्यादिकं द्विजः। इति। यच्च व्यासः—गोत्रसम्बन्धनामानि पितॄणामनुकीर्तयन्। एकैकस्य तु विप्रस्य अर्घ्यपात्रं विनिक्षिपेत्॥' इति तद्बह्वृचातिरिक्तविषयम्। तत आचामेत्। एवं मातामहेष्वपि।

आश्वलायनः—संस्रवान् समवनीय ताभिरद्भिः पुत्रकामो मुखमनक्ति'। संस्रवः शेषः। 'संस्रवो हि परिशिष्टो भवति' इति शतपथश्रुतेः। केचित्तु हस्तगलिताम्बु वदन्ति। समवनीयान्त्ये द्वे पात्रे पितृपात्रे आसिच्येति वृत्तिः। 'प्रथमे पात्रे संस्रवान् समवनीय' इति कातीयसूत्राच्च। ब्राह्मे तु—प्रतिबिम्बावलोकनमुक्तम्। स्कान्दे त्वायुःकामस्य नेत्रासेचनमुक्तम्। पित्र्यविप्रैः प्राङ्मुखस्य कर्तुरभिषेकः कार्य इति केचित्। आश्वलायनः—'नोद्धरेत्प्रथमं पात्रं पितॄणामर्घ्यपातितम्। आवृतास्तत्र तिष्ठन्ति पितरः शौनकोऽब्रवीत्॥' 'यावद्विप्रविसर्जनम्' इति तुर्यपादे यमीयः पाठः। अत्र वृत्तिः—'पितृपात्रं समवनयनदेशान्न चालयेदाश्राद्धसमाप्तेः। यस्मात्तत्र तृतीयपात्रेणावृताः' इति। यद्वा 'प्रथमपात्रमेव न्यग्विलं कुर्यात्' इति। कामाभावेपीदमेव शेषप्रतिपादनम्। हेमाद्रौ कौर्मे—'संस्रवांश्च ततः सर्वान् पात्रे कुर्यात्समाहितः। पितृभ्य स्थानमसीति न्युब्जं पात्रं निधापयेत्॥' शूलपाणौ यमस्तु—'पैतृकं प्रथमं पात्रं तस्मै पैतामहं न्यसेत्। प्रपितामहं ततो न्यस्य नोद्धरेन्न च चालयेत्॥' इत्याह। अथ 'संस्रवानानीय तृतीयेनाच्छाद्य न्युब्जीकुर्यात्' इति सर्वैकवाक्यतयार्थ इति केचित्। अत्रिः—'गन्धादिभिस्तदभ्यर्च्य तृतीयेनापिधापयेत्। पितृभ्यः स्थानमसीति शुचौ देशेऽर्चितेऽर्चयेत्॥' अर्चनं न्युब्जीकृतेऽपि तुल्यम्। 'न्युब्जमुत्तरतो न्यसेत्' इति प्रचेतसोक्तेः। सर्वविप्रोत्तरतो न्यसेदिति हेमाद्रिकल्पतरू। विप्रवामे इति हलायुधः। कर्तुर्वामे इति शूलपाणिः। 'उत्तानं विवृतं वापि पितृपात्रं न तद्भवेत्।'इत्युशनसोक्ते-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

न्युब्जतैव साधुः। मातामहादिसंस्रवानपि पितृपात्र एव गृहीत्वा प्रयाजवत्तन्त्रेण न्युब्जीकुर्यात् इति शूलपाणिः। एकोद्दिष्टे तूहेन न्युब्जतेति पितृभक्तौ श्रीदत्तः यमोऽपि—'स्पृष्टमुत्तानमन्यत्र नीतमुद्घाटितं तथा। पात्रं दृष्ट्वा व्रजन्त्याशु पितरस्तं शपन्ति च॥' वैश्वदेवे उत्तानमिति मदनपारिजातः। बैजवापः—'तस्योपरि कुशान् दत्त्वा प्रदद्याद्देवपूर्वकम्। गन्धपुष्पाणि धूपं च दीपं वस्त्रोपवीतके॥' अत्र गन्धादेर्दैवे पित्र्ये च पदार्थानुसमयस्य याज्ञवल्क्योक्तकाण्डानुसमयेन विकल्पो ज्ञेयः। बह्वृचानां तु सूत्रे दैवानुक्तेः काण्डानुसमय एव। अत्र प्राचीनावीती। नामगोत्रसंबुद्ध्याद्युक्तं प्राक् अन्यद्दैववत्तदन्ते आचमनं च। हेमाद्रौ कालिकापुराणे—'निर्वर्त्य ब्राह्मणादेशात् क्रियामेवं यथाविधि। भाजनानि ततो दद्याद्धस्तशौचं पुनः क्रमात्॥' आदेशात्पात्राणि दद्यादित्यन्वयः। तेन तत्रापि प्रश्नानुज्ञे ज्ञेये। तत्रैव ब्राह्मे—'मण्डलानि च कार्याणि नैवारैश्चूर्णकैः शुभैः। गौरमृत्तिकया वापि भस्मना गोमयेन वा॥' भृगुः—'भस्मना वारिणा वापि कारयेन्मण्डलं ततः। चतुःकोणं द्विजाग्र्यस्य त्रिकोणं क्षत्रियस्य तु। मण्डलाकृति वैश्यस्य शूद्रस्याभ्युक्षणं स्मृतम्॥' बह्वृचपरिशिष्टे तु—दैवे चतुरस्रं पित्र्ये वृत्तं मण्डलं कृत्वा क्रमेण सयवान् सतिलांश्च दर्भान् दद्यात्' इत्युक्तम्। मार्कण्डेयः—'यातुधानाः पिशाचाश्च क्रूरा ये चैव राक्षसाः। हरन्ति रसमन्नस्य मण्डलेन विवर्जितम्॥'

हेमाद्रौ हारीतः—'भूमावेव निदध्यान्नोपरि पात्राणि' इति। तानि च हेमाद्रावत्रिराह—'भोजने हैमरौप्याणि दैवे पित्र्ये यथाक्रमम्'। हारीतः—'राजतपार्णताम्रकांस्यपात्राणि भोजने।' इति। तत्रैव वाराहे-'सौवर्णानीह रौप्याणि कांस्यानि तदसंभवे। अन्यान्यपि हि कार्याणि दारुजान्यपि जानता॥ नायसान्यपि कार्याणि पैत्तलानि न तु क्वचित्। न च सीसमयानीह शस्यन्ते त्रपुजान्यपि॥' अत्रिः—'पञ्चाशत्पलिकं कांस्यं द्व्यर्धिकं भोजनाय वै। गृहस्थैस्तु सदा कार्यमभावे हेमरौप्ययोः॥ पालाशेभ्यो विना न स्युः पर्णपात्राणि भोजने।' पृथ्वीचन्द्रस्तु—'कांस्यपात्रे हविर्दृष्ट्वा निराशाः पितरो गताः।' इति ब्राह्मोक्तेः कांस्यपात्रनिषेधमाह। वोपदेवस्तु स्मृतिसंग्रहमुदाजहार—'श्राद्धे पलाशपात्राणि मधुकौदुम्बराणि च। पारिकाकुटजप्लक्षक्रकचानि क्रमाज्जगुः॥ कदलीचूतपनसजम्बुपुन्नागचम्पकाः। अलाभे मुख्यपात्राणां ग्राह्याः स्युः पितृकर्मणि॥' इति। हेमाद्रौ तु कदलीपात्रनिषेधमाहाङ्गिराः—'न जातीकुसुमादि दद्यान्न कदलीपत्रम्' इति। क्रतुः—'असुराणां कुले जाता रम्भा

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पूर्वपरिग्रहे। तस्या दर्शनमात्रेण निराशाः पितरो गताः ॥' एवं पात्राण्यासाद्य भस्ममर्यादां कृत्वा विप्रहस्तशोधनं कुर्यात। तत्र 'पिशङ्ग' 'रक्षाणो' इति मन्त्रद्वयं केचित्पठन्ति। मात्स्ये-'अकृत्वा भस्ममर्यादां यः कुर्यात्पाणिशोधनम्। आसुरं तद्भवेच्छ्राद्धं पितॄणां नोपतिष्ठते ॥' तथैव ब्रह्माण्डे—'प्रक्षाल्य हस्तपात्रादि पश्चादद्भिर्विधानवत्। प्रक्षालनजलं दर्भैस्तिलैर्मिश्रं क्षिपेच्छुचौ ॥' मण्डलोपरीति हेमाद्रिः।

अथाग्नौकरणम्। हेमाद्रौ मार्कण्डेयः—'आहिताग्निस्तु जुहुयाद्दक्षिणाग्नौ समाहितः। अनाहिताग्निश्चौपासनेऽग्न्यभावे द्विजेऽप्सु वा ॥' वायवीये—आहृत्य दक्षिणाग्निं तु होमार्थं वै प्रयत्नतः। अग्न्यर्थं लौकिकं वापि जुहुयात्कर्मसिद्धये ॥' आहिताग्निः-सर्वाधानी। अर्धाधानी तु गृह्य एवेति चन्द्रिकापरार्कमिताक्षरामाधवादयः। तस्यापि दक्षिणाग्नौ लौकिको गृह्य इति हेमाद्रिः कल्पतरुश्च। आद्यपक्ष एव तु युक्तो बहुसंमतश्च। यद्यपि स्मार्ताग्नौकरणं श्रौते दक्षिणाग्नौ न युक्तं तथापि वचनाद्भवतीति हेमाद्रिचन्द्रिकादयः। इदं दर्शश्राद्ध एव। आब्दिकादिषु तु सर्वाधानी पाणौ अर्धाधानी गृह्ये कुर्यादिति हेमाद्रिर्माधवादयश्च। पक्षान्तं कर्म निर्वर्त्य वैश्वदेवं च साग्निकः। पिण्डयज्ञं ततः कुर्यात्ततोऽन्वाहार्यकं बुधः ॥' इति लौगाक्ष्यादिभिः क्रमोक्तेर्विहृतदक्षिणाग्निसत्त्वात्। अतएवात्र वचने साग्निकः आहिताग्निरुक्तो हेमाद्रिणा। एतद्वापस्तम्बादीनामेव। आश्वलायनस्याहिताग्नेः पाणावेवेति वृत्तिः। अर्धाधानिनो गृह्य एव व्यतिषङ्गेणेति प्रयोगपारिजाते परिशिष्टे च। बोपदेवस्त्वाह होमशब्दः पिण्डपितृयज्ञपरः। पितृयज्ञे तु जुहुयाद्दक्षिणाग्नौ समाहितः। श्राद्धे त्वौपासनाग्नौ तु निरग्निर्लौकिकेऽनले ॥ अनग्निर्दूरभार्यश्च पार्वणे समुपस्थिते। सन्धायाग्निं ततः कुर्याद्धोममग्निं समुत्सृजेत् ॥ इति त्रिकाण्डमण्डनोक्तेः। श्राद्धे गृह्याग्नावेवेति लौकिकाग्न्यादिविधानं च तैत्तिरीयादिविषयम्। बह्वृचस्य त्वनग्नेरपि पाणिहोम एव। अग्निपाणी विना सूत्रे विधानान्तरानुक्तेः 'अग्न्यभावे तु विप्रस्य पाणावेवोपपादयेत्।' इति मनूक्तेश्च। वृत्तावप्येवम्।

क्वचित्साग्नेरपि पाणिहोम उक्तो गृह्यपरिशिष्टे—'अन्वष्टक्यं च पूर्वेद्युर्मासिमास्यथ पार्वणम्। काम्यमभ्युदयेऽष्टम्यामेकोद्दिष्टं तथाष्टमम् ॥ चतुर्ष्वाद्येषु साग्नीनां वह्नौ होमो विधीयते। पित्र्यब्राह्मणहस्ते स्यादुत्तरेषु चतुर्ष्वपि ॥' इति। एकोद्दिष्टं सपिण्डीकरणम्। शुद्धे तन्निषेधात्। बह्वृचभाष्यकारास्तु सर्वैकोद्दिष्टेषु पाणिहोममाहुः। इदं च बह्वृचानामेव।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अत्रेदं तत्त्वम्। 'स्थालीपाकेन सह पिण्डार्थमुद्धृत्य' इति सूत्रे 'नात्रापूर्वः स्थालीपाकश्चोद्यते। सर्वश्राद्धेषु प्रसङ्गात्तेनानुवादोयम्' इति वृत्तिकारोक्तेः पार्वणे आथिकस्यानङ्गस्यव्यतिषङ्गस्य वार्षिकादिष्वनतिदेशादर्धाधानिनोऽपि पाणिहोम एवेति वृत्तिस्वरसः। एवं मासिकादावपि। 'षोडशे मासिके श्राद्धे सपिण्डीकरणे तथा। पणावेव तु होतव्यमन्यत्राग्नौ तु हूयते ॥ इति बोपदेवोदाहृतवचनाच्च। भाष्यकारमते तु-सूत्रे स्थालीपाकेनेति करणत्वान्नित्यवच्छ्रवणाच्च पार्वणे सोऽङ्गम्। ततः काम्यादिषु तदभावे कार्यस्य पिण्डदानस्याप्यभावः। एतदेवानुसृत्य विकृतावपि वार्षिकादौ व्यतिषङ्ग उक्तः प्रयोगपरिजाते परिशिष्टे च। तेनैतन्मतेऽर्धाधानिनोऽग्नावेव। वस्तुतस्तु 'स्थालीपाके सह शाखया प्रस्तरं प्रहरति' इतिवत्सहभावमात्रश्रुतेः। पत्नीवते त्वष्टुरुपलक्षणमिव नाङ्गत्वम्। तत्त्वे वा नाङ्गानुरोधेन प्रधानभूतपिण्डदानत्यागो युक्तः। तेन व्यतिषङ्गाभावेप्यग्नौ होमो भवतीति बोपदेवः। अनाहिताग्नेर्गृह्याग्निमतस्तु सर्वमतेऽग्नावेव। वार्षिकादौ वृत्तिमते व्यतिषङ्गो न, अन्यमते त्वस्ति। अत्र यथाचारमनुष्ठेयम्।

आश्वलायनः—'उद्धृत्य घृताक्तमन्नमनुज्ञापयत्यग्नौ करिष्ये करवै करवाणीति वा प्रत्यभ्यनुज्ञा क्रियतां कुरुष्व कुर्वित्यथाग्नौ जुहोति यथोक्तं पुरस्तात्' इति। व्यतिषङ्गपक्षे इदमिति वृत्तिः। करवै करवाणीत्यत्राग्नावित्यनुषङ्गः। पुरस्तात् पिण्डपितृयज्ञे। तच्चैवम्—'मेक्षणेनावदायावदानसंपदा जुहुयात्सोमाय पितृमते स्वधा नमोऽग्नये कव्यवाहनाय स्वधा नम इति स्वाहाकारेण वाग्नौ पूर्वं यज्ञोपवीती मेक्षणमनुप्रहृत्य' इति। अवदानसंपदा उपस्तरणाद्यपेक्षयेत्यर्थः। व्यतिषङ्गपक्षे अतिप्रणीतेऽयं होमोऽन्यथा मुख्ये। 'अतिप्रणीतेऽग्नाविध्मसुपसमाधाय' इति बह्वृचपरिशिष्टात् केचित्तस्य रक्षोनिवर्हणार्थत्वान्मुख्ये वदन्ति। तदेतद्विरोधाच्चिन्त्यम्। प्रयोगपारिजातेप्येवम्। शौनकः—'स्वाहाकारेण होमे तु भवेद्यज्ञोपवीतवान्। तत्र प्रागग्नये हुत्वा पश्चात्सोमाय हूयते ॥ अग्नौ यज्ञोपवीत्येव प्रक्षिपेन्मेक्षणं ततः ॥' छन्दोगपरिशिष्टे—'अग्नौकरणहोमश्च कर्तव्य उपवीतिना। अपसव्येन वा कार्यो दक्षिणाभिमुखेन च ॥' कातीयानां त्वपसव्यमेव। पिण्डपितृयज्ञवद्धुत्वेति सर्वातिदेशात्। सव्यं तु छन्दोगपरम्। गोभिलेनैतदुत्तरमेवापसव्योक्तेः। 'छन्दोगा जुहुयुः सव्येनापसव्येन याजुषाः'-इति वृद्धयाज्ञवल्क्योक्तेश्च। अथ पाणि-होमः। आश्वलायनः-'अभ्यनुज्ञायां पाणिष्वेव वा' इति। पिण्डपितृयज्ञकल्पाभावेना-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ग्न्यभावे काम्यादिष्वित्यर्थः । तेन बह्वृचानामेकोद्दिष्टे पाणिहोमो भवत्येव। निषेधोऽन्यपरः। पाणिष्विति बहुवचनात्सर्वविप्रपाणिषु होम इति वृत्तिः। एवं मातामहेऽपि । शौनकोऽपि-'सर्वेषामुपविष्टानां विप्राणामथ पाणिषु। विभज्य जुहुयात्सर्वं सोमायेत्यादिमन्त्रतः॥' यत्तु हेमाद्रौ कात्यायनः-पित्र्ये यः पङ्क्तिमूर्धन्यस्तस्य पाणावनग्निकः। हुत्वा मन्त्रवदन्येषां तूष्णीं पात्रेषु निक्षिपेत्॥' इति तद्बह्वृचातिरिक्तानाम्। यत्तु तत्रैव मात्स्ये—'अग्न्यभावे तु विप्रस्य पाणौ वाथ जलेऽपि वा। अजकर्णेऽश्वकर्णे वा गोष्ठे वाथ शिलान्तिके॥' इति तत्तीर्थश्राद्धविषयम्। 'तद्यदापां समीपे स्याच्छ्राद्धं ज्ञेयो विधिस्तदा।' इति तत्रैव कात्यायनोक्तेः। निर्जलेऽजकर्णादौ। यत्तु चन्द्रोदये यमः—'दैवविप्रकरेऽनग्निः कृत्वाग्नौकरणं द्विजः।' इति तदभार्यपरम्। 'अपत्नीको यदा विप्रः श्राद्धं कुर्वीत पार्वणम्। पित्र्यविप्रैरनुज्ञातो विश्वेदेवेषु हूयते॥' इति तत्रैव कात्यायनोक्तेः। हूयते इति छान्दसो व्यत्ययः। हेमाद्रौ वायवीये—'विधुरो दैविके कुर्याच्छेषं पित्र्ये निवेदयेत्।' दैवविप्रानेकत्वे तत्रैव—'वैश्वदेवे यदैकस्मिन् भवेयुर्बह्वर्यादयो द्विजाः। तदैव पाणौ होतव्यं स्याद्विधिर्विहितस्तदा॥' सोऽप्याद्यः। 'प्रथमं वा नियम्येत' इति न्यायात्। तेन मृतभार्यस्य दैवे होमः। अनुपनीतब्रह्मचार्यादेस्तु पित्र्ये। 'अग्न्यभावः स्मृतस्तावद्यावद्भार्यां न विन्दति।' इति हेमाद्रौ जातूकर्ण्योक्तेः। सभार्यनष्टाग्नेरपि पित्र्यविप्रकरे इति पृथ्वीचन्द्रः। उपवीतित्वेन दैवे होमः, प्राचीनावीतेन पित्र्ये। यद्वा सर्वत्र दैवपित्र्यकरयोर्विकल्प इति हेमाद्रौ मदनरत्ने पारिजाते च। यदा तु पितृमातामहयोर्दैवपित्र्यविप्रभेदस्तदा भेदेन पाणिहोम इत्यपरार्कचन्द्रिकादयः। यदा तु दैवं तन्त्रं तदा तन्त्रेण सकृदेव पाणिहोम इति केचित्। हेमाद्रिस्तु—'मातामहस्य भेदेऽपि कुर्यात्तन्त्रे च साग्निकः।' इति कातीयस्मृतेर्भेदमाह। एवं पित्र्येऽपि। माधवीयेप्येवम्। एवं साग्नेरपि विदेशादौ पाणिहोमो ज्ञेयः। यत्तु कर्केणाग्निं विना श्राद्धमेव नास्तीत्युक्तम्, तत्सपिण्डीकरणवार्षिकाद्यकरणापत्तेर्यत्किञ्चिदेव। यत्तु बृहन्नारदीये—'अनग्निर्दूरभार्यश्च पार्वणे समुपस्थिते। भ्रातृभिः कारयेच्छ्राद्धं साग्निकैर्विधिवद्द्विजः॥ क्षयाहदिवसे प्राप्ते स्वस्याग्निर्दूरगो यदि। तथैव भ्रातरः स्युश्चेल्लौकिकाग्नाविति स्थितिः॥ औपासनाग्नौ दूरस्थे समीपे भ्रातरि स्थिते। यद्यग्नौ जुहुयाद्वापि पाणौ वा स हि पातकी॥ औपासनाग्नौ दूरस्थे केचिदिच्छन्ति सत्तमाः। पाणावेव तु होतव्यमिति नैतत्समञ्जसम्॥' इति तद्वृद्धानादरादुपेक्ष्यम्।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

हेमाद्रौ यमः—'अग्नौकरणवत्तत्र होमो विप्रकरे भवेत् । पर्युक्ष्य दर्भानास्तीर्य यतो ह्यग्निसमो द्विजः ॥' मेक्षणेन करेण वा होमः । मेक्षणप्रहरणं नेति वृत्तिः । स्मृतिरत्नावल्याम्—'नानुज्ञा पाणिहोमे स्यान्न स्तः पर्यूहनोक्षणे । नाग्ने तमद्यादिति च न स्यातामिध्ममेक्षणे ॥' कर्काचार्योऽप्येवमाह । माधवीये चन्द्रिकायां चानुज्ञादि सर्वं भवतीत्युक्तम् ।

पाणिहोमे प्रश्नाद्याहापरार्के शौनकः—'अनग्निश्चेदाज्यं गृहीत्वा भवत्स्वेवाग्नौकरणम्' इति पूर्ववत्तथास्तु इति । आश्वलायनः—'यदि पाणिष्वाचान्तेष्वन्यदन्नमनुदिशत्यन्नमन्ने सृष्टं दत्तामृध्नुकम्' इति पाणौ हुतं पात्रे निधाय विप्रैराचम्य भोजनार्थमन्ने परिविष्टे हुतशेषं पात्रेषु दद्यादित्यर्थः । सृष्टं-प्रभूतम् । नैमित्तिकं चेदमाचमनं न हुतभक्षणनिमित्तम् । 'अन्नं पाणितले दत्तं पूर्वमश्नन्त्यबुद्धयः । पितरस्तेन तृप्यन्ति शेषान्नं न लभन्ति ते ॥ यच्च पाणितले दत्तं यच्चान्यदुपकल्पितम् । एकीभावेन भोक्तव्यं पृथग्भावो न विद्यते ॥' इति बह्वृचपरिशिष्टात् । हेमाद्रावप्याचमने हेत्वर्थवाद उक्तः 'पाण्यास्यो हि द्विजः स्मृतः' इति । भाष्ये त्वाचान्तेषु भक्षितेषु । चमु भक्षणे भक्षणोत्तरं च नाचमनमग्निसाम्यात् । पूर्वनिषेधस्तु सपिण्डीकरणे ज्ञेयः । ददातिचोदितत्वात् न त्वत्र जुहोतिचोदितत्वादित्युक्तम् । नत्वेतद्बहुसंमतम् । यत्तु बौधायनेन—'तस्मिंस्तु प्राशिते दद्याद्यदन्नं प्रकृतं भवेत् ।' इति भक्षणमुक्तं तत् तच्छाखीयानामेवेति हेमाद्रिः । तत्रैव यमः—'पित्र्यपाणिहुताच्छेषं पितृपात्रेषु निक्षिपेत् । अग्नौकरणशेषं तु न दद्याद्वैश्वदेविके ॥' एतदग्निहोमेऽपि समम् । कर्कस्तुसूत्रे हुतशेषं दत्त्वेत्यविशेषात्सर्वविप्रेषु दद्यादित्याह । तत्रैव वृद्धवसिष्ठः—'पित्र्यविप्रकरे हुत्वा शेषं पात्रेषु निक्षिपेत् । पिण्डेभ्यः शेषयेत्किञ्चिन्न दद्याद्वैश्वदेविके ॥'

अथापस्तम्बानां सूत्रे—'उद्ध्रियतामग्नौ च क्रियतामित्यामन्त्रयते काममुद्ध्रियतां काममग्नौ च क्रियतामित्यतिसृष्ट उद्धरेज्जुहुयाच्च' । नष्टाग्निविधुरादेर्विशेषो बृहन्नारदीये—'नष्टाग्निर्दूरभार्यश्च पार्वणे समुपस्थिते । संधायाग्निं ततो होमं कृत्वा तं विसृजेत्पुनः ॥' अयाश्चेति तत्कालेऽग्निं संधाय हुत्वा त्यजेदित्यर्थः । एतदापस्तम्बानामेव । पाणिहोमस्तु छन्दोगादीनाम् । विश्वप्रकाशेऽपि—'साग्निरौपासनेऽनग्निरग्नौ कुर्वीत लौकिके । पाणौ होमं प्रशंसन्ति नत्वापस्तम्बशाखिनाम् ॥ स्नातका विधुरा वा स्युर्यदि वा ब्रह्मचारिणः । अग्नौकरणहोमं तु कुर्युस्ते लौकिकेऽनले ॥ अयाश्चाग्ने मनोज्योतिरुद्बुध्य व्याहृतीर्हुनेत् ॥' ततोऽनुज्ञातो-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ऽग्नीन्धनाद्याज्यभागान्ते यन्मे मातेत्याद्यैर्जुहुयात् । तत्र सप्तान्नाहुतयः षडाज्यस्येति त्रयोदश । व्यत्ययो वा । यथा—'यन्मे माता प्रलुलोभ तन्मे रेतः पिता वृङ्क्तां यास्तिष्ठन्ति' इति द्वाभ्याममुष्मैस्वाहेति पितुर्नाम्ना द्वौ होमौ । यन्मे पितामही प्रलुलोभ तन्मे रेतः पितामहो वृङ्क्तामन्तर्दधे ऋतुभिरिति तन्नाम्ना पितामहाय द्वौ । यन्मे प्रपितामही प्रलुलोभ तन्मे रेतः प्रपितामहो वृङ्क्तामन्तर्दधे ऋतुभिरिति तन्नाम्ना प्रपितामहाय द्वौ । मातामहेषु तूहः—'यन्मे मातामहो प्रलुलोभ तन्मे रेतो मातामहो वृङ्क्ताम् । अन्यं मातामहाद्दधे इत्यादौ । यन्मे मातुः पितामही प्रलुलोभ तन्मे रेतो मातुः पितामहो वृङ्क्ताम् । अन्यं मातुः पितामहाद्दधे । यन्मे मातुः प्रपितामही प्रलुलोभ तन्मे रेतो मातुः प्रपितामहो वृङ्क्ताम । अन्यं मातुः प्रपितामहाद्दधे । सर्वत्राप्यमुष्या इत्यत्र ङेन्तं तत्तन्नाम योज्यम । तद् गृह्यसंग्रहे—'योज्यः पित्रादिशब्दानां स्थाने मातामहादिकः । अन्नहोमे तथा स्पर्शे जलपिण्डादिदानके ॥ यन्मे मातामहीत्यादि तत्रोदाहरणं भवेत् ॥' ततो ये चेत्येकान्नाहुतिः । ततः स्वाहा पित्र्ये इत्याद्यैराज्यं हुत्वा स्विष्टकृतं हुत्वा सर्वभक्ष्यं किञ्चिदादायोदगुष्णं भस्मापोह्य तत्र तूष्णीं स्वाहाकारेण जुहोति । परिषेचनान्तं स्थालीपाकवत् ।

अयमग्नौकरणहोमो मासिकश्राद्ध एव । 'तच्च स्मार्ताग्न्यभावे न कार्यम्' इति केचित् । कार्यमेवेति बहवः । अत एव सर्वाधानिनो होमवर्ज्यं मासिकश्राद्धमुक्तं सुदर्शनभाष्ये । महालये तद्वदित्येके । प्रकरणान्तरत्वात् कर्मान्तरत्वेन स्मार्तपार्वणवत्कार्यम् इति त्वस्मद्गुरवः । आब्दिकादिषु तु स्मार्तपार्वणविधिरेव । एवं मातृवार्षिकादिषु । मासिश्राद्धविकृतावष्टकायां मातृश्राद्धे वैकृतहोमेन प्रकृतहोमबाधः । 'अन्वष्टकासु मातृश्राद्धं न' इति भाष्ये । तत्रापि श्राद्धान्तरवत क्रियमाणे तु यन्मे मातेत्यादौ गुणत्वेऽपि मातृप्राधान्यं विवक्षितम् । 'मासिश्राद्धेन कल्पो व्याख्यातः' इति सूत्रात् । 'आग्नेय्येव मनोता कार्यम्, इति वचनादग्निशब्दस्यैव वैकृतदेवताभिधायित्वम् । तेनामुष्मा इत्यत्र 'अमुकशर्मभ्यां पितृभ्याम्' इत्याद्यूहः कार्यः । 'तच्च मासिकश्राद्धं जीवत्पित्रादीनां व्युत्क्रममृतपित्रादीनां च कार्यम्' इत्युक्तं सुदर्शनभाष्ये । तत्प्रकारस्तु वक्ष्यते । मातापित्रोर्द्वित्वादौ तु नोहः । 'तस्मादृचं नोहेत्' इति निषेधात्, प्रकृतावूहाभावाच्च पत्नीं सन्नह्येतिवत् । उपदेशिमते तूहः । यथा—'यन्मे मातरौ प्रलुलोभतुश्चरत्यावननुव्रते' इत्याद्यस्मत्पितृकृतमासिश्राद्धनिर्णये ज्ञेयमिति दिक् । अन्यत्प्राग्वत् ।

अथ परिवेषणम् । 'तच्चोपवीत्येवाज्येन देवपूर्वं 'आमासुपक्वम्' इति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पात्राण्युपस्तीर्य कुर्यात्' इति हेमाद्रिः। भारते दानधर्मेऽपि—'आज्याहुतिं विना नैव यत्किञ्चित् परिविषयते। दुराचारैश्च यद्भुक्तं तं भागं रक्षसां विदुः॥' तत्रैव शौनकः— विधिना देवपूर्वं तु परिवेषणमाचरेत्।' तत्रैव धर्मः—'फलस्यानन्तता प्रोक्ता स्वयं च परिवेषणे।' तत्रैव वायुभविष्ययोः—'भार्यया श्राद्धकाले तु प्रशस्तं परिवेषणम्।' ब्रह्माण्डे—'नापवित्रेण नैकेन हस्तेन न विना कुशम्। नायसे नायसेनैव श्राद्धे तु परिवेषयेत्॥', वसिष्ठः—'आयसेन तु पात्रेण यदन्नं संप्रदीयते। भोक्ता विष्ठासमं भुङ्क्ते दाता च नरकं व्रजेत्॥' पैठीनसिः-'सीसकायसरीतिपात्राण्ययज्ञियानि।' तत्रैव हारीतः—'सौवर्णराजताभ्यां च खड्गेनौदुम्बरेण वा। दत्तमक्षय्यतां याति फल्गुपात्रेण वा पुनः'॥ कार्ष्णाजिनिः—'दर्व्या देयं घृतं चान्नं समस्तव्यञ्जनानि च। उदकं चैव पक्वान्नं नो दर्व्या तु कदाचन॥' यमः—'पङ्क्त्यां विषमदातुश्च निष्कृतिर्नैव विद्यते।' पृथ्वीचन्द्रोदये पराशरः—'सर्वदा च तिला ग्राह्या पितृकृत्ये विशेषतः। भोज्यपात्रे तिलान् दृष्ट्वा निराशाः पितरो गताः॥' चन्द्रिकायां वृद्धशातातपः—'हस्तदत्तास्तु ये स्नेहा लवणव्यञ्जनादयः। पितृणां नोपतिष्ठन्ति भोक्ता भुञ्जीत किल्बिषम्॥ (तस्मादन्तरितं कुर्यात्पर्णेनाथ तृणेन वा)॥' घृतपात्रे विशेषो ग्रन्थान्तरे—'ओदने परमान्ने च पात्रमासाद्य मुग्धधीः। घृतेन पूरयेत्पात्रं तद्घृतं रुधिरं भवेत्॥' घृतादिपात्राणि भूमौ स्थापयेन्न भोजनपात्रे इति मदनरत्ने। संग्रहे—'हस्तदत्तं तु नाश्नीयाल्लवणव्यञ्जनादिकम्। अपक्वं तैलपक्वं च हस्तेनैव प्रदीयते॥'

पात्रालम्भनमुक्तं चतुर्विंशतिमते-'उत्तानं दक्षिणं सव्यं नीचं पात्राण्युपस्पृशेत्।' याज्ञवल्क्यः-'दत्त्वान्नं पृथिवीपात्रमिति पात्राभिमन्त्रणम्। कृत्वेदं विष्णुरित्यन्ने द्विजाङ्गुष्ठं निवेशयेत्॥' बौधायनः—'विप्राङ्गुष्ठेनानखेनानुदिशति'। 'पृथिवी ते पात्रं द्यौरपिधानं ब्राह्मणस्य मुखेऽमृतेऽमृतं जुहोमि ब्राह्मणानां त्वा विद्यावतां प्राणापानयोर्जुहोम्यक्षितमसि मा मे पितृणां क्षेष्ठा अमुत्रामुष्मिँल्लोके' इति। अद्य जुहोम्यग्रे स्वाहाशब्दः कातीयसूत्रे उक्तः। पैत्रे स्वधाशब्दः। अङ्गुष्ठे विशेषमाह हेमाद्रौ धौम्यः—'परिवृत्य नचाङ्गुष्ठं द्विजस्यान्ने। निवेशयेत्।' तथा—'उत्तानेन तु हस्तेन द्विजाङ्गुष्ठनिवेशनम्। यः करोति द्विजो मोहात्तद्वै रक्षांसि भुञ्जते॥' तत्रैव यमः-'विष्णो हव्यं च कव्यं च ब्रूयाद्रक्षस्व च क्रमात्।' दैवे पित्र्ये चेत्यर्थः। तत्रैवात्रिः-'संबन्धनामगोत्राणि इदमन्नं ततः स्वधा। पितृक्रमादुदीर्येति स्वसत्तां विनिवर्तयेत्॥ हस्तेनामुक्तमन्नाद्यमिदमन्नमुदीरयेत्॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अत्र 'अन्नदाने चतुर्थी स्यात्' इत्यादिविशेषाः पूर्वमुक्ताः। अत्र पूर्वोक्तमन्त्रान्ते पुरूरवार्द्रवसंज्ञका विश्वेदेवा देवता इदमन्नं सपरिकरं हव्यम्। अयं ब्राह्मणस्त्वाहवनीयार्थे दत्तं दास्यमानं चातृप्तेः गयेयं भूः गदाधरो भोक्ता इदमन्नं ब्रह्म सौवर्णपात्रस्थमन्नमक्षय्यवटच्छायास्थममुकेभ्यो विश्वेभ्यो देवेभ्य इदमन्नममृतरूपं परिविष्टं परिवेद्यमाणं चातृप्तेः स्वाहा नमो न मम' इति बह्वृचपरिशिष्टहेमाद्र्याद्यनुमतः प्रयोगः। एवं पित्र्ये--अमुकगोत्रवसुरूपादि तत्तन्नाम ज्ञेयम्। ततो 'ये देवासः' इति दैवे, 'ये चेह पितरः' इति पित्र्ये केचिज्जपन्ति।

ततोऽच्छिद्रं वाचयेत्। तत्रैव प्रचेताः—'आपोशनकरे विप्रे संकल्पाच्छिद्रभाषणात्। निराशाः पितरो यान्ति देवैः सह न संशयः॥' पारस्करः—संकल्प्य पितृदेवेभ्यः सावित्रीमधुमज्जपः। श्राद्धं निवेद्यापोशनं जुषप्रैषोऽथ भोजनम् ॥' निवेद्येति ब्रह्मार्पणं कृत्वेत्यर्थः। अत एव वृहन्नारदीयेऽन्नत्यागमुक्त्वोक्तम्—'दत्तं हविश्च तत्कर्म विष्णवे वै समर्पयेत्।' इति। यत्तु कृत्यरत्ने कार्ष्णाजिनिः—'अपसव्येन कर्तव्यं पितृकृत्यमशेषतः। अन्नदानादृते सर्वमेवं मातामहेष्वपि॥' इति तदप्येतत्परम्। तत्र 'ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविः' 'हरिर्दाता हरिर्भोक्ता' 'चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च' इति केचित्पठन्ति। धर्मप्रदीपे—'ततोऽन्नं पितृदेवेभ्यः संकल्प्य च यथाविधि। दत्तं यद्दास्यमानं च आतृप्तेर्न ममेति च॥' तथा—'श्राद्धीयान्नस्य संकल्पो भूमावेव प्रदीयते। हस्तेषु दीयमानं तु पितॄणां नोपतिष्ठते॥ वैश्वदेवस्य वामे तु पितृपात्रस्य दक्षिणे। संकल्पोदकदानं स्यान्नित्यश्राद्धे यथारुचि॥' प्रचेताः—'आपोशनं प्रदायाथ सावित्रीं निर्जपेदथ। मधुवाता इति तृचं मध्वित्येतत्त्रिकं तथा॥' मिताक्षरायां पारस्करः—'संकल्प्य पितृदेवेभ्यः सावित्रीमधुमज्जपः। श्राद्धं निवेद्यापोशनं जुषप्रैषोऽथ भोजनम्॥ गायत्रीं त्रिः सकृद्वापि जपेद्व्याहृतिपूर्विकाम्। मधुवाता इति तृचं मध्वित्येतत्त्रिकं तथा॥' याज्ञवल्क्यः—'सव्याहृतिं च गायत्रीं मधुवाता इति त्र्यृचम्। जप्त्वा यथासुखं वाच्यं भुञ्जीरंस्तेऽपि वाग्यताः॥' यथासुखं जुषध्वमिति वाच्यम्। अत्रिः—'असंकल्पितमन्नाद्यं पाणिभ्यां यद्युपस्पृशेत्। अभोज्यं तद्भवेदन्नं पितॄण नोपतिष्ठते॥ अन्नं दत्तं न गृह्णीयाद्यावत्तोयं न संपिबेत्॥' आपोशने विशेषमाह स्मृतिसमुच्चये—'आपोशनं वामभागे सुरापानसमं भवेत्। दक्षभागे तु यः कुर्यात्सोमपानसमं भवेत्॥' तथा—'पुनरापूर्यापोशनं सुरापानसमं भवेत्।' हेमाद्रावत्रिः—'दत्ते वाप्यथवाऽदत्ते भूमौ यो

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

निक्षिपेद् बलिम् । तदन्नं निष्फलं याति निराशैः पितृभिर्गतैः ।।' केचिदाज्येन कुर्वन्ति, तन्न 'पायसेन तथाज्येन माषान्नेन तथैव च । न कुर्याद् बलिदानं तु ओदनेन प्रकल्पयेत् ।। इति स्मृतिसारे निषेधात् । शङ्खः– 'श्राद्धे नियुक्तान् भुञ्जानान्न पृच्छेल्लवणादि तु । उच्छिष्टाः पितरो यान्ति पृच्छतो नात्र संशयः ।।'

कात्यायनः—'अश्नुवत्सु जपेत्सव्याहृतिकां गायत्रीं सकृत्त्रिर्वा राक्षोघ्नीः पौरुषं सूक्तमप्रतिरथम्' इति । हेमाद्रौ सौरपुराणे-'ऐन्द्रं च पौरुष सूक्तं श्रावयेद्ब्राह्मणांस्ततः ।' मात्स्यपाद्मयोः–'ब्रह्मविष्ण्वर्करुद्राणां स्तोत्राणि विविधानि च । इन्द्रेशसोमसूक्तानि पावमानीश्च शक्तितः ।। मण्डलब्राह्मणं तद्वत् प्रीतिकारी च यत्पुनः । अभावे सर्वविद्यानां गायत्रीजपमाचरेत् ।।' पृथ्वीचन्द्रोदये ब्राह्मे-'वीणां वंशध्वनिं चाथ विप्रेभ्यः संनिवेदयेत् । जपेच्च पौरुषं सूक्तं नाचिकेतत्रयं तथा ।। त्रिमधु त्रिसुपर्णं च पावमानीर्यजूंषि च ।।' हेमाद्रावत्र:— अभिश्रवणी- यमन्त्राः । हुंकारेणापि यो ब्रूयाद्धस्ताद्वापि वदेद्गुणान् । भूतलाच्चोद्धृतेपात्रं मुञ्चेद्धस्तेन वा पिबेत् ।। प्रौढ़पादो बहिःकच्छो बहिर्जानुकरोऽथ च । अङ्गुष्ठेन विनाश्नाति मुखशब्देन वा पुनः ।। पीतावशिष्टतोयानि पुनरुद्धृत्य वा पिबेत् । खादितार्धात् पुनः खादेन्मोदकानि फलानि च ।। मुखे न धमेदन्नं निष्ठीवेद्भाजनेऽपि वा । इत्थमश्नन्द्विजः श्राद्धं हत्वा गच्छत्यधोगतिम् ।।' जाबालिः–'इष्टमुष्णं हविष्यं च दद्यादन्नं शनैः शनैः । वृद्धशातातपः—'अपेक्षितं याचितव्यं श्राद्धार्थमुपकल्पितम् । न याचते द्विजो मूढ़ः स भवेत् पितृघातकः ।।' यत्तु यमः —'श्राद्धे द्विजो नैव दद्यान्न याचेन्नैव दापयेत् ।' इति तद्दत्तसंपादितवस्तुविषयमिति हेमाद्रिः । हारीतः—'ऊर्ध्वपाणिश्च विहसन् सक्रोधो विस्मयान्वितः । भुग्नपृष्ठश्च यद्भुङ्क्ते न तत्प्रीणाति वै पितॄन् ।।' प्रचेताः —'न स्पृशेद्वामहस्तेन भुञ्जानोऽन्नं कदाचन । न पादौ न शिरो बस्तिं न पदा भाजनं स्पृशेत् ।।' शङ्खः—श्राद्धपङ्क्तौ तु भुञ्जानो ब्राह्मणो ब्राह्मणं स्पृशेत् । तदन्नमत्यजन् भुक्त्वा गायत्र्यष्टशतं जपेत् ।।' उशनाः—भोजनं तु न निःशेषं कुर्यात् प्राज्ञ कथञ्चन । अन्यत्र दध्नः क्षीराद्वा क्षौद्रात्सक्तुभ्य एव च ।।' ब्राह्मे — 'न चाश्रु पातयेज्जातु न शुष्कां गिरमीरयेत् । चोद्वीक्षेत भुञ्जानान्न च कुर्वीत मत्सरम् ।।' यमः—'स्वाध्यायं श्रावयेत्सम्यग्धर्मशास्त्राणि चैव हि ।।' प्रचेताः—'भुञ्जानेषु तु विप्रेषु ऋग्यजुः सामलक्षणम् । जपेदभिमुखो भूत्वा पित्र्यं चैव विशेषतः ।। यजूंषि चैव रुद्रं च रक्षोघ्नीश्च च

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

एव च।' राक्षोघ्नीः- कृष्णुष्वरक्षोहणमित्याद्याः। तत्रैव निगमः- भुञ्जत्सु जपेत् पावमानीरुदीरतांमध्वन्नवतीश्च ॥' अन्नवत्यः पितुं नुस्तोषमिति। पृथ्वीचन्द्रोदये भरद्वाजः—'भुञ्जानेषु तु विप्रेषु प्रमादात्स्रवते गुदम्। पादकृच्छ्रं ततः कृत्वा अन्यं विप्रं नियोजयेत् ॥' क्षणपाद्यादि दत्त्वेत्यर्थः।

विप्रवमने तत्रैव दक्षः—'निमन्त्रितस्तु यः श्राद्धे भोजने मुखनिःसृते। तदैव होमं कुर्वीत स्वाग्नौ विप्रः समाहितः ॥ प्राणादिपञ्चभिर्मन्त्रैर्यावद्द्वात्रिंशसंख्यया। ब्राह्मणस्तु ततः कृत्वा घृतप्राशनमाचरेत् ॥' ऋग्विधाने तु - 'इन्द्राय सामसूक्तेन श्राद्धविघ्नो यदा भवेत्। अग्न्यादिभिर्भोजनेन श्राद्धं संपूर्णमेव हि ॥' इत्युक्तम्। अग्न्यादिभिरिति लौकिकाग्निस्थापनचरुनिर्वापाज्यभागान्ते नामगोत्रपूर्वमग्नौ पितॄनावाह्य संपूज्यान्नत्यागं कृत्वा प्राणादिभिर्द्वात्रिंशदाहुतीर्हुनेदित्यर्थः। भोजनेन पुनःश्राद्धेन। तेन होमः पुनः श्राद्धं चेति पक्षद्वयमुक्तम्। सूक्तजपस्तूभयानुगतः। स्मृतिसंग्रहे—'प्राधान्यं पिण्डदानस्य भोजनस्य तदङ्गता। अतो भुक्तिक्रियाहानौ श्राद्धावृत्तिं न मन्वते ॥ 'पिण्डदानोत्तरं वान्तौ होम एव नावृत्तिः। पिण्डदानात् प्राग्वान्तौ तद्दिने उपवासं कृत्वा परेद्युः पुनः श्राद्धं कार्यमित्यर्थः। तत्रैव—'श्राद्धपङ्क्तौ तु भुञ्जानो ब्राह्मणो वमते यदि। लौकिकाग्निं प्रतिष्ठाप्य अर्चयेच्च हुताशनम् ॥' तथा—,एक एव यदा विप्रो भोजने छर्दितो यदि। तदैवाग्निं समाधाय होमं कुर्याद्यथाविधि ॥' द्वितीयपक्षे ऋग्विधाने—'भोजनोपक्रमादूर्ध्वं प्रक्रमात् पूर्वतो यदि। श्राद्धविघ्ने पुनः कार्यं जपहोमौ न तृप्तिदौ ॥' स्मृतिसंग्रहे--अकृते पिण्डदाने तु भुञ्जानो ब्राह्मणो वमेत्। पुनःपाकात्तु पिण्डदानं यथाविधि ॥' पिण्डदानं श्राद्धम्—'अकृते पिण्डदाने तु पिता यदि वमेत्तदा। पुनः पाकं प्रकुर्वीत श्राद्धं कुर्याद्यथाविधि ॥' इति तत्रैवोक्तेः। तथा—पित्रर्थानां त्रयाणां च पिता च वमते यदि। तद्दिने चोपवासः स्यात्पुनः श्राद्धं परेऽहनि॥ वमने वा विकिरे वा तद्दिनं परिवर्जयेत् ॥' एषु वचनेषु मूलं चिन्त्यम्। इदं मासिकाब्दिकविषयम्। दर्शादौ तु वान्तावामेन तदैव कार्यम्।' श्राद्धविघ्ने द्विजातीनामामश्राद्धं प्रकीर्तितम्। अमावस्यादिनियतं माससंवत्सरादृते ॥' इति मरीचिस्मृतेः श्राद्धे पिण्डदानमेव प्रधानमिति कर्काचार्याः। तन्मते दधीक्तो होम एव नावृत्तिः। विप्रभोजनमिति मेधातिथिः। भोजनपिण्डदानाग्नौकरणानीति कपर्दिधूर्तस्वामि हेमाद्र्यादयः। तन्मते पूर्वोक्तो निर्णयः। अन्नत्यागमात्रं प्रधानम्। भोजनं तु प्रति तिपत्तिरूपमङ्गलम्। अतो वान्तौ तद्धानेऽपि नावृत्तिरिति गौडमैथिला-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दयः। तन्न। श्राद्धस्य यागदानोभयरूपत्वात्संपूर्णदानाभावात् भोजनस्याङ्गत्वेऽपि सोमवमने इव नैमित्तिकविधानमिति युक्तं प्रतीमः।

अत्रेदं तत्त्वम्। वैश्वदेविकस्य वमने होम एव नावृत्तिः अङ्गत्वात्। तच्च रक्षार्थत्वात् 'इष्टिश्राद्ध क्रतूदक्षौ' इत्यादिस्मृतेश्च। तत्र जयान् जुहुयादितिवत्। पितामहादेरपि तथा। पितेत्युक्तेरिति केचित्। तस्यापि प्रधानत्वात्पितृवदिति तु युक्तम्। सपिण्डीकरणादौ वार्षिकवत्। 'सपिण्डीकरणादीनि यानि श्राद्धानि षोडश। तत्र पिण्डप्रधानत्वं प्रेतत्वविनिवर्तकम्॥' इति स्मृतेः महैकोद्दिष्टादौ तूभयप्राधान्यादावृत्तिरेव। एक एव द्विजो भोज्यः पिण्डोऽप्येतो विधीयते।, इति स्मृतेः। वृद्धिसङ्कल्पनित्यश्राद्धादौ तु भोजनप्रधान्याद्वान्तावावृत्तिरेव। 'वृद्धिश्राद्धे विकल्पेन पिण्डदानं बुधैः स्मृतम्। नित्यश्राद्धमदैवं स्यात्पिण्डदानविवर्जितम्॥' इति स्मृतेः। 'भुक्तिक्रियायाः प्रधान्यं श्राद्धे सङ्कल्पसंज्ञके। तत्रैव पित्र्यविप्रस्य तूपघाते पुनः क्रिया॥' इति संग्रहोक्तेश्च। मघादावप्येवम्। तीर्थमहालयादौ दर्शवदित्याशार्काद्यालोचनेन प्रतीमः।

आश्वलायनः—'तृप्तान् ज्ञात्वा मधुमती श्रावयेन्नक्षन्नमीमदन्तेति च संपन्नमिति पृष्ट्वा यद्यन्नमुपभुक्तं तत्तत्स्थालीपाकेन सह पिण्डार्थमुद्धृत्य शेषं निवेदयेभिमतेऽनुमते वा'। इति अत्र गायत्री मध्विति त्रिकजपोऽपि ज्ञेयः। 'तृप्तान्बुध्वान्नमादाय सतिलं पूर्ववज्जपेत्। इति प्रचेतसोक्तेः। व्यासः—'तृप्ताः स्थेति तु पृष्टास्ते ब्रूयुस्तृप्ताः स्म इत्यथ।' अभिमते विप्रैः स्वकर्तुमिष्टे। 'शौनकोऽपि—'अन्नशेषैश्च किं कार्यमिति पृच्छेत तांस्ततः। ते इष्टैः सह भोक्तव्यमिति प्रत्युक्तिपूर्वकम्॥ प्रदद्युः सकलं तस्मै स्वीकुर्युर्वा यथारुचि॥' श्राद्धविशेषे प्रश्नभेदमाह हेमाद्रौ विष्णुः—'पित्र्ये स्वदितमिति, गोष्ठ्यां सुश्रुतं संपन्नमिति, 'अभ्युदये दैवे रोचते इति, आयुष्यमिति स्वैरेषु। स्वैरमिच्छाश्राद्धम्। याज्ञवल्क्यः-'अन्नमादाय तृप्ताःस्थ शेषं चैवानुमान्य च। तदन्नं प्रकिरेद्भूमौ दद्यादापः सकृत्सकृत॥, इदं चात्र विकिरदानमन्यशाखिनाम्। अश्वलायनानां तु पिण्डान्त एव सूत्रकृतोक्तम्। कात्यायनस्तु—विकिरोत्तरं गायत्र्यादिजपं तृप्तिप्रश्नं चाह। हेमाद्रौ देवलः—'ततः सर्वासनं पात्रे गृहीत्वा विविधं बुधः। तेषामुच्छेषणस्थाने विकिरं भुवि निक्षिपेत्'। माधवीये प्रचेताः—'सार्ववर्णिकमादाय ये अग्नीति भुवि क्षिपेत्।' स च कुशे कार्यः। दर्भेषु विकिरश्च यः इत्युक्तेः मन्त्रः कातीयः। 'अग्निदग्धाश्च ये जीवा येप्यदग्धाः कुले मम। भूमौ दत्तेन तृप्यन्तु तृप्ता यान्तु परां गतिम्॥' इति। अन्ये तु—'असो-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मपाश्च ये देवा यज्ञभागविवर्जिताः। तेषामन्नं प्रदास्यामि विकिरं वैश्वदेविकम् ॥' इति हेमाद्रौ गोभिलोक्तेन दैवे। 'असंस्कृतप्रमीता ये त्यागिन्यो याः कुलस्त्रियः। दास्यामि तेभ्यो विकिरमन्नं ताभ्यश्च पैतृकम् ॥' इत्यग्निपुराणोक्तेन पित्र्येऽन्नं विकीर्य। 'ये अग्निदग्धाः, इत्युच्छिष्टपिण्डः कुशोपरि पृथग्दद्यादित्याहुः। पृथ्वीचन्द्रोदयेप्येवम्। ब्राह्मे—'ततः प्रक्षाल्य हस्तौ च द्विराचम्य हरिं स्मरेत्।' माधवीये गौतमः—'विकिरमुच्छिष्टैः प्रतिपादयेत्।' हेमाद्रौ व्यासः—,उच्छिष्टैरेव विकिरं सदैव प्रतिपादयेत् ॥' भृगुः—'पिण्डवत्प्रतिपत्तिः स्याद्विकिरस्येति तौल्वलिः।' श्राद्धकारिकायाम्—'यजमानस्य दासादीनुद्दिश्य द्विजसत्तम। तस्मादन्नं त्यजेद्भूमौ वामभागेषु पैतृके ॥' मनुः—'उच्छेषणं भूमिगतमजिह्मस्याशठस्य च। दासवर्गस्य तत्पित्र्ये भागधेयं प्रचक्षते ॥'

विष्णुः—'उदङ्मुखेष्वाचमनमादौ दद्यात्, ततः प्राङ्मुखेषु पित्र्ये दैवे चेत्यर्थः। शातातपः—'विश्वेदेवनिविष्टानां चरमं हस्तधावनम्।, हेमाद्रौ वाराहे—'हस्तं प्रक्षाल्य यश्चापः पिबेद्भुक्त्वा द्विजः सदा। तदन्नमसुरैर्भुक्तं निराशाः पितरो गताः ॥, मरीचिः—'हस्तं प्रक्षाल्य गण्डूषं यः पिबेदविचक्षणः। आसुरं तद्भवेच्छ्राद्धं पितॄणां नोपतिष्ठते ॥' तत्रैव संग्रहे—'पवित्रग्रन्थिमुत्सृज्य मण्डले भुवि निक्षिपेत्। हस्तादीन् क्षालयेद्विद्वाञ्छरावादौ तु कुत्रचित् ॥' व्यासः—'ताम्बूलोद्गिरणं चैव गण्डूषोद्गिरणं तथा। कांस्यपात्रे तथा ताम्रे न कुर्वीत कदाचन ॥ उष्णोदकैर्धान्यचूर्णैः करौ श्मश्रूणि शोधयेत् ॥'

अथ पिण्डदानम्। तच्चार्चनोत्तरमग्नौकरणोत्तरं भोजनोत्तरं विकिरोत्तरं स्वधावाचनोत्तरं विप्रविसर्जनोत्तरं चेति हेमाद्रौ स्मृतिषु पक्षा उक्ताः। तेषां शाखाभेदेन व्यवस्था। 'प्रेतश्राद्धेषु पूर्वमन्येषु भोजनोत्तरम्' इति चन्द्रिकामाधवौ। सर्वत्र भोजनोत्तरमिति बहवः। आश्वलायनः—'भुक्तवत्स्वनाचान्तेषु पिण्डान्निदध्यादाचान्तेष्वेके।' भुक्तवत्स्विति पूर्वनिषेधार्थम्। साग्निरतिप्रणीतसमीपे। अनग्निर्द्विजसमीपे। हेमाद्रौ जातूकर्ण्यः—'व्याममात्रं समुत्सृज्य पिण्डांस्तत्र प्रदापयेत् ॥' प्रसारितभुजान्तरं व्यामः। संकटे तु व्यासः—'अरत्निमात्रमुत्सृज्य' इति। यत्तु तत्रैव—'सिकताभिर्मृदा वापि वेदी दक्षिणनिम्नगा।' इति तदन्यशाखिपरम्। देवलः—'ततस्तैरभ्यनुज्ञातो दक्षिणां दिशमेत्य च।' चन्द्रिकायाम्—'पिण्डनिर्वपणं कार्यं कुशाभावे विचक्षणैः। काशेषु राजदूर्वासु पवित्रे परमे हिते ॥' आश्वलायनः—'स्फ्येन रेखामुल्लिखेत्' 'अपहता असुरा

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

रक्षांसि वेदिषदः' इति तामभ्युक्ष्य सकृदाच्छिन्नैर्दर्भैरवस्तीर्य प्रचीनावीती रेखां त्रिरुदकेनोपनयेच्छुन्धन्तां पितरः शुन्धन्तां पितामहाः शुन्धन्तां प्रपितामहा इति तस्यां पिण्डान्निपृणीयात्पराचीनपाणिः 'पित्रे पितामहाय प्रपितामहायैतत्तेऽसौ ये च त्वामत्रानु' इति । हेमाद्रौ पारस्करः—करा‍भ्यामुल्लिखेत् स्फ्येन कुशैर्वापि महीं द्विजः।' बह्वृचानां करणेव लेखा चाग्नेय्यभिमुखेति वृत्तिः। 'दक्षिणाप्राचीं वेदिमुद्धत्य' इत्यापस्तम्बोक्तेश्च ।

देवलः—'आवाहयित्वा दर्भाग्रैस्तेषां स्थानानि कल्पयेत् । तेष्वासीनेषु पात्रेण प्रयच्छेत्सतिलोदकम् ॥' पराचीनेन- निम्नपितृतीर्थेन । वायवीये—'मधुसर्पिस्तिलयुतांस्त्रीन्पिण्डान्निर्वपेद्बुधः ।' त्रिस्थलीसेतौ—'तिलमन्नं च पानीयं धूपं दीपं पयस्तथा। मधु सर्पिःखण्डयुक्तं पिण्डमष्टाङ्गमुच्यते ॥' याज्ञवल्क्यः-'सर्वमन्नमुपादाय सतिलं दक्षिणामुखः । उच्छिष्टसन्निधौ पिण्डान् दद्याद्वै पितृयज्ञवत् ॥' केचित् पिण्डेषु माषान् वर्जयन्ति। 'माषाः श्राद्धेषु वै ग्राह्या वर्ज्याश्चैवाग्निपिण्डयोः । ब्राह्मणेषु यथा मद्यं तथा माषोऽग्निपिण्डयोः ॥' इति स्मृतिसारात् । 'माषान् सर्वत्र वै दद्यात् पिण्डेऽग्नौ च विवर्जयेत्' इति स्मृतेश्च। अत्र मूलं चिन्त्यम् । हेमाद्रावपि सर्वशब्दस्य प्रकृतार्थत्वात्सर्वान्नग्रहणमुक्तम् । अत्र शेषमन्नमनुज्ञाप्य सर्वमेकत्रोद्धृत्योच्छिष्टसमीपे दर्भेषु त्रींस्त्रीन् पिण्डान् दद्यात्' इति गोभिलसूत्रे । 'सर्वस्मात्प्रकृतादन्नात् पिण्डान्मधुतिलान्वितान् ।' इति च शेषनियमात्तदभावे पिण्डनिवृत्तिः प्राप्नोतीति मैथिलवाचस्पती। तन्न । तुषोपवापवत्परप्रयुक्तद्रव्यवत्त्वेऽप्यर्थकर्मत्वाद्गुणानुरोधेन प्रधानत्यागाच्च शेषलोपेऽपि द्रव्यान्तरेण कार्यम् । अतो नेयं प्रतिपत्तिः, किन्तु प्रधानमित्युक्तं प्राक् । अन्यथा सपिण्डीकरणादौ संयोजनादेः प्रधानस्य लोपापत्तेरिति दिक् ।

अथ पिण्डप्रमाणम् । हेमाद्रावङ्गिराः—'कपित्थबिल्वमात्रान्वा पिण्डान् दद्याद्विधानतः । कुक्कुटाण्डप्रमाणान्वामलकैर्वदरैः समान् ॥' इति। तत्रैव धूम्रः—कपित्थस्य प्रमाणेन पिण्डान् दद्यात्समाहितः । तत्समं विकिरं दद्यात् पिण्डान्ते तु षडङ्गुले॥' अन्त्येष्टिपद्धतौ भट्टास्तु—'एकोद्दिष्टे सपिण्डे तु कपित्थं तु विधीयते । नारिकेलप्रमाणं तु प्रत्यब्दे मासिके तथा॥ तीर्थे दर्शे च संप्राप्ते कुक्कुटाण्डप्रमाणतः । महालये गयाश्राद्धे कुर्यादामलकोपमम् ॥' इत्याहुः । कलिकायामाचार्यः—'यत्र स्युर्बहवः पिण्डास्तत्र बिल्वफलोपमाः । यत्र चैको भवेत्पिण्डस्तत्र

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

खर्जूरसन्निभः ।। प्रेतपिण्डस्तु दैर्घ्येण द्वादशाङ्गुल उच्यते ।।' इति। वायवीये—'पत्नी पिण्डांस्तु मृद्नीयात् त्रिवर्गस्य सहायिनी ।।' हेमाद्रौ लौगाक्षिः—'महालये गयायां च प्रेतश्राद्धे दशाहिके। पिण्डशब्दप्रयोगः स्यादन्नमन्यत्र कीर्तयेत् ।।' शाट्यायनिः—'असावेतत्त इत्युक्त्वा तदन्ते च स्वधा नमः'। असावित्यत्र संबन्धरूपगोत्रादिविशिष्टं पित्रादिनाम संबुद्ध्यन्तमुक्त्वा पुनश्चतुर्थ्यन्तं तदन्तेऽयं पिण्ड इदमन्नं वा स्वधा नमो न ममेति वदेदिति हेमाद्रिः। पित्रादीनामज्ञाने त्वापस्तम्बः—'यदि नामानि न विद्यात्स्वधा पितृभ्यः पृथिवीषद्भ्य इति प्रथमं पिण्डं दद्यात्, स्वधापितृभ्योऽन्तरिक्षसद्भ्य इति द्वितीयम्, स्वधापितृभ्यो दिविषद्भ्य इति तृतीयम्। एवं मातामहेषु मातृषु च'। बह्वृचानां तूक्तं प्राक्। कालिकायां स्मृतिः—'यावद्देवोच्चरेन्मन्त्रं तावत्प्राणं निरोधयेत्।' येषां तु गृह्योक्ते दर्शे मातुः श्राद्धं पृथगुक्तं तेषां पितृभ्यः पश्चिमे मातृभ्य-स्तत्पश्चिमे मातामहेभ्यः पिण्डादि देयमिति सांख्यायनः। अस्मिन्पक्षे तत्पश्चिमे मातामहीभ्योऽपि दद्यादिति हेमाद्रिः। 'पूर्वासु पितृभ्यो दद्यादपरासु स्त्रीभ्यः' इति सूत्राच्च। एवं यत्र तीर्थमहालयादौ 'केचि-दिच्छन्ति नारीणां पृथक्श्राद्धं महर्षयः।' इति चतुर्विंशतिमतात्' 'पित्रादिनवदैवत्यं तथा द्वादशदैवतम्।' इत्यग्निपुराणाच्च मातॄणां पृथगुक्तम्, यत्र वा—'आचार्यगुरुशिष्येभ्यः सखिज्ञातिभ्य एव च। तत्पत्नीभ्यश्च सर्वाभ्यस्तथैव च जलाञ्जलीन् ।। पिण्डांस्तेभ्यः सदा दद्यात्पृथग्भाद्रपदे नरः। तीर्थेषु चैव सर्वेषु माघमासे मघासु च ।।' इति चतुर्विंशतिमते, 'दौहित्रपुत्रदाराश्च ये कनिष्ठाः सहोदराः। निः-सन्ताना मृता ये च तेभ्योऽप्यत्र प्रदीयते ।।' इति भविष्ये एकोद्दिष्टान्यु-क्तानि, तत्रापि तत्पश्चिमे पिण्डदानं ज्ञेयम्। येषां न पृथक् तैः सपत्नीकाः पित्रादयो वाच्याः। 'अन्वष्टकागयामातृश्राद्धं चैव मृतेऽहनि। एकोद्दिष्टं तथा मुक्त्वा स्त्रीषु नान्यत् पृथग्भवेत् ।।' इति शङ्खोक्तेश्च।

मनुः—'तेषु दर्भेषु तं हस्तं निमृजेल्लेपभागिनाम्।' हस्तलेपाभावेऽपि हस्तं निमृज्यादेवेति मेधातिथिः। विष्णुः—'अत्र पितरो मादयध्वमिति दर्भमूले करावघर्षणम्।' कलिकायां सुमन्तुः—'एकोद्दिष्टेषु वर्षासु दर्भक्षेपो न विद्यते। सपिण्डीकरणादौ तु लेपः सर्वत्र शस्यते ।।' मनुः—'आचम्योदक् परावृत्य त्रिरायम्य शनैरसून्। षड्ऋतूंश्च नमस्कुर्यात् पितॄनेव च मन्त्रवत् ।। उदकं निनयेच्छेषं शनैः पिण्डान्तिके पुनः।।' त्रिःप्राणायामं कृत्वेति मेधातिथिः। अमन्त्रं प्राणान्निरुध्येति कर्काचार्याः। मन्त्रवत्-वसन्ताय नमः। 'नमो वः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पितरः' इत्याद्यैः। शेषं पूर्वावनयनशेषम् । आश्वलायनः—'निपृतताननुमन्त्रयेतात्र पितरो मादयध्वं यथाभागमावृषायध्वमिति सव्यावृदुदङ्ङावृत्य यथाशक्त्यप्राणान्नासित्वाऽभिपर्यावृत्त्याऽमीमदन्त पितरो यथाभागमावृषायीषतेति चरोः प्राणभक्षं भक्षयेन्नित्यं निनयनम्' इति । नित्यग्रहणं शेषाभावेऽपि कुर्यादित्यर्थः। शौनकः—'अथैषामत्र पितर इत्याद्येनानुमन्त्रणम् । अमीमदन्तेत्याद्येन मन्त्रेणाप्यनुमन्त्र्य तान् ॥ पिण्डशिष्टचरोरन्नं किञ्चिदाघ्राय तत्त्यजेत् । प्रक्षाल्याचम्य शुन्धन्तामित्याद्यैरेव पूर्ववत् ॥ मन्त्रैः पिण्डेषु पानीयं निषिञ्चेत् पितृतीर्थतः ॥' व्याघ्रः—'अद्भिः प्रक्षाल्य तत्पात्रं प्रतिपिण्डं तु पूर्ववत्। कृत्वावनेजनं कुर्यात्पिण्डपात्रमधोमुखम् ॥' एतत्कातीयादीनाम् ।

आचार्यः—'ततः सम्यग् द्विराचम्य नीवीं विस्रस्य वाग्यतः ।' आश्वलायनः—'असावभ्यङ्क्ष्वासावङ्क्ष्वेति पिण्डेष्वभ्यञ्जनाञ्जने वासो दद्यादशामूर्णास्तुकां वा पञ्चाशद्वर्षताया ऊर्ध्वं स्वं लोमैतद्वः पितरो वासो मानोतोऽन्यत् पितरो युङ्ग्ध्वम्' इति । श्राद्धचिन्तामणौ ब्राह्मे—'एतद्वः पितरो वास इति जल्पन् पृथक् पृथक् । अमुकामुकगोत्रैतत्तुभ्यं वासः पठेद्बुधः ॥' इदं कातीयानाम् । 'एतद्व इति सूत्राणि प्रतिपिण्डम्' इति तत्सूत्रात् । हेमाद्रौ ब्राह्मे—'श्रेष्ठमाहुस्त्रैककुदमञ्जनं नित्यमेव हि । तैलं कृष्णतिलेभ्यश्च दद्यादभ्यञ्जनं हितम् ॥' त्रैककुदं 'सुरमा' इति प्रसिद्धम् । अञ्जनप्राथम्यमापस्तम्बादिविषयम् । तत्रैव व्याघ्रः—'गन्धपुष्पाणि धूपं च दीपं च विनिवेदयेत् ।' देवलः—'दक्षिणां सर्वभोगांश्च प्रतिपिण्डं प्रदापयेत् । भक्ष्याण्यपूपानिक्षूंश्च व्यञ्जनान्यशनानि च ॥' तत्रैव शङ्खः—'यत्किञ्चित् पच्यते गेहे भक्ष्यं भोज्यमगर्हितम् । अनिवेद्य न भोक्तव्यं पिण्डमूले कथञ्चन ॥ एतत्सव्येनेति केचित् । युक्तं त्वपसव्येन । मनुः—'अवजिघ्रेच्च तान् पिण्डान् यथान्युप्तान् समाहितः ।' ततः-'नमो वः पितर इषे' इत्यादिनोपस्थानम् । मात्स्ये—'अथाचान्तेषु चाचम्य वारि दद्यात्सकृत्सकृत । तिलपुष्पाक्षतान् पश्चादक्षय्योदकमेव च ॥' अत्र दैवे सव्यं पित्र्ये त्वपसव्यमिति कर्कः । परिभाषोक्तवचनात्सव्यमिति युक्तम् । अत्र शिवा आपः सन्तु । सौमनस्यमस्त्वित्यादिप्रयोगो ज्ञेयः । मात्स्ये—'न त्वाशीः प्रतिगृह्णीयाद्द्विजेभ्यः प्राङ्मुखो बुधः । अघोराः पितरः सन्तु सन्त्वित्युक्ते पुनर्द्विजैः ॥ गोत्रं तथा वर्धतां नस्तथेत्युक्तः स तैः पुनः । दातारो नोऽभिवर्धन्तामन्नं चैवेत्युदीरयेत् । स्वस्तिवाचनकं कुर्यात्पिण्डानुद्धृत्य भक्तितः ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्वस्तिवाचनात्प्राक्पात्रचालनं कार्यम् । हेमाद्रौ बृहस्पतिः—'भाजनेषु च तिष्ठत्सु स्वस्ति कुर्वन्ति ये द्विजाः । तदन्नमसुरैर्भुक्तं निराशैः पितृभिर्गतैः ॥' जातूकर्ण्यः—'पात्राणि चालयेच्छ्राद्धे स्वयं शिष्योऽथ वा सुतः । न स्त्रीभिर्न च बालेन नासजात्या कथञ्चन ॥' याज्ञवल्क्यः—'स्वस्तिवाच्यं ततः कुर्यादक्षय्योदकमेव च ।' तत्रैव वृद्धशातातपः—'पितृणां नामगोत्रेण करे देयं तिलोदकम् । प्रत्येकं पितृतीर्थेन अक्षय्यमिदमस्त्विति ॥' अत्र षष्ठी प्रागुक्ता । तत्रैव नागरखण्डे—'उत्तानमर्घ्यपात्रं तु कृत्वा दत्त्वा च दक्षिणाम् । हिरण्यं देवतानां च पितृणां रजतं तथा ॥' बृहस्पतिः—'तस्मात् पणं काकिणीं वा फलं पुष्पमथापि वा । प्रदद्याद्दक्षिणां यज्ञे तया स सफलो भवेत् ॥' अत्र पित्रुद्देशेन दक्षिणादाने अपसव्यं विप्रोद्देशेन सव्यमिति माधवः । कलिकायामाचार्यः—'दद्याद्यज्ञोपवीत्येव ताम्बूलं दक्षिणां तथा ।' अत्रिः—'वदेच्च तांस्ततो विप्रान् पित्रादिभ्यः स्वधोच्यताम् ।' गोभिलः—'अघोराः पितरः सन्त्वित्युक्ते स्वधां वाचयिष्य इति पृच्छति पितृभ्यः स्वधोच्यतामित्युक्तेऽस्तु स्वधेत्युच्यमाने धारां दद्यादूर्जं वहन्ती' इति । 'आपस्तम्बेन तु पुत्रान् पौत्रानभितर्पयन्तीः' इत्यपि परिषेचने मन्त्र उक्तः ।

आश्वलायनः—'अथैतान् प्रवाहयेत् । परेतन पितरः सोम्यासो गम्भीरेभिः पथिभिः पूर्विणेभिः । दत्त्वायास्मभ्यं द्रविणेह भद्रं रयिं च नः सर्ववीरं नियच्छत ॥' इति । मात्स्ये—'वाजे वाजे इति जपन् कुशाग्रेण विसर्जयेत् ।' प्रचेताः—'स्वस्तिवाच्यं ततः कृत्वा पितृपूर्वं विसर्जयेत् ।' आश्वलायनः—'अन्नं प्रकीर्योपवीत्यों स्वधोच्यतामिति विसृजेदस्तु स्वधेति वा ।' ब्रह्मवैवर्ते—'आमावाजेति मन्त्रं तु पठित्वा च प्रदक्षिणाम् । द्वारोपान्ते ततः कृत्वा संयतः प्रविशेद्गृहम् ॥ प्राञ्जलिश्च ततः प्राह तान् विप्रान् सत्यवादिनः । दातारो नोऽभिवर्धन्तामन्नं च न इति ब्रुविति ॥ एवमस्त्विति ते तं च कथयन्ति समाहिताः ॥ एतन्मण्डलदेशे कार्यमिति हेमाद्रिः । मनुः—'दातारो नोऽभिवर्धन्तां वेदाः सन्ततिरेव च । श्रद्धा च नो मा व्यगमद् बहु देयं च नोऽस्तु ॥' इति । बौधायनः— अन्नं च नो बहु भवेदतिथींश्च लभेमहि । याचितारश्च नः सन्तु मा च याचिष्म कञ्चन ॥ इति । अत्र 'दातारो नोऽभिवर्धन्तां-लभध्वं याचिढ्वम्' इत्याद्यूहेन पठित्वा विप्रैः प्रतिवचनं' कार्यमिति सुदर्शनभाष्ये । 'स्वादुषंसदः०' इति 'ब्राह्मणासः पितरः०' इति च मन्त्रद्वयं पठन्ति। शौनकः—'ब्राह्मणानथ निर्यातान् परीत्य त्रिःप्रदक्षिणम् । सस्त्रीकस्वजनैः सार्धं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्रणमेद्रचिताञ्जलिः। कनिष्ठप्रथमा ज्येष्ठचरमाः स्युः प्रदक्षिणे।' हेमाद्रौ बृहस्पतिः—'अद्य मे सफलं जन्म भवत्पादाब्जवन्दनात्। अद्य मे वंशजाः सर्वे याता वोऽनुग्रहाद्दिवम्॥ पत्रशाकादिदानेन क्लेशिता यूयमीदृशाः। तत्क्लेशजातं चित्तात्तु विस्मृत्य क्षन्तुमर्हथ॥' प्रचेताः—विसृजेद्भक्तिसंयुक्तः सीमान्ते चाप्यनुव्रजेत्।' इति।

अथ पिण्डप्रतिपत्तिः। हेमाद्रौ ब्रह्माण्डे—'पिण्डमग्नौ सदा दद्याद्भोगार्थी प्रथमं नरः। पत्न्यै प्रजार्थी दद्याद्वै मध्यमं मन्त्रपूर्वकम्॥ उत्तमां गतिमन्विच्छन् गोषु नित्यं प्रयच्छति। आज्ञां प्रज्ञां यशः कीर्तिमप्सु पिण्डं प्रवेशयेत्॥ प्रार्थयन् दीर्घमायुष्यं वायसेभ्यः प्रयच्छति। आकाशं गमयेदप्सु स्थितो वा दक्षिणामुखः॥' आश्वलायनः—'वीरं मे दत्त पितर इति पिण्डानां मध्यमं पत्नीं प्राशयेत्।' 'आधत्त पितरो गर्भं कुमारं पुष्करस्रजम्। यथायमरपा असत्' इति भर्त्रा दत्तस्याद्येनादाय द्वितीयेन प्राशनम्। आपस्तम्बस्तु दाने मन्त्रमाह—'अपां त्वोषधीनां रसं प्राशयामि भूतकृतं गर्भं धत्स्व' इति मध्यमं पत्न्यै प्रयच्छति' इति। प्राशनेऽपि—'यथेह पुरुषो असत्' इति तदीयः पाठोऽन्येषां तत्तच्छाखायां ज्ञेयः। तत्रैव शङ्खः—'पत्नी वा मध्यमं पिण्डमश्नीयादार्तवान्विता।' कलिकायां छागलेयः—'प्राचीनावीतिनाऽऽमन्त्र्य पत्न्याः पिण्डो विभज्यते। प्रतिपत्न्यस्य मन्त्रस्य कर्तव्यावृत्तिरत्र तु॥' माधवीये विष्णुधर्मे—'तीर्थश्राद्धे सदा पिण्डान् क्षिपेत्तीर्थे समाहितः।' याज्ञवल्क्यः—'पिण्डांस्तु गोऽजविप्रेभ्यो दद्यादग्नौ जलेऽपि वा।' बृहस्पतिः—'अन्यदेशगता पत्नी रोगिणी गर्भिणी तथा। तदा तं जीर्णवृषभश्छागो वा भोक्तुमर्हति।'

अथ पिण्डोपघाते हेमाद्रौ प्रायश्चित्तकाण्डे देवलः—'श्वसृगालखरैः पिण्डः स्पृष्टो भिन्नः प्रमादतः। कर्तुरायुष्यनाशः स्यात्प्रेतस्तं नोपसर्पति॥' जातूकर्ण्यः पूर्वश्लोकान्ते—तद्दोषपरिहारार्थं प्राजापत्यं प्रकल्पयेत्। पुनः स्नात्वा तदा कर्ता पिण्डं कुर्याद्यथाविधि॥' काकस्पर्शे तु न दोषः। पिण्डापघातं प्रक्रम्य 'धनस्य च विनाशः स्यात् काकस्पर्शादिकं विना।' इति तत्रैव श्लोकगौतमोक्तेः। स्मृतिदर्पणे अत्रिः—'मार्जारमूषकस्पर्शे पिण्डे च द्विदलीकृते। पुनः पिण्डाः प्रदातव्यास्तेन पाकेन तत्क्षणात॥' बौधायनः—'श्वचाण्डालादिभिः स्पृष्टः पिण्डो यद्युपहन्यते। प्राजापत्यं चरित्वाथ पुनः पिण्डं समाचरेत्॥', बोपदेवोप्येवमाह—अथ दिनान्तरे तु प्राजापत्यमात्रम्। शेषप्रतिपत्तित्वेन पिण्डावृत्तौ मानाभा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वादिति मैथिलाः। तन्न। सपिण्डीकरणादौ शेषनाशे संयोजनादिलोपापत्तेः। तेन वचनाद्वमन इवात्रापि तन्मात्रपिण्डदानावृत्तिः अत एव 'न च नक्तं श्राद्धं कुर्वीतारब्धे वा भोजनसमापनात्।' इत्यापस्तम्बसूत्रम्। रात्रौ भोजनमात्रं पूर्वेद्युः कार्यम्। श्राद्धसमाप्तिस्तु परदिने एव। समाप्तिपर्यन्तं कर्तुरुपवासश्चेति हरदत्तेन व्याख्यातम्। तस्मात् पाकान्तरेण पिण्डदानमात्रं कार्यम्।

अथ पिण्डनिषिद्धकालः। स च प्रायेण महालयादिनिर्णये पूर्वमुक्तः। हेमाद्रौ बृहत्पराशरः—'युगादिषु मघायां च विषुवत्ययने तथा। भरणीषु च कुर्वीत पिण्डनिर्वपणं नहि॥' स्मृतिरत्नावल्याम्—'पुत्रे जाते व्यतीपाते ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः। श्राद्धं कुर्यात् प्रयत्नेन पिण्डनिर्वपणादृते॥' तत्रैव कात्यायनः—'वृद्धेरनन्तरं चैव यावन्मासः समाप्यते। तावत् पिण्डान्नैव दद्यान्न कुर्यात्तिलतर्पणम्॥' बौधायनः—'संस्कारेषु तथान्येषु मासं मासार्धमेव च।' तथा—'भानौ भौमे त्रयोदश्यां नन्दाभृगुमघासु च। पिण्डदानं मृदा स्नानं न कुर्यात्तिलतर्पणम्॥' त्रिस्थलीसेतौ कार्ष्णाजिनिः—'विवाहव्रतचूडासु वर्षमर्धं तदर्धकम्।' उत्तरार्धं प्राग्वत्। 'वृद्धिमात्रे तथान्यत्र पिण्डदाननिराक्रिया। कृता गर्गादिभिर्मुख्यैर्मासमेकं तु कर्मणाम्॥' हेमाद्रौ ज्योतिःपराशरः—'विवाहे विहिते मासांस्त्यजेयुर्द्वादशैव हि। सपिण्डाः पिण्डनिर्वापं मौञ्जीबन्धे षडेव हि॥' तत्रैव—'महालये गयाश्राद्धे मातापित्रोः क्षयेऽहनि। यस्य कस्यापि मर्त्यस्य सपिण्डीकरणे तथा॥ कृतोद्वाहोऽपि कुर्वीत पिण्डनिर्वापणं सदा॥' इति। मातापित्रोरिति क्षयाहविशेषणं हविरुभयस्वदविवक्षितम्। तेन भ्रातृपितृव्यादिवार्षिकेऽपि पिण्डदानं कार्यमिति केचित्। सपिण्डीकरणं नवश्राद्धषोडशश्राद्धोपलक्षणार्थमिति निर्णयामृते उक्तम्।

क्षयाहे विशेषः संग्रहे—'मातापित्रोराब्दिके तु विवाहादिषु सर्वदा। तिलैः पिण्डाः प्रदातव्या अन्यश्राद्धे विवर्जयेत्॥' अत्र मूलं चिन्त्यम्। रामकौतुके—'नन्दाश्वकामरव्यारभृग्वग्निपितृकालभे। गण्डे वैधृतिपाते च पिण्डास्त्याज्याः सुतेप्सुभिः॥' विश्वरूपनिबन्धे - 'तिथिवारप्रयुक्तो यो दोषो वै समुदाहृतः। स श्राद्धे तन्निमित्तो स्यान्नान्यश्राद्धे कदाचन॥' अन्यत्तूक्तं प्राक्। उच्छिष्टोद्वासनमाह हेमाद्रौ वशिष्ठः 'श्राद्धे नोद्वासनीयानि उच्छिष्टान्याऽऽदिनक्षयात्। श्च्योतन्ते वै सुधाधारास्ताः पिबन्त्यकृतोदकाः॥' व्यासः—'उच्छिष्टं न प्रमृज्यात्तु यावन्नास्तंमितो रविः।' इदं गृहान्तरसत्त्वे। एकगृहे तु मनुः—'उच्छेषणं तु तत्ति-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

च्छेद्यावद्विप्रा विसर्जिताः । ततो गृहबलिं कुर्यादिति धर्मो व्यवस्थितः ॥' बलिं वैश्वदेवादि नित्यकर्मेति मेधातिथिः । ब्रह्माण्डे—'शूद्राय चानुपेताय श्राद्धोच्छिष्टं न दापयेत् ।' तथा 'कामं दद्याच्च सर्वं तु शिष्याय च सुताय च ।' भोक्तुरिति शेषः । जातूकर्ण्यः 'द्विजभुक्तावशिष्टं तु शुचिभूमौ निखानयेत् ।'

अथ वैश्वदेवादि । अत्र मामकः श्लोकः-'श्राद्धेऽतग्निककर्तृकेऽग्निकरणात्पश्चाज्जुहोतिर्बलिस्त्वन्ते स्यादथवा भवेद्विकिरतः पश्चात् पृथक्त्वे पके: । श्राद्धान्ते त्वथवा महालयविधावूर्ध्वं भुजेः स्यात्क्षये त्वन्तेऽमासु च मध्यतः शुभविधावादौ तथा साग्निके॥' अस्यार्थः--साग्नेः पृथक्पाकेन सर्वत्रादौ वैश्वदेवः । 'पक्षान्तं कर्म निर्वर्त्य वैश्वदेवं च साग्निकः । पिण्डयज्ञं ततः कुर्यात्ततोन्वाहार्यकं बुधः ॥ पित्रर्थं निर्वपेत्पाकं वैश्वदेवार्थमेव च । वैश्वदेवं न पित्रर्थं न दार्शं वैश्वदेविकम् ॥' इति लौगाक्षिस्मृतेः । अत्र साग्निक आहिताग्निरिति हेमाद्रिः । 'श्राद्धात् प्रागेव कुर्वीत वैश्वदेवं तु साग्निकः । एकादशाहिकं मुक्त्वा तत्र ह्यन्ते विधीयते ॥' इति हेमाद्रौ शालङ्कायनोक्तेश्च । तत्रैव परिशिष्टे—'संप्राप्ते पार्वणश्राद्धे एकोद्दिष्टे तथैव च । अग्रतो वैश्वदेवः स्यात्पश्चदेकादशेऽहनि ॥' स्मार्ताग्निमतां तद्रहितानां चाग्नौकरणोत्तरं विकिरोत्तरं वा होममात्रं पृथक्पाकेन। भूतयज्ञादि तु श्राद्धान्त एव । अत्र मूलं हेमाद्रिचन्द्रिकादौ स्पष्टम् । सर्वेषां श्राद्धान्ते वा तत्पाकेन वैश्वदेवनित्यश्राद्धादीनि तृतीयः । 'श्राद्धं निर्वर्त्य विधिवद्वैश्वदेवादिकं ततः । कुर्याद्भिक्षां ततो दद्याद्धन्तकारादिकं तथा ॥' इति पैठीनसिस्मृतेः । ततः श्राद्धशेषात् । श्राद्धाह्नि श्राद्धशेषेण वैश्वदेवं समाचरेत् । इति चतुर्विंशतिमताच्च । एवं वैश्वदेवकालत्रयस्य आशार्के सांख्यायनपरिशिष्टमुदाहृत्यैवं व्यवस्थोक्ता । आदौ वृद्धौ क्षये चान्ते दर्शे मध्ये महालये । एकोद्दिष्टे निवृत्ते तु वैश्वदेवो विधीयते ॥' इति बहुस्मृत्युक्तत्वात्सर्वेषां श्राद्धान्ते एवेति मेधातिथिस्मृतिरत्नावल्यादयो बहवः ।

बोपदेवस्तु वृत्तिकारेण विसर्जनान्तं श्राद्धमुक्त्वा 'उच्छेषणं तु' इति पूर्वोक्तमनुवाक्योदाहरणाद्बह्वृचानां श्राद्धान्त एव । मध्यपक्षस्त्वन्यशाखाइत्याह । हेमाद्रिस्तु वृद्धावप्यन्ते एव वैश्वदेवमाह । कातीयानां तु श्रौतस्मार्ताग्निमतामादावेकेनैष पाकेनेति कर्कः । अन्येषां मते तैत्तिरीयाणां तु साग्निकानां सर्वत्रादौ वैश्वदेवः । पञ्चयज्ञाश्च अन्ते वेति सुदर्शनभाष्ये उक्तम् । अस्य पक्षद्वयस्य पूर्ववद्व्यवस्था । हेमाद्रौ

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मार्कण्डेयः—'ततो नित्यक्रियां कुर्याद्भोजयेच्च ततोऽतिथीन्। ततस्तदन्नं भुञ्जीत सह भृत्यादिभिर्नरः ॥' ततः श्राद्धशेषात्। नित्यश्राद्धम्। तत्र—'पृथक्पाकेन नैत्यकम्' इति तेनैवोक्तेः पाकैक्ये विकल्पः।

अथ नित्यश्राद्धम्। हेमाद्रौ व्यासः—'एकमप्याशयेद्विप्रं षण्णामप्यन्वहं गृही। अपीत्यनुकल्पः। प्रचेताः—'नामन्त्रणं न होमं च नाह्वानं न विसर्जनम्। न पिण्डदानं विकिरं न दद्यादत्र दक्षिणाम् ॥' अत्र—'निर्दिश्य भोजयित्वा तु किञ्चिद्दत्वा विसर्जयेत्।' इति तेनैवोक्तेर्दक्षिणाविकल्पः। यत्तु—'नित्यश्राद्धं दैवहीनं नियमादिविवर्जितम्। दक्षिणारहितं चैव दातृभोक्तृव्रतोज्झितम् ॥' इति काशीखण्डे। तद्विप्राभावपरमिति पृथ्वीचन्द्रः। भविष्ये—'आवाहनं स्वधाकारं पिण्डाग्नौकरणादिकम्। ब्रह्मचर्यादिनियमा विश्वेदेवा न चैव हि ॥ दातृणामथ भोक्तृणां नियमो न च विद्यते ॥' एतद्दिवाऽसंभवे रात्रावपि कार्यम्। 'दिवोदितानि कर्माणि प्रमादादकृतानि वै। यामिन्याः प्रहरं यावत्तावत् कर्माणि कारयेत् ॥' इति बृहन्नारदीयोक्तेः। 'रात्रौ प्रहरपर्यन्तं दिवाकृत्यानि कारयेत्। ब्रह्मयज्ञं च सौरं च वर्जयित्वा विशेषतः ॥' इति पृथ्वीचन्द्रधृतसंग्रहोक्तेश्च। न च दार्शिकाब्दिकाद्यपि रात्रौ स्यादिति वाच्यम्, इष्टापत्तेः। तस्य तिथिसम्बन्धित्वात्। 'संध्यारात्रौ न कर्तव्यं श्राद्धं खलु विचक्षणैः।' इति वैष्णवाद्यै रात्रौ निषेधात्। अत एवाल्पद्वादश्यां—'उषःकाले द्वयं कुर्यात् प्रातर्माध्याह्निकं तदा।' इत्याद्यैर्वाक्यैस्त्रयोदशीश्राद्धं नापकृष्यते भिन्नविषयत्वादित्युक्तं मदनरत्ने। नित्यं त्वपकृष्यते। अन्वहमित्युक्तेस्तिथिसर्वाधिकाभावात्। तथा च सुदर्शनभाष्ये—'परपक्षे पित्र्याणीति नियमेऽपि नित्यश्राद्धत्वे संवत्सरमित्यत्यन्तसंयोगे द्वितीयाबलाच्छुक्लपक्षेऽपि' इत्युक्तम्। तथा रात्रावपि। तथा च माधवेन प्रतिपत्करणे स्पष्टमुक्तम्। वयं चाग्रे वक्ष्यामः। अस्य दिनेऽकरणे लोप एव। 'रात्रौ श्राद्धं न कुर्वीत' इति निषेधादिति पृथ्वीचन्द्रोदयः। पात्राभावे कौर्मे—'उद्धृत्य वा यथाशक्ति किञ्चिदन्नं प्रकल्पयेत्।' तत्प्रतिपत्तिमाह विष्णुः—'भिक्षुकाभावेऽन्नं गोभ्यो दद्यादग्नौ वा प्रक्षिपेत्' इति। हेमाद्रौ नागरखण्डे—'नित्यश्राद्धं न कुर्वीत प्रसङ्गाद्यत्र सिद्ध्यति। श्राद्धान्तरे कृतेऽन्यत्र नित्यत्वात्तन्न हापयेत् ॥' षड्दैवते पृथङ् नेत्यर्थः।

मात्स्ये—'ततस्तु वैश्वदेवान्ते सभृत्यसुतबान्धवः। भुञ्जीतातिथिसंयुक्तः सर्वं पितृनिषेवितम् ॥' सर्व-पर्वनिषिद्धं मांसमाषाद्यपीत्यर्थः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

एवं कृष्णैकादश्यादौ गृहिणोऽपि भोजनम् । अस्य वैधत्वेन निषेधाप्रवृत्तेः । एवं ग्रहणवेधेऽपि । यत्त्वनाहिताग्नेरमाषममांसं व्रतयेदित्युक्तं, तद्धेयमेव । श्रौतत्वेन तस्य बलवत्त्वात् । देवलः—'श्राद्धं कृत्वा तु यो मर्त्यो न भुङ्क्तेऽथ कदाचन । देवा हव्यं न गृह्णन्ति कव्यानि पितरस्तथा ॥' शिवरात्र्येकादश्यादौ त्ववघ्राणमेवेत्युक्तं प्राक् । यत्र तूपवासो नावश्यकस्तत्रैकभक्तमयाचितं वा कार्यमिति हेमाद्रिः । जातूकर्ण्यः—'अहन्येव तु भोक्तव्यं कृते श्राद्धे द्विजन्मभिः । अन्यथा ह्यासुरं श्राद्धं परपाके च सेविते ॥'

श्राद्धशेषभोजनस्य क्वचिन्निषेधमाह—हेमाद्रौ प्रायश्चित्तकाण्डे मार्कण्डेयः—'पित्रादीनामथाऽन्येषां श्राद्धशेषान्नभोजनम् । व्रतिनां विधवानां च यतीनां च विगर्हितम् ॥' अन्ये भिन्नगोत्राः । व्रतिनोब्रह्मचारिणः । 'श्राद्धावशिष्टभोक्तारस्ते वै निरयगामिनः । सगोत्राणां सकुल्यानां ज्ञातीनां च न दोषकृत् ।' इति तत्रैवोक्तेः । तत्रैव जाबालिः—'विप्रस्त्वन्यगृहे श्राद्धशिष्टान्नभोजनं चरेत् । प्राजापत्यं विशुद्धिः स्याज्ज्ञातिगोत्रे न दोषकृत् ॥' यतीनां वपनं लक्षं प्रणवजपश्चेति तत्रैवोक्तम् । अस्यापवादमाह स एव—'श्वशुरस्य गुरोर्वापि मातुलस्य महात्मनः । ज्येष्ठभ्रातुश्च पुत्रस्य ब्रह्मनिष्ठस्य भोगिनः ॥ एतेषां श्राद्धशिष्टान्नं भुक्त्वा दोषो न विद्यते । इति केचित्प्रशंसन्ति मुनयस्तदसांप्रतम् ॥' विशेषान्तरं तत्रैव ज्ञेयम् । हेमाद्रौ जाबालिः—'ताम्बूलं दन्तकाष्ठं च स्नेहस्नानमभोजनम् । रत्यौषधपरान्नानि श्राद्धकर्ता विवर्जयेत् ॥' पृथ्वीचन्द्रोदये आचार्यः—'न शूद्रं भोजयेत्तस्मिन् गृहे यत्नेन तद्दिने । श्राद्धशेषं न शूद्रेभ्यः प्रदद्यादखिलेष्वपि ॥'

इति कमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ पार्वणश्राद्धम् ।

अथानुकल्पाः । तत्र विप्रालाभे—'भोजयेदथवाप्येकं ब्राह्मणं पङ्क्तिपावनम् । दैवे कृत्वा तु नैवेद्यं पश्चात्तस्य तु निर्वपेत् ॥' इति शङ्खोक्तेरेको विप्रः पूर्वमुक्तः । विप्राभावे दर्भबटूनासनेषु समाहितः । प्रैषानुप्रैषसंयुक्तं विधानं प्रतिपादयेत् ॥' इति देवलोक्तेः । अशक्तावामश्राद्धम् । 'आपद्यनग्नौ तीर्थे च प्रवासे पुत्रजन्मनि । आमश्राद्धं प्रकुर्वीत भार्यारजसि संक्रमे ॥' इति कात्यायनोक्तेः । पृथ्वीचन्द्रोदये जमदग्निः—'यावत्स्यान्नाग्निसंयुक्त उत्सन्नाग्निरथापि वा । आमश्राद्धं तदा कुर्याद्धस्तेऽग्नौकरणं भवेत् ॥' कौर्मे—'अनग्निरधनो वापि तथैव व्यसनान्वितः । आमश्राद्धं द्विजः कुर्याद्वृषलस्तु सदैव हि ॥' आहिताग्नौ प्रवासस्थे तत्पत्नी

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

गृहे दर्शं ऋत्विगा दना कारयेत्। 'अमावास्यादि नियतं प्रोषिते धर्मचारिणो। पत्यौ तु कारये न्नत्यमन्येनाप्यृत्विगादिना ॥' इतिलघुहारीतोक्तेरिति पृथ्वीचन्द्रोदयः। आदिपदमाब्दिकादिसर्वपार्वणपरमिति शूलपाणिः। सुमन्तुः—'पाकाभावेऽधिकारः स्याद्विप्रादीनां नराधिप। अपत्नीनां महाबाहो विदेशगमनादिभिः। सदा चैव तु शूद्राणामामश्राद्धं विदुर्बुधाः ॥' प्रचेताः स्त्री शूद्रः स्वपचश्चैव जातकर्मणि चाप्यथ। आमश्राद्धं सदा कुर्याद्विधिना पार्वणेन तु ॥' स्वयं पचतीति स्वपचः। विष्णूशनसौ—आत्मनो देशकालाभ्यां विप्लवे समुपस्थिते। आपद्यनग्नौ तीर्थे च प्रवासे पत्न्यसंभवे ॥ चन्द्रसूर्यग्रहे चैव दद्यादामं विशेषतः। न पक्वं भोजयेद्विद्वान् सच्छूद्रोऽपि कदाचन ॥ भोजयन् प्रत्यवायी स्यान्न च तस्य फलं लभेत् ॥' अत्र प्रवासतीर्थग्रहणादामहेमश्राद्धमेव, पाकश्राद्धं तु न भवत्येवेति हेमाद्रिरत्नावल्यादयः॥ अपरार्कविज्ञानेश्वरादयस्तु—'पाकाभावे द्विजातीनामामश्राद्धं विधीयते।' इति सुमन्तूक्तेः साग्निकैर्निरग्निकैश्च प्रवासादौ सर्वत्र पाकाभावे आमादि कार्यम्, पाकसंभवे त्वन्नेनैवेत्याहुः। अत एव पाकश्राद्धमुक्तम्—'एतच्चानुपनीतोऽपि कुर्यात्सर्वेषु कर्मसु। भार्याविरहितोऽप्येतत् प्रवासस्थोऽपि नित्यशः॥ इति मात्स्ये निरग्नेरपि पाकेनोक्तमिति शूलपाणिकल्पतरू। एतच्छन्दः श्राद्धमात्रपर इत्यन्ये। एकोद्दिष्टं तु कर्तव्यं पाकेनैव सदा स्वयम्।' इति लघुहारीतीयमपि साग्नेरेव। निरग्नेर्महैकोद्दिष्टमप्यामेन। शूद्रस्य तु दशाहपिण्डाद्यामेनेति हलायुधः। उत्सन्नाग्नीनां त्वामश्राद्धमेव, पूर्वोक्तजमदग्निवाक्यात्। मरीचिः-श्राद्धविघ्ने द्विजातीनामामश्राद्धं प्रकीर्तितम्। अमावास्यादिनियतं माससंवत्सरादृते ॥' स्मृतिदर्पणे—मृताहं च सपिण्डं च गयाश्राद्धं महालयम्। आपन्नोऽपि न कुर्वीत श्राद्धमामेन कर्हिचित् ॥'

हेमाद्रौ व्यासः—'आमं ददतु कौन्तेय दद्यादामं चतुर्गुणम्। द्विगुणं त्रिगुणं वापि नत्वेकगुणमर्पयेत् ॥ सिद्धान्ने तु विधिर्यः स्यादामश्राद्धेऽप्यसौ विधिः। आवाहनादि सर्वं स्यात्पिण्डदानं च भारत ॥ दद्याद्यच्च द्विजातिभ्यः शृतं वाऽशृतमेव वा। तेनाग्नौकरणं कुर्यात् पिण्डांस्तेनैव निर्वपेत् ॥' पक्षान्तरमाह स एव—'आमं ददद्धि कौन्तेय तदामं द्विगुणं चरेत्। त्रिगुणं चतुर्गुणं वापि न त्वेकगुणमर्पयेत् ॥' स्मृत्यर्थसारे सममप्युक्तम्। षट्त्रिंशन्मते—'आमश्राद्धं यदा कुर्यात् पिण्डदानं कथं भवेत्। गृहपाकात्समुद्धृत्य सक्तुभिः पायसेन वा ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पिण्डान् दद्याद्यथालाभं तिलैः सह विमत्सरः ॥' पृथ्वीचन्द्रोदये व्यासः- आमश्राद्धं यदा कुर्याद्विधिज्ञः श्राद्धदः सदा । हस्तेऽग्नौकरणं कुर्याद्ब्राह्मणस्य विधानतः ॥' एतत्साग्नेः । निरग्ने सदा तत्सत्त्वात् । यत्तु— 'आमेन पिण्डं दद्याचेद्विप्रान् पाकेन भोजयेत् । पक्वेन कुरुते पिण्डमामान्नं यः प्रयच्छति ॥ तावुभौ मनुजौ प्रोक्तौ नरकार्हौ न संशयः ॥' इति । तद्दर्शादिपरम् । देशाचाराद्व्यवस्थेति युक्तम् । मरीचिः—'आवाहने स्वधाकारे मन्त्रा ऊह्या विसर्जने । अन्यकर्मण्यनूह्याः स्युरामश्राद्धविधिः स्मृतः ॥' आवाहने हविषे अत्तव इत्यत्र स्वीकर्तवे इत्यूहः । स्वधाकारे नमो वः पितर 'इषे' इत्यत्र 'इषे' पदस्थाने 'आमद्रव्याय' इत्यूहः । विसर्जने 'वाजे वाजे' इत्यत्र 'तृप्ता' इति स्थाने 'तर्प्स्यत' 'तृप्यत' इति वोहः । यद्यपि 'तस्मादृचं नोहेत्' इति ऋच्यूहो निषिद्धः तथापि वचनाद्भवति । 'तृप्तिप्रश्नोऽवगाहश्च जुषप्रश्नो यथासुखम् । आमश्राद्धे भवेन्नैतदपोशानं च पञ्चमम् ॥' अयं चानुवादः खलेवाल्यां छेदनादीनामिवार्थाभावाल्लोपसिद्धेः ।

धर्मप्रदीपे तु-'आमं चतुर्गुणं दद्यादथवा द्विगुणं तथा । हेम चाष्टगुणं तद्वदामे हैमेप्यसौ विधिः ॥ आमे हैमे तथा नित्ये नान्दीश्राद्धे तथैव च । व्यतीपातादिके श्राद्धे नियमान् परिवर्जयेत् ॥ गृहपाकात्समुद्धृत्य सक्तुभिः पायसेन वा । पिण्डदानं प्रकुर्वीत आमे हैमे कृते सति ॥ आमश्राद्धे च वृद्धौ च प्रेतश्राद्धे तथैव च । विकिरं नैव कुर्वीत मुनिः कात्यायनोऽब्रवीत् ॥ आमश्राद्धमनङ्गुष्ठमग्नौकरणवर्जितम् । तृप्तिप्रश्नविहीनं तु कर्तव्यं मानवैर्ध्रुवम् ॥ आवाहनाग्नौकरणं विकिरं पात्रपूरणम् । तृप्तिप्रश्नं न कुर्वीत आमे हैमे कदाचन ॥' इत्युक्तम् । एतच्च—'आवाहनं भवेत्कार्यमर्घ्यदानं तथैव च ।' इति हेमाद्रौ भविष्यादिविरोधाच्चिन्त्यम्, शाखान्तरविषयं वास्तु । विकिरोऽप्यामेनेति हेमाद्रिः । शूद्रस्य तु तत्रैवोक्तम् । 'अग्नौकरणमन्त्रश्च नमस्कारो विधीयते ।' अग्नये कव्यवाहनाय नमः, सोमाय पितृमते नमः, इत्ययं मन्त्रः । मात्स्ये—'मन्त्रवर्ज्यं हि शूद्रस्य सर्वमेव विधीयते । एवं शूद्रोऽपि सामान्यं वृद्धिश्राद्धं च सर्वदा ॥ नमस्कारेण मन्त्रेण कुर्यादामान्नवद्बुधः ॥ तच्च पूर्वाह्णे कार्यम् । 'आमश्राद्धं तु पूर्वाह्णे एकोद्दिष्टं च मध्यतः । पार्वणं चापराह्णे तु प्रातर्वृद्धिनिमित्तकम् ॥ इति हारीतोक्तेः । एतद्द्विजविषयम् । शूद्रकर्तृकं त्वपराह्ण एव 'मध्याह्नात्परतो यस्तु कुतुपः समुदाहृतः । आमश्राद्धं तु तत्रैव पितृणां दत्तमक्षयम् ॥' इति सुमन्तूक्तेरित्यपरार्के हेमाद्रौ चोक्तम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तदभावे हेमश्राद्धमाह हेमाद्रौ मरीचिः—'आमान्नस्याप्यभावे तु श्राद्धं कुर्वीत बुद्धिमान् । धान्याच्चतुर्गुणेनैव हिरण्येन सुरोचिषा ॥' धर्मः—'आमं तु द्विगुणं प्रोक्तं हेम तद्वच्चतुर्गुणम् ।, स्मृत्यर्थसारे—'हिरण्यमष्टगुणं चतुर्गुणं समं वा दद्यात् ।' हेमाद्रौ भविष्ये—'अन्नाभावे द्विजाभावे प्रवासे पुत्रजन्मनि । हेमश्राद्धं संग्रहे च तथा स्त्रीशूद्रयोरपि ॥' षट्त्रिंशन्मते तुर्यपादे—'वर्जयित्वा क्षयेऽहनि' इति पाठः । यस्य भार्या रजस्वला' इति व्यासपाठः । पुत्रोत्पत्तौ तु हेमनियममाह संवर्तः—पुत्रजन्मनि कुर्वीत श्राद्धं हेम्नैव बुद्धिमान् । न पक्वेन न चामेन कल्याणान्यभिकामयन् ॥' भविष्ये—'गृहपाकात्समुद्धृत्य सक्तुभिः पायसेन वा । पिण्डदानं प्रकुर्वीत हेमश्राद्धे कृते सति ॥ शूद्रस्तु गृहपाकेन न पिण्डान्निर्वपेत्तथा । सक्तु मूलं फलं तस्य पायसं वा भवेत्स्मृतम् ॥' हेमश्राद्धे पिण्डदानं नेति दिवोदासः । स्मृत्यर्थसारे तु विकल्प उक्तस्तदाशयं न विद्मः । षट्त्रिंशन्मते—'नामन्त्रणाग्नौकरणे विकिरो नैव दीयते । तृप्तिप्रश्नोऽपि नैवात्र कर्तव्यः केनचिद्भवेत् ॥' अत्र मरीचिना आमाभावे हेमविधानेन स्थानापत्त्या धर्मप्राप्तेः पूर्ववन्मन्त्रोहः पूर्वाह्णकालता च ज्ञेयेति दिक् । पूर्वोक्तधर्मप्रदीपोक्तेश्च ।

व्यासः—हिरण्यमामं श्राद्धीयं लब्धं यत्क्षत्रियादितः । यथेष्टं विनियोज्यं स्याद्भुञ्जीयाद्ब्राह्मणात्स्वयम् ॥' विप्रलब्धं भुञ्जीयात् । क्षत्रियादिलब्धे तु यथेष्टविनियोगः । तेनापि श्राद्धवैश्वदेवादि न कार्यम् । देवोद्देशेन त्यक्तस्य देवतान्तराय त्यागायोगादिति देवयाज्ञिकः । शूद्रलब्धे तूक्तं तत्रैव षट्त्रिंशन्मते—'आमं शूद्रस्य यत्किञ्चिच्छ्राद्धिकं प्रतिगृह्यते । तत्सर्वं भोजनायालं नित्यनैमित्तिके न च ॥' इति । शुद्धितत्त्वेऽङ्गिराः—'शूद्रवेश्मनि विप्रेण क्षीरं वा यदि वा दधि । निवृत्तेन न भोक्तव्यं शूद्रान्नं तदपि स्मृतम् ॥ शूद्राद्विप्रगृहेष्वन्नं प्रविष्टं तु सदा शुचि ॥' पराशरः—'तावद्भवति शूद्रान्नं तावन्न स्पृशति द्विजः । द्विजातिकरसंस्पृष्टं सर्वं तन्न विरुद्धयते ॥' विष्णुपुराणे—संप्रोक्षयित्वा गृह्णीयाच्छूद्रान्नं गृहमागतम् ।' अङ्गिराः—'पात्रान्तरगतं ग्राह्यं दुग्धं स्वगृहमागतम्' ।

सपिण्डश्राद्धाशक्तावाह हेमाद्रौ संवर्तः—'समग्रं यस्तु शक्नोति कर्तुं नैवेह पार्वणम् । अपि सङ्कल्पविधिना काले तस्य विधीयते ॥ पात्रे भोज्यस्य चान्नस्य त्यागः सङ्कल्प उच्यते ॥' व्यासः—'साङ्कल्पं तु यदा कुर्यान्न कुर्यात्पात्रपूरणम् । नावाहनाग्नौकरणे पिण्डांश्चैव न दापयेत् ॥' पात्रमर्घ्यस्य । समन्त्रकावाहनस्य

साङ्कल्पिकश्राद्धम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

निषेधः। तूष्णीं तु भवत्येवेति हेमाद्रिः। स्मृत्यर्थसारे—'विकिरं तु न दातव्यम्' इति तृतीयपादे पाठः। स्मृत्यन्तरे—'त्यजेदावाहनं चार्घ्यमग्नौकरणमेव च। पिण्डांश्च विकिरादीन्ये श्राद्धे साङ्कल्पसंज्ञके॥' हेमाद्रौ वृद्धशातातपस्तु—'पिण्डनिर्वापरहितं यत्तु श्राद्धं विधीयते। स्वधावाचनलोपोऽत्र विकिरस्तु न लुप्यते॥' इत्याह। पृथ्वीचन्द्रोदये वसिष्ठः—'आवाहनं स्वधाशब्दं पिण्डाग्नौकरणं तथा। विकिरं पिण्डदानं च साङ्कल्पे षड्विवर्जयेत्॥' विकिरे विकल्पः। स्मृत्यन्तरे—'अङ्गानि पितृयज्ञस्य यदा कर्तुं न शक्नुयात्। स तदा वाचयेद्विप्रान् सङ्कल्पात्सिद्धिरस्त्विति॥' छागलेयः—'पिण्डो यत्र निवर्तेत मघादिषु कथञ्चन। साङ्कल्पं तु तदा कार्यं नियमाद्ब्रह्मवादिभिः॥' कार्ष्णाजिनिः—'मौञ्जीबन्धाद्वत्सरार्धं वत्सरं पाणिपीडनात्। पिण्डान् सपिण्डा नो दद्युः प्रेतपिण्डं विनात्र तु॥' अस्यापवादः पित्रोराब्दिकादौ पूर्वमुक्तः। त्यक्ताग्नेरपि साङ्कल्पमुक्तं षट्त्रिंशन्मते—'अनग्निको यदा विप्र उत्सन्नाग्निस्तथैव च। तथा वृद्धिषु सर्वासु सङ्कल्पश्राद्धमाचरेत्॥'

अशक्तौ पृथ्वीचन्द्रोदये बृहन्नारदीये—'द्रव्याभावे द्विजाभावे ह्यन्नमात्रं तु पाचयेत्। पैतृकेन तु सूक्तेन होमं कुर्याद्विचक्षणः॥' देवलः—'पिण्डमात्रं प्रदातव्यमभावे द्रव्यविप्रयोः। श्राद्धीयाहनि संप्राप्ते भवेन्निरशनोऽपि वा॥' वृद्धवसिष्ठः—'किंचिद्दद्यादशक्तस्तु उदकुम्भादिकं द्विजे। तृणानि वा गवे दद्यात् पिण्डान्वाप्यथ निर्वपेत्॥ तिलदर्भैः पितॄन्वापि तर्पयेत्स्नानपूर्वकम्॥' हेमाद्रौ भविष्ये—'अग्निना वा दहेत् कक्षं श्राद्धकाले समागते। तस्मिन्वोपवसेदह्नि जपेद्वा श्राद्धसंहिताम्॥' श्राद्धसंहिता समन्त्रश्राद्धसङ्कल्पः। विष्णुवराहपुराणयोः-'असमर्थोऽन्नदानस्य धान्यं मांसं स्वशक्तितः। प्रदास्यति तिलान्वापि स्वल्पां वापि च दक्षिणाम्॥ सर्वाभावे वनं गत्वा कक्षामूलप्रदर्शकः। सूर्यादिलोकपालानामिदमुच्चैः पठिष्यति॥ न मेऽस्ति वित्तं न धनं न चान्नं श्राद्धोपयोगि स्वपितॄन्नतोऽस्मि। तृप्यन्तु भक्त्या पितरौ मयैतौ भुजौ कृतौ वर्त्मनि मारुतस्य॥ इत्येतत् पितृभिर्गीतं भावाभावप्रयोजनम्। यः करोति कृतं तेन श्राद्धं भवति भारत॥' प्रभासखण्डे—'गत्वारण्यमसमानुष्यमूर्ध्वबाहुर्विरौत्यदः। निरन्नो निर्धनो देवाः पितरो माऽनृणं कृथाः॥ न मेऽस्ति वित्तं न धनं न भार्या श्राद्धं कथं वः पितरः करोमि। वनं प्रविश्येह तु तन्मयोच्चैर्भुजौ कृतौ वर्त्मनि मारुतस्य॥ श्राद्धर्णमेतद्भवतां प्रदत्तं मह्यं दयध्वं पितृदेवताद्याः। आख्याय चोत्क्षिप्य भुजौ ततो वै दिवा च

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

रात्रिं समुपोष्य तिष्ठेत् ॥ भवेत्स वै तेन कृतेन तेषामृणेन मुक्तः पितृदेवतानाम् ॥' इत्यनुकल्पाः ।

अथ श्राद्धभोजने प्रायश्चितम् । दर्शे षट् प्राणायामाः । वृद्धौ त्रयः । संस्कारेषु जातकर्मादिचूडान्तेषु सान्तपनम् । आद्ये चान्द्रं वा । अन्यसंस्कारेषूपवासः । सीमन्ते चान्द्रमिति विज्ञानेश्वरः । आपदि नवश्राद्धैकादशाहेषु भोजनेषु कायः । द्वादशाहे ऊनमासे च पादोनः । द्विमासे त्रिपक्षे ऊनषष्ठोनाब्दयोश्चार्धकृच्छ्रः । त्रिमासाद्याब्दिकान्तेषु सपिण्डने च पादकृच्छ्र उपवासो वा । गुरुद्रव्यार्थभोजनेऽर्धम् । जपशीले तदर्धम् । अनापदि तूनमासान्तेषु चान्द्रं कायं वा । द्विमासादौ पादोनम् । त्रिमासदावर्धकायः । आब्दिके पादोनकायः । पुनराब्दिके एकाहः । क्षत्रियादिश्राद्धेषु द्वित्रिचतुर्गुणानि ज्ञेयानि । चाण्डालसर्पश्वादिहतपतितक्लीबादिनवश्राद्धे चान्द्रम् । आद्यमासिकान्ते चान्द्रं पराकश्च । द्वादशाहादौ पराकः । द्विमासादावतिकृच्छ्रः त्रिमासादौ कायः । आब्दिके पादः । अभ्यासे सर्वं द्विगुणम् । आमहेमसङ्कल्पश्राद्धेषु तत्तदर्धानि । यतिर्ब्रह्मचारी चोक्तं प्रायश्चित्तं कृत्वा त्रीनुपवासान् प्राणायामान्घृताशनं चाधिकं कृत्वा व्रतशेषं समापयेत् । अनापदि द्विगुणम् । दर्शादौ दशगायत्रीमन्त्रिता अपः पिबेत् षट्प्राणायामा वा । संस्कारेषु चौले कृच्छ्रः । सीमन्ते चान्द्रम् । अन्येषूपवास इति दिक् । अत्र माधवमिताक्षरादौ क्वचिद्विरोधो विषयभेदात्परिहार्यः । एकादशाहे चान्द्रं पुनःसंस्कारश्चेति प्रायश्चित्तकाण्डे हेमाद्रिः । यत्तूशनाः—'दशकृत्वः पिबेदापो गायत्र्या श्राद्धभुग्द्विजः ।' इति तदनुक्तप्रायश्चित्तश्राद्धपरमिति विज्ञानेश्वरः ।

अथ क्षयाहश्राद्धम् । तत्स्वरूपमाह हेमाद्रौ व्यासः–'मासपक्षतिथिस्पृष्टे यो यस्मिन् म्रियतेऽहनि । प्रत्यब्दं तु तथाभूतं क्षयाहं तस्य तं विदुः ॥' नारदीये–'पारणे मरणे नृणां तिथिस्तात्कालिकी स्मृता ।' अत्र चान्द्रं मानं ज्ञेयम् । 'आब्दिके पितृकार्ये च चान्द्रो मासः प्रशस्यते' इति गर्गोक्तेः । मलमासमृतस्य तु सौरम् । 'मलमासमृतानां तु सौरं मानं समाश्रयेत् ।' इति हेमाद्रावुक्तेः । एतन्मृतमासस्यैवाधिक्ये ज्ञेयम् । ब्राह्मे--प्रतिसंवत्सरं कार्यं मातापित्रोर्मृतेऽहनि । पितृव्यस्याप्यपुत्रस्य भ्रातुर्ज्येष्ठस्य चैवहि ॥' अपुत्रस्येति भ्रात्राप्यन्वयः । ज्येष्ठस्येति कनिष्ठस्यानावश्यकत्वार्थम् । मदनरत्ने भविष्ये-'सर्वेषामेव श्राद्धानां श्रेष्ठं सांवत्सरं मतम् ।' तथा--'भोजको यस्तु वै श्राद्धं न करोति खगाधिप । मातापितृभ्यां सततं वर्षे वर्षे मृतेऽहनि ॥ स याति नरकं घोरं तामिस्रं नाम

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नामतः ॥' तच्च नानास्मृतिष्वेकोद्दिष्टं पार्वणं चोक्तम्। आद्यमाह यमः—'सपिण्डिकरणादूर्ध्वं प्रतिसंवत्सरं सुतैः। मातापित्रोः पृथक्कार्यमेकोद्दिष्टं मृतेऽहनि ॥' व्यासः—'एकोद्दिष्टं तु कर्तव्यं पित्रोश्चैव मृतेऽहनि। एकोद्दिष्टं परित्यज्य पार्वणं कुरुते नरः॥ अकृतं तद्विजानीयाद्भवेच्च पितृघातकः॥' अन्त्यमाह शातातपः—'सपिण्डीकरणं कृत्वा कुर्यात् पार्वणवत्सदा। प्रतिसंवत्सरं श्राद्धं छागलेनोदितो विधिः॥ यः सपिण्डीकृतं प्रेतं पृथक्पिण्डे नियोजयेत्। विधिघ्नस्तेन भवति पितृहा चोपजायते॥' अत्रौरसक्षेत्रजयोः पार्वणं दत्तकादीनामेकोद्दिष्टमित्येकः पक्षः। साग्नेः पार्वणं निरग्नेरेकोद्दिष्टमित्यपरः। तद्दूषणं मिताक्षरादौ ज्ञेयम्। कल्पतरुस्तु 'साग्न्योरौरसक्षेत्रजयोः पार्वणम्। निरग्निकयोस्त्वेकोद्दिष्टम्, इत्याह। अपरार्केऽप्येवम्। दत्तकादयो दश पुत्रास्तु साग्नयो निरग्नयश्चैकोद्दिष्टमेव कुर्युः। 'प्रत्यब्दं पार्वणेनैव विधिना क्षेत्रजौरसौ। कुर्यातामितरे कुर्युरेकोद्दिष्टं सुता दश॥' इति जातूकर्ण्योक्तेः। यदा तु दत्तकस्य पिता दर्शे महालये वा मृतस्तत्र पार्वणैकोद्दिष्टयोर्विकल्पः। वस्तुतस्तु सर्वेषां पार्वणैकोद्दियोर्व्रीहियवद्विकल्पः। स च देशाचाराद्व्यवस्थित इति सर्वनिबन्धसिद्धान्तः। अतएव पृथ्वीचन्द्रोदये वृद्धपराशरः—मातापित्रोः पृथक्कार्यमेकोद्दिष्टं मृतेऽहनि।' इत्युक्त्वाह—'देशधर्मं समाश्रित्य वंशधर्मं तथापरे। सूरयः श्राद्धमिच्छन्ति पार्वणं च क्षयाहन्यपि॥' इति। तच्च केवलपितृणां न सपत्नीकानामिति हेमाद्रिः। अत्र मातामहा न कार्याः। 'कर्षूसमन्वितं मुक्त्वा तथाद्यं श्राद्धषोडशम्। प्रत्याब्दिकं च शेषेषु पिण्डाः स्युः षडिति स्थितिः॥' इति कात्यायनोक्तेः कर्षूसमन्वितं सपिण्डनं यैरेकोद्दिष्टं क्रियते तेषामपि क्वचित् पार्वणमेव 'अमावास्यां क्षयो यस्य प्रेतपक्षेऽथवा पुनः। पार्वणं तस्य कर्तव्यं नैकोद्दिष्टं कदाचन॥' इति शङ्खोक्तेः।

एवं संन्यासिनोऽपि। 'एकोद्दिष्टं यतेर्नास्ति त्रिदण्डग्रहणादिह। सपिण्डीकरणाभावात् पार्वणं तस्य सर्वदा॥' इति प्रचेतसोक्तेः। वायवीये—'संन्यासिनोऽप्याब्दिकादि पुनः कुर्याद्यथाविधि। महालये तु यच्छ्राद्धं द्वादश्यां पार्वणं हि तत्॥' पृथ्वीचन्द्रोदये वृद्धपराशरः—'संग्रामे संस्थितानां च प्रेतपक्षे शशिक्षये। तेषां पार्वणमेवोक्तं क्षयाहेऽपि च सत्तमैः॥ चन्द्रक्षयानाशकसंयुगेषु यः प्रेपपक्षे मृतवान् सपिण्डः। सपिण्डितानामपि चाब्दिकानि भवन्ति तेषामिह पार्वणानि॥' तथा—'भ्रातुर्ज्येष्ठस्य कुर्वीत ज्येष्ठो भ्रातानुजस्य च। दैवहीनं तु तत्कुर्यादिति धर्मवि-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दब्रवीत् ॥' दैवहीनमेकोद्दिष्टम् । ज्येष्ठो भ्राताऽनाद्यगर्भजः । तथा च तत्रैव शतातपः—'अनाद्यगर्भज्येष्ठोऽपि भ्राता सद्भिर्निगद्यते । ऋते सपिण्डनात्तस्य न वै पार्वणमाचरेत् ॥' आद्यगर्भे तु पार्वणमेकोद्दिष्टं वेत्यर्थः । मातुस्तु हेमाद्रौ कात्यायनः—'प्रत्यब्दं यो यथा कुर्यात् पुत्रः पित्रे सदा द्विजः । तथैव मातुः कर्तव्यं पार्वणं चान्यदेव वा ॥' यत्तु तेनैवोक्तम्—'सपिण्डीकरणादूर्ध्वं पित्रोरेव हि पार्वणम् । पितृव्यभ्रातृमातॄणामेकोद्दिष्टं सदैव तु ॥' इति तत्सापत्नमातृपरम् । यत्तु वृद्धपराशरः—'अपुत्रस्य पितृव्यस्य तत्पुत्रो भ्रातृजो भवेत् । स एवास्य तु कुर्वीत पिण्डदानादिकक्रियाम् ॥ पार्वणं तेन कार्यं स्यात्पुत्रवद्भ्रातृजेन तु । पितृस्थाने तु तं कृत्वा शेषं पूर्ववदुच्चरेत् ॥' इति । तत्पितृवद्देशाचारवद्व्यवस्थितमिति पृथ्वीचन्द्रः । श्राद्धदीपकलिकायां चतुर्विंशतिमते तु—'पितृव्यभ्रातृमातॄणां ज्येष्ठानां पार्वणं भवेत् । एकोद्दिष्टं कनिष्ठानां दम्पत्योः पार्वणं मिथः ॥ अपुत्रस्य पितृव्यस्य भ्रातुश्चैवाग्रजन्मनः । मातामहस्य तत्पत्न्याः श्राद्धं पार्वणवद्भवेत् ॥' इत्युक्तं तत्पत्न्याः कर्तृत्वेऽपि पार्वणमेव । 'सर्वाभावे स्वयं पत्न्यः स्वभर्तॄणाममन्त्रकम् । सपिण्डीकरणं कुर्युस्ततः पार्वणमेव च ॥' इति लौगाक्षिस्मृतेः । 'ततः पत्न्यपि कुर्वीत सापिण्ड्यं पार्वणं तथा ।' इति सुमन्तूक्तेश्चेति निर्णयामृते उक्तम् । अन्ये त्वेतत्पाक्षिकपार्वणपरमाहुः । अत एव 'भर्तुः श्राद्धं तु या नारी मोहात्पार्वणमाचरेत् । न तेन तृप्यते भर्ता कृत्वा तु नरकं व्रजेत् ॥ इति वचनं न्यायाहे पाक्षिकैकोद्दिष्टप्रशंसार्थं न पार्वणनिषेधार्थमित्युक्तं त्रिस्थलीसेतौ भट्टचरणैः । 'स्वभर्तृप्रभृतित्रिभ्यः' इत्यनेन विरोधाच्च ।

अपुत्राणां चाह हेमाद्रावापस्तम्बः—अपुत्रा ये मृताः केचित् स्त्रियो वा पुरुषाश्च ये । तेषामपि च देयं स्यादेकोद्दिष्टं न पार्वणम् ॥ मित्रबन्धुसपिण्डेभ्यः स्त्रीकुमारिभ्य एव च । दद्याद्वै मासिकं श्राद्धं सांवत्सरमतोऽन्यथा ॥' पारिजाते तु अन्यथा पार्वणमित्युक्त्वा सर्वत्र पार्वणमित्युक्तम् । एकोद्दिष्टवाक्यानि तु तीर्थमहालयपराणीत्युक्तम् । पृथ्वीचन्द्रोदये वृद्धगार्ग्यः—मातुः सहोदरा या च पितुः सहभवा च या । तयोश्च नैव कुर्वीत पार्वणं पिण्डनादृते ॥' प्रचेताः—'सपिण्डीकरणादूर्ध्वमेकोद्दिष्टं विधीयते । अपुत्राणां च सर्वेषामपत्नीनां तथैव च ॥' अपत्नीनां ब्रह्मचार्यादीनाम् । मार्कण्डेयपुराणे—प्रीतिसंवत्सरं कार्यमेकोद्दिष्टं नरैः स्त्रियाः । मृताहनि यथान्यायं नृणां यद्वदिहोदितम् ॥' नृणामिति दृष्टान्ताद्गोविप्रहतपाखण्ड्यादीनां सपिण्डानामभावेऽपि सांवत्सरमेको-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

द्दिष्टं कार्यमेवेति शूलपाणिः। अत्रिवृद्धवसिष्ठौ—'सपिण्डीकरणादूर्ध्वं यत्र यत्र प्रदीयते। भ्रात्रे भगिन्यै पुत्राय स्वामिने मातुलाय च ॥ पितृव्यगुरवे श्राद्धमेकोद्दिष्टं न पार्वणम् ॥' यत्तु जातूकर्ण्यः—पितृव्यभ्रातृमातॄणामपुत्राणां तथैव च। मातामहस्यासुतस्य श्राद्धादि पितृवद्भवेत् ॥' इति तदावश्यकत्वार्थं नतु पार्वणार्थमिति हेमाद्रिः। युक्तं त्वेवम्। 'मातुः पितरमारभ्य त्रयो मातामहाः स्मृताः। तेषां तु पितृवच्छ्राद्धं कुर्युर्दुहितृसूनवः ॥' इति पुलस्त्योक्तेर्मातामहस्य पार्वणमेव। तत्साहचर्यात् पितृव्यादौ तथा। 'पितृव्यभ्रातृमातॄणामेकोद्दिष्टं न पार्वणम्। इति त्वयाहोक्तोपक्रमे पुलस्त्योक्तेश्च विकल्पः। केचित्त्वापस्तम्बादिवाक्यानि—'व्युत्क्रमाच्च प्रमीतानां नैव कार्या सपिण्डता।' इत्यस्य पितृव्यादिपरत्वादकृतसपिण्डनपितृव्यादिपराणीत्याहुः। माता सपत्नमाता। एकोद्दिष्टं तु कनिष्ठपरमिति। पृथ्वीचन्द्रोदयेऽप्येवम्। विशेषस्त्वधिकारिनिर्णये प्रागुक्तः। केचित् पुत्रान्तराभावेऽपि पितामहवार्षिकमप्यावश्यकम्। 'पुत्राभावे च तत्पुत्रः पत्नी माता तथा पिता। वित्ताभावेऽपि सच्छिष्यः कुर्यात्तस्यौर्ध्वदेहिकम् ॥' इति मार्कण्डेयपुराणादित्याहुस्तन्न। 'पौत्रेणैकादशाहादि कर्तव्यं श्राद्धषोडशम्।' इति कातीये विशेषोक्तेः।

अथ त्वयाहद्वैधे निर्णयः। तत्रैकोद्दिष्टं मध्याह्ने कार्यम्। मध्याह्नश्च पञ्चधा विभक्तदिनतृतीयभाग इति माधवः। 'आमश्राद्धं तु पूर्वाह्णे एकोद्दिष्टं तु मध्यमे। पार्वणं चापराह्णे तु प्रातर्वृद्धिनिमित्तकम् ॥' इति हारीतोक्तौ प्रातःशब्दसाहचर्यात्। तत्रापि कुतपादिषु मुहूर्तद्वितये ज्ञेयम्। 'प्रारभ्य कुतपे श्राद्धं कुर्यादारौहिणं बुधः। विधिज्ञो विधिमास्थाय रौहिणं तु न लङ्घयेत् ॥' इति गौतमोक्तेरेतत्परत्वात्। रौहिणो नवमो मुहूर्तः। मैथिलाः श्राद्धकौमुदी चैवम्। अन्यथा—'ऊर्ध्वं मुहूर्तात् कुतपाद्यन्मुहूर्तचतुष्टयम्। मुहूर्तपञ्चकं ह्येतत्स्वधाभवनमिष्यते ॥' इत्यादिविरोधात्। दीपिकापि—'एकोद्दिष्टमुपक्रमेत कुतपे' इति। माधवीये व्यासोऽपि—'कुतपप्रथमे भागे एकोद्दिष्टमुपक्रमेत्। आवर्तनसमीपे वा तत्रैव नियतात्मवान् ॥' पृथ्वीचन्द्रोदयेऽप्येवम्। तेन कुतपादिरौहिणान्तो मुख्यः कालः। दिनद्वये तद्व्याप्तौ समव्याप्तौ च पूर्वा। विषमव्याप्तावाधिक्येन निर्णयः। अव्याप्तौ पूर्वैव। परविद्धाया निषेधात्। सा च पूर्वदिने रौहिणलङ्घनापत्तेः परैवेति गौडाः। शुक्लकृष्णवशात्खर्वदर्पाद्यैर्वा व्यवस्थेत्यन्ये। तन्न। परविद्धानिषेधप्राबल्यात्। अत्र मूलं कालमाधवीये ज्ञेयम्।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पार्वणं त्वपराह्णे कार्यं पूर्वोक्तवचनात्। 'मध्याह्नव्यापिनी या स्यात्सैकोद्दिष्टे तिथिर्भवेत्। अपराह्णव्यापिनी या पार्वणे सा तिथिर्भवेत्॥ इति पृथ्वीचन्द्रोदये वृद्धगौतमोक्तेश्च। पूर्वेद्युरेव परेद्युरेव वाऽपराह्णव्याप्तौ सैव ग्राह्या। दिनद्वये तद्व्याप्तौ तदस्पर्शेऽशतः समव्याप्तौ वा पूर्वैव। विषमव्याप्तौ त्वधिका ग्राह्या। 'द्व्यपराह्णव्यापिनी स्यादाब्दिकस्य यदा तिथिः। महती यत्र तद्विद्धां प्रशंसन्ति महर्षयः॥' इति मरीचिस्मृतेः। 'दर्शं च पूर्णमासं च पितुः सांवत्सरं दिनम्। पूर्वविद्धामकुर्वाणो नरकं प्रतिपद्यते॥' इत्यपरार्के नारदोक्तेः॥ 'द्व्यहेऽप्यव्यापिनी चेत्स्यान्मृताहस्य यदा तिथिः। पूर्वविद्धा प्रकर्तव्या त्रिमुहूर्ता भवेद्यदि॥' इति सुमन्तूक्तेः। 'पूर्वस्यां निर्वपेत् पिण्डानित्याङ्गिरसभाषितम्।' इति हेमाद्रौ पाठः। तत्रैव वृद्धमनुः—'न द्व्यहव्यापिनी चेत्स्यान्मृताहस्य च या तिथिः। पूर्वविद्धैव कर्तव्या त्रिमुहूर्ता च या भवेत्॥' मदनरत्नेप्येवम्। यत्तु कार्ष्णाजिनिव्यासौ—'अह्नोऽस्तमयवेलायां कलामात्रा यदा तिथिः। सैव प्रत्याब्दिके ज्ञेया नापरा पुत्रहानिदा॥' इति त्रिमुहूर्तस्तुतिः। पूर्वेद्युः सायं त्रिमुहूर्ताभावे तु परैव। 'त्रिमुहूर्ता न चेत् ग्राह्या परैव कुतपे हि सा।' इति कालादर्शे गोभिलोक्तेः। कालादर्शेऽपि—'प्रत्याब्दिकेऽप्येवमेष तिथिर्ग्राह्यापराह्णिकी। उभयत्र तथात्वे तु महत्त्वेन विनिर्णयः॥ समत्वे पूर्वविद्धैव ह्यतथात्वेऽपि सा यदि। त्रिमुहूर्ता भवेत्सायं सर्वेष्टोऽयं विनिर्णयः॥' अन्यत्रापि—'सायंतन्यपरत्र चेन्मृततिथिः सैवाब्दिके मासिके ग्राह्या सा द्व्यपराह्णयोर्यदि तदा यत्राधिका सा मता तुल्या चेदुभयापराह्णसमये पूर्वा न चेत्तु द्वये पूर्वैव त्रिमुहूर्तगास्तसमये नो चेत्परैवोचिता॥'

माधवपृथ्वीचन्द्रौ तु—दिनद्वयेऽपराह्णव्याप्तौ अंशतः समव्याप्तौ च क्षये पूर्वा वृद्धौ परा'। 'खर्वदर्पौ परौ पूज्यौ' इत्युक्तेः। 'अपराह्णद्वयव्यापिन्यतीतस्य च या तिथिः। क्षये पूर्वा च कर्तव्या वृद्धौ कार्या तथोत्तरा॥' इति बौधायनोक्तेः। 'क्षयाहस्य तिथिर्या तु अपराह्णद्वये यदि। पूर्वा क्षये तु कर्तव्या वृद्धौ कार्या तथोत्तरा॥' इति बृहन्नारदीयाच्चेत्याहुः। वृद्धिक्षयौ चात्र परतिथेर्नतु ग्राह्यतिथेः। तस्याः क्षयेऽपराह्णद्वयव्याप्तेरसंभवात्। तदाह माधवः—'न ग्राह्यतिथिगौ वृद्धिक्षयावूर्ध्वतिथेस्तु तौ।' इति। यत्तु पृथ्वीचन्द्रः—'पूर्वोक्तवचनेषु यत्र सायाह्नास्तसमययोगिनी तिथिरुक्ता तत्रापराह्णव्यापिनी ज्ञेया। सायाह्नस्त्रिमुहूर्तः स्यात्तत्र श्राद्धं न कारयेत्।' इति मात्स्यादौ सायाह्ननिषे-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

धात् । यच्च 'त्रिमुहूर्तादिग्रहणं तच्छ्राद्धाहापराह्णरूपत्रिमुहूर्तपरम्' इत्याह । तद्धेमाद्रिमदनरत्नकालादर्शादिग्रन्थविरोधाल्लक्षणापत्तेश्च चिन्त्यम् । तस्मात्पूर्वोक्तमेव साधु । यदा विघ्नवशाद्दिने सांवत्सरश्राद्धं न कृतं तदा रात्रावपि कार्यम् । 'मृताहं समतिक्रम्य चण्डालेष्वभिजायते ।' इति मरीचिना मृताहातिक्रमे दोषोक्तेः । 'नच नक्तं श्राद्धं कुर्वीतारब्धे वा भोजनसमापनम्' इत्यापस्तम्बेन गौणकालोक्तेश्चेति माधवः । आरब्धे श्राद्धे विघ्नवशाद्रात्रिभागे पाते भोजनसमाप्त्यन्तं रात्रौ कार्यम् । शेषसमाप्तिः परदिन एवेति हरदत्तः । ग्रहणदिने वार्षिकप्राप्तौ तद्दिन एवान्नेनामेन हेम्ना वा कुर्यात् नोत्तरदिने इत्युक्तं प्राक् ग्रहणनिर्णये । तच्च प्रथमाब्दिकं त्रयोदशे मलमासे कार्यमन्यथा न । 'प्रत्यब्दं द्वादशे मासि कार्या पिण्डक्रिया सुतैः । क्वचित्त्रयोदशेऽपि स्यादाद्यं मुक्त्वा तु वत्सरम् ॥' इति लघुहारीतोक्तेः । इदमन्त्यादिकमासपरम् । द्वादशे त्रयोदशे वातीत इत्यर्थः । तेन यत्र द्वादशमासिकं शुद्धमासे भवति तत्र त्रयोदशेऽधिके एवाब्दिकं कार्यम् । यत्राधिकमध्ये द्वादशं मासिकं तत्र तस्य द्विरावृत्तिं कृत्वा चतुर्दशे शुद्धे एव प्रथमाब्दिकमिति माधवीये । हेमाद्रौ चैवम् । द्वितीयाब्दिकं तु शुद्धमासे एव नाधिके । नाप्युभयोः । मलमासमृतानां तु यदा स एवाधिकः स्यात्तदा तत्रैव कार्यमन्यथा शुद्ध एवेति प्रागुक्तम् ।

दर्शे वार्षिकं चेत्तदा पूर्वं वार्षिकं कृत्वा ततः पिण्डपितृयज्ञो दर्शश्राद्धं चेति निर्णयदीपे क्रम उक्तः । स्मृतिसारेऽपि—'दर्शे क्षयाहे संप्राप्ते कथं कुर्वन्ति याज्ञिकाः । आदौ क्षयाहं निर्वर्त्य पश्चाद्दर्शो विधीयते ॥' इति । युक्तं त्वेवम् । तद्वचने मूलाभावात् । पिण्डयज्ञं ततः कुर्यात्ततोऽन्वाहार्यकं बुधः ।' इति दर्शश्राद्धे पिण्डपितृयज्ञानन्तर्यात्तस्याब्दिकेऽप्यतिदेशात्प्राप्ते 'पितृयज्ञानन्तरं वार्षिकं ततो दर्शश्राद्धम्' इति व्यतिषङ्गस्तु न भवत्येव । तस्यार्थिकत्वात् । कालादर्शेऽपि–'निमित्तानियतिश्चात्र पूर्वानुष्ठानकारणम् ।' इति सर्वान्प्रत्यैकरूप्याभावात्क्षयाहनिमित्तस्यानियतत्वम् । देवजानीयेप्येवम् । एवं मासिकादिष्वपि ज्ञेयम् । 'प्रत्यब्दं यो यथा कुर्यात्तथा कुर्यात्स तान्यपि' इति सर्वातिदेशात् । मृताहे वृषोत्सर्ग उक्तो हेमाद्रौ विष्णुधर्मे—'अयनद्वितये चैव मृताहे बान्धवस्य च । उत्सृजेन्नीलवृषभं कौमुद्याः समुपागमे ॥' कौमुदी कार्तिकी ।

अथ शुद्धश्राद्धम् । दिवोदासीये—'सपिण्डीकरणादूर्ध्वं यावदब्दत्रयं भवेत् । तावदेव न भोक्तव्यं क्षयेऽहनि कदाचन ॥ वर्षान्तसपिण्डनेप्ये-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तत्तुल्यम् । 'मृताहनि तु संप्राप्ते यावदब्दचतुष्टयम् । बहिः श्राद्धं प्रकुर्वीत न कुर्याच्छ्राद्धभोजनम् । प्रथमेऽस्थीनि मज्जा च द्वितीये मांसभक्षणम् । तृतीये रुधिरं प्रोक्तं श्राद्धं शुद्धं चतुर्थकम् ।।' इति श्राद्धकारिकोक्तेः शुद्धं किञ्चिदिति ज्ञेयम् । स्मृत्यन्तरे—'सप्तत्रिंशच्च यो मासान् श्राद्धे भुङ्क्ते तमोहतः । स पङ्क्तिदूषितः पापः प्रेताशी च भवेत्तु सः ।।' तत्र प्रथमेऽब्दे वर्षान्तसपिण्डनपक्षे मृताहात्पूर्वेऽह्नि सपिण्डनमब्दपूर्तिश्राद्धं च कृत्वा परेद्युर्वार्षिकं कुर्यादिति स्मृत्यर्थसारे उक्तम् । हेमाद्रिस्तु मृताहे सपिण्डीकरणेनैव वार्षिकसिद्धिः । 'पूर्णे संवत्सरे पिण्डः षोडशः परिकीर्तितः । तेनैव च सपिण्डत्वं तेनैवाब्दिकमिष्यते ।।' इति वचनादित्याह । इदमेव युक्तम् ।

अथ क्षयाहाज्ञाने मरीचिः—'श्राद्धविघ्ने समुत्पन्ने अविज्ञाते मृतेऽहनि । एकादश्यां तु कर्तव्यं कृष्णपक्षे विशेषतः ।।' इत्युक्तेः शुक्लैकादश्यामपि । बृहस्पतिः—'न ज्ञायते मृताहश्चेत्प्रमीते प्रोषिते सति । मासश्चेत्प्रतिविज्ञातस्तद्दर्शे स्यादथाब्दिकम् ।। दिनमासौ न विज्ञातौ मरणस्य यदा पुनः । प्रस्थानमासदिवसौ ग्राह्यौ पूर्वोक्तया दिशा ।।' मदनरत्ने भविष्ये—'मृताहं यो न जानाति मानवो विनतात्मज । तेन कार्यममावास्यां श्राद्धं सांवत्सरं तदा ।। दिनमेव तु जानाति मासं नैव तु यो नरः । मार्गशीर्षे तथा भाद्रे माघे वा तद्दिनं भवेत् ।।' निर्णयामृते तु—'यदा मासो न विज्ञातो विज्ञातं दिनमेव तु । तदा चाषाढके मासि माघे वा तद्दिनं भवेत् ।।' इति बृहस्पतिस्मृतेराषाढोऽप्युक्तः । कालादर्शेऽपि—'मासाज्ञाने दिनज्ञाने कार्यमाषाढमाघयोः ।' इत्युक्तम् । हेमाद्रौ प्रभासखण्डे—'मृताहं यो न जानाति मासं वापि कथञ्चन । तेन कार्यममावास्यां श्राद्धं माघेऽथ मार्गके ।।' भविष्ये—'मृतवार्ताश्रुतेर्ग्राह्यौ तौ पूर्वोक्तक्रमेण तु ।' पूर्वोक्तेति प्रस्थानदिनाज्ञाने मासज्ञाने च तद्दर्शे मासाज्ञाने दिनज्ञाने च मार्गादावितिवच्छ्रवणदिनेऽपि ज्ञेयमित्यर्थः । श्रवणदिनं मासज्ञाने माघमार्गदर्शे कार्यं पूर्वोक्तप्रभासखण्डात् । अत्रोऽत्र लोप इति शूलपाण्युक्तं हेयम् । तिथितत्त्वे यमः—'गतस्य न भवेद्वार्ता यावद् द्वादशवार्षिकी । प्रेतावधारणं तस्य कर्तव्यं सुतबान्धवैः ।। यन्मासि यदहर्यातस्तन्मासि तदहक्रिया । दिनाज्ञानं कुहूस्तस्य आषाढस्याथवा कुहूः ।।'

अथ श्राद्धविघ्ने निर्णयः । तत्र विप्रस्य निमन्त्रणोत्तरं सूतके मृतके चाशौचाभावः । 'निमन्त्रितेषु विप्रेषु प्रारब्धे श्राद्धकर्मणि । निमन्त्रणाद्धि विप्रस्य स्वाध्यायाद्विरतस्य च ।। देहे पितृषु तिष्ठत्सु नाशौचं विद्यते

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

क्वचित् ॥' इति ब्राह्मोक्तेः। कर्तुस्तु विष्णुराह—'व्रतयज्ञविवाहेषु श्राद्धे होमेऽर्चने जपे। आरब्धे सूतकं न स्यादनारब्धे तु सूतकम् ॥' श्राद्धे प्रारम्भस्तेनैवोक्तः—'प्रारम्भो वरणं यज्ञे सङ्कल्पो व्रतसत्रयोः। नान्दीमुखं विवाहादौ श्राद्धे पाकपरिक्रिया ॥' इति। माधवीये ब्राह्मेऽपि—'श्राद्धादौ पितृयज्ञे च कन्यादाने च नो भवेत्।' मिताक्षरायां स्मृत्यन्तरे सद्यःशौचं प्रकृत्य—'यज्ञे संभृतसंभारे विवाहे श्राद्धकर्मणि।' इति। तिथितत्त्वादिगौडग्रन्थास्तु निमन्त्रणोत्तरं कर्तुर्भोक्तुश्च नाशौचम्। निमन्त्रणोत्तरं श्राद्धे प्रारम्भः स्यादिति स्मृतिः।' इति विष्णूक्तेः। यत्तु 'श्राद्धे पाकपरिक्रिया' इति, तद्दर्शश्राद्धविषयमित्याहुः। दातृगृहे मरणादौ ब्राह्मे उक्तम्—'भोजनार्धे तु संभुक्ते विप्रैर्दातुर्विपद्यते।' गृहे—इति शेषः। 'यदा कश्चित्तदोच्छिष्टं शेषं त्यक्त्वा समाहिताः। आचम्य परकीयेन जलेन शुचयो द्विजाः ॥' इति। अस्य श्राद्धविषयत्वं हेमाद्रिणोक्तम्। पृथ्वीचन्द्रोदयेऽप्येवम्। मम तु प्रतिभाति—इदं विवाहादिविषयं नतु श्राद्धविषयम्। तत्पदाभावात्। 'विवाहोत्सवयज्ञेषु' इत्युपक्रम्य-'भुञ्जानेषु तु विप्रेषु त्वन्तरा मृतसूतके। अन्यगेहोदकाचान्ताः सर्वे ते शुचयः स्मृताः ॥' इति षट्त्रिंशन्मतैकवाक्यत्वात्। 'निमन्त्रितेषु विप्रेषु प्रारब्धे श्राद्धकर्मणि' इति पूर्वोक्तविरोधाच्च। श्राद्धे तु यद्यपि विष्णुना पाकोत्तरमाशौचाभाव उक्तस्तथापि कर्तुरेव सः। भोक्तुर्दोषोऽस्त्येव-'अपि दातृग्रहीत्रोश्च सूतके मृतके तथा। अविज्ञाते न दोषः स्याच्छ्राद्धादिषु कथञ्चन ॥ विज्ञाते भोक्तुरेव स्यात्प्रायश्चित्तादिकं क्रमात् ॥' इति माधवीये ब्राह्मोक्तेः। आदिशब्देनाशौचमुच्यते। तच्चाह विष्णुः—'ब्राह्मणादीनामाशौचे यः सकृदेवान्नमश्नाति तस्य तावदाशौचं यावत्तेषाम्। आशौचव्यपगमे प्रायश्चित्तं कुर्यात्' इति। यत्तु—'देहे पितृषु तिष्ठत्सु नाशौचं विद्यते क्वचित्।' इति ब्राह्मं, तत् श्राद्धकालीनस्य निषेधकं न तदुत्तरकालीनस्य। शुद्धिदीपस्तु निमन्त्रितेष्वित्यामश्राद्धपरम्, भोजनार्धेष्वित्यादित्वन्नश्राद्धपरमित्याह।

प्रायश्चित्तं त्वाह मार्कण्डेयः—'भुक्त्वा तु ब्राह्मणाशौचं चरेत्सान्तपनं द्विजः।' एतत्कामतः। अभ्यासे शङ्खः—'ब्राह्मणस्य तथा भुक्त्वा मासमेकं व्रती भवेत्।' इति। अज्ञानात्तु छागलेयः—'एकाहं च त्र्यहं पञ्चसप्तरात्रमभोजनम्। ततः शुचिर्भवेद्विप्रः पञ्चगव्यं पिबेन्नरः ॥' इति वर्णक्रमेणेदम्। अभ्यासे तु द्वैगुण्यमित्यादि मिताक्षरामाधवीयादौ ज्ञेयम्। मिताक्षरामाधवादौ तु श्राद्धे कर्तुर्भोक्तुश्च सर्वथा दोषाभाव

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

उक्तः । आशौचमध्ये श्राद्धदिनप्राप्तौ तु माधवीये कालादर्शे च ऋष्यशृङ्गः—'देये पितृणां श्राद्धे तु आशौचं जायते यदा । आशौचे तु व्यतिक्रान्ते तेभ्यः श्राद्धं प्रदीयते ॥' श्राद्धचिन्तामणौ ज्योतिषे—'प्रतिसाम्वत्सरं श्राद्धमाशौचात्पतितं च यत् । मलमासेऽपि तत्कार्यमिति भागुरिभाषितम् ॥' आशौचान्त्यदिनत्वेन निमित्तत्वादित्यर्थः । एतन्मासिकादिपरं न दार्शिकादौ । अत एव सुदर्शनभाष्ये अपरपक्षे पित्र्याणीति नियमात् कृष्णपक्षश्राद्धलोपे प्रायश्चित्तमेव नतु गौणकाले करणम् । तच्चोपवासः । 'वेदोदितानां नित्यानां कर्मणां समतिक्रमे । स्नातकव्रतलोपे च प्रायश्चित्तमभोजनम् ॥' इति मनूक्तेरित्युक्तम् । आशौचे तु प्रायश्चित्तमपि न । मुख्यकाले अनधिकारात् ।

आशौचान्तेऽसंभवे तु व्यासः—'श्राद्धविघ्ने समुत्पन्ने त्वन्तरा मृतसूतके । अमावास्यां प्रकुर्वीत शुद्धावेके मनीषिणः ॥' हेमाद्रौ षट्त्रिंशन्मतेऽपि—'मासिके चाब्दिके त्वह्नि संप्राप्ते मृतसूतके । वदन्ति शुद्धौ तत्कार्यं दर्शे चापि विचक्षणाः ॥' गोभिलः—'देये प्रत्याब्दिके श्राद्धे अन्तरा मृतसूतके । आशौचानन्तरं कुर्यात्तन्मासेन्दुक्षये तथा ॥' मरीचिः—'श्राद्धविघ्ने समुत्पन्नेऽप्यविज्ञाते मृतेऽहनि । एकादश्यां तु कर्तव्यं कृष्णपक्षे विशेषतः ॥' विशेषत इत्युक्तेः शुक्लैकादश्यामपि । आशौचेतरविघ्ने एतदिति माधवपृथ्वीचन्द्रौ । यत्त्वत्रिः—'तदहश्चेत्प्रदुष्येत केनचित्सूतकादिना । सूतकानन्तरं कुर्यात्पुनस्तदहरेव च ॥' इति, तत् पूर्वकालाभावे ज्ञेयम् । एतदाब्दिकेतरश्राद्धपरम् । यच्च देवलः—'एकोद्दिष्टे तु संप्राप्ते यदि विघ्नः प्रजायते । मासेऽन्यस्मिंस्तिथौ तस्मिन् श्राद्धं कुर्यात्प्रयत्नतः ॥' इति । तदपि मासिकपरमिति मदनरत्ने हेमाद्रौ च । इदमपि पूर्वकालासंभवे । व्याध्यादौ विस्मरणे चैवं ज्ञेयम् ।

अथ भार्यारजोदर्शने तत्र दार्शिकमानेन कार्यम् । 'श्राद्धविघ्ने द्विजातीनामामश्राद्धं प्रकीर्तितम् । अमावास्यादिनियतं माससंवत्सरादृते ॥' इति हेमाद्रौ हारीतोक्तेः । व्याघ्रपादोऽपि—'आर्तवे देशकालानां विप्लवे समुपस्थिते । आमश्राद्धं द्विजैः कार्यं शूद्रः कुर्यात्सदैव हि ॥' इति । दीपिकापि—'दर्शे तु भार्यार्तवेप्यामश्राद्धविधिं प्रवासिविधुराद्याश्चाचरेयुर्द्विजाः' । वस्तुतस्तु 'पाकाभावे द्विजातीनामामश्राद्धं विधीयते ।' इति सुमन्तूक्तेः पाककर्त्रन्तरसत्त्वेऽन्नेनान्यथामेनेति युक्तम् । 'मासिकानि सपिण्डानि अमावास्या तथाब्दिकम् । अन्नेनैव तु कर्तव्यं यस्य भार्या रजस्वला ॥' इति कलिकायां वचनाच्च । कालादर्शे तु स्त्रिया रजो-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A,C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दर्शने दर्शश्राद्धं पञ्चमेऽहनीति पक्षान्तरमुक्तम्। पारिजातेऽप्येवम्। एवं महालययुगादावपि।

आब्दिकं तु रजोदर्शनेऽपि तद्दिने एव कार्यम्। 'पुष्पवत्स्वपि दारेषु विदेशस्थोऽप्यनग्निकः। अन्नेनैवाब्दिकं कुर्याद्धेम्ना वामेन न क्वचित्॥' इति माधवीये लौगाक्षिस्मृतेः। मरीचिरपि—'अनग्निकः प्रवासी च यस्य भार्या रजस्वला। आमश्राद्धं प्रकुर्वीत न तत्कुर्यान्मृतेऽहनि॥ कार्ष्णाजिनिः—'आपन्नोप्याब्दिकं नैव कुर्यादामेन कुत्रचित्। अन्नेन तदमायां वा कृष्णे वा हरिवासरे॥' प्रयोगपारिजाते—'रजस्वलायां भार्यायां क्षयाहं यः परित्यजेत्। स वै नरकमाप्नोति यावदाभूतसंप्लवम्॥ मासिकानि सपिण्डं च अमावास्या तथान्तिकम्। अन्नेनैव तु कर्तव्यं यस्य भार्या रजस्वला॥' देवयाज्ञिकनिबन्धेऽपि—'भर्तुः श्राद्धं पञ्चमेऽह्नि कुर्याद्भार्या रजस्वला। पुत्रः पित्रोः प्रकुर्वीत मृताहनि शुचिर्यतः॥' कालादर्शेऽपि—'रजस्वलाङ्गनोऽनग्निर्विदेशस्थोऽथवाब्दिके। दर्शादाविव नामेन त्वन्नेन श्राद्धमाचरेत्॥' अन्यत्रापि—'विदेशको वा विगताग्निको वा रजस्वलायामपि धर्मपत्न्याम्। श्राद्धं मृताहे विदधीत पाकैर्नामेन हेम्ना न तु पञ्चमेऽह्नि॥' एवं मासिकेऽपि। यत्तु मरीचिः—'आब्दिके समनुप्राप्ते यस्य भार्या रजस्वला। पञ्चमेऽहनि तच्छ्राद्धं न तत्कुर्यात् मृतेऽहनि।' इत्युत्तरार्धं, तदपुत्रस्त्रीकर्तृकश्राद्धविषयम्। 'अपुत्रा तु यदा भार्या संप्राप्ते भर्तुराब्दिके। रजस्वला भवेत्सा तु कुर्यात्तत्पञ्चमेऽहनि॥' इति श्लोकगौतमोक्तेः। 'दैवे कर्मणि पित्र्ये वा पञ्चमेऽहनि शुद्ध्यति।' इति प्रभासखण्डाच्च। नन्वशुचित्वादेव तत्र पञ्चमेऽहन्यर्थात् श्राद्धं प्राप्तमिति वचनव्यर्थम्। मैवम्। 'गर्भिणीसूतकादिश्च कुमारी वान्यरोगिणी। यदा शुद्धा तदान्येन कारयेत्प्रयता स्वयम्॥' इति हेमाद्रौ भविष्योक्तेः। 'अनुपनीतस्त्रीशूद्राश्च श्राद्धमृत्विजा कारयेयुः स्वयं वाऽमन्त्रकं कुर्युः' इति स्मृत्यर्थसाराच्चान्यद्वारा करणनिवृत्त्यर्थत्वात्तस्य, त्वदुक्तदिशा आशौचानन्तरं श्राद्धकर्तव्यताऽवेदकवाक्यावैयर्थ्याच्च। अतः प्रागुक्तमरीच्युक्तेः पत्नीपञ्चमेऽहनीति युक्तम्। यत्तु—'सप्ताहात्पितृदेवानां भवेद्योग्या व्रतार्चने।' इति, तद्रजोनिवृत्तिपरमिति हेमाद्रिभिन्नसर्वनिबन्धसिद्धान्तः।

हेमाद्रिस्तु श्राद्धादौ स्त्रिया सहैवाधिकारात्तस्यां रजो दृष्टायां तन्निवृत्तेरेकभार्येण पञ्चमेऽहनि कार्यं प्रागुक्तमरीच्युक्तेः। भार्यान्तरसत्त्वे तु पुष्पवत्स्वपीति वचनात्तद्दिने एवेत्याह। दीपिकापि—'भार्यर्तौ सति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पञ्चमे च दिवसे स्याद्वार्षिकं मासिकं पक्वान्नैर्बहुभार्यकस्त्वधिकृते पत्न्यन्तरे तिष्ठति। कुर्यात्तद्द्वितयं स्वमुख्यदिवसे' इति तच्चिन्त्यम्। सहाधिकारः सहत्वश्रुत्या वा एकफलभाक्त्वेन वा पाककर्तृत्वेन वा। नाद्यः। तदभावात्। पाणिग्रहणाद्धि सहत्वं कर्मस्वित्यस्याग्निसाध्यकर्मविषयत्वात्। श्राद्धिकस्य च निरग्नेरपि पाकेनैवोक्तेः स्मार्ताग्निसाध्यत्वानियमात् 'तामपरुध्य' इति पूर्वोक्तवचनसत्त्वाच्च। कथं च भार्यान्तरसत्त्वेऽधिकारः। 'ज्येष्ठया न विनेतरा' इति नियमात्। ज्येष्ठापरत्वे च तेनैव सिद्धेर्वचनवैयर्थ्यात्। न द्वितीयः। अविभक्तभ्रातृष्वेकस्याऽशुचित्वेन्यस्यानधिकारापत्तेः। न तृतीयः। प्रवासनिर्देशसूतिकारोगिण्यादिष्वप्यकरणापत्तेः। 'आरभेत नवैः पात्रैरन्नारम्भं च बान्धवैः।' इति देवलोक्तावात्मनेपदात्स्वस्य बान्धवानां च पाककर्तृत्वोक्त्या विरोधाच्च। 'ततस्तानि पापाचाशु सीता जनकनन्दिनी।' इति पाद्मादिलिङ्गात्प्राशस्त्यं भार्यापाकस्योच्यते। न तत्कस्यात्यनिष्टम्। तेनैतद्वचनं युक्त्याद्यभावात् पूर्वोक्तवचोविरोधाच्च यत्किञ्चिदेव। यदपि–'श्राद्धीयाहनि संप्राप्ते यस्य भार्या रजस्वला। श्राद्धं तत्र न कर्तव्यं कर्तव्यं पञ्चमेऽहनि॥' इति श्लोकगौतमपाठोऽन्यथा दर्शितः। माधवीये च तद्वशात्पक्षान्तरमुक्तम्। तेनापि नाभिप्रेतार्थसिद्धिः। यस्य प्रेतस्येत्यर्थात्। तेनात्र हेमाद्रिर्बभ्रामेति बहुवक्तव्येऽपि नोच्यते।

अथान्वारोहणे निर्णयः। लौगाक्षिः–'मृताहनि समासेन पिण्डनिर्वपणं पृथक्। नवश्राद्धं च दम्पत्योरन्वारोहण एव तु॥' समासेन तन्त्रेण द्विपितृकश्राद्धवद्द्वयोरेकः पिण्डो विप्रश्च। पिण्डशब्दः श्राद्धपरः। नच श्राद्धं पृथगिति हेमाद्रिपृथ्वीचन्द्रौ। अत्र मृताहनीत्येकत्वात् दिनभेदे दिनैक्ये वा मृततिथेकत्वे कालैक्यं पाकैक्यं च। 'एकचित्यधिरोहे तु तिथिरेकैव जायते। एकपाकेन पिण्डैक्ये द्वयोर्गृह्णीत नामनी॥' इति स्मृत्यन्तराच्च। अन्त्येष्टिपद्धतौ भट्टैरप्युदाहृतम्—'अन्वारोहे तु नारीणां पत्युश्चैकोदकक्रिया। पिण्डदानक्रिया तद्वच्छ्राद्धं प्रत्याब्दिकं तथा॥ नवश्राद्धानि सर्वाणि सपिण्डीकरणं पृथक्। एक एव वृषोत्सर्गो गौरेका तत्र दीयते॥' इति। तिथिभेदे तु वार्षिकं पृथगेव तथा वार्षिके समासविधानादन्यत्र सर्वत्र पृथक्त्वे प्राप्ते नवश्राद्धमेव पृथगिति परिसंख्ययान्यत्र पृथगुक्तेष्वपि वार्षिकषोडशश्राद्धतीर्थसपिण्डनान्वष्टक्यादिषु समास एवेति मदनपारिजातनिर्णयामृतादयः। अतः समासविधिबलात् ज्येष्ठपुत्रस्य कर्तृत्वे सपत्नमातुरन्वारोहणे तत्पुत्रे सत्यपि तद्वार्षिकादिकमविभक्तः सापत्नपुत्र एव ज्येष्ठः कुर्यान्नौरसः। वक्ष्यमाणपृथ्वी-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

चन्द्रादिमते तु औरस एव मातुः पृथक्कुर्यात्। एवं बह्वीष्वपि मातृषु ज्ञेयम्। त्रिस्थलीसेतौ पितामहचरणैरप्येवमुक्तम्। यत्तु गार्ग्यः-'एकचित्यां समारूढौ दम्पती निधिनं गतौ। पृथक् श्राद्धं तयोः कुर्यादोदनं च पृथक् पृथक् ॥' ओदनं पिण्डः। तन्नवश्राद्धविषयम्। यत्तु भृगुः—'या समारोहणं कुर्याद्भर्तुश्चित्यां पतिव्रता। तां मृताहनि संप्राप्ते पृथक्पिण्डे नियोजयेत् ॥ प्रत्यब्दं च नवश्राद्धं युगपत्तु समाचरेत् ॥' तद्येषां वार्षिकमेकोद्दिष्टमुक्तं तद्विषयम्। प्रत्यब्दं च मृताहनीत्यन्वयः। नवश्राद्धं युगपदिति दर्शे वर्गद्वयवदेकतन्त्रेण पृथगित्यर्थमाह हेमाद्रिः। एतन्मृततिथेर्भेदविषयमिति पृथ्वीचन्द्रनिर्णयामृताद्याः। देवयाज्ञिकोप्येवम्। पराशरमाधवस्तु - गार्ग्यभृग्वादिवचनाल्लौगाक्षिवाक्ये समासेन पाकादितन्त्रैक्येन दर्शे वर्गद्वयवत्पृथक्श्राद्धं कुर्यात नवश्राद्धं च तथा' इत्याह।

पृथ्वीचन्द्रिकादयस्तु—'द्वयोरेकपिण्डदानं लौगाक्षिवचनं चापद्विषयम्। पृथक् पिण्डदानं तु मुख्यः कल्पः'। तदाह वृद्धपराशरः—'आरुह्य भर्तुश्चितिमङ्गना या प्राप्नोति मृत्यं खलु सत्वयुक्ता। एकादशाहे तु तयोर्विधेयं श्राद्धं पृथक् स्वर्गमपेद्य सद्भिः॥ एकत्वमिच्छन्ति मतिप्रहीणा एकादशाहादिषु ये नृनार्योः। ते स्वर्गमार्गं विनिहत्य कुर्युः स्त्रीसत्वघातान्नरकाधिवासम्॥ भर्त्रा सह मृता या तु नाकलोकमभीप्सती। सार्हेच्छ्राद्धं पृथक्पिण्डान् नैकत्वं तु स्मृतं तयोः॥ पृथगेव हि कर्तव्यं श्राद्धमेकादशाहिकम्। यानि श्राद्धानि सर्वाणि तान्युक्तानि पृथक्पृथक् ॥' विश्वादर्शेऽपि—'मातुर्गयाष्टकावृद्धिमृताहेषु महालये। श्राद्धं कुर्यात्पृथग्दैवं तन्त्रं चानुगतावपि॥ एकचित्यां समारुह्य मृतयोरेकबर्हिषि। पित्रोः पिण्डान्पृथग्दद्यात्पिण्डं त्वापत्सु तत्सुतः॥' इत्यग्निस्मृतेरित्याहुः। यत्तु षट्त्रिंशन्मते—'एकत्वं सा गता भर्तुः पिण्डे गोत्रे च सूतके। न पृथक् पिण्डदानं तु तस्मात्पत्नीषु विद्यते॥' इति, तद्दर्शादिपरम्। चन्द्रप्रकाशेऽपि—'एकचित्यां समारूढौ दम्पती प्रमृतौ यदि। पृथक् श्राद्धं प्रकुर्वीत पत्युरेव क्षयेऽहनि॥ मृतानामपि भृत्यानां भार्याणां पतिना सह। पूर्वकस्य मृतस्यादौ द्वितीयस्य ततः पुनः। तन्त्रेण श्रपणं कृत्वा श्राद्धं स्वामिक्षयेऽहनि॥ तृतीयस्य ततः कुर्यात्सन्निपातेष्वयं क्रमः॥' इति।

सहगमने सर्वत्र श्राद्धार्थमेकपाक इत्याह मदनरत्ने प्रचेताः—'एकचित्यां समारूढौ म्रियते दम्पती यदि। तन्त्रेण श्रपणं कुर्यात्पृथक् पिण्डं समावपेत्॥' पृथ्वीचन्द्रोदयेप्येवम्। अत्र भर्तुराशौचमध्येऽन्यदिने स्त्रीम-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

रणे पतिमरणदिनगणनयाशौचपिण्डादिनैकादशाहादि कार्यम् ।नात्र पद्मिणीवृद्धिः । 'मृतं पतिमनुव्रज्य पत्नी चेदनलं गता । न तत्र पद्मिणी कार्या पैतृकादेव शुद्ध्यति ॥ पुत्रोऽन्यो वाग्निदस्तस्यास्तावदेवाशुचिस्तयोः । नवश्राद्धं सपिण्डं च युगपत्तु समापयेत् ॥' इति षडशीतिमतात् । 'यदा नारी विशेदग्निं प्रियस्य प्रियवाञ्छया । तदाशौचं विधातव्यं भर्त्राशौचक्रमेण हि ॥' इति लघुहारीतोक्तेश्च । भार्त्राशौचोत्तरमन्वारोहणे तु त्र्यहमाशौचम् ।' ऋग्वेदवादात्साध्वी स्त्री न भवेदात्मघातिनी । त्र्यहाशौचे तु निवृत्ते श्राद्धं प्राप्नोति शाश्वतः ॥' इति ब्राह्मोक्तेरिति पृथ्वीचन्द्रापरार्कौ । एतदन्वारोहणे एव नत्वेकचितौ । ऋग्वेदवादः 'इमा नारीरविधवाः' इत्यादिः । एतत्सवर्णापरमित्यन्ये ।

स्मार्तगौडास्तु—'देशान्तरमृते पत्यौ साध्वी तत्पादुकाद्वयम् । इत्युपक्रम्य, ब्राह्मे—'त्र्यहाशौचे तु निवृत्ते' इत्युक्तेर्भर्त्राशौचोत्तरमन्वारोहणे त्र्यहः, सहगमने तु पूर्णं दशाहादि । पिण्डास्तु दशापि सहैव । तथा च जनकशूलपाणिशुद्धितत्त्वधृतव्यासः—'संस्थितं पतिमालिङ्ग्य प्रविशेद्या हुताशनम् । तस्याः पिण्डादिकं ज्ञेयं क्रमशः पतिपिण्डवत् ॥ अन्विता पिण्डदानं तु यथा भर्तुर्दिनेदिने । तदन्वारोहिणी यस्मात्तस्मात्सा नात्मघातिनी ॥' इति विष्णूक्तेश्च । पृथक्चितौ तु भर्त्राशौचमध्ये तदूर्ध्वं वा सत्यां त्र्यहेण दशपिण्डाः । 'अन्विताया: प्रदातव्या दशपिण्डास्त्र्यहेण तु । स्वाम्याशौचे व्यतीते तु तस्याः श्राद्धं प्रदीयते ॥' इति तत्रैव पैठीनसिस्मृतेः । भर्त्राशौचोत्तरं मृतौ तु चतुर्थेऽह्नि श्राद्धम् । शूलपाणिना त्विदमग्निपुराणीयत्वेनोक्तम्—'युद्धहतस्य सद्यः शौचे त्वन्वारोहणे त्रिरात्रम् । एकचितौ तु संस्थितं पतिम्' इति प्रागुक्तव्यासोक्तेः सद्यः शौचमित्याहुः । अन्यसपिण्डाशौचमध्ये विदेशमृतान्वारोहणं त्वनाशंक्यममेव । शुचिताया अङ्गत्वात् । अन्ये तु रजोवत्याः सूतिकायाश्चानुगमननिषेधादितराशौचस्यानिषेधः । अन्यथा प्रत्यक्षभर्तृमरणे का गतिरित्याहुः । तन्मूलवचनं विना चिन्त्यमेव । स्मृत्यर्थसारे ऽपि–सहगमने सवत्र श्राद्धपिण्डादौ पाकैक्यं कालैक्यं कर्त्रैक्यं चेति । या तु पतिमुद्दिश्याऽन्यकालेऽन्यतिथावन्वारूढा तस्याः श्राद्धं तत्तत्तिथौ कार्यं न भर्तृतिथौ । 'पारणे मरणे नृणां तिथिस्तात्कालिकी स्मृता ।' इति स्कान्दात् 'तिथिरेकैव जायते' इत्यादिवचनाच्चेति मदनरत्नपारिजातपृथ्वीचन्द्रादयः । अन्ये तु तस्याः पतिमरणेन मृतप्रायत्वात् । 'सहाग्रतः पृष्ठतो वा तद्भक्त्या म्रियते यदि । तस्याः श्राद्धं प्रदातव्यं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पृथक् पत्युः क्षयेऽहनि ॥' इति स्मृत्यन्तरात्। 'अग्रतः पृष्ठतो वापि तद्भक्त्या म्रियते यदि। तस्याः श्राद्धं सुतैः कार्यं पत्युरेव क्षयेऽहति ॥' इति पुराणसमुच्चयाच्च भर्तृतिथावेवेत्याहुः। अत्र मूलं चिन्त्यम्। अत्र विशेषो हेमाद्रौ स्मृत्यन्तरे—'माता मङ्गलसूत्रेण म्रियते यदि तद्दिने। उद्दिश्य विप्रपङ्क्तौ तां भोजयेच्च सुवासिनीम्'

अथ श्राद्धसंपाते निर्णयः। अत्र पित्रोर्मृततिथ्येकत्वे मरणक्रमेण दर्शे वर्गद्वयवत्तन्त्रेण श्राद्धं कुर्यात्। पौर्वापर्याज्ञाने तु पितृपूर्वकं कुर्यादिति हेमाद्रिः। माधवादयस्तु—'पित्रोः श्राद्धे समं प्राप्ते नवे पर्युषितेऽपि वा। पितृपूर्वं सुतः कुर्यादन्यत्रासंनियोगतः ॥' इति कार्ष्णाजिनिस्मृतेः। सर्वत्र पितृपूर्वं भिन्नप्रयोगमाहुः। पार्वणैकोद्दिष्टयोः संपाते माधवीये जाबालिः—'यद्येकत्र भवेयातामेकोद्दिष्टं च पार्वणम्। पार्वणं त्वभिनिर्वर्त्य एकोद्दिष्टं समाचरेत् ॥ गृहदाहादिना युगपन्मरणे भृगुः—'एककाले गतासूनां बहूनामथवा द्वयोः। तन्त्रेण श्रपणं कृत्वा कुर्याच्छ्राद्धं पृथक् पृथक्। पूर्वकस्य मृतस्यादौ द्वितीयस्य ततः पुनः। तृतीयस्य ततः कुर्यात्सन्निपातेष्वयं क्रमः ॥' ऋष्यशृङ्गः—'भवेद्यदि सपिण्डानां युगपन्मरणं तदा। सम्बन्धासत्तिमालोच्य तत्क्रमाच्छ्राद्धमाचरेत् ॥' गारुडे—'एकेनैव तु पाकेन श्राद्धानि कुरुतेऽत्र हि। विकिरं त्वेकतः कुर्यात् पिण्डान् दद्यात्पृथक्पृथक् ॥' अत्रानुगमने च दाहसपिण्डनादौ विशेषं वक्ष्यामः। अत्रिः—'बहूनामथवा द्वाभ्यां श्राद्धं चेत्स्यात्समेऽहनि। तन्त्रेण श्रपणं कृत्वा पृथक् श्राद्धानि कारयेत् ॥' पुलस्त्यः—'महालये गयाश्राद्धे गतासूनां क्षयेऽहनि। तन्त्रेण श्रपणं कृत्वा श्राद्धं कुर्यात् पृथक्पृथक् ॥' इदं च पृथक्पाकेन भिन्नश्राद्धाशक्तौ। पृथक्पाकेन संबन्धासत्त्या श्राद्धभेदस्तु मुख्यः पक्षः। 'एकत्रैव दिने श्राद्धद्वयं प्राप्तं यदा तदा। चरेदेव पुरा वर्षात् पितुर्मातुश्च तत्सुतः ॥ एकस्मिन्यः करोत्यह्नि द्वयोः श्राद्धं यदा द्विजः। तदा पूर्वमृतस्यादौ कृत्वा स्नात्वा यथाविधि ॥ पश्चात् पश्चान्मृतस्यैव पृथक्पाकैः समाचरेत्। नैकस्मिन् दिवसे श्राद्धं त्रयाणां कुत्रचित् द्विजः ॥ एकः कुर्यात्तथा प्राप्ते अन्यो भ्राता समाचरेत्। भ्रातर्यविद्यमाने तु तत्परेऽह्नि समाचरेत् ॥ अन्यथा श्राद्धहन्ता स्याच्छ्राद्धसंकरकृद्भवेत् ॥'इत्याश्वलायनोक्तेरिति पृथ्वीचन्द्रः।

कात्यायनः—'द्वे बहूनि निमित्तानि जायेरन्नेकवासरे। नैमित्तिकानि कार्याणि निमित्तोत्पत्त्यनुक्रमात्। जाबालिः-श्राद्धं कृत्वा तु तस्यैव

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पुनः श्राद्धं न तद्दिने। नैमित्तिकं तु कर्तव्यं निमित्तानुक्रमोदयम् ॥' कालादर्शे 'नित्यदार्शिकयोश्चोदकुम्भमासिकयोरपि। दार्शिकस्य युगादेश्च दार्शिकालभ्ययोगयोः ॥ दार्शिकस्य च मन्वादेः संपाते श्राद्धकर्मणः। प्रसङ्गादितरस्यापि सिद्धेरुत्तरमाचरेत् ॥'। अस्य देवताभेदेऽपवादमाह स एव-'नित्यस्य चोदकुम्भस्य नित्यमासिकयोरपि। दर्शस्य चोदकुम्भस्य दर्शमासिकयोरपि ॥ नित्यस्य चाब्दिकस्यापि दार्शिकाब्दिकयोरपि। युगाद्याब्दिकयोश्चैव मन्वाद्याब्दिकयोस्तथा ॥ प्रत्याब्दिकस्य चालभ्ययोगेषु विहितस्य च। संपाते देवताभेदाच्छ्राद्धयुग्मं समाचरेत् ॥ निमित्तानियतिश्चात्र पूर्वानुष्ठानकारणम्। पित्रोस्तु पितृपूर्वत्वं सर्वत्र श्राद्धकर्मणि ॥' माधवीये स्मृतिसंग्रहे—'काम्यतन्त्रेण नित्यस्य तन्त्रं श्राद्धस्य सिद्धयति ॥'

अथ श्राद्धाङ्गतर्पणम्। पारिजाते पृथ्वीचन्द्रोदये च गर्गः—'पूर्वं तिलोदकं कृत्वा अमाश्राद्धं तु कारयेत्। प्रत्यब्देन भवेत्पूर्वं परेऽहनि तिलोदकम् ॥ पक्षश्राद्धे हिरण्ये च अनुव्रज्य तिलोदकम् ॥' नच नित्यतर्पणस्यैवायं परेद्युत्कर्षः, नतु श्राद्धाङ्गतर्पणमस्तीति वाच्यम्। 'यस्तर्पयति तान् विप्रः श्राद्धं कृत्वा परेऽहनि। पितरस्तेन तृप्यन्ति न चेत्कुप्यन्ति वै भृशम् ॥' इति गर्गेण फलनिन्दार्थवादाभ्यामङ्गत्वेनोक्तेः। श्राद्धप्रक्रमाद्वार्षिकम्। बृहन्नारदीयेऽप्याब्दिकं प्रक्रम्य—'परेद्युः श्राद्धकृन्मर्त्यो यो न तर्पयते पितॄन्। तस्य ते पितरः क्रुद्धाः शापं दत्वा व्रजन्ति हि ॥' पितृशब्दश्च श्राद्धेज्यवर्गपरः। तेन तर्पणस्य पशुपुरोडाशयागवत् प्रस्तरप्रहरणवच्चेष्टदेवतासंस्कारकता। तेनाब्दिकदिने नित्यं स्वपित्रादितर्पणं कार्यमेव। श्राद्धाङ्गभूतस्यैव परेद्युरुक्तेः। तदुक्तम्-'प्रत्यब्दाङ्गं तिलं दद्यान्निषिद्धेऽपि परेऽहनि। वर्गैकस्य वचो येषामन्येषां तु विवर्जयेत् ॥'

क्वचिद्विशेषमाह गर्गः-'कृष्णे भाद्रपदे मासि श्राद्धं प्रतिदिनं भवेत्। पितॄणां प्रत्यहं कार्यं निषिद्धाहेऽपि तर्पणम् ॥' तर्पणं तिलतर्पणम्। निषिद्धाहेऽपीत्युक्तेः। 'सकृन्महालये श्वः स्यादष्टकास्वन्त एव हि।' अत्र सप्तमीनिर्देशात् अङ्गिता स्फुटैव। तत्र जयान् जुहुयात् मन्द्रं प्रायणीयायां मन्द्रं प्रातःसवने इत्यादिवत्। अस्यापवादो बृहन्नारदीये—'वृद्धिश्राद्धे सपिण्ड्यां च प्रेतश्राद्धेऽनुमासिके। संवत्सरविमोके च न कुर्यात्तिलतर्पणम् ॥' तदयमर्थः—दर्शे विप्रनिमन्त्रणोत्तरं पाकारम्भोत्तरं वा श्राद्धप्रयोगस्यारब्धत्वात् ब्रह्मयज्ञोत्तरं नित्यतर्पणेनैव श्राद्धाङ्गतर्पणस्य तन्त्रेण प्रसङ्गेन वा सिद्धिः। ततः पूर्वं वैश्वदेवोत्तरं वा ब्रह्मयज्ञकरणे

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

श्राद्धाङ्गतर्पणं पृथक्कार्यम्। पित्रोर्वार्षिके तु नित्यतर्पणं तिलवर्ज्यं कार्यम् ॥ 'नैव श्राद्धदिने कुर्यात्तिलैस्तु पितृतर्पणम्। श्राद्धं कृत्वाऽपराह्णे च तर्पणं तु तिलैः सह ॥' इति वचनात्। 'सप्तम्यां भानुवारे च मातापित्रोर्मृतेऽहनि। तिलैर्यस्तर्पणं कुर्यात्स भवेत् पितृघातकः ॥' इति स्मृतिरत्नावल्यां वृद्धमनूक्तेश्च। अत्र नित्यतर्पणे तिलमात्रनिषेधो नतु तर्पणस्य। तिलैरित्यस्य वैयर्थ्यापत्तेः। यत्तु कातीयम्—'उपरागे पितुः श्राद्धे पातेऽमायां संक्रमे। निषिद्धेऽपि हि सर्वत्र तिलैस्तर्पणमाचरेत् ॥' इति, तत् परेद्युःश्राद्धाङ्गतर्पणविषयकिति केचित्। श्राद्धाशक्तस्य तत्स्थानापन्नतर्पणविषयमिति युक्तम्। सकृन्महालये परेद्युस्तर्पणम्। अष्टकासु तु सप्तम्यष्टमीश्राद्धयोरन्ते तदैव वर्गद्वयस्य। अन्वष्टक्ये तु मातृवर्गस्यापि। तीर्थश्राद्धे दर्शवत्। मघान्वष्टकादिष्वष्टकावदन्ते। अनेकश्राद्धसंपाते तु यदि तत्प्रसङ्गसिद्धिस्तदा तदीयमेव तर्पणम्। तन्त्रत्वे तु श्राद्धसमसंख्यत्वे आदावन्ते वा। विषमसंख्यायां बह्वनुरोध इति। तस्माच्छ्राद्धाङ्गतर्पणं सिद्धम्।

तद्विधिः संग्रहे–'स्नात्वा तीरं समागत्य उपविश्य कुशासने। तर्पयेत् पितॄन् सर्वान् स्नात्वा वस्त्रं च धारयेत् ॥' तर्पणोत्तरं नित्यस्नानं कृत्वेत्यर्थः। 'अपसव्यं ततः कृत्वा सव्यं जान्वाच्य भूतले। नामगोत्रस्वधाकारैर्द्वितीयान्तेन तर्पयेत् ॥' अत्र वस्वादिरूपतोक्ता स्मृत्यर्थसारे–'वसुरुद्रादितिसुतान् श्राद्धार्थे तर्पयेत् पितॄन्।' तच्च बह्वृचानां दक्षिणेनैव। 'अनादेशे दक्षिणं प्रतीयात्'इति सूत्रात्। अत्र प्रत्यञ्जलि मन्त्रावृत्तिः। निर्वापवत्तत्संध्यार्घ्यदानवच्च द्रव्यभेदात्। अवघातवेदिप्रोक्षणादौ तु द्रव्यैकत्वान्न मन्त्रावृत्तिः। केचित्तु परिव्याणमन्त्रवत्क्रियमाणानुवादित्वेन करणत्वाभावात्सकृदिच्छन्ति। तन्न। तत्रापूपद्रव्यैक्यात् परवीरसीतिकरणीभूतमन्त्रान्तरसत्त्वादन्यतरेण व्यवधानापत्त्योभयोः करणत्वायोगात् कर्त्रभेदेन विकल्पायोगाच्च क्रियमाणानुवादित्वं नत्वत्र तथेति बौधायनादिवचनात् करणत्वमेव। तेनावृत्तिरेव युक्ता। एवं नित्येऽपि। यत्तु संग्रहे नाम्ना पठन्ति—'पित्रोः क्षयाहे संप्राप्ते यः कुर्यान्नित्यतर्पणम्। आसुरं तद्भवेच्छ्राद्धं तत्तोयं रुधिरं भवेत् ॥ सर्वदा तर्पणं कुर्याद् ब्रह्मयज्ञपुरःसरम्। मृताहे नैव कर्तव्यं कृतं चेन्निष्फलं भवेत् ॥' तत्समूलत्वे सति तिलविषयम्। यच्च पठन्ति। कपिलः—'मन्वादिषु युगाद्यासु दर्शसंक्रमणेषु च। पौर्णमास्यां व्यतीपाते दद्यात् पूर्वं तिलोदकम् ॥ अर्धोदये गजच्छाये षष्ठीषु च महालये। भरण्यां च मघाश्राद्धे तदन्ते तर्पणं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

विदुः ॥' शौनकः-'मातापित्रोर्मृताहे च परेऽहनि तिलोदकम् । कारुण्याच्छ्राद्धविषये सद्यो दद्यात्तिलोदकम् ॥' एतन्निर्मूलम् ।

अथ तिलतर्पणनिषेधः । गार्ग्यः-'भानौ भौमे त्रयोदश्यां नन्दाभृगुमघासु च । पिण्डदानं मृदा स्नानं न कुर्यात्तिलतर्पणम् ॥' स्मृत्यर्थसारे-'विवाहव्रतचूडासु वर्षमर्धं तदर्धकम् ।' अर्धं तदेव । 'वृद्धौ सत्यां च तन्मासि नेत्याहुस्तिलतर्पणम् ।' हेमाद्रौ मरीचिः—'सप्तम्यां रविवारे च गृहे जन्मदिने तथा । निशासंध्यासु पुत्रार्थी न कुर्यात्तिलतर्पणम् ॥' यत्तु संग्रहे—'नन्दायां भार्गवदिने कृत्तिकासु मघासु च । भरण्यां भानुवारे च गजच्छायाह्वये तथा ॥ अयनद्वितये चैव मन्वादिषु युगादिषु । पिण्डदानं मृद्रास्नानं न कुर्यात्तिलतर्पणम् ॥' इति, तच्चिन्त्यम् 'पानीयमप्यत्र तिलैर्विमिश्रं दद्यात् पितृभ्यः प्रयतो मनुष्यः ।' इत्यादिविरोधात् । अत्रापवादः पृथ्वीचन्द्रोदये—'तीर्थे तिथिविशेषे च गयायां प्रेतपक्षके । निषिद्धेऽपि दिने कुर्यात्तर्पणं तिलमिश्रितम् ॥' स्मृत्यर्थसारेऽपि—'तिथितीर्थविशेषेषु कार्यं प्रेते च सर्वदा ।' इति । गोभिलः-'तिलाभावे निषिद्धाहे सुवर्णरजतान्वितम् । तदभावे निषिञ्चेत्तु दर्भमन्त्रेण वा पुनः ॥' पतितस्य तिलोदकं वक्ष्यामः ।

अथ वृद्धिश्राद्धम् । तन्निमित्तं पृथ्वीचन्द्रोदये ब्राह्मे-'जन्मन्यथोपनयने विवाहे पुत्रकस्य च । पितॄन्नान्दीमुखान्नाम तर्पयेद्विधिपूर्वकम् ॥ देवव्रतेषु चाधानयज्ञपुंसवनेषु च । नवान्नभोजने स्नाने ऊढायाः प्रथमार्तवे ॥ देवारामतडागादिप्रतिष्ठासूत्सवेषु च । राजाभिषेके बालान्नभोजने वृद्धिसंज्ञकान् ॥ वनस्थाद्याश्रमं गच्छन् पूर्वेद्युः सद्य एव वा । पितॄन्पूर्वोक्तविधिना तर्पयेत्कर्मसिद्धये ॥' विष्णुपुराणे—यज्ञोद्वाहप्रतिष्ठासु मेखलाबन्धमोक्षयोः । पुत्रोत्पत्तौ वृषोत्सर्गे वृद्धिश्राद्धं समाचरेत् ॥' तत्रैव—'नामकर्मणि बालानां चूडाकर्मादिके तथा ।' इत्युक्तेर्निष्क्रमान्नप्राशनयोर्न श्राद्धमिति मैथिलाः । तन्न । पूर्वोक्तविरोधात् 'नानिष्ट्वा' इति निषेधात् । 'सुतोत्पत्तौ तथा श्राद्धे अन्नप्राशनिके तथा ।' इति राजमार्तण्डाच्च । यत्तु छन्दोगपरिशिष्टम्—'सूर्येन्द्वोः कर्मणी ये च तयोः श्राद्धं न विद्यते ।' इति, तत्तेषामेवेति कल्पतरुः । बह्वृचकारिकायाम्—'स्यादाभ्युदयिकं श्राद्धं वृद्धिपूर्तेषु कर्मसु । पुंसः सवनसीमन्तचौलोपनयनेष्विह ॥ विवाहे चानलाधेयप्रभृतिश्रौतकर्मणि । इदं श्राद्धं प्रकुर्वन्ति द्विजा वृद्धिनिमित्तकम् ॥ अन्यैः षोडशसंस्कारश्रावण्यादिष्वपीष्यते। वाप्याद्युद्यापनादौ त कुर्युः पूर्तनिमित्तकम् ॥' बोपदेवकालादर्शे—'साम

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

न्तव्रतचौलनामकरणान्नप्राशनोपायनस्नानाधानविवाहयज्ञतनयोत्पत्तिप्रतिष्ठासु च । पुंसूत्याबसथप्रवेशनसुताद्यास्यावलोकाश्रमस्वीकारद्वितिपाभिषेकदयितायतौ च नान्दीमुखम् ॥' यत्तु कामधेनौ—'जलाशयप्रतिष्ठायां वृषोत्सर्गादिकर्मसु । वत्सराभ्यन्तरे पित्रोर्वृषस्योत्सर्गकर्मणि ॥ वृद्धिश्राद्धं न कुर्वीत तदन्यत्र समाचरेत् ॥' इति । तत्र जलाशये वृद्धिश्राद्धस्य निषेधो न तु कर्माङ्गस्येति केचित् । अन्ये त्वस्य निर्मूलतामाहुः । श्राद्धकौमुद्यां निर्णयामृते च मात्स्ये—'अन्नप्राशे च सीमन्ते पुत्रोत्पत्तिनिमित्तके । पुंसवे च निषेके च नववेश्मप्रवेशने ॥ देववृक्षजलादीनां प्रतिष्ठायां विशेषतः । तीर्थयात्रावृषोत्सर्गे वृद्धिश्राद्धं प्रकीर्तितम् ॥' इदं चावश्यकम् । 'वृद्धौ न तर्पिता ये वै पितरो गृहमेधिभिः । तद्धीनमफलं ज्ञेयमासुरो विधिरेव सः ॥' इति शातातपोक्तेः । अत्र श्राद्धत्रयं स एवाह—मातृश्राद्धं तु पूर्वं स्यात्पितॄणां तदनन्तरम् । ततो मातामहानां च वृद्धौ श्राद्धत्रयं स्मृतम् ॥'

तत्कालमाह पृथ्वीचन्द्रोदये गार्ग्यः-'मातृश्राद्धं तु पूर्वेद्युः कर्माहनि तु पैतृकम् । मातामहं चोत्तरेद्युर्वृद्धौ श्राद्धत्रयं स्मृतम् ॥' अत्राप्यशक्तौ स एव- 'पृथक्दिनेष्वशक्तश्चेदेकस्मिन् पूर्ववासरे । श्राद्धत्रयं प्रकुर्वीत वैश्वदेवं तु तान्त्रिकम् ॥' इति । वृद्धमनुरपि-'अलाभे भिन्नकालानां नान्दीश्राद्धत्रयं बुधः । पूर्वेद्युर्वै प्रकुर्वीत पूर्वाह्णे मातृपूर्वकम् ॥' अत्र 'महत्सु पूर्वेद्युस्तदहरल्पेषु' इति गृह्यपरिशिष्टाद्व्यवस्था ज्ञेया । तच्च प्रातरेव । 'पार्वणं चापराह्णे तु प्रातर्वृद्धिनिमित्तकम् ।' इति शातातपोक्तेः । अत्र प्रातःशब्दः सार्धप्रहरपरः । 'प्रहरोऽप्यर्धसंयुक्तः प्रातरित्यभिधीयते ।' इति गार्ग्योक्तेरिति पृथ्वीचन्द्रः । इदं च पुत्रजन्मातिरिक्तविषयम् । तदाहात्रिः-'पूर्वाह्णे वै भवेद्वृद्धिर्विना जन्मनिमित्तकम् । पुत्रजन्मनि कुर्वीत श्राद्धं तात्कालिकं बुधः' इति । एतदनियतनिमित्तपरम् । 'नियतेषु निमित्तेषु प्रातर्वृद्धिनिमित्तकम् । तेषामनियतत्वे तु तदानन्तर्यमिष्यते ॥' इति लौगाक्षिस्मृतेः । आधानाङ्गं नान्दीश्राद्धं त्वपराह्ण एव । 'आमश्राद्धं तु पूर्वाह्णे सिद्धान्नेन तु मध्यतः । पार्वणं चापराह्णे तु वृद्धिश्राद्धं तथाग्निकम् ॥' इति निर्णयामृते गालवोक्तेः । 'नान्दीमुखाह्वयं प्रातराब्दिकं त्वपराह्णतः ।' इति विष्णुक्तेश्च । इदं च मातृपितृमातामहादिक्रमेण नवदैवत्यं कार्यम् । तत्र मातामहाः सपत्नीकाः । 'वृद्धप्रमातामहप्रमातामहमातामहानां सपत्नीकानाम्' इति पृथ्वीचन्द्रोदये गारुडे गद्यरूपेण पाठात् । हेमाद्रौ शङ्खः-'नान्दीमुखे सत्यवसू संकीर्त्यौ वैश्वदेविके ।' वृद्धपराशरः-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'नान्दीमुखेभ्यो देवेभ्यः प्रदक्षिणकुशासनम् । पितृभ्यस्तन्मुखेभ्यश्च प्रदक्षिणमिति स्मृतिः ॥' यत्तु वृद्धवसिष्ठः—'नान्दीमुखे विवाहे च प्रपितामहपूर्वकम् । नाम सङ्कीर्तयेद्विद्वानन्यत्र पितृपूर्वकम् ॥' यच्च स्मृत्यर्थसारे—'वृद्धमुख्यास्तु पितरो वृद्धश्राद्धेषु भुञ्जते ।' इति । यच्च गारुडे—व्युत्क्रमप्रतिपादनं तच्च शाखान्तरविषयम् । 'पितृभ्यः' इति बह्वृचपरिशिष्टे कात्यायनेन चानुलोम्याम्नानात् । पृथ्वीचन्द्रोदयेऽप्येवम् । यत्तु केचिद्वृद्धिपदं पित्रादिषु प्रयुञ्जते । तन्न । 'अनस्मद्वृद्धशब्दानामरूपाणामगोत्रिणाम् । अनाम्नामतिलाद्यैश्च नान्दीश्राद्धं तु सव्यवत् ॥' इति पृथ्वीचन्द्रोदये संग्रहोक्तेः । नच निषेधादेव विधिः कल्प्यत इति वाच्यम् । प्रौष्ठपदीश्राद्धे प्रपितामहात्परेषां वृद्धपित्रादीनां देवतात्वान्नान्दीश्राद्धत्वसामान्येनेहापि तत्प्राप्तौ निषेधात् । गोत्रनामादिनिषेधस्तु—'शुभार्थी प्रथमान्तेन वृद्धौ सङ्कल्पमाचरेत् ।' इत्युपक्रम्य 'अनस्मद्वृद्धशब्दानाम्' इत्युक्तेः सङ्कल्पश्राद्धपरः । 'सपिण्डके तु सर्वं भवति' इति प्रयोगपारिजातात् । 'गोत्रनामभिरामन्त्र्य पितृभ्योऽर्घ्यं प्रदापयेत् ।' इति छन्दोगपरिशिष्टे तद्विधानात् । यत्तु ब्राह्मे—'पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः । त्रयो ह्यश्रुमुखा ह्येते पितरः परिकीर्तिताः ॥ तेभ्यः पूर्वतरा ये च प्रजावन्तः सुखैधिता । ते तु नान्दीमुखा नान्दी समृद्धिरिति कथ्यते ॥' इति । यच्च मार्कण्डेयपुराणे—'येस्युः पितामहादूर्ध्वं ते तु नान्दीमुखा स्मृताः ।' इति तज्जीवपित्रादित्रिककर्तृकवृद्धिश्राद्धविषयम् । तेन तस्येदमावश्यकम् । यत्तु विष्णुः'—पितरि पितामहे प्रपितामहे च जीवति नैव कुर्यात्' इति तद्दर्शादिविषयमिति कल्पतरुः । मदनपारिजातेऽप्येवम् । हेमाद्रिस्तु—'नान्दीमुखानां श्राद्धं तु कन्याराशिगते रवौ । पौर्णमास्यां तु कर्तव्यं वराहवचनं यथा ॥' इति प्रौष्ठपदीश्राद्धैकवाक्यत्वात्तत्रैव पूर्वेषां देवतात्वमित्याह । अत्र सत्यवसू विश्वेदेवावित्युक्तं प्राक् । यत्तु शातातपः—'मातुः श्राद्धं तु युग्मैः स्याद्दैवं प्राङ्मुखैः पृथक् ।' इति, तद्भिन्नप्रयोगमातृश्राद्धपरम् । यच्च मार्कण्डेयपुराणे—'विश्वेदेवविहीनं तु केचिदिच्छन्ति मानवाः ।' इति, तद्भिन्नप्रयोगमातृश्राद्धभिन्नश्राद्धद्वये विश्वेदेवविकल्पार्थम् । प्रयोगैक्ये तु देवनियमः इति हेमाद्रिः ।

एतच्च मातृपूजापूर्वकं कार्यम् । अकृत्वा मातृयागं तु यः श्राद्धं परिवेषयेत् । तस्य क्रोधसमाविष्टा हिंसामिच्छन्ति मातरः ॥' इति शातातपोक्तेः । कौर्मेऽपि—'पुष्पैर्धूपैः सनैवेद्यैर्गन्धाद्यैर्भूषणैरपि । पूजयित्वा मातृगणं कुर्याच्छ्राद्धत्रयं बुधः ॥' इति । छन्दोगपरिशिष्टे—'कर्मादिषु तु सर्वेषु

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मातरः सगणाधिपाः। पूजनीयाः प्रयत्नेन पूजिताः पूजयन्ति ताः॥ प्रतिमासु च शुद्धासु लिखिता वा परादिषु। अपि वाक्षतपुञ्जेषु नैवेद्यैश्च पृथग्विधैः॥ कुड्यलग्नां वसोर्धारां सप्तधारां घृतेन तु। कारयेत्पञ्चधारां वा नातिनीचां न चोच्छ्रिताम्॥ आयुष्याणि च शान्त्यर्थं जप्त्वा तत्र समाहितः। षड्भ्यः पितृभ्यस्तदनु श्राद्धदानमुपक्रमेत्॥' अत्र सर्वेष्विति ग्रहणात् ग्रहयज्ञतद्विकारेष्वपि नित्यं श्राद्धम्। नानिष्ट्वा तु पितॄन् श्राद्धे कर्म किञ्चित्समाचरेत्।' इति शातातपोक्तेश्च। इयं च वसोर्धारा तच्छाखीयानां नियता, अन्येषां त्वनियता। 'बह्वल्पं वा स्वगृह्योक्तम्' इत्युक्तेः। करणे त्वभ्युदयः। 'यन्नाम्नातं स्वशाखायाम्' इत्युक्तेः। आयुष्याणि 'आनो भद्राः' इत्यादीनि। षड्भ्य इति मात्रादित्रिकोपलक्षणमिति पृथ्वीचन्द्रोदयः। छन्दोगानां षड्दैवत्यमन्येषां नवदैवत्यमित्याशार्कः। मम तु मतं कोकिलमतानुसारिणां मातृमातामहप्रमातामहा इति मात्रा सहैव मातामहश्राद्धकरणात् तद्विषयमिदं षड्भ्य इति।

मातरस्तत्रैवोक्ताः—'गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया। देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः॥ धृतिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मदेवतया सह। गणेशेनाधिका ह्येता वृद्धौ पूज्याश्चतुर्दश॥' मातरो लोकमातर इति सर्वविशेषणं' तेन चतुर्दशत्वम्। यदा षोडशेति पाठस्तदा देवतान्तरम्। चन्द्रिकायां चतुर्विंशतिमते त्वन्या उक्ताः तिस्रः पूज्याः पितुः पक्षे तिस्रो मातामहे तथा। इत्येता मातरः प्रोक्ताः पितुर्मातुः स्वसाष्टमी॥' आसां जीवने प्रत्यक्षपूजनम्। मृतानां त्वक्षतपुञ्जेष्विति हेमाद्रिः। 'ब्रह्माण्याद्यास्तथा सप्त दुर्गाक्षेत्रगणाधिपान्। वृद्धयादौ पूजयित्वा तु पश्चान्नान्दीमुखान् पितॄन्॥ मातृपूर्वान् पितॄन् पूज्य ततो मातामहानपि। मातामहीस्ततः केचिद्युग्मा भोज्या द्विजातयः॥' इति। अत्र द्वादशदैवतस्य देशाचाराद्व्यवस्था। ब्रह्माण्याद्याः—'ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी तथा। वाराही च तथेन्द्राणी चामुण्डा सप्त मातरः॥' इत्यपरार्के उक्ताः। अत्र चौलादीनां यौगपद्ये तन्त्रतोक्ता छन्दोगपरिशिष्टे—गणशः क्रियमाणानां मातृभ्यः पूजनं सकृत्। सकृदेव भवेच्छ्राद्धमादौ न पृथगादिषु॥' मातृभ्यः इति षष्ठ्यर्थे चतुर्थी। गणशः एकानेकपुत्राणां संस्कारेष्वेकदिने एकदेशकालकर्त्रैक्यादित्यर्थः। तथा—'असकृद्यानि कर्माणि क्रियेरन् कर्मकारिभिः। प्रतिप्रयोगं नैव स्युर्मातरः सगणाधिपाः॥' कर्मावृत्तावपि कुत्र श्राद्धं कार्यं क्व च नेत्युक्तं तत्रैव—'आधाने होमयोश्चैव वैश्वदेवे तथैव च। बलिकर्मणि दर्शे

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

च पूर्णमासे तथैव च । नवयज्ञे च यज्ञज्ञा वदन्त्येवं मनीषिणः । एकमेव भवेच्छ्राद्धमेतेषु न पृथक् पृथक् ॥ एतेषु प्रतिप्रयोगं नावर्तते किंत्वादौ। एतद्भिन्ने सोमयागादौ तु प्रतिप्रयोगमावर्तत एव श्राद्धमित्यर्थः ।

क्वचिदादावपि निषेधमाह स एव—'नाष्टकासु भवेच्छ्राद्धं न श्राद्धे श्राद्धमिष्यते । न सोष्यन्तीजातकर्मप्रोषितागतकर्मसु ॥ विवाहादिः कर्मगणो य उक्तो गर्भाधानं शुश्रुमो यस्य चान्ते । विवाहादावेकमेवात्र कुर्याच्छ्राद्धं नादौ कर्मणः कर्मणः स्यात् ॥' सोष्यन्त्या आसन्नप्रसवायाः। 'सोष्यन्तीमभ्युदय' इत्युक्तं कर्म । कात्यायनोक्तस्य श्राद्धस्य पाकप्राधान्यात्तस्य च 'जातश्राद्धे न दद्यात्तु पक्वान्नं ब्राह्मणेष्वपि ।' इति निषेधान्न जातकर्मणि नान्दीश्राद्धमित्याशार्कः । आमान्नेन वा कार्यमित्यपि तेनैवोक्तम् । गौडास्तु जातकर्मण्येव निषेधः । पुत्रजन्मनिमित्तकं तु कार्यमेव । 'जन्मन्यथोपनयने' इत्युक्तेः । 'नैमित्तिकमथो वक्ष्ये श्राद्धमभ्युदयात्मकम् । पुत्रजन्मनि तत्कार्यं जातकर्म समं नरैः ॥' इति मार्कण्डेयपुराणाच्चेत्याहुः । हारलतायां श्राद्धविवेके चैवम् । एतेन जातकर्मणि कालान्तरे श्राद्धनिषेधो न पुत्रजन्मदिने इति वाचस्पतिमतं परास्तम् । अथ 'निषेककाले' इति वचनात् गर्भाधाने न निषेधः । 'निषेककाले सोमे च सीमन्तोन्नयने तथा । ज्ञेयं पुंसवने श्राद्धं कर्माङ्गं विधिवत्कृतम् ॥' इति पारस्करः । प्रोषितेति 'प्रोष्यैत्य गृहानुपतिष्ठते पुत्रं दृष्ट्वा जपति' इति विहितं कर्म । विवाहादिः गर्भाधानान्तो यो गृहप्रवेशचतुर्थीकर्मादिः कर्मसमूह उक्तः सूत्रकारेण तत्रापि प्रतिकर्म नेत्यर्थः । अन्येऽपि हलाभियोगादयोऽपवादविषयास्तत्रैव ज्ञेयाः । अप्रचारान्नोच्यन्ते ।

अथात्राधिकारिणः । विष्णुपुराणे—'जातस्य जातकर्मादि क्रियाकाण्डमशेषतः । पिता पुत्रस्य कुर्वीत श्राद्धं चाभ्युदयात्मकम् ॥' अत्र केचित् जीवत्पितुः साग्नेरेव वृद्धिश्राद्धेऽधिकारो नतु निरग्नेः । न जीवत्पितृकः कुर्याच्छ्राद्धमग्निमृते द्विजः । येभ्य एव पिता दद्यात्तेभ्यः कुर्वीत साग्निकः ॥ पितामहेष्वेवमेव कुर्याज्जीवति साग्निकः । साग्निकोऽपि न कुर्वीत जीवति प्रपितामहे ॥' इति चन्द्रिकायां सुमन्तूक्तेरित्याहुः । प्रयोगपारिजातेऽप्यनाहिताग्निर्न कुर्यादिति यद्व्याख्यातं तन्न । अनग्निकोऽपि कुर्वीत जन्माद्यौ वृद्धिकर्मणि । येभ्य एव पिता दद्यात्तानेवोद्दिश्य तर्पयेत् ॥' इति हारीतोक्तेः । सीमन्तवन्तु वृद्धिश्राद्धभिन्न श्राद्धपरमित्युक्तं मदनरत्ने । श्राद्धपदं पिण्डपितृयज्ञपरमिति पृथ्वी

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

चन्द्रोदयः। निर्णयामृते तु हारीतीयेऽनग्निकोऽनाहिताग्निरभिप्रेतः। पूर्ववचने तु साग्निकः श्रौताग्निः स्मार्ताग्निश्चोच्यते। तेनोभयाग्निहीनस्य नेत्युक्तम्। तन्न। पूर्वोक्तदिशा गतिसम्भवेऽनग्निपदस्य स्मार्ताग्निपरत्वे मानाभावात्। वक्ष्यमाणनित्यानित्यसंयोग विरोधात्। 'पितरो जनकस्येज्या यावद्व्रतमनाहितम्। समाहितव्रतः पश्चात्स्वान्यजेत पितामहान्॥' इति पृथ्वीचन्द्रोदये यमवचोविरोधाच्च। अपरार्कोऽपि–'समावर्तने ब्रह्मचारी स्वयमेव नान्दीश्राद्धं कुर्यात्' इत्याह। अतः पूर्वमेव साधु। बोपदेवोऽप्येवमाह। यत्तु मतं जीवत्पितुः पुत्रनामकर्मादौ न वृद्धिश्राद्धं, हारीतीये—जन्मादावित्यादिशब्देन तत्प्राप्तावपि—'उद्वाहे पुत्रजनने पित्र्येष्ट्यां सौमिके मखे। तीर्थे ब्राह्मण आयाते षडेते जीवतः पितुः॥' इति। मैत्रायणीयपरिशिष्टे—'उद्वाह एवं तस्योपसंहारात्। एवं यत्र तु संस्कारादिपदं तदप्युद्वाहादिपरमेव' इति। तन्न। उद्वाहपदस्य स्वविवाहपरत्वस्यापि संभवात्। पुत्रविवाहपरत्वे मानाभावात्। 'नामकर्मणि बालानां चूडाकर्मादिके तथा' इत्यादिभिर्नित्यश्राद्धस्य चौलाद्यङ्गत्वावगतौ नित्यसंयोगविरोधाच्च। अतो जन्मादाविति सर्वसंस्कारसंग्रहः। तथा कात्यायनः—'स्वपितृभ्यः पिता दद्यात्सुतसंस्कारकर्मसु। पिण्डाद्वहनात्तेषां तस्याभावे तु तत्क्रमात्॥' सुतानां चौलादिसंस्कारेषु पिता स्वपितृभ्यः पिण्डान् श्राद्धं 'पिण्डदोऽशहरश्चैषाम्' इति दर्शनात् ओद्वहनाद्विवाहपर्यन्तं दद्यात्। विवाहश्च प्रथमः। 'नान्दीश्राद्धं पिता कुर्यादाद्ये पाणिग्रहे बुधः। अत ऊर्ध्वं प्रकुर्वीत स्वयमेव तु नान्दिकम्॥' इति स्मृतेः। तस्य पितुरभावे तत्क्रमात् 'असंस्कृतास्तु संस्कार्या भ्रातृभिः पूर्वसंस्कृतैः।' इति यः कर्तृक्रमस्तेन क्रमेण ज्येष्ठभ्रात्रादिर्दद्यादिति चन्द्रिकादयः। हेमाद्रिस्तु तस्य पितुरभावे यः पितृव्यमातुलादिः संस्कुर्यात्स तत्क्रमात्संस्कार्यपितृक्रमाद्दद्यान्न तु स्वपितृभ्य इति व्याचख्यौ।

समावर्तनस्यापि विवाहप्राचीनसुतसंस्कारत्वात् पितैव नान्दीश्राद्धं कुर्यात्। तदभावे ज्येष्ठभ्रात्रादिः। तदभावे स्वयमेव कुर्यात्। उपनयनेन कर्माधिकारस्य जातत्वात्। एवमाद्यविवाहेऽपीति पृथ्वीचन्द्रोदयचन्द्रिकादयः। मदनरन्तेऽप्येवम्। यदा तु पितरि संन्यस्ते प्रोषिते पतिते वा धर्मार्थं तत्पुत्रमन्यः संस्कुर्यात्तदा संस्कार्यपितुः पित्रादिभ्यो दद्यात्। पितरो जनकस्येज्या यावद्व्रतमनाहितम्। समाहितव्रतः पश्चात्स्वान्यजेत पितामहान्'॥ इति पृथ्वीचन्द्रोदये यमोक्तेः। जीवत्पितृकस्य विशेषमाह कात्यायनः—'वृद्धौ तीर्थे च संन्यस्ते तेते च पतिते सति। येभ्य एव

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पिता दद्यात्तेभ्यो दद्यात्स्वयं सुतः ॥' इति। यत्तु वह्वृचपरिशिष्टे—'जीवत्पिता सुतसंस्कारेषु मातृमातामहयोः कुर्यात्। तस्यां जीवन्त्यां मातामहस्यैव' इति, तत् तच्छाखीयानामेवेति दिक्। स्मृतितत्त्वादिगौडग्रन्थेषु तु जीवन्मातृकः पितामह्यादिभ्यो वृद्धौ दद्यात् 'जीवन्तमपि दद्याद्वा प्रेतायान्नोदके द्विजः' इति कात्यायनोक्तेः। 'जीवे तस्मिन्सुताः कुर्युः पितामहा सहैव तु। तस्या चैव तु जीवत्यां तस्याः श्वश्रवेति निश्चयः ॥' इति हरीतोक्तेश्चेत्युक्तम्। तस्मिन् भर्तरि। दाक्षिणात्यास्तु पूर्वोक्तस्य सपिण्डीकरणादिविषयत्वात्। 'जीवेत्तु यदि वर्गाद्यस्तं वर्गं तु परित्यजेत्।' इति वचनात्तद्वर्गस्य लोप एवेत्याहुः। यत्तु चन्द्रिकायां पारस्करः—'निषेककाले सोमे च सीमन्तोन्नयने तथा। ज्ञेयं पुंसवने श्राद्धं कर्माङ्गं वृद्धिवच्च तत् ॥' इति। तत्र गर्भाधानादौ कर्माङ्गं, जातकर्मादावुक्तं तु वृद्धिश्राद्धं पृथगेव। वृद्धिवदित्युक्तेः। गौडनिबन्धे मात्स्ये—'अन्नप्राशे च सीमन्ते पुत्रोत्पत्तिनिमित्तके। पुंसवे च निषेके च नववेश्मप्रवेशने ॥ देवव्रते जलादीनां प्रतिष्ठायां तथैव च। तीर्थयात्रावृषोत्सर्गे वृद्धिश्राद्धं प्रकीर्तितम् ॥' अत्र भूतनिमित्तानां वृद्धित्वम्, भाविनिमित्तानामङ्गत्वम्। वृद्धिशब्दस्तद्धर्मातिदेशार्थ इति गौडाः। अन्ये तु निषेकादौ कर्माङ्गवृद्धिश्राद्धयोः समुच्चयमाहुः। नान्दीश्राद्धसंज्ञा तूभयानुगता।

अथेतिकर्तव्यता। पृथ्वीचन्द्रोदये वृद्धपराशरः—'मालत्याः शतपत्र्या वा मल्लिकाकुब्जयोरपि। केतक्याः पाटलाया वा देया माला न लोहिताः ॥' श्राद्धे मालानिषेधस्यायमपवादः। तथा—'सुवेषभूषणैस्तत्र सालङ्कारैस्तथा नरैः। कुङ्कुमाद्यानुलिप्ताङ्गैर्भाव्यं तु ब्राह्मणैः सह ॥ स्त्रियोऽपि स्युस्तथाभूता गीतनृत्यादिहर्षिताः ॥' हेमाद्रौ ब्रह्माण्डे—'कुशस्थाने च दूर्वाः स्युर्मङ्गलस्याभिवृद्धये'। कुशा अपि वक्ष्यन्ते। छन्दोगपरिशिष्टे—'प्रातरामन्त्रितान् विप्रान् युग्मानुभयतस्तथा।' उभयतः दैवे पित्र्ये च। वैश्वदेवे द्वौ विप्रौ, पित्रादिनामेकैकस्य द्वौद्वाविति विंशतिः। त्रिके वा द्वाविंत्यष्टौ विप्राः। अत्र विप्रालाभे स्त्रियोऽपि भोज्या इत्याहापरार्के वृद्धवसिष्ठः—'मातृश्राद्धे तु विप्राणामलाभे पूजयेदपि। पतिपुत्रान्विता भव्या योषितोऽष्टौ कुलोद्भवाः ॥' मातृत्रिके चतस्रः, मातामहीत्रिके चेत्यष्टाविति हेमाद्रिः। अत्र पित्र्ये प्राङ्मुखा विप्राः। पाद्ये पित्र्ये चतुरस्रं मण्डलमिति जयन्तः। हेमाद्रौ ब्राह्मे—'विप्रान् प्रदक्षिणावर्तं प्राङ्मुखानुपवेशयेत्।' छन्दोगपरिशिष्टे—'गोत्रनामभिरामन्त्र्य पितृभ्योऽर्घ्यं प्रदापयेत्। नात्रापसव्यकरणं न पित्र्यं तीर्थमिष्यते ॥ ज्येष्ठोत्तरकरान्यु-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ग्मान्कराग्राग्रपवित्रकान् । कृत्वार्घ्यं संप्रदातव्यं नैकैकस्यात्र दीयते ॥' पित्रादेर्द्वौद्वौ विप्रौ तयोर्दक्षिणहस्तौ संयोज्य प्रथमोपवेशितविप्रकरोपरि-तन्त्रेण द्वयोरर्घ्यं दद्यादित्यर्थः । बह्वृचकारिकायां तु—'दत्त्वार्घ्यादेकदेशात्स्यादर्घ्यदानं प्रतिद्विजम् । आवृत्तिरपि मन्त्रस्य प्रतिब्राह्मणमिष्यते ॥ प्रतिद्विजं पृथक्कुर्यान्निवीत्यर्घ्यानुमन्त्रणम् ॥' इत्युक्तम् । 'मधुमध्विति यस्तत्र त्रिर्जपोऽशितुमिच्छताम् । गायत्र्यनन्तरं स्तोत्रं मधुमन्त्रविवर्जितम् ॥ न चाश्नंस्तु जपेदत्र कदाचित्पितृसूक्तकम् ॥' तथा—'संपन्नमिति तृप्ताःस्थ प्रश्नस्थाने विधीयते । सुसंपन्नमिति प्रोक्ते शेषमन्नं निवेदयेत् ॥ अक्षय्योदकदानं च अर्घ्यदानवदिष्यते । षष्ठ्यैव नियतं कुर्यान्न चतुर्थ्या कदाचन ॥'

चन्द्रोदये ब्राह्मे—'पठेच्छकुनिसूक्तं तु स्वस्तिसूक्तं शुभं तथा । नान्दीमुखान् पितॄन् भक्त्या साञ्जलिश्च समाह्वयेत् ॥' तथा—'शाल्यन्नं दधिमध्वक्तं बदराणि यवांस्तथा । मिश्रीकृत्वा तु चतुरः पिण्डान्श्रीफलसन्निभान् ॥ दद्यान्नान्दीमुखेभ्यश्च पितृभ्यो विधिपूर्वकम् । द्राक्षामलकमूलानि यवांश्च विनियोजयेत् ॥ तान्येव दक्षिणार्थं तु दद्याद्विप्रेषु सर्वदा ॥' तत्रैव चतुर्विंशतिमते-'द्वौ द्वौ चाभ्युदये पिण्डावेकैकस्मै विनिक्षिपेत् । एकं नाम्ना परं तूष्णीं दद्यात्पिण्डान्पृथक् पृथक् ॥' वसिष्ठः—'प्राङ्मुखो देवतीर्थेन प्राक्कूलेषु कुशेषु च । दत्वा पिण्डान्न कुर्वीत पिण्डपात्रमधोमुखम ॥' नान्दीमुखेभ्यः पितृभ्यः स्वाहेति वा पिण्डदानमन्त्र इति वृत्तिः । अत्र पिण्डाः कृताकृता इत्युक्तं तत्रैव भविष्ये-'पिण्डनिर्वपणं कुर्यान्न वा कुर्याद्विचक्षणः । वृद्धिश्राद्धे महाबाहो कुलधर्मानवेक्ष्य तु ॥' छागलेयः—'अग्नौकरणमर्घ्यं वा वाहनं चावनेजनम् । पिण्डश्राद्धे प्रकुर्वीत पिण्डहीने निवर्तते ॥' तेनात्र भोजनस्यैव प्रधानत्वाद्यदि विप्रस्य वमनं तदा तस्यैव पार्वणस्य पुनरावृत्तिरिति सिद्धम् । अत्र साङ्कल्पे विशेषः प्रयोगपारिजाते संग्रहे—शुभार्थी प्रथमान्तेन वृद्धौ साङ्कल्पमाचरेत् । न षष्ठ्या यदि वा कुर्यान्महादोषोऽभिजायते ॥' नामगोत्रादिनिषेधोऽप्यत्रैव नतु सपिण्डकश्राद्धे इति स एव ।

अत्रायं क्रमः । नान्दीश्राद्धे दैवे क्षणः क्रियताम् इति द्वौ युगपन्निमन्त्र्य ओंतथेति विप्राभ्यां युगपदुक्ते प्राप्नुतां भवन्तौ प्राप्नुवाव इति वैश्वदेववत् पित्र्ये च द्विवचनान्तेन विप्रद्वये प्रयोगं कुर्यात् । आहिताग्निस्तु हेमाद्रौ ब्राह्मे —'योऽग्नौ तु विद्यमानेऽपि वृद्धौ पिण्डान्न निर्वपेत् । पतन्ति पितरस्तस्य नरके स च पच्यते ॥' बह्वृचपरिशिष्टे—द्वौ

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दर्भौ पवित्राणि चत्वारि। शन्नोदेवीरित्यनुमन्त्रितासु यवानावपति—'यवोसि सोमदेवत्यो गोसवे देवनिर्मितः। प्रत्नवद्भिः प्रत्तः पुष्ट्या नान्दीमुखान्पितृनिमाँल्लोकान्प्रीणयाहि नः स्वाहे' ति स्वाहार्घ्याः इति पृच्छति। विश्वेदेवा इदं वो अर्घ्यं, नान्दीमुखाः पितर इति यथालिङ्गमर्घ्यदानम्। गन्धादिदानं द्विर्द्विः। पाणौ होमोऽग्नये कव्यवाहनाय स्वाहा, सोमाय पितृमते स्वाहेति। 'अतो देवा अवन्तु नः' इत्यङ्गुष्ठग्रहणम्। पावमानीः शंवतीरैन्द्रीरप्रतिरथं च श्रावयेत्। मधुवाता ऋचःस्थाने उपास्मै गायतेति पञ्च मधुमतीः श्रावयेदत्तन्नमीमदन्तेति च षष्ठीं भुक्तशेषेणैकैकस्य द्वौ द्वौ पिण्डौ दद्यात् इति। चन्द्रिकायां वृद्धवसिष्ठः—पितृप्रश्ने तु संपन्नं दैवे रुचितमित्यपि। दधिकर्कन्धुमिश्राश्च पिण्डाः कार्या यथाक्रमम्॥' कात्यायना— त्यमूषुवाजिनम्' इति विप्रांश्च विसर्जयेत्। 'नान्दीमुखाः पितरः प्रीयन्ताम्' इत्यक्षय्यस्थाने, स्वधां वाचयिष्य इत्यस्य स्थाने 'नान्दीमुखान् पितृन् वाचयिष्ये' इति, न स्वधां प्रयुञ्जीतेति। अत्र साग्निरनग्निर्वा आदौ वैश्वदेवं कुर्यात्। आदौ वृद्धौ क्षये चान्ते दर्शे मध्ये महालये। एकोद्दिष्टे निवृत्ते तु वैश्वदेवो विधीयते॥' इत्याशार्के शाङ्खायनपरिशिष्टात्। हेमाद्रौ तु—'शेषमन्नमनुज्ञाप्य वैश्वदेवक्रियां ततः। श्राद्धाद्धि श्राद्धशेषेण वैश्वदेवं समाचरेत्॥' इति चतुर्विंशतिमतान्नान्दीश्राद्धेऽप्यन्ते वैश्वदेव उक्तः। बह्वृचानामपि वृत्त्यालोचनात्तथैव। पूर्वोक्तं तु येषां परिशिष्टं तद्विषयमन्यविषयं वा ज्ञेयम्। अत्र श्राद्धाङ्गतर्पणं नेत्युक्तं प्राक्। इति निर्णयसिन्धौ वृद्धिश्राद्धम्।

अथ जीवत्पितृकश्राद्धम्। तत्रानेकपक्षा दृश्यन्ते। जीवन्तं पितरं भोजयित्वा परयोः श्राद्धं कुर्यादित्येकः। होमान्तमेव कुर्यादित्यन्यः। 'होमान्तः पितृयज्ञः स्याज्जीवे पितरि जानतः। पितरं भोजयित्वा वा पिण्डौ निपृणुयात् परौ॥' इति यज्ञपार्श्वोक्तेः। 'यदि जीवत्पिता न दद्यादाहोमात्कृत्वा विरमेत्' इत्यापस्तम्बोक्तेश्च। 'जीवतां पिण्डानग्नौ हुत्वा परेभ्यो देयम्' इत्यपरः। जुहुयाज्जीवेभ्यः' इत्याश्वलायनोक्तेः। जीवतामजीवतां च पिण्डदानमितीतरः 'जीवतामजीवतां वा देयमेवेति 'हिरण्यकेतु' इति निगमात् 'तस्माज्जीवत्पिता कुर्याद्द्वाभ्यामेव न संशयः' इति भविष्योक्तेर्द्वाभ्यामेवेत्यन्यः। एते पक्षाः कलौ निषिद्धाः 'प्रत्यक्षमर्चनं श्राद्धे निषिद्धं मनुरब्रवीत्। पिण्डनिर्वपणं चापि महापातकसंमितम्॥ इति पृथ्वीचन्द्रोदये भविष्योक्तेः। चन्द्रिका-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्येवम् । तस्मात् पितरि जीवति श्राद्धानारम्भ एवेत्येकः पक्षः । 'सपितुः पितृकृत्येषु अधिकारो न विद्यते । इति कात्यायनोक्तेः । 'जीवे पितरि वै पुत्रः श्राद्धकालं विवर्जयेत् ।' इति हारीतोक्तेश्च पितुः पितादिभ्यो दद्यादिति सिद्धान्तः । ध्रियमाणे तु पितरि पूर्वेषामेव निर्वपेत् ।' इति मनूक्तेः । 'पितुः पितृभ्यो वा दद्यात्सपितेत्यपरा श्रुतिः ।' इति कात्यायनोक्तेश्च । अयं बहुसंमत पक्षः । अन्ये तु शाखाभेदेन ज्ञेयाः । एवं जीवन्मातामहेनाप्यूहेन कार्यम् । 'मातामहानामप्येवं श्राद्धं कुर्याद्विचक्षणः । मन्त्रोहेन यथान्यायं शेषाणां मन्त्रवर्जितम् ॥' इति विष्णूक्तेः । 'एवं मात्रादिकस्यापि तथा मातामहादिके ।' इति पृथ्वीचन्द्रोदयेऽग्निपुराणाच्च । 'पितरि जीवति तु स्वमातरि मृतायामपि पितुरेव मातृमातामहयोः कुर्यात् । 'येभ्य एव पिता दद्यात्' इति वक्ष्यमाणवचनात्' इति पितामहचरणाः । मदनरत्ने तु—'जीवत्पिता स्वमातृमातामहयोर्दद्यात्' इत्युक्तम् । कालादर्शेऽप्येवम् । 'मृते तु पितरि जीवन्मातृकः पितामह्यादिभ्यो वृद्धौ दद्यात्' इति स्मृतितत्त्वादिगौडग्रन्थाः । दाक्षिणात्यास्तु—पितृवर्गे मातृवर्गे तथा मातामहस्य च । जीवेत्तु यदि वर्गाद्यस्तं वर्गं तु परित्यजेत् ॥' इति वचनात्तद्वर्गत्याग एवेत्याहुः ।

एवं पतितसंन्यस्त पितृकादेरपि ज्ञेयम् । 'वृद्धौ तीर्थे च संन्यस्ते ताते च पतिते सति । येभ्य एव पिता दद्यात्तेभ्यो दद्यात्स्वयं सुतः ॥' इति षट्त्रिंशन्मतात् । संन्यस्ते जीवतीत्यर्थः । मृते तु संन्यस्ते तदाद्येव देयम् । मृतेऽपि परेभ्य एवेति गौडाः । कात्यायनोऽपि—'ब्राह्मणादिहते ताते पतिते सङ्गवर्जिते । व्युत्क्रमाच्च मृते देय येभ्य एव ददात्यसौ ॥' अयं च संन्यस्तपित्रादेरविशेषात्सर्वश्राद्धेऽधिकारः । एतन्त्रिदण्डिपरम् । एकादशाहपार्वणवार्षिकाद्यपि तस्यैव । 'अहन्येकादशे प्राप्ते पार्वणं तु विधीयते ।' इत्युक्त्वा 'त्रिदण्डग्रहणादेव प्रेतत्वं नैव जायते । इत्युशनसा विशेषोक्तेः । 'ब्राह्मणादिहते' इत्यादिनिषेधस्त्वेकदण्डादिपरः । अतः परमहंसानां वार्षिकादिकमपि न कार्यमिति शूलपाणिश्राद्धतत्त्वादयो गौडग्रन्थाः । इदमेव तु युक्तम् । यत्तु हेमाद्रौ कौण्डिन्यः—'दर्शश्राद्धं गयाश्राद्धं श्राद्धं चापरपक्षिकम् । न जीवत्पितृकः कुर्यात्तिलैस्तर्पणमेव च ॥'इति, तत्संन्यस्तपित्राद्यतिरिक्तविषयम् । मैत्रायणीयपरिशिष्टे—उद्वाहे पुत्रजनने पैत्र्येष्ट्यां सौमिके मखे । तीर्थे ब्राह्मण आयाते षडेते जीवतः पितुः ॥' तत्रैव—'महानदीषु सर्वासु तीर्थेषु च गयामृते । जीवत्पितापि कुर्वीत श्राद्धं पार्वणधर्मवत् ॥' गयामृते इति मातृव्य-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तिरिक्तविषयम् । 'अन्वष्टक्यं गयाप्राप्तौ सत्यां यच्च मृतेऽहनि । मातुः श्राद्धं सुतः कुर्यात्पितर्यपि च जीवति ॥' इति तत्रैवोक्तेः । गयाप्राप्तौ प्रासङ्गिक्याम् । 'गयां प्रसङ्गतो गत्वा मातुः श्राद्धं समाचरेत् ।' इति वचनात् । तेन मृतमातृको गयायां तत्पार्वणमात्रं कुर्यात् तज्जीवने तु तीर्थश्राद्धमपि नेति कालादर्शस्मृतिदर्पणादयः। अन्ये तु गत्वा श्राद्धं नेति निषेधार्थः । सामान्यतः प्राप्तं तीर्थश्राद्धं भवत्येव गयायामित्याहुः ।

यदा तु पितुः प्रतिनिधित्वेन गयां याति, तदा यजमानस्य पितृपितामहप्रपितामहा इत्येव श्राद्धम् । तत्र मातुः पितृपत्नीत्वेनैकोद्दिष्टं कृत्वा मातृत्वेन पुनः पार्वणं कुर्यादिति त्रिस्थलीसेतौ । तच्च फल्गुविष्णुपदाक्षय्यवटेष्वेति केचित् । आद्यन्ते एवेत्यन्ये । मध्यमान्ते इत्यपरे । संकोचहेत्वभावात्तत्रत्यसर्वश्राद्धानि मातुः कार्याणीति युक्तं प्रतिभाति । यत्तु मदनपारिजाते—'न जीवत्पितृकः कुर्याच्छ्राद्धमग्निमृते द्विजः । येभ्य एव पिता दद्यात्तेभ्यः कुर्वीत साग्निकः ॥' इति सुमन्तूक्तेः साग्नेरेव जीवत्पितृकस्य तीर्थादिश्राद्धमुक्तम् । साग्नेरपि मैत्रायणीयशाखीयस्यैव नान्येषाम् । 'षडेते जीवतः पितुः' इति तत्परिशिष्टे एवोक्तेरिति रत्नावलीदिवोदासाद्याः । तदयुक्तम् । सौमन्तवं पिण्डपितृयज्ञविषयं संन्यस्तपित्राद्यतिरिक्तविषयं वेति पृथ्वीचन्द्रोदयोक्तेः । वृद्धौ तीर्थे चेत्यादेः साधारण्येनास्यापि तथा तथात्वाच्च निरग्नेरपि नान्दीश्राद्धमुक्तं प्राक् । एवं पितामहजीवनेऽपि ज्ञेयम् । विशेषः पितृकृतजीवत्पितृकनिर्णये ज्ञेयः ।

अथ पितामहे जीवति मृते च पितरि यद्यपि 'पितामहो वा तच्छ्राद्धे भुञ्जीतेत्यब्रवीन्मनुः ।' इति मनुना जीवतः पितामहस्य भोजनमुक्तं तथापि प्रत्यक्षार्चनस्य पूर्वं निषिद्धत्वात् पितामहं विहाय पितृप्रपितामहं वृद्धप्रपितामहेभ्यो देयम् । 'पिता यस्य निवृत्तः स्याज्जीवेच्चापि पितामहः । पितुः स नाम सङ्कीर्त्य कीर्तयेत्प्रपितामहम् ॥' इति मनूक्तेः । अयमेव सर्वसंमतः पक्षः । यत्तु छन्दोगपरिशिष्टे—'पितामहे ध्रियमाणे पितुः प्रेतस्य निर्वपेत् । पितुस्तस्य च वृत्तस्य जीवेच्चेत्प्रपितामहः ॥' इति एकपुरुषं द्विपुरुषं वा पार्वणमाह, तत्तीर्थपितृयज्ञपरम् । वृद्धौ पूर्वोक्तमेव । एवं पूर्वयोर्मृतयोः प्रपितामहे जीवति पितृमात्रे मृते परयोर्जीवतोश्च वृद्धप्रपितामहादिभ्यो ज्ञेयम् । 'जीवन्तमति दद्याद्वा प्रेतायान्नोदके द्विजः ।' इति कात्यायनोक्तेश्च । एतत्सर्वं मनसि कृत्वाऽह हेमाद्रौ विष्णुः—'पितरि जीवति यः श्राद्धं कुर्याद्येषां पिता कुर्यात्तेषां, पितरि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पितामहे च जीवति येषां पितामहः,पितरि पितामहे प्रपितामहे च जीवति नैव कुर्यात्। यस्य पिता प्रेतः स्यात्स पित्रे पिण्डं निधाय पितामहात् पराभ्यां द्वाभ्यां दद्यात्। यस्य पितामहः प्रेतः स्यात्स तस्मै पिण्डं निधाय प्रपितामहात्पराभ्यां दद्यात्। यस्यपिता पितामहश्च प्रेतौ स्यातां स ताभ्यां पिण्डौ दत्त्वा पितामहपितामहाय दद्यात्।' 'मातामहानामप्येवं श्राद्धं कुर्याद्विचक्षणः। मन्त्रोहेन यथान्यायं शेषाणां मन्त्रवर्जितम॥' इति। अत्र पितृवन्मातामहे जीवति तत्पित्रादिभ्यः। यथा तत्र त्रिषु जीवत्सु नैव कुर्यात्तथात्रापीत्यादि सर्वमतिदेश्यम्। एवं मातृजीवनेऽपीति शूलपाणिकालादर्शौ। तन्न। येभ्य एवेत्यादौ यच्छब्दादेर्व्यक्तिविशेषवाचित्वेन तदप्रसङ्गादिति दिक्। उत्तरार्धं व्याख्यातं प्राक्। यत्त्वत्र विज्ञानेश्वरेणोक्तं 'पित्रे पिण्डं निधायेति पितुरेकोद्दिष्टविधिना श्राद्धं कृत्वा प्रपितामहादिभ्यः पार्वणं कुर्यात्' तद्व्युत्क्रममृतसपिण्डीकरणाभावपक्षे सपिण्डीकरणस्थानापन्नं ज्ञेयम्। 'व्युत्क्रमात्तु प्रमीतानां नैव कार्या सपिण्डता।' इति वचनात्। दर्शादौ तु पितुरेकोद्दिष्टमेव कार्यम्। 'न जीवन्तमतिददाति' इति श्रुतेः। 'जीवेत्पितामहो यस्य पिता चान्तरितो भवेत्। पितुरेकस्य दातव्यमेवमाहुर्मनीषिणः॥' इति यज्ञपार्श्वोक्तेः। पितामहे जीवति वै पितर्यैव समापयेत्॥' इति हारीतोक्तेश्च। शिष्टातु 'व्युत्क्रमात्तु प्रमीतानां नैव कार्यां सपिण्डता। यदि माता यदि पिता भर्ता नैष विधिः स्मृतः॥' इति माधवीये स्कान्दोक्ते व्युत्क्रममृतसपिण्डिकरणाभावः पितृव्यादिविषय इत्याहुः। एष विधिर्निषेधरूपः।

त्रिषु जीवत्सु विष्णुराह—'त्रिषु जीवत्सु नैव कुर्यात् इति तद्दर्शादिविषयम्। नान्दीश्राद्धं तु परेभ्यस्त्रिभ्यो भवत्येवेति कल्पतरुः। पृथ्वीचन्द्रोदयस्तु—दद्यात्त्रिभ्य परेभ्यस्तु जीवेच्चेत्त्रितयं यदि।' इति मनूक्तेः सर्वत्र विकल्पः। स च देशाचाराद्व्यवतिष्ठत इत्याह। सुदर्शनभाष्ये तु मासिकश्राद्धं जीवत्पित्रादिना व्युत्क्रममृतपित्रादिनां च कार्यमेवेत्युक्तम्। मदनरत्ने क्रतुः—'अष्टकादिषु संक्रान्तौ मन्वादिषु युगादिषु। चन्द्रसूर्यग्रहे पाते स्वेच्छयाऽलभ्ययोगतः॥ जीवत्पिता नैव कुर्याच्छ्राद्धं काम्यं तथाखिलम्॥' अन्ये विशेषाः श्रीपितृकृतजीवत्पितृकनिर्णये भट्टकृतत्रिस्थलीसेतौ च ज्ञेयाः इति निर्णयसिन्धौ जीवत्पितृकादिश्राद्धम्।

अथ विभक्ताविभक्तनिर्णयः। पृथ्वीचन्द्रोदये मरीचिः—बहवः स्युर्यदा पुत्राः पितरेकत्र वासिनः। सर्वेषां तु मतं कृत्वा ज्येष्ठेनैव तु

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

यत्कृतम् ॥ द्रव्येण चाविभक्तेन सर्वैरेव कृतं भवेत् ॥' ज्येष्ठस्य कर्तृत्वे-ऽपि सर्वे फलभागिन इत्यर्थः। तेन ये ब्रह्मचर्यादिनियमास्ते फलितसंस्कारत्वात्सर्वैः कार्याः। एवं संसृष्टिनामपि तुल्यत्वात्। मिताक्षरायां नारदः-भ्रातॄणामविभक्तानामेको धर्मः प्रवर्तते। विभागे सति धर्मोऽपि भवेत्तेषां पृथक्पृथक् ॥' बृहस्पतिरपि—एकपाकेन वसतां पितृदेवद्विजार्चनम्। एकं भवेद्विभक्तानां तदेवस्याद्गृहे गृहे ॥' अत्र यद्यप्यविशेषश्रवणात् ब्रह्मयज्ञसंध्यादिष्वप्यविभक्तानां पृथङ्निषेधः प्राप्नोति, तथापि द्रव्यसाध्यश्राद्धवैश्वदेवादिष्वेव सः। द्रव्यस्यानेकस्वामिकत्वेनैकस्य व्ययेऽनधिकरात्। यानि तु द्रव्यासाध्यानि मन्त्रजपोपवाससंध्याब्रह्मयज्ञपारायणादीनि नित्यनैमित्तिककाम्यानि तेषु पृथगेवाधिकारः, द्रव्यव्ययाभावेऽनुमत्यनपेक्षणात्। 'द्रव्येण चाविभक्तेन' इत्यस्याविषयत्वात्। 'पृथगप्येकपाकानां ब्रह्मयज्ञो द्विजातिनाम्। अग्निहोत्रं सुरार्चा च संध्या नित्यं भवेत्तथा ॥' इति प्रयोगपारिजाते आश्वलायनस्मृतेश्च। अग्निहोत्रशब्दोऽग्निसाध्यश्रौतस्मार्तनित्यकर्मपरः तेष्वप्यन्यानुमत्यैवाधिकारेण न्यायसाम्यात्। पितृश्राद्धादिषु तुल्यफलेषु नित्येष्वनुमतिं विनाप्येकस्याधिकारः। 'एकोऽपि स्थावरे कुर्याद्दानाधयनविक्रयम्। आपत्काले कुटुम्बार्थे धर्मार्थे च विशेषतः ॥' इति वचनात्। धर्मार्थेऽवश्यकर्तव्ये पितृश्राद्धादाविति विज्ञानेश्वरः। केचित्त्वविभक्तानामपि पृथक्पाकत्वे देशान्तरे च दार्शिकाब्दिकयोः पृथक्त्वमाहुः। 'भ्रातॄणामविभक्तानां पृथक्पाको भवेद्यदि। वैश्वदेवादिकं श्राद्धं कुर्युस्ते वै पृथक् पृथक् ॥' इति हारीतोक्तेः। 'अविभक्तेन पुत्रेण पितृमेधो मृताहनि। देशान्तरे पृथक्कार्यो दर्शश्राद्धं तथैव च ॥' इति यमोक्तेश्चेति। तत्र मूलं चिन्त्यम्। तदयमर्थः। पञ्चमहायज्ञमध्ये देवभूतपितृमनुष्ययज्ञानन्यानुमत्या ज्येष्ठ एव कुर्यात्। 'होमाग्रदानरहितं न भोक्तव्यं कदाचन। अविभक्तेषु संसृष्टेष्वेकेनापि कृतं कृतम् ॥' इति व्यासोक्तेश्च। यस्य तु ज्येष्ठेनाकृते वैश्वदेवेऽन्नं सिद्ध्येत्तेन तूष्णीमग्नौ किञ्चित्क्षिप्त्वा भोक्तव्यम्। यस्य त्वेषामग्रतोऽन्नं सिद्ध्येत्स नियुक्तमग्नौ कृत्वाग्रं ब्राह्मणाय दत्त्वा भुञ्जीतेत्यविभक्ताधिकारे पृथ्वीचन्द्रोदये गोभिलोक्तेः।

आश्वलायनस्तु पाकपार्थक्ये पृथक्त्वं तदेकत्वेऽपृथक्त्वमाह। 'वसतामेकपाकेन विभक्तानामपि प्रभुः। एकस्तु चतुरो यज्ञान् कुर्याद्वाग्यज्ञपूर्वकान् ॥ अविभक्ता विभक्ता वा पृथक्पाका द्विजातयः। कुर्युः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पृथक्पृथग्यज्ञान् भोजनात् प्राग्दिने दिने ।।' इति । ब्रह्मयज्ञसंध्यास्नानतर्पणादि तूक्तहेतोः पृथगेव । देवपूजा तूक्तवचनद्वयादेकत्र पृथग्वा । दर्शग्रहणश्राद्धादि त्वेकस्यैव । तीर्थश्राद्धाद्यपि युगपत्सर्वेषामविभक्तानां प्राप्तावेकस्य । भेदेन प्राप्तौ भिन्नम् । गयाश्राद्धेऽप्येवम् । 'एष्टव्या बहवः पुत्राः शीलवन्तो गुणान्विताः । तेषां तु समवेतानां यद्येकोऽपि गयां व्रजेत् ।। तारिताः स्मो वयं तेन स याति परमां गतिम् ।।' इति हेमाद्रौ कौर्मोक्तेः । काम्येपि दानहोमादावन्यानुमत्यैवाधिकारः । द्रव्यासाध्यजपादौ तां विनापि । अपरार्के पैठीनसिः—'विभक्तैस्तु पृथक्कार्यं प्रतिसांवत्सरादिकम् । एकेनैवाभविक्तेषु कृते सर्वैस्तु तत्कृतम् ।।' सांवत्सरात्पूर्वाणि मासिकान्येकत्रैव । तदाह लघुहारीतः—'सपिण्डीकरणान्तानि यानि श्राद्धानि षोडश । पृथङ् नैव सुताः कुर्युः पृथग्द्रव्या अपि क्वचित् ।।' शपिण्डनं मासिकोपलक्षणम् । 'अर्वाक्संवत्सराज्ज्येष्ठः श्राद्धं कुर्यात्समेत्य तु । ऊर्ध्वं सपिण्डीकरणात् सर्वे कुर्युः पृथक्पृथक् ।। इति व्यासोक्तेः । उशनाः—'नवश्राद्धं सपिण्डत्वं श्राद्धान्यपि च षोडश । एकेनैव तु कार्याणि संविभक्तधनेष्वपि ।।' मघात्रयोदशीश्राद्धं त्वविभक्तानामपि पृथगित्युक्तं प्राक् । यत्तु वृद्धवसिष्ठः—'मासिकं च वृषोत्सर्गं सपिण्डीकरणं तथा । ज्येष्ठेनैव प्रकर्तव्यमाब्दिकं प्रथमं तथा ।।' इति । तन्निर्मूलम् । बह्वृचपरिशिष्टे 'नवश्राद्धं सह दद्युः' इति ।

अथ तीर्थश्राद्धम् । तत्रयद्यप्यस्मत्पितामहकृतत्रिस्थलीसेतुरेव जागर्ति, तथापि किंचिदुष्यते । तत्र यात्रायां—'सहाग्निर्वा सपत्नीको गच्छेत्तीर्थानि संयतः । प्रायश्चित्ती व्रजेत्तीर्थं पत्नीविरहहितोऽपि वा ।। यज्ञेष्वनधिकारी वा यश्च वा मन्त्रसाधकः ।।' इति कौर्मादिवचनात्साग्नेः सपत्नीकस्यैवाधिकारः । भारते–'ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो वा राजसत्तम । न वियोनिं व्रजन्त्येते स्नानात्तीर्थे महात्मनः ।।' स्कन्दे विधवाधर्मेषु—'स्नानं दानं तीर्थयात्रां विष्णुनामग्रहं मुहुः ।' एतत् पुत्राद्यनुमत्यैव । सधवायाः पत्या सहैवेति प्रायुक्तम् ।' काशीखण्डे—'मातुः पितुः क्षेप्तुमनास्तथास्थि सुतस्तु कुर्यात्खलु तीथयात्राम् ।' तद्विधि स्कान्दे—'तीर्थयात्रां चिकीर्षुः प्राग्विधायोपोषणं गृहे । गणेशं च पितॄन् विप्रान् साधून् शक्त्या प्रपूज्य च ।। कृतपारणको हृष्टो गच्छेन्नियमधृक् पुनः । तीर्थयात्रा आगत्याभ्यर्च्य च पितृ यथोक्तफभाग्भवेत् ।।' उपवासा विधि त्प्राग् मुण्डनं च कार्यम् । प्रयागे तीर्थयात्रायां पितृमातृवियोगतः । कचानां वपनं कुर्याद्यथा न विकचो भवेत् ।।' इति विष्णुक्तेः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्रायश्चित्तार्थयात्रायां गङ्गायां चैतदित्येके। केचित्तु हेमाद्रौ भारते—'केशश्मश्रुनखादीनां वपनं नैव शस्यते। अतो न कार्यं वपनं गयाश्राद्धार्थिना सदा॥ ये भारतेऽस्मिन् पितृकर्मतत्पराः संधार्य केशानतिभक्तिभाविताः। ऋणक्षयार्थं पितृतीर्थमागतास्तेषामृणं संक्षयमेष्यति ध्रुवम्॥' इति निषेधात् गयायात्राङ्गं वपनं न कार्यमित्याहुः। वस्तुतस्तु—'गयाधिकरणकस्यैवायं निषेधः। नतु यात्राङ्गस्य 'श्राद्धर्थिना' इत्युक्तेः। 'विशालं विरजं गयाम्' इत्यनेकैकवाक्यत्वाच्च। श्राद्धं च षट्नवद्वादशदैवतं वा घृतेन कार्यम्। 'गच्छेद्देशान्तरं यस्तु श्राद्धं कुर्यात्स सर्पिषा।' इति विष्णुपुराणात्। यात्राङ्गवृद्धिश्राद्धोक्तेश्च।

श्राद्धं च पारणादिने एव। 'उपोष्य रजनीमेकां प्रातः श्राद्धं विधाय च। गणेशं ब्राह्मणान्नत्वा भुक्त्वा प्रथितवान् सुधीः।' इति स्कान्दलिङ्गात्। गौडनिबन्धे गौतमः—'तीर्थयात्रासमारम्भे तीर्थात्प्रत्यागमेऽपि च। वृद्धिश्राद्धं प्रकुर्वीत बहुसर्पिस्समन्वितम्॥' वृद्धिपदं तद्धर्मार्थम्। श्राद्धोत्तरं यात्रासङ्कल्प इति भट्टाः। वायवीये—'उद्यतस्तु गयां गन्तुं श्राद्धं कृत्वा विधानतः। विधाय कार्पटीवेषं ग्रामं गत्वा प्रदक्षिणम्॥ ततो ग्रामान्तरं गत्वा श्राद्धशेषस्य भोजनम्॥' घृतस्य भोजनम्, तच्च क्रोशमध्ये, श्राद्धोत्तरं क्रोशगमननिषेधात्। 'ततः प्रतिदिनं गच्छेत्प्रतिग्रहविवर्जितः।' गयायामेवैतन्नान्यत्रेति केचित्। हेमाद्रिस्तु 'गयायां श्राद्धदिने एव प्रस्थानम्। तीर्थान्तरे तु श्राद्धोत्तरदिने' इत्याह। प्रभासखण्डे—'यश्चान्यं कारयेच्छक्त्या तीर्थयात्रां नरेश्वरः। स्वकीयद्रव्ययानाभ्यां तस्य पुण्यं चतुर्गुणम्॥' यात्रामध्ये आशौचे रजसि वा शुद्धिपर्यन्तं स्थित्वा तदन्ते गच्छेत्। मार्गवैषम्ये त्वदोषः। यात्रामध्ये तीर्थान्तरप्राप्तौ श्राद्धादि कार्यमेव। वाणिज्याद्यर्थं गतेन तु मुण्डनोपवासादि न कार्यमिति प्रयोगसेतौ भट्टाः। वस्तुतस्तु तत्रापि मुण्डनोपवासश्राद्धादि कार्यम्। 'अर्धं तीर्थफलं तस्य यः प्रसङ्गेन गच्छति।' इति ब्राह्मोक्तेः। स्कान्दे-द्विर्भोजनं तृतीयांशं हरेत्तीर्थफलस्य च। वाणिज्यं त्रींस्तथा भागान् हन्ति सर्वं प्रतिग्रहः॥ यानं धर्मचतुर्थांशं छत्रोपानहमेव च॥' इत्युत्तरार्धपाठान्तरम्।

अत्र नदीषु विशेषः—'मार्गेऽन्तरा नदीप्राप्तौ स्नानादि परपारतः। अर्वागेव सरस्वत्या एष मार्गगतो विधिः॥' यत्तु—'पितृनतर्पयित्वा तु नदीस्तरति यो नरः। तस्यासृक्पानकामास्ते भवन्ति भृशदुःखिताः॥' इति तत्सरस्वतीपरम्। शङ्खः—'तीर्थं प्राप्यानुषङ्गेण स्नानं तीर्थे समा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

चरेत् । स्नानजं फलमाप्नोति तीर्थयात्राकृतं न तु ॥' स एव-'न स्रवन्तीमतिक्रामेदनवसिच्य'। तीर्थप्राप्तौ तु प्रभासखण्डे—'यानानि तु परित्यज्य भाव्यं पादचरैर्नरैः । लुठित्वा लोठनीं तत्र कृत्वा कार्पटिकाकृतिम् ॥' कृत्वेऽति गृहान्निर्गमसमये करणे इदम् । 'प्रथमं चालभेत्तीर्थं प्रणवेन जलं शुचि । अवगाह्य ततः स्नायाद्यथावन्मन्त्रयोगतः ॥' मन्त्रश्च प्रभासखण्डे—'नमोस्तु देवदेवाय शितिकण्ठाय दण्डिने । रुद्राय चापहस्ताय चक्रिणे वेधसे नमः ॥ सरस्वती च सावित्री वेदमाता गरीयसी । सन्निधात्री भवत्वत्र तीर्थे पापप्रणाशिनी ॥' इति । मन्त्रवत्स्नानं च वपनोत्तरं कार्यम् । 'पूर्वमावाहनं तीर्थे मुण्डनं तदनन्तरम् । ततः स्नानादिकं कुर्यात्पश्चाच्छ्राद्धं समाचरेत् ॥' इत्युक्तेः । यत्तु-'गत्वा स्नानं प्रकुर्वीत वपनं तदनन्तरम् ।' इति, तन्मुसलस्नानपरम् । काशीखण्डे-'तीर्थोपवासः कर्तव्यः शिरसो मुण्डनं तथा ।' उपवासे तत्रैवोक्तम्—'यदह्नि तीर्थप्राप्तिः स्यात्तदह्नः पूर्ववासरे । उपवासः प्रकर्तव्यः प्राप्तेऽह्नि श्राद्धदो भवेत् ॥' अत्र—उपवासं ततः कुर्यात्तस्मिन्नहनि सुव्रतः' इति प्राप्तिदिनेषूपवासोक्तेर्विकल्पः । मुण्डने तु स्कान्ददेवलौ—'मुण्डनं चोपवासश्च सर्वतीर्थेष्वयं विधिः । वर्जयित्वा कुरुक्षेत्रं विशालं विरजं गयाम् ॥' विरजं लोणारप्रसिद्धम् । महातीर्थपरः सर्वतीर्थशब्दः ।

अत्र विशेषः स्मृत्यन्तरे—ऊर्ध्वमब्दाद्द्विमासोनात्पुनस्तीर्थं व्रजेद्यदि । मुण्डनं चोपवासं च ततो यत्नेन कारयेत् ॥ तदा तद्वपनं शस्तं प्रायश्चित्तमृते द्विज ॥' इति वा पाठः । 'प्रयागे प्रतियात्रं तु योजनत्रय इष्यते । क्षौरं कृत्वा तु विधिवत्ततः स्नायात्सितासिते ॥' तथा च बृहस्पतिः—'क्षौरं नैमित्तिकं कार्यं निषेधे सत्यपि ध्रुवम् । पित्रादिमृतिदीक्षासु प्रायश्चित्तेऽथ तीर्थके ॥' अपरार्के स्कान्दे—उदङ्मुखः प्राङ्मुखो वा वपनं कारयेत्सुधीः । केशश्मश्रुलोमनखान्युदक्संस्थानि वापयेत् ॥' इदं प्रयागे सधवानामपि संमूलं भवतीति भट्टाः । 'सर्वान् केशान् समुद्धृत्य छेदयेदङ्गुलिद्वयम् । एवमेव हि नारीणां शस्यते वपनक्रिया ॥' इति । तच्चाकृतचूडानां न कार्यमिति केचित् । तत्त्वं त नैमित्तिकत्वात् पित्रादिमृतिवत्कार्यमेवेति । तदपि प्रयागे नित्यं नान्यत्र । तच्च यतिभिस्तीर्थेऽपि ऋतुसंधिष्वेव कार्यं नान्यदा । 'कक्षोपस्थशिखावर्जमृतुसंधिषु वापयेत् ।' इति स्मृतेः । इदं जीवत्पितृकेणापि तीर्थे कार्यम् । नच 'मुण्डनं पिण्डदानं च' इति दक्षवचनेन निषेधः । 'विना तीर्थं विना यज्ञं मातापित्रोर्मृतिं विना । यो वापयति लोमानि स पुत्र पितृघातकः ॥' इति स्मृत्या

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तत्संकोचात् । तदपि प्रयागे प्रतियात्रम्, अन्यतीर्थे आद्ययात्रायामेवेति शिष्टाः । ततः स्नानम् ।

परार्थे तु मार्कण्डेयपुराणे—'मातरं पितरं जायां भ्रातरं सुहृदं गुरुम् । यमुद्दिश्य निमज्जेत अष्टमांशं लभेत्ततः ॥' पैठीनसिः—'प्रतिकृतिं कुशमयीं तीर्थवारिणि मज्जयेत् । मज्जयेच्च यमुद्दिश्य सोऽष्टभागफलं लभेत् ॥' ततस्तर्पणश्राद्धे पृथ्वीचन्द्रोदये ब्राह्मदेवीपुराणकाशिखण्डादिषु—'अकालेऽप्यथ वा काले तीर्थे श्राद्धं च तर्पणम् । अविलम्बेन कर्तव्यं नैव विघ्नं समाचरेत् ॥' मात्स्ये—'पितृणां चैव तर्पणम्' इति तुर्यपादः । तत्र देवता महालयनिर्णये प्रागुक्ताः । शङ्खदेवलौ—'तीर्थद्रव्योपपत्तौ च न कालमवधारयेत् । पात्रं च ब्राह्मणं प्राप्य सद्यः श्राद्धं समाचरेत् ॥' हारीतः—'दिवा वा यदि वा रात्रौ भुक्तो वोपोषितोऽपि वा । न कालनियमस्तत्र गङ्गां प्राप्य सरिद्वराम् ॥' भारते—'भुक्तो वाप्यथ वा भुक्तो रात्रौ वा यदि वा दिवा । पर्वकालेऽथ वा काले शुचिर्वाप्यथ वाऽशुचिः ॥ यदैव दृश्यते तत्र नदी त्रिपथगा प्रिय । प्रमाणं दर्शनं तस्मान्न कालस्तत्र कारणम् ॥' अशौचेऽपि कार्यम् । 'विवाहदुर्गयज्ञेषु यात्रायां तीर्थकर्मणि । न तत्र सूतकं तद्वत्कर्म यज्ञादि कारयेत् ॥' इति पैठीनसिस्मृतेः । तदानीमकरणे त्वाशौचान्ते एव कुर्यात् । प्रभासखण्डे—'न वारं न च नक्षत्रं न कालस्तत्र कारणम् । यदैव दृश्यते तीर्थं तदा पर्वसहस्रकम् ॥' मलमासेऽपि कार्यम्—'नित्यनैमित्तिके कुर्यात्प्रयतः सन्मलिम्लुचे । तीर्थश्राद्धं गजच्छायां प्रेतश्राद्धं तथैव च ॥' इति बृहस्पतिस्मृतेः ।

एतच्चाशौचे प्रकृतभोजनस्य रात्रौ वा स्नानश्राद्धादिकमाकस्मिकतीर्थप्राप्तावामहेमश्राद्धविषयं ग्रहणादिवत् नतु बुद्धिपूर्वमाशौचादौ तीर्थप्राप्तिः कार्या । मलमासे तु मासद्वये तीर्थश्राद्धं कार्यमिति चन्द्रिकायां देवीपुराणे—'श्राद्धं च तत्र कर्तव्यमर्घ्यावाहनवर्जितम् ॥' हेमाद्रौ—'अर्घ्यमावाहनं चैव द्विजाङ्गुष्ठनिवेशनम् । तृप्तिप्रश्नं च विकिरं तीर्थश्राद्धे विवर्जयेत् ॥' भविष्ये—'आवाहनं विसृष्टिश्च तत्र तेषां न विद्यते । आवाहनं न तीर्थे स्यान्नार्घ्यदानं तथा भवेत् ॥ आहूताः पितरस्तीर्थे कृतार्घ्याः सन्ति वै यतः ॥' अग्नौकरणं च नेति रत्नावल्याम् । अत्र षड्दैवते श्राद्धेऽपि मात्रादीनां पिण्डमात्रं देयम् । 'हविःशेषं ततो मुष्टिमादायैकैकमादृतः । क्रमशः पितृपत्नीनां पिण्डनिर्वपणं चरेत् ॥' इति तीर्थोपक्रमे देवलोक्तेरिति पृथ्वीचन्द्रः । ततः सामान्यपिण्डं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दद्यात् । 'ततः पिण्डमुपादाय हविषः संस्कृतस्य च । ज्ञातिवर्गस्य सर्वस्य सामान्यं पिण्डमुत्सृजेत् ॥' इति तेनैवोक्तेः । पाद्मे—'तीर्थश्राद्धं प्रकुर्वीत पक्वान्नेन विशेषतः । आमान्नेन हिरण्येन कन्दमूलफलैरपि ॥'

पिण्डद्रव्याणि देवीपुराणे हेमाद्रौ ब्राह्मे च—'सक्तुभिः पिण्डदानं च संयावैः पायसेन वा । कर्तव्यमृषिभिः प्रोक्तं पिण्याकेन गुडेन वा ॥' पिण्डानां तीर्थे प्रक्षेप एव नान्या प्रतिपत्तिरित्युक्तं प्राक् । एतच्च विधवयाऽपुत्रया कार्यं न सपुत्रयेत्युक्तं प्राक् । 'सपुत्रया न कर्तव्यं भर्तुः श्राद्धं कदाचन ।' इति स्मृतेश्च । अनुपतीतेनापि कार्यम् । 'एतच्च जीवत्पितृकेणापि कार्यमित्युक्तं प्राक् । यतिना तु न कार्यम् । 'न कुर्यात्सूतकं भिक्षुः श्राद्धपिण्डोदकक्रियाम् । त्यक्तं संन्यासयोगेन ग्रहधर्मादिकं व्रतम् ॥ गोत्रादिचरणं सर्वं पितृमातृकुलं धनम् ॥' इति स्मृतेः । गयायां तूक्तं वायवीये—'दण्डं प्रदर्शयेद्भिक्षुर्गयां गत्वा न पिण्डदः । दण्डं स्पृष्ट्वा विष्णुपदे पितृभिः सह मुच्यते ॥ गयायां धर्मपृष्ठे च कूपे यूपे वटे तथा । दण्डं प्रदर्शयन् भिक्षुः पितृभिः सह मुच्यते ॥' कृत्यरत्ने प्रभासखण्डे—'तीर्थे चेत्प्रतिगृह्णाति ब्राह्मणो वृत्तिदुर्लभः । दशांशमर्जितं दद्यादेवं कुर्वन्न हीयते ॥' इति । विषेषान्तराणि भट्टकृतत्रिस्थलीसेतौ ज्ञेयानीति दिक् ।

इति श्रीकमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ तीर्थश्राद्धविधिः समाप्तः ।

इति श्राद्धप्रकरणं द्वितीयम् ।

—०※※०—

अथाशौचप्रकरणम्

नारायणात्मजश्रीमद्रामकृष्णस्य सूनुना ।
कमलाकरसंज्ञेनाशौचं निर्णीयतेऽधुना ॥ १ ॥

मरीचिः—'आचतुर्थाद्भवेत्स्रावः पातः पञ्चमषष्ठयोः । अत ऊर्ध्वं प्रसूतिः स्याद्दशाहं सूतकं भवेत् । बृहत्पराशरः—'गर्भस्रावे तु नैरुक्ता रात्रयो माससंमिताः । स्रावं गर्भस्य विद्वांसो मासादर्वाक्चतुर्थकात् ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पातमूर्ध्वं वदन्त्येके तत्राधिकं तु सूतकम् । स्रावे मातुस्त्रिरात्रं स्यात्सपिण्डाशौचवर्जनम् । पाते मातुर्यथामासं सपिण्डानां दिनत्रयम् ॥' अत्र सर्वत्र मूलं मिताक्षरायां ज्ञेयम् । अत्र मासत्रये त्रिरात्रं स्यादित्यनुवादः । रजस्वलात्वेनेव तत्सिद्धेः । यद्यप्यनेन चतुर्थमासेऽपि त्रिरात्रं प्राप्नोति तथापि—'षण्मासाभ्यन्तरं यावद् गर्भस्रावो भवेद्यदि । तदा मासस्समैस्तासां दिवसैः शुद्धिरिष्यते ॥ इत्यादिपुराणात् । 'रात्रिभिर्मासतुल्याभिर्गर्भस्रावो विशुध्यति ।' इति मनूक्तेः । 'गर्भस्रावे यथामासमचिरे तूत्तमे त्रयः ।' इति मरीच्युक्तेश्चतूरात्रं ज्ञेयम् । अचिरे त्रिमासमध्ये । उत्तमे ब्राह्मणे । अत्र सपिण्डानां स्नानम् । 'सद्यःशौचं सपिण्डानां गर्भस्य पतने सति ।' इति तत्रैवोक्तेः । एतदाचतुर्थमासात्पाते त्रिदिनस्योक्तेः । अकारणायाः शुद्धेरसंभवात्सद्यःपदं स्नानपरम् । एवमग्रेऽपि 'गर्भस्रावे स्नानमात्रं पुरुषस्य' इति वृद्धवसिष्ठोक्तेः । पुरुषस्येति सपिण्डोपलक्षणं पूर्वोक्तवचनात् । आचतुर्थमासं सपिण्डानां न स्नानं, किन्तु पुंस एव । पाते त्रिदिनं निर्गुणपरम् । गुणवतस्तु—'अजातदन्ते तनये शिशौ गर्भच्युते तथा । सपिण्डानां तु सर्वेषामेकरात्रमशौचकम् ॥' इति यमोक्तेरेकाहमिति मदनपारिजातः ।

सप्तममासादि दशाहम् । एतत्सर्ववर्णविषयम् । तुल्यं वयसि सर्वेषामतिक्रान्ते तथैव च ।' इति व्याघ्रोक्तेः । पराशरः—'जाते विप्रो दशाहेन द्वादशाहेन भूमिपः । वैश्यः पञ्चदशाहेन शूद्रो मासेन शुद्ध्यति ॥' संवर्तः—'जाते पुत्रे पितुः स्नानं सचैलं तु विधीयते । माता शुद्ध्येद्दशाहेन स्नानात्तु स्पर्शनं पितुः ॥' पुत्रपदात्कन्योत्पत्तौ न पितुः स्नानमिति हारलतायाम् । तन्न । पुत्रपदस्य 'पौत्री मातामहस्तेन इति कन्यायामपि प्रयोगात् । यच्च तत्रैवोक्तम्— 'सूतके तु मुखं दृष्ट्वा जातस्य जनकस्ततः । कृत्वा सचैलं स्नानं तु शुद्धो भवति तत्क्षणात् ॥' इत्यादिपुराणान्मुखदर्शनोत्तरमेव पितुः स्नानमिति । तच्च । विदेशे मुखदर्शनाव्यस्पृश्यतापत्तेः मुखदर्शनोत्तरं पुनःस्नानार्थमिदमिति स्मार्तगौडाः । तन्न । मूलैक्येन ज्ञानमात्रपरत्वात् । इदं सर्ववर्णसमम् । 'सूतिका सर्ववर्णेषु दशरात्रेण शुद्ध्यति । ऋतौ च न पृथक् शौचं सर्ववर्णेष्वयं विधिः ॥' इति हारलतायां प्रचेतसोक्तेः । यत्तु ब्राह्मे—'ब्राह्मणी क्षत्रिया वैश्या प्रसूता दशभिर्दिनैः । गतैः शूद्रा च संस्पृश्यात्रयोदशभिरेव च '॥ इति । प्रयोगपारिजाते पारस्करः—'द्विजातेः सूतिका या स्यात्सा दशाहेन शुध्यति । त्रयोदशेऽह्नि संप्राप्ते शूद्रा शुध्यत्यसंशयम् ॥' इति, तदस्पृश्यत्वपरम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अङ्गिराः—'सूतके सूतिकावर्जं संस्पर्शो न निषिध्यते। संस्पर्शे सूतिकायास्तु स्नानमेव विधीयते॥ नाशौचं सूतके पुंसः संसर्गं चेन्न गच्छति। रजस्तत्राशुचि ज्ञेयं तच्च पुंसि न विद्यते॥' संसर्गौ मैथुनम्। स्पर्श इत्यन्ये। मातुरेव सूतकम्, तां स्पृशतश्चेति हारलतायां सुमन्तूक्तेरिति। तन्न। 'संस्पर्शे सूतिकायास्तु स्नानमेव विधीयते।' इति स्नानमात्रोक्तेः सौमन्तवचनस्य स्नानपर्यन्तमस्पृश्यत्वमात्रबोधकत्वात्। एवकारो बालस्पृश्यत्वार्थः। माधवस्तु–'यस्तैः सह सपिण्डोऽपि प्रकुर्याच्छयनासनम्। बान्धवो वा परो वापि स दशाहेन शुध्यति॥' इति बृहस्पतिस्मृतेः। शयनासनादिरूपं संसर्गमाह पराशरः—'यदि पत्न्यां प्रसूतायां द्विजः संपर्कमृच्छति। सूतकं तु भवेत्तस्य यदि विप्रः षडङ्गवित्॥' पितृवत्सापत्नमातुः 'प्राक्स्नानादस्पृश्यत्वम्। सूतिकास्पर्शे तु यावदाशौचम्। 'अन्यास्तु मातरस्तद्वत्तद्गृहं न व्रजन्ति च।' इति ब्राह्मोक्तेरिति शुद्धितत्त्वादयः। तन्न 'तद्गेहं गत्वा सूतिकां यदि न स्पृशति तदा स्पृश्याः अन्यथा न' इति तस्यार्थः।

कर्मानधिकारमाह पैठीनसिः—'सूतिकां पुत्रवतीं विंशतिरात्रेण कर्माणि कारयेन्मासेन स्त्रीजननीम्'। इदमाशौचोत्तरम्। अन्यथा शुद्ध्याः सपिण्डानामाशौचे तदभावः स्याद्विध्यनुवादविरोधश्च। एतच्च सोमयागादिश्रौतभिन्नपरम्। 'प्रजातायाश्च दशरात्रादूर्ध्वं स्नानादि' इति कात्यायनोक्तेः। व्यासः—'प्रथमे दिवसे षष्ठे दशमे चैव सर्वदा। त्रिष्वेतेषु न कुर्वीत सूतकं पुत्रजन्मनि॥' पुत्रशब्दोऽपत्यमात्रपरः। ब्राह्मे—'देवाश्च पितरश्चैव पुत्रे जाते द्विजन्मनाम्। आयान्ति तस्मात्तदहः पुण्यं षष्ठं च सर्वदा॥' जनने विशेषः प्रागुक्तः।

अत्र प्रयोगपारिजातः-पुंप्रसवे दशाहः स्त्र्यपत्ये तु त्र्यहः, 'पुंजन्मनि सपिण्डानां दशाहाच्छुद्धिरिष्यते। त्र्यहादेकोदकानां च एकाहं सूतकं क्वचित्॥ स्त्रीजनन्मनि सपिण्डानां सोदकानां त्र्यहाच्छुचिः। स्त्रीषु त्रिपुरुषं ज्ञेयं सपिण्डत्वं द्विजोत्तमाः॥' इत्यग्निस्मृतेरित्याह। मेधातिथिरपि—'अप्रत्तानां तु स्त्रीणां त्रिपुरुषी विज्ञायते' इति वासिष्ठमुक्त्वा 'आचौचे एवैतत्, विवाहे तु अवधिर्दर्शित एव इत्याह। अन्ये तु त्रिपुरुषसापिण्ड्यस्य कानीनकन्यापरत्वमाहुः। 'अप्रत्तानां तथा स्त्रीणां सापिण्ड्यं साप्तपौरुषम्। प्रत्तानां भर्तृसापिण्ड्यं प्राह देवः प्रजापतिः॥' इति कौर्मविरोधाच्च। अत्रेदं तत्त्वम्—'पञ्चमात्सप्तमाद्धीमान्यः कन्यामुद्वहेद् द्विजः। गुरुतल्पी स विज्ञेयः' इत्यादिविरोधात्त्रिपुरुषं प्रकरणा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

न्मरणाशौचपरम्। वासिष्ठे तदग्रे उदकदानोक्तेः। तेन कन्याप्रसवेऽपि साप्तपौरुषं दशरात्रमेव। नच कन्यापुत्रकृतं प्रसवे बलाबलं क्वाप्युक्तम्। अग्निस्मृतिस्त्वनुकल्पो विगीता वेति सर्वसिद्धान्तः। अन्यथा त्रिपुरुष-सपिण्डानामष्टमादिसोदकानां च त्र्यहसाम्यायोगात्। चतुर्थादिसप्त-मान्तानां च किमपि न स्यात्। तेन कन्याप्रसवे दशाह एव। किञ्च स्त्रीजन्मोद्देशेन त्रिपुरुषं सापिण्ड्यं तेषां च त्रिरात्रमित्यनेकार्थविधिः कथं स्यात्। वाक्यभेदापत्तेः। नच चतुर्थादीनां सोदकत्वं क्वापि सिद्धम्। तेन त्रिपुरुषं चतुर्थादीनां च स्त्रीजन्मनि सोदकत्वं विधाय पुनस्तेषां त्रिरात्राशौचविधौ विध्यनुवादविरोधो वाक्यभेदद्वयं चेत्यसंवादार्थाग्नि-स्मृतिर्हेया।

अथ मृताशौचम्। हारीतः—'जातमृते मृतजाते वा सपिण्डानां दशाहम्' इति स्वाशौचपरम्। जातमृते नालच्छेदोर्ध्वम्, 'यावन्न छिद्यते नालं तावन्नाप्नोति सूतकम्। छिन्ने नाले ततः पश्चात्सूतकं तु विधी-यते ॥' इति जैमिन्युक्तेः 'नाड्यां छिन्नायामाशौचम्' इति हारीतोक्तेश्च एतन्मृताशौचपरमेव। जननाशौचं तु नालच्छेदोत्कर्षेऽपि जननाद्येव। मृतजाते नालच्छेदाभावात् षष्ठीपूजाद्युत्कर्षापत्तेश्च। तेन नाडीच्छेदात्प्रा-ङ्मातुः स्पर्शे न दोष इति शुद्धितत्त्वोक्तिः परास्ता। नाभिच्छेदनात्प्राङ्-मृतौ तु बृहन्मनुः—जीवन्जातो यदि ततो मृतः सूतक एव तु। सूतकं सकलं मातुः पित्रादीनां त्रिरात्रकम् ॥' इदं च प्रसवाशौचमेव, शाव-निमित्तं स्नानमात्रम्। 'प्राङ्नामकरणात्सद्यः शौचम्' इति शङ्खोक्तेः।

अत्र कश्चिदाह—'नामकरणमाशौचान्तकालोपलक्षणम्'। 'आशौच-व्यपगमे नामधेयम्' इति विष्णूक्तेः, 'आशौचे च व्यतिक्रान्ते नामकर्म विधीयते।' इति मनूक्तेश्च नाम्नो नियतकालत्वात्। नच—'नामधेयं दशम्यां तु द्वादश्यां वापि कारयेत्। पुण्ये तिथौ मुहूर्ते वा नक्षत्रे वा गुणान्विते ॥' इति। मनूक्तेरनियतकालत्वम्। दशम्यामतीतायां विप्रः द्वादश्यामतीतायां क्षत्रियः। वैश्यः षोडशे। शूद्र एकत्रिंशे। इत्यपि ज्ञेयम्। पुण्य इत्याद्यनुकल्पः। तेन नाम्नः कालोपलक्षणम्। एवं दन्त-जननेऽपि 'दन्तजन्म सप्तमे मासि' इत्युपनिषदि नियतकालत्वात्। चौले तु न कालोपलक्षणम् 'प्रथमेऽब्दे तृतीये वा कर्तव्यं श्रुतिचोदनात्।' इति मनूक्तेः, ततः संवत्सरे पूर्णे चूडाकर्म विधीयते। द्वितीये वा तृतीये वा कर्तव्यं स्मृतिदर्शनात् ॥' इति यमोक्तेश्च तस्या नियतकालत्वादिति। तन्मन्दम्। 'चौलवन्नामदन्तजननयोरपि स्वरूपेण निमित्तत्वोपपत्ते-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्तद्विशिष्टकालानुवादे वाक्यभेदात् सप्तममासादर्वाग्दन्तजनने तदभाव-प्रसङ्गाच्च। यस्तूपनिषद्दर्शनेन निर्णयं कुर्यात्स नूनं 'शतायुः पुरुषः' इति श्रुतेरर्वाक्पितृमरणे तदन्त्यकर्मापि त्यजेत्। ननु कालानुपलक्षणे नामोत्कर्षे तदभावे वा स्नानमात्राच्छुद्धिः स्यात्। ततः किम्। अस्तु। अत एवोक्तम्—'आदन्तजन्मनः सद्यः' इति। सा च विष्णुवचनाद्दाहाभावविषयेति वक्ष्यामः। त्रिवर्षादावपि स्यादिति चेत्। न। दाहदन्तादिनिमित्तैर्विशेषाशौचैः पूर्वस्य बाधात्। तदुक्तम्—'पूर्वाबाधेन नोत्पत्तिरुत्तरस्य हि सिध्यति।' इति। 'जननाद्दशरात्रे व्युष्टे शतरात्रे संवत्सरे च इति परिशिष्टे 'द्वादश्यामपरे रात्र्यां मासे पूर्णे तथापरे। अष्टादशेऽहनि तथा वदन्त्यन्ये मनीषिणः॥' इति भविष्ये च नाम्नः कालानियमाच्च। नच प्राथम्याद्दशरात्रेऽतीते इति मुख्यः कालः अन्यस्त्वनुकल्प इति वाच्यम्। चौलेऽपि तथापत्तेः। नच दन्तजननकालानुपलक्षणे सदन्तजातमृतस्य दाहैकाहप्रसङ्गः। दशाहेन बाधात्। नामकरणोत्तरमेव दाहप्रवृत्तेः। 'दशाहाभ्यन्तरे बाले प्रमीते तस्य बान्धवैः। शावाशौचं न कर्तव्यं सूत्याशौचं विधीयते॥' इति बृहन्मनूक्तेश्च। आशौचं दाहोपलक्षणम्। सूतकवदिति पारस्करोक्तेः। यत्तु विष्णुः—'अनिवृत्ते दशाहे तु पञ्चत्वं यदि गच्छति। सद्य एव विशुद्धिः स्यान्न प्रेतं नोदकक्रिया॥' इति, तदपि प्रेताशौचनिषेधार्थं नतु सद्यस्त्वपरम्। वाक्यभेदात्। किञ्च—नामकालात्प्राङ्मृतस्य स्नानम्, तदुत्तरं त्वेकाहादि। नामकाले त्वेकादशाहे मृतस्य न किमपि स्यात्। अथ शङ्खवचने ल्यब्लोपे पञ्चमी, तदा प्रागिति नोपपद्येत। 'नाम्नि वापि कृते सति' इतिमन्वादिविरोधात्। कृतनाम्न इति माधवमिताक्षरादिविरोधाच्च न कालोपलक्षणं क्वापीति दिक्।

नामोत्तरं दन्तोत्पत्तेः प्राग्दाहे त्र्यहः। 'अदन्तजाते तनये शिशौ गर्भच्युते तथा। सपिण्डानां तु सर्वेषामहोरात्रमशौचकम्॥ इति यमोक्तेः। दाहाभावे तु स्नानमात्रम्। 'अदन्तजाते प्रेते सद्य एव नास्याग्निसंस्कारः' इति विष्णुना दाहाभावे तदुक्तेः। 'आ दन्तजन्मनः सद्य' इति याज्ञवल्कीयाच्च। दाहविकल्पं चाह लौगाक्षिः—'तूष्णीमेवोदकं कुर्यात्तूष्णीं संस्कारमेव च। सर्वेषां कृतचूडानामन्यत्रापीच्छया द्वयम्॥' अन्यत्राकृतचूडे। अत्र चूडाकरणं तृतीयवर्षरूपकालोपलक्षणार्थमिति मेधातिथिहरदत्तौ। मनुरपि—'नात्रिवर्षस्य कर्तव्या बान्धवैरुदकक्रिया। जातदन्तस्य वा कुर्युर्नाम्नि वापि कृते सति॥' इति। उदकं दाहोपलक्षणम्। दन्तोत्पत्त्य-

दन्तोत्पत्त्यनन्तरमाशौचनिर्णयः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नन्तरं प्राक्त्रिवर्षान्तान्मृतेऽहः। दन्तजातेऽप्यकृतचूडे त्वहोरात्रेण शुद्धिः' इति विष्णूक्तेः। त्रिवर्षोर्ध्वं कृतचूडेऽकृतचूडे वा प्रागुपनयनात्त्र्यहः। 'यद्यथकृतचूडो वै जातदन्तस्तु संस्थितः। तथापि दाहयित्वैनमाशौचं त्र्यहमाचरेत्।।' इत्यङ्गिरसोक्तेः (अकृतायामपि चूडायां त्रिवर्षोर्ध्वं दाहादि नियतम्। नात्रिवर्षस्येति वचनात्। कृतायां वर्षत्रयात्प्रापितं तूष्णीमेव)। अत्र जातदन्तत्वमुद्देश्यविशेषणत्वादविवक्षितं। दाहयित्वेत्यनुवादः। उभयविधौ वाक्यभेदात्। त्रिवर्षात्प्राक् चूडाभावेऽग्निदाने त्र्यहस्तदभावे विष्णूक्तेरेकाह इति माधवः। यत्तु कश्चिदाह—अत्र त्रिवर्षविषयादस्मादेवार्थात् त्रिवर्षोर्ध्वमपि तत्सिद्धिः। विज्ञानेश्वरोक्तं च त्रिवर्षोर्ध्वमकृतचूडाविषयत्वं चिन्त्यम्। जातदन्तपदवैयर्थ्यादिति तत्तुच्छम्। दाहस्याविधेयत्वात्। 'नृणामकृतचूडानामशुद्धिर्नैशिकी स्मृता।' इति मनूक्तेः त्रिवर्षोर्ध्वमेकाहापत्तेरर्थात् त्र्यहासिद्धेः। त्वयाप्यग्रे तथाङ्गीकारात्पदवैयर्थ्यस्य साम्याद्वाक्यार्थाज्ञानाच्चेत्यलं मिताक्षरार्थानभिज्ञदूषणेन। प्रथमवर्षादौ कृतचूडस्य सद्यः त्र्यहः। 'निवृत्तचूडकानां तु त्रिरात्राच्छुद्धिरिष्यते' इति मनूक्तेः। एतत्सर्वं प्रागुक्तं सपिण्डानाम्।

मातापित्रोस्तु दशाहोर्ध्वं मृते सर्वत्र त्रिरात्रम्। 'बालानामजातदन्तानां त्रिरात्रेण शुद्धिः' इति कश्यपोक्तेः। 'बैजिकादभिसम्बन्धादनुरुन्ध्यादघं त्र्यहम्।' इति मनूक्तेश्च। शुद्धितत्त्वादयो गौडास्तु—'अजातदन्तमरणे पित्रोरेकाहमिष्यते। दन्तजाते त्रिरात्रं स्याद्यदि स्यातां तु निर्गुणौ।।' इति कौर्मात्काश्यपं शूद्रपरम्। 'अनूढानां तु कन्यानां तथा वै शूद्रजन्मनाम्।' इति त्र्यहानुवृत्तौ शङ्खोक्तेः। 'त्रिरात्रं तु भवेच्छूद्रे षण्मासेऽपि शिशौ मृते।' इति मात्स्यसूक्ताच्च। दन्तजाते शूद्रे तु पञ्चाहः। यथाहाङ्गिराः-'शूद्रे त्रिवर्षान्न्यूने तु मृते शुद्धिस्तु पञ्चभिः। अत ऊर्ध्वं मृते शूद्रे द्वादशाहो विधीयते।। षड्वर्षान्तमतीतो यः शूद्रः संम्रियते यदि। मासिकं तु भवेच्छौचमित्याङ्गिरसभाषितम्।।' इति। यत्तु 'अनूढभार्यः शूद्रस्तु' इति शङ्खोक्तं मासाशौचं, तत्सगुणशूद्रपरम्। निर्गुणे त्वनूढभार्ये शूद्रे त्रिवर्षोर्ध्वं द्वादशाहः। षडब्दोर्ध्वं मासः। षडब्दात्प्रागपि कृतोद्वाहे मास इत्याहुः। एतत् 'तुल्यं वयसि सर्वेषाम्' इति विरोधाच्छिष्टविगानान्नादर्तव्यमिति विज्ञानेश्वरादयः। दाक्षिणात्यानां तथैव। अन्यदेशे प्रागुक्तमिति गौडाः। एवं कन्यास्वपि। तास्वप्यजातदन्तासु पित्रोरेकरात्रमिति माधवः। यत्तु विज्ञानेश्वरेणोक्तम्—'ऊनद्विवर्ष उभयोः सूतकं मातुरेव हि।' इति याज्ञवल्क्योक्तेः गर्भस्थे प्रेते मातुर्दशाहं, जाते

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

उभयोः कृते नाम्नि सोदराणां चेति पैङ्गयोक्तेश्च पित्रोः सोदराणां च दशाहमस्पृश्यत्वमिति तन्नेदानीं प्रचरति। अत एव स्मृत्यर्थसारे तन्नादृतम्। कन्यासु चौलात्प्राङ्मृतौ स्नानम्। 'अचूडायां तु कन्यायां सद्यः शौचं विधीयते।' इत्यापस्तम्बोक्तेः। इदं त्रिपुरुषमध्ये। 'अप्रत्तानां तु स्त्रीणां त्रिपुरुषी विज्ञायते इति वसिष्ठोक्तेः। इदं वाग्दानोत्तरमिति गौडाः। तन्न 'अप्रत्तानां तथा स्त्रीणां सापिण्ड्यं साप्तपौरुषम्।' इति वचनात्।

चौलोत्तरं वाग्दानात्पूर्वं तास्वेकाहः। 'अविशेषेण वर्णानामर्वाक्संस्कारकर्मणः। त्रिरात्रात्तु भवेच्छुद्धिः कन्यास्वह्ना विधीयते॥ इत्यङ्गिरसा त्रिरात्रविषयेऽहोविधानात्। अतः शूद्रस्योपनयनस्थानीयविवाहात्पूर्वं त्रिरात्रम्। विवाहोत्कर्षे तु षोडशाब्दमध्ये त्रिरात्रमेवेत्यपरार्काद्याः। शूद्रे तु निर्गुणे त्र्यब्दोर्ध्वं पञ्चाहः, षडब्दोर्ध्वं विवाहाभावे द्वादशाहमिति गौडाः। सगुणानां षोडशाब्दोर्ध्वं तु विवाहाभावेऽपि पूर्णाशौचं वक्ष्यते। तदुत्तरं प्राग्विवाहाद्भर्तृकुले पितृकुले च सप्तपुरुषावधि त्रिरात्रम्। 'अवारिपूर्वं प्रत्ता तु या नैव प्रतिपादिता। असंस्कृता तु सा ज्ञेया त्रिरात्रमुभयोः स्मृतम्॥' इति मरीच्युक्ते। रत्नाकरे शुद्धितत्त्वे च शङ्खः—'पितृवेश्मनि या नारी रजः पश्यत्यसंस्कृता। तस्यां मृतायां नाशौचं कदाचिदपि शाम्यति॥' यावज्जीवमाशौचमिति वाचस्पतिमिश्राः।

अथानुपनीते किञ्चिदुच्यते। नाम्नः पूर्वं खननमेव। तदूर्ध्वं वर्षत्रयात्पूर्वं चौलाभावेऽग्न्युदकदानविकल्पः। 'नात्रिवर्षस्य कर्तव्या बान्धवैरुदकक्रिया। जातदन्तस्य वा कुर्युर्नाम्नि वापि कृते सति॥' इपि मनूक्तेः। उदकक्रियासाहचर्याद्दाहोपलक्षणम्। खनने तु नान्यदौर्ध्वदेहिकम्। 'ऊनद्विवर्षं निखनेन्न कुर्यादुदकं ततः। इति याज्ञवल्क्योक्तेः। उदकमन्त्यकर्मपरमित्यपरार्कः। यमः—'ऊनद्विवार्षिकं प्रेतं घृताक्तं निखनेद्भुवि। यमगाथां गायमानो यमसूक्तमनुस्मरन्॥ माधवीये ब्राह्मेऽपि—'स्त्रीणां तु पतितो गर्भः सद्यो जातो मृतोऽथ वा। अजातदन्तो मासैर्वा मृतः षड्भिर्गतैर्बहिः। वस्त्राद्यैर्भूषितं कृत्वा निक्षिपेत्तु काष्ठवत्। खनित्वा शनकैर्भूमौ सद्यः शौचं विधीयते॥' अलङ्करणमपि वक्ष्यते। कृतचूडस्तु तु त्रिवर्षात्प्रागूर्ध्वं वाग्न्युदकदानं नियतम्। यत्तु वसिष्ठः—'ऊनद्विवर्षे प्रेते गर्भपतने वा सपिण्डानां त्रिरात्रम्' इति तत्प्रथमाब्दचूडापरम्। वर्षत्रयादूर्ध्वमकृतचूडस्यापि नियतम्। वर्षत्रयोर्ध्वमुपनयनात्पूर्वं च तूष्णीमग्न्युदकदकदानम्। 'तूष्णीमेवोदकं कुर्यात्तूष्णीं संस्कारमेव च।' इति पूर्वोक्तलौगाक्षिस्मृतेः पिण्डदानमपि कार्यम्। 'असंस्कृ-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तानां भूमौ पिण्डं दद्यात्संस्कृतानां कुशेषु' इति प्रचेतसोक्तेः। उदकग्रहणमौर्ध्वदेहिकपरमिति हरदत्तः। 'द्वादशाद्वत्सरादर्वाक् पौगण्डमरणे सति। सपिण्डीकरणं न स्यादेकोद्दिष्टानि कारयेत् ॥' इति हरदत्तधृतदेवलोक्तेश्च। मरीचिरपि—'प्रेतपिंडं बहिर्दद्याद्दर्भमन्त्रविवर्जितम्।' इति। एतदनुपनीतपरमिति विज्ञानेश्वरः। अत्र चूडैव पूर्वावधिः। पूर्ववाक्येषु तद्ग्रहणात्। उदकग्रहणस्योपलक्षणत्वादाहः पूर्वावधिरिति केचित्। द्वादशाद्वत्सरादित्यनुपनीतद्विजानूढशूद्रविषयम्। त्र्यहाशौचे पिण्डदानविधिमाह पारस्करः—'प्रथमे दिवसे देयास्त्रयः पिण्डाः समाहितैः। द्वितीये चतुरो दद्यादस्थिसञ्चयनं तथा॥ त्रींस्तु दद्यात्तृतीयेऽह्नि वस्त्रादि क्षालयेत्ततः॥' इति।

अत्र देवयाज्ञिकनिबन्धे विशेषः—'शिशुरादन्तजननाद्बालः स्याद्यावदाशिखः। कथ्यते सर्वशास्त्रेषु कुमारो मौञ्जिबन्धनात्॥ आपञ्चवर्षात्कौमारं पौगण्डो नवहायनः॥' तथा—'गर्भे नष्टे क्रिया नास्ति दुग्धं देयं शिशौ मृते। परं च पायसं क्षीरं दद्याद्बालविपत्तितः॥ एकादशं द्वादशाहं वृषोत्सर्गविधिं विना॥' तथा—'यत्र प्रमीयते बालस्तत्र प्रायः प्रदीयते। किञ्चित्समानवयसां संस्कृत्यान्नं यथाविधि॥ भक्ष्यं भोज्यं च दातव्यं तथा च सुखभक्षिका। तद्वस्त्राणि प्रदेयानि सोपानत्कानि तत्समे॥ कुमाराणां च बालानां भोजनं वस्त्रवेष्टनम्। यच्चोपजीवते बालस्तत्तद्विप्राय दीयते॥' तथा—'भूमिनिक्षेपणं बाले आवर्षद्वयमाशिखम्। ततः परं खगश्रेष्ठ देहदाहो यथाविधि॥' अचूडेप्यूर्ध्वं खनननिवृत्त्यर्थमावर्षद्वयमिति। प्रागपि कृतचूडस्य तन्निवृत्त्यर्थमाशिखमिति। तथा—'चूडाकर्मणि सञ्जाते विपत्तिस्तु यदा भवेत्। सूतकाते प्रकर्तव्यं वृषस्योत्सर्जनं तथा॥ तत्र दाहः कर्तव्य उदकं तत्र निश्चितम्। श्राद्धानि षोडशापि स्युः सपिण्डीकरणं विना॥' इदं पञ्चवर्षोत्तरम्। 'जन्मतः पञ्चवर्षाणि भुङ्क्ते दत्तमसंस्कृतम्। पञ्चवर्षाधिके बाले विपत्तिर्यदि जायते॥ वृषोत्सर्गादिकं कर्म कर्तव्यमुदकं ततः। अहन्यहनि संप्राप्ते कुर्यात् श्राद्धानि षोडश॥ पायसेन गुडेनैव पिण्डं दद्याद्यथाक्रमम्। उदकुम्भप्रदानं च पददानानि यानि च॥ दीपदानानि यत्किञ्चित्पञ्चवर्षाधिके सदा। कर्तव्यं खगश्रेष्ठ व्रतार्वाक् प्रेततृप्तये॥ स्वाहाकारेणैव कार्याण्येकोद्दिष्टानि षोडश। ऋजुदर्भैस्तिलैः शुक्लैः प्राचीनावीतिना तथा॥' इति तत्रैवोक्तेः। अत्र मूलं चिन्त्यम्। वार्षिकादि तु न भवत्येव। सपिण्डनाभावे पितृत्वायोगादर्चनाभावाच्च।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दिवोदासीये—'अव्रते निधनं प्राप्ते विप्रादौ शूद्रजातिवत्। क्रियाः सर्वाः समुद्दिष्टाः सपिण्डीकरणं विना ॥ उदकं पिण्डदानं च कृतचूडे विधीयते ॥' इति। स्त्रीणां तूद्वाहात्प्रागुदकपिण्डदानविकल्पः। 'स्त्रीणां चैके प्रत्तानाम्' इति गौतमोक्तेः। स्त्रीशूद्राश्च सधर्माणः' इति वचनात् शूद्रेष्वेवम्। एतद्द्वयोनिमित्तमाशौचं सर्ववर्णसमम्। 'तुल्यं वयसि सर्वेषामतिक्रान्ते तदैव च।' इति व्याघ्रपादोक्तेः। यानि तु—'निवृत्तचूडकेविप्रे त्रिरात्राच्छुद्धिरिष्यते।' इति। 'निवृत्ते क्षत्रिये षड्भिर्वैश्ये नवभिरुच्यते। शूद्रे त्रिवर्षन्यूने तु मृते शुद्धिस्तु पञ्चभिः। अत ऊर्ध्वं मृते शूद्रे द्वादशाहो विधीयते। षड्वर्षान्तमतीते तु शूद्रे मासमशौचकम् ॥' इत्यङ्गिरसादीनि, तानि शिष्टविगानान्नादर्तव्यानीति विज्ञानेश्वरमदनपारिजातादयः। तेनैतद्वशाच्छूद्राणां व्यवस्था प्रागुक्ता हेयैव। 'तुल्ये वयसि सर्वेषाम्' इति दाक्षिणात्यपरम्। अन्यदेशे कौर्मोक्ता व्यवस्थेति शुद्धितत्त्वे ॥'

अथ जात्याशौचम्। तच्च द्विजपुंसामुपनयनोर्ध्वं प्रवर्तते। 'त्रिरात्रमाव्रतादेशाद्दशरात्रमतः परम्। क्षत्रस्य द्वादशाहानि विशः पञ्चदशैव तु॥ त्रिंशद्दिनानि शूद्रस्य तदर्धं न्यायवर्तिनः॥ इति याज्ञवल्क्योक्तेः। यत्तु स एव—'त्रिरात्रं दशरात्रं वा शावमाशौचमिष्यते।' इत्याह तत्र दशाहे त्रिरात्रमस्पृश्यत्वम्। एकदिनोत्पन्ने आशौचद्वये दशाहमस्पृश्यत्वम्। 'मरणं यदि तुल्यं स्यान्मरणेन कथञ्चन। अस्पृश्यं तु भवेद्गोत्रं सर्वमेव सबान्धवम् ॥' इत्यङ्गिरसोक्तेः। दशाहाशौचपरत्वे 'दशरात्रमत परम्' इत्यनेन पौनरुक्त्यापत्तेरिति शुद्धिविवेकादयः। स्मृतिभेदात् त्रिरात्रं दशरात्रं वेति विकल्पायोगाच्च। यस्तु पुत्राणां वेदानध्याप्य वृत्तिं विदधाति तत्राहाश्वलायनः—'द्वादशरात्रं महागुरुषु दानाध्ययने वर्जयेरन्' इति। अत्र यावदुक्तनिषेधो वास्पृश्यत्वमात्रं वा नतु कर्मानधिकारः। एकादशाहान्तवैश्वदेवोक्तेः। एकादशाहिके मुक्त्वा तत्र ह्यन्ते विधीयते।' इति शुद्धितत्त्वे तु 'त्रयः पुरुषस्यातिगुरवो भवन्ति माता पिताचार्यश्च, इति विष्णूक्तेः पित्रादयो महागुरवः। भर्ताप्युक्तो रामायणे—'पतिर्बन्धुर्गतिर्भर्ता दैवतं गुरुरेव च।' शातातपः—'पतिरेको गुरुः स्त्रीणां सर्वस्याभ्यागतो गुरुः।' एकपदमूढानां पितृमातृनिषेधाथम्। सोदकानां त्रिरात्रम्। 'त्र्यहात्तूदकदायिनः' इति मनूक्तेः। अग्निपुराणे—'सपिण्डता तु पुरुषे सप्तमे विनिवर्तते। समानोदकभावस्तु निवर्तेत चतुर्दशे ॥ जन्मनामस्मृतेवैके तत्परं गोत्रमुच्यते ॥' बृहस्पतिः—दशाहेन

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

सपिण्डास्तु शुद्धयन्ति प्रेतसूतके। त्रिरात्रेण सकुल्यास्तु स्नात्वा शुद्धयन्ति गोत्रजाः ॥

स्त्रीशूद्रयोस्तु विवाहोर्ध्वं नात्याशौचम्। 'वैवाहिको विधिः स्त्रीणामौपनायनिकः स्मृतः।' इत्युक्तेः 'दत्तानां भर्तुरेव हि। स्वजात्युक्तमशौचं स्यान्मृतके जातके तथा।' इति माधवीये ब्रह्माच्च। शूद्रस्य विवाहाभावेऽपि षोडशवर्षोर्ध्वं मासः। अनूढभार्यः शूद्रस्तु षोडशाद्वत्सरात्परम्। मृत्युं समधिगच्छेच्चेन्मासात्तस्यापि बान्धवाः॥ शुद्धिं समधिगच्छन्ति नात्र कार्या विचारणा॥' इत्यपरार्के शङ्खोक्तेः। निर्णयामृतमदनपारिजातादौ त्वन्यथोक्तम्। हारीतः—'आ मौञ्जीबन्धनाद्विप्रः क्षत्रियश्चा धनुर्ग्रहात्। आप्रतोदग्रहाद्वैश्यः शूद्रो वस्त्रद्वयग्रहात्॥' धनुः प्रतोदावष्टमेऽब्दे द्वादशे वस्त्रद्वयमिति। मेधातिथिस्तु—'त्रिरात्रमा व्रतादेशात्' इत्यत्र व्रतं कालोपलक्षणार्थम्। स च कालः स्वकीयः सर्वेषां चाष्टमवर्षरूपः तेन चतुर्णामपि वर्णानामुपनयनाभावेप्यष्टमादूर्ध्वं पूर्णमेवाशौचम्। तथापि 'प्रागष्टमाच्छिशवः प्रोक्ताः' इति स्मृत्यन्तरादूर्ध्वं संपूर्णमर्वाक् त्रिरात्रम्। येऽपि 'आषोडशाद्भवेद्बालः' इत्याहुस्तेषामप्यष्टमादूर्ध्वं शूद्रे मास एव 'ऊर्ध्वमष्टभ्यो वर्षेभ्यः शुद्धिः शूद्रस्य मासिकी।' इति वचनादित्याह। हारलताशुद्धितत्त्वादिगौडग्रन्थेष्वप्युक्तम्। अनुपनीतो विप्र इत्युक्त्वा-'म्रियते यत्र तत्र स्यादाशौचं त्र्यहमेव हि। द्विजन्मनामयं कालस्त्रयाणां तु षडादिकः॥' इत्यादिपुराणोक्तेरुपनयनकालोपलक्षणम्। षडब्दपदं मासत्रयाधिकपरम्॥ 'गर्भाष्टमेऽष्टमे वाब्दे' इत्युक्तेः यत्तु जाबालः—व्रतचूडाद्विजानां च प्रतीतिषु यथाक्रमम्। दशाहत्र्यहएकाहैः शुद्धयन्त्यपि हि निर्गुणाः॥' इति। द्विजा दन्ताः। इदं प्रतीतिष्वित्युक्तेः पञ्चाब्दोपनीतपरमिति। तदेतन्नाद्रियन्ते वृद्धाः।

यानि तु पराशरः—'एकाहाद्ब्राह्मणः शुध्येद्योऽग्निवेदसमन्वितः। त्र्यहात्केवलवेदस्तु द्विहीनो दशभिर्दिनैः॥' केवलवेदः केवलश्रौताग्नेरप्युपलक्षणम्। अयं सङ्कोचो होमाध्ययनपर एव न तु संध्यादाविति हारलतायाम्। अङ्गिराः—'सर्वेषामेव वर्णानां सूतके मृतके तथा। दशाहाच्छुद्धिरेतेषामिति शातातपोऽब्रवीत्॥' देवलः—'आशुच्यं दशरात्रं तु सर्वेषामपरे विदुः। निधने प्रसवे चैव पश्यन्तः कर्मणः क्षयम्॥' अत्यन्तोत्कृष्टस्य कर्महानौ पीडावतो विप्रपरिचर्यापरशूद्रस्य दशरात्रमिति हारलतायाम्। दक्षः—'सद्यःशौचं तथैकाहस्त्र्यहश्चतुरहस्तथा।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

षड्दशद्वादशाहश्च पक्षो मासस्तथैव च ॥ मरणान्तं तथा चान्यद्दशपक्षास्तु सूतके ॥' मिताक्षरायां स्मृत्यन्तरे-'चतुर्थे दशरात्रं स्यात्षण्णिशाः पुंसि पञ्चमे। षष्ठे चतुरहाच्छुद्धिः सप्तमे तु दिनत्रयम्। अष्टमे दिनमेकं स्यान्नवमे यामकद्वयम्। दशमे स्नानमात्रेण चैतद् गौणं तु सूतकम् ॥' इत्यादीनि तान्यापदनापद्गुणवदगुणवद्विषयाणि देशान्तरभेदाद्वा ज्ञेयानि। सद्यः शौचादिषडहान्ताः पक्षा यायावरादिपराः। अत्र मरणान्तं जननादिनिमित्ताद्भिन्नम्। ('अस्वर्ग्यं लोकविद्विष्टं धर्म्यमप्याचरेन्न तु।' इत्युक्तत्वान्मधुपर्कपशवालम्भवत्) शिष्टविगानान्नादर्तव्यानीति विज्ञानेश्वरः। 'अस्नात्वा चाप्यहुत्वा च अदत्वाश्नंस्तथा द्विजः। एवंविधस्य विप्रस्य सर्वदा सूतकं भवेत् ॥' इति दक्षोक्त्या। 'अन्यपूर्वा यस्य गेहे भार्या स्यात्तस्य नित्यशः। आशौचं सर्वकार्येषु देहे भवति सर्वदा ॥' इति ब्राह्मादिवशाद्व्यवस्थेत्यपरार्कमदनपारिजातादयः।

माधवस्तु—'वृत्तस्वाध्यायसापेक्षमघसङ्कोचनं तथा।' इति कलिवर्ज्येषूक्तेः—'दशाह एव विप्रस्य सपिण्डमरणे सति। कल्पान्तराणि कुर्वाणः कलौ भवति किल्बिषी ॥' इति हारीतोक्तेश्च न्यूनाशौचपक्षा युगान्तरविषयाः। मरणान्तादिपक्षास्तु निन्दार्थवादः। अन्यथा—'नामधारकविप्रस्तु दशाहं सूतकी भवेत्।' इति विरोधः स्यादित्याह। यत्तु देवलः—'दशाहादित्रिभागेन कृते सञ्चयने क्रमात्। अङ्गस्पर्शनमिच्छन्ति वर्णानां तत्त्वदर्शिनः ॥' इति पूर्णाशौचे स्पृश्यतामाह। यच्चानुपनीतातिक्रान्ताशौचे त्रिरात्रादौ तत्रैवोक्तम्—'स्वाशौचकालाद्विज्ञेयं स्पर्शनं तु त्रिभागतः।' इति तदपि युगान्तरेषु। 'अस्थिसञ्चयनादूर्ध्वमङ्गस्पर्शनमेव च।' इति माधवीये कलौ तन्निषेधात्। यत्तु हारलतायाम्—चतुर्थेऽहनि कर्तव्यः संस्पर्शो ब्राह्मणस्य तु।' इति प्रचेतसोक्तेस्त्र्यहैकाहाशौचेऽपि चतुर्थाह एवाङ्गस्पर्श इति। तन्न। देवलादिवशेनास्य दशाहगोचरत्वात्। ये तु वर्णसङ्करजा मूर्धावसिक्ताद्यास्तेषामाशौचविशेषः कलौ नोपयुक्त इति नोच्यते। प्रतिलोमजानां नाशौचम्। मलापकर्षणार्थं तु स्नानमात्रमिति विज्ञानेश्वरः। माधवस्तु—'शौचाशौचे प्रकुर्वीरन् शूद्रवर्णस्य सङ्कराः।' इति ब्रह्मोक्तेः शूद्रवदाह। हारलतायामप्येवम्।

दत्तक्रीतकृत्रिमादिपुत्रेषु अहीनवर्णासु स्त्रीषु च सपिण्डत्वेऽपि प्रसवे मरणे च पूर्वापरपित्रोर्भर्तुश्च त्रिरात्रमेव न दशाहादि। 'अनौरसेषु पुत्रेषु जातेषु च मृतेषु च। परपूर्वासु भार्यासु प्रसूतासु मृतासु च॥ इति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

त्रिरात्रानुवृत्तौ विष्णूक्तेः सपिण्डानां त्वेकाहः । 'परपूर्वासु भार्यासु पुत्रेषु कृतकेषु च । भर्तृपित्रोस्त्रिरात्रं स्यादेकाहस्तु सपिण्डतः ॥' इति माधवीये हारीतोक्तेः । 'सूतके मृतके चैव त्रिरात्रं परपूर्वयोः । एकाहस्तु सपिण्डानां त्रिरात्रं यत्र वै पितुः ॥' इति मरीच्युक्तेश्च । शङ्खः—'अनौरसेषु पुत्रेषु भार्यास्वन्यगतासु च । परपूर्वासु च स्त्रीषु त्रिरात्राच्छुद्धिरिष्यते ॥ परपूर्वा—पुनर्भूः । इदं सवर्णासु । हीनवर्णासु तु शङ्खलिखितौ—'परपूर्वासु भार्यासु पुत्रेषु कृतकेषु च । नानध्यायो भवेत्तस्य नाशौचं नोदकक्रिया ॥' ब्राह्मेऽपि—'आशौचं तु त्रिरात्रं स्यात्समवर्णेषु निश्चितम् ॥' यत्तु षडशीतौ--'अन्यपूर्वावरुद्धासु त्रिदिनाच्छुद्धिरिष्यते ।. तास्वेवानन्यपूर्वासु पञ्चाहोभिर्विशुध्यति ॥' इति । तत्र पञ्चाहे मूलं चिन्त्यम् । यत्तु याज्ञवल्क्यः 'अनौरसेषु पुत्रेषु भार्यास्वन्यगतासु च ।' इत्येकाहमाह, तदसन्निधौ ज्ञेयम् । यदा पितुरेकाहस्तदा सपिण्डानां स्नानम् । 'अन्याश्रितेषु दारेषु परपत्नीसुतेषु च । गोत्रिणः स्नानशुद्धाः स्युस्त्रिरात्रेणैव तत्पिता ॥' इति प्रजापत्युक्तेः । पितेति वोढुरुपलक्षणम्, तथोपक्रमात् । यत्तु दत्तके पालकप्रतियोगिकपुत्रत्वात्पूर्वपितुर्न त्रिरात्रम् । पूर्वसम्बन्धनिवृत्तेश्च न दशाहादीति कश्चित् । तन्न । जनकेऽपि—'बैजिकादभिसम्बन्धादनुरुन्ध्यादघं त्र्यहम् ।' इति वाचनिकाशौचस्यानिवार्यत्वात् ।

पितृमरणेऽपि दत्तजादीनां त्रिरात्रम् । शुद्धितत्वे ब्राह्मे–'दत्तकश्च स्वयं दत्तः कृत्रिमः क्रीत एव च ।' इत्युपक्रम्य—'सूतके मृतके चैव त्र्यहाशौचस्य भागिनः ।' इत्युक्तेः । स्मृतिकौमुद्यां हारलतायामप्येवम् । दत्तकस्य पुत्रपौत्राणां जनने मरणे वा सपिण्डानामेकाहः । बीजिनश्चेति गौतमेन साप्तपौरुषसापिण्डयोक्तेः । सपिण्डानां चैकाहस्योक्तत्वात् । सपिण्डे तु पुत्रीकृते दशाह एव । तत्राकाङ्क्षाभावात्सपिण्डत्वेन दशाहप्राबल्याच्च ॥ पूर्वापरयोर्भर्तुरुत्पन्नयोः पुत्रयोस्त्वाह माधवीये मरीचिः— 'मातुरैक्याद्द्विपितृकौ भ्रातरावन्यगोत्रजौ । एकाहं सूतके तत्र त्रिरात्रं मृतके तयोः ॥' इति दिक् ।

ऊढकन्यानां तु विष्णुराह—'संस्कृतासु स्त्रीषु नाशौचं पितृपक्षे, तत्प्रसवमरणे चेत् पितृगृहे स्यातां तदैकरात्रं त्रिरात्रं च' इति । प्रसवे एकरात्रं मरणे त्रिरात्रमिति विज्ञानेश्वरापरार्कौ । माधवस्तु—प्रसवेऽपि त्रिरात्रं पित्रोः, एकरात्रं भ्रात्रादिबन्धुवर्गस्य । 'दत्ता नारी पितुर्गेहे सूयेताथ म्रियेत वा । तद्बन्धुवर्गस्त्वेकेन शुचिस्तज्जनकस्त्रिभिः ॥' इति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ब्राह्मोक्तेरित्याह। यत्तु कश्चिदाह—पक्षपदेन भ्रातरो गृह्यन्ते। वाक्यान्तरेण भगिनीमृतौ त्रिरात्रोक्तेरिति तच्चिन्त्यम्। तदभावादेतद्विरोधाच्च। भ्रातुः प्रसवे एकाहः। मृतौ त्रिरात्रमिति केचित्। युक्तो तु पक्षिणी। 'परस्परमृतौ भ्रातृभगिन्योः पक्षिणी भवेत्।' इति ब्राह्मात्। भ्रातृभिन्नानामेकाहः। वर्गोक्तेः। इतरेषां तु यथाविधि' इति वक्ष्यमाणवचनाच्च। यत्तु प्रधानगृहे मृतौ पित्रोः पूर्णं भ्रातुस्त्र्यह इति कश्चित् स निर्मूलत्वात् 'नाशौचं पितृपक्षे' इत्येतद्विरोधाच्च भ्रान्तः। दत्ता नारी पितुर्गेहे प्रधाने सूयते यदा। म्रियते वा तदा तस्याः पिता शुध्येत्त्रिभिर्दिनैः॥' इति कल्पतरौ शुद्धितत्त्वे च। पतिगृहे प्रसवे तु पित्रादीनामाशौचं नास्ति। मृतौ पित्रोस्त्रिरात्रमस्त्येव। 'प्रत्ताप्रत्तासु योषित्सु संस्कृतासंस्कृतासु च। मातापित्रोस्त्रिरात्रं स्यादितरेषां यथाविधि॥' 'अजातदन्तासु पित्रोरेकरात्रम्' इति माधवीये शङ्खकार्ष्णाजिनिस्मृतेः। 'बैजिकादभिसम्बन्धात्' इत्युक्तेश्च। स्मृत्यर्थसारेऽप्येवम्।

माधवस्तु इदं त्रिरात्रं जातदन्तपरम्। दन्तोत्पत्तेः प्रागेकरात्रं पित्रोः। 'सद्यस्त्वप्रौढकन्यायां प्रौढायां वासराच्छुचिः। प्रदत्तायां त्रिरात्रेण दत्तायां पक्षिणी भवेत्॥' इति पुलस्त्योक्तेः। अन्यत्र कन्यामृतौ पित्रोः पक्षिणीत्याह। षडशीतावपि—'पितृगेहादितोऽन्यत्र यदि पुत्री प्रमीयते। पक्षिणी तत्र पित्रोः स्यान्नान्येषामिति निश्चयः॥' इति। ग्रामान्तरे त्र्यहमिति स्मृत्यर्थसारे। भ्रातुस्तु पक्षिणी। 'श्वशुरयोर्भगिन्यां च मातुलान्यां च मातुले। पित्रोः स्वसरि तद्वच्च पक्षिणीं क्षपयेन्निशाम्॥' इति वृद्धबृहस्पति स्मृतेः। शुद्धितत्त्वे कौर्मे—आदन्तात्सोदरे सद्य आचूडादेकरात्रकम्। आप्रदानात् त्रिरात्रं स्याद् दशरात्रमतः परम्॥' पित्रोर्मृतौ स्त्रीणां त्रिरात्रम् पित्रोरुपरमे स्त्रीणामूढानां तु कथं भवेत्। त्रिरात्रेणैव शुद्धिः स्यादित्याह भगवान् यमः॥' इति माधवीये वृद्धमनूक्तेः। इदं दशाहान्तः। ऊर्ध्वं तु पक्षिणी। भ्रातुर्भगिनीगृहे, तस्या वा तद्गृहे मृतौ त्रिरात्रम्। अन्यत्र तु पक्षिणीति षडशीतावुक्तम्। ब्राह्मेऽपि—'परस्परमृतौ भ्रातृभगिन्योः पक्षिणी भवेत्। मातुलाशौचवत्पुत्र्याः पितृव्याशौचमिष्यते॥' इति। शिष्टास्त्वस्य निर्मूलत्वात्पितृव्ये स्नानमात्रमाहुः।

त्रिंशच्छ्लोक्याम्—'प्रेतेष्वाचार्यमातामहदुहितृसुतश्रोत्रियर्त्विक्सयाज्यस्वस्रीयेषु त्रिरात्रं त्रिदिवशमशुचिः सोदकस्तूभयत्र। पक्षिण्याशौचमृत्विग्दुहितृसुतसहाध्यायिबन्धुत्रयान्तेवासिश्व श्रसुमित्रश्वशुरभगि-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

निकाभागिनेयप्रयाणे ॥ मातामह्यां च पित्रोः स्वसरि च विरतौ मातुले मातुलान्यां चाथो सज्योतिरेव स्वविषयनृपतौ ग्रामनाथे च नष्टे। शिष्योपाध्यायबन्धुत्रयगुरुतनयाचार्यभार्यासगोत्रानूचानश्रोत्रियेषु स्वगृहपरमृतौ मातुले चैकरात्रम् ॥ रात्रिं सब्रह्मचारिण्यथ तु कथमपि स्वल्पसम्बन्धयुक्ते स्नानं वासोयुतं स्यादिदमपि सकलं सर्ववर्णेषु तुल्यम् ॥' इति। अत्र मूलं मिताक्षरादौ स्पष्टम्। दौहित्रभागिनेययोरुपनीतयोस्त्रिरात्रम्।

दौहित्रभागिनेययोः। अनुपनीतयोः पक्षिणी। 'संस्थिते पक्षिणीं रात्रिं दौहित्रे भगिनीसुते। संस्कृते तु त्रिरात्रं स्यादिति धर्मो व्यवस्थितः॥' इति वृद्धमनूक्तेः। संस्कृते दाहेन। तेन दाहे त्रिरात्रं नान्यथेति गौडाः। तन्न। विशेषवैयर्थ्यात्। मातुलादौ सन्निधिविदेशाभ्यां पक्षिण्येकाहयोर्व्यवस्था। मनुः—'त्रिरात्रमाहुराशौचमाचार्ये संस्थिते सति। तस्य पुत्रे च पत्न्यां च दिवारात्रमिति स्थितिः॥'

श्रोत्रिये स्वगृहे मृते—श्रोत्रिये स्वगृहे मृते त्रिरात्रम्। 'श्रोत्रिये तूपसंपन्ने त्रिरात्रमशुचिर्भवेत्।' इति स्मृतेरिति माधवः। एकग्रामीणे त्वेकाहः। ऋत्विक्तु बह्वल्पकालश्रौतस्मार्तयाजनपरे त्रिरात्रैकरात्रे ज्ञेये। यद्यपि कर्म कुर्वत एष वाचकः शब्दो भवतीति शम्बराचार्यैः कर्ममध्ये ऋत्विक्त्वमुक्तं तथापि कर्मण्याशौचनिषेधात्तदुत्तरमेवैतज्ज्ञेयम्।

ऋत्विग्विषये। गौडास्तु—'समानोदकानां त्र्यहो गोत्रजानामहः स्मृतम्। मातृबन्धौ गुरौ मित्रे मण्डलाधिपतौ तथा॥' इति जाबालोक्तेर्मातृबन्धुष्वेकाहमाहुः। शिष्ये स्वोपनीते त्र्यहः। 'शिष्यसतीर्थ्यब्रह्मचारिषु क्रमेण त्रिरात्रमहोरात्रमेकाहः' इति माधवीये बौधायनोक्तेः। अन्यत्र तु मनुः– 'मातुले पक्षिणीं रात्रिं शिष्यर्त्विग्बान्धवेषु च।' इति। बन्धुत्रयम्—आत्मपितृष्वसृमातृष्वसृमातुलपुत्राः, पितुः पितृष्वसृमातृष्वसृमातुलपुत्राः, मातुः पितृष्वसृमातृष्वसृमातुलपुत्राश्चेति विज्ञानेश्वरः। अत्र पक्षिणी। पितृष्वस्रादिकन्यादिकन्यानामूढानां त्वेकाहः। 'तद्बन्धुवर्गस्त्वेकेन' इति पूर्वोक्तब्राह्मात्। यत्तु

पितृष्वस्रादिकन्यानाम्। षडशीत्याम् 'एवं पित्रोर्भगिन्यौ ये ये पितामहयोस्तथा। ये मातामहयोश्चैव भगिन्यौ तत्प्रजाश्च याः॥ मातुलाः स्वस्य पित्रोश्च पत्न्यश्चैषां प्रजाश्च या। भ्रातरश्चेति सर्वेषु पक्षिणी स्वगृहे त्र्यहम्॥ एवं श्वशुरजामातृदौहित्रविपदि स्मृतम्॥' यच्च यमः— 'जामातरि मृते शुद्धिस्त्रिरात्रेणोभयोः स्मृता। पक्षिणी शालकानां स्यादिति शातातपोऽब्रवीत्' ॥ इति। तन्निर्मूलत्वान्मिताक्षरादिविरोधाच्चोपेक्ष्यम्।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मदनपारिजाते विष्णुः–'असपिण्डे स्ववेश्मनि मृते एकरात्रम् ।' अत्र हरदत्तः–'अन्तःशवे च' इत्यापस्तम्बसूत्रतः शवे ग्रामे धनुःशताद्-र्वागन्नमभोज्यम् । दीपमुदकुम्भं वोपनिधाय तु भुञ्जीत यदि समानवंशं न गृहमेवं सूतिकायामित्याह । प्रधानगृहमृतौ तु—'गृहे यस्य मृतः कश्चि-दसपिण्डः कथञ्चन । तस्याप्यशौचं विज्ञेयं त्रिरात्रं नात्र संशयः ॥' इत्य-ङ्गिरसोक्तमिति माधवः । एतेन 'त्रिरात्रमसपिण्डेषु स्वगृहे संस्थितेषु च ।' इति कौर्मं व्याख्यातम् । शुद्धितत्त्वे बृहन्मनुः–'श्वशूद्रपतिताश्चा-न्त्या मृताश्चेद्द्विजमन्दिरे । शौचं तत्र प्रवक्ष्यामि मनुना भाषितं यथा ॥ दशरात्राच्छुनि मृते मासाच्छूद्रे भवेच्छुचिः । द्वाभ्यां तु पतिते गेहमन्त्ये मासचतुष्टयात् ॥ अत्यन्त्ये वर्जयेद्गेहमित्येवं मनुरब्रवीत् ॥' अन्त्यो म्लेच्छः । अत्यन्त्यः श्वपाक इति वाचस्पतिः । तत्रैव यमः—द्विजस्य मरणे वेश्म विशुध्यति दिनत्रयात् ।' संवर्तः—'गृहशुद्धिं प्रवक्ष्यामि अन्तस्थशवदूषिते । प्रोत्सृज्य मृन्मयं भाण्डं सिद्धमन्नं तथैव च ॥ गोम-येनोपलिप्याथ छागेन घ्रापयेद्बुधः । ब्राह्मणैर्मन्त्रपूतैश्च हिरण्यकुशवा-रिभिः ॥ सर्वमभ्युक्षयेद्वेश्म ततः शुध्यत्यसंशयम् ॥' बृहद्विष्णुः—'ग्राम-मध्यगतो यावच्छवस्तिष्ठति कस्यचित् । ग्रामस्य तावदाशौचं निर्गते शुचितामियात् ॥' गृहे पश्वादौ मृतेप्येवम् ।

यत्तु माधवीये प्रचेतसा मातृष्वस्रादिषु त्रिरात्रमुक्तम् 'मातृष्वसामा-तुलयोः श्वश्रूश्वशुरयोर्गुरोः । मृते चर्त्विजि याज्ये च त्रिरात्रेण विशु-ध्यन्ति ॥' इति । गुरुराचार्यः । ऋत्विक् कुलागतः । तत्स्वगृहमृतौ ज्ञेयम् । श्वशुरयोरन्यत्र मृतावपि सन्निधौ त्रिरात्रम् । असन्निधौ पक्षिणी । देशा-न्तरे एकरात्रम् । वक्ष्यमाणविष्णूक्तेरिति माधवगौडादयः । अन्यत्र तु मातृष्वस्रादिषु पक्षिणी । 'पित्रोः स्वसरि तद्वच्च पक्षिणीं क्षपयेन्निशाम्' इति वृद्धमनूक्तेः । यत्तु वृद्धमनुः—'भगिन्यां संस्कृतायां तु भ्रातर्यपि च संस्कृते । मित्रे जामातरि प्रेते दौहित्रे भागिनीसुते । शालके तत्सुते चैव सद्यःस्नानेन शुद्ध्यति ॥' इति । तद्भ्रातृदौहित्रादौ देशान्तरे, शालकसुत-जामात्रोः स्वदेशे ज्ञेयम् । शालके तु स्वदेशे एकाहः 'आचार्यपत्नीपु-त्रोपाध्यायमातुलश्वशुरश्वश्रूश्वशुर्यसहाध्यायिशिष्येष्वेकरात्रम्' इति माध-वीये विष्णूक्तेः । हरदत्तीये दशश्लोक्यामप्येवम् । श्वशुर्यः शालकः। देशा-न्तरे स्नानम् । श्वशुरयोर्देशान्तरे एकाहः । जाबालः — एकोदकानां तु त्र्यहो गोत्रजानामहः स्मृतम् । सर्वत्र मूल्याभावेऽपि क्रियाकर्तुर्दशाहः । गुरोः प्रेतस्य शिष्यस्तु पितृमेधं समाचरेत् । प्रेताहारैः समं तत्र दश—

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

रात्रेण शुद्ध्यति ॥' इति मनूक्तेः । शिष्य इत्युपलक्षणम् । 'निरन्वये सपिण्डे तु मृते सति दयान्वितः । तदशौचं पुरा चीर्त्वा कुर्यात्तु पितृवत्क्रियाम् ॥' इति माधवीये ब्राह्मोक्तेः । दिवोदासीये -'सगोत्रोवाऽसगोत्रो वा योऽग्निं दद्यात्सखे नरः । सोऽपि कुर्यान्नवश्राद्धं शुद्ध्येच्च दशमेऽहनि ॥' यत्त्वेकविषये पक्षिण्येकाहादिपक्षद्वयमुक्तं तत्र सन्निधिविदेशमैत्र्यादिकृता व्यवस्था ।

त्रिंशच्छ्लोक्याम्-'वानप्रस्थे यतौ चोपरमिति कुलजे षण्ढके वालवः स्याद्योषिद्गोविप्रगुप्त्यै मृतवति तु दिनं युद्धविद्धे तु सद्यः ।' अत्र मूलमाकरे स्पष्टम् । युद्धमूर्ध्नि मृतस्य स्नानम् । 'उद्यतैराहवे शस्त्रैः युद्धे मृतस्य —क्षत्रधर्महतस्य च । सद्यः संतिष्ठते यज्ञस्तथाशौचमिति स्थितिः ॥' इति मनूक्तेः । यज्ञोऽन्त्यकर्म । सर्वं तदैवेत्यर्थः । यस्तु भारते राजधर्मेषु—'अशोच्यो हि हतः शूरः स्वर्गलोके महीयते । नह्यन्नमुदकं तस्य न स्नानं नाप्यशौचकम् ॥' इति श्राद्धादिनिषेधः स पुत्राद्यभावपरः । अत एव तत्र कर्णादीनां श्राद्धमुक्तम् । अन्ये तु दशपिण्डनिषेधमाहुर्यतिवत् । यत्तु पराशरः— आहवेऽपि हतानां च एकरात्रमशौचकम् । इति, तद्युद्धक्षतेन कालान्तरमृते ज्ञेयम् । 'असन्निधौ स्नानम्' इति माधवः । शुद्धितत्त्वे अग्निपुराणे-'दंष्ट्रिभिः शृङ्गिभिर्वापि हता म्लेच्छैश्च तस्करैः । ये स्वाम्यर्थे हता यान्ति राजन्स्वर्गं न संशयः ॥ सर्वेषामेव वर्णानां क्षत्रियस्य विशेषतः ॥' यत्तु बृहस्पतिः—डिम्बाहवे विद्युता च राज्ञा गोविप्रपालने । सद्यः शौचं मृतस्याहुस्त्र्यहं चान्ये महर्षयः ॥' तच्छस्त्रं विना पराङ्मुखहते च त्रिरात्रम् । राज्ञा वध्ये हते सद्यःशौचमन्यत्र त्रिरात्रम् । तथैव व्याघ्रः-'क्षतेन म्रियते यस्तु तस्याशौचं भवेद्द्विधा । आसप्ताहात् त्रिरात्रं स्याद्दशरात्रमतः परम् ॥ शस्त्राघाते त्र्यहादूर्ध्वं यदि कश्चित्प्रमीयते । आशौचं प्राकृतं तस्य सर्ववर्णेषु नित्यशः ॥ शस्त्राघाते क्षतं विना शवस्पर्शे तु हरीतः—'शवस्पृशो ग्रामं न प्रविशेयुरानक्षत्रदर्शनात्, रात्रौ चेदादित्यस्य ।' यत्तु मनुः—'अह्ना चैकेन रात्र्या च त्रिरात्रैरेव च त्रिभिः । शवस्पृशो विशुद्ध्यन्ति त्र्यहात्तदकदायिनः ॥' इति । अह्ना रात्र्या चेत्यहोरात्रमित्युक्तम् । त्रिभिस्त्रिरात्रैरिति नवरात्रमेवं दशरात्रमित्यर्थः । तत्तदन्नाशने तद्गृहवासेऽनापदि च ज्ञेयम् । अङ्गिराः— 'आशौचं यस्य संसर्गादापतेद्गृहमेधिनः । क्रियास्तस्य न लुप्यन्ते गृह्याणां च न तद्भवेत् ॥'

अथ निर्हाराद्याशौचम् । स्नेहेन सवर्णनिर्हारे तदन्नाशने तद्गृहवासे

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

च दशाहः। तदन्नानशने तद्गृहवासे त्र्यहः। गृहावासेऽन्नाभक्षणे चैकाहः। भृतिग्रहणेन निर्हारे दाहे च तज्जात्याशौचम्। 'यदि निर्हरति प्रेतं प्रलोभाक्रान्तमानसः। दशाहेन द्विजः शुद्धयेद् द्वादशाहेन भूमिपः। मासार्धेन च वैश्यस्तु शूद्रो मासेन शुद्धयति॥' इति कौर्मोक्तेः। 'विजातीयनिर्हारे तु शवजातीयमाशौचम्। अत्र भृतिग्रहे द्विगुणम्॥' 'अवरश्चेद्वरं वर्णं वरो वाप्यवरं यदि। वहेच्छवं तदाशौचं द्रव्यार्थे द्विगुणं भवेत्॥' इति व्याघ्रोक्तेः। कौर्ममेतदिति गौडाः। दाहेऽप्येवम्। यत्तु ब्राह्मे—'योऽसवर्णं तु मूल्येन नीत्वा चैव दहेन्नरः। आशौचं तु भवेत्तस्य प्रेतजातिसमं नृप॥' इति, तदापदि ज्ञेयम्। सोदकनिर्हारे तु दशाह इति माधवः। अलङ्करणे तु शङ्खः—'कृच्छ्रपादोऽसपिण्डस्य प्रेतालङ्करणे कृते। अज्ञानादुपवासः स्यादशक्तौ स्नानमिष्यते॥' धर्मार्थमनाथसवर्णहरणे क्रियाकरणे च द्विजस्यानन्तयज्ञफलम्। 'स्नानं प्राणायामो ऽग्निस्पर्शश्च' इति माधवीये। अग्निदेऽप्येवम्। प्रेतसंस्पर्शसंस्कारैर्ब्राह्मणो नैव दुष्यति। वोढा चैवाग्निदाता च सद्यः स्नात्वा विशुद्धयति॥ इत्यपरार्के वृद्धपराशरोक्तेः। मातुलत्वादिसम्बन्धे त्रिरात्रम् 'असम्बन्धिद्विजान्वहित्वा दहित्वा च सद्यःशौचम्, सम्बन्धे त्रिरात्रम्' इति पैठीनसिस्मृतेः।

गौतममिताक्षरायां वृद्धात्रिः 'सूतकाद्द्विगुणं शावं शावाद्द्विगुणमार्तवम्। आर्तवाद्द्विगुणा सूतिस्ततोऽपि शवदाहकः॥' अत्र पूर्वेणोत्तरनिवृत्तिरित्यर्थः। विष्णुः—मृतं द्विजं न शूद्रेण हारयेन्न शूद्रं द्विजेन'। देवलः—'ब्रह्मचारी न कुर्वीत शववाहादिकक्रियाम्। यदि कुर्याच्चरेत्कृच्छ्रं पुनःसंस्कारमेव च॥' याज्ञवल्क्यः—'आचार्यपित्रुपाध्यायान्निर्हृत्यापि व्रती व्रती'। अनुगमने तु सपिण्डे न दोषः। 'विहितं हि सपिण्डानां प्रेतनिर्हरणादिकम्। तेषां करोति यः कश्चित्तस्याधिक्यं न विद्यते॥' इति देवलोक्तेः। 'दोषः स्यात्त्वसपिण्डस्य तत्रानाथक्रियां विना।' इति हारीतोक्तेश्च। समोत्कृष्टवर्णे तु माधवीये कण्वः—'अनुगम्य शवं बुद्ध्या स्नात्वा स्पृष्ट्वा हुताशनम्। सर्पिः प्राश्य पुनः स्नात्वा प्राणायामैर्विशुध्यति॥ इति। 'हीनवर्णे तु क्षत्रियेऽहः, वैश्ये पक्षिणी, शूद्रे त्रिरात्रम्, क्षत्रियस्य वैश्येऽहः, शूद्रे पक्षिणी, वैश्यस्य शूद्रेऽहः' इति विज्ञानेश्वरः। माधवस्तु—'विप्रस्य वैश्ये त्र्यहः, क्षत्रस्य शूद्रेऽप्येवम्, अन्यत् प्राग्वत्। स्नानाग्निस्पर्शघृताशनानि सर्वत्रेत्याह। हीनवर्णस्य दाहौर्ध्वदेहिककरणे तु ब्राह्मे—'ब्राह्मणो हीनवर्णस्य न कुर्यादौर्ध्वदेहिकम्। कामाल्लोभात्तथा मोहात्कृत्वा तज्जातितां व्रजेत्॥' मनुः—'व्रात्यानां याजनं कृत्वा परेषा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मन्त्यकर्म च। अभिचारमहीनं च त्रिभिः कृच्छ्रैर्व्यपोहति ॥' परेषां सर्ववर्णानां हीनेषु तद्द्वैगुण्यत्रैगुण्यचातुर्गुण्याद्यूह्यम्।

अथ रोदने समोत्तमवर्णयोः सञ्चयनात्पूर्वं सचैलस्नानमूर्ध्वमाचनम्। हीनवर्णेषु तु सञ्चयनात्प्राक् सचैलमूर्ध्वं स्नानमात्रम्। विप्रस्य क्षत्रवैश्यविषये तु ब्राह्मे—'अस्थिसञ्चयने विप्रो रौति चेत्क्षत्रवैश्ययोः। तदा स्नातः सचैलस्तु द्वितीयेऽहनि शुध्यति॥ कृते तु सञ्चये विप्रः स्नानेनैव शुचिर्भवेत्॥' क्षत्रियवैश्येप्येवम्। शूद्रे तु सञ्चयनात्प्राक् विप्रस्य त्रिरात्रम्। क्षत्रवैश्ययोर्द्विरात्रम्। ऊर्ध्वं तु द्विजानामेकाहः। शूद्रस्य शूद्रे स्पर्शं विना सञ्चयात्पूर्वमेकाहः। ऊर्ध्वं सज्योतिरिति माधवीये ज्ञेयम्। शुद्धितत्त्वे पारस्करस्तु—'अस्थिसञ्चयनादूर्ध्वं मासं यावद्द्विजातयः। दिवसेनैव शुध्यन्ति वाससां क्षालनेन च॥ सजातेर्दिवसेनैव त्र्यहात्क्षत्रियवैश्ययोः॥' इत्युक्तम्। सपिण्डानां रोदननिर्हारादावदोष इत्युक्तं प्राक्। विज्ञानेश्वरस्तु—'मृतस्य बान्धवैः सार्धं कृत्वा तु परिदेवनम्। वर्जयेत्तदहोरात्रं दानश्राद्धादिकर्म च॥' इति पारस्करोक्तेः सर्वत्रैकरात्रमाह।

अथाशौचान्नभक्षणे विष्णुः—'ब्राह्मणादीनामाशौचे य सकृदेवान्नमश्नाति तस्य तावदाशौचं यावत्तेषामाशौचव्यपगमे प्रायश्चित्तम्' इति। अज्ञाने त्वङ्गिराः—'अन्तर्दशाहे भुक्त्वान्नं सूतके मृतकेऽपि वा। अस्याशौचं भवेत्तावद्यावदन्नं व्रजत्यधः॥' प्रायश्चित्तं त्वमत्या विप्रस्य वर्णक्रमेणैकाहत्र्यहपञ्चाहसप्ताहोपवासाः, दश विंशतिः षष्टिः शतं च प्राणायामाः पञ्चगव्याशनं च। अभ्यासे द्विगुणम्। आपदि तु प्राणायामशतं पञ्चशतमष्टशतमष्टसहस्रं गायत्रीजपश्च। मत्यापदि तु सवर्णाशौचे त्रिरघमर्षणं गायत्र्यष्टसहस्रं च। क्षत्रियाशौचे उपवासस्तच्च। वैश्याशौचे त्रिरात्रोपवासश्च। शूद्राशौचे कृच्छ्रः। क्षत्रवैश्ययोः पञ्चशतमष्टशतं गायत्रीजपः। उत्तमेषु शूद्रस्य सर्वत्र स्नानम्। मत्यानापदि विप्रस्य वर्णेषु सान्तपनकृच्छ्रमहासान्तपनचान्द्राणि। अभ्यासे तु मासिकद्वैमासिकत्रैमासिकषाण्मासिकानीत्यादि माधवीयादौ ज्ञेयम्।

अथ दासस्य स्वदास्युत्पन्नस्य सपिण्डमृतौ स्नानमात्रेण स्वामिकार्ये स्पृश्यत्वम्। भक्तदासस्य त्र्यहोर्ध्वम् 'सद्यःस्पृश्यो गर्भदासो भक्तदासस्त्र्यहाच्छुचिः।' इति स्मृत्यन्तरोक्तेः। 'मूल्यकर्मकराः शूद्रा दासीदासास्तथैव च। स्नाने शरीरसंस्कारे गृहकर्मण्यदूषिताः॥' इति शातातपोक्तेश्च। एतच्चानन्यसाध्यतत्कार्यमात्रे। अन्यत्र मासाद्याशौचमत्येव। एवं दास्यामपि। सूतिकायास्तस्या अस्पृश्यत्वमपि मासमात्रम्। 'दासी दासश्च सर्वो

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वै यस्य वर्णस्य यो भवेत्। तद्वर्णस्य भवेच्छौचं दास्या मासस्तु सूतकम् ॥' इत्यङ्गिरसोक्तेः। षडशीतावपि—'स्वामिशौचेन दासाद्याः स्पृश्या मासात्तु कर्मसु। योग्याः स्युर्मासतो दासी सूती चेत्स्पृश्यतामियात् ॥' दत्तदासादीनां स्वसपिण्डमरणादौ स्वाम्याशौचसमसंख्यदिनोर्ध्वं सत्यपि मासाद्याशौचे स्वामिकार्ये स्पृश्यतेति हरदत्तः। 'दासान्तेवासिभृतकाः शिष्याश्चैकत्रवासिनः। स्वामितुल्येन शौचेन शुध्यन्ति मृतसूतके ॥' इति बृहस्पतिस्मृतेः। दासश्चात्र—'गृहजातस्तथा क्रीतो लुब्धो दायादुपागतः। अन्नकालभृतस्तद्वदाहितः स्वामिना च यः ॥ मोचितो महतश्चर्णाद्युद्धप्राप्तः पणे जितः। तवाहमित्युपगतः प्रव्रज्यावसितः कृतः ॥ भक्तदासश्च विज्ञेयस्तथैव वडवाहृतः। विक्रेता चात्मनः शास्त्रे दासाः पञ्चदश स्मृताः ॥' इति नारदोक्तेषु गर्भभक्तदासौ विना ज्ञेयाः। वडवा दासी तया हृतस्तामुद्वाह्य दासो जात इत्यर्थः। अन्तेवास्यपि तेनैवोक्तः— 'स्वशिल्पमिच्छन्नाहर्तुं बान्धवानामनुज्ञया। आचार्यस्य वसेदन्ते कृत्वा कालं सुनिश्चितम् ॥ आचार्यः शिक्षयेदेनं स्वगृहे दत्तभोजनम् ॥' इति। शिष्यस्तत्तुल्यो विद्यार्थी। दासादेः स्वामितत्सपिण्डमरणे तु विष्णुः— 'पत्नीनां दासानामानुलोम्येन स्वामितुल्यमाशौचम्' मृते स्वामिन्यात्मीयम्।' इति प्रतिलोमदासानामाशौचाभावः। वर्णानामानुलोम्येन दास्यं न प्रतिलोमतः।' इति याज्ञवल्क्योक्तेः।

अथ रात्रौ जनने मरणे वा-रात्रिं त्रिभागां कृत्वाऽद्यभागद्वये चेत्पूर्वं दिनम्, अन्त्ये तूत्तरमिति मिताक्षरायाम्। यत्तु प्रागर्धरात्रात् प्राग्वा सूर्योदयात्पूर्वं दिनमित्युक्तं, तत्र देशाचारतो व्यवस्था। सर्वं चाशौचमाहिताग्नेर्दाहं तद्भिन्नस्य मरणमारभ्य ज्ञेयम्। 'अनग्निमत उत्क्रान्तेराशौचादि द्विजातिषु। दाहादग्निमतो विद्याद्विदेशस्थे मृते सति' इति पैठीनसिस्मृतेः। साग्निराहिताग्निः। आहिताग्निश्चेत्प्रवसन्म्रियेत पुनः संस्कारं कृत्वा शववदाशौचम्' इति वसिष्ठे विशेषोक्तेः। 'दाहादेव तु कर्तव्यं यस्य वैतानिको विधिः' इति ब्राह्माच्च। यत्तु-धूर्तस्वामिना रामाण्डारेण चोक्तम् 'आहिताग्नेरपि मरणाद्येव दशारात्रं दशाहं शावमाशौचम्' इति मरणनिमित्तत्वात्तस्य। यत्तु दाहादेव तस्याशौचमुक्तं तत्संस्कारनिमित्ताशौचं पृथगेव। तेन गृह्याग्नेः संस्काराङ्गं त्रिरात्रम्। श्रौताग्नेस्तु दशरात्रम्। मरणनिमित्तं तूभयोर्दशाहं दाहात्प्रागपीति। तदेतद्वचनविरोधात्पूर्वस्यैवोत्कर्षान्मूलकल्पानालाघवाच्च चिन्त्यम्।

अथातिक्रान्ताशौचम्। तत्राशौचमध्ये जननादौ ज्ञाते तच्छेषेण

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

शुद्धिः ।' 'विगतं तु विदेशस्थं शृणुयाद्यो ह्यनिर्दशम् । यच्छेषं दशरात्रस्य तावदेवाशुचिर्भवेत् ॥' इति मनूक्तेः । अत्र केचिदेतन्पुत्रातिरिक्तविषयम् । तेषां त्वाशौचमध्ये श्रवणेऽपि तदाद्येव दशाहादि । पितरौ चेन्मृतौ स्यातां दूरस्थोऽपि हि पुत्रकः । श्रुत्वा तद्दिनमारभ्य दशाहं सूतकी भवेत् ॥' इत्यस्य सर्वापवादत्वादित्याहुस्तन्न । ज्ञातमरणस्य निमित्तत्वात्, 'अनग्निमत उत्क्रान्तेः' इत्यादिविरोधाच्च । स्मृत्यर्थसारेऽपि—'जनने मरणे वा प्रथमदिनादूर्ध्वं ज्ञाते पुत्रादीनां शेषेणैव शुद्धिः' इति । षडशीतावपरार्के चैवम् । दशाहादूर्ध्वं ज्ञाते तु वृद्धवसिष्ठः—'मासत्रये त्रिरात्रं स्यात्षण्मासे पक्षिणी तथा । अहस्तु नवमादर्वागूर्ध्वं स्नानेन शुध्यति ॥', जनने त्वतिक्रान्ताशौचं नास्त्येव । 'नाशुद्धिः प्रसवाशौचे व्यतीतेषु दिनेष्वपि ।' इति देवलोक्तेः । पितुः स्नानं तत्रापि भवत्येव । 'निर्दशं ज्ञातिमरणं श्रुत्वा पुत्रस्य जन्म च । सवासा जलमाप्लुत्य शुद्धो भवति मानवः ॥' इति मनूक्तेः । तच्चातिक्रान्ताशौचं दशाहादिजाशौचविषयम् । न त्वनुपनीतादिनिमित्तत्रिरात्रादौ । 'उपनीते तु विषमं तस्मिन्नेवातिकालजम् ।' इति व्याघ्रोक्तेः । 'निर्दशं ज्ञातिमरणम्' 'अतिक्रान्ते दशाहे तु' इति मनूक्तेश्च । माधवीये देवलस्तु—'आ त्रिपक्षात्त्रिरात्रं स्यात्षण्मासात्पक्षिणी ततः । परमेकाहमावर्षादूर्ध्वं स्नातो विशुध्यति ॥' इत्याह । तत्रापदनापद्विषयत्वेन व्यवस्था । इदं चैकदेशे ।

देशान्तरे तु स्नानमात्रम् । 'देशान्तरमृतं श्रुत्वा क्लीबे वैखानसे यतौ । मृते स्नानेन शुध्यन्ति गर्भस्रावे च गोत्रिणः ॥' इति पराशरोक्तेरिति विज्ञानेश्वरः । स्नानं वत्सरान्ते 'अर्वाक्त्रिपक्षात्त्रिनिशं षण्मासाच्च दिवानिशम् । अहः संवत्सरादर्वाग्देशान्तरमृतेष्वपि ॥' इति विष्णूक्तेरिति माधवः । इदं सपिण्डानां देशान्तरे स्नानं सोदकानामिति युक्तम् । लक्षणं त्वाह बृहस्पतिः—'महानद्यन्तरं यत्र गिरिर्वा व्यवधायकः । वाचो यत्र विभिद्यन्ते तद्देशान्तरमुच्यते ॥ देशान्तरं वदन्त्येके षष्टियोजनमायतम् । चत्वारिंशद्वदन्त्यन्ये त्रिंशदन्ये तथैव च ॥' इति । एतत्सर्वं मातापितृभिन्नविषयम् । 'तयोस्तु पितरौ चेत्' इति पूर्वपैठीनसिवाक्यात्सदा पूर्णमेव दशाहादि । स्मृत्यर्थसारेऽपि—'मातापितृमरणे दूरदेशेऽपि संवत्सरोर्ध्वमपि पुत्रो दशाहादिकं पूर्णमाशौचं कुर्यात् । स्त्रीपुंसयोः परस्परं सपत्नीषु चैवम्' इति । शुद्धितत्त्वादयो गौडास्तु—'ऊर्ध्वं संवत्सरादाद्याद्बन्धुश्चेच्छ्रूयते मृतः । भवेदेकाहमेवात्र तच्च संन्यासिनां न तु ॥' इति देवलोक्तेः पित्रोरब्दमध्ये त्रिरात्रमूर्ध्वमेकाहः । बन्धुर्माता पिता

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भर्ता च। पूर्वोक्तदशाहस्तु कलिङ्गादिदेशपर इत्याहुः, ते बन्धुपदस्य पुत्रादिपरत्वे मानाभावादुपेक्ष्याः। सापत्नमातुस्तु दक्षः—'पितृपत्न्याम-पेतायां मातृवर्जं द्विजोत्तमः। संवत्सरे व्यतीतेऽपि त्रिरात्रमशुचिर्भवेत्॥' 'हीनवर्णमातृषु सपत्नीषु चैवम्' इति स्मृत्यर्थसारे। केचित 'पितुः पत्न्यां प्रमीतायामौरसे तनये तथा।' इति ब्रह्मोक्तेस्त्वौरसेऽपीदमाहुः। षडशी-तावप्येवम्। एतत्सर्ववर्णतुल्यम्, 'तुल्यं वयसि सर्वेषामतिक्रान्ते तथैव च।' इति व्याघ्रोक्तेः।

अथाशौचसंपाते उच्यते। तत्र शावे शावं, सूतके सूतकम्। शावे सूतकं, सूतके शावं वा। तत्राप्युत्तरं कालतः पूर्वेण समं न्यूनमधिकं चेति द्वादश भेदाः। यदैकदिने समं न्यूनमधिकं वाशौचद्वयं तत्र तन्त्रे-णान्यसिद्धिः। द्वयोरेककालत्वात्। यदा तु द्वितीयादिदिने पूत्तर सजातीयं शावे जननं वा समकालं न्यूनकालं वा परं स्यात्तदा षट्सु पक्षेषु पूर्वशेषेण शुद्धिः। 'अन्तरा जन्ममरणे शेषाहोभिर्विशुध्यति।' इति याज्ञवल्क्योक्तेः। अन्तरा ज्ञाते इत्यर्थः। ज्ञातस्यैव जननादेर्निमित्त-त्वात्। पूर्वाशौचोत्तरं तन्मध्योत्पन्ने ज्ञाते तूत्तरमेव कार्यम्। शुद्धितत्त्वे-ऽप्युक्तं–पूर्वाशौचान्तरुत्पन्नं समानं लघु वा निमित्तं तत्कालादुपरि श्रुतं स्वाशौचहेतुरेव। अज्ञातं तु न। अविज्ञाते न दोषः स्याच्छ्राद्धादिषु कथञ्चन।' इत्यस्यशौचसाङ्कर्येऽपि प्रवृत्तेः। तेनाज्ञानाद्वृषोत्सर्गादौ कृते पश्चात् ज्ञातेऽपि नावृत्तिरिति। माधवीये यमोऽपि—'जनने जननं चे-त्स्यान्मरणे मरणं तथा। पूर्वशेषेण शुद्धिः स्यादुत्तराशौचवर्जनम्॥' अत्र केचित् 'अन्तर्दशाहे स्यातां चेत्पुनर्मरणजन्मनी। तावस्यादशुचि-र्विप्रो यावत्तत्स्यादनिर्दशम्॥' इति मनुपराशराद्यैर्दशाहग्रहणात्पूर्णाशौचे एव पूर्वशेषेण शुद्धिः। त्र्यहाद्यल्पाशौचसंपाते तूत्तरेणैव शुद्धिरित्याहुः। हरदत्तोऽप्येवमाह। गौडा अप्येवम्। तन्न। याज्ञवल्क्यादिवशेन दशाहस्य तुल्यकालाशौचोपलक्षणत्वात्। 'समानाशौचसंपाते प्रथमेन समापयेत्। असमानं द्वितीयेन धर्मराजवचो यथा॥' इति माधवीये शङ्खोक्तेः। अपरार्कमिताक्षरादिविरोधाच्च।

यदा तु सूतके शावं समं न्यूनमधिकं वा तदा पूर्वशेषाच्छुद्धिः। तदाहाङ्गिराः—'सूतके मृतकं चेत्स्यान्मृतके त्वथ सूतकम्। तत्राधिकृत्य मृतकं शौचं कुर्यान्न सूतकम्॥' षट्त्रिंशन्मते—'शावाशौचे समुत्पन्ने सूतकं तु यदा भवेत्। शावेन शुध्यते सूतिर्न सूतिः शवशोधिनी॥' चतु-र्विंशतिमतेऽपि—मृतेन शुध्यते जातं न मृतं जातकेन तु।' अतो यदा

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दशाहजननमध्ये तदन्ते वा त्र्यहादि शावं तदा पूर्वेण शुद्धावपि तन्निमित्तमस्पृश्यत्वं भवत्येव। 'मरणोत्पत्तियोगे तु गरीयो मरणं भवेत्।' इति कौर्माच्च। गौतमव्याख्यायां वृद्धात्रिरपि—, सूतकाद्द्विगुणं शावं शावाद्द्विगुणमार्तवम्। आर्तवाद्द्विगुणा सूतिस्ततोऽपि शवदाहकः॥' अत्र पूर्वेण नोत्तरोत्तरनिवृत्तिरस्पृश्यत्वाधिक्यादित्यर्थः। षडशीतावपि-'स्वभावबहुसूतिस्तु न्यूनशावविशोधिनी।' इति। रात्रिशेषादौ वर्धितद्वित्रिदिनैरागन्तुकैः सूतेर्बहुत्वं न स्वभावेन। अतस्तत्र न्यूनशावस्यापि न पूर्वेण शुद्धिरिति वक्तुं स्वभावेत्युक्तम्। ब्राह्मेऽपि—'नागन्तुकैरथाहोभिराशौचमपनुद्यते। न च पातनिमित्तेन शवस्यान्यस्य शोधनम्॥' इति। एवं नव पक्षाः। यदा तु त्र्यहाद्यल्पाशौचमध्ये सजातीयं विजातीयं वा दीर्घकालमुत्तरं, तदाप्युत्तरं पूर्णं कार्यं न पूर्वेण शुद्धिः। 'स्वल्पाशौचस्य मध्ये तु दीर्घाशौचं भवेद्यदि। न पूर्वेण विशुद्धिः स्यात् स्वकालेनैव शुध्यति॥' इत्युशनसोक्तेः। तेन त्र्यहादिशावमध्ये दशाहादिसूतकेऽपि न पूर्वेण शुद्धिरित्यपरार्कः। शावनिमित्तमस्पृश्यत्वं च भवत्येव। शुद्धिविवेके तु —'शावेन शुध्यते सूतिः इति प्रागुक्तेस्तत्राप्युत्तराशौचनिवृत्तिरुक्ता। तन्न उत्तरस्य कालाधिक्येन बलवत्त्वात्। माधवीये यमोऽपि—'अघवृद्धिमदाशौचं पश्चिमेन समापयेत्। यथा त्रिरात्रे प्रक्रान्ते दशाहं प्रविशेद्यदि॥ आशौचं पुनरागच्छेत्तत्समाप्य विशुध्यति॥' हारीतोऽपि—'गुरुणा लघु शुध्येत्तु लघुना नैव तद्गुरु। इति। गुरुत्वं लघुत्वं च कालकृतमेव। पर्वानुरोधात्। एतच्च हरदत्तेन स्पष्टमुक्तम्। मिताक्षरायामप्येवम्। यत्तु 'अघानां यौगपद्ये तु ज्ञेया शुद्धिर्गरीयसी। मरणोत्पत्तियोगे तु गरीयो मरणं भवेत्॥, इति हारीतकौर्मादि। तत्रास्पृश्यत्वाभिप्रायं शावस्य गुरुत्वं ज्ञेयम्।

क्वचिदल्पकालेनापि दीर्घकालाशौचनिवृत्तिमाह देवलः—'परतः परतः शुद्धिरघवृद्धौ विधीयते। स्याच्चेत्पञ्चतमादह्नः पूर्वेणैवात्र शिष्यते॥' अस्यार्थः। अघवृद्धौ दीर्घाशौचे परतो शुद्धिः परमाशौचम्। यदि पूर्वाशौचमुत्तरस्य पञ्चमदिनात्परतोऽनुवर्तते तदा पूर्वेणैव शुद्धिः। पूर्वस्योत्तराशौचार्धाधिककालव्यापित्वे पूर्वशेषाच्छुद्धिरित्यर्थः। यथा षष्ठे मासे गर्भपातनिमित्तषडहाशौचमध्ये दशाहपाते पूर्वेणोत्तरनिवृत्तिः। यथा वा त्र्यहमध्ये स्रावपातनिमित्तचतुरहपञ्चाहयोरिति कश्चित्। तन्न। दशाहावधि पूर्वशेषशुद्ध्यावेदकवाक्यविरोधात्। षष्ठादिदिने पूर्णाशौचमन्त्यरात्रौ तु द्व्यह इत्यनौचित्याच्च। अस्मद्गुरवस्तु-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पञ्चतमादह्न आशौचं ततो न्यूनं त्र्यहादि चेत्स्यादस्मिन्विषये पूर्वशेषेणैवा-शुद्धिः शिष्यते । दशाहादिरात्रिशेषे त्र्यहादिपाते त्र्यहाद्यल्पाशौचानां परस्परं रात्रिशेषे संपाते च न द्व्यहादिवृद्धिरित्यर्थमाहुः । क्वचित्पूर्व-शेषेण शुद्धेरपवादमाह गौतमः—'रात्रिशेषे सति द्वाभ्यां, प्रभाते तिसृभिः' इति । प्रभातेऽन्त्ययामे । रात्रिशेषे द्व्यहाच्छुद्धिर्यामशेषे शुचि-स्त्र्यहात् ।' इति शातातपोक्तेः । इदं शावान्ते सूतकपाते सजातीये वा तुल्यम् । अत्र केचित् । रात्रिशब्दोऽहोरात्रपरः । 'अहःशेषे द्वाभ्यां प्रभाते तिसृभिः' इति शङ्खलिखितोक्तेः । 'अथ यदि दशरात्राः सन्निपतेयुराद्यं दशरात्रमाशौचमानवमाद्दिवसादत ऊर्ध्वं द्विरात्रेण व्युष्टायां त्रिरात्रेण' इति बौधायनोक्तेः । 'पुनःपाते दशाहात्प्राक् पूर्वेण सह गच्छति । दशमेऽह्नि पतेद्यस्याहद्वयात्स विशुध्यति ॥' इति । प्रभाते तु त्रिरात्रेण दशरात्रेष्वयं विधिः ।' इति देवलोक्तेश्च । नवमदशमशब्दौ चोपान्त्यदिनपरौ । तेन क्षत्रियादावपि तथेत्याहुः । माधवीयेऽप्येवम् ।

अन्ये त्वाहुः—'अन्तर्दशाहे स्यातां चेत्पुनर्मरणजन्मनी । तावत्स्या-दशुचिर्विप्रो यावत्तत्स्यादनिर्दशम् ॥' इति 'मनुपराशराद्यैर्दशमदिनेनो-त्तरस्य शुद्धेरुक्तत्वाद्विरोधः स्पष्ट एव । विरोधे च—'यद्वै किञ्चन मनुर-वदत्तद्भेषजम्', 'कलौ पाराशरस्मृतिः' इत्यनेन पूर्ववचसां बाधः । अत एव वाचस्पतिना तेषामनाकरत्वमुक्तम् । साकरत्वेऽपि जातिमात्रविप्रादि-विषयं देशान्तरविषयं वा युगान्तरविषयं वास्तु । तेन गौतमीये रात्रि-शब्दो नाहोरात्रपरः । 'रात्रिमात्रावशिष्टे' इति मिताक्षरोक्तेश्च न कुक-विकृतेरिवान्यथा व्याख्या युक्ता । माधवस्तु 'अनिर्गतदशाहम्' इति पूर्वस्वग्रन्थविरोधादुपेक्ष्य इति । अस्मत्पितृचरणास्तु बौधायनीये—'आनवमाद्दिवसात्' इति द्वितीयाशौचस्य नवमं दिनं प्रथमस्य दशम-मेवाह । त्र्यहादिवृद्धेः पूर्वशेषापवादत्वात् । तस्य च न्यायतो द्वितीय-दिनादेव प्रवृत्तेः, अत ऊर्ध्वमिति दशमरात्रिपरम् । शङ्खलिखितोक्तौ देवलोक्तौ चाहःशेषे दशमेऽह्नि चातीते रात्रौ पतेदित्यर्थः । दशम्यां पिता नाम कुर्यादितिवत् । तेन न मन्वाद्यैर्विरोधो नापि मिताक्षराद्यै-रित्याहुः । अपरार्के निर्णयामृतस्वरसोऽप्येवम् । यत्तु तत्रैव ब्राह्मे—'आद्यं भागद्वयं यावत्सूतकस्य तु सूतकम् । द्वितीयं पतति त्वाद्यात्सूत-काच्छुद्धिरिष्यते ॥ अत ऊर्ध्वं द्वितीयात्तु सूतकान्ताच्छुचिः स्मृतः । एवमेव विचार्यं स्यान्मृतके मृतकान्तरम् । मृतकस्यान्तरे यत्र सूतकं प्रतिपद्यते । सूतकस्यान्तरे वाथ मृतकं यत्र विद्यते ॥ मृतकान्ते भवेत्तत्र

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

शुद्धिर्वर्णेषु सर्वशः ॥' इति । अस्यार्थस्तत्रैवोक्तः । पूर्वाशौचचरमाहोरात्रस्य दिनरूपे आद्यभागद्वयेऽन्याशौचपाते पूर्वेण शुद्धिः । भागद्वयोर्ध्वं रात्रौ सूतकान्तरे द्वितीयात्पूर्वभिन्नात्सूतकान्ताद्व्यहादिरूपाच्छुद्धिरिति । अपरार्के त्वाशौचकालं त्रेधा विभज्य निर्गुणविषयत्वेनेदमुक्तम् । अस्य वचनस्य निर्मूलत्वोक्तिरज्ञोक्तिरेव । अतः पूर्वाशौचान्त्यरात्रावन्याशौचेऽहोरात्रद्वयमधिकं रात्रेरन्त्ययामे तु दिनत्रयमिति भट्टचरणोपदिष्टः पन्थाः । एतत्संपूर्णाशौचसंपाते एव । रात्रिशेषे त्रिरात्रादिसंपाते तु पूर्वशेषेणैव शुद्धिः । द्विरात्रादिवृद्धेः पूर्ववाक्यैर्दशाहविषयत्वादपवादाभावे शेषशुद्ध्यरेव सामान्यतः प्रवृत्तेः । षडशीतौ तु दशाहान्ते त्र्यहपातेऽपि द्वित्रिदिनवृद्धिरुक्ता 'रात्रिशेषे यदाशौचं पूर्वानधिकमापतेत् । ऊर्ध्वं दिनद्वयं पूर्वाद्यामशेषे दिनत्रयम् ॥' इति । अनधिकं समं न्यूनं वा । तत्तुच्छम् । निर्मूलत्वादन्ते पक्षिण्यादिपातेऽपि द्विरात्रादिवृद्ध्यापत्तेश्च । पूर्वाशौचान्तर्वर्धितद्वित्रिदिनमध्येऽधिकाशौचान्तरपाते तु वर्धितस्याल्पत्वादधिकेनैव शुद्धिः । नच वर्धितस्य पूर्वशेषत्वं शङ्कनीयम् । रात्रिशेषपूर्वशेषशुद्ध्यपवादे नैमित्तिकावृत्तिन्यायोज्जीवनात् । अपवादाभावे उत्सर्गस्य प्राप्तेः ।

अपवादान्तरमाह शङ्खः—'मातर्यग्रे प्रमीतायामशुद्धौ म्रियते पिता । पितुः शेषेण शुद्धिः स्यान्मातुः कार्या तु पक्षिणी ॥' पादत्रयं स्पष्टम् । तुर्यस्य त्वयमर्थः—पित्राशौचमध्ये मातृमृतौ पित्राशौचान्ते मातुः पक्षिणीमधिकां कुर्यादिति । अत्राशुद्धावित्युक्तेरात्सहादेः पितुराशौचाभावान्मातृमरणे न पक्षिणी किन्तु पूर्णमेवाशौचम् । इयं च पक्षिणी तृतीयादिदिनपरा, नाद्यदिनद्वये प्रतिनिमित्तनैमित्तिकावृत्तिन्यायापवादत्वादिति पितृचरणाः । सपिण्डाद्याशौचेन मातापित्रोराशौचापगमो नास्त्येव । एवं भर्तुरपि । इयं च पक्षिणी दशमदिनात्पूर्वं मातृमरणे ज्ञेया । दशम्यां रात्रौ तत्प्रभाते वा मातृमरणे द्व्यहत्र्यहसमुच्चिता पक्षिणीति कश्चित् । तन्न । संख्यान्तरोपजननापत्त्या त्र्यहादिश्रुतिबाधापत्तेः । अत एवैकादेया षड्देया इत्यादौ श्रुतसंख्याबाधापत्तेः समुच्चयो निरस्तो द्वादशे । गुरुणि लघोरन्तर्गतेः 'गुरुणा लघु शुद्ध्येत्' इत्युक्तेश्च ।

यदा नारी विशेदग्निं प्रियस्य प्रियवाञ्छया । तदाशौचं विधातव्यं भर्त्राशौचक्रमेण हि ॥' इति पृथ्वीचन्द्रोदये लघुहारीतोक्तेः । तत्रैव षडशीतिमतेऽपि—'मृतं पतिमनुव्रज्य पत्नी चेदनलं गता । न तत्र पक्षिणी कार्या पैतृकादेव शुध्यति ॥ पुत्रोऽन्यो वाग्निदस्तस्यास्तावदेवाशुचिस्तयोः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नवश्राद्धं सपिण्डं च युगपत्तु समापयेत्:।।' गृहीताशौचानां पुत्राणां पितुः संस्कारे मातुः सपिण्डस्य वा मरणे नायं निर्णयः। अतिक्रान्तकालाद्विद्यमाननिमित्तस्य बलवत्त्वात्। द्वादशवर्षोत्तरसंस्काराशौचमध्ये सपिण्डमरणे प्येवम्। यत्तु अपरार्के ब्राह्मे—'ऋग्वेदवादात्साध्वी स्त्री न भवेदात्मघातिनी। त्र्यहाशौचे निवृत्ते तु श्राद्धं प्राप्नोति शास्त्रवत्।।' इति, तद्भर्तुराशौचोत्तरमन्वारोहणे त्रिरात्राशौचपरमिति पृथ्वीचन्द्रः। ब्राह्मणादेः क्षत्रियाद्यनुगमनेऽल्पाशौचपरमित्यपरार्कः। शुद्धितत्त्वादयो गौडास्तु—'भर्तुराशौचोत्तरमन्वारोहणे त्रिरात्रम्। सहगमने तु संपूर्णम्। एकचितौ तु सद्यः शौचेऽन्वारोहणे ब्राह्मोक्तेस्त्रिरात्रत्वात्। भर्तुरपि त्र्यहेण पिण्डदानम्। एकचितौ तु सद्यः शौचमित्याहुः। अन्यत्प्रागुक्तम्।

पूर्वशेषेण शुद्धेरपवादान्तरमुक्तं षडशीत्याम्—'पूर्वाशौचेन या शुद्धिः सूतके मृतके च सा। सूतिकामग्निदं हित्वा प्रेतस्य च सुतानपि।।' निर्णयामृते स्मृतिसंग्रहेऽपि—'इयं विशुद्धिरुदिता सूतिकामग्निदं विना।।' इदं मूल्येन दाहकरणे। मातुलादिसम्बन्धेन दाहमात्रकरणे तु त्रिरात्रमेवेत्युक्तं प्राक्। वृद्धात्रिः—'सूतकाद्द्विगुणं शावं शावात् द्विगुणमार्तवम्। आर्तवाद्द्विगुणा सूतिस्ततोऽपि शवदाहकः।।' तथाशौचसंपाते न शावजननिमित्तकार्यप्रतिबन्धः। 'आशौचे तु समुत्पन्ने पुत्रजन्म यदा भवेत्। कार्तुस्तात्कालिकी शुद्धिः पूर्वाशौचेन शुध्यति।।' इति प्रजपतिस्मृतेः। आशौचे तु द्विविधेऽपि शातातपः—'अन्तर्दशाहे जननात्पश्चात्स्यान्मरणं यदि। प्रेतमुद्दिश्य कर्तव्यं पिण्डदानं यथाविधि।। प्रारब्धे प्रेतपिण्डे तु मध्ये चेज्जननं भवेत्। तथैवाशौचपिण्डांस्तु शेषान्दद्याद्यथाविधि।।' मातुः पक्षिणीमध्ये पितुरेकादशाहं कुर्यात्। 'आद्यं श्राद्धमशुद्धोऽपि कुर्यादेकादशेऽहनि।' इति स्मृतेः। केचित्त्विदं क्षत्रियादिपरम्, विप्रादेस्त्वाशौचान्तर एकादशाहश्राद्धं नेत्याहुः अत एव विज्ञानेश्वरेण—'दशमं पिण्डमुत्सृज्य रात्रिशेषे शुचिर्भवेत्। इति शुचित्वं महैकोद्दिष्टाङ्गविप्रनिमन्त्रणपरमिति वदता तत्र शुद्धेरङ्गत्वं दर्शितम्। एवं वृषोत्सर्गशय्यादावपि। देवयाज्ञिकेन त्वाशौचान्तरेऽपि भवत्येवेत्युक्तम्।

अथाशौचापवादः। स च पञ्चधा। कर्तृतः, कर्मतः, द्रव्यतः, मृतदोषतः विधानञ्च। आद्यो ब्रह्मचारियत्यादिषु। 'नैष्ठिकानां वनस्थानां यतीनां ब्रह्मचारिणाम्। नाशौचं कीर्तितं सद्भिः पतिते च तथा मृते।।' इति कौर्मोक्तेः। तुर्यपादे 'शावे वापि तथैव च' इति देवलपाठः। आशौचमन्त्यकर्मोपलक्षणम्। 'ब्रह्मचारी न कुर्वीत शववाहादिकाः क्रियाः। यदि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कुर्याच्चरेत्कृच्छ्रं पुनःसंस्कारमेव च ॥' इति देवलोक्तेः । एतत्पित्राद्यतिरिक्तविषयम् । 'आचार्यं स्वमुपाध्यायं मातरं पितरं गुरुम् । निर्हृत्य तु व्रती प्रेतं न व्रतेन वियुज्यते ॥' इति मनुक्तेः । हारीतः—'मातापित्रोस्तु यत्प्रोक्तं ब्रह्मचारी तु पुत्रकः । व्रतस्थोऽपि हि कुर्वीत पिण्डदानोदकक्रियाम् ॥ भवत्यशौचं नैवास्य नैवाग्निस्तस्य लुप्यते । स्वाध्यायं च प्रकुर्वीत पूर्ववद्विधिदर्शितम् ॥' संवर्तः—'अन्यगोत्रोपसम्बन्धः प्रेतस्याग्निं ददाति यः । पिण्डं चोदकदानं च स दशाहं समाचरेत् ॥' निर्हरणमन्त्यकर्मपरम् । एवं मातामहस्य 'यथा व्रतस्थोऽपि सुतः पितुः कुर्यात् क्रियां नृप । तथा मातामहस्यापि दौहित्रः कर्तुमर्हति ॥' इत्यपरार्के भविष्योक्तेः । 'मातापित्रोरुपाध्यायाचार्ययोरौर्ध्वदेहिकम् । कुर्वन्मातामहस्यापि व्रती न भ्रश्यते व्रतात् ॥' इति कालादर्शाच्च । तत्रान्त्यकर्मनिमित्तमस्पृश्यत्वं दशाहमस्त्येव । 'सगोत्रो वाऽसगोत्रो वा योऽग्निं दद्यात्सखे नरः । सोऽपि कुर्यान्नवश्राद्धं शुद्ध्यै तु दशमेऽहनि ॥' इति दिवोदासोक्तवचनात् । एतएव 'ब्रह्मचारिणः शवकर्मिणो व्रतान्निवृत्तिरन्यत्र मातापित्रोर्गुरोश्च' इति गौतमीये व्रतनिवृत्तेरेव पर्युदासो नाशौचस्य । संध्यादिकर्मलोपस्तु नास्ति 'न त्यजेत्सूतके कर्म ब्रह्मचारी स्वकं क्वचित् ।' इति छन्दोगपरिशिष्टात् । 'पित्रोर्गुरोर्विपत्तौ तु ब्रह्मचार्यपि यः सुतः । सव्रतश्चापि कुर्वीत अग्निपिण्डोदकक्रियाम् ॥ तेनाशौचं न कर्तव्यं संध्या चैव न लुप्यते । अग्निकार्यं च कर्तव्यं सायं प्रातश्च नित्यशः ॥' इति चन्द्रिकायां संवर्तोक्तेश्च अत्र कर्मानधिकाररूपाशौचनिषेध एव । अपरार्कमाधवादयस्तु एकाहमाशौचमाहुः—'आचार्यं वाप्युपाध्यायं गुरुं वा पितरं च वा । मातरं वा स्वयं दग्ध्वा व्रतस्थस्तत्र भोजनम् ॥ कृत्वा पतति नो तस्मात्प्रेतान्नं तत्र भक्षयेत् । अन्यत्र भोजनं कुर्यान्न च तैः सह संवसेत् ॥ एकाहमशुचिर्भूत्वा द्वितीयेऽहनि शुध्यति ॥' इति ब्राह्मोक्तेः तदन्नभोजने तु प्रायश्चित्तं पुनरुपनयनमाशौचं च ।

दिवोदासादयस्तु ब्राह्मोक्तेः प्रथमेऽह्नि संध्यादिलोपः । 'ब्रह्मचारी यदा कुर्यात्पिण्डनिर्वपणं पितुः । तावत्कालमशौचं स्यात्पुनः स्नात्वा विशुद्ध्यति ॥' इति प्रजापतिवचनात् । द्वितीयाहादौ पिण्डदानकाले एवास्पृश्यत्वमात्रं नान्यदित्याहुः । दशाहमस्पृश्यत्वेऽपि कर्माङ्गस्नानविधानार्थमेतदिति युक्तम् । अन्त्यकर्माकरणे तु ब्रह्मचारिणः पित्रादिमरणेप्याशौचाभाव एव । सोऽपि ब्रह्मचर्यकाल एव । समावर्तनोत्तरं तु पूर्वमृतानां त्र्यहाशौचं भवत्येव । 'आदिष्टी नोदकं कुर्यादाव्रतस्य समा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पनात्। समाप्ते तूदकं दत्त्वा त्रिरात्रमशुचिर्भवेत् ॥' इति मनुक्तेः तत्रापि विकल्पः। पितर्यपि मृते नैषां दोषो भवति कर्हिचित्। आशौचं कर्मणोऽन्ते स्यात्त्र्यहं वा ब्रह्मचारिणाम् ॥' इति छन्दोगपरिशिष्टात्। तथा कृतजीवच्छ्राद्धेन किमप्याशौचं न कार्यमिति हेमाद्रिः। शुद्धितत्त्वे कौर्मे—'सद्यःशौचं समाख्यातं दुर्भिक्षे चाप्युपद्रवे। डिम्बाहवहतानां च विद्युता पार्थिवैर्द्विजः ॥' उपद्रवेऽत्यन्तमरके। 'उपसर्गमृते चैव सद्यःशौचं विधीयते।' इति पराशरोक्तेः। उपसर्गोऽत्यन्तमरक इति शूलपाण्यनिरुद्धभट्टादयः। याज्ञवल्क्योऽपि—'आपद्यपि च कष्टायां सद्यःशौचं विधीयते ॥' इति मरणसमयेऽपि नाशौचम्। तथा च शुद्धिरत्नाकरे दक्षः—'स्वस्थकाले त्विदं सर्वं सूतकं परिकीर्तितम्। आपद्गतस्य सर्वस्य सूतकेऽपि न सूतकम् ॥' अतः सति वैराग्ये संन्यासोऽप्यातुरस्य भवतीति केचित्।

अथ कर्मतः त्रिंशच्छ्लोक्याम्—'तत्तत्कार्येषु सत्रिव्रतिनृपनृपवद्दीक्षितर्त्विक्स्वदेशभ्रंशापत्स्वप्यनेकश्रुतिपठनभिषक्कारुशिल्प्यातुराणाम्। संप्रारब्धेषु दानोपनयनयजनश्राद्धयुद्धप्रतिष्ठाचूडातीर्थार्थयात्राजपपरिणयनाद्युत्सवेष्वेतदर्थे ॥' नाशौचमिति शेषः। सत्री अन्नसत्रवान्। मुख्यसत्रस्य दीक्षितपदात्सिद्धेः। व्रती अनन्तव्रतादिनियमवान्। 'न व्रतिनां व्रते' इति विष्णूक्तेः। प्रचेताः—'कारवः शिल्पिनो वैद्या दासी दासास्तथैव च। राजानो राजभृत्याश्च सद्यःशौचाः प्रकीर्तिताः ॥' कारवः सूपकाराद्याः। शिल्पिनश्चैलनिर्णेजकाद्याः। आतुरस्य व्याधिनाशार्थे दानादौ तुलादानादेः प्रारम्भो नान्दीश्राद्धं सङ्कल्पो वा। यजनं तडागोत्सर्गकोटिहोमादिः। लघुविष्णुः—'व्रतयज्ञविवाहेषु श्राद्धे होमेऽर्चने जपे। आरब्धे सूतकं न स्यादनारब्धे तु सूतकम् ॥ प्रारम्भो वरणं यज्ञे सङ्कल्पो व्रतसत्रयोः। नान्दीश्राद्धं विवाहादौ श्राद्धे पाकपरिक्रिया ॥' इति। पाकस्य परि समन्तात्क्रिया पाकप्रोक्षणमिति शुद्धिप्रदीपस्तन्मन्दम्। रूढेर्योगाद् बलवत्त्वात्। तीर्थेति आशौचे आकस्मिकतीर्थप्राप्तौ। 'विवाहदुर्गयज्ञेषु यात्रायां तीर्थकर्मणि। न तत्र सूतकं तद्वत्कर्म यज्ञादि कारयेत् ॥' इति पैठीनसिस्मृतेः। अत्र विशेषः प्रागुक्तः। जपः पुरश्चरणादिः। स्तोत्रपाठः अविच्छेदेन सङ्कल्पितहरिवंशश्रवणादिश्च। अत एवोक्तं ब्राह्मे—'गृहीतनियमस्यापि न स्यादन्यस्य कस्यचित् ॥' इति। एवं देवपूजादि। मदनपारिजाते यमोऽपि—'शिवविष्ण्वर्चनं दीक्षा यस्य चाग्निपरिग्रहः। श्रौतकर्माणि कुर्वीत स्नातः शुद्धिमवाप्नुयात् ॥' गौडशु-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

द्धितत्त्वे मन्त्रमुक्तावल्याम्-'जपो देवार्चनविधिः कार्यो दीक्षान्वितैर्नरैः। नास्ति पापं यतस्तेषा सूतकं वा यतात्मनाम् ॥' राघवभट्टीये नारदः—'अथ सूतकिनः पूजां वक्ष्याम्यागमचोदिताम्। स्नात्वा नित्यं च निर्वर्त्य मानस्या क्रियया तु वै ॥ बाह्यपूजाक्रमेणैव ध्यानयोगेन पूजयेत्। यदि कामो न चेत्कामी नित्यं पूर्ववदाचरेत् ॥' यत्तु नृसिंहकल्पे-'सदा मन्त्रजपंमुक्त्वा यदि स्यादशुचिर्नरः। मनसावहितस्तत्र स्मरेन्मन्त्रं न तूच्चरेत् ॥' तन्मूत्राद्याशौचपरम्। रामार्चनचन्द्रिकायाम्-, अशुचिर्वा शुचिर्वापि गच्छंस्तिष्ठन्स्वपन्नपि। मन्त्रैकस्मरणो विद्वान् मनसैव सदाभ्यसेत् ॥' कालनियमाभावे तु हेयमेव। उत्सवो रथयात्रादिः। एषु नाशौचम्। अयं चाशौचाभावोऽनन्यगतित्वे आर्तौ च ज्ञेयः। अत्र मूलमाकरे स्पष्टम्।

अत्र दीक्षितस्य अवभृथात्पूर्वमेवाशौचाभावः। तदादि त्वाशौचमस्त्येव। 'तेन वैतानोपासनाः कार्याः' इति वैतानत्वेप्यवभृथादि न भवत्येव। अतएवोक्तं माधवीये ब्राह्मे—'तद्वद्गृहीतदीक्षस्य त्रैविद्यस्य महामखे। स्नानं त्ववभृथे यावत्तावत्तस्य न सूतकम् ॥' इति। 'वैतानोपासनाः कार्याः' इत्यनेनैव सिद्धेऋत्विजां दीक्षितानां चेति पुनर्दीक्षितग्रहणं यजमाने स्वयंकर्तृत्वार्थं स्नान प्राप्त्यर्थं वेति विज्ञानेश्वरः। वस्तुतस्तु दीक्षणीयासंस्कृतस्य प्रागवभृथात्कर्मप्राप्त्यर्थं दीक्षितग्रहणम्। तेन ततः पूर्वं निषेध एव। यत्तु 'प्रारम्भो वरणं यज्ञे' इति, तदृत्विक्परम्। तथाच छन्दोगपरिशिष्टे-'न दीक्षिण्याः परं यज्ञे न कृच्छ्रादि तपश्चरन्।' इति शुद्धितत्त्वेप्येवम्। ऋत्विजां च मधुपर्कोत्तरमाशौचाभावः। 'गृहीतमधुपर्कस्य यजमानात्तु ऋत्विजः। पश्चादशौचे पतिते न भवेदिति निश्चयः॥' इति ब्राह्मात्। अतएव रामाण्डारः—'चतुर्णां वरणपक्षेऽन्येषामाशौचेऽन्य आगमयितव्यः' इत्याह। एवं स्मार्तेऽपि तुलाकोटिहोमादौ मधुपर्के सति दोषाभावो ज्ञेयः। यत्तु 'प्रारम्भो वरणं यज्ञे' इति, तत्रापि मधुपर्कान्तं ज्ञेयम्। तेनाधानेष्टिपशुबन्धादौ तदभावादन्ये भवन्तीति सिद्धम्।

अपवादान्तरमाह याज्ञवल्क्यः—'वैतानोपासनाः कार्याः क्रियाश्च श्रुतिचोदनात्' तत्र त्यागमात्रे स्नानोत्तरं स्वयंकर्तृत्वम्। श्रौते कर्मणि तत्कालं स्नातः शुद्धिमवाप्नुयात्।' इति स्मृतेः। त्यागातिरिक्ते तु श्रौते स्मार्ते चान्यस्यैव कर्तृत्वम्। 'सूतके मृतके चैव अशक्तौ श्राद्धभोजने। प्रवासादिनिमित्तेषु हावयेन्न तु हापयेत् ॥' इति बृहस्पत्युक्तेः। 'नित्यानि निवर्तेरन्वैतानवर्ज्यम्, शालाग्नौ चैकेऽन्य एतानि कुर्युः,' इति पैठीनसिस्मृतेश्चेति विज्ञानेश्वरः। एकग्रहणं पूजार्थम्। तेन स्मार्तं कार्यमेवेति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

हारलतायाम् । दाक्षिणात्यास्तु विकल्पमाहुः । अपरार्कादिनिबन्धास्तु—श्रौतं सर्वं स्वयं कार्यं, स्मार्तं तु त्यागारितिक्तेऽन्यस्यैव कर्तृत्वम् । त्यागमात्रे तु स्वस्य—'कर्म वैतानिकं कार्यं स्नानोत्स्पर्शवान् स्वयम् ।' इति हारीतोक्तेः । 'दर्शं च पूर्णमासं च कर्म वैतानिकं च यत् । सूतकेऽपि त्यजन्मोहात्प्रायश्चित्तीयते द्विजः ॥' इति मरीच्युक्तेः । 'जन्महान्योर्वितानस्य कर्मत्यागो न विद्यते । शालाग्नौ केवलो होमः कार्य एवान्यगोत्रजैः ॥' इति जाबालोक्तेश्चेत्याहुः । अपरार्केऽप्येवम् । याज्ञिका अप्येवम् । 'सूतके तु समुत्पन्ने स्मार्तं कर्म कथं भवेत् । पिण्डयज्ञं चरुं होममसगोत्रेण कारयेत् ॥' इति जातूकर्ण्योक्तेश्च । चरुः स्मार्तस्थालीपाकः । श्रवणाकर्मादिश्चेति विज्ञानेश्वरः । प्रारब्धं तु सपिण्डेनापि कार्यम् । 'नच तत्कर्म कुर्वाणैः सनाभ्योऽप्यशुचिर्भवेत् ।' इति मनूक्तेः । छन्दोगपरिशिष्टेऽपि—'होमः श्रौते तु कर्तव्यः शुष्कान्नेन फलेन वा । अकृतं हावयेत्स्मार्ते तदभावे कृताकृतम् ॥' अकृतं व्रीह्यादि । कृताकृतं तन्दुलादि । स्मार्तहोमादौ तु विकल्पो ज्ञेयः । 'शालाग्नौ चैके' इति प्रागुक्ते । यदा करणं तदान्यद्वारा ।

अत्रेदं तत्त्वम् । येषां बह्वृचादीनां द्वादशरात्रसहोमेऽपि नाग्निविच्छेदस्तैर्न कार्यम् । तैत्तिरीयाद्यैः कार्यम् । त्रिरात्रमहूयमानेऽग्निर्लौकिकः संपद्यते' इति सुदर्शनभाष्ये वचनात् । समारूढे त्वग्नौ तेनापि न कार्यम् । किन्तु पुनराधानमेव । समारोपप्रत्यवरोहयोराशौचापवादाभावादनन्यकर्तृकत्वाच्च । अन्यथा पुनराधानमपि स्यात् । यत्त्वाश्वलायनः 'तौ चापि सूतके शावे पर्वणीष्टिं महापदि । पुष्पवत्यां च भार्यायां न कुर्यात्तां कदाचन ॥ स्मार्ताग्निः सूतके शावे स्वयं न जुहुयाद्द्विजः । श्रौताग्निस्तु सकृद्धुत्वा समाप्ते वा स्वयं हुनेत् ॥' इति । तदपि समारूढपरम् । तदाह स एव—'स्मार्ताग्निरात्मनोऽन्येषामभावे सूतकादिषु । समारोप्य तदन्तेषु विहृत्य जुहुयात्स्वयम् ॥' इति । तथाच मनुः—'प्रत्यूहेन्नाग्निषु क्रियाः' इति वैश्वदेवस्य त्वग्निसाध्यत्वेऽपि वचनान्निवृत्तिः 'विप्रो दशाहमासीत वैश्वदेवविवर्जितः ।' इति संवर्तोक्तेः । यद्यपि—'पञ्चयज्ञविधानं तु न कुर्यान्मृतजन्मनोः । इति तेनैवोक्तेः । पूर्वनिषेधो व्यर्थस्तथाप्यापस्तम्बादीनां वैश्वदेवस्य पञ्चयज्ञभिन्नत्वात्पृथङ्निषेधः । हरदत्तस्त्वाशौचेऽपि बह्वृचैर्वैश्वदेवः कार्यः । 'तस्य द्वावनध्यायौ यदात्माशुचिर्यद्देशः' इति ब्रह्मयज्ञस्यैवाशौचे विशिष्य निषेधात् ।

सन्ध्यादीनामप्यपवादमाहापरार्के पुलस्त्यः—'संध्यामिष्टिं चरुं होमं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

यावज्जीवं समाचरेत् । न त्यजेत्सूतके वापि त्यजन् गच्छेदधो द्विजः ॥' सूतके मृतके चैव संध्याकर्म समाचरेत् । मनसोच्चारयेन्मन्त्रान्प्राणायाममृते द्विजः ॥' यत्तु चन्द्रिकायां जाबालः—'संध्या पञ्चमहायज्ञा नैत्यकं स्मृतिकर्म च । तन्मध्ये हापयेत्तेषां दशाहान्ते पुनः क्रिया ॥' इति । यच्च संवर्तः—'सूतके कर्मणां त्यागः संध्यादीनां विधीयते ।' यच्च विष्णुपुराणम्—'सर्वकालमुपास्या तु संध्ययोः पार्थिवेष्यते । अन्यत्र सूतकाशौचविभ्रमातुरभीतितः ॥' इति तत्पूर्णसंध्यापरम् । 'अर्घ्यान्ता मानसी संध्या कुशवारिविवर्जिता ।' इति शुद्धिदीपे च्यवनोक्तेः । पैठीनसिस्त्वर्घ्ये मन्त्रोच्चारणमाह । 'सूतके सावित्र्याञ्जलिं प्रक्षिप्य सूर्यं ध्यायन्नमस्कुर्यात्' । प्रयोगपारिजाते भारद्वाजोऽपि—'सूतके मृतके कुर्यात् प्राणायाममन्त्रकम् । तथा मार्जनमन्त्रास्तु मनसोच्चार्य मार्जयेत् ॥ गायत्रीं सम्यगुच्चार्य सूर्यायार्घ्यं निवेदयेत् । मार्जनं तु न वा कार्यमुपस्थानं न चैव हि ॥' ग्रहणे श्राद्धादावप्याशौचापवादमाह व्याघ्रः—'स्मार्तकर्मपरित्यागो राहोरन्यत्र सूतके ।' इति । लैङ्गेऽपि—'सूतके मृतके चैव न दोषो राहुदर्शने । तावदेव भवेच्छुद्धिर्यावन्मुक्तिर्न दृश्यते ॥ प्रयोगपारिजाते बृहस्पतिः—'कन्याविवाहे संक्रान्तौ सूतकं न कदाचन ।' वृद्धशातातपः—'यदा भोजनकाले तु अशुचिर्भवति द्विजः । भूमौ निक्षिप्य तं ग्रासं स्नात्वा विप्रो विशुद्ध्यति ॥ भक्षयित्वा तु तं ग्रासमहोरात्रेण शुद्ध्यति । अशित्वा सर्वमेवान्नं त्रिरात्रेण विशुद्ध्यति ॥' इदमविशेषात्सूतकादिपरमपीति शुद्धितत्त्वे शूलपाणौ च ।

अथ द्रव्यतः । मरीचिः—'लवणे मधुमांसे च पुष्पमूलफलेषु च । शाककाष्ठतृणेष्वप्सु दधिसर्पिःपयःसु च ॥ तिलौषधाजिने चैव पक्वापक्वे स्वयंग्रहः । पुण्येषु चैव सर्वेषु नाशौचं मृतसूतके ॥' स्वयमेव स्वाम्यनुज्ञया ग्राह्यं न तद्धस्तादित्यर्थः । क्रये तु तद्धस्तादपि न दोषः । पक्वं लड्डुकादि । अपक्वं तण्डुलादि । एतदन्नसत्रपरम् । 'अन्नसत्रे प्रवृत्तानामाममन्नमगर्हितम् । भुक्त्वा पक्वान्नमेतेषां त्रिरात्रं तु व्रती भवेत् ॥' इत्यङ्गिरसोक्तेः । पक्वान्नमोदनादि नतु भक्ष्यम् । षट्त्रिंशन्मते— 'उभाभ्यामपरिज्ञाते सूतकं नैव दोषकृत् । एकेनापि परिज्ञाते भोक्तुर्दोषमुपावहेत् ॥ विवाहोत्सवयज्ञेषुत्वन्तरा मृतसूतके । परैरन्नं प्रदातव्यं भोक्तव्यं च द्विजोत्तमैः ॥ भुञ्जानेषु तु विप्रेषु त्वन्तरा मृतसूतके । अन्यगेहोकदाचान्ताः सर्वे ते शुचयः स्मृताः ॥' बृहस्पतिः—'विवाहोत्सव-' इत्याद्युक्त्वा-'पूर्वसङ्कल्पितान्नेषु न दोषः परिकीर्तितः ।' षडशीतौ—'संसर्गाद्यस्य वाशौचं यस्याति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

क्रान्तकालता। तदीयस्य पदार्थस्य नाशौचं विद्यते क्वचित्॥' शुद्धितत्त्वे—'शुद्धयेत्' इत्यनुवृत्तौ विष्णुः—'प्रोक्षणेन च पुस्तकम्' इति।

अथ मृतदोषे हेमाद्रौ षट्त्रिंशन्मते कौर्मे च—'व्यापादयेद्य आत्मानं स्वयमग्न्युदकादिभिः। विहितं तस्य नाशौचं नापि कार्योदकक्रिया॥' शवदर्शनं यावदाशौचमस्यैव। 'हतानां नृपगोविप्रैरन्वक्षं चात्मघातिनाम्।' इति याज्ञवल्क्योक्तेः। शुद्धितत्त्वे कौर्मे—'सद्यःशौचं समाख्यातं शापादिमरणे तथा।' आदिपदादभिचारहते। भविष्ये—'स्वेच्छया मरणं विप्राच्छृङ्गिदंष्ट्रिसरीसृपैः। अन्त्यान्त्यजविषोद्बन्धैरात्मना चैव ताडनैः॥ पाखण्डमाश्रिताश्चैव महापातकिनस्तथा। स्त्रियश्च व्यभिचारिण्य आरूढपतितास्तथा। न तेषां स्नानसंस्कारौ न श्राद्धं न सपिण्डनम्॥' गौतमः—'प्रायोऽनाशकशस्त्राग्निविषोदकोद्बन्धनप्रपतनैश्चेच्छताम्' इति। नाशौचमिति शेषः। अङ्गिराः—'चण्डालादुदकात्सर्पाद्ब्राह्मणाद्वैद्युतादपि। दंष्ट्रिभ्यश्च पशुभ्यश्च मरणं पापकर्मणाम्॥ उदकं पिण्डदानं च प्रेतेभ्यो यत्प्रदीयते। नोपतिष्ठति तत्सर्वमन्तरिक्षे विनश्यति॥' षट्त्रिंशन्मतेऽप्येवम्। ब्राह्मेऽपि—'शृङ्गिदंष्ट्रिनखिव्यालविषवह्निक्रियाजलैः।' व्यालो गजः। 'सुदूरात्परिहर्तव्यः कुर्वन्क्रीडां मृतस्तु यः। नागानां विप्रियं कुर्वन्हतश्चाप्यथ विद्युता॥ निगृहीतः स्वयं राज्ञा चौर्यदोषेण कुत्रचित्। परदारान् हरन्तश्च द्वेषात्तु पतिभिर्हताः॥ असमानैश्च संकीर्णैश्चण्डालाद्यैश्च विग्रहम्। कृत्वा तैर्निहतास्तद्वच्चण्डालादीन्समाश्रिताः॥ शस्त्राग्निगरदाश्चैव पाखण्डाः क्रूरबुद्धयः। क्रोधात्प्रायं विषं वह्निं शस्त्रमुद्बन्धनं जलम्॥ गिरिवृक्षप्रपातं च ये कुर्वन्ति नराधमाः। कुशिल्पजीविनो ये च सूनालङ्कारधारिणः॥ मुखेभगास्तु ये केचित् क्लीवप्राया नपुंसकाः। ब्रह्मदण्डहता ये च ये चापि ब्राह्मणैर्हताः। महापातकिनो ये च पतितास्ते प्रकीर्तिताः॥ पतितानां न दाहः स्यान्नान्त्येष्टिर्नास्थिसञ्चयः। न चाश्रुपातः पिण्डो वा कार्यं श्राद्धादिकं क्वचित्॥ एतानि पतितानां तु यः करोति विमोहितः। तप्तकृच्छ्रद्वयेनैव तस्य शुद्धिर्न चान्यथा॥'

एतद्बुद्धिपूर्वं सर्वेषां करणे तु माधवीये वसिष्ठः—'य आत्मत्यागिनां कुर्यात्स्नेहात्प्रेतक्रिया द्विजः। स तप्तकृच्छ्रसहितं चरेच्चान्द्रायणव्रतम्॥' अज्ञाने तु—'कृत्वाग्निमुदकं स्नानं संस्पर्शं वहनं कथाम्। रज्जुच्छेदाश्रुपातं च तप्तकृच्छ्रेण शुध्यति॥' इति ज्ञेयम्। प्रत्येकं तु स्पर्शाश्रुणोर्मिताक्षरायाम्—'तच्छवं केवलं स्पृष्टमश्रु वा पतितं यदि। पूर्वोक्तानामकारी चेदेकरात्रमभोजनम्॥ एकरात्रं तु नाश्नीयात्त्रीत्रिरात्रं बुद्धिपूर्वकम्॥' इति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

माधवीये उत्तरार्धम् । अन्येषु तु संवर्तः—'एषामन्यतमं प्रेतं यो वहेत दहेत वा । कटोदकक्रियां कृत्वा कृच्छ्रं सान्तपनं चरेत् ॥' अज्ञाने त्वर्धम् । एतदनाहिताग्नेः । आहिताग्नेः कृच्छ्र एवेति माधवः । मिताक्षरायाम्—'आत्मनस्त्यागिनां नास्ति पतितानां तथा क्रिया । तेषामपि तथा गङ्गातोये संस्थापनं हितम् ॥'

आहिताग्नेस्तु विशेषो हेमाद्रौ, भविष्ये—'वैतानं प्रक्षिपेदप्सु आवसथ्यं चतुष्पथे । पात्राणि तु दहेदग्नौ साग्निके पापकर्मणि ॥' छन्दोगपरिशिष्टेऽपि— महापातकसंयुक्तो दौरात्म्याद्ग्निमान्यदि । पुत्रादिः पालयेदग्निन्युक्त आदोषसंक्षयात् ॥ प्रायश्चित्तं न कुर्याद्यः कुर्वन्वा म्रियते यदि । गृह्यं निर्वापयेच्छ्रौतमप्स्वस्येत्सपरिच्छदम् ॥ पात्राणि दद्याद्विप्राय दहेदप्स्वेव वाक्षिपेत् ॥' माधवीये पराशरः—'आहिताग्निर्मृतो विप्रश्चण्डालेनात्मघातकः । दहेत ब्राह्मणं विप्रो लोकाग्नौ मन्त्रवर्जितम् ॥ प्राजापत्यं चरेत्पश्चाद्विप्राणामनुशासनात् । दग्ध्वास्थीनि पुनर्गृह्य क्षीरेण क्षालयेत्ततः ॥ स्वेनाग्निना स्वमन्त्रेण पृथगेनं पुनर्दहेत् ॥' हेमाद्रौ तु—'दाहयित्वा शवं तेषां शूद्रैरविधिपूर्वकम् ।' इत्युक्तम् । एतद्दर्पादिना मरणे ज्ञेयम् । 'तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः ।' इति श्रुतावात्महनत्त एव दोषोक्तेः । प्रमादमरणे त्वाशौचादि सर्वं भवत्येव । तदाहाङ्गिराः—'अथ कश्चित्प्रमादेन म्रियेताग्न्युदकादिभिः । तस्याशौचं विधातव्यं कर्तव्या चोदकक्रिया ॥' ब्राह्मेऽपि—'प्रमादादपि निःशङ्कस्त्वकस्माद्विधिचोदितः । शृङ्गिदंष्ट्रिनखिव्यालविषविद्युज्जलादिभिः ॥ चण्डालैरथ वा चोरैर्निहतो वापि कुत्रचित् । तस्य दाहादिकं कार्यं यस्मान्न पतितस्तु सः ॥' इति । प्रमादमरणे त्रिरात्रमाशौचमिति गौडाः शुद्धितत्त्वादयः । दशाहादीति दाक्षिणात्याः । अस्यापवादो हेमाद्रौ भविष्ये— प्रमादादिच्छया वापि न कुर्यात्सर्पतो मृते ।' नागपूजां विना न कुर्यादित्यर्थः । बौधायनोऽपि—'बुद्धिपूर्वात्महन्तॄणां क्रियालोपो विधीयते ।' क्रियान्त्यकर्म ।

तत्र दुर्मरणनिमित्तं दानादि कार्यम् । तच्च विश्वप्रकाशादौ शातातपीये च—'व्याघ्रेण निहते विप्रे विप्रकन्यां विवाहयेत् । सर्पदष्टे नागबलिर्देयः सर्पश्च काञ्चनः ॥ चतुर्निष्कमितं हैमं गजं दद्याद्गजैर्हते । राज्ञा विनिहते दद्यात्पुरुषं तु हिरण्मयम् ॥ चोरेण निहते धेनुं वैरिणा निहते वृषम् । वृषेण निहते दद्याद्यथाशक्त्या तु काञ्चनम् ॥ शय्यामृते प्रदातव्या शय्या तूलीसमन्विता । निष्कमात्रसुवर्णस्य विष्णुना समधिष्ठिता ॥ शौचहीने

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

मृते चैव द्विनिष्कं स्वर्णजं हरिम्। संस्कारहीने च मृते कुमारनुपनाययेत्॥ निष्कत्रयं स्वर्णमितं दद्यादश्वं हयाहते। शुना हते क्षेत्रपालं स्थापयेन्निजशक्तितः॥ सूकरेण हते दद्यान्महिषं दक्षिणान्वितम्। कृमिभिश्च मृते दद्याद्गोधूमान्पञ्चखारिकाः॥ वृक्षं वृक्षहते दद्यात्सौवर्णं वस्त्रसंयुतम्। शृङ्गिणा निहते दद्याद्वृषभं वस्त्रसंयुतम्॥ शकटेन हते दद्याद्द्रव्यं सोपस्करान्वितम्। भृगुपातमृते चैव प्रदद्याद्धान्यपर्वतम्॥ अग्निना निहते कार्यमुदपानं स्वशक्तितः। दारुणा निहते चैव कर्तव्या सदने सभा। शस्त्रेण निहते दद्यान्महिषीं दक्षिणान्विताम्। अश्मना निहते दद्यात्सवत्सां गां पयस्विनीम्॥ वृषेण च मृते दद्यान्मेदिनीं हेमनिर्मिताम्। उद्बन्धनेन च मृते कपिं कनकनिर्मितम्॥ मृते जलेन वरुणं हैमं दद्याद् द्विनिष्कजम्। विषूचिकामृते स्वादु भोजयेच्च शतं द्विजान्॥ घृतधेनुः प्रदातव्या कण्ठान्नकवले मृते। कासरोगेण च मृते अष्टकृच्छ्रं व्रतं चरेत्। अतिसारमृते लक्षं गायत्र्यां प्रयतो जपेत्। शकिन्यादिग्रहग्रस्ते जपेद्रुद्रं यथोदितम्॥ विद्युत्पातेन निहते विद्यादानं समाचरेत्। अन्तरिक्षमृते कार्यं वेदपारायणं तथा॥ सच्छास्त्रपुस्तकं दद्यादस्पृश्यस्पर्शतो मृते। पतिते च मृते कुर्यात्प्राजापत्यांस्तु षोडश॥ मृते चापत्यरहिते कृच्छ्राणां नवतिं चरेत्। एवं कृते विधाने तु विदध्यादौर्ध्वदेहिकम्॥' इति।

तथा वैधमरणेऽपि न दोषः। तदाहतुर्मनुवृद्धगार्ग्यौ—'वृद्धः शौचमृते लुप्तप्रत्याख्यातभिषक्क्रियः। आत्मानं घातयेद्यस्तु भृग्वग्न्यनशनाम्बुभिः॥' तस्य त्रिरात्रमाशौचं द्वितीये त्वस्थिसञ्चयः। तृतीये तूदकं कृत्वा चतुर्थे श्राद्धमाचरेत्॥' इति। हेमाद्रौ विष्णुधर्मेऽपि—'नरस्तु व्याधिरहितो न त्यजेदात्मनस्तनुम्॥ असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसा वृताः। तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये केचात्महनो जनाः॥ अरिष्टैरात्मनो ज्ञात्वा मृत्युकालमुपस्थितम्। व्याधितो भिषजा त्यक्तः पूर्णे वायुषि चात्मनः॥ यथा युगानुसारेण संत्यजेदात्मनस्तनुम्। तस्मिन्काले तनुत्यागाद्यथेष्टं फलमाप्नुयात्॥ आयुषस्तु पुरा दृष्टं मरणं ब्राह्मणस्य च॥' नेति गौडानामपपाठः। उत्तरार्धे असङ्गतेः। 'क्षत्रियस्य तु संग्रामे मृते भर्तरि योषितः।' अपरार्के ब्रह्मगर्भः—'यो जीवितुं न शक्नोति महाव्याध्युपपीडितः। सोऽग्न्युदकं महायात्रां कुर्वन्नत्र न दुष्यति॥' अत्रोक्तवक्ष्यमाणवचोनिचयात्प्रयागातिरिक्तेऽचिकित्स्यरोगाद्युपहतानामधिकारः। सोऽपि जीर्णवानप्रस्थस्यैवेति विज्ञानेश्वरदेवयाज्ञिकादयः। अतएव मिताक्षरादौ भृगुपातानशनादिकं वानप्रस्थस्यैवोक्तम्। मनुरपि—'आसां महर्षिच-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

र्याणां त्यक्त्वान्यतमया तनुम्। वीतशोकभयो विप्रो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥' इति। तेनान्यत्रापि तद्विषयतैव मूलैक्यादिति केचित्। तन्न। वानप्रस्थमरणे आशौचनिषेधात्। तेन गृहस्थादिपरमेवेदम्। तेन यतेर्नाधिकारः। काम्येऽनधिकाराच्च। नैमित्तिकत्वे त्वकरणे दोषो नित्यता च स्यात्। प्रयागे त्वरोगिणां रोगिणां च। यत्तु—'शूद्राश्च क्षत्रिया वैश्या अन्त्यजाश्च तथाधमाः। एते त्यजेयुः प्राणान्वै वर्जयित्वा द्विजं नृप ॥ पतित्वा ब्राह्मणस्तत्र ब्रह्महा चात्महा भवेत् ॥' इति, तन्निर्मूलमिति भट्टाः। तत्त्वं तु हेमाद्रौ व्रतकाण्डेऽलिखनान्निर्मूलत्वं चिन्त्यमेव। प्रक्रमात्तु पतित्वेति भृगुपातमात्रपरं युक्तम्। ब्राह्मणस्याप्यनुज्ञातमिति वक्ष्यमाणविरोधाच्च। यत्त्वादित्यपुराणे—'अब्राह्मणो वा स्वर्गादिमहाफलजिगीषया। प्रविशेज्ज्वलनं तोयं करोत्यनशनं तथा ॥' इति, तत्प्रयागातिरिक्तपरमिति केचित्। हेमाद्रौ त्वेतदग्रे 'प्रयागवटशाखाग्रात्' इत्युक्तेर्ब्राह्मणस्य प्रयागेऽपि नेति प्रतीयते।

माधवीयेऽपरार्के चादित्यपुराणे—'दुश्चिकित्स्यैर्महारोगैः पीडितस्तु पुमानपि। प्रविशेज्ज्वलनं दीप्तं करोत्यनशनं तथा ॥ अगाधतोयराशिं च भृगोः पतनमेव च। गच्छेन्महापथं वापि तुषारगिरिमादरात् ॥ प्रयागवटशाखाग्राद्देहत्यागं करोति च। स्वयं देहविनाशस्य काले प्राप्ते महामतिः ॥ उत्तमान् प्राप्नुयाल्लोकानात्मघाती भवेत्क्वचित्। महापापक्षयात्स्वर्गे दिव्यान्भोगान्समश्नुते ॥ एतेषामधिकारस्तु सर्वेषां सर्वजन्तुषु। नराणामथ नारीणां सर्ववर्णेषु सर्वदा ॥ ईदृशं मरणं येषां जीवतां कुत्रचिद्भवेत्। आशौचं स्यान्त्र्यहं तेषां वज्रानलहते तथा ॥ वाराणस्यां म्रियेद्यस्तु प्रत्याख्यातभिषक्क्रियः। काष्ठपाषाणमध्यस्थो जाह्नवीजलमध्यगः। अविमुक्तोन्मुखस्तस्य कर्णमूलगतो हरः। प्रणवं तारकं ब्रूते नान्यथा कुत्रचित्क्वचित् ॥' हेमाद्रौ चैवम्। अत्र काले प्राप्ते इत्युक्तेरप्राप्तमरणकालायाः स्त्रिया अन्वारोहणे संपूर्णमेवाशौचम्। पृथ्वीचन्द्रस्त्वत्रापि त्र्यहमाह। शुद्धितत्त्वादिगौडग्रन्थेष्वप्येवम्।

एतच्च वृद्धादिमरणं कलौ निषिद्धम्। 'भृग्वग्निपतनैश्चैव वृद्धादिमरणं तथा इति।' इति माधवेन पृथ्वीचन्द्रेण च कलिवर्ज्येषूक्तेः। नचात्र यावदुक्तनिषेधः। विशिष्टोद्देशेवाक्यभेदात्। नच कलौ वानप्रस्थाश्रमनिषेधो व्यर्थ इति वाच्यम्। सर्ववर्णेष्वित्यादिभिस्तद्भिन्नस्यापि प्राप्तेः काम्यां भवत्येव 'यं वै तन्वं १ विसृजन्ति' इति श्रुतेः स्मृत्या संकोचायोगात्। नचेयं स्वाभाविकमृत्युपरा, धीरपदोक्तेः। मात्स्यभारतादिषु—

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'न लोकवचनात्तात न वेदवचनादपि। मतिरुत्क्रमणीया ते प्रयागमरणं प्रति ॥' इत्युक्तेः। अतएव विष्णुधर्मे रोग्यादिमरणमुक्त्वोक्तम्—'यथा युगानुसारेण सन्त्यजेदात्मनस्तनुम् ।' इति। काश्यामप्युक्तं मात्स्ये—'अग्निप्रवेशं ये कुर्युरविमुक्ते विधानतः। प्रविशन्ति मुखं ते मे निःसन्दिग्धं वरानने ॥' हेमाद्रौ विवस्वान्—'सर्वेन्द्रियवियुक्तस्य स्वव्यापाराक्षमस्य च। प्रायश्चित्तमनुज्ञातमग्निपातो महापथः॥ धर्मार्जनासमर्थस्य कर्तुः पापाङ्कितस्य च। ब्राह्मणस्याप्यनुज्ञातं तीर्थे प्राणविमोक्षणम् ॥' अपरार्के चैवम्। सहगमनं कलौ भवत्येव। 'कलौ नान्या गतिः स्त्रीणां सहानुगमनादृते ॥' इति ब्रह्मवैवर्तात्। एतेन मरणान्तिकप्रायश्चित्तं काशीखण्डादौ चातुर्वर्ण्यस्य। तनुत्यागविधयश्च युगान्तरपरा एव।

प्रयागेऽपि त्रिस्थलीसेतौ स्कान्दे—'यथाकथंचित्तीर्थेऽस्मिन्प्राणत्यागं करोति यः। तस्यात्मघातदोषो न प्राप्नुयादीप्सितान्यपि ॥' पाद्मे विष्णुः—'देहत्यागं तथा धीराः कुर्वन्ति मम सन्निधौ। मत्तनुं प्रविशन्त्येव न पुनर्जन्मने नराः ॥' कौर्मे—'व्याधितो यदि वा दीनो वृद्धो वापि भवेन्नरः। गङ्गायमुनमासाद्य यस्तु प्राणान्परित्यजेत् ॥ ईप्सितांल्लभते कामान्वदन्ति मुनिपुङ्गवाः ॥' तथा—'या गतिर्योगयुक्तस्य सत्वस्थस्य मनीषिणः। सा गतिस्त्यजतः प्राणान् गङ्गायमुनसङ्गमे ॥' वाराहे—'तत्र यो मुञ्चति प्राणान् वटमूलेषु सुन्दरि। सर्वलोकानतिक्रम्य मम लोकं प्रपद्यते ॥' तथा—'अकामो वा सकामो वा वटमूलेषु सुन्दरि। शीघ्रं प्राणान्प्रमुञ्चेत यदीच्छेत्परमां गतिम् ॥' तथा—'पञ्चयोजनविस्तीर्णे प्रयागस्य तु मण्डले। व्यतीतान् पुरुषान् सप्त भविष्यांश्च चतुर्दश ॥ नरस्तारयते सर्वान् यस्तु प्राणान्परित्यजेत् ॥' ब्राह्मे—'ध्यात्वा विष्णुपदाम्भोजं प्रयागे विष्णुतत्परः। तनुं त्यजति वै माघे तस्य मुक्तिर्न संशयः ॥ दुष्कृतोऽपि दुराचारो ब्रह्महत्यादिपातकी। हरिं ध्यात्वा त्यजेद्देहं प्रायशो मुक्तिमान्भवेत् ॥' भविष्योत्तरे—'समाः सहस्राणि तु सप्त वै जले दशैकमग्नौ पतने च षोडश। महाहवे षष्टिरशीतिगोग्रहे अनाशके भारत चाक्षया गतिः ॥' इति सामान्यतोऽपि फलम्। एवमन्येऽपि विधयो ज्ञेयाः। यत्तु गौडाः—'प्रयागादिमरणं ब्राह्मणभिन्नविषयमित्याहुस्तद्दूषणं पितामहचरणैः प्रयागविधौ कृतमिति नात्रोच्यते।

अत्र दशाहमाशौचम्। त्रिरात्रस्य प्राप्तकालगोचरत्वादिति भट्टाः। युक्तं तु त्रिरात्रम्। दिवोदासीयेऽप्येवम्। शुद्धितत्त्वेऽपि काश्यपः—'अनशनमृतानामशनिहतानामग्निजलप्रविष्टानां भृगुसंग्रामदेशान्तरमृतानां जात-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दन्तानां च त्रिरात्रम्' इति। एवं मरणान्तप्रायश्चित्तेऽपि। पूर्वोक्तश्चात्महादेर्दाहाशौचादिनिषेधस्तदानीमेव, वत्सरान्ते तु सर्वमौर्ध्वदेहिकं कुर्यात्। 'गोब्राह्मणहतानां च पतितानां तथैव च। ऊर्ध्वं संवत्सरात्कुर्यात्सर्वमेवौर्ध्वदेहिकम् ॥' इति हेमाद्रौ षट्त्रिंशन्मतात् ॥ एवंम्लेच्छीकृतानामपि गयाश्राद्धमपि कार्यम् । ब्रह्महा च कृतघ्नश्च गोघाती पञ्चपातकी । सर्वे ते निष्कृतिं यान्ति गयायां पिण्डपातनात् ॥' इत्यग्निपुराणात् । एवं ब्राह्मेऽपि–'क्रियते पतितानां तु गते संवत्सरे क्वचित् । देशधर्मप्रमाणत्वाद्गयाकूपे स्वबन्धुभिः ॥ मार्तण्डपादमूले वा श्राद्धं हरिहरौ स्मरन् ।' सूर्यपद इत्यर्थः ।

तत्र वर्षमध्ये कृत्यमुक्तमपरार्के वायुपुराणे—'शुक्लपक्षे तु द्वादश्यां कुर्यात् श्राद्धं तु वत्सरम् । द्वादशाहनि वा कुर्याच्छुक्ले च प्रथमेऽहनि ॥ छागलेयः—'नारायणबलिः कार्यो लोकगर्हाभयान्नरैः । तथा तेषां भवेच्छौचं नान्यथेत्यब्रवीद्यमः ॥' व्यासः—'नारायणं समुद्दिश्य शिवं वा यत्प्रदीयते । तस्य शुद्धिकरं कर्म तद्भवेन्नैतदन्यथा ॥' इति । स चात्मघातादिप्रायश्चित्तं कृत्वा कार्यः तदुक्तं हेमाद्रौ षट्त्रिंशन्मते—'कृत्वा चान्द्रायणं पूर्वं क्रिया कार्या यथाविधि । नारायणबलिः कार्यो लोकगर्हाभयान्नरैः ॥ पिण्डोदकक्रियाः पश्चाद्वृषोत्सर्गादिकं च यत् । एकोद्दिष्टानि कुर्वीत सपिण्डीकरणं तथा ॥' दिवोदासीये वृद्धशातातपस्तु—'पतिते च मृते शुद्ध्यै प्राजापत्यांस्तु षोडश । मृते चापत्यरहिते कृच्छ्राणां नवतिं चरेत् ॥' इत्याह । इदं प्रायश्चित्तार्हपित्रादिविषयम् । इन्द्रियैरपरित्यक्ता ये च मूढा विषादिनः । घातयन्ति स्वमात्मानं चाडालादिहताश्च ये ॥ तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च दयया समभिप्लुताः । यथा श्राद्धं प्रतन्वन्ति विष्णुनामप्रतिष्ठितम् ॥ तथा ते संप्रवक्ष्यामि नमस्कृत्य स्वयंभुवे ॥' इति हेमाद्रौ तेनैवोक्तेः। तत्रैव बौधायनोऽपि—'नारायणबलिं व्याख्यास्यामः–(चण्डालादुदकात्सर्पाद्ब्राह्मणाद्वैद्युतादपि। दंष्ट्रिभ्यश्च पशुभ्यश्च मरणं पापकर्मणाम् ॥ विषशस्त्ररज्जुपाषाद्देशान्तरमृते वा') अभिशस्तपतितसुरापात्मत्यागिनां ब्राह्मणहतानां च द्वादशवर्षाणि त्रीणि वा कुर्वीत' इति ॥

गृह्यपरिशिष्टे तु–चण्डालादित्याद्युक्त्वा 'दग्ध्वा शरीरं प्रेतस्य संस्थाप्यास्थीनियत्नतः । प्रायश्चित्तं तु कर्तव्यं पुत्रैश्चान्द्रायणत्रयम् ॥' इत्युक्तम् । मदनरत्ने ब्राह्मे—'प्रमादादपि निःशङ्कस्त्वकस्माद्विधिचोदितः । चाण्डालैर्ब्राह्मणैश्चौरैर्निहतो यत्र कुत्रचित् ॥ तस्य दाहादिकं कार्यं यस्मान्न पतितस्तु सः । चान्द्रायणं तप्तकृच्छ्रद्वयं तस्य विशुद्धये ॥ यद्वा कृच्छ्रान्पञ्च

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दश कृत्वा तु विधिना दहेत्। बुद्धिपूर्वमृतानां तु त्रिंशत्कृच्छ्रं समाचरेत् ॥' इत्युक्तम्। स्मृतिरत्नावल्यां तु—'द्विगुणं प्रायश्चित्तं कृत्वार्वागप्यब्दात्सर्वं कार्यम्' इत्युक्तम् 'आत्मनो घातशुद्ध्यर्थं चरेच्चान्द्रायणद्वयम्। तप्तकृच्छ्रचतुष्कं च त्रिंशत्कृच्छ्राणि वा पुनः ॥ अर्वाक् संवत्सरात्कुर्याद्दहनादि यथोदितम्। कृत्वा नारायणबलिमनित्यत्वात्तदायुषः ॥' इति। इदं चात्मवधनिमित्तं तज्जातीवधप्रायश्चित्तेन समुच्चितं कार्यम्। अतएव बौधायनोक्तं 'द्वादश वर्षाणि त्रीणि वा' इति। मदनपारिजाते स्मृत्यर्थसारे च—'ब्रह्महादीनां तद्योग्यं प्रायश्चित्तं कृत्वा नारायणबलिः कार्यः' इत्युक्तम्। एवं म्लेच्छाकृतानामपि। यत्तु कश्चिदाह—'पुत्रकृतेन प्रायश्चित्तेन पितुः पापनाशे मानाभावः, आत्मघाते वचनादस्तु, महापातके तु कथं स्यादिति। सः स्वयमेवात्मवधप्रायश्चित्तस्य जातिवधनिमित्तेन समुच्चयं वदन् हृदयशून्य एव। नहि जातिवधनिमित्तं पुत्रैः कार्यमिति वचनमस्ति। पुत्रकर्तृकसर्वप्रायश्चित्तादिविलयापत्तेः प्रागुक्तबौधायनवचनाच्चेति दिक्। इदं प्रायश्चित्तानर्हाणां तु पतितोदकमात्रं कार्यम्' इति केचित्। मदनपारिजातादिस्वरसोऽप्येवम्। वस्तुतस्तु—'तदर्हानर्हयोर्वचनेऽनुपादानादविशेषात्तत्रापि नारायणबलिर्गयाश्राद्धं चेति युक्तम्।

पतितोदकविधिस्तु 'पित्राद्यतिरिक्तविषयः' इत्यपरे। स यथा हेमाद्रौ ब्राह्मे—'पतितस्य तु कोऽप्याद्यस्तृप्तिं कर्तुमिच्छति। स हि दासीं समाहूय सर्वगां दत्तवेतनाम् ॥ अशुद्धघटहस्तां तां यथावृत्तं ब्रवीत्यपि। हे दासि गच्छ मूल्येन तिलानानय सत्वरम् ॥ तोयपूर्णं घटं चेमं सतिलं दक्षिणामुखी। उपविष्टा तु वामेन चरणेन ततः क्षिप ॥ कीर्तयेः पातकीसंज्ञां त्वं पिबेति मुहुर्वदेः। निशम्य तस्य वाक्यं सा लब्धमूल्या करोति तत् ॥ एवं कृते भवेत्तृप्तिः पतितानां च नान्यथा ॥' इति। इदं च मृताहे कार्यम्। पतितस्य दासी मृताह्नि यदा घटमपवर्जयेदेतावतायमुपचरितो भवतीति मदनरत्ने विष्णूक्तेः। इदं चात्मत्यागिविषयम्। आत्मत्यागिनः पतितास्ते नाशौचोदकभाजः स्युरित्युपक्रम्य विष्णुना एतस्याभिधानादिति गौडाः। यत्तु कश्चिदाह—'यः पतितो घटस्फोटेन बान्धवैर्बहिष्कृतस्तद्विषयाणि क्रियानिषेधवाक्यानि। जीवत्येव तस्मिन्नन्त्यकर्मणः कृतत्वात्तत्पुनःकरणाभावात्' इति स बन्धुत्यागेन जातवैराग्यस्य कृतप्रायश्चित्तस्याप्यकरणापत्तेर्मिताक्षरादिविरोधमपश्यन् मूर्ख इत्युपेक्षणीयः। नच कृतघटस्फोटस्य संग्रहविधिर्नेति वाच्यम्। मनुनाऽकृतघटस्फोटस्य त्यागमुक्त्वा—'प्रायश्चित्ते तु चरिते पूर्णं कुम्भमपां नवम्। तेनैव सार्धं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्रास्येयुः स्नात्वा पुण्ये जलाशये ॥' इत्युक्तेः अन्यथा प्रायश्चित्तमात्रे एतत्प्रसङ्गात् । अतो घटस्फोटेन बहिष्कृतस्यापि पित्रादेरब्दान्ते नारायणबलिः । निषेधास्तु पितृव्यादिपरा इति तत्त्वम् । केचित्तु नारायणबलौ कृतेऽप्यन्त्यकर्म सपिण्डनवर्जं कार्यम् । 'गोब्राह्मणहतानां च पतितानां तथैव च । व्युत्क्रमाच्च प्रमीतानां नैव कार्या सपिण्डता ॥' इति वचनात् । 'ब्राह्मणादिहते ताते पतिते सङ्गवर्जिते ।' इति श्राद्धप्रकारोक्तेश्चेत्याहुः । ते हेमाद्रिस्थपूर्वोक्तषट्त्रिंशन्मतविरोधान्निर्मूलत्वाच्छ्राद्धप्रकारस्य वृद्धिश्राद्धविषयत्वादुपेक्ष्याः ॥

नारायणबलिस्तु हेमाद्र्याद्यनुसारेणोच्यते ॥ तत्रादौ क्रियानिबन्धे गारुडे तर्पणमुक्तम् 'कार्यं पुरुषसूक्तेन मन्त्रैर्वा वैष्णवैरपि । दक्षिणाभिमुखो भूत्वा प्रेतं विष्णुमिति स्मरन् ॥ अनादिनिधनो देवः शङ्खचक्रगदाधरः । अक्षय्यः पुण्डरीकाक्षः प्रेतमोक्षप्रदो भव ॥' इति । शुक्लैकादश्यां देशकालौ संकीर्त्यामुकगोत्रस्यामुकस्य दुर्मरणात्मघातजदोषनाशार्थमौर्ध्वदेहिकसंप्रदानत्वयोग्यतासिद्ध्यर्थं नारायणबलिं करिष्ये इति संकल्प्य । ब्रह्माणं विष्णुं शिवं यमं प्रेतं च पञ्चकुम्भेषु । 'विष्णुः स्वर्णमयः कार्यो रुद्रस्ताम्रमयस्तथा ॥ ब्रह्मा रौप्यमयस्तत्र यमो लोहमयो भवेत् ॥ प्रेतो दर्भमयः कार्य इति देवप्रकल्पना ॥' इति गारुडोक्तासु सर्वासु हैमीषु वा प्रतिमासु षोडशोपचारैः पुरुषसूक्तेनाभ्यर्च्याग्निं प्रतिष्ठाप्य चरुं पुरुषसूक्तेन प्रत्यृचं नारायणायेदमिति हुत्वा देवानामग्ने दक्षिणाग्रदर्भेषु विष्णुरूपं प्रेतं स्मरन् नामगोत्राभ्यां मधुघृततिलयुतान् दश पिण्डान् यज्ञोपवीत्येवामुकगोत्रामुकशर्मन् प्रेत विष्णुपायं ते पिण्ड उपतिष्ठतामिति दत्त्वा पुरुषसूक्तेनाभिमन्त्र्य तेनैव शङ्खोदकेनाभिषिच्याभ्यर्च्य अमुकशर्माणममुकगोत्रं विष्णुरूपं प्रेतं तर्पयामि इति पुरुषसूक्तेन प्रत्यृचं तर्पयित्वा एकसामान्नं ब्रह्मादिपञ्चभ्यो दद्यात् ॥ मन्त्रस्तु—'ब्रह्मविष्णुमहादेवा यमश्चैव सकिंकरः । बलिं गृहीत्वा कुर्वन्तु प्रेतस्य च शुभां गतिम् ॥' इति । मिताक्षरायां तु होमबल्यादि नोक्तम् । ततः प्रतिदैवतं त्रिविधं फलं शर्करामधुगुडघृतानि च निवेद्य पिण्डानन्यच्र्य नद्यां क्षिप्त्वा रात्रौ नव सप्त पञ्च वा विप्रान्निमन्त्र्योपोषितो जागरं कृत्वा श्वोभूते पुनर्विष्णुं यमं संपूज्यैकोद्दिष्टविधिना श्राद्धपञ्चकं करिष्य इत्युक्त्वा विष्णुब्रह्मशिवयमप्रेतान्स्मरन्विप्रानुपवेश्य प्रेतस्थाने चैकं विष्णुं स्मरन् वाद्यावाहनार्घ्ययुतं तृप्तिप्रश्नान्तं कृत्वोल्लेखनादि कृत्वान्नशेषेण विष्णवे ब्रह्मणे शिवाय यमाय सपरिवाराय चतुरः पिण्डान् दत्त्वा प्रेतनामगोत्रे

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्मृत्वा विष्णुनाम्ना पञ्चमं दत्त्वाभ्यच्चर्याचान्तेभ्यो दक्षिणां दत्त्वैकं प्रेतं स्मृत्वा विशेषतः संतोष्य विप्रैः प्रेतायेदं तिलोदकमुपतिष्ठतामिति सतिलमुदकं दापयित्वा भुञ्जीतेति। अत्र विशेषान्तरं भट्टकृतान्त्येष्टिपद्धतौ ज्ञेयम्।

सर्पहते तु वर्षपर्यन्तं पूर्वेद्युरेकभक्तिपूर्वं शुक्लपञ्चम्यामुपवासं नक्तं वा कृत्वा पिष्टमयं नागमनन्तवासुकिशङ्खपद्मकम्बलकर्कोटकाश्वतरधृतराष्ट्रशङ्खपालकालियतक्षककपिलेतिनामभिः प्रतिमासं संपूज्य पायसेन विप्रान् संभोज्य वत्सरान्ते हैमं नागं गां च दत्वा नारायणबलिं कुर्यात्। मूलं तु हेमाद्रौ ज्ञेयम् । बौधायनसूत्रे—सर्पमृतानां 'नमोस्तु सर्पेभ्यः' इति तिस्र आहुतीर्हुत्वा, उदके मृतानां समुद्राय वयुनाय हुत्वेति क्रियां कुर्यादिति शेषः। व्यासः—'सौवर्णभारनिष्पन्नं नागं कृत्वा तथैव गाम्। व्यासाय दत्वा विधिवत्पितुरानृण्यमाप्नुयात्॥' हेमाद्रौ भविष्ये—'पञ्चम्यां पन्नगं हैमं स्वर्णेनैकेन कारयेत्। क्षीराज्यपात्रमध्यस्थं पूज्य विप्राय दापयेत्॥ प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं नागदष्टस्य शंभुना॥ इति। अपरार्के स्मृत्यन्तरेऽपि—'तदैव शुद्ध्यतिप्रेतो नारायणबलौ कृते। यो ददाति क्रियापिण्डं तस्मै प्रेताय वै सुतः॥ तस्यैवाशौचमुद्दिष्टं त्र्यहमेव न संशयः। विष्णुश्राद्धसमाप्तौ तु त्रयोदश्यां दिनत्रयम्॥ अशौचं ।पिण्डदः कुर्यान्न तु तद्बन्धुगोत्रजाः। यस्य वै मृत्युकाले तु व्युच्छिन्ना संततिर्भवेत्॥ स वसेन्नरके नित्यं पङ्कमग्नः करी यथा॥' इत्युपक्रम्य—'बलिं नारायणं कुर्यात्तस्योद्देशेन भक्तिमान्।' इति गारुडोक्तेरपुत्रस्यापि पत्न्याद्यैः कार्य इत्युक्तं देवयाज्ञिकेन॥

अथ विधानादाशौचाभावः। यथा—यतियुद्धमृतादिषु 'त्रयाणामाश्रमाणां च कुर्याद्दाहादिकाः क्रियाः। यतेः किंचिन्न कर्तव्यं नचान्येषां करोति सः॥' इति ब्राह्मात्। उशना—'एकोद्दिष्टं न कुर्वीत यतीनां चैव सर्वदा। अहन्येकादशे प्राप्ते पार्वणं तु विधीयते॥ सपिण्डीकरणं तेषां न कर्तव्यं सुतादिभिः। त्रिदण्डग्रहणादेव प्रेतत्वं नैव जायते॥ तत्संस्कारं वक्ष्यामः॥ दत्तात्रेयः—'एकोद्दिष्टं जलं पिण्डमाशौचं प्रेतसत्क्रियां। न यतिसंस्कारः। कुर्याद्वार्षिकादन्यद्ब्रह्मीभूताय भिक्षवे॥' वार्षिकादिति पूर्वभाविमासिकादिनिषेधो नतु दर्शादेः। 'संन्यासिनोप्याब्दिकादि पुत्रः कुर्याद्यथाविधि।' इति वायवीयोक्तेः। पृथ्वीचन्द्रोदये प्रजापतिः—'अहन्येकादशे प्राप्ते पार्वणं तु विधीयते। सपिण्डीकरणं तस्य न कर्तव्यं सुतादिभिः॥' एषु सपिण्डनादिनिषेधानुवादेन पार्वणोक्तेस्तत्स्थानापन्नत्वं पार्वणस्य गम्यते। 'न गिरागिरेति ब्रूयादैरंकृत्वोद्गेयम्' इति-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वत् ।" इदं वार्षिकादिविधानं च त्रिदण्डिनामेव । एकदण्डिपरमहंसादीनां तु न किमपि कार्यम्। पूर्वोक्तोशनोवाक्ये त्रिदण्डिग्रहणादिति शूलपाण्यादयो गौडाः । त्रिदण्डिशब्देन मनोदण्डादिदण्डत्रयोक्तेः । 'यस्यैते नियता दण्डाः स त्रिदण्डीति चोच्यते ।' इति स्मृतेः ।

बौधायनः—'नारायणबलिश्चास्य कर्तव्यो द्वादशेऽहनि ।' अस्य पार्वणेन समुच्चयो ज्ञेयः। तं च स एवाह—'कृत्वा विष्णोर्महापूजां पायसं विनिवेदयेत्। अग्नौ कृत्वा तु तच्छेषं व्याहृतीभिः समाहितः ॥ यतीन् गृहस्थान्साधून्वा निमन्त्र्य द्वादशावरान् ॥ अभ्यर्च्य गन्धपुष्पाद्यैर्मन्त्रैर्द्वादशनामभिः ॥ संभोज्य हव्येनान्नेन दक्षिणां च निवेदयेत् । त्रयोदशं द्विजश्रेष्ठमात्मज्ञं संयतेन्द्रियम् ॥ विष्णुं यथा तथाभ्यर्च्य पाद्याद्यैश्च विधानतः। दद्यात् पुरुषसूक्तेन गन्धपुष्पादिकं क्रमात्। वस्त्रालंकरणादीनि यथाशक्ति प्रदापयेत्। उच्छिष्टसंनिधौ तस्य दर्भानास्तीर्य भूतले ॥ भूर्भुवःस्वःस्वधायुक्तैस्तस्मै दद्याद्बलित्रयम्। अश्वमेधसहस्रस्य वाजपेयशतस्य च ॥ तत्फलं लभते देव यः करोति यतिक्रियाम् ॥

शौनकस्तु—'शौनकोऽहं प्रवक्ष्यामि नारायणबलिं परम्। चण्डालादुदकात्सर्पाद्ब्राह्मणाद्वैद्युतादपि ॥ दंष्ट्रिभ्यश्च पशुभ्यश्च रज्जुशस्त्रविषाश्मभिः। देशान्तरमृतानां च मृतानां वान्यसाधनैः॥ जीवच्छ्राद्धमृतानां च कनिष्ठानां तथैव च । यतीनां योगिनां पुंसामन्येषां मोक्षकाङ्क्षिणाम्॥ पुण्याद्यक्षयार्थाय द्वादशेऽहनि कारयेत् ॥ द्वादश्यां श्रवणेऽब्दान्ते पञ्चम्यां पर्वणोस्तु वा ॥' इत्युक्त्वा पूर्वोक्तं सर्वं विधिमुक्त्वा अतोदेवेति षड्भिः पुरुषसूक्तेन प्रत्यृचं पायसं हुत्वा केशवादिद्वादशनामभिस्तद्रूपिणे पित्रे द्वादश विप्रान् संभोज्य तैरेव द्वादश पिण्डान्दद्यादित्यधिकमाह । युद्धमृते तु प्रागुक्तम्। कृतजीवच्छ्राद्धे मृते सपिण्डैराशौचादि कार्यं न वा। तदुक्तं हेमाद्रौ लैङ्गे—'मृते कुर्यान्न कुर्याद्वा जीवनमुक्तो यतः स्वयम् । कालं गते द्विजे भूमौ खनेद्वापि दहेत वा ॥ पुत्रकृत्यमशेषं च कृत्वा दोषो न विद्यते ।।' जीवत्यपि विशेषस्तत्रैवोक्तः—'नित्यं नैमित्तिकं यत्तु कुर्याद्वा संत्यजेत वा। बान्धवेपि मृते तस्य नैवाशौचं विधीयते ॥ सूतकं च न संदेहः स्नानमात्रेण शुद्ध्यति ॥ एतद्योगिविषयम् 'योगमार्गरतोऽपि च' इति तस्याप्युक्तेः। तथा आहिताग्नौ प्रोषितमृते तदस्थिदाहात्पूर्वं पित्रादीनामाशौचं संध्यादिकर्मलोपश्च नास्ति। 'अनग्निमत उत्क्रान्तेराशौचादि द्विजातिषु। दाहाग्निमतो विद्याद्विदेशस्थे मृते सति ॥' इति स्मृतेः। आहिताग्नेर्दाहात्प्रागपि दशाहः संस्काराङ्गं च भिन्नो दशाह इति धूर्त-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्वामी रामाण्डारश्च तच्चिन्त्यम् । मूलैक्याद्वचोविरोधाच्च । एतत्प्रागुक्तम् । अत्र देहस्यैव संभवे दाहः । 'आहिताग्नौ विदेशस्थे मृते सति कलेवरम् । निधेयं नाग्निभिर्यावत्तदीयैरपि दह्यते ॥' इति ब्राह्मोक्तेः ॥

तदभावे छन्दोगपरिशिष्टे— 'विदेशमरणेऽस्थीनि आहृत्याभ्यज्य सर्पिषा । दाहयेद्बर्हिषाच्छाद्य पात्रन्यासादि पूर्ववत् ॥ अस्थ्नामलाभे पर्णानि शकलान्युक्तयावृता । दाहयेदस्थिसंख्यानि ततः प्रभृति सूतकम् ॥' हेमाद्रौ षट्त्रिंशन्मते—'कुर्याद्दर्भमयं प्रेतं दर्भैस्त्रिशतषष्टिभिः । पालाशीभिः समिद्भिर्वा संख्या चैवं प्रकीर्तिता ॥' भविष्ये—'चत्वारिंशच्छिरः स्थाने ग्रीवायां च दशैव तु । बाह्वोश्चैव शतं दद्याद्विंशतिं च तथोरसि ॥ उदरे विंशतिं दद्यात्त्रिशतं कटिदेशयोः । ऊर्वोश्चैव शतं दद्यात् त्रिशतं जानुजङ्घयोः ॥ पादाङ्गुलीषु दश वै एषा च प्रेतकल्पना ॥' मदनरत्ने यज्ञपार्श्वः— 'शिरस्यशीत्यर्धं दद्याद् ग्रीवायां च दशैव तु । बाह्वोश्चैकशतं दद्याद्दश चैवाङ्गुलीषु च ॥ उरसि त्रिंशतं दद्याद्विंशतिं जठरोदरे । द्वादशार्धं वृषणयोरष्टार्धं शिश्न एव तु ॥ ऊर्वोश्चैकशतं दद्यात्त्रिशतं जङ्घयोर्द्वयोः । पादाङ्गुलीषु द्वे दद्यादेतत्प्रेतस्य कल्पनम् ॥ मस्तके नारिकेरं तु अलाबुं तालुके तथा । पञ्चरत्नं मुखे न्यस्य जिह्वायां कदलीफलम् ॥ चक्षुषोस्तु कपर्दौ द्वौ नासिकायां तु कालकम् । कर्णयोर्ब्रह्मपत्राणि केशे वटप्ररोहकाः ॥ नालकं कमलानां तु अन्त्रस्थाने विनिक्षिपेत् । मृत्तिका तु वसा धातुर्हरितालकगन्धकौ ॥ शुक्रे तु पारदं दद्यात्पुरीषे पित्तलं तथा । संधीषु तिलपिष्टं तु मांसं स्याद्यवपिष्टकम् ॥ मधु स्याल्लोहितस्थाने त्वचास्थाने मृगत्वचा ॥ स्तनयोर्जम्बीरे देये नासायां शतपत्रकम् ॥ कमलं नाभिदेशे स्याद्वृन्ताके वृषणाश्रिते । लिङ्गे च रक्तमूलं तु परिधानं दुकूलकम् ॥ गोमूत्रं गोमयं गन्धं सर्वौषध्यादि सर्वतः ॥' इति ।

इदं निरग्नेरपि । तत्रैव वृद्धमनुः—'प्रोषितस्य तथा कालो गतश्चेद् द्वादशाब्दिकः । प्राप्ते त्रयोदशे वर्षे प्रेतकार्याणि कारयेत् ॥' बृहस्पतिः— 'यस्य न श्रूयते वार्ता यावद् द्वादशवत्सरात् । कुशपत्रकदाहेन तस्य स्यादवधारणा ॥' भविष्ये—'पितरि प्रोषिते यस्य न वार्ता नैव चागमः ॥ ऊर्ध्वं पञ्चदशाद्वर्षात्कृत्वा तत्प्रतिरूपकम् ॥ कुर्यात्तस्य तु संस्कारं यथोक्तविधिना ततः । तदादीन्येव सर्वाणि प्रेतकर्माणि कारयेत् ॥' द्वादशाब्दप्रतीक्षा पितृभिन्नविषयेति मदनरत्ने उक्तम् । गृह्यकारिकायां तु—'तस्य पूर्ववयस्कस्य विंशत्यब्दोर्ध्वतः क्रिया । ऊर्ध्वं पञ्चदशाब्दात्तु मध्यमे वयसि स्मृता ॥ द्वादशाद्वत्सरादूर्ध्वमुत्तरे वयसि स्मृता । चान्द्रा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

यणत्रयं कृत्वा त्रिंशत्कृच्छ्राणि वा सुतैः ॥ कुशैः प्रतिकृतिं दग्ध्वा कार्या-शौचादिका क्रिया ॥' इत्युक्तम् । पराशरः—'देशान्तरगतो नष्टस्तिथिर्न ज्ञायते यदि । कृष्णाष्टमी ह्यमावास्या कृष्णा चैकादशी च या ॥ उदकं पिण्डदानं च तत्र श्राद्धं च कारयेत् ॥' इदं मासज्ञाने ।

तत्राहिताग्नेः पूर्णाशौचम् । अनाहिताग्नेस्तु त्रिरात्रम् । 'अनाहिता-ग्नेर्देहस्तु दाह्यो गृह्याग्निना स्वयम् । तदभावे पलाशानां वृन्तैः कार्यः पुमानपि ॥ वेष्टितव्यस्तथा यत्नात् कृष्णसारस्य चर्मणा । ऊर्णासूत्रेण बध्वा तु प्रलेप्तव्यो यवैस्तथा ॥ सुपिष्टैर्जलसंमिश्रैर्दग्धव्यश्च तथाग्निना । असौ स्वर्गाय लोकाय स्वाहेत्युक्त्वा सबान्धवैः ॥ एवं पर्णशरं दग्ध्वा त्रिरात्रमशुचिर्भवेत् ॥' इति ब्राह्मोक्तेः । इदं त्रिरात्रं न दशाहमध्ये दाहे । तत्र 'प्रोषिते कालशेषः स्यात्' इत्युक्तेः । किंतु तदूर्ध्वम् । तत्र पत्नीपु-त्रयोः पूर्वमगृहीताशौचयोर्दशाहाद्येव । गृहीताशौचयोस्तु त्रिरात्रम् । पत्नीमृतौ भर्तुश्चैवं । सपत्न्योश्चैवमिति स्मृत्यर्थसारे । अन्यसपिण्डानां तु सर्वत्र पर्णशरदाहे त्रिरात्रम् । तदाहाङ्गिराः—'देशान्तरमृतं श्रुत्वा नाशौचं चेत्कथंचन ।' गृहीतमिति शेषः । कालात्ययेऽपि कुर्वीत दाह-काले दिनत्रयम् ।' इति । स्मृत्यर्थसारे तु गृहीताशौचानां स्नानमात्रमु-क्तम् । बह्वृचपरिशिष्टेऽपि—अथातीतसंस्कारः स चेदन्तर्दशाहं स्यात्तत्रैव सर्वं समापयेदूर्ध्वमाहिताग्नेर्दाहात्सर्वमाशौचं कुर्यादन्येषु पत्नीपुत्रयोः पूर्वमगृहीताशौचयोः सर्वमाशौचम् । गृहीताशौचयोः कर्माङ्गं त्रिरात्र-मिति । षडशीतावप्येवम् । विश्वादर्शे तु 'प्रतिकृतिदहने त्वग्निदे स्यात्त्रि-रात्रम्' इत्युक्तम् । द्वादशवर्षादिप्रतीक्षोत्तरं दाहे तु पुत्रादीनां सर्वेषां त्रिरात्रमिति कल्पतरुदिवोदासादयः ॥

अथ प्रेतसंस्कारे कालः । हेमाद्रौ गार्ग्यः—'प्रत्यक्षशवसंस्कारे दिनं नैव विशोधयेत् । अशौचमध्ये संस्कारे दिनं शोध्यं तु संभवे ॥ आशौ-चविनिवृत्तौ चेत्पुनः संस्क्रियते मृतः । संशोध्यैव दिनं ग्राह्यमूर्ध्वं संवत्स-राद्यदि ॥ प्रेतकार्याणि कुर्वीत श्रेष्ठं तत्रोत्तरायणम् । कृष्णपक्षश्च तत्रापि वर्जयेत्तु दिनत्रयम् ॥' वाराहे—'चतुर्थाष्टमगे चन्द्रे द्वादशे च विवर्ज-येत् । प्रेतकृत्यं व्यतीपाते वैधृतौ परिघे तथा ॥ करणे विष्टिसंज्ञे च शनैश्चर-दिने तथा । त्रयोदश्यां विशेषेण जन्मताराया तथा ॥' जन्मदशमैकोन-विंशानि जन्मताराः । भारते—'नक्षत्रे तु न कुर्वीत यस्मिञ्जातो भवेन्नरः । न प्रौष्ठपदयोः कार्यं तथाग्नेये च भारत । दारुणेषु च सर्वेषु प्रत्यरे च विवर्जयेत् ॥' काश्यपः—'भरण्यार्द्रामघाश्लेषामूलं द्विचरणानि च । प्रेत-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कृत्येतिदुष्टानि धनिष्ठाद्यं च पञ्चकम् ।। फाल्गुनीद्वितयं रोहिण्यनूराधा-पुनर्वसू । आषाढे द्वे विषाखा च भानि द्विचरणानि च ।।' ज्योतिर्नारदः—'चतुर्दशीतिथिं नन्दां भद्रां शुक्रारवासरौ । स्थितेज्ययोरस्तमयं द्व्यङ्घ्रिभं विषमाङ्घ्रिभम् ।। शुक्लपक्षं च संत्यज्य पुनर्दहनमुत्तमम् । वसूत्तरार्धतः पञ्चनक्षत्रेषु त्रिजन्मसु ।। पौष्णब्रह्मर्क्षयोश्चैव दहनात्कुलनाशनम् ।।' अस्यापवादमाह तत्रैव बैजवापः—प्रेतस्य साक्षाद्दग्धस्य प्राप्ते त्वेकादशेऽहनि । नक्षत्रतिथिवारादि शोधनीयं न किंचन ।। युगमन्वादिसंक्रान्तिदर्शे प्रेतक्रिया यदि । दैवादापतिता तत्र नक्षत्रादि न शोधयेत् ।।' विश्वप्रकाशेऽपि—'गुरुभार्गवयोर्मौढ्ये पौषमासे मलिम्लुचे । नातीतपितृमेधः स्याद्गयां गोदावरीं विना ।।' दानमपि तत्रैवोक्तम्—'भद्रायां भूमिदानं स्यात्त्रिपादर्क्षे हिरण्यदः । वारेषु तत्तद्वर्णं तु वासोदानं विधीयते ।। धनिष्ठापञ्चकमृते पञ्चरत्नानि दापयेत् । एकाशीतिपलं कांस्यं तदर्धं वा तदर्धकम् ।। नवषट्त्रिपलं वापि दद्याद्विप्राय शक्तितः ।।' इत्यलं प्रसङ्गेन ।।

हेमाद्रौ वृद्धमनुः—'अमृतं मृतमाकर्ण्य कृतं यस्यौर्ध्वदेहिकम् । प्रायश्चित्तमसौ स्मार्तं कृत्वाग्नीनादधीत च ।। जीवन्यदि समागच्छेद् घृतकुम्भे निमज्ज्य तम् । उद्धृत्य स्नापयित्वास्य जातकर्मादि कारयेत् ।। द्वादशाहं व्रतचर्या त्रिरात्रमथवास्य तु । स्नात्वोद्वहेत तां भार्यामन्यां वा तदभावतः ।। अग्नीनाधाय विधिवद् व्रात्यस्तोमेन वा यजेत् । अथेन्द्राग्नेन पशुना गिरिं गत्वा च तत्र तु ।। इष्टिमायुष्मतीं कुर्यादीप्सितांश्च क्रतूंस्ततः ।।' अनाहिताग्नेस्तु चरुः । मृतवार्ताश्रवणे त्वाश्वलायनः—'सुरभय एव यस्मिन् जीवे मृतशब्दः' इति । यस्य तु जीवत एव मृतिवार्तां श्रुत्वा स्त्रिया सहगमनं कृतं तदा तद्वैवमेव । भर्तुर्मरणज्ञानस्यैव निमित्तत्वात् । प्रमादस्य गौरवेणायुक्तत्वाच्चेति केचित् । तन्न । मरणज्ञानस्य निमित्तत्वेऽतीतानागतयोरपि तत्रापत्तेः । भर्तुर्वैधदाहाभावेन तस्याः सहगमनाभावाच्च । तस्मादाशौचवज्ज्ञातमरणस्यैव निमित्तत्वम् । नचात्र तदस्ति । परं काम्यं मरणमस्तु । अत आत्महननदोषोऽस्तीति तातपादाः ।

तथा सर्पसंस्कारे कृते त्रिरात्रमाशौचं । तद्विधिं चाह शौनकः—'अथ वक्ष्यामि सर्पस्य संस्कारविधिमुत्तमम् । सिनीवाल्यां पौर्णमास्यां पञ्चम्यां वापि कारयेत् ।। कृतसर्पवधो विप्रः पूर्वजन्मनि वा यदि । वधं प्रख्यापयेत्पापी चरेत्कृच्छ्रांश्चतुर्दश । विप्राय लोहदण्डं च तन्मूल्यं वापि दापयेत् ।' मूल्यमाह —'निष्कत्रयं द्विनिष्कं वा निष्कमेकं कनीयसम् । अनुमत्यादिकर्तॄणां निष्कमर्धं तदर्धकम् ।।' इदं स्वर्णरूप्ययोः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

शक्त्या ज्ञेयम् । संस्कारमाह—'प्रियङ्गुव्रीहिगोधूमैस्तिलपिष्टेन वा पुनः । कृत्वा सर्पाकृतिं शूर्पे निधाय प्रार्थयेदहिम् ॥ एहि पूर्वमृतः सर्प अस्मिन्पिष्टे समाविश । संस्कारार्थमहं भक्त्या प्रार्थयामि समाहितः ॥ वस्त्रोपवीतगन्धाद्यैः संपूज्य च हरेद्वहिः । कुर्यात्संस्कारसंकल्पं प्राणायामपुरः सरम् ॥ यज्ञोपवीतिना कार्यं सर्पसंस्कारकर्म तु । लौकिकाग्निं प्रतिष्ठाप्य समिदाधानमाचरेत् ॥ ततोऽग्नेरग्निदिग्भागे भूमिं संप्रोक्ष्य वारिभिः । चितिं कृत्वाथ संस्तीर्य कुशैराग्नेयकाग्रकैः ॥ पर्युक्ष्याग्निं परिस्तीर्य परिषिच्य समर्चयेत् । कृत्वेध्माधानमाघारौ चक्षुषी च यथाविधि ॥ सर्पं गृहीत्वा यत्नेन चितिमारोपयेत्सुधीः । स्रुवेण जुहुयादाज्यमग्नौ व्याहृतिभिस्त्रिभिः ॥ सर्पास्ये जुहुयादाज्यं व्याहृत्या च समग्रया । आज्यशेषं स्रुवेणैव सर्पदेहे निषेचयेत् ॥ चमसस्थैर्जलैः सर्पं व्याहृत्याभ्युक्ष्य पाणिना ॥ अग्ने रक्षाण इत्यनया सर्पायाग्निं प्रदापयेत् ॥ उपतिष्ठेद्दह्यमानं नमोस्तुसर्पमन्त्रतः । ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि कृतः सर्पवधो मया ॥ पूर्वजन्मनि वा सर्प तत्सर्वं क्षन्तुमर्हसि । क्षीराज्येन ततश्चाग्निं प्रोक्ष्य व्याहृतिभिर्जलैः ॥ नास्थिसंचयनं कुर्यात् स्नात्वाचम्य गृहं व्रजेत् । ब्रह्मचर्यादिकं कार्यं त्रिरात्राशौचमिष्यते ॥ सचैलं तु चतुर्थेह्नि स्नात्वा विप्रान् समर्चयेत् । सर्पोऽनन्तस्तथा शेषः कपिलो नाग एव च ॥ कालिकः शङ्खपालश्च भूधरश्चेति नामभिः । गन्धपुष्पाक्षतैर्धूपदीपाद्यैरर्चयेद् द्विजान् ॥ घृतपायसभक्ष्यैश्च द्विजानष्टौ तु भोजयेत् । एवं कृते विधानेन सर्पसंस्कारकर्मणि ॥ सर्पहिंसाकृतात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः ॥' इति सर्पसंस्कारः ॥

क्वचित्तु जीवतोप्यन्त्यकर्माशौचं च कार्यम् । यथा—प्रायश्चित्तानिच्छोः पतितस्य घटस्फोटः—'पतितस्योदकं कार्यं सपिण्डैर्बान्धवैः सह । निन्दितेऽहनि सायाह्ने ज्ञात्यृत्विग्गुरुसंनिधौ ॥ दासीघटमपां पूर्णं पर्यस्येत्प्रेतवत्तदा । अहोरात्रमुपासीरन्नाशौचं बान्धवैः सह ॥' इति मनूक्तेः । निन्दिते रिक्तादौ । अपरार्के वसिष्ठोऽपि—'वेदविप्लावकशूद्रयाजकोत्तमवर्णवर्गपतितास्तेषां पात्रनिनयनमपात्रसंस्कारदक्षत्स्नं पात्रमादाय दासोऽसवर्णपुत्रो वा बन्धुरसदृशो वा गुणहीनः सव्येन पादेन प्रवृत्ताग्रान् दर्भान् लोहितान् वोपस्तीर्यापः पूर्णपात्रमस्मै निनयेन्निनेतारं चास्य प्रकीर्णकेशा ज्ञातयोऽन्वालभेरन्नपसव्यं कृत्वा गृहेषु स्वैरमापद्येरन्नत ऊर्ध्वं तेन तं धर्मयेयुस्तद्धर्माणस्तं धर्मयन्तः ॥' इति । उत्तमवर्णा ब्राह्मणादयः तेषां वर्गः समूहस्तस्मात्पतिता ब्रह्महादयः । अपात्रसंस्कारः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कुत्सितपात्रसमूहः। प्रवृत्ताग्राः छिन्नाग्राः । स्वैरं यथेच्छं धर्मादिकार्यं कुर्युः। अस्माद्वचनसामर्थ्यात्पात्रनिनयनात्प्राक्पतितज्ञातीनां धर्मकार्येष्वधिकारो नास्तीत्यपरार्कः । 'तस्य विद्यागुरुयोनिसंबन्धांश्च संनिपात्य सर्वाण्युदकादिप्रेतकार्याणि कुर्युः, पात्रं चास्य विपर्यस्येयुर्दासः कर्मकरो वाऽवकरादमेध्यं पात्रमानीय दासीघटात्पूरयित्वा दक्षिणामुखः पदा विपर्यस्येदसुमनुदकं करोमीति नामग्राहं सर्वेऽन्वालभेरन् प्राचीनावीतिनो मुक्तशिखा अप उपस्पृश्य ग्रामं प्रविशेयुः ॥' इति गौतमोक्तेश्च। उदकादीत्युक्तेर्दाहनिवृत्तिः प्रेतकार्याण्येकादशाहश्राद्धान्तानि । दास्याहृतोऽम्बुघटो दासीघटः । तेनोदकेनामेध्यपात्रं पूरयित्वा दासादिर्न्युब्जं वामपादेन कुर्यादिति हरदत्तः । अत्र नामग्राहवचनमुदकादिप्रेतकार्ये तद्वर्जनत्वार्थम् । तेन तत्तूष्णीं भवति । एतच्च प्रायश्चित्तानिच्छोः। 'तस्य गुरोर्बान्धवानां राज्ञश्च समक्षं दोषानभिख्याप्य तमनुभाष्य पुनः पुनराचारं लभस्वेति स यद्येवमप्यनवस्थितमतिः स्यात्ततोऽस्य पात्रं विपर्यस्येत्' इति शङ्खोक्तेः । जीवन्तमेवोद्दिश्य पिण्डोदकश्राद्धानि नाम्ना दद्यादित्यपरार्कः ॥

कृतप्रायश्चित्तस्य घटस्फोटे कृतेऽपि संग्रहविधिमाह गौतमः—'यस्तु प्रायश्चित्तेन शुद्ध्येत्तस्मिञ्छुद्धे शातकुम्भमयं पात्रं पुण्यह्रदात्पूरयित्वा स्रवन्तीभ्यो वा तत एनमुपस्पर्शयेयुरथास्मै तत्पात्रं दद्युस्तत्स प्रतिगृह्य जपेच्छान्ता द्यौः शान्ता पृथिवी शान्तं शिवमन्तरिक्षं यो रोचनस्तमिह गृह्णामीत्येतैर्यजुर्भिः पावमानीभिस्तरत्समन्दीभिः कूष्माण्डैश्चाज्यं जुहुयाद्धिरण्यं दद्याद्गां चाचार्याय । यस्य तु प्राणान्तिकं प्रायश्चित्तं स मृतः शुद्ध्येत्सर्वाण्येव तस्मिन्नुदकादीनि प्रेतकर्माणि कुर्युरेतदेव शान्त्युदकं सर्वेषूपपातकेषु' इति । घटस्फोटोत्तरं प्राणान्तिकप्रायश्चित्ते कृते तु मृत एव शुद्ध्येन्न तत्र संग्रहविधिः। अतस्तेन विनापि प्रेतकर्म कुर्यादित्यर्थः । उपपातकेष्वपि घटस्फोटे कृते एवं कार्यमित्यर्थः। याज्ञवल्क्यः—'चरितव्रत आयाते निनयेरन्नवं घटम् । जुगुप्सेरन्न चाप्येनं संवसेयुश्च सर्वशः ॥' कृतघटस्फोटस्यैवायं परिग्रहविधिरिति मिताक्षरायामपरार्के च। अन्यथा प्रायश्चित्तमात्रे एतत्प्रसङ्गात्। मनुरपि घटस्फोटमुक्त्वा—'निवर्तेरंस्ततस्तस्मात्संभाषणसहासनैः' इत्युक्त्वा—'प्रायश्चित्ते तु चरिते पूर्णकुम्भमपां नवम्। तेनैव सार्धं प्राश्नीयुः स्नात्वा पुण्ये जलाशये ॥' इति तच्छब्दं प्रायुङ्क्त । अपरार्के वसिष्ठोऽपि—'पतितानां चरितव्रतानां प्रत्युद्धारोऽथाप्युदाहरन्ति—अग्रेऽप्युद्धरतां

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

गच्छेत्क्रीडन्निव हसन्निव । पश्चात्पातयतां गच्छेच्छोचन्निव रुदन्निव ॥' इत्याचार्यमातृपितृहन्तारस्तत्प्रसादादपगतपापा एषां प्रत्यापत्तिः । पूर्ण-ह्रदात्प्रवृत्ताद्वा सकाञ्चनं पात्रं माहेयं वाद्भिः पूरयित्वापोहिष्ठीयाभिरेन-मद्भिरभिषिञ्चेयुः, 'सर्व एवाभिषिक्तस्य प्रयुद्धारः पुत्रजन्मना व्याख्यातः' इति । प्रत्युद्धारः परिग्रहः । तत्रोद्धरतां हसन्निवाग्रेसरः स्यात् । पातयतां घटस्फोटं कुर्वतां शोचन्निव पश्चाद्गच्छेत् । मातापित्रादिहन्तॄणां परिग्रहो न कार्यः । तत्प्रसादे सति चीर्णव्रतानां कार्यः । प्रवृत्तं निर्झरः । पुत्रजन्मनेत्यभिषेकोत्तरं जातकर्मादयः संस्काराः पुत्रजन्मवत्कार्या इत्यपरार्को व्याचख्यौ । अतएव विज्ञानेश्वरः—'घटेऽपवर्जिते ज्ञाति-मध्यस्थो यवसं गवाम् । प्रद्यात्प्रथमं गोभिः सत्क्रिया ॥' इत्यत्र गवां भक्षणाभावे पुनर्व्रतं चरेदित्येतत्प्रकृते, चरितव्रतविधौ विशेषोऽयमिति वदन् घटस्फोटोत्तरं परिग्रह एवैतन्न सर्वत्रेत्याह । तस्मात्कृतेपि घटस्फोटे प्रायश्चित्तं परिग्रहविधिः पुनःसंस्कारा भवतीति सिद्धम् । तथा जीव-च्छ्राद्धे कृते हेमाद्रौ बौधायनः—'तत्राशौचं दशाहं स्यात्, इत्यलं प्रसङ्गेन ।

एवं सापवादे आशौचे उक्ते प्रतिशाखं भिन्नेऽप्यन्त्यकर्मणि साधा-रणं किंचिदुच्यते । तत्राधिकारिणः श्राद्धप्रकरणे प्रागुक्ताः । सर्वाभावे धर्मपुत्रो वा कार्यः । 'अपुत्रेण सुतः कार्यो यादृक् तादृक् प्रयत्नतः । पिण्डो-दकक्रियाहेतोर्नामसंकीर्तनाय च ॥' इति व्यासवचनात् । गृह्यपरिशिष्टे—'असगोत्रः सगोत्रो वा यदि स्त्री यदि वा पुमान् । प्रथमेऽहनि यो दद्यात्स दशाहं समापयेत् ॥' दद्यात्पिण्डमिति शेषः । भविष्ये—'यत्राद्यो दीयते पिण्डस्तत्र सर्वं समापयेत् । ब्राह्मेपि—'प्रथमेऽहनि यो दद्यात्प्रेतायान्नं समाहितः अन्नं नवसु चान्येषु स एव प्रददात्यपि ॥' विज्ञानेश्वरादयस्तु 'केचित्तु अग्निं दद्यात्' इति व्याचक्षते । 'सगोत्रो वा योऽग्निं दद्यात्सखे नरः । सोऽपि कुर्यान्नवश्राद्धं शुद्ध्येत्तु दशमेऽहनि ॥' इति दिवोदासीये वचनाच्च ।

तत्रैवं—'दृष्ट्वा स्थानस्थमासन्नमर्धोन्मीलितलोचनम् । भूमिष्ठं पितरं पुत्रो यदि दानं प्रदापयेत् ॥ तद्विशिष्टं गयाश्राद्धादश्वमेधशतादपि ॥' तानि यथा—मोक्षं देहि हृषीकेश मोक्षं देहि जनार्दन । मोक्षधेनुप्रदानेन मुकु-न्दः प्रीयतां मम ॥' इति मोक्षधेनुमन्त्रः ॥ 'ऐहिकामुष्मिकं यच्च सप्तजन्मा-र्जितं ऋणम् । तत्सर्वं नाशमायातु गोप्रदानेन केशवः ॥' इति पापधेनोः । भारते—'शुक्लपक्षे दिवा भूमौ गङ्गायां चोत्तरायणे । धन्यास्तात मरि-ष्यन्ति हृदयस्थे जनार्दने ॥' हेमाद्रौ वाराहे—'व्यतीपातोऽथ संक्रान्ति-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्तथैव ग्रहणं रवेः। पुण्यकालास्तदा सर्वे यदा मृत्युरुपस्थितः ॥' व्यासः—'आसन्नमृत्युना देया गौः सवत्सा तु पूर्ववत्। तदभावे तु गौरेव नरकोत्तारणाय वै ॥ तदा यदि न शक्नोति दातुं वैतरणीं तु गाम्। शक्तोऽन्य उक्तगां दत्वा दद्याच्छ्रेयो मृतस्य तु ॥

मदनरत्ने जातूकर्ण्यः—'उत्क्रान्त्यादीनि दानानि दश दद्यान्मृतस्य तु। गोभूतिलहिरण्याज्यवासोधान्यगुडानि च ॥ रौप्यं लवणमित्याहुर्दश दानान्यनुक्रमात् ॥ एतानि दश दानानि नराणां मृत्युजन्मनोः। कुर्यादभ्युदयार्थं तु प्रेतेऽपि हि परत्र वै ॥' ब्राह्मे—'ताम्रपात्रं तिलैः पूर्णं प्रस्थमात्रैर्द्विजाय तु। सहिरण्यं च यो दद्याच्छ्रद्धाबित्तानुसारतः ॥ सर्वपापविशुद्धात्मा लभते गतिमुत्तमाम्। उत्क्रान्तिवैतरिण्यौ च दशदानानि चैव हि ॥ प्रेतेऽपि कृत्वा तं प्रेतं शवधर्मेण दाहयेत् ॥' तत्रैव परिशिष्टे—म्रियमाणस्य कर्णे तु पुण्यमन्त्रान् जपेत्ततः।' क्रियानिबन्धे गारुडे त्वष्टौ दानान्युक्तानि। 'तुलसीसंनिधौ कृत्वा शालग्रामशिलां तथा। तिला लोहं हिरण्यं च कार्पासं लवणं तथा ॥ सप्तधान्यं क्षितिर्गाव एकैकं पावनं स्मृतम् ॥' इति। दशदानवैतरिणीधेनूत्क्रान्तिधेनुदानादि भट्टकृतान्त्येष्टिपद्धतौ ज्ञेयम्। कर्ताऽन्त्यकर्माधिकारार्थं त्रीन् कृच्छ्रान् कुर्यादिति तत्रैवोक्तम्। अत्र देवयाज्ञिकेन मुमूर्षोर्मधुपर्कदानमुक्तम्। तदुक्तं वाराहे—'दृष्ट्वा सुविह्वलं ह्येनं यममार्गानुसारिणम्। प्रयाणकाले तु नरो मन्त्रेण विधिपूर्वकम् ॥ मधुपर्कं त्वरन् गृह्य इमं मन्त्रमुदाहरेत्। ॐगृहाण चेमं मधुपर्कमाद्यं संसारनाशकरं ह्यमृतेन तुल्यम्। नारायणेन रचितं भगवत्प्रयाणां दाहे च शान्तिकरणं सुरलोकपूज्यम् ॥ अनेनैव तु मन्त्रेण दद्याच्च मधुपर्ककम्। नरस्य मृत्युकाले तु परलोकसुखावहम् ॥'

अथ दुर्मरणे दिवोदासीये—'चण्डालादिमृते विप्रे त्वन्तरिक्षमृतेऽपि वा। कृच्छ्रातिकृच्छ्रचान्द्रैस्तु शुद्धिस्तत्र प्रकीर्तिता ॥' देवजानीये जाबालिः—'शूद्रेण दग्धो यो विप्रो न लभेच्छाश्वतीं गतिम्। प्रायश्चित्तं कुर्वीत ब्राह्मणः पापशुद्धये ॥ चान्द्रायणं पराकं च प्रजापत्यं विशोधनम् ॥' गृह्यकारिकायाम—'उदक्या सूतिका वापि यदि प्रेतं स्पृशन्ति हि। तस्यैष विधिरादिष्टो वात्स्येनैव महात्मना ॥' एष सूतिकोक्तः सदनरत्ने स्मृत्यन्तरे—'उर्ध्वोच्छिष्टाधरोच्छिष्टोभयोच्छिष्टे तथैव च। अस्पृश्यस्पर्शने चैव खट्वादिमरणेऽपि च ॥ श्वानक्रव्यादसंस्पर्शे क्रिमिकीटोद्भवेऽपि च। एतद्दोषानुसारेण प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥' कृच्छ्रांस्त्रिषट्पञ्चदशांश्चन्द्रात्रयमथापि वा। शुद्धयै तदानीं संपाद्य शवधर्मेण दाहयेत् ॥' गृहकारि-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कायाम्—'खट्वायां मरणे चैव त्रींस्त्रीन्कृच्छ्रान् प्रकल्पयेत् । सप्तान्त्यजैस्तु संस्पृष्टो मृतो दैवात्कथंचन ॥ एकत्रिंशता कृच्छ्रैस्तु शुद्धिरुक्ता मनीषिभिः । कुणपे त्वर्धदग्धे तु चिता स्पृष्टान्त्यजादिभिः । तत्स्पर्शने दूषणं च त्रिभिः कृच्छ्रैर्विशुद्ध्यति ॥' धर्मप्रदीपे—'चाण्डालसूतिकोदक्यास्पृष्टे प्रेते तथैव च । तस्य पापविशुद्ध्यर्थं कृच्छ्रान् पञ्चदशाचरेत् ॥' इत्युक्तम् । मनुः—'अस्वर्ग्या ह्याहुतिः सा स्याच्छूद्रसंपर्कदूषिता ।' अत्रापि कृच्छ्रत्रयम् 'अस्पृश्यस्पर्शने चैव' इत्युक्तेः ।

तत्रैव कर्मप्रदीपे—'रात्रौ वा रात्रिशेषे वा म्रियन्ते चेद्द्विजातयः । दाहं कृत्वा यथान्यायं द्वौ पिण्डौ निर्वपेत्सुतः । रजस्वलागर्भिण्यादिमृतौ वक्ष्यामः । निर्णयामृते पारिजाते यमः—'सन्ध्यायां वा तथा रात्रौ दाहः पाथेयकर्म च । नवश्राद्धं च नो कुर्यात्कृतं निष्फलतां व्रजेत् ॥' एतद्दिनमृतस्य रात्रिनिषेधार्थम् । यत्तु स्कान्दे—'यदि रात्रौ दहेत्तस्य समाप्तिर्दहनस्य तु । परेऽहन्युदिते सूर्ये कार्या तस्योदकक्रिया । दग्धस्य तु नैव कार्या रात्रौ जातूदकक्रिया ॥' इति । तन्निर्मूलम् । रात्रिमृतस्य तु तत्रैव संग्रहे—'रात्रौ दग्ध्वा तु पिण्डान्तं कृत्वा वपनवर्जितम् । वपनं नेष्यते रात्रौ श्वस्तनी वपनक्रिया ॥' इति वपनं तु प्रातः । तच्च सर्वैः पुत्रैः कार्यम् ।' 'गङ्गायां भास्करक्षेत्रे मातापित्रोर्गुरोर्मृतौ । आधाने सोमयागे च वपनं सप्तसु स्मृतम् ॥' इति मिताक्षरायां स्मृतेः । मरणस्यानङ्गित्वान्नैमित्तिकमिदम् । तदेव संग्रहवचनेन परेद्युरुत्कृष्यते तीर्थवत् । तेन कस्यचिद्दाहाङ्गत्वोक्तिश्चिन्त्या । मदनरत्ने गालवः—'प्रथमेऽहनि कर्तव्यं वपनं चानुभाविनाम् । प्रेतस्य केशश्मश्र्वादि वापयित्वाऽथ दाहयेत् ॥' आशौचान्ते तु पुनः कार्यं विधिबलात् । मदनपारिजातेऽप्येवम् । तेन सर्वस्यास्य निर्मूलत्वोक्तिराज्ञोक्तिरेव । स्मृतिरत्नावल्याम्—'शवं रात्र्युषितं चेत्त्रीन् कृच्छ्रान् कृत्वा दहेत्सुतः । मदनरत्नेऽङ्गिराः—'ऊर्ध्वोच्छिष्टाधरोच्छिष्टे ह्यन्तरिक्षमृतेऽपि वा । कृच्छ्रत्रयं प्रकुर्वीत आशौचे मरणेऽपि च ॥'

अथ साग्नेर्विशेषः । कारिकायाम्—'कृष्णपक्षे प्रमीयेत यद्यग्नि प्रातराहुतीः । शेषास्तु जुहुयाद्दर्शपर्यन्ताः पक्षहोमवत् ॥' प्रतिपत्प्रातर्होमान्ता इत्यर्थः । 'यद्याहिताग्निरपरपथे म्रियेताहुतिभिरेनं पूर्वपक्षे हरेयुः' इत्याश्वलायनोक्तेः । 'तदानीमेव जुहुयात्सायंकालाहुतीरपि । सायं म्रियेत चेत्सायमाहुतीर्जुहुयादथ ॥ तदानीमेव जुहुयात्प्रातःकालाहुतीरपि । सकृद्गृहीतमन्त्रेष्टं भिन्नतन्त्रं च होमयोः ॥ दार्शं चापि प्रकुर्वीत स्थालीपाकं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तदैव तु ॥' छन्दोगपरिशिष्टे–'हुतायां सायमाहुत्यां दुर्बलश्चेद्गृही भवेत्। प्रातर्होमस्तदैव स्यात् जीवेच्च स पुनर्न वा ॥' इदं शुक्लपक्षपरम् दुर्बलो मुमूर्षः। त्रिकाण्डमण्डनः–'दर्शेष्टिं च तदा कुर्यादिष्टिर्यदि न संभवेत्। देवतानां प्रधानानामेकैकस्य हुनेत्पृथक् ॥ पुरोनुवाक्यायाज्याभ्यां चतुरात्तघृताहुतीः ॥' तथा—'अग्न्यावरण्योरारूढे प्रमीयेत पतिर्यदि। प्रेतं स्पृष्ट्वा मथित्वाग्निं जप्त्वा चोपावरोहणम् ॥ घृतं च द्वादशोपात्तं तूष्णीं हुत्वा शवक्रिया ॥' विच्छिन्नश्रौताग्नेर्मृतौ तु प्रेताधानं तत्रैवोक्तम् 'प्रेतं स्वाग्न्यालये क्षिप्त्वा मथिताग्न्यानलेऽरणौ। सन्निधायारणीं मन्थेद्यंस्येति यजुषा ततः ॥ यस्याग्नयो जुह्वतो मांसकामाः संकल्पयन्ते यजमानमांसम्। जायन्तु ते हविषे सादिताय स्वर्गं लोकमिमं प्रेतं नयन्त्विवति मन्त्रतः ॥ प्रणीय पावकं तूष्णीं द्वादशोपात्तसर्पिषा। तूष्णीं हुत्वा ततः कुर्यात्प्रेते मात्या इति क्रियाम् ॥ नष्टेष्वग्निष्वथारण्योर्नाशे स्वामी म्रियेत चेत्। आहरेदरणीद्वन्द्वं मनोज्योतिरृचा ततः ॥'

यज्ञपार्श्वः—'यजमाने चितारूढे पात्रन्यासे कृते सति। वर्षाद्यभिहते वह्नौ कथं कुर्वन्ति याज्ञिकाः ॥ तदर्धदग्धकाष्ठेन मन्थनं तत्र कारयेत् ॥ तच्छेषालाभतोऽन्येन दग्धशेषेण वा पुनः ॥ हुत्वाज्यं लौकिके वह्नौ हुतशेषं दहेत्तु वा ॥ अत्राग्निषु सत्सु पर्णशरैः शरीरोत्पत्तिः। शरीरे वासति प्रेताधानेनाग्न्युत्पत्तिः। उभयाभावे तु प्रेताधानेऽनधिकाराद्दाहादिसंस्कारलोपः। उदकदानाद्येव कार्यमिति केशवीकारशतद्वयीप्रमुखाः। तन्न 'निषेकाद्याः श्मशानान्तास्तेषां वै मन्त्रः क्रियाः।' इति विरोधात्। 'क्रियालोपगता ये च' इति निषेधात् 'तदभावे पलाशानां वृन्तैः कार्यः पुमानपि' इत्यभावे विधानस्यग्न्यभावेऽपि साम्याच्च। तेन प्रेताहुत्यभावेऽपि स्विष्टकृद्द्रव्यान्तरोक्तेरदृष्टार्थत्वात्। प्रेताधानं दाहोऽपि भवत्येव। प्रतिकृतेरग्नीनां च प्रेताधानप्रयोजकत्वाद्धतेः।

पत्न्या अप्येवम्। 'दाहयित्वाग्निहोत्रेण स्त्रियं वृत्तवतीं पतिः।' इति याज्ञवल्क्योक्तेः। यत्तु—'द्वितीयां चैव यो भार्य्यां दहेद्वैतानिकाग्निभिः। जीवन्त्यां प्रथमायां तु सुरापानसमं स्मृतम् ॥' इति तदाधाने सहानधिकृताविषयमिति विज्ञानेश्वरः। मदनरत्ने ब्राह्मे पि–'आहिताग्न्योश्च दंपत्योर्यस्त्वादौ म्रियते भुवि। तस्य देहः सपिण्डैश्च दग्धव्यस्त्रिभिरग्निभिः ॥ पश्चान्मृतस्य देहस्तु दग्धव्यो लौकिकाग्निना। अनाहिताग्निदेहस्तु दाह्यो गृह्याग्निना द्विजैः ॥' त्रिकाण्डमण्डनस्तु विकल्पमाह–'ज्येष्ठायां विद्यमानायां द्वितीयायै स्वयोषिते। काम्यं नित्याग्निहोत्रं वा

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

न कथंचित्प्रयच्छति ॥ स्त्रीमात्रमविशेषेण दग्ध्वान्यैर्वैदिकादिभिः । विवाह्यादधते यद्वाधानमेवास्ति चेद्वधूः ॥' इति ।

अत्रेदं तत्त्वम् । साग्नेः पत्नीमृतौ द्वौ पक्षौ पुनर्विवाहेच्छायां पूर्वाग्निभिर्दहेदित्येकः पक्षः । 'भार्यायै पूर्वमारिण्यै दत्वाग्नीमन्त्यकर्मणि । पुनर्दारक्रियां कुर्यात्पुनराधानमेव च ॥' इति मनूक्तेः । 'दाहयित्वाग्निहोत्रेण स्त्रियं वृत्तवतीं पतिः ।' इति याज्ञवल्क्योक्तेश्च । पुनर्विवाहाशक्तौ निर्मन्थ्येन तां दग्ध्वा पूर्वाग्निष्वेवाग्निहोत्रेष्ट्यादि कार्यमित्यन्वयः । 'आहार्येणाहिताग्निं पत्नीं च' इत्याश्वलायनोक्तेः । भरद्वाजोपि—'निर्मन्थ्येन पत्नीम्' इति । पूर्वाग्न्येकदेशेन दहेदिति यज्ञपार्श्वदेवयाज्ञिकादयः । यानि च—'तस्मादपत्नीकोऽप्यग्निहोत्रमाहरेत्' इति श्रुतिः विष्णुः छन्दोगपरिशिष्टं च—'मृतायामपि भार्यायां वैदिकाग्निं नहि त्यजेत् । उपाधिनापि तत्कर्म यावज्जीवं समाचरेत् ॥' उपाधिर्हेमकुशपत्न्यादिः । 'अन्ये कुशमयीं पत्नीं कृत्वा तु गृहमेधिनः । अग्निहोत्रमुपासन्ते यावज्जीवमनुव्रताः' इत्यपरार्के स्मृत्यन्तरात् । कात्यायनोऽपि—'रामोऽपि कृत्वा सौवर्णीं सीतां पत्नीं यशस्विनीम् । ईजे बहुविधैर्यज्ञैः सह भ्रातृभिरच्युतः ॥' इत्यादीनि तानि पूर्वाग्निष्वेवाग्निहोत्रादिपराणि नत्वपत्नीकस्याधानार्थानि, क्रतुविधीनामाधानाप्रयोजकत्वात् । अपत्नीकस्याधानाप्रवृत्तिरिति मानवपरिशिष्टाच्च । 'सोमो न भवत्येव अपत्नीकोऽप्यसोमपः । इति श्रुतेः । यत्तु भरद्वाजापस्तम्बसूत्रम्—'दारकर्मणि यद्यसक्त आत्मार्थमग्न्याधेयम्' इति अस्यार्थः—पुनर्विवाहाशक्तौ यदग्न्याधेयं पूर्वकृतमस्ति तदात्मार्थमेव न पत्न्यै दद्यादिति । ब्राह्मणभाष्यापरार्काशार्करामाण्डारादितत्त्वमप्येवम् । त्रिकाण्डमण्डनस्तु पक्षद्वयमाह । अन्येप्यपत्नीकस्याधानमाहुस्तदाशयं न विद्मः । वृद्धयाज्ञवल्क्यः—'आहिताग्निर्यथान्यायं दग्धव्यस्त्रिभिरग्निभिः । अनाहिताग्निरेकेन लौकिकेनापरो जनः ॥' क्रतुः—'एवंवृत्तां सवर्णां स्त्रीं द्विजातिः पूर्वमारिणीम् । दाहयेदग्निहोत्रेण यज्ञपात्रैश्च धर्मवित् ॥' कारिकायाम्—'पत्नीमपि दहेदेवं भर्तुः पूर्वं मृता यदि । अनग्निकां दहेदेवं कपालेन हविर्भुजा ॥

आशौचप्रकाशे क्रतुः—'विधुरं विधवां चैव कपापस्याग्निना दहेत् । ब्रह्मचारी यती चैव दहेदुत्तपनाग्निना । तुषाग्निना च दग्धव्यः कन्यका बाल एव च । अग्निवर्णं कपालं तु कृत्वा तत्र विनिक्षिपेत् ॥ कारीषादि ततो वह्निर्जातो यः स कपालजः ॥ अनुपनीते यद्यपि जातारण्यग्निः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

कैश्चिदुक्तस्तथापि तस्य कलौ निषिद्धत्वोक्तेरयमेव ज्ञेयः। स्मृत्यन्तरे—'गृहस्थो ब्रह्मचारी च विधुरो विधवाः स्त्रियः। औपासनश्चोत्तपनस्तुषाग्निस्तु कपालजः ॥' उत्तपनस्तु—'दर्भाग्रैरग्निं तु प्रज्वाल्य पुनर्दर्भैस्तृतीयोऽग्निरेष उत्तपनः स्मृतः ॥' यमः—'यस्यानयति शूद्रोऽग्निं तृणकाष्ठहवींषि च। प्रेतत्वं च सदा तस्य स चाधर्मेण लिप्यते ॥' देवलः—'चण्डालाग्निरमेध्याग्निः सूतिकाग्निश्च कर्हिचित्। पतिताग्निश्चिताग्निश्च न शिष्टग्रहणोचितः ॥' मनुः—'दक्षिणेन मृतं शूद्रं पुरद्वारेण निर्हरेत्। पश्चिमोत्तरपूर्वैस्तु यथासंख्यं द्विजातयः ॥' अत्र प्रातिलोम्येन क्रमः 'पूर्वामुखस्तु नेतव्यो ब्राह्मणो बान्धवैर्गृहात्। उत्तराभिमुखो राजा वैश्यः पश्चान्मुखस्तथा ॥ दक्षिणाभिमुखः शूद्रो निर्हर्तव्यः स्वबान्धवैः ॥' इत्यादिपुराणादित्यपरार्कः। त्रिंशच्छ्लोक्युक्तोऽनुलोमक्रमो हेयः। आश्वलायनः—'ज्येष्ठप्रथमाः कनिष्ठजघन्या गच्छेयुः'।

आधानोत्तरं द्वितीयविवाहे कृते यजमानमरणे श्रौतस्मार्ताग्न्योः संसर्गः। बौधायनसूत्रे—'अथ यद्याहिताग्निर्द्वे भार्ये विन्देत प्राक्संयोगान्म्रियेतौपासनं संपरिस्तीर्याज्यं विलाप्य चतुर्गृहीतं गृहीत्वा समिद्धाग्नौ जुहोति संमितं संकल्पेथामिति मिन्दाहुतीर्व्याहृतीश्च हुत्वाथैतमग्निमयं ते योनिर्ऋत्विय इति सविधि समारोप्य गार्हपत्ये समिधमभ्यादधाति भवन्तं नः समनसाविति गार्हपत्य आज्यं विलाप्य चतुर्गृहीतं गार्हपत्ये जुहोत्यग्नावग्निश्चरति प्रविष्ट इत्यपरं चतुर्गृहीत्वा चित्तिः स्रुगिति संग्रहं जुहोत्यथ गार्हपत्ये स्रुवाहुतीर्जुहोति ब्राह्मण एकहोतेति दशभिरथ प्राचीनावीत्यन्वाहार्यपचने जुहोति येसमाना येसजाता इति द्वाभ्यामथ तत्रैव स्रुवाहुतिं जुहोत्यग्नये कव्यवाहनाय स्विष्टकृते स्वधा नमः स्वाहेत्यथ यज्ञोपवीती द्वादशगृहीतेन स्रुचं पूरयित्वा पुरुषसूक्तेनाहवनीये जुहोत्यथ स्रुवाहुतीर्जुहोत्यग्नये विविचये स्वाहाग्नये व्रतपतयेऽग्नये पवमानायाग्नये पावकायाग्नये शुचये स्वाहाग्नये पथिकृते स्वाहाग्नये तन्तुमतेऽग्नये वैश्वानरायेत्यथ चतुर्गृहीतं जुहोति मनोज्योतिरित्यत ऊर्ध्वं पैतृकं कर्म प्रतिपद्यते' इति।

आहिताग्नौ विदेशमृते पथिकृतीष्टिर्मृताग्निहोत्रं तदाहः पात्रयोजनं च कल्पसूत्रादिभ्योऽस्मत्पितामहकृतपद्धतेश्च ज्ञेयमिति बहुवक्तव्येऽप्युपरम्यते। स्मार्ताग्नेस्तूक्तं मदनरत्ने छन्दोगपरिशिष्टे च—'दुर्बलं स्नापयित्वा तु शुद्धचैलाभिसंवृतम्। दक्षिणाशिरसं भूमौ बर्हिष्मत्यां निवेशयेत् ॥ घृतेनाभ्यक्तमाप्लाव्य शुद्धवस्त्रोपवीतिनम्। चन्दनोक्षितसर्वाङ्गं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

सुमनोभिर्विभूषयेत् ॥ हिरण्यशकलान्न्यस्य क्षिप्त्वा छिद्रेषु सप्तसु । मुख्ये-ष्वथापिधायैनं निर्हरेयुः सुतादयः ॥ आमपात्रेऽन्नमादाय प्रेतमग्निपुरःसरम् । एकोऽनुगच्छेत्तस्यार्धमर्धपथ्युत्सृजेद्भुवि ॥ ऊर्ध्वमादहनं कार्यमासीनो दक्षिणामुखः । सव्यं जान्वाच्य शनकैः सतिलं पिण्डदानवत् ॥ अथ पुत्रादिराप्लुत्य कुर्याद्दारुचयं महत् । तत्रोत्तानं निपात्यैनं दक्षिणा-शिरसं मुखे । आज्यपूर्णां स्रुवं दद्याद्दक्षिणाग्रां नसिस्रुचम् । पादयोर-धरां प्राचीमरणीमुरसीतराम् । पार्श्वयोः शूर्पचमसौ सव्यदक्षिणयोः क्रमात् । सुसमे तु न्यसेन्न्युब्जमन्तरूर्वोरुलूखलम् ॥ चात्रोबिलीढमत्रैव अग्नयेऽप्ययं विधिः (?) । अपसव्येन कृत्वैतद्वाग्यतः पितृदिङ्मुखः । अथाग्निं सव्यमावृत्को दद्याद्दक्षिणतः शनैः ॥ अस्मात्त्वमधिजातोऽसि त्वदयं जायतां पुनः । असौ स्वर्गाय लोकाय स्वाहेति परिकीर्तयेत् ॥' तथा—'एवमेवाहिताग्नेश्च पात्रन्यासादिकं भवेत् । कृष्णाजिनादिकं चात्र विशेषोध्वर्युचोदितः ॥' तत्रैव 'अनयैवावृता नारी दग्धव्या या व्यवस्थिता । अग्निप्रदानमन्त्रोऽस्या न प्रयोज्य इति स्थितिः ॥' इदं छन्दोगानामेव । पात्रन्यासोक्तेरुत्तानदेहत्वं साग्निपरम्, निरग्निस्तु पुमानधोमुखः स्त्री तूत्ताना दाह्या । 'सगोत्रजैर्गृहीत्वा तु चितामारोप्यते शवः । अधोमुखो दक्षिणादिक्चरणस्तु पुमानिति । उत्तानदेहा नारी तु सपिण्डैरपि बन्धुभिः ॥' इत्यादित्यपुराणादिति शुद्धितत्त्वहारलता-दय । उत्तरशिरस्त्वं सामगेतरपरम् । वाराहे—त्वग्निदानेऽन्यो मन्त्रः—'कृत्वा तु दुष्कृतं कर्म जानता वाप्यजानता । मृत्युकालवशं प्राप्य नरं पञ्चत्वमागतम् ॥ धर्माधर्मसमायुक्तं लोभमोहसमावृतम् । दहेयं सर्व-गात्राणि दिव्याँल्लोकान्स गच्छतु ॥ ज्वलमानं महावह्निं शिरःस्थाने प्रदापयेत् । चतुर्वर्णेषु संस्थानमेवं भवति पुत्रके ॥'

अत्र क्रियानिबन्धे गारुडे षट्पिण्डदानमुक्तम् । 'मृतस्योत्क्रान्ति-समये षट् पिण्डान् क्रमशो ददेत् । मृतिस्थाने तथा द्वारि चत्वरे तार्क्ष्य कारणात् । विश्रामे काष्ठचयने तथा संचयने च षट् ॥' तथा—'आदौ देयास्तु षट् पिण्डा दश देया दशाहिकाः । स्थाने चार्धपथैतीते चितायां शवहस्तके ॥ श्मशानवासिभूतेभ्यः पष्ठं संचयने तथा ॥' ततः—'त्वं भूतकृतज्जगद्योने त्वं लोकपरिपालकः । उक्तः संहारकस्तस्मादेनं स्वर्गं मृतं नय ॥' इत्याग्निं दत्त्वा अस्मात्त्वमिति मन्त्रेणार्धदग्धे आज्याहुति-रुक्ता । अहिताग्नौ पराशरः—'शम्यां शिश्ने विनिक्षिप्य अरणी मुष्कयो-रपि । जुहूं च दक्षिणे हस्ते वामे तूपभृतं न्यसेत् ॥ शिश्ने तूलूखलं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दद्यात्पृष्ठे च मुसलं न्यसेत् ॥ उरसि क्षिप्य दृषदं तण्डुलाज्यतिलान्मुखे । श्रोत्रे च प्रोक्षणीं दद्यादाज्यस्थालीं च चक्षुषोः ॥ कर्णनेत्रे मुखे घ्राणे हिरण्यशकलं न्यसेत् । अग्निहोत्रोपकरणमशेषं तत्र निक्षिपेत् ॥'

प्रचेतः—'स्नानं प्रेतस्य पुत्राद्यैर्वस्त्राद्यैः पूजनं ततः । नग्नदेहं दहेन्नैव किंचिद्देयं परित्यजेत् ॥' यमः—'प्रेतं दहेच्छुभैर्गन्धैः स्नापितं स्रग्विभूषितम् ।' आश्वलायनसूत्रे—'संस्थिते प्रेतालंकारान् कुर्वन्ति केशश्मश्रुलोमनखानि वापयन्ति नलदेनानुलिम्पन्ति नलदमालां प्रतिमुञ्चन्ति' इति । माधवीये ब्राह्मे—'दरिद्रोपि न दग्धव्यो नग्नः कस्यांचिदापदि ।' तथा—'निःशेषस्तु न दग्धव्यः शेषं किञ्चित्त्यजेन्नरः ।' दाहकालेऽग्निनाशे तु मदनरत्ने यज्ञपार्श्वः—'यजमाने मृते क्वापि चितादौ वा प्रवेशिते । वर्षाद्यभिहतेऽग्नौ तु कथं प्रेतविकल्पना ॥ शेषं दग्ध्वा प्रदग्धेषु निर्मन्थ्यैव तु कारयेत् ॥' अथ पर्णशरादिदाहेनाग्निनाशे पश्चात्तद्देहलाभे मदनरत्ने ब्राह्मे—'अथ पर्णशरे दग्धे पात्रन्यासे कृते सति । गतेष्वग्निषु तद्देही यद्यूर्ध्वं लभ्यते क्वचित् ॥ तदार्धदग्धकाष्ठानि तानि निर्मथ्य तं दहेत् । यद्यर्धदग्धकाष्ठं तु तदीयं वै न लभ्यते ॥ तदा तदस्थिखण्डं तु निक्षिप्तव्यं महाजले ॥'

दंपत्योरेकदा मृतौ विशेषमाहापस्तम्बः—'तथैव प्रेते सहैव पितृमेधो द्विवचनलिङ्गान्मन्त्रान्सन्धारयन्ति ।' पितृमेधो दाहान्तं कर्म । 'दाहान्तमेकतन्त्रत्वम्' इति बौधायनोक्तेः । अस्थिसंचयनमप्येकम् । उदकपिण्डदानादि पृथगेव। सहगमनेप्येवम् । तदाह मदनरत्ने भाष्यार्थसंग्रहकारः- 'एककालमृतौ भार्या भर्ता च यदि चेद्द्वयोः । तन्त्रेण दहनं कुर्यात्पिण्डश्राद्धं पृथक् पृथक् ॥ एककाले मृतौ जायापती यदि तदा पितुः । विभज्याग्नि क्रियां कुर्यादिति यत्तदसांप्रतम् ॥ दाहान्तमेकतन्त्रत्वमिति याज्ञिकसंमतम् ॥ मृतं पतिमनुव्रज्य या नारी ज्वलनं गता । अस्थिसंचयनान्तेऽस्या भर्तुः संस्कार एव हि ॥ कीकसानां तु संस्कारे न्यायसिद्धोऽपि यो मतः । एककाले मृतेप्येवं कीकसानां विधिः स्मृतः ॥ नवश्राद्धं सपिण्डान्तं भिन्नकालमृतौ यथा ॥' कपर्दिकारिकापि—'मृते भर्तरितद्दाहात्प्राक् पत्नी म्रियते यदि । पत्न्यां वा प्राक् प्रमीतायां दाहादर्वाक्पतिर्मृतः ॥ तत्र तन्त्रेण दाहः स्यान्मन्त्रेषु द्वित्वमूह्यते । कीकसानां तु संस्कारः पृथगेव तयोर्भवेत् ॥ एकाहमृत्यौ युगपन्नवश्राद्धादिकं तयोः । मृतं पतिमनुव्रज्य पत्नी चेदनलं गता ॥ तत्रापि दाहस्तन्त्रेण पृथगस्थिक्रिया भवेत् ॥' अस्थिसंचयनपृथक्त्वे विकल्पः । सहगमे सर्वत्र

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पाकैक्यमाह प्रचेता:—'एकचित्यां समारूढौ म्रियेते दंपती यदि। तन्त्रेण तर्पणं कुर्यात्पृथक्पिण्डं समाचरेत्।

अथोदकदानं वशिष्ठः—'शरीरमग्नौ संयोज्यानवेक्षमाणा अपोऽभ्यवयन्ति सव्योत्तराभ्यां पाणिभ्यामुदकक्रियां कुर्वन्त्ययुग्मम्।' आपस्तम्बः—'मातुश्च योनिसंबन्धेभ्यः पितुश्चासप्तमात्पुरुषाद्यावतां वा संबन्धो ज्ञायते तेषां प्रेतेषूदकक्रिया' इति। याज्ञवल्क्यः—'सप्तमाद्दशमाद्वापि ज्ञातयोऽभ्युपयन्त्यपः। अपनःशोशुचदघमनेन पितृदिङ्मुखाः॥ सकृत्प्रसिंचन्त्युदकं नामगोत्रेण वाग्यताः॥' सप्तमाद्दशमाद्वा दिवसादर्वागिति विज्ञानेश्वरः। 'कातीयास्तु सप्तमाद्दशमाद्वा पुरुषादित्याहुः। सप्तमाद्दशमाद्वा पुरुषात्समानग्रामवासे यावत्संबन्धमनुस्मरेयुः' इति पारस्करोक्तेः। मन्त्रस्नानाङ्गमेवेति हेमाद्रिः। प्रचेताः—प्रेतस्य बान्धवा यथावृद्धमुदकमवतीर्य नोद्धर्षयेयुरुदकान्ते प्रसिंचेयुरपसव्यज्ञोपवीतवाससो दक्षिणामुखा ब्राह्मणस्योदङ्मुखाः प्राङ्मुखाश्च राजन्यवैश्ययोः। स एव 'नदी कूलं ततो गत्वा' इत्युक्त्वा 'सचैलस्तु ततः स्नात्वा शुचिः प्रयतमानसः। पाषाणं तत आदाय विप्रे दद्याद्दशाञ्जलीन्॥ द्वादश क्षत्रिये दद्याद्वैश्ये पञ्चदश स्मृताः। त्रिंशच्छूद्राय दातव्यास्ततस्तु प्रविशेद्गृहम्॥ ततः स्नानं पुनः कार्यं गृहशौचं च कारयेत॥'

प्रेतस्नाने विशेषः शुद्धितत्त्वे आदित्यपुराणे—'आदौ वस्त्रं च प्रक्षाल्य तेनैवाच्छादितस्ततः। कर्तव्यं तैः सचैलं तु स्नानं सर्वमलापहम्॥' पूर्वपरिहितं। वस्त्रं प्रक्षाल्य पुनः परिधाय स्नायादित्यर्थः। 'अपनः' इति मन्त्रेण वामहस्तानामिकया जलालोडनम्। अवतरणे वृद्धपुरःसरत्वोक्तेः 'यथाबालं पुरस्कृत्य' इति बौधायनीयं जलादुत्थानपरमिति हारलतादयः। आश्वलायनः—'सव्यावृतो व्रजन्त्यनीक्षमाणायत्रोदकमवहद्भवति तत्प्राप्य सकृदुन्मज्ज्यैकाञ्जलिमुत्सृज्य तस्य गोत्रं नाम गृहीत्वा' इति। प्रचेतसाऽन्वहञ्जलित्रयमप्युक्तम्। तत्र 'त्रिःप्रसेकं कुर्युः प्रेतस्तृप्यतु' इति। तथा—'दिनेदिनेऽञ्जलीन् पूर्णान् प्रदद्यात्प्रेतकारणात्। तावद्वृद्धिश्च कर्तव्या यावत्पिण्डः समाप्यते॥' एकवृद्धिस्त्रिकवृद्धिर्वेत्यर्थः। मदनरत्ने भरद्वाजगृह्ये तु द्विकवृद्धिरप्युक्ता—'आशौचान्ते प्रदद्यात्तु प्रेतपुत्रस्तिलाञ्जलीन्। प्रथमेऽह्नि सकृद्दद्यात्पिण्डयज्ञावृतादिवा॥ त्रींश्च दद्याद्द्वितीयेऽह्नि तृतीये पञ्च एव च। चतुर्थे सप्तसंख्यास्तु पञ्चमेव नव चोत्सृजेत्॥ षष्ठेऽह्नि चैकादशकाः सप्तमे तु त्रयोदश। अष्टमे पञ्चदशका नवमे दश सप्त च॥ एकोनविंशतिं चाग्रे शताञ्जलिमतं स्मृतम्॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

केचिद्दशाञ्जलीन् प्रोचुः केचिदाहुः शताञ्जलीन् । पञ्चपञ्चाशतं चान्ये स्वशाखोक्तव्यवस्थया ॥

छन्दोगपरिशिष्टे—अथानवेक्षयन्पापः सर्वे चैव शवस्पृशः । गोत्रनामपदान्ते तु तर्पयामीत्यनन्तरम् ॥ दक्षिणाग्रान्कुशान्कृत्वा सतिलं तु पृथक् पृथक् ॥' विष्णुपुराणे—'सपिण्डीकरणं यावदृजुदर्भैः पितृक्रिया । सपिण्डीकरणादूर्ध्वं द्विगुणैर्विधिवद्भवेत् ॥' रामायणे—'इदं पुरुषशार्दूल विमलं दिव्यमक्षयम् । पितृलोकेषु पादीयं मद्दत्तमुपतिष्ठताम् ॥' दानवाक्ये विकल्पः । याज्ञवल्क्यः—'कामोदकं सखिप्रत्ताश्वस्रीयश्वशुरर्त्विजाम् ।' काम इच्छा । प्रेततृप्तीच्छायां देयमन्यथा नेत्यर्थः । शङ्खपारस्करौ—'आचार्ये चैवं मातामहयोश्च स्त्रीणां चाप्रत्तानां कुर्वीरंस्ताश्च तेषाम्' इति द्विवचनान्मातामह्या अपि । शङ्खलिखितौ—'उदकक्रिया मासं श्वशुरमातुलयोः शिष्ये सहाध्यायिनि राजनि च' इति । वृद्धमनुः—'क्लीबाद्या नोदकं कुर्युः स्तेना व्रात्या विधर्मिणः । गर्भभर्तृद्रुहश्चैव योषितः ॥' याज्ञवल्क्यः—'न ब्रह्मचारिणः कुर्युरुदकं पतितास्तथा ।' षडशीतौ—'स्वीयाचारादपि भ्रष्टाः पतिता ये च दूषिताः । न कुर्युरुदकं ते वै तेभ्योऽप्यन्ये न चैव हि ॥' मदनरत्नेहारीतः—'पतितानामवृद्धानां चरन्तीनां च कामतः । प्रत्तानां चैव कन्यानां निर्वर्त्या सलिलक्रिया ॥' अपरार्के शङ्खलिखितौ—'अपपात्रितस्य रिक्थपिण्डोदकानि व्यावर्तन्ते' । अपपात्रितः कृतघटस्फोटः । तस्यापि संग्रहविधौ कृते आशौचोदकादि कुर्यादेवेत्याशौचप्रकाशः ॥

अथाशौचे नियमाः । याज्ञवल्क्यः—'इति संश्रुत्य गच्छेयुर्गृहं बालपुरःसराः । विदश्य निम्बपत्राणि नियता द्वारि वेश्मनः ॥ आचम्याग्न्यादिसलिलं गोमयं गौरसर्षपान् । प्रविशेयुः समालभ्य कृत्वाश्मनि पदं शनैः ॥ प्रवेशनादिकं कर्म प्रेतसंस्पर्शिनामपि । क्रीतलब्धाशना भूमौ स्वपेयुस्ते पृथक् क्षितौ ॥' इदं चाद्येह्नि । वसिष्ठः—'आद्ये प्रस्तरे गृहमनश्नन्त आसीरन् क्रीतोत्पन्नेन वा वर्तेरन् ।' शुद्धितत्त्वे बैजवापः—'शमीमालभन्ते शमी पापं शमयत्विति, अश्मानमश्मेव स्थिरो भूयासमिति, अग्निमग्निर्नः शर्म यच्छत्विति, ज्योतिष अन्तरा गामजमुपस्पृशन्तः क्रीत्वा लब्ध्वा वान्यगेहोदकान्नमलवणमेकरात्रं दिवा भुञ्जीरंस्त्रिरात्रं च कर्मोपरमणम्, क्रीताद्यशनमुपवासाशक्तस्य' । आश्वलायनस्तु—'नैतस्यां रात्र्यामन्नं पचेरंस्त्रिरात्रमक्षारलवणाशिनः स्युर्द्वादशरात्रं वा' इत्याह । अशक्तौ रत्नाकरे आपस्तम्बः—'भार्याः परमगुरुसंस्थायां

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

चाकालभोजनानि कुर्वीरन्'। यदा सूतिः, परदिने तावत्कालमित्यर्थः। बृहस्पतिः—'अधःशय्यासना दीना मलिना भोगवर्जिताः। अक्षारलवणान्नाः स्युर्लब्धक्रीताशनास्तथा ॥' भोगोऽभ्यङ्गताम्बूलादिः। क्षाराः परिभाषायामुक्ताः। यत्तु मार्कण्डेयपुराणे—'तैलाभ्यङ्गो बान्धवानामङ्गसंवाहनं च यत्। तेन चाप्यायते जन्तुर्यच्चाश्नन्ति स्वबान्धवाः। प्रथमेऽह्नि तृतीये च सप्तमे नवमे तथा। वस्त्रत्यागं बहिः स्नानं कृत्वा दद्यात्तिलोदकम् ॥' इति तदन्त्यदिनपरम्। 'आशौचान्ते तिलकल्कैः स्नाताः गृहं प्रविशेयुः' इति विष्णूक्तेः। विष्णुपुराणे त्वस्थिसंचयनोर्ध्वं भोगोप्युक्तः—'शय्यासनोपभोगस्तु सपिण्डानामपीष्यते। अस्थिसंचयनादूर्ध्वं संयोगस्तु न योषिताम् ॥'

भारते—'तिलान् ददतु पानीयं दीपं ददतु जाग्रतु। ज्ञातिभि सह भोक्तव्यमेतत्प्रेतेषु दुर्लभम् ॥' मनुः—'मांसाशनं च नाश्नीयुः शयीरंश्च पृथक् क्षितौ।' देवजानीये कारिकायाम्–'लवणक्षीरमाषान्नापूपमांसानि पायसम्। वर्जयेदाहृतान्नेषु बालवृद्धातुरैर्विना ॥ उपवासो गुरौ प्रेते पत्न्याः पुत्रस्य वा भवेत् ॥' मरीचिः—'प्रथमेऽह्नि तृतीये च सप्तमे दशमे तथा। ज्ञातिभि सह भोक्तव्यमेतत्प्रेतेषु दुर्लभम् ॥' भोजनं च दिवैव। 'दिवान्नमश्नीयुः' इति विष्णुपुराणात्। 'क्रीत्वा लब्ध्वा वा दिवान्नमश्नीयुः' इति पारस्करोक्तेश्च। मदनरत्ने हारीतः—पाणिषु मृन्मयेषु पर्णपुटकेषु वाश्नीरन्'। देवजानीये ब्राह्मे—'आशौचमध्ये यत्नेन भोजयेच्च स्वगोत्रजान्।' अन्त्यदिने तु मदनरत्ने ब्राह्मे—'यस्य यस्य तु वर्णस्य यद्यत्स्यात्पश्चिमं त्वहः। स तत्र गृहशुद्धिं च वस्त्रशुद्धिं करोत्यपि ॥' अन्त्यकर्मकालीनवस्त्रयोस्तु तत्रैवोक्तम्—'ग्रामाद्बहिस्ततो गत्वा प्रेतस्पृष्टे तु वाससी। अन्त्यानामाश्रितानां च त्यक्त्वा स्नानं करोत्यथ ॥' इति। शङ्खः—'दानं प्रतिग्रहो होमः स्वाध्यायः पितृकर्म च। प्रेतपिण्डक्रियावर्ज्यमाशौचे विनिवर्तते ॥' काठकगृह्ये—'यत्र प्राणोत्क्रमस्तत्रान्वहं महाबलिं कुर्यात्' इति। पारस्करः—'तदानीमेव वस्त्रं तण्डुलं दीपं कांस्यभाजनं प्रेताय दद्यात्'। आशौचप्रकाशे भरद्वाजः—'वासोऽन्नं च जलं कुम्भं प्रदीपं कांस्यभाजनम्। नग्नप्रच्छादने श्राद्धे ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥' भृगुः—तिलोदकं तथा पिण्डान् नग्नप्रच्छादनादिकम्। रात्रौ न कुर्यात्संध्यायां यदि कुर्यान्निरर्थकम् ॥'

अथ प्रेतपिण्डः। यद्यपि हेमाद्रौ पारस्करेण—'ब्राह्मणे दशपिण्डास्तु क्षत्रिये द्वादश स्मृताः। वैश्ये पञ्चदश प्रोक्ताः शूद्रे त्रिंशत्प्रकीर्तिताः ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

इत्युक्तं तथापि—'प्रेतेभ्यः सर्ववर्णेभ्यः पिण्डान्दद्याद्दशैव तु।' इति तेनैवोक्तेः सर्वेषां दशैव ज्ञेयाः। मदनरत्नेप्येवम्। तथा च हेमाद्रौ ब्राह्मपाद्मयोः—'जात्युक्ताशौचतुल्यांस्तु वर्णानां क्वचिदेव हि। देशधर्मान्पुरस्कृत्य प्रेतपिण्डान्वपन्त्यपि॥' इत्युक्त्वा विप्रान्येषु दशमपिण्डोत्कर्ष उक्तः। 'तेयस्तु दशमः पिण्डो राज्ञां वै द्वादशेऽहनि। वैश्याना वै पञ्चदशे देयस्तु दशमस्तथा॥ शूद्रस्य दशमः पिण्डो मासे पूर्णेऽह्नि दीयते॥ इति। युद्धमृतादेः सद्यःशौचे त्र्यहादौ च तेनैवोक्तम्—'सद्यःशौचे प्रदातव्याः सर्वेऽपि युगपत्तथा। त्र्यहाशौचे प्रदातव्यः प्रथमेह्न्येक एव हि॥ द्वितीयेऽहनि चत्वारस्तृतीये पञ्च चैव हि॥' त्र्यहे प्रकारान्तरं प्रागुक्तम्। शातातपः—'आशौचस्य च ह्रासेऽपि पिण्डान्दद्याद्दशैव तु।' तत्रैकपात्रे सकृत्पक्त्वा दश पिण्डान् दद्यात्। 'उत्तरीयशिलापात्रकर्तृद्रव्यविपर्यये। पूर्वदत्ताञ्जलीन्दद्यात्पूर्वपिण्डांस्तथैवच॥' इति गृह्यकारिकायां पात्रविपर्यये दोषोक्तेः। शिलाविपर्यये घटस्फोटादेर्नावृत्तिः। अत्ताभ्यञ्जनादिपदकर्मणः एकहायनीनयनवदप्रयोजकत्वात्। तद्वच्चात्र लौकिकग्रहणम्। केचित्तु—'नवान्यादाय भाण्डानि आरुकं चरुकं तथा।' इति प्रचेतसोक्तेः पात्रानेकत्वमाहु। क्रियाकर्तुर्नाशेऽन्येन शेषः समापनीयः। एवं क्रियाप्रवृत्तानां यदि कश्चिद्विपद्यते। तद्वबन्धुना कार्या सर्वैर्वा सहकारिभिः॥' इति शुद्धितत्त्वे बृहस्पतिस्मृतेः। पत्न्याः कर्तृत्वे रजोदर्शने च तदन्ते कुर्यात्। 'शवाद्द्विगुणमार्तवम्' इत्युक्तेः। आशौचान्ते आर्तवे कर्तुरस्वास्थ्ये वान्येन क्रिया सर्वावर्तनीया, कर्तुर्विपर्ययात्कालातिक्रमयोगाच्च।

वाराहे—'स्थण्डिले प्रेतभागं तु दद्यात्पूर्वाह्ण एव तु। कृत्वा तु पिण्डसंकल्पं नामोगोत्रेण सुन्दरि॥ मरीचिः—'प्रेतपिण्डं बहिर्दद्याद्दर्भमन्त्रविवर्जितम्। प्रागुदीच्यां चरुं कृत्वा स्नातः प्रयतमानसः॥' दर्भवर्जनमनुपनीतपरम्। 'असंस्कृतानां भूमौ पिण्डं दद्यात्संस्कृतानां कुशेषु' इति प्रचेतोक्तेः मिताक्षरायां स्मृत्यन्तरे—'भूमौ माल्यं पिण्डं पानीयमृपले वा दद्युः'। हारीतः—'अकृतचूडा ये बाला ये च गर्भाद्विनिःसृताः। मृता अनुपनीता ये अगूढा अपि कन्यकाः॥ ये मृताश्चाप्यसंस्कारास्तेभ्यो भूमौ प्रदीयते।' पैठीनसिः—'शालिना सक्तुभिर्वापि पिण्याकैर्वापि निर्वपेत्॥' शुनःपुच्छः—'फलमूलैश्च पयसा शाकेन च गुडेन च। तिलमिश्रं तु दर्भेषु पिण्डं दक्षिणतो हरेत्॥ तूष्णीं प्रसेकं पुष्पं च धूपं दीपं तथैव च। शालिना सक्तुभिर्वापि शाकैर्वाप्यथ निर्ववेत्॥ प्रथमेऽहनि यद्द्रव्यं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तदेव स्याद्दशाहिकम्। मदनरत्ने मात्स्ये—'तैजसं मृन्मयं वाथ पात्रं संशोध्य यत्नतः। लौकिकाग्नावधिश्रित्य पचेदन्नं घृतप्लुतम्॥ स्नात्वाथ तिलसंमिश्रंप्रदद्याद्दर्भसंस्तरे॥

शुद्धितत्त्वे देवजानीये च ब्राह्मे—'प्रथमेऽहनि यो दद्यात्प्रेतायान्नं समाहितः। अन्नं नवसु चान्यैषु स एव प्रददात्यपि॥ मृन्मयं भाण्डमादाय नवं स्नातः सुसंयतः। तण्डुलप्रसृतिं तत्र त्रिः प्रक्षाल्य पचेत्स्वयम्॥ सपवित्रैस्तिलैर्मिश्रं कृमिकेशविवर्जितम्। द्वारोपान्ते ततः क्षिप्त्वा शुद्धां वा गौरमृत्तिकान्॥ भूपृष्ठे संस्तरे दर्भान् याम्याग्रान्देशसंभवान्। ततोऽवनेजनं दद्यात् संस्मरन् गोत्रनामनी॥ तिलसर्पिर्मधुक्षीरैः संसिक्तं तन्मेव हि। दद्यात्प्रेताय पिण्डं तु दक्षिणाभिमुखः स्थितः। अर्घ्यैः पुष्पैस्तथा धूपैर्दीपैस्तोयैश्च शीतलैः। ऊर्णातन्तुमयैः शुद्धैर्वासोभिः पिण्डमर्चयेत्॥ दिवसे दिवसे देयः पिण्ड एवं क्रमेण तु। सद्यःशौचे प्रदातव्याः सर्वेऽपि युगपत्तथा॥ त्र्यहाशौचेऽपि दातव्यास्त्रयः पिण्डाः समाहितैः। द्वितीये चतुरो दद्यादस्थिसंचयनं तथा॥ त्रींस्तु दद्यात्तृतीयेऽह्नि वस्त्रादि क्षालयेत्ततः। दशाहेऽपि च दातव्यः प्रथमे त्वेक एव हि। एकस्तोयाञ्जलिस्त्वेवं पात्रमेकं च दीयते। द्वितीये द्वौ तृतीये त्रीन्' इत्याद्युक्त्वा—'एवं स्युः पञ्चपञ्चाशत्तोयस्याञ्जलयः क्रमात्। तोयपात्राणि तावन्ति संयुक्तानि तिलादिभिः॥' इति पात्रं कुम्भः। अत्राहःपदमहोरात्रपरम्, तेन रात्रावपि देय इति गौडाः। दिवसपदाद्रात्रौ नेति मैथिलाः। स एवेत्युक्तेः सपिण्डेन दशपिण्डे प्रक्रान्ते पुत्रागमेऽपि स न दद्यात्। असगोत्रः सगोत्रो वा' इति प्रागुक्तेः। दाहकर्तैव दशाहं कुर्यादिति मिताक्षरायाम्। शुद्धितत्त्वे वायवीयेऽपि—'असगोत्रः सगोत्रो वा यदि स्त्री यदि वा पुमान्। यश्चाग्निदाता प्रेतस्य पिण्डं दद्यात् स एव हि॥' इति। तत्रैव—'पूरकेण तु पिण्डेन देहो निष्पद्यते यतः। कृतस्य करणायोगात् पुनर्नावर्तयेत् क्रियाम्॥' शुद्धिप्रकाशे वायवीयेऽपि—'नवर्तयति यो मोहात् क्रियामन्यनिवर्तिताम्। विधिघ्नस्तेन भवति पितृहा चोपजायते॥ तस्मात् प्रेतक्रिया येन केनापि च कृता यदि। न तां निवर्तयेत्प्राज्ञः सतां धर्ममनुस्मरन्॥' इति। आदिपुराणे—'पतृशब्दं स्वधां चैव न प्रयुञ्जीत कर्हिचित्। अनुशब्दं तथा चेह प्रयत्नेन विवर्जयेत्॥ उपतिष्ठतामयं पिण्डः प्रेतायेति समुच्चरेत्॥' क्रियानिबन्धे व्यासः—प्रेताय पिण्डं दत्त्वा तु ततोऽश्नीयाद्दिनात्यये॥' भविष्ये—'ओदनामिषसक्तूनां शाकमूलफलादिषु। प्रथमेऽहनि यद्दद्यात्तदुत्तरे हनि॥ गृहद्वारि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

श्मशाने वा तीर्थे देवगृहेपि वा। यत्राद्ये दीयते पिण्डस्तत्र सर्वं समापयेत् ॥'

ब्राह्मे—'शरस्त्वाद्येन पिण्डेन प्रेतस्य क्रियते सदा। द्वितीयेन तु कर्णाक्षिनासिकाश्च समासतः॥ गलांसभुजवक्षांसि तृतीयेन यथाक्रमम्। चतुर्थेन तु पिण्डेन नाभिलिङ्गगुदानि च॥ जानुजङ्घे तथा पादौ पञ्चमेन तु सर्वदा। सर्वमर्माणि षष्ठेन सप्तमेन तु नाडयः। दन्तलोमान्यष्टमेन वीर्यं तु नवमेन च। दशमेन तु पूर्णत्वं तृप्तता क्षुद्विपर्ययः॥' इति। याज्ञवल्क्येन तु,—'पिण्डयज्ञावृता देयं प्रेतायान्नं दिनत्रयम्।' इत्युक्तम्। अत्र फलतारतम्यं ज्ञेयमिति विज्ञानेश्वरः। तेन त्र्यहाशौचपरत्वं देवयाज्ञिकोक्तं चिन्त्यम्। 'आशौचस्य च ह्रासेपि पिण्डान्दद्याद्दशैव तु।' इति वचनाच्च। दिनत्रयावश्यकत्वार्थमिति हारलतादयः।

शातातपः—'जलमेकाहमाकाशे स्थाप्यं क्षीरं च मृन्मये।' पारस्करः-मृन्मये तां रात्रिं क्षीरोदके विहायसि निदध्युः प्रेतात्र स्नाहीत्युदकं, पिब चेदमिति क्षीरम्।' इदं रात्रावेवेति गौडाः। गारुडे तु—'अपक्वे मृन्मये पात्रे दुग्धं दद्याद्दिनत्रयम्' इत्युक्तम्। हेमाद्रौ पाद्मे तु दशाहमुक्तम्। तस्मान्निधेयमाकाशे दशरात्रं पयो जलम्। सर्वतापोपशान्त्यर्थमध्वश्रमविनाशनम्॥' देवजानीये कारिकायाम्—'तत्र प्रेतोपकृतये दशरात्रमखण्डितम्। कुर्यात्प्रदीपं तैलेन वारिपात्रं च मार्तिकम्। भोज्याद्भोजनकाले तु भक्तमुष्टिं च निर्वपेत्॥ नामगोत्रेण संबुद्ध्या धरित्र्यां पितृयज्ञवत्॥' शातातपः-'भूलोकात्प्रेतलोकं तु गन्तुं श्राद्धं समाचरेत्। तत्पाथेयं हि भवति मृतस्य मनुजस्य तु॥'

अथ दशाहमध्ये दर्शपाते निर्णयः। भविष्ये—'प्रवृत्ताशौचतन्त्रस्तु यदि दर्शं प्रपद्यते। समाप्य चोदकं पिण्डान् स्नानमात्रं समाचरेत्॥' ऋष्यशृङ्गः 'आशौचमन्तरा दर्शो यदि स्यात्सर्ववर्णिनाम्। समाप्तिं प्रेततन्त्रस्य कुर्यादित्याह गौतमः॥' पैठीनसिः-'आद्येन्दावेव कर्तव्या प्रेतपिण्डोदकक्रिया। द्विरैन्दवे तु कुर्वाणः पुनः शावं समश्नुते॥' मातापित्रोस्तु श्लोकगौतमः—'अन्तर्दशाहे दर्शश्चेत्तत्र सर्वं समापयेत्। पित्रोस्तु यावदाशौचं दद्यात्पिण्डात् जलाञ्जलीन्॥' इदमपि त्र्यहमध्ये दर्शपाते। तदूर्ध्वं दर्शे त पित्रोरपि तन्त्रं समाप्यमेव। 'पित्रोराशौचमध्ये तु यदि दर्शः समापतेत्। तावदेवोत्तरं तन्त्रं पर्यवस्येत् त्र्यहात्परम्॥' इति गालवोक्तेः। अन्येषां तु त्र्यहमध्येपि समाप्तिरिति पराशरमाधवीये निर्णयामृते चोक्तम्। कालादर्शेपि—दर्शो दशाहमध्ये स्यादूर्ध्वं तन्त्रं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

समापयेत्। त्रिरात्रादुत्तरं पित्रोर्मृताविति विनिश्चयः ॥' मदनपारिजाते तु गालवीयमापदनौरसपुत्रादिविषयम्। 'त्र्यहोर्ध्वमपि पित्रोर्न तन्त्रसमाप्तिः इत्युक्तम्। मदनरत्नेऽप्येवम्। मम तु देशाचाराद्व्यवस्थेति प्रतिभाति।

अथास्थिसंचयः। तत्राश्वलायनेन च कृष्णपक्षे एकादशीत्रयोदशीदर्शेषु अषाढाफल्गुनीप्रोष्ठपदाभिन्नर्क्षे उक्तम्, तदाशौचमध्येऽसंभवे तदूर्ध्वं च प्रागब्दात्करणे ज्ञेयम्। आशौचमध्ये तु मदनरत्ने संवर्तः—'प्रथमेऽह्नि तृतीये वा सप्तमे नवमे तथा। अस्थिसंचयनं कार्यं दिने तद्गोत्रजैः सह ॥' छन्दोगपरिशिष्टे तु—'अपरद्युस्तृतीये वा अस्थिसञ्चयनं भवेत्।' इति द्वितीयेऽप्युक्तम्। विष्णुकात्यायनौ—'संचयनं चतुर्थ्याम्' इति माधवीये यमः—'भौमार्कमन्दवारेषु तिथियुग्मे विवर्जयेत्। वर्जयेदेकपादर्क्षे द्विपादर्क्षेऽस्थिसंचयम् ॥ प्रदातृजन्मनक्षत्रे त्रिपादर्क्षे विशेषतः।' ब्राह्मे—'चतुर्थे ब्राह्मणानां तु पञ्चमेहनि भूभृताम्। नवमे वैश्यजातीनां शूद्राणां दशमात्परम् ॥' दशमेऽहनीति वा पाठः। शौनकः—'पलाशेष्वस्थिदाहे च सद्यःसंचयनं भवेत् ॥' काम्यमरणे तु तस्त त्रिरात्रमाशौचम्, द्वितीये त्वस्थिसंचयः इत्युक्तम्। अङ्गिराः—'प्रेतीभूतं तथोद्दिश्य यः शुचिर्न करोति चेत् देवतानां तु यजनं तं शपन्त्यथ देवताः ' तद्विधिः स्वस्वसूत्रे भट्टकृतौ च ज्ञेयः।

हेमाद्रौ नागरखण्डे—त्रीणि संचयनस्यार्थे तानि वै शृणु सांप्रतम्। यत्र स्थाने भवेन्मृत्युस्तत्र श्राद्धं प्रकल्पयेत् ॥ एकोद्दिष्टं ततो मार्गे विश्रामो यत्र कारितः ॥ ततः संचयनस्यार्थे तृतीयं श्राद्धमिष्यते ॥' अपरार्के मदनरत्ने च ब्राह्मे—'सद्यःशौचे तथैकाहे सद्यःसंचयनं भवेत्। त्र्यहाशौचे तृतीयेऽह्नि कर्तव्यस्त्वस्थिसंचयः ॥' तत्रैव—'श्मशानदेवतायागं चतुर्थे दिवसे चरेत्। मृन्मयेषु च भाण्डेषु कुम्भेषु रुचकेषु वा ॥ सुपक्वैर्भक्ष्यभोज्यैश्च पायसैः पानकैस्तथा। फलैर्मूलैर्वनोत्थैश्च पूज्याः क्रव्याददेवताः ॥ धूपो दीपस्तथा माल्यमर्घ्यं देयं त्वरान्वितैः। तत्र पात्राणि पूर्णानि श्मशानाग्नेः समन्ततः ॥ निवेदयद्भिर्वक्तव्यं तैः सर्वैरहंकृतैः। नमः क्रव्यादमुख्येभ्यो देवेभ्य इति सर्वदा ॥ येऽत्र श्मशाने देवाः स्युर्भगवन्तः सनातनाः। तेऽस्मत्सकाशाद्गृह्णन्तु बलिमष्टाङ्गमक्षयम् ॥ प्रेतत्यास्य शुभान् लोकान् प्रयच्छन्तु च शाश्वतान्। अस्माकमायुरारोग्यं सुखं च ददतां चिरम् ॥ एवं कृत्वा बलीन्सर्वान्धीरेणाभ्युक्ष्य वाग्यतः। एवं दत्वा बलिं चैव दद्यात्पिण्डत्रयं बुधः ॥ एकं श्मशानवासिभ्यः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

प्रेतायैव तु मध्यम्। तृतीयं तत्सखिभ्यश्च दक्षिणासंस्थमादरात्॥ ततो यज्ञियवृक्षोत्थां शाखामादाय वाग्यतः प्रेतस्यास्थीनि गृह्णाति प्रधानाङ्गोद्भवानि च॥ शिरसो वक्षसः पाण्योः पार्श्वाभ्यां चैव पादतः। पञ्चगव्येन संस्नाप्य क्षौमवस्त्रेण वेष्ट्य च॥ प्रक्षिप्य मृन्मये भाण्डे नवे साच्छादने शुभे॥ अरण्ये वृक्षमूले वा शुद्धे संस्थापयत्यपि। गृहीत्वास्थीनि तत्कुम्भं नीत्वा तोये विनिक्षिपेत्॥ ततः संमार्जनं भूमेः कर्तव्यं गोमयाम्बुभिः। पूजां च पुष्पधूपाद्यैर्बलिभिः पूर्ववत्क्रमात्॥' इति॥

अथ तीर्थेऽस्थिक्षेपविधिः। तत्रैव—'तत्स्थानाच्छनकैर्नीत्वा कदाचिज्जाह्नवीजले। कश्चित्क्षिपति सत्पुत्रो दौहित्रो वा सहोदरः॥ मातृकुलं पितृकुलं वर्जयित्वा नराधमः। अस्थीन्यन्यकुलस्थस्य नीत्वा चान्द्रायणं चरेत्॥' तत्रैव ब्रह्माण्डपुराणे—'अस्थीनि मातापितृपूर्वजानां नयन्ति गङ्गामपि ये कथंचित्। सद्बान्धवस्यापि दयाभिभूतास्तेषां तु तीर्थानि फलप्रदानि॥ स्नात्वा ततः पञ्चगव्येन सिक्त्वा हिरण्यमध्वाज्यतिलैश्च योज्य। ततस्तु मृत्पिण्डपुटे निधाय पश्यन् दिशं प्रेतगणोपरूढाम्॥ नमोस्तु धर्माय वदेत्प्रविश्य जलं स मे प्रीति इति क्षिपेच्च। उत्थाय भास्वन्तमवेक्ष्य सूर्यं स दक्षिणां विप्रमुखाय दद्यात्॥ एवं कृते प्रेतपुरस्थितस्य स्वर्गे गतिः स्यात्तु महेन्द्रतुल्या॥' यमः—'गङ्गातोयेषु यस्यास्थि क्षिप्यते शुभकर्मणः। न तस्य पुनरावृत्तिर्ब्रह्मलोकात्सनातनात्॥' तथा—'अस्तं गते गुरौ शुक्रे तथा मासे मलिम्लुचे। गङ्गायामस्थिनिक्षेपं न कुर्यादिति गौतमः॥' दशाहान्तर्न दोषः। 'दशाहाभ्यन्तरे यस्य गङ्गातोयेऽस्थि मज्जति। गङ्गायां मरणे यादृक् तादृक् फलमवाप्नुयात्॥' इति मदनरत्ने वृद्धमनूक्तेः।

शौनकः—'शौनकोऽहं प्रवक्ष्यामि अस्थिक्षेपविधिं क्रमात्। आदौ ग्रामाद्बहिर्गत्वा स्नानं कुर्यात्सचैलकम्॥ प्रोक्षयेत्पञ्चगव्येन भुवं मन्त्रैर्विचक्षणः।' गायत्र्याद्यैः पञ्चगव्यमन्त्रैर्निखातास्थिभूमिं प्रोक्षेदित्यर्थः। 'उपसर्पादिभिर्मन्त्रैः प्रार्थनं खननं तथा। मृत्तिकोद्धरणं चास्थ्नां ग्रहणं च यथाक्रमम्॥' उपसर्पेति चतुर्भिर्मन्त्रैः क्रमेण प्रार्थना ज्ञेयम्। 'स्नात्वास्थिशुद्धिं कुर्वीत\एतोन्विन्द्रेति सूक्ततः। स्पृष्ट्वा स्पृष्ट्वा ततः स्नानं पञ्चगव्येन शुध्यति॥ दश स्नानानि कुर्वीत तत्तन्मन्त्रैर्विचक्षणः। गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम्। भस्म मृन्मधु वारीणि मन्त्रतस्तानि वै दश॥ कुशैः संमार्जयेदस्थीन्यतो देवेति मन्त्रतः। एतोन्विन्द्रं शुचीवेति नतमहं इतीति च॥ पावमानीर्यमाग्ने च रुद्रसूक्तं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

यथाक्रमम् ॥' एतैः कुशैर्मार्जनम् । 'हेमश्राद्धं ततः कुर्यात्पितॄनुद्दिश्य यत्नतः । पिण्डदानं प्रकुर्वीत ततश्च तिलतर्पणम् ॥' अस्थिक्षेपाङ्गं चेदम् । 'अजिनं कम्बला दर्भा गोकेशाः शाणएव च । भूर्जपत्रं ताडपत्रं सप्तधा वेष्टनं स्मृतम् ॥ हैमं च मौक्तिकं रौप्यं प्रवालं नीलकं तथा । निक्षिपेदस्थि-मध्ये तु शुद्धिर्भवति नान्यथा ॥ ततो होमं प्रकुर्वीत तिलाज्येन विचक्षणः । उदीरतेति सूक्तेन हुनेदष्टोत्तरं शतम् ॥ ततो गत्वा क्षिपेत्तीर्थे स्पर्शदोषो न विद्यते । मूत्रं पुरीषाचमनं कुर्वन्नास्थीनि धारयेत् ॥' अत्र दशदानं वैतरणी ऋणमोक्षपापधेनुदानमुक्तम् । दिवोदासीये काशीखण्डे—'धनं-जयोऽपि धर्मात्मा मातृभक्तिपरायणः । आदायास्थीन्यथो मातुर्गङ्गा-मार्गस्थितोऽभवत् ॥ पञ्चगव्येन संस्नाप्य तथा पञ्चामृतेन वै । यक्षकर्द-मलेपेन क्षिप्त्वा पुष्पैः प्रपूज्य च ॥ आवेष्ट्य नेत्रवस्त्रेण ततः पट्टाम्बरेण च । ततः सुरसवस्त्रेण ततो माञ्जिष्ठवाससा ॥ नेपालकम्बलेनाथ मृदा चाथ विशुद्धया । ताम्रसंपुटके कृत्वा मातुरङ्गान्यथो वहत् ॥' व्यासः—'पट्टवस्त्रं च कौशेयं माञ्जिष्ठं श्वेतवस्त्रकम् । कम्बलं शाणपट्टं च अजिनं च तथोत्तरम् ॥' एषां विकल्पः । अन्यश्चात्र विशेषस्त्रिस्थलीसेतौ दिवो-दासीये च ज्ञेयः । संचयनोत्तरं श्राद्धमाहाश्वलायनः—'श्राद्धमस्मै दद्युः' इति । स्मृत्यर्थसारे—'संचयने कृते मनुष्यलोकात्प्रेतलोकं गच्छतः पाथे-यश्राद्धमामेन कार्यमिति । अनुपनीतस्य न संचयनम्' ।

अथ नवश्राद्धम् । पृथ्वीचन्द्रोदयेऽङ्गिराः—'प्रथमेऽह्नि तृतीये च पञ्चमे सप्तमे तथा । नवमैकादशे चैव तन्नवश्राद्धमुच्यते ॥' शिवस्वामी—'नव-श्राद्धानि पञ्चाहुराश्वलायनशाखिनः आपस्तम्बाः षडित्याहुर्विभाषा त्वित-रेषु हि ॥' पञ्च एकादशाहिकं विना । 'मरणाद्विषमेषु दिनेष्वेकैकं नवश्राद्धं कुर्यादानवमात्, यदि नवमं विच्छिद्येतैकादशे तत्कुर्यात् । इति मदनरत्ने बौधायनोक्तेः । भविष्ये—नव सप्त विशां राज्ञां नवश्राद्धान्य-नुक्रमात् । आद्यन्तयोर्वर्णयोस्तु षडित्याहुर्महर्षयः ॥' हेमाद्रौ वृद्धवसिष्ठः—'अलब्ध्वा तु नवश्राद्धं प्रेतत्वान्नैव मुच्यते । अर्वाक् तु द्वादशाहस्य लब्ध्वा तरति दुष्कृतम् ॥' अतः षडेव । एतान्येव विषमश्राद्धानीत्यु-च्यन्ते । नागरखण्डे तु—'पञ्चमे सप्तमे तद्वदष्टमे नवमे तथा । दशमै-कादशे चैव नवश्राद्धानि तानि च ॥' इत्युक्तम् । कात्यायनस्तु—'चतुर्थे पञ्चमे चैव नवमैकादशे तथा । यदत्र दीयते जन्तोस्तन्नवश्राद्धमुच्यते ॥' प्रथमे सप्तमे चैवेत्याद्यपादे व्यासपाठः । बह्वृचानां तु—'नवश्राद्धं दशा-हानि नवमिश्रं तु षड्ऋतून् ।' इत्युक्तं नारायणवृत्तौ । दीपिकायाम्—

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'अथ तनुयादाद्ये चतुर्थे दिने श्राद्धं पञ्चमसप्तमाष्टनवदिग्रुद्रेषु युग्मर्द्धिजैः।' 'प्रथमेह्नि तृतीयेह्नि पञ्चसप्तनवस्वपि। द्वौ द्वौ पिण्डौ प्रदातव्यौ शेषेष्वेकं तु विन्यसेत् ॥' एको विषमश्राद्धेऽवयवपिण्डश्चैक इति द्वावित्यर्थः। अत्र शाखाभेदाद्व्यवस्था।

अपरार्के भविष्ये—'नवश्राद्धं त्रिपक्षं च षण्मासं मासिकानि च। न करोति सुतो यस्तु तस्याधः पितरो गताः ॥' वाराहे—'गतोऽसि दिव्यलोकं त्वं कृतान्तविहितात्पथः। मनसा वायुभूतेन विप्रे त्वाहं नियोजये ॥ पूजयिष्यामि भोगैस्त्वामेवं विप्रं निमन्त्रयेत् ॥ आवाहनेपि तत्रैव—'इह लोकं परित्यज्य गतोसि परमां गतिम्। मनसा वायुभूतेन विप्रे त्वाहं नियोजये ॥' इति। तत्रैव बह्वृचपरिशिष्टे—'अनूदकमधूपं च गन्धमाल्यविवर्जितम्। नवश्राद्धममन्त्रं च पिण्डोदकविवर्जितम्।' उदकमर्घ्यः। पिण्डोदकं शुन्धन्तां पितर इत्यवनेजनादि। 'एकोद्दिष्टेषु सर्वेषु न स्वधा नाभिरम्यताम्। नाग्नौकरणमन्त्रश्च एकं वाथ तिलोदकम् ॥ अनपत्येषु सर्वेषु न स्वधा नाभिरम्यताम्। स्वस्त्यस्तु विसृजेदेवं सकृत्प्रणववर्जितम् ॥ एकोद्दिष्टस्य पिण्डे तु अनुशब्दो न विद्यते। पितृशब्दं न कुर्वीत पितृहा चोपजायते ॥' सपिण्डनात्प्रागिति हेमाद्रिः। तेन 'न च स्वधां प्रयुञ्जीत प्रेतश्राद्धे दशाहिके, इति ऋष्यशृङ्गोक्तौ दशाहिकोक्तेरेकादशाहे स्वधाप्रयोग एवेति हारलता परास्ता।

रत्नावल्याम्—'आशिषो द्विगुणा दर्भा जयाशीः स्वस्तिवाचनम्। पितृशब्द स्वसंबद्धः शर्मशब्दस्तथैव च ॥ पात्रालम्भोऽवगाहश्च उल्मुकोल्लेखनादिकम्। तृप्तिप्रश्नश्च विकिरः शेषप्रश्नस्तथैव च ॥ प्रदक्षिणा विसर्गश्च सीमान्तगमनं तथा। अष्टादश पदार्थाश्च प्रेतश्राद्धे विवर्जयेत् ॥' अत्र स्वधापितृनमःशब्दानां तिलोसीतिमन्त्रे प्रेतशब्दोहेन तूष्णीं वा तिलावपनम्। तूष्णीमर्घ्यदानम्। अमुष्मै स्वाहेति प्रेतनाम्ना पाणिहोमः। नाम्ना एकः पिण्डः। निनयनमन्त्रे ऊहः। अनुमन्त्रणादि त्वमन्त्रकम्। अभिरम्यतामिति विसर्जनम्। एवं नवश्राद्धवर्जैकोद्दिष्टेषु। 'नवश्राद्धे त्वगन्त्रकं सर्वम्' इति नारायणवृत्तिः। क्रियानिबन्धे—'उत्तानं स्थापयेत्पात्रमेकोद्दिष्टे सदा बुधः। न्युब्जं तु पार्वणे कुर्यात्तस्योपरि कुशान्न्यसेत् ॥ नवश्राद्धं गृहे कुर्याद्धार्या यत्राग्नयोऽपि वा। सपिण्डीकरणान्तानि प्रेतश्राद्धानि यानि वै ॥ तानि स्युर्लौकिके वह्नावित्याह त्वाश्वलायनः ॥' इदं संभवेऽन्नेन कार्यम्। 'नवश्राद्धेषु यच्छिष्टं गृहपर्युषितं च यत्। दंपत्योर्भुक्तशेषं च न तद्भुञ्जीत कर्हिचित् ॥' इत्यङ्गिरोवचनलिङ्गात्। 'द्वाभ्यां

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तदा तु कृच्छ्राभ्यां शुद्धिः स्यात्तु विवेकिनाम् ।' इति ब्राह्मे उक्तम् । विघ्ने तु निर्णयामृते कण्वः—'नवश्राद्धं मासिकं च यद्यदन्तरितं भवेत् । तत्तदुत्तरसातन्त्र्याद्नुष्ठेयं प्रचक्षते ॥' हेमाद्रौ गालवः—'शावे तु सूतकं चेत्स्यान्निशायां च मृतौ यथा । नवश्राद्धानि देयानि यथाकालं यथाक्रमम् ॥' निशायामाशौचान्ते द्व्यहवृद्धौ । अन्वारोहणे तु—'नवश्राद्धानि सर्वाणि सपिण्डीकरणं पृथक् । एक एव वृषोत्सर्गो गौरेका तत्र दीयते ॥'

आशौचान्त्यदिने कार्यमुक्तं ब्राह्मे—'यस्य यस्य तु वर्णस्य यद्यत्स्यात्पश्चिमं त्वहः । स तत्र वस्त्रशुद्धिं च गृहशुद्धिं करोत्यपि ॥ समाप्य दशमं पिण्डं प्रेतस्पृष्टे तु वाससी । अन्त्यानामाश्रितानां च त्यक्त्वा स्नानं करोति च ॥ श्मश्रुलोमनखानां च यत्त्याज्यं तज्जहात्यपि । गौरसर्षपकल्केन तिलकल्केन संयुतम् ॥ शिरःस्नानं ततः कृत्वा तोयेनाचम्य वाग्यतः । वृषभं गां सुवर्णं च स्पृष्ट्वा शुद्धो भवेन्नरः ॥' क्रियानिबन्धे गृह्यकारिकायाम्—'अत्र पिण्डत्रयं दद्युस्तत्सखिभ्यस्तथादिमम् । प्रेताय मध्यमं तद्वत्तृतीयं च यमाय वै ॥' तथा 'कर्त्रात्र प्रार्थिताः सन्तो ज्ञातिसंबन्धिबान्धवाः । दद्युरभ्यङ्गतः पूर्वं त्रींस्त्रोन्धर्मोदकाञ्जलीन् ॥ पूर्ववन्नामगोत्राभ्यां नियमो नेह कश्चन ॥' मदनरत्ने विष्णुहारीतौ—'आशौचान्ते कृतश्मश्रुकर्माणस्तिलकल्कैः सर्षपकल्कैर्वा स्नाताः शुक्लवाससो गृहं प्रविशेयुस्तत्र शान्तिकं कृत्वा ब्राह्मणपूजनं कुर्युः ।' इति ।

देवलः—'दशमेहनि संप्राप्ते स्नानं ग्रामाब्दहिर्भवेत् । तत्र त्याज्यानि वासांसि केशश्मश्रुनखानि च ॥' अपरार्के बृहस्पतिः—'नवमे वाससां त्यागो नखरोम्णां तथान्तिमे ।' तत्रैव व्यासः—'अशौचान्त्यदिने क्षौरं जनन्यां च गुरौ मृते ।' एतत्प्रेताल्पवयसामित्याहापस्तम्बः—'अनुभाविनां च परि वपनम्' इति । अनुभाविनः कनिष्ठा इनि विज्ञानेश्वररत्नाकरादयः । 'आशौचमनुभवतां पुंसां सर्वाशौचे तु मुण्डनम् ।' 'आज्ञया नरपतेर्द्विजन्मनां दारकर्ममृतसूतकेषु च ॥ बन्धमोक्षमखदीक्षणेष्वपि क्षौरमिष्टमखिलेषु चोडुषु ॥' इति रत्नमालोक्तेर्जननाशौचेपीति शुद्धितत्त्वादयः । अत्र देशाचारतो व्यवस्था । परि शिखावर्जम् 'केशश्मश्रुलोमनखानि वापयीत शिखावर्ज्यम्' इति गोभिलोक्तेः । यत्त्वापस्तम्बः—'न समावृत्ता वपेयुरन्यत्र विहारादित्येके' । विहारो दर्शादियागः । तेन विना समावृत्ता गृहस्था न वपेयुरित्यर्थः । यच्च—'वृथा छिनत्ति-यः केशांस्तमाहुर्ब्रह्मघातिनम् ।' इति, तत्—'केशश्मश्रु धारयतामग्र्या भवति संतति ।' इति दानधर्मोक्तकाम्यपरम् । अनुभाविनः पुत्रादय इत्येके ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'पुत्रः पत्नी च वपनं कुर्यादन्ते यथाविधि। पिण्डदानोचितोऽन्योपि कुर्यादित्थं समाहितः ॥' इत्यपरार्के व्यासोक्तेः। यत्तु मिताक्षरायाम्—'द्वितीयेऽहनि कर्तव्यं क्षुरकर्म प्रयत्नतः। तृतीये पञ्चमे वापि दशमे वाऽप्रदानतः ॥' इति। आप्रदानतः इति चतुर्थादीनि। तत्प्रथमदिनेऽसंभवे ज्ञेयम्। 'अलुप्तकेशो यः पूर्वं सोत्र केशान्प्रवापयेत्। द्वितीयेऽह्नि तृतीयेह्नि पञ्चमे सप्तमेपि वा॥ यावच्छ्राद्धं प्रदीयेत तावदित्यपरं मतम्॥' इति माधवीये मदनरत्ने च बौधायनोक्तेः। मदनपारिजाते तु दशमे प्रथमे च समुच्चय उक्तः। यत्तु—'दशमं पिण्डमुत्सृज्य रात्रिशेषे शुचिर्भवेत्।' इति, तदेकादशाहश्राद्धाङ्गविप्रनिमन्त्रणार्थं ज्ञेयम्॥

अथैकादशाहः। मनुः—'विप्रः शुध्यत्यपः स्पृष्ट्वा क्षत्रियो वाहनायुधे। वैश्यः प्रतोदं रश्मीन्वा यष्टिं शूद्रः कृतक्रियः॥' शुद्धितत्त्वे देवलः—'अघाहःसु निवृत्तेषु सुस्नाताः कृतमङ्गलाः। आशौचाद्विप्रमुच्यन्ते ब्राह्मणान्स्वस्ति वाच्य च॥' याज्ञवल्क्यः—'मृतेऽहनि तु कर्तव्यं प्रतिमासं तु वत्सरम्। प्रतिसंवत्सरं चैव आद्यमेकादशेहनि।' क्षत्रियाद्यैराशौचेप्येकादशेऽह्नि श्राद्धं कार्यम्। 'आद्यं श्राद्धमशुद्धोऽपि कुर्यादेकादशेऽहनि। कर्तुस्तात्कालिकी शुद्धिरशुद्धः पुनरेव सः॥' इति हेमाद्रौ शङ्खोक्तेः। पैठीनसिः—'एकादशेह्नि यच्छ्राद्धं तत्सामान्यमुदाहृतम्। चतुर्णामपि वर्णानां सूतकं तु पृथक्पृथक्॥' यत्तु मरीचिः—'आशौचान्ते ततः सम्यक् पिण्डदानं समाप्यते। ततः श्राद्धं प्रदातव्यं सर्ववर्णेष्वयं विधिः॥' इति तत्सर्ववर्णानां दशाहाशौचपरम्। यत्तु विष्णुः—'अथाशौचापगमे' इति। यच्च गौडग्रन्थे हारीतः—'श्वोभूते एकोद्दिष्टं कुर्यात्'। यच्च बैजवापः—'ऊर्ध्वं दशम्या अपरेद्युः' इति तद्विप्रविषयम्। एतेन दशमपिण्डोत्कर्षपक्षे अवयवपिण्डासमाप्तौ कथमेकादशाहे श्राद्धमिति मूर्खोक्तिः परास्ता। वचनादाशौचमध्य इव तत्राप्यविरोधात्।

भविष्ये—'एकादशयभे विप्रेभ्यो दद्यादेकादशेऽहनि। भोजनं तत्र वैकस्मै ब्राह्मणाय महात्मने॥' यत्तु मात्स्ये—'एकादशेऽहनि तथा विप्रानेकादशैव तु। क्षत्रादिः सूतकान्ते तु भोजयेदयुजो द्विजान्॥' इति। तद्रुद्रगणश्राद्धपरमिति मदनपारिजातः। गौडास्त्वस्माद्वचनात्क्षत्रियादीनामाशौचान्त एवेत्याहुः। रामायणेपि—'समतीते दशाहे तु कृतशौचो यथाविधिं। चक्रे द्वादशिकं श्राद्धं त्रयोदशिकमेव च॥' द्वादशिकं द्वादशाहेन निर्वर्त्यं। त्रयोदशाहश्राद्धं त्रयोदशिकं। चतुर्दशाहविधेयं सपिण्डनपाथेयादि। क्षत्रियाणां द्वादशाहाशौचे त्रयोदशे महैकोद्दिष्टं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

चतुर्दशे सपिण्डनम् । द्विविधवाक्यादेकादशाहाशौचान्तयोर्विकल्प इत्येके । सद्यःशौचादौ युद्धहतादेरेकादशाहे अन्येषामाशौचान्त इति वयम् । कौर्मे—'एकादशेऽह्नि कुर्वीत प्रेतमुद्दिश्य भावतः । द्वादशे वाह्नि कर्तव्यमनिन्द्येप्यथवाहनि ॥' निन्द्यं प्रेतक्रियाकालयुक्तम् । एकादशे तु न निषेध इत्युक्तं प्राक् । बृहस्पतिः—'वस्त्रालंकारशय्यादि पितुर्यद्वाहना-दिकम् । गन्धमाल्यैः समभ्यर्च्य श्राद्धभोक्त्रे तदर्पयेत् ॥ श्रोत्रिया भोजनीयास्तु नव सप्त त्रयोदश । जातयो बान्धवा निःस्वास्तथा चाति-थयोपरे ॥' देवयाज्ञिकनिबन्धे—'एकादशसु विप्रेषु प्रेतमावाह्य भोजयेत् । तत्राद्याय च शय्यादि दद्यादाद्यमिति स्मृतम् ॥' विष्णुः—'एकवन्मन्त्रा-नूहेतैकोद्दिष्टे' । बहुवचनान्तानेकवचनान्तान्वदेदित्यर्थः । एतत् दृष्टार्थत्वे ।

अस्य विघ्ने गौणकालमाह हेमाद्रौ बौधायनः— 'एकोद्दिष्टं श्व एव स्याद्द्वादशेऽहनि वा पुनः । अत ऊर्ध्वमयुग्मेषु कुर्वीताहःसु शक्तितः ॥ अर्धमासेऽथ वा मासि ऋतौ संवत्सरेपि वा ॥' इति । तत्रैव लघुहारीतः— 'एकोद्दिष्टं तु कुर्वीत पाकेनैव सदा स्वयम् । अभावे पाकपात्राणां तदहः समुपोषणम् ॥' गोभिलः—'ब्राह्मणं भोजयेदाद्ये होतव्यमनलेऽथवा । पुनश्च भोजयेदेकं द्विरावृत्तिर्भवेदिति ॥' एतदाद्यमासिकाद्याब्दिकयोः सिद्ध्यर्थमिति भट्टाः । तेन महैकोद्दिष्टं षोडशश्राद्धाद्भिन्नमेव । अत एवाद्यं सर्वैकोद्दिष्टप्रकृतिभूतमेकादश इति विज्ञानेश्वरः । अन्ये त्वाद्य-मासिकाब्दिकयोः 'आद्यमेकादशेऽहनि' इति नियमादभेदमाहुः । द्वयो-स्तन्त्रत्वबाधार्थं गोभिलीयमित्यन्ये । युद्धहतादौ तु हेमाद्रौ पृथ्वी-चन्द्रोदये पैठीनसिः—'सद्यःशौचेपि दातव्यं प्रेतस्यैकादशेऽहनि । स एव दिवसस्तस्य श्राद्धशय्यासनादिषु ॥' एवमेकाहादौ । अतोऽत्र द्वितीये-ह्न्येकादशाहं वदन् ढौण्ढुः शूलपाणिः स्मार्तगौडश्च परास्तः । एतेन 'आद्यमेकादशेऽहनि' इत्याशौचानन्तरदिनपरमिति विष्णूक्तेः । प्रागु-क्तशङ्खादिवचनानां चानाकरत्वादिति वदन्तः कल्पतरुवाचस्पतिप्रमुखाः सर्वमहानिबन्धविरोधादुपेक्ष्याः । उशना—'त्र्यहाशौचेऽपि कर्तव्यमाद्य-मेकादशेऽहनि । अतीतविषये सद्यस्त्र्यहाेर्ध्वं वा तदिष्यते ॥'

याज्ञवल्क्यः—'एकोद्दिष्टं दैवहीनमेकार्घ्यैकपवित्रकम् । आवाहनाग्नौ-करणरहितं त्वपसव्यवत् ॥ उपतिष्ठतामित्यक्षय्यस्थाने विप्रविसर्जने । अभिरम्यतामिति वदेयुस्तेऽभिरताः स्महे इति ॥' अग्नौकरणनिषेधोन्य-परः । बह्वृचानां सर्वैकोद्दिष्टेषु तद्भवत्येवेत्युक्तं प्राक् । स्वदितमिति तृप्ति-प्रश्न इति कात्यायनः । प्रथमे पात्रे संस्रवानित्यस्य तृतीयेनापिधानस्य च

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

बाधान्न पात्रन्युब्जतेति शूलपाणिः। प्रचेताः—'नात्र पात्रालम्भो नाशिषः प्रार्थयेत् ॥' अत्र विशेषो हेमाद्रौ वाराहे—'श्मश्रुकर्म तु कर्तव्यं नखच्छेदस्तथैव च। स्नपनाभ्यञ्जने दद्याद्विप्राय विधिपूर्वकम् ॥' तथा—'उपवेश्यासने भद्रे छत्रं तत्र प्रकल्पयेत्। पश्चादुपानहौ दद्यात्सर्वाण्याभरणानि च ॥' विष्णुः—'दक्षिणान्तं श्राद्धमुक्त्वा दत्ताक्षय्योदकेषु चतुरङ्गुलपृथ्वीस्तावदन्तरालास्तावदधःखाता वितस्त्यायतास्तिस्रः कर्षूः कुर्यात्। कर्षूणां समीपेऽग्निमाधाय परिस्तीर्यैकैकस्मिन्नाहुतित्रयं जुहुयात् सोमाय पितृमते स्वधानमोऽग्नये कव्यवाहनाय यमायाङ्गिरस्वते इति ॥' स्थानत्रये प्राग्वत्पिण्डनिर्वपणं दधिमधुघृतमांसैः कर्षूत्रयं पूरयित्वैतत्त इति जपेत्। शेषं नवश्राद्धवत्। अत्र साग्नेरप्यन्ते वैश्वदेव इत्युक्तं प्राक्। इदं दशाहकर्त्रा पुत्रेण वा कार्यमित्युक्तं। क्रियानिबन्धे गृह्यकारिकायाम्—'तिलोसि प्रेतदेवत्यः प्रेतलोकान्हिनोन्तकम्। मन्त्रमुक्त्वा तिलानेवं प्रक्षिपेदर्घ्यपात्रतः ॥ दक्षिणामुदकुम्भं च सान्नं दत्त्वा तथैव गाम्। तस्मै दद्याद्भुक्तशेषं तद्भाण्डान्यपि भाजनम् ॥' विप्राभावेऽग्नावेकोद्दिष्टम्। अग्नौ पायसं श्रपयित्वाज्यभागान्ते तदग्रे श्राद्धप्रयोगं कृत्वाग्नौ प्रेतमावाह्य गन्धाद्यैः संपूज्य पृथिवी ते पात्रमित्यादिनान्नं संकल्प्योदीरतामवर इत्यष्टाभिश्चतुरावृत्ताभिर्द्वात्रिंशदाहुतीर्हुत्वा पिण्डदानादिश्राद्धं समापयेत्' इति। याज्ञवल्क्यः—'एतत्सपिण्डीकरणमेकोद्दिष्टं स्त्रिया अपि' ॥

अथ वृषोत्सर्गः। स च नित्यः काम्यश्च। 'न करोति वृषोत्सर्गं सुतीर्थे वा जलाञ्जलिम्। न ददाति सुतो यस्तु पितुरुच्चार एव सः ॥' उच्चारः पुरीषम्। 'एष्टव्या बहवः पुत्रा यद्येकोपि गयां व्रजेत्। यजेत वाश्वमेधेन नीलं वा वृषमुत्सृजेत् ॥' इति मात्स्यकौर्मोक्तेः—'एकादशेऽह्नि प्रेतस्य यस्य नोत्सृज्यते वृषः। प्रेतत्वं सुस्थिरं तस्य दत्तैः श्राद्धशतैरपि ॥' इति षट्त्रिंशन्मते निन्दाश्रुतेः। 'एवं कृत्वा ह्यवाप्नोति फलं वाजिमखोदितम्। यमुद्दिश्योत्सृजेन्नीलं स लभेत परां गतिम् ॥ वृषोत्सृष्टः पुनात्येव दशातीतान्दशापरान् ॥' इति देवीपुराणे भविष्यादौ फलश्रुतेश्च। अयं द्वादशाहे उक्तो भविष्ये—'चैत्र्यां वापि तृतीयायां वैशाख्यां द्वादशेऽह्नि वा।' इति। विष्णुधर्मे तु—मृताहेप्युक्तः—'विषुवद्वितये चैव मृताहे बान्धवस्य च।' इति। अयं गृहे न कार्यः। 'न गृहे मोचयेन्नीलं कामयन्पुष्कलं फलम्।' इति कालिकापुराणात्। कामधेनौ—'वत्सराभ्यन्तरे पित्रोर्वृषस्योत्सर्गकर्मणि। वृद्धिश्राद्धं न कुर्वीत तदन्यत्र समारभेत् ॥'

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तल्लक्षणं तु ब्राह्मे—'लोहितो यस्तु वर्णेन मुखे पुच्छे च पाण्डुरः। श्वेतः खुरविषाणाभ्यां स नीलो वृष उच्यते ॥' श्वेतवर्णस्य मुखादीनि श्यामानि श्यामस्य वा श्वेतानि यस्य सोपि नीलवृष उक्तो मात्स्यादौ। देवीपुराणे—'चतस्रो वत्सिका भद्रा द्वे वा संभवतोपि वा।' यत्तु—पठन्ति 'वृषोत्सर्जनवेलायां वृषाभावः कथंचन। मृद्भिः पिष्टैश्च दर्भैर्वा वृषं कृत्वा विमोचयेत् ॥ न शक्यते वृषोत्सर्गो होमं वा तत्र कारयेत् ॥' इति, तन्निर्मूलम्। तद्विधिर्हेमाद्रौ भट्टकृतौ च ज्ञेयः। अत्र देवयाज्ञिकेन वृषोत्सर्गात्पूर्वं पुरुषसूक्तेन विष्णुरूपिप्रेतोद्देशेन विष्णुतर्पणमुक्तम्। तत्र मूलं चिन्त्यम्।

पारस्करः—'सव्येन पाणिना पुच्छं समालम्ब्य वृषस्य तु। दक्षिणेनाप आदाय सतिलाः सकुशास्ततः ॥ प्रेतगोत्रं समुच्चार्य अमुकस्मै इति ब्रुवन्। वृष एष मया दत्तस्तं तारयतु सर्वदा ॥ सहेम सतिलं भूमावित्युच्चार्य विनिक्षिपेत् ॥' तथा—'विधारयेन्न तं कश्चिन्न च कश्चन वाहयेत्। न दोहयेच्च ता धेनूर्न च कश्चन बन्धयेत् ॥' स्त्रीषु विशेषः संग्रहे—पतिपुत्रवती नारी भर्तुरग्रे मृता यदि। वृषोत्सर्गं न कुर्वीत गां दद्याच्च पयस्विनीम् ॥' पतिपुत्रयोः साहित्यं विवक्षितम्। अन्वारोहणेपि गोदानमेवेत्युक्तं प्राक् आशौचान्तरेपि वृषोत्सर्गाद्यमासिकशय्यादि दद्यादेवेत्युक्तम्। क्रियानिबन्धे स्मृत्यन्तरे—'सूतके मृतके चैव द्वितीयं मृतकं यदि। पिण्डदानं प्रकुर्वीत वृषोत्सर्गं तथैव च। न हन्यात्सूतके कर्म द्वादशैकादशाहिकम्। शुद्धो वा यदि वाऽशुद्धः कुर्यादेवाविचारयन् ॥' इति।

अत्र पददानमुक्तं देवजानीये गारुडे एकादशाहं प्रक्रम्य—'तदह्नि दीयते सर्वैर्द्वादशाहे विशेषतः। पदानि सर्ववस्तूनि वरिष्ठानि त्रयोदश ॥ यो ददाति मृतस्येह जीवतोप्यात्महेतवे। सुखी भूत्वा महामार्गे वैनतेय स गच्छति ॥' तथा - आसनोपानहौ छत्रं मुद्रिका च कमण्डलुः। भोजनं भोजनाधारो वस्त्राण्यष्टविधं पदम् ॥' तथा—'भाजनासनदानेन मुद्रिकाभोजनेन च। आज्ययज्ञोपवीतेन पदं संपूर्णतां व्रजेत् ॥ महिषीरथगोदानात्सुखी भवति निश्चितम्। सर्वोपस्करयुक्तानि पदान्यत्र त्रयोदश ॥ यो ददाति मृतस्येह जीवन्नप्यात्महेतवे। स गच्छति परं स्थानं महाकष्टविवर्जितः ॥' त्रयोदश पदानीत्थं प्रेतायैकादशेहनि। दातव्यानि यथाशक्ति तेनाशौ प्रीणितो भवेत् ॥ अन्नं चैवोदकं चैवोपानहौ च कमण्डलुः। छत्रं वस्त्रं यथा यष्टिं लोहदण्डं तथाष्टमम् ॥ अग्नीष्टिकां च दीपं च तिलांस्ताम्बूलमेव च। चन्दनं पुष्पदानं चोपदानानि चतुर्दश ॥ ।योऽश्वं रथं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

गजं वापि ब्राह्मणे प्रतिपादयेत् । स्वमहिम्नोऽनुसारेण तत्तत्सुखमवाप्नुयात् ॥' इति । अत्र मूलं चिन्त्यम् ॥

अथ शय्यादानम् । हेमाद्रौ भविष्ये—'तस्माच्छय्यां समासाद्य सारदारुमयीं दृढाम् । दन्तपत्रचितां रम्यां हेमपट्टैरलंकृताम् । हंसतूलीप्रतिच्छन्नां शुभगण्डोपधानिकाम् । प्रच्छादनपटीयुक्तां गन्धधूपादिवासिताम् । तस्यां संस्थापयेद्धैमं हरिं लक्ष्म्या समन्वितम् ॥' अत्र हरिस्थाने प्रेतम् 'उच्छीर्षके घृतभृतं कलशं परिकल्पयेत् । ताम्बूलं कुङ्कुमक्षोदकर्पूरागरुचन्दनम् ॥ दीपिकोपानहौ छत्रं चामरासनभाजनम् । पार्श्वेषु स्थापयेद्भक्त्या सप्त धान्यानि चैव हि ॥ शयनस्थस्य भवति यदन्यदुपकारकम् । भृङ्गारकरकाद्यं तु पञ्च वर्णवितानकम् ॥' मन्त्रस्तु— यथा न कृष्णशयनं शून्यं सागरजातया । शय्या ममाप्यशून्यास्तु तथा जन्मनि जन्मनि ॥ यस्मादशून्यं शयनं केशवस्य शिवस्य च ॥' अर्धं तदेव । 'दत्त्वैवं तस्य सकलं प्रणिपत्य विसर्जयेत् । एकादशाहेपि तथा विधिरेषः प्रकीर्तितः ॥ विशेषं चात्र राजेन्द्र कथ्यमानं निशामय । तेनोपभुक्तं यत्किंचिद्वस्त्रवाहनभाजनम् ॥ यद्यदिष्टं च तस्यासीत्तत्सर्वं परिकल्पयेत् । तमेव पुरुषं हैमं तस्यां संस्थापयेत्तदा ॥ पूजयित्वा प्रदातव्या मृतशय्या यथोदिता ॥' पाद्मे—'मृतकान्ते द्वितीयेऽह्नि शय्यां दद्यात्सलक्षणाम् । काञ्चनं पुरुषं तद्वत्फलवस्त्रसमन्वितम् ॥ संपूज्य द्विजदांपत्यं नानामणिविभूषितम् । उपवेश्य तु शय्यायां मधुपर्कं ततो वदेत् । रजतस्य तु पात्रेण दधिदुग्धसमन्वितम् । अस्थि लालाटिकं गृह्य सूक्ष्मं कृत्वा सपायसम् ॥ भोजयेद्द्विजदांपत्यं विधिरेष सनातनः । एष एव विधिर्दृष्टः पार्वतीयैर्द्विजोत्तमैः ॥' एतत्प्रतिग्रहे तत्रैवोक्तम्— गृहीतायां तु तस्यां वै पुनः संस्कारमर्हति ।' शय्यादानफलं भविष्ये—'स्वर्गे पुरंदरपुरे सूर्यपुत्रालये तथा । सुखं वसत्यसौ जन्तुः शय्यादानप्रभावतः ॥ आभूतसंप्लवं यावत्तिष्ठत्यातङ्कवर्जितम् ॥ इति ॥

अथोदकुम्भः । हेमाद्रौ स्मृतिसमुच्चये—'एकादशाहात्प्रभृति घटस्तोयान्नसंयुतः । दिनेदिने प्रदातव्यो यावत्संवत्सरं सुतैः ॥' लौगाक्षिः— 'यस्य संवत्सरादर्वाक् सपिण्डीकरणं भवेत् । मासिकं चोदकुम्भं च देयं तस्यापि वत्सरम् ॥' उत्तरार्धे—'तस्याप्यन्नं सोदकुम्भं दद्यात्संवत्सरं द्विजे ।' इति याज्ञवल्क्यपाठः । सपिण्डनापकर्षेऽस्यापकर्षप्राप्ते बाधकमिदमिति शूलपाणिः । तन्न । प्रकृतिविकाराभावेन तदन्तन्यायाविषयत्वात् । मात्स्ये—'यावदब्दं च यो दद्यादुदकुम्भं विमत्सरः । प्रेतायान्न-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

समायुक्तं सोऽश्वमेधफलं लभेत् ॥' केचित्त्रयोदशाहमारभ्याहुस्तन्निर्मूलम् ॥ देदयाज्ञिकः—'सपिण्डनापकर्षे संवत्सरं यावदुदकुम्भं अर्वागेव दद्यात् नोर्ध्वम् ।' 'प्रेतलोकगतस्यान्नं सोदकुम्भं प्रयच्छत ।' इति गोविन्दराजधृतविष्णूक्तेः । 'अन्नं चैव स्वशक्त्या तु संख्यां कृत्वाब्दिकावधि । दातव्यं ब्राह्मणे स्कन्द घटादौ निष्क्रयं तु वा ॥ अपि श्राद्धशतैर्दत्तैरुदकुम्भं विना नराः । दरिद्रा दुःखिनस्तात भ्रमन्ति च भवार्णवे ॥ तेनापकृष्य दातव्यं प्रेतस्याप्युदकुम्भकम् ॥' इति गोभिलभाष्ये स्कान्दाच्च सपिण्डनात्प्रागेव तस्य विधानादूर्ध्वं निषेधादित्याह । तन्न । उदकुम्भे पार्वणविधिनानुपपत्तेरेवं व्याख्यायां मानाभावान्मिताक्षरादिविरोधाच्च । वचनं यदि समूलं तदा वृद्धावपकर्षं विधत्ते । 'प्रेतश्राद्धानि सर्वाणि सपिण्डीकरणं तथा ।' इति हेमाद्रौ शाठ्यायनोक्तेः । 'तस्याप्यन्नं सोदकुम्भम्' इति याज्ञवल्क्यविरोधाच्च ।

मदनरत्ने गौतमः—'अदैवं पार्वणं श्राद्धं सोदकुम्भमधर्मकम् । कुर्यात्प्रत्याब्दिकाच्छ्राद्धात्संकल्पविधिनान्वहम् ॥' अधर्मकं ब्रह्मचर्यादिनियमहीनम् । एतन्मासिकवदेकोद्दिष्टं पार्वणं वा कार्यम् । अपरार्कस्तु—'सपिण्डीकरणे वृत्ते पृथक्त्वं नोपपद्यते । पृथक्त्वे तु कृते पश्चात्पुनः कार्या सपिण्डता ॥' इति । लघुहारीतोक्तावपि-'तस्याप्यन्नं सोदकुम्भं देयं संवत्सरं द्विजे ।' इति याज्ञवल्कीये तस्येत्येकत्वोक्तेः सपिण्डनोत्तरमप्येकोद्दिष्टमेवेत्याह । अत्र पिण्डदानं कृताकृतम् । 'अहरहरन्नमस्मै ब्राह्मणायोदकुम्भं च दद्यात्पिण्डमप्येके निपृणन्ति' इति हेमाद्रौ पारस्करोक्तेः । श्राद्धाशक्तौ पिण्डमात्रमिति गौडाः । तन्न । अपिशब्दबाधापत्तेः । हारीतः—'मृते पितरि वै पुत्रः पिण्डमब्दं समाचरेत् । अन्नं कुम्भं च विप्राय प्रेतनिर्देशधर्मतः ॥' प्रेतशब्दोच्चारणेनेति हलायुधः । यद्वा प्रेतस्य निर्देशो यत्र तदेकोद्दिष्टं तद्धर्मकमित्यर्थः । अत्राशौचान्तदिनाद्यब्दान्तं यावद्वत्सरापूर्तेः शौचं नाधिकारिविशेषणम् । तेन मृतिदिनमारभ्यैतत्कार्यमिति केचित् । तन्न । हेमाद्रिधृतवचोविरोधात् । मध्ये आशौचादिना बाधे तु लोप एव दार्शवत् । तथा प्रथमाब्दे दीपदानमुक्तम् । देवजानीये गारुडे—'प्रत्यहं दीपको देयो मार्गे तु विषमे नरैः । यावत्संवत्सरं वापि प्रेतस्य सुखलिप्सया ॥ प्राङ्मुखोदङ्मुखं दीपं देवागारे द्विजालये । कुर्याद्याम्यमुखं पित्र्ये अद्भिः संकल्प्य सुस्थितम् ॥'

अथ मासिकानि । तानि च कृत्वेव सपिण्डनं कार्याणि । तथा च गोभिललौगाक्षी—'श्राद्धानि षोडशादत्त्वा नैव कुर्यात्सपिण्डनम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

श्राद्धानि षोडशापाद्य विदधीत सपिण्डनम् ॥' तानि त्वाह जातूकर्ण्यः—'द्वादश प्रतिमास्यानि आद्यं षाण्मासिकं तथा। त्रैपक्षिकाब्दिके चेति श्राद्धान्येतानि षोडश ॥' आद्यषाण्मासिकाब्दिकशब्दा ऊनमासिकोनषष्ठोनाब्दिकपराः। हेमाद्रौ तु—'सपिण्डीकरणं चैव इत्येतच्छ्राद्धषोडशम्' इत्युत्तरार्धे पाठः। तदा आद्यमूनमासिकं द्वादशाहे, षाण्मासिकं ऊनषष्ठोनाब्दिके इत्यर्थः। कात्यायनस्त्वन्यथाह—'द्वादश प्रतिमास्यानि आद्यषण्मासिके तथा। सपिण्डीकरणं चैव इत्येतच्छ्राद्धषोडशम् ॥ एकाहेन तु षण्मासा यदा स्युरपि वा त्रिभिः। न्यूनः संवत्सरश्चैव स्यातां षण्मासिके तदा ॥' द्विवचनादूनषष्ठोनाब्दिके इत्यर्थमाह पृथ्वीचन्द्रः। व्यासस्त्वन्यथाह—'द्वादशाहे त्रिपक्षे च षण्मासे मासिकाब्दिके। श्राद्धानि षोडशैतानि संस्मृतानि मनीषिभिः ॥' द्वादशाहपदमूनमासिकपरं तस्य द्वादशाहेऽप्युक्तेरिति कालादर्शः। मदनरत्ने ब्राह्मे त्वन्यथोक्तम्—नृणां तु त्यक्तदेहानां श्राद्धाः षोडश सर्वदा। चतुर्थे पञ्चमे चैव नवमैकादशे तथा ॥ ततो द्वादशभिर्मासैः श्राद्धा द्वादशसंख्यया ॥' इति। चतुर्थादीनि दिनानि। भविष्ये त्वन्यथोक्तम्—'अस्थिसंचयनं श्राद्धं त्रिपक्षे मासिकानि तु। रिक्तयोश्च तथा तिथ्योः प्रेतश्राद्धानि षोडश ॥' इति। रिक्तयोस्तिथ्योरित्यूनषष्ठोनाब्दिकपरमिति हेमाद्रिः। अत्र देशकुलशाखाभेदाद्व्यवस्थेति सर्वनिबन्धाः। गालवः—'ऊनषाण्मासिकं षष्ठे मासे वाप्यूनमासिकम्। त्रैपक्षिकं त्रिपक्षे स्यादूनाब्दं द्वादशे तथा ॥' ऊनमासिके तु गोभिलः—'मरणाद्द्वादशाहे स्यान्मास्यूने वोनमासिकम् ॥' मदनरत्ने कालादर्शे च श्लोकगौतमः—'एकद्वित्रिदिनैरूने त्रिभागेनोन एव वा। श्राद्धान्यूनाब्दिकादीनि कुर्यादित्याह गौतमः ॥' क्रियानिबन्धे क्रतुस्तु—'सार्ध एकादशे मासे सार्धे वै पञ्चमे तथा। ऊनाब्दमूनषण्मासं भवेतां श्राद्धकर्मणि ॥' इत्युक्तं तत्र मूलं चिन्त्यम्।

ऊनेषु वर्ज्यान्याह मरीचिः—'द्विपुष्करे च नन्दासु सिनीवाल्यां भृगोर्दिने। चतुर्दश्यां च नोनानि कृत्तिकासु त्रिपुष्करे ॥' ज्योतिषे-'त्रिपादर्क्षं तिथिर्भद्रा भौमेज्यरविभिः सह। तदा त्रिपुष्करो योगो द्वयोर्योगे द्विपुष्करः ॥' गालवः–त्रिभिर्वा दिवसैरूने त्वेकेन द्वितयेन वा। आद्यादिषु च मासेषु कुर्यादूनाब्दिकादिकम् ॥' एकन्यूनपक्षे पञ्चम्यांमृतस्य तृतीयायां त्रिभिन्र्यूनेप्रतिपदिद्वय्ूने द्वितीयायामिति, केचित्। माधवस्तु-'षाण्मासिकाब्दिके श्राद्धे स्यातांपूर्वेद्युरेवते। मासिकानि स्वकीये तु दिवसे द्वादशेऽपि वा ॥' इति पैठीनसिवाक्ये ऊनषण्मासिकं सप्तममासगतमृताहात्पूर्वेद्यः कार्यम्, ऊनाब्दिकं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तु द्वितियाब्दे मृताहदिनात्पूर्वेद्युः कार्यमित्यर्थमाह। पूर्वेद्युर्मृताहादित्यर्थः। 'मासिकानि स्वकीये तु दिवसे' इत्युक्तेः। इदमेव युक्तम्। मदनरत्नेप्येवम्। याज्ञवल्क्यः-'मृतेऽहनि तु कर्तव्यं प्रतिमासं तु वत्सरम्। प्रतिसंवत्सरं चैवमाद्यमेकादशेऽहनि ॥' अत्राद्यमासिकमाब्दिकं चैकादशेऽह्नीति निर्णयामृतादयः। 'ब्राह्मणं भोजयेदाद्ये होतव्यमनलेऽथवा। पुनश्च भोजयेद्विप्रं द्विरावृत्तिर्भवेदिति ॥' इति गोभिलीयं च तद्विषयमाहुः। अन्ये तु 'मासपक्षतिथिस्पष्टे' इत्यादिविरोधादाब्दिकं वर्षान्ते एव। मासिकं तु मासादौ। द्विरावृत्तिस्तु एकादशाहिकाद्यमासिकपरा। देवायाज्ञिकोप्येवमाह। लौगाक्षिरपि-'मासादौ मासिकं कार्यमाब्दिकं वत्सरे गते। आद्यमेकादशे कार्यमधिके त्वधिकं भवेत् ॥' दीपिकायां तु-'आद्यं रुद्रमितेऽर्कसंमितदिने वा स्यात्' इत्युक्तम्। गौडास्तु मृततिथ्यवधिके एकदिनाधिके। माससंवत्सरपदं गौणम्। पूर्णेऽब्दे इति ईषदसमाप्तपरत्वमिति शूलपाणिः। तेन द्वितीयादिमासादावाद्यमासिकादीति तन्मौर्ख्यकृतम्।

अशक्तौ तु हारीतः-'मुख्यं श्राद्धं मासि मासि अपर्याप्तावृतुं प्रति। द्वादशाहेन वा भोज्या एकाहे द्वादशापि वा ॥' ऋतुं प्रति द्वेद्वे इत्यर्थः ॥ यदा पितुर्मरणात्त्रयोविंशतितमे दिने दर्शो वृद्धिर्वा स्यात्तदा द्वादशमासिकानि कार्याणीत्यर्थः। त्रैपक्षिकं तु त्रिपक्षेऽतीते मृताहे कार्यम्। त्रैपक्षेतीते मृताहे कार्यम्। त्रैपक्षिकं भवेद्वृत्ते त्रिपक्षे तदनन्तरम्' इति भविष्योक्तेरिति मदनरत्ने उक्तम्। पृथ्वीचन्द्रकालादर्शनिर्णयामृतादयस्तु—'ऊनान्यूनेषु मासेषु विषमाहे समेपि वा। त्रैपक्षिकं त्रिपक्षे स्यान्मृताहे त्वितराणि तु ॥' इति कार्ष्णाजिनिस्मृतेः पूर्वत्र वृत्ते प्रवृत्ते इत्यर्थमाहुः, ते तदनन्तरशब्दविरोधात् त्रैपक्षिकद्वितीयमासिकयोः संकरापत्तेरेवं व्याख्यायां मानाभावाच्चोपेक्ष्याः। त्रिपक्षसपिण्डने त्वेवंशब्दाभावादधिकारणत्वमेव ज्ञेयम्। यत्तु क्रियानिबन्धे गारुडे-'त्रैपक्षिकं त्रिपक्षे तु प्रवृत्ते विषमे दिने। मासिकान्यपि चोनानि अष्टाविंशतिमे दिने ॥' इति तन्निर्मूलम्।

स्मृतिरत्नावल्याम्—'द्वादशाहे यदा कुर्यात्पितुः पुत्रः सपिण्डनम्। एकादशेऽह्नि कुर्वीत प्रेतश्राद्धानि षोडश ॥' पैठीनसिः—'सपिण्डीकरणादर्वाक् कुर्वन् श्राद्धानि षोडश। एकोद्दिष्टविधानेन कुर्यात्सर्वाणि तानि तु ॥ सपिण्डीकरणादूर्ध्वं यदा कुर्यात्तदा पुनः। प्रत्यब्दं यो यथा कुर्यात्तथा कुर्यात्स तान्यपि ॥' मदनरत्ने कात्यायनः—'श्राद्धसन्निमतः कार्यं दाहादेकादशेऽहनि। ध्रुवाणि तु प्रकुर्वीत प्रमीताहनि सर्वदा ॥' ध्रुवाणि त्रैपक्षिकादूर्ध्वानि। क्रियानिबन्धे गारुडे-'त्रिपक्षात्पूर्वतः साग्ने-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

र्भवेत्संस्कारवासरे । ऊर्ध्वं मृतदिनेऽनग्नेः सर्वाण्येव मृताहतः ॥' एतानि च यदा सपिण्डनात्पूर्वं युगपत्कुर्यात्तदा देशकालकर्त्रैक्ये तन्त्रत्वादेकः पाक इति केचित् । पाकभेद इति भट्टचरणाः अत्र केचिदाहुः देशकालकर्तृदैवतैक्ये तन्त्रत्वात् श्राद्धकालातिक्रमापत्तेः । 'द्वादशाहेऽथ सर्वाणि संक्षेपेण समापयेत् । तान्येव तु पुनः कुर्यात्प्रेतशब्दं न कारयेत् ॥' इति कात्यायनोक्तेः । 'नैकः श्राद्धद्वयं कुर्यात् समानेऽहनि कुत्रचित्' इत्यस्य दैवतैक्यपरत्वेप्यत्र तत्सत्त्वात्—'श्राद्धं कृत्वा तु तस्यैव पुनः श्राद्धं न कारयेत् ।' इति जाबाल्युक्तेः । षोडशसंख्यायाश्च वाजपेये प्राजापत्ययागसप्तदशत्ववत्साान्नाय्ययागद्वित्ववच्च दर्शपातसंक्रान्तिश्राद्धवद्युगपदनुष्ठानेप्युपपत्तेः–'आद्यामासिकाद्यूनाब्दिकान्तेषु षोडशश्राद्धेषु क्षणः क्रियताम्' इत्येवं प्रयोगेणैको विप्रः पिण्डोऽर्घ्यश्चेति । विरुद्धविधिविध्वंसेप्येवं, तन्मन्दम् । 'द्वादशाहेन वा भोज्या एकाहे द्वादशापि वा ।' इति हेमाद्रौ हारीतबचोविरोधात् । तेन विप्रभेदात् पिण्डार्घ्याद्यपि भिन्नमिति सिद्धम् ।

एतानि द्वादशाहादौ सपिण्डनात्पूर्वं कृतान्यपि वृद्धिं विनापकर्षे पुनः स्वकाले कर्याणि । 'यस्य संवत्सरादर्वाक् सपिण्डीकरणं कृतम् । मासिकं चोदकुम्भं च देयं तस्यापि वत्सरम् ॥' इति मदनरत्नेऽङ्गिरसोक्तेः ॥ न चेदं मासिकानामपकर्षं विधत्ते किन्तु सपिण्डनोर्ध्वं स्वकालेऽनुष्ठानमेवेति वाच्यम् । 'श्राद्धानि षोडशादत्त्वा न तु कुर्यात्सपिण्डताम् ।' इति विरोधात् । 'यस्य संवत्सरादर्वाग्विहिता तु सपिण्डता । विधिवत्तानि कुर्वीत पुनः श्राद्धानि षोडश ॥' इति माधवीये गोभिलोक्तेश्च । 'अर्वाक् संवत्सराद्यस्य सपिण्डीकरणं कृतम् । षोडशानां द्विरावृत्तिं कुर्यादित्याह गौतमः ॥' इति तत्रैव गालवोक्तेः । षोडशत्वं चैकादशाहसपिण्डनपक्षे तत्राद्यमासिकस्य कालसत्वात् अन्यपक्षेषु यथासंभवं ज्ञेयम् । यत्तु दीपिकायाम्—'अनुमासिकानि तु चरेत्तान्येव सापिण्ड्यतः पश्चात् द्वादश' इत्युक्तेरूनानां न पुनः कृतिरित्युक्तं तदेतद्विरोधाच्चिन्त्यम् । यत्तु गौड़ाः- 'सपिण्डीकरणान्ता तु ज्ञेया प्रेतक्रिया बुधैः ।' इति शातातपोक्तेर्मासिकानां प्रेतत्वविमोक्षार्थत्वात्सपिण्डनापकर्षे तदन्तन्यायेन तेषामप्यपकर्षान्मासिकानां न पुनः कृतिः । यत्तु 'मासिकं चोदकुम्भं च' इति लौगाक्ष्यादिवचनं तन्निर्मूलम् । समूलत्वेऽपि दार्शपरं चेत्याहु । ते उक्तवक्ष्यमाणवचोनिबन्धविरोधान्मूर्खा इत्युपेक्ष्याः । यत्तु मिताक्षरायां सपिण्डनोर्ध्वं स्वकाले एव कार्याणि अपकर्षस्त्वनुकल्प इत्युक्तम्' तदपि पूर्ववि-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

रोधाच्चिन्त्यम् । तेन वृद्धिं विनापकर्षे पुनः कृतिः । 'अर्वाक्संवत्सराद्यस्य सपिण्डीकरणं भवेत् । प्रेतत्वमिह तस्यापि ज्ञेयं संवत्सरं नृप ॥' इत्यग्निपुराणात् वृद्धिनिमित्तापकर्षे त्वस्त्येव तन्निवृत्तिः अन्यथा वृद्ध्यसंभवादिति शूलपाणिः ।

कृष्णाजिनिः—'सपिण्डीकरणादर्वागपकृष्य कृतान्यपि । पुनरप्यपकृष्यन्ते वृद्ध्युत्तरनिषेधनात् ॥' निषेधं चाह कात्यायनः—निर्वर्त्य वृद्धितन्त्रं तु मासिकानि न तन्त्रयेत् । अयातयामं मरणं न भवेत्पुनरस्य तु ॥' इति । द्विरनुष्ठानं चोत्तरेषामेव, न पूर्वेषां स्वस्वकालकृतानाम् । तदाह माधवीये कार्ष्णाजिनिः—'अर्वागब्दाद्यत्र यत्र सपिण्डीकरणं कृतम् । तदूर्ध्वं मासिकानां स्याद्यथाकालमनुष्ठितिः ॥' हेमाद्रौ शाठ्यायनिः 'प्रेतश्राद्धानि शिष्टानि सपिण्डीकरणं तथा । अपकृष्यापि कुर्वीत कर्तुं नान्दीमुखं द्विजः ॥' वृद्धिं विनापकर्षे दोषमाहोशना—'वृद्धिश्राद्धविहीनस्तु प्रेतश्राद्धानि यश्चरेत् । स श्राद्धी नरके घोरे पितृभिः सह मज्जति ॥' इति । आधानेऽपकर्षमाह हेमाद्रावुशना—'पितुः सपिण्डीकरणं वार्षिके मृतिवासरे । आधानाद्युपसंप्राप्तावेतत्प्रागपि वत्सरात् ॥ विशेषस्तूक्तो विवाहनिर्णये । कण्वः—नवश्राद्धं मासिकं च यद्यदन्तरितं भवेत् । तत्तदुत्तरसातन्त्र्यादनुष्ठेयं प्रचक्षते ॥' गारुडेऽपि—'आपदाद्यकृतं यत्तु कुर्यादूर्ध्वं मृतेऽहनि ।'

अथ सपिण्डीकरणम् । माधवीये हारीतः—'यातु पूर्वामावस्याया मृताहाद्दशमी भवेत् । सपिण्डीकरणं तस्यां कुर्यादेव सुतोऽग्निमान् ॥' मृताहादूर्ध्वं दशमी एकादशीत्यर्थः । सपिण्डीकरणं कुर्यात्पूर्ववच्चाग्निमान्सुतः । परतो दशरात्राच्चेत्कुहूरब्दोपरीतरः ॥' इति कार्ष्णाजिनिस्मृतेः । आहिताग्नेस्तेन विना श्रौतपिण्डपितृयज्ञासिद्धेः । तदाह गालवः—'सपिण्डीकरणात्प्रेते पैतृकं पदमास्थिते । आहिताग्नेः सिनीवाल्यां पितृयज्ञः प्रवर्तते ॥' मदनरत्ने प्रजापतिः—'नासपिण्ड्याग्निमान् पुत्रः पितृयज्ञं समाचरेत् ।' अपरार्के कात्यायनः—'एकादशाहं निर्वर्त्य पूर्वं दर्शाद्यथाविधि । प्रकुर्वीताग्निमान्विप्रो मातापित्रोः सपिण्डताम् ॥ आशौचान्तप्रथमदर्शयोर्मध्ये कस्मिंश्चिदहनीत्यर्थः । पित्रादीनां सपत्नीकानां देवतात्वेन मातुरपि प्राग्दर्शात्सपिण्डनं युक्तमित्यपरार्कः । एवंपितामहादेरपि सपिण्डनं प्राग्दर्शात्कार्यम् । तेन विना पार्वणायोगात् द्वादशाहे वा कार्यम् । 'साग्निकस्तु यदा कर्ता प्रेतश्चानग्निमान्भवेत् । द्वादशाहे भवेत्कार्यं सपिण्डीकरणं सुतैः ॥' इति गोभिलोक्तेः साग्नेः प्रेतस्य तु त्रिपक्षे 'प्रेतश्चेदा-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

हिताग्निः स्यात्कर्ताऽनग्निर्यदा भवेत्। सपिण्डीकरणं तस्य कुर्यात्पक्षे तृतीयके ॥' इति सुमन्तूक्तेः। मदनरत्ने लघुहारीतोपि—'अनग्निस्तु यदा वीर भवेत्कुर्यात्तदा गृही। प्रेतश्चेदग्निमांस्तु स्यात्त्रिपक्षे वै सपिण्डनम् ॥' द्वयोः साग्नित्वे द्वादशाह एव। 'साग्निकस्तु यदा कर्ता प्रेतो वाप्यग्निमान्भवेत्। द्वादशाहे तदा कार्यं सपिण्डकरणं पितुः ॥' इति तेनैवोक्तेः।

द्वयोरनग्निमत्त्वे तु भविष्ये—'सपिण्डीकरणं कुर्याद्यजमानस्त्वनग्निमान्। अनाहिताग्नेः प्रेतस्य पूर्णेऽब्दे भरतर्षभ ॥ द्वादशेऽहनि षण्मासे त्रिपक्षे वा त्रिमासि वा एकादशेऽपि वा मासि मङ्गलस्याप्युपस्थितौ ॥' कात्यायनगोभिलौ—'यदहर्वा वृद्धिरापद्येत' इति। तच्च वृद्धिदिन एवेति वाचस्पतिः। तन्न। 'प्रातर्वृद्धिनिमित्तकम्' इति नियमात्सपिण्डनस्य चापराह्णकालीनत्वेन पूर्वत्वबाधापत्तेः। वृद्धिदिने तत्पूर्वदिने वेति श्रीदत्तः। स्मार्तगौडस्तु 'वृद्धिपूर्वो वर्षान्त्यश्च क्षणः सपिण्डनस्य प्रेतत्वनाशे सहकारी। तेन परेद्युर्विघ्नाद्वृद्ध्यभावेऽपि तत्कर्तव्यतानिश्चयसहितमेव कालान्तरक्रियमाणवृद्धिपूर्वक्षणसहकृतं प्रेतत्वनाशकम्' इत्याह। तन्न। अकाले कृतस्य फलाजनकत्वात्। एतेन निमित्तनिश्चयवत एवाधिकाराद्वृद्ध्यभावेऽपि न क्षतिरिति मिश्रोक्तिः परास्ता। वृद्धिपूर्वदिनस्य च कालस्याङ्गत्वेन निमित्तत्वाभावात्। तेन पुनः कार्यमित्यन्ये। मदनरत्ने पुलस्त्यः—'निरग्निकः सपिण्डत्वं पितुर्मातुश्च धर्मतः। पूर्णे संवत्सरे कुर्याद्वृद्धिर्वा यदहर्भवेत् ॥' चतुर्विंशतिमते— 'सपिण्डीकरणं चाब्दे संपूर्णेऽभ्युदयेपि वा। द्वादशाहे तु केषांचिन्मतं चैकादशे तथा ॥'

पृथ्वीचन्द्रोदये बौधायनः—'अथसपिण्डीकरणं, त्रिपक्षे वा तृतीये वा मासि, षष्ठे चैकादशे वा द्वादशे वा द्वादशाहे च, इति। एतत्प्रक्रमे विष्णुः—'मासिकार्थं द्वादशाहं श्राद्धं कृत्वा त्रयोदशेऽह्नि वा कुर्यात्। मन्त्रवर्ज्यं हि शूद्राणाम्। द्वादशेऽह्नि संवत्सराभ्यन्तरे यद्यधिमासो भवेत्तदा मासिकार्थं दिनमेकं वर्धयेत्' इति। आशौचोत्तरं द्वादशस्वहस्सु मासिकानि। तेष्वेवाद्यषष्ठद्वादशदिनेषूनमासिकादिनि कृत्वा त्रयोदशेह्नि सपिण्डनं कुर्यात्। अधिमासे तु चतुर्दशेऽह्नि कुर्यात्। शूद्रस्त्रयोदशे द्वादशेऽह्नीत्यस्य मासिकान्त्यदिनपरत्वादिति पृथ्वीचन्द्रः। पैठीनसिः— 'संवत्सरान्ते संसर्जनं नवमे मासीत्येके।' अत्र साग्नेरनग्नेर्वोक्तकालाभावे त्रिपक्षादिसंवत्सरान्ता अनुकल्पा ज्ञेयाः। कल्पतरुस्त्वग्रे वृद्धिनिश्चय

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

एव सर्वेऽपकर्षप्रकारा इत्याह। तन्न। 'यदहर्वा' इति स्वातन्त्र्यश्रुतेः। यद्यपि वृद्धिनिमित्तोऽपकर्षो निरग्नेरेवोक्तस्तथापि साग्नावपि ज्ञेयः। उक्तकालासंभवे वर्षान्तादिगौणकालवद्वृद्धेरपि प्राप्तेः। वक्ष्यमाणगोभिलवचनात्। 'अयातयामं मरणं न भवेत्पुनरस्य तु।' इति दोषश्रुत्यविशेषाच्च। अपरार्कपृथ्वीचन्द्रादिस्वरसोऽप्येवम्। अत्र वृद्धिपदं चूडोपनयनविवाहमात्रपरम्। सीमन्तादौ तु वृद्धिश्राद्धलोप एवेत्याचार्यचूडामणिः। पुंसवनाद्यन्नप्राशनान्तेष्वावश्यकेष्वपकर्ष इति श्राद्धविवेकः। श्रुतिसागरेपि बृहस्पतिः—'प्रत्यवायो भवेद्यस्मिन्नकृते वृद्धिकर्मणि। तन्निमित्तं समाकृष्य पित्रोः कुर्यात्सपिण्डनम्॥' गर्भाधानस्य ऋत्वन्तरेपि संभवात्। 'अन्यश्राद्धं परान्नं च गन्धमाल्यं च मैथुनम्।' इति देवलेन प्रथमाब्दे मैथुननिषेधाच्च न तत्रापकर्ष इति श्राद्धकौमुद्यादयः। तन्न। 'ऋतुस्नातां तु यो भार्याम्' इति निषेधात्। 'ब्रह्मचार्येव पर्वाण्याद्याश्चतस्रश्च वर्जयेत्' इति मैथुने दोषाभावाच्च। पितामहमरणे पौत्रस्य वृद्धौ नापकर्षः। तस्य महागुरुत्वाभावात्। तत्र तदूर्ध्वेभ्यो वृद्धिश्राद्धमिति श्राद्धचन्द्रिका। तन्न 'भ्राता च' इत्यादौ तदभावेप्यपकर्षोक्तेः। तेन निर्देशोप्युपलक्षणम्।

व्याघ्रः 'आनन्त्यात्कुलधर्माणां पुंसां कैवायुषः क्षयात्। अस्थितेश्च शरीरस्य द्वादशाहः प्रशस्यते॥' एतदाशौचान्तोपलक्षणम्। सर्वेषामेव वर्णानामाशौचान्ते सपिण्डनम्। इति निर्णयामृते कात्यायायनोक्तेः। सर्वेषामिति त्रैवर्णिकपरम्। शूद्राणां त्वाशौचमध्ये। 'मन्त्रवर्जं हि शूद्राणां द्वादशेहनि कीर्तितम्।' इति विष्णूक्तेः। एतदर्शश्राद्धकारिशूद्रविषयमित्यपरार्के कल्पतरौ च। वृद्धमनुः—'द्वादशेऽहनि विप्राणामाशौचान्ते तु भूभुजाम्। वैश्यानां तु त्रिपक्षादावथ वा स्यात्सपिण्डनम्॥'

निर्णयामृते गोभिलः—'द्वादशाहादिकालेषु प्रमादादननुष्ठितम्। सपिण्डीकरणं कुर्यात्कालेषूत्तरभाविषु॥' इदं साग्नेरुक्तकालासंभवे गौणकालविधानार्थमिति मदनपारिजातः। मदनरत्नेप्येवम्। ऋष्यश्रृङ्गः—'सपिण्डीकरणं श्राद्धमुक्तकाले न चेत्कृतम्। रौद्रे हस्ते च रोहिण्यां मैत्रभे वा समाचरेत्॥' कालादर्शेपि—'एकादशे द्वादशेह्नि त्रिपक्षे वा त्रिमासि वा। षष्ठे चैकादशे वाब्दे संपूर्णे वा शुभागमे॥ सपिण्डीकरणस्येत्थमष्टौ कालाः प्रकीर्तिताः। साग्नौ कर्तर्युभावाद्यौ प्रेते साग्नौ तृतीयकः॥ अनग्नेस्तु द्वितीयाद्याः सप्त काला मुनीरिताः। रोहिणीरौद्रहस्तेषु मैत्रभे वापि तच्चरेत्॥' नारदसंहितायां तु—'सपिण्डीकरणं कार्यं वत्सरे वार्धवत्सरे। त्रिमासे वा त्रिपक्षे वा मासि वा द्वादशेऽह्नि वा॥' इत्युक्तं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तच्च वत्सरेऽतीते ज्ञेयम्। 'ततः सपिण्डीकरणं वत्सरात्परतः स्थितम्।' इति भविष्योक्तेः। 'पितुः सपिण्डीकरणं वत्सरादूर्ध्वतः स्थितम्।' इति नागरखण्डोक्तेः। 'पितुः सपिण्डीकरणं वार्षिके मृतिवासरे।' इत्युशनसोक्तेश्च। 'पूर्णे संवत्सरे पिण्डः षोडशः परिकीर्तितः तेनैव च सपिण्डत्वं तेनैवाब्दिकमिष्यते॥ इति हेमाद्रौ वचनाच्च। अस्यानाकरत्वोक्तिर्मूर्खोक्तिरेव। यत्तु—'पूर्णे संवत्सरे कुर्यात् सपिण्डीकरणं सुतः। एकोद्दिष्टं च तत्रैव मृताहनि समापयेत्॥' इति धवलनिबन्धे जाबाल्युक्तेः। 'पुत्रः सपिण्डनं कृत्वा कुर्यात्स्नानं सचैलकम्। एकोद्दिष्टं ततः कुर्यात् कुतर्पं न विचारयेत्॥' इति स्वल्पमात्स्योक्तेश्चाब्दिकं तद्दिने पुनः कार्यमिति केचित्। ते निर्मूलत्वाद्धेमाद्रिविरोधाच्चोपेक्ष्याः। षोडशत्वं च सपिण्डनस्यषोडषश्राद्धान्तर्भावपक्षे। स्मृत्यर्थसारे तु वर्षान्त्यदिने संवत्सरविमोक्षश्राद्धं सपिण्डनं च कृत्वा परेद्युर्मृताहे वार्षिकं कार्यमित्युक्तम्। गौडा अप्येवमाहुः। तत्पूर्वविरोधाच्चिन्त्यम्।

तच्च पुत्रे सति नान्यः कुर्यात्। 'श्राद्धानि षोडशादत्त्वा नतु कुर्यात्सपिण्डताम्। प्रोषितावसिते पुत्रः कालादपि चिरादपि॥' इति वायवीयोक्तेः। षोडशश्राद्धानां वर्षादूर्ध्वं कालाभावेपि तान्यदत्त्वा न कुर्यात्। किंतु दत्त्वैव। तानि यदि कनिष्ठभ्रात्रादिना कृतानि तदा सपिण्डनमेव कुर्यादित्यपरार्कः। सपिण्डने तु कनिष्ठानां नैवाधिकार इत्यर्थः। तत्रैव-'अज्ञानादथ वा मोहान्न कृता चेत्सपिण्डता। तत्रापि विधिवत्कार्या कालादपि चिरादपि॥' तेष्वपि ज्येष्ठस्यैवाधिकारः। 'ज्येष्ठेन जातमात्रेण पुत्री भवति मानवः।' इति मनूक्तेः। अपरार्के प्रचेता अपि—'एकादशाद्याः क्रमशो ज्येष्ठस्तु विधिवत्क्रियाः। कुर्यान्नैकैकशः श्राद्धमाब्दिकं तु पृथक्पृथक्॥' मारीचिः—'सर्वेषां तु मतं कृत्वा ज्येष्ठेनैव तु यत्कृतम्। द्रव्येण चाविभक्तेन सर्वैरेव कृतं भवेत्॥' यत्तु वाचस्पतिशूलपाणिभ्यामुक्तं द्रव्यदानानुमत्यभावे कनिष्ठैः पृथक्कार्यमिति। तन्न। एवकारस्य तदभावेऽपि पृथक्करणाभावार्थत्वात्। अन्धादेरिव ज्येष्ठे सति कनिष्ठानामनधिकाराच्च। अतस्तेषां प्रत्यवायमात्रम्। आहिताग्निः कनिष्ठस्तु कुर्यादेव। अन्यथा पितृयज्ञासिद्धेः। एवमावश्यकवृद्धावपि। कनिष्ठोऽन्यः सपिण्डो वा कुर्यात्। 'भ्राता वा भ्रातृपुत्रो वा सपिण्डः शिष्य एव च। सहपिण्डक्रियां कृत्वा कुर्यादभ्युदतं ततः॥ तथैव काम्यं यत्कर्म वत्सरात्प्रथमादृते॥' इति मदनरत्ने लघुहारीतवचनात्। वृद्ध्यनन्तरं प्रथमाब्दमध्येऽपि काम्यं कुर्यात्। वृद्ध्यभावे

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

तु प्रथमाब्दादूर्ध्वमेवेत्यर्थः। काम्योक्तेरनावश्यकेष्टापूर्तादौ नापकर्षः। एतद्भ्रातृपुत्रादिसंस्कारे प्राप्ताधिकारस्य नान्दीश्राद्धाधिकारार्थम्। अभ्युदयपदं च नान्दीश्राद्धनिमित्तकर्ममात्रपरमिति हेमाद्रिः। तेन ज्येष्ठे देशान्तरस्थे कनिष्ठः सपिण्डनं विनैव वृद्धिं कृत्वा पुत्रसंस्कारं कुर्यादिति श्रीदत्तोक्तिः परास्ता। भ्रातृशिष्याद्युक्तेर्नान्दीश्राद्धेज्यदेवतामात्र, परोऽपकर्ष इत्यप्यपास्तम्। अस्य क्रममात्रपरत्वाद्वृद्धिकर्तैव सपिण्डनं कुर्यादिति न नियम इति गौडाः। अत एव कन्याया मातृमरणे भ्रात्रा सपिण्डने कृते पितुर्दानाधिकारः।

शूलपाणिस्तु—'महागुरौ प्रेतभूते वृद्धिकर्म न युज्यते।' इति निषेधात् मृतस्य भ्रात्रादिः सपिण्डनं कृत्वा तत्पुत्रकन्यादेरभ्युदयं कुर्यान्न तु स्वपुत्रसंस्कारे संस्कार्यपितुः सपिण्डनं विना वृद्धौ देवतात्वाभावादित्याह। तन्न। देवताप्रयुक्तापकर्षस्य निरस्तत्वात्। वृद्धिं विना कनिष्ठेन कृते तु विदेशस्थेन ज्येष्ठेन पुनः कार्यम्। 'यवीयसा कृतं कर्म प्रेतशब्दं विहाय तु। तज्ज्यायसापि कर्तव्यं सपिण्डीकरणं पुनः॥' इति स्मृतेः। 'ज्येष्ठेन वा कनिष्ठेन सपिण्डीकरणे कृते। आद्यपादे 'मातापित्रोः कमिष्ठेन' इति वा पाठः। 'देशान्तरगतानां च पुत्राणां तु कथं भवेत्। श्रुत्वा तु वपनं कार्यं दशाहान्तं तिलोदकम्॥ ततः सपिण्डीकरणं कुर्यादेकादशेऽहनि। द्वादशाहे न कर्तव्यमिति शातातपोऽब्रवीत्॥' इति वचनाच्चेति भट्टाः। सिद्धाभट्टीयेऽप्येवम्। पूर्ववचनेऽत्र च मूलं चिन्त्यम्। स्मृत्यर्थसारे तु—विभक्ता ऋद्धिकामाश्चेत्पुत्राः पृथक्सपिण्डीकरणं कुर्युः' इत्युक्तम्। अत्र दत्तकस्य तत्पुत्रादीनां विशेषः प्रागुक्तः। केचित्तु वृद्धिं विनापि कनिष्ठस्य सपिण्डनमाहुः। 'मातापितोर्मृतेः काले ज्येष्ठे देशान्तरस्थिते। कनिष्ठे न प्रकर्तव्यं सपिण्डीकरणं तथा॥' इति काष्र्णाजिनिस्मृतेः। 'गते वा रोधिते ज्येष्ठे पित्रा वा प्रेषिते सति। षण्मासान्न निवर्तेत तदा कार्यं कनीयसा॥' संवर्तः—'पुनः सपिण्डीकरणं श्राद्धं पार्वणवच्चरेत्। अर्घ्यसंयोजनं नैव पिण्डसंयोजनं न च॥' इति। तेषां वचसां निर्मूलत्वात्—'प्रोषितावसिते पुत्रे' इत्यादिविरोधाच्चोपेक्ष्याः।

व्युत्क्रममृतौ तु हेमाद्रौ ब्राह्मणे—मृते पितरि यस्याथ विद्यते च पितामहः। तेन देयास्त्रयः पिण्डाः प्रपितामहपूर्वकाः॥ तेभ्यश्च पैतृकः पिण्डो नियोक्तव्यस्तु पूर्ववत्। मातर्यथ मृतायां च विद्यते च पितामही॥ प्रपितामहीपूर्वस्तु कार्यस्तत्राप्ययं विधिः॥, एवं प्रपितामहजीवने तत्पित्रादिभिर्ज्ञेयम्। तदाह सुमन्तुः—'त्रयाणामपि पिण्डानामेकेनापि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

सपिण्डने। पितृत्वमश्नुते प्रेत इति धर्मो व्यवस्थितः॥' 'यत्तु—व्युत्क्रमात्तु प्रमीतानां नैव कार्या सपिण्डता' इति तन्मातापितृभर्तृभिन्नविषयम्। 'व्युत्क्रमेण मृतानां न सपिण्डीकृतिरिष्यते। यदि माता यदि पिता भर्ता नैषविधिः स्मृतः॥' इति माधवीये स्कन्दोक्तेः। मदनरत्नादौ चैवम्। अत्र 'प्रपितामहादिभिः पितुः सपिण्डने कृते पितामहे मृते तत्सपिण्डने सति पुनस्तेन सह पितुः सपिण्डनाभावे पितामहेन सह पुनः कार्यं न तत्सत्त्वे। त्रयाणामपि पिण्डानामेकेनापि सपिण्डने। पितृत्वमश्नुते प्रेत इति धर्मो व्यवस्थितः॥' इति विष्णुधर्मोक्तेः। 'पितामहे वा पुत्रान्तरैरसंस्कृतेऽप्यसंस्कृताभ्यामेव पितुः सपिण्डनं कुर्यात्। असंस्कृतौ न संस्कार्यौ पूर्वौ पौत्रप्रपौत्रकैः। पितरं तत्र संस्कुर्यादिति कात्यायनोऽब्रवीत्॥' इति छन्दोगपरिशिष्टात्। असंस्कृतौ दाहाद्यैरिति केचित्। असपिण्डीकृताविति तु तत्त्वम्। अत एवोक्तं तत्रैव 'पापिष्ठमपि शुद्धेन शुद्धं पापकृतापि वा। पितामहेन पितरं संस्कुर्यामिति निश्चयः॥' पापिष्ठमकृतसपिण्डनं न तु पतितादि।' अभिशस्तपतितभ्रूणघ्नाः स्त्रियश्चातिचारिणीर्न संसृजेत्' इति बैजवापोक्तेः 'पापकर्मिणो न संसृजेरन्' इति गौतमोक्तेश्चेत्युक्तं निर्णयामृते॥

पूर्वयोः पुत्राभावे तु पौत्रः कुर्यादेव। पितामहः पितुः पश्चात्पञ्चत्वं यदि गच्छति। पौत्रेणैकदशाहादि कर्तव्यं श्राद्धषोडशम्। नैतत्पौत्रेण कर्तव्यं पुत्रवांश्चेत्पितामहः। पितुः सपिण्डतां कृत्वा कुर्यान्मासानुमासिकम्॥' इति कात्यायनोक्तेः। अपरार्के शूलपाणौ चैवम्। तेन सपिन्डनस्यानित्यत्वादकृतसपिण्डनयोरेव पार्वणानुप्रवेश इति मूर्खोक्तिः परास्ता। कृते सपिण्डीकरणे प्रेतः पार्वणभाग्भवेत्।' इति हारीतविरोधाच्च केचित्पुत्रान्तराभावे पितामहवार्षिकमप्याहुः। तन्न। श्राद्धषोडशमिति नियमात्। इच्छया भवत्येव। पितामहस्य चेद्द्यादेकोद्दिष्टं न पार्वणम्।' इति वाचस्पतिधृतगर्गोक्तेः। त्रयाणां यौगपद्ये तु प्रधान्यात्पितुः सपिण्डनं कृत्वा पूर्वयोः कुर्यात्। पितामहे मृते दशाहान्तः पितृमृतौ पितुः संस्कारं कृत्वा पितामहस्य पुनः सर्वमावर्तयेत्। वृत्ते दशाहे नैवम्। अशक्त्या पित्रानुज्ञातेन पौत्रेण पितामहश्राद्धे प्रक्रान्ते पितृमृतौ तदाशौचंवहन्नेव पौत्रः पितामहकर्म कुर्यात्प्रक्रान्तत्वादिति मदनपारिजातपृथ्वीचन्द्रौ। यत्तु—'उत्तरात्रितयरौद्ररोहिणीयाम्यसर्पपितृभेषु चाग्निभे। श्मश्रुकर्म सकलं च वर्जयेत्प्रेतकार्यमपि बुद्धिमान्नरः॥' इति सपिण्डनप्रकरणे पाठान्मुख्यकाले निषिद्धर्क्षे सपिण्डनापकर्षः। सर्वकालेषु तद्धर्त्त्वे तद्ध-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

ण्यन्येव। पूर्वोक्तब्रह्मोक्तानि षोडशश्राद्धानि कार्याणीति वाचस्पतिमिश्राः। तन्न। अस्य परिभाषात्वेन वाक्यात्सावकाशकर्मपरत्वात् ॥ अस्य प्रेतमात्रदैवत्याभावाच्च ॥

अथ स्त्रीषूच्यते। हेमाद्रौ बृहस्पतिः—'भर्तृगोत्रेण च नाम्ना मातुः कुर्यात्सपिण्डनम्'। यत्तु भविष्ये—'पितृगोत्रं समुत्सृज्य न कुर्याद्भर्तृगोत्रतः।' इति, तदासुरादिविवाहोढापरम्। 'आसुरादिविवाहेषु पितृगोत्रेण धर्मवित्।' इति वृद्धशाततपोक्तेः। तच्चानेकवचनेषु पितामह्याः पत्या मातामहेन वा सहोक्तम्। तत्र व्यवस्थोक्ता भविष्ये—जीवत्पिता पितामह्या मातुः कुर्यात्सपिण्डनम्। प्रमीतपितृकः पित्रा तत्पित्र पुत्रिकासुत ॥ तत्पित्रा मातुः पित्रा। लौगाक्षिः—'पितामह्यादिभिः सार्धं मातरं तु सपिण्डयेत्। पितरि ध्रियमाणे तु तेनैवोपरते सति ॥' शङ्खः—'मातुः सपिण्डीकरणं कथं कार्यं भवेत्सुतैः। पितामह्यादिभिः सार्धं सपिण्डीकरणं स्मृतम् ॥' येनकेनापि मातुः सापिण्ड्ये यत्रान्वष्टकादौ मातुः श्राद्धं पृथगुक्तं तत्र पितामह्या सह कार्यम्। 'नान्दीमुखेऽष्टकाश्राद्धे गयायां च मृतेऽहनि। पितामह्यादिभिः सार्धं मातुः श्राद्धं समाचरेत् ॥' इति शातातपोक्तेः। अपुत्रायां तु पैठीनसिः—'अपुत्रायां मृतायां तु पतिः कुर्यात्सपिण्डनम्। श्वश्र्वादिभिः सहैवास्याः सपिण्डीकरणं भवेत् ॥' इति। यत्तु लघुहारीतः—'पुत्रेणैव तु कर्तव्यं सपिण्डीकरणं स्त्रियाः। पुरुषस्य पुनस्त्वन्ये भ्रातृपुत्रादयोऽपि ये ॥' इति। यच्च मार्कण्डेयपुराणे—'सपिण्डीकरणं स्त्रीणां पुत्राभावे न विद्यते।' इति तत्पुत्रपत्यभावे ज्ञेयम्। अत्र सपत्नीपुत्रोऽपि ज्ञेयः। 'बह्वीनामेकपत्नीनामेका चेत्पुत्रिणी भवेत्। सर्वास्तास्तेन पुत्रेण प्राह पुत्रवतीर्मनुः ॥' इति मनूक्तेरेतत्परत्वात्। यत्तु शातातपः—'मृते पितरि मातुस्तु न कार्या सहपिण्डता। पितुरेव सपिण्डत्वे तस्या अपि कृतं भवेत् ॥' इति तदशक्तपरम्, केषांचिद्वा मतमिति हेमाद्रिः।

अन्वारोहणे तु भर्त्रैव सपिण्ड्यम्। 'मृता यानुगता नाथं सा तेन सहपिण्डताम्। अर्हति स्वर्गवासं च यावदाभूतसंप्लवम् ॥' इति शातातपोक्तेः। 'पत्या चैकेन कर्तव्यं सपिण्डीकरणं स्त्रियाः। सा मृतापि हि तेनैक्यं गता मन्त्राहुतिव्रतैः ॥' इति यमोक्तेश्च। अत्रैकशब्दः पितामह्यादिपत्निनिवृत्त्यर्थः। पतिपदं वर्गपरम्। सपिण्डनस्य पार्वणैकोद्दिष्टरूपत्वादिति माधवकल्पतरुमदनरत्नादयः। अन्ये तु भर्त्रैवैकेनाहुः—'स्वेन भर्त्रा सहैवास्याः सपिण्डीकरणं भवेत्।' इत्येवकारश्रवणात्। पृथ्वी-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

चन्द्रोदयेपि विकल्प उक्तः। इदं तु तत्त्वम्। यदा हेमाद्र्यादिमतेद्वायोरेकः पिण्डस्तदा वर्गेण सह यदा माधवपृथ्वीचन्द्रादिमते पृथक्पिण्डस्तदैकेन पत्येकवचनाचैकेनापि। अतो मातृपिण्डमसपिण्डीकृतेनैव पतिपिण्डेन संयोज्यैकीकृतं।पिण्डद्वयं तत्पित्रादिभिः संयोजयेत्। अन्त्यपक्ष एव युक्तः। स्मृत्यर्थसारे तु—'अन्वारोहणेनैकदिनमरणे स्त्रियाः पृथक्सपिण्डनं नास्ति। भर्तुः कृते स्त्रिया अपि कृतं भवति इत्युक्तम्, तन्मतान्तरमस्तु। इदं ब्राह्मादिविवाहेषु ज्ञेयम्।

आसुरादिषु तु शातातपः— 'तन्मात्रा तत्पितामह्या तच्छ्वश्वा वा सपिण्डनम्। आसुरादिविवाहेषु विन्नानां योषितां भवेत्॥' मातामह्या मातुः पितामह्या तत्प्रपितामह्या चेत्यर्थः। सुमन्तुः—पिता पितामहे योज्यः पूर्णे संवत्सरे सुतैः। माता मातामहे तद्वदित्याह भगवाञ्छिवः॥' इदमासुरादिपरं पुत्रिकापुत्रपरं चोक्तं प्राक्। हेमाद्रिस्तु ब्राह्मादिष्वपि सर्वत्र देशभेदाद्विकल्पमाह। अतः गुर्जरेषु कोकिलमतानुसारिणां मातृमातामहप्रमातामहा इति श्राद्धप्रयोगः सपिण्डनं च दृश्यते। हेमाद्रावापस्तम्बोपि—'कोकिलस्य यथा पुत्रा अन्यसंचयजीविनः। पुष्टास्ते स्वकुलं यान्ति एवं नारी मृता सती॥' यदपि विज्ञानेश्वरो मातामहेन मातुः सापिण्डये पितृश्राद्धवन्मातृश्राद्धं नित्यमित्याह यच्च वृद्धिश्राद्धे छन्दोगपरिशिष्टम्। 'षड्भ्यः पितृभ्यस्तदनु श्राद्धदानमुपक्रमेत् इति, तदेतद्विषयमेव। मातु पृथक् श्राद्धाभावात्। अत एव हेमाद्रौ भविष्ये मातुः सपिण्डनं प्रक्रम्य—'उदितेऽनुदिते चैव होमभेदो यथा भवेत्। तथा कुलक्रमायातमाचारं च चरेद्बुधः॥' इत्युक्तम्। अस्य वृद्धावपवादमाह तत्रैव व्याघ्रपात—'कुर्यान्मातामहश्राद्धं सर्वदा मातृपूर्वकम्। विधिज्ञो विधिमास्थाय वृद्धौ मातामहादिवत्॥' केचिदेतत्पुत्रिकापुत्रपरमाहुः।

पत्युः सपिण्डयमाह लौगाक्षिः—'सर्वाभावे स्वयं पत्न्यः स्वभर्तॄणाममन्त्रकम्। सपिण्डीकरणं कुर्युस्तत पार्वणमेव च॥' इति। यत्तु वचनम्—'अपुत्रस्य परेतस्य नैव कुर्यात्सपिण्डताम्। इति, यच्चापस्तम्बः—'अपुत्रा ये मृताः केचित्पुरुषा वा स्त्रियोऽपि वा। तेषां सपिण्डनाभावादेकोद्दिष्टं न पार्वणम्॥' इति, तत्पुत्रोत्पादनविधिप्रशंसार्थमिति माधवः। 'सपिण्डीकरणादूर्ध्वमेकोद्दिष्टं विधीयते। अपुत्राणां च सर्वेषामपत्नीनां तथैव च॥' इति हेमाद्रौ प्रचेतसोक्तेश्च। अन्ये तु द्विविधवाक्यदर्शनाद्विकल्पमाहुः। स्मृत्यर्थसारेपि—'ब्रह्मचारिणामनपत्यानां च सपिण्डनं नास्ति, तेषां सदैकोद्दिष्टमेव, व्युत्क्रमसृतानां सापिण्ड्यं कार्यं न वा।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

केचित्सर्वत्र सपिण्डनमाहुरिति । अपुत्रे व्युत्क्रममृते विशेषो रेणुकारिकायाम्—'भ्राता वा भ्रातृपुत्रो वा सपिण्डः शिष्य एव वा । सपिण्डीकरणं कुर्यात पुत्रहीने मृते सति ॥ सर्वबन्धुविहीनस्य पत्नी कुर्यात्सपिण्डताम् । ऋत्विजं कारयेद्वापि पुरोहितमथापि वा ॥ वसुरुद्रादितिसुतैः कार्या तेषां सपिण्डता । व्युत्क्रमाच्च प्रमीता ये तद्विना प्रेतता ध्रुवम् ॥ पुनः सपिण्डनं तेषां कुर्यात्प्रेते पितामहे ॥' इति । अत्र मूलं मृग्यम् । यतीनां सपिण्डनं नास्ति किंत्वेकादशेऽह्नि पार्वणं कार्यम् । तदपि त्रिदण्डिनः । एकदण्डयादीनां तदपि नेत्युक्तं प्राक् । दण्डग्रहणात्पूर्वं मृते तु दाहादिसपिण्डनान्तं सर्वं कार्यमिति भट्टचरणाः ।

सपिण्डनविधिमाह बैजवापः—'समाप्ते संवत्सरे चत्वार्युदपात्राणि प्रयुनक्ति एकं प्रेताय, त्राणि पितृभ्यः प्रेतपात्रं पितृपात्रेष्वासिञ्चति ये समाना इति द्वाभ्यामेवं पिण्डाऽथाभिमृशति 'एष वोऽनुगतः प्रेतः पितरस्तं ददामि वः । शिवं भवतु शेषाणां जायन्तां चिरजीविनः ॥' 'समानोवः संशच्छध्वं संवदध्वम्' इति । 'तच्चापि दैवरहितमेकार्घ्यैकपवित्रकम् । नैवाग्नौकरणं तत्र तच्चावाहनवर्जितम् ॥' इति मार्कण्डेयेनोक्तम्' तथापि—'सपिण्डीकरणं श्राद्धं दैवपूर्वं नियोजयेत् ।' इत्यादिविरोधाद्विकल्पः प्रेतांशे वा ज्ञेयम् । अत्र कामकालौ विश्वेदेवावपीत्युक्तं प्राक् । मैत्रायणीयपरिशिष्टे—'पित्र्यविप्रकरे होमः साग्नेरपि भवेदिह । यत्तु गोभिलः—'अनुक्तकालेष्वपि तु व्युत्क्रमेण मृतावपि । आमेन वापि सापिण्ड्यं हेम्ना वापि प्रकल्पयेत् ॥' इति तदापदि मातापितृभिन्नपरम् । 'आपन्नोऽपि न कुर्वीत श्राद्धमामेन कर्हिचित् ।' इति तेनैवोक्तेः । शुद्धितत्त्वे कामधेनौ च लघुहारीतः—'सपिण्डीकरणं यावत्प्रेतश्राद्धं तु षोडशम् । पक्वान्नेनैव कर्तव्यं सामिषेण द्विजातिभिः ॥' विश्वप्रकाशे—'प्रेतः सपिण्डनादूर्ध्वं पितृलोकेऽनुगच्छति । कुर्यात्तस्य तु पाथेयं द्वितीयेऽह्नि सपिण्डनात् ॥' स्मृत्यर्थसारेप्येवम् । ततो वृद्धिश्राद्धं कुर्यात । एतन्मलमासेपि कार्यम् । 'अधिमासे न कर्तव्यं श्राद्धमाभ्युदयं तथा । तथैव काम्यं यत्कर्म वत्सरात्प्रथमादृते ॥' इति हेमाद्रौ हारीतोक्तेः ॥

इति भट्टकलाकरकृते निर्णयसिन्धौ सपिण्डीकरणम् ॥

अथ प्रथमाब्दे निषिद्धानि । हेमाद्रौ—'स्नानं चैव महादानं स्वाध्यायं चाग्नितर्पणम् । प्रथमाब्दे न कुर्वीत महागुरुनिपातने ॥' अग्नितर्पणं लक्षहोमादि नत्वाधानम् । तत्तु प्रथमेऽब्दे भवत्येव । तदाह हेमाद्रावुशना—'पितुः सपिण्डीकरणं वर्षिके मृतवासरे । आधानाद्युपसंप्राप्ता-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वेतत्प्रागपि वत्सरात् ॥' अन्यतर्पणमिति शुद्धतत्त्वे पाठः। आदिपदं वृद्धिनिमित्तनित्यकर्मपरम्। दिवोदासीये—'महातीर्थस्य गमनमुपवासव्रतानि च। संवत्सरं न कुर्वीत महागुरुनिपातने ॥' इदं श्राद्धकौमुद्यां देवीपुराणस्थमुक्तम्। गौडनिबन्धे मात्स्ये—'सपिण्डीकरणादूर्ध्वं प्रेतः पावणभुग्भवेत्। वृद्धीष्टापूर्तयोग्यश्च गृहस्थश्च सदा भवेत्।' वर्षान्तसपिण्डनाभावे नाधिकारीत्यर्थः। गृहस्थः सपिण्डोपीत्यर्थः। अत एव—'प्रेतकर्माण्यनिर्वर्त्य चरेन्नाभ्युदयक्रियाम्। आचतुर्थं ततः पुंसि पञ्चमे शुभदं भवेत् ॥' इति ज्योतिषे उक्तम्। माधवीये देवलः—'प्रमीतौ पितरौ यस्य देहस्तस्याशुचिर्भवेत्। न दैवं नापि वा पित्र्यं यावत्पूर्णो न वत्सरः ॥' इदं वर्षान्तसपिण्डनपरम्। 'तथैव काम्यं यत्कर्म वत्सरात्प्रथमादृते' इति लघुहारीताद्येकवाक्यत्वात्। वृद्धिनिमित्तापकर्षे तु काम्यादि भवत्येवेति गौडाः। पित्र्यं सपिण्डनम्। अत एव लौगाक्षिः—'अन्येषां प्रेतकार्याणि महागुरुनिपातने। कुर्यात्संवत्सरादर्वाक् श्राद्धमेकं तु वर्जयेत् ॥' दाहाद्येकादशाहान्तं कार्यम्। तत्राशौचान्तरस्याप्रतिबन्धकत्वात्। 'आद्यं श्राद्धमशुद्धोऽपि कुर्यादेकादशेहनि' इत्युक्तेश्च। एक सपिण्डनम्।

पत्न्यादौ त्वपवादमाह माधवीये ऋष्यशृङ्गः—'पत्न्याः पुत्रस्य तत्पुत्रभ्रात्रोस्तत्तनयेषु च। स्नुषास्वस्रोश्च पित्रोश्च संघातमरणं यदि ॥ अर्वागब्दान्मातृपितृपूर्वं सापिण्ड्यमाचरेत् ॥' लौगाक्षिः—'पत्नी पुत्रस्तथा पौत्रो भ्राता तत्पुत्रका अपि। पितरौ च यदैकस्मिन् म्रियेरन्वासरे तदा ॥ आद्यमेकादशे कुर्यात्त्रिपक्षे तु सपिण्डनम् ॥' धवलनिबन्धे—'महागुरुनिपाते तु प्रेतकार्यं यथाविधि। कुर्यात्संवत्सरादर्वागेकोद्दिष्टं न पार्वणम् ॥' भृगुः—'माता चैव तथा भ्राता भार्या पुत्रस्तथा स्नुषा। एषां मृतौ चरेच्छ्राद्धमन्यस्य न पुनः पितुः ॥' एतदपि सपिण्डनपरम्। पितृमृतावन्यस्य श्राद्धं न चरेदित्यर्थः। शुद्धितत्त्वे देवलः—'अन्यश्राद्धं परान्नं च गन्धमाल्यं च मैथुनम्। वर्जयेद्गुरुपाते तु यावत्पूर्णो न वत्सरः ॥' पारस्करभाष्ये बृहस्पतिः—'पितर्युपरते पुत्रो मातुः श्राद्धान्निवर्तते। मातर्यपि च वृत्तायां पितृश्राद्धादृते समम् ॥' समं पितरं विनान्यश्राद्धं नेत्यर्थः शुद्धितत्त्वे देवलः—'महागुरुनिपाते तु काम्यं किंचिन्न चाचरेत्। आर्त्विज्यं ब्रह्मचर्यं चा श्राद्धं देवक्रियां तथा ॥' एतत्सपिण्डनात्प्रागिति केचित्। तदुत्तरमपीत्यन्ये। श्राद्धकौमुद्यां कालिकापुराणे पूर्वार्धे—'विशेषतः शिवपूजां प्रमीतपितृको नरः। यावद्वत्सरपर्यन्तं मनसापि न चाचरेत् ॥' केचित्तु—'पित्रोरब्दमशौचं स्यात्षण्मासं मातुरेव

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

च । त्रैमासिकं तु भार्यायास्तदर्धं भ्रातृपुत्रयोः ॥' इति स्मृतेः सापत्नमातुरब्दार्धमाहुः । श्राद्धकौमुदीकारस्तु—'द्वयोरेव महागुर्वोरब्दमेकमशौचकम् । नान्येषामधिकाशौचं स्वजातिविहिता त्कल ॥' इति समूलजातूकर्ण्यविरोधान्निर्मूलमाह । हेमाद्रौ भविष्ये—'गयाश्राद्धं मृतानां तु पूर्णे त्वब्दे प्रशस्यते ।' त्रिस्थलीसेतौ गारुडे—'तीर्थश्राद्धं गयाश्राद्धं श्राद्धमन्यच्च पैतृकम् । अब्दमध्ये न कुर्वीत महागुरुविपत्तिषु ॥' इदं वृद्ध्यर्थसपिन्डनाभावे । वृद्धौ सपिण्डनापकर्षेऽब्दमध्येऽपि दर्शादि कार्यमेव । 'पितुः सपिण्डनं कृत्वा कुर्यान्मासानुमासिकम् ।' इति छन्दोगपरिशिष्टात् । सपिण्डीकरणादूर्ध्वं प्रेतः पार्वणभुग्भवेत् ।' इति मात्यात् । 'ततः प्रभृति वै प्रेतः पितृसामान्यमश्नुते । विन्दते पितृलोकं च ततः श्राद्धं प्रवर्तते ॥' इति हारीताच्चेति शूलपाणिः । यत्तु कातीयम्—'सपिण्डीकरणादूर्ध्वं न दद्यात्प्रतिमासिकम् । एकोद्दिष्टविधानेन दद्यादित्याह शौनकः ॥' इति । तत्रैकोद्दिष्टविधिना न दद्यादित्यन्वयः । तुर्यपादेन पार्वणे विकल्प उक्तः । ब्रह्मवैवर्ते—'उद्वाहश्चोपनयनं प्रथमेऽब्दे महीपते । कृते सपिण्डनेऽप्यूर्ध्वमस्थ्नां चोद्धरणं त्यजेत् । तथापि कुर्तुमिच्छन्ति त्रीणि चैतानि वै सुताः । मासिकान्यवशिष्टानि चापकृष्य चरेत्पुनः ॥'

अत्रेदं तत्त्वम् । वृद्धिं विनार्वागपि सपिण्डनापकर्षे पितृत्वप्राप्तिर्वर्षान्त एव । 'कृते सपिण्डीकरणे नरः सवत्सरात्परम् । प्रेतदेहं परित्यज्य भोगदेहं प्रपद्यते ॥' इति विष्णुधर्मोक्तेः । 'अर्वाक्संवत्सराद्यस्य सपिण्डीकरणं भवेत् । प्रेतत्वमपि तस्यापि विज्ञेयं वत्सरं नृप ॥' इत्यग्निपुराणाच्च । तेन तत्सत्त्वेऽपि वृद्धिदैवपित्र्येष्वनधिकारः । वृद्धिनिमित्ते त्वन्तरमेव । अर्वाक्संवत्सराद्वृद्धौ पूर्णे संवत्सरेऽपि वा । ये सपिण्डीकृताः प्रेता न तेषां तु पृथक् क्रिया ॥, इति शातातपोक्तेः-तथैव काम्यमिति हेमाद्रिधृतहारीतादिवशाच्चैवमिति । तथा । 'अस्थिक्षेपं गयाश्राद्धं श्राद्धं चापरपक्षिकम् । प्रथमेऽब्दे न कुर्वीत कृते पितुः सपिण्डने ॥' अस्यापवादः- 'अस्थिक्षेपं गयाश्राद्धं श्राद्धं चापरपक्षिकम् । प्रथमेऽब्देपि कुर्वीत यदि स्याद्भक्तिमान्सुतः ॥' भक्त्याख्यं श्राद्धं तद्वानिति मदनपारिजातादयः । अन्ये यथाश्रुतमाहुः । तत्त्वं तु यदीदं समूलं तदा वृद्धिं विनापकर्षे पूर्वं, वृद्ध्यर्थे तु परमिति योज्यम् । पतितानां गयायां विशेषो ब्राह्मे-'क्रियते पतितानां च गते संवत्सरे क्वचित् । देशधर्मप्रमाणत्वाद्गयाश्राद्धं स्वबन्धुभिः ॥'

अथ विधानानि तत्र पञ्चकमृते मदनरत्ने गारुडे—'अदौ कृत्वा धनिष्ठार्धमेतन्नक्षत्रपञ्चकम् । रेवत्यन्तं सदा दूष्यमशुभं दाहकर्मणि ॥

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

शवस्य च समीपते तु चेत्तव्याः पुत्तलास्तदा । दर्भमयास्तु चत्वार ऋत्त-मन्त्राभिमन्त्रिताः ।। ततो दाहः प्रकर्तव्यस्तैश्च पुत्तलकैः सह । सूतकान्ते ततः पुत्रैः कार्यं शान्तिकपौष्टिकम् ।। पञ्चकेषु मृतो यो वै न गतिं लभते नरः । तिलांश्चैव हिरण्यं च तमुद्दिश्य घृतं दहेत् ।।' क्रियानिबन्धे—'भाजनोपानहौ छत्रं हैममुद्रां च वाससी । दक्षिणा दीयते विप्रे सर्वपातकमोचनी ।।' मदनरत्ने गार्ग्यः—'यदि भद्रातिथीनां स्याद्भानुभौमशनैश्चरैः । त्रिपाद्भैश्च संयोगो द्वयोर्योगे द्विपुष्करः ।। द्वित्रिपुष्करयोगे तु मृतिर्मृत्यन्तरावहा । दहने मरणे चैव त्रिगुणं स्यात्त्रिपुष्करे ।। खननेऽप्येवमेव स्याद्देतद्दोषोपशान्तये । तिलपिष्टैर्यवैर्वापि शरीरं कारयेत्ततः ।। शूर्पे निधायालंकृत्य दाहयेत्पैतृकोपरि ।।' तद्दाहे मन्त्रमाह बौधायनः—'अस्मात्त्वमिति मन्त्रेण तिलपिष्टं प्रदाहयेत् । द्वित्रिपुष्करयोर्दोषस्त्रिभिः कृच्छ्रैर्व्यपोहति ।। वासवे मरणं चेत्स्याद्गृहे वापि पुनर्मृतिः । सुवर्णं दक्षिणां दद्यात्कृष्णवस्त्रमथापि वा ।।' वासवं धनिष्ठा । 'कुम्भमीनस्थिते चन्द्रे मरणं यस्य जायते । न तस्योर्ध्वगतिर्दृष्टा संततौ न शुभं भवेत् ।। न तस्य दाहः कर्तव्यो विनाशस्त्वेव जन्तुषु । अथवा दद्दिने कार्यो दाहस्तु विधिपूर्वकम् ।। धनिष्ठापञ्चके जीवो मृतो यदि कथंचन । त्रिपुष्करे याम्यभे वा कुलजान्मारयेद्ध्रुवम् ।। तत्रानिष्टविनाशार्थं विधानं समुदीर्यते । दर्भाणां प्रतिमाः कार्याः पञ्चोर्णासूत्रवेष्टिताः ।। यवपिष्टेनानुलिप्तास्ताभिः सह शवं दहेत् ।। प्रेतवाहः प्रेतसखः प्रेतपः प्रेतभूमिपः प्रेतहर्ता पञ्चमस्तु नामान्येतानि च क्रमात् ।।' अत्र प्रतिमा गन्धपुष्पैः पूजयित्वा । प्रथमां शिरसि । द्वितीयां नेत्रयोः । तृतीयां वामकुक्षौ । चतुर्थीं नाभौ । पञ्चमीं पादयोर्न्यस्य तदुपरि नामभिर्घृतं हुत्वायमाय सोमं त्र्यम्बकमिति मन्त्राभ्यां प्रत्येकं तास्वाज्यं हुनेदिति भट्टाः । 'सूतकान्ते ततः पुत्रः कुर्याच्छान्तिकपौष्टिकम् । कांस्यपात्रस्थितं तैलं वीक्ष्य दद्याद्द्विजन्मने ।। ब्रह्मविष्णुमहेशेन्द्रवरुणप्रीयते ततः । माषमुद्गयवव्रीहिप्रियंग्वादि प्रयच्छति स्वर्णदानं रुद्रजाप्यं लक्षहोमो द्विजार्चनम् ।। गोभूदानं षडशेन कुर्याद्दोषोपशान्तये ।।'

अपरार्के—'धनिष्ठापञ्चकमृते पञ्चरत्नानि तन्मुखे । प्रास्याहुतित्रयं तत्र हुनेद्वहवपामिति।। ।। ततो निर्हरणं कुयादेष साग्नेर्विधिः स्मृतः । इतरं निखनेदेव जले वा प्रतिपादयेत् ।। त्रिपादर्क्षमृते तद्वद्धिरण्यशकलं मुखे । तस्य पिष्टमयं कुर्यात्पुरुषत्रितयं ततः । होमं प्रतिमुखं कुर्यात्तथा वहवपामिति । कार्ष्णायसं च कार्पासं कुसुम्भं प्रतिपाद्य च । निर्यात्य

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

साग्निं संस्कुर्याद्धव्यग्नौ वान्यमुत्सृजेत् ॥' तत्रैव—'कनकं हीरकं नीलं पद्मरागं च मौक्तिकम् । पञ्चरत्नमिदं प्रोक्तमृषिभिः पूर्वदर्शिभिः ॥ रत्नानां चाप्यभावे तु स्वर्णं कर्षार्धमेव च । सुवर्णस्याप्यभावे तु आज्यं ज्ञेयं विचक्षणैः ॥' मदनरत्नेऽप्येवम् । तथा—'एकाशीतिपलं कांस्यं तदर्धं वा तदर्धकम् । नवषट्त्रिपलं वापि दद्याद्विप्राय शक्तितः ॥' तथान्यत्र—स्वगृह्योक्तविधानेन कृत्वाग्नेः स्थापनं ततः । अन्वाधानं निर्वपणं देवतानां तथाहुतिः ॥ यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च । वैवस्वताय कालाय सर्वभूतक्षयाय च ॥ औदुम्बराय दध्नाय नीलाय परमेष्ठिने । वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय वै क्रमात् । विधिना श्रपणं कृत्वा एकैकामाहुतिं हुनेत् । कृष्णां गां कृष्णवस्त्रं च हैमनिष्कसमन्वितम् ॥ दद्याद्विप्राय शान्ताय प्रीतो भवतु मे यमः ॥' त्रिपादर्क्षेऽप्येतदेव । अपरार्के—'पुनर्वसूत्तराषाढा कृत्तिकोत्तरफाल्गुनी । पूर्वाभाद्रा विशाखा च ज्ञेयमेतत्त्रिपादभम् ॥' मयूरचित्रे गर्गः—'मृतः श्मशानं यो नीत उपजीवति मानवः । गृहे यस्य प्रविष्टोऽसौ तिष्ठेदथ कदाचन ॥ अचिरान्मृत्युमायाति हृतदारपरिग्रहः । तत्र शान्तिं प्रवक्ष्यामि धर्मराजमतं यथा ॥ सक्षीराणां घृताक्तानामग्नेर्हुत्वा मुखे बुधः । औदुम्बरीणां विधिवत्ततः शान्तिः कृता भवेत् ॥ सावित्र्यष्टसहस्रेण क्षीरशान्तिं च कारयेत् । कपिलां तिलकांस्यं च हुतान्ते भूरिदक्षिणा ॥' इति ।

अथ ब्रह्मचारिमृतौ शौनकः—'ब्रह्मचारिमृतौ रीतिं कथयामि समासतः । तत्रावकीर्णदोषस्य प्रायश्चित्तं प्रशान्तये ॥ द्वादशाब्दं षडब्दं वा त्र्यब्दं शक्त्याथवा चरेत् । स्नातको ब्रह्मचारी च निधनं प्राप्नुयाद्यदि । संयोज्य चार्कविधिना संयोज्यौ तौ ततः परम् ॥' देशकालौ स्मृत्वा 'अमुकगोत्राऽमुकनाम्नो मृतस्य ब्रह्मचारिणो व्रतविसर्गं करिष्ये' इत्युक्त्वा हेम्ना नान्दीश्राद्धं कृत्वाऽग्निं प्रतिष्ठाप्याघारान्ते चतसृभिर्व्याहृतिभिरग्नये व्रतपतये व्रतानुष्ठानसंपादनाय विश्वेभ्यो देवेभ्यश्चाज्यं हुत्वा स्विष्टकृदादि समाप्य पुनर्देशकालौ स्मृत्वार्कविवाहं करिष्ये इत्युक्त्वा हेम्ना नान्दीश्राद्धं कृत्वार्कशाखां शवं च हरिद्रया लिप्त्वा पीतसूत्रेण वस्त्रयुग्मेन चावेष्ट्याग्निं प्रतिष्ठाप्याघारान्तेऽग्नये बृहस्पतये विवाहविधियोजकाय च–यस्मै त्वं कामकामायेति कामाय व्याहृतिभिश्चाज्यं हुत्वा स्विष्टकृदादि समाप्यार्कशाखां शवं च दहेत् । विधानमालायाम्–'येषां कुले ब्रह्मचारी निधनं प्राप्नुयाद्यदि । तत्कुलं क्षयमाप्नोति सोऽपि दुर्गतिमाप्नुयात् ॥ मृतस्य क्रियमाणस्य षडब्दं व्रतमादिशेत् ॥ त्रिशद्भ्यो ब्रह्मचारिभ्यो दद्या-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

त्कौपीनकान्नवान् ॥ हस्तमात्रान्कर्णमात्रान्दद्यात्कृष्णाजिनानि च । पादुकाछत्रमाल्यानि गोपीचन्दनमेव च । मणिप्रवालमालाश्च भूषणादि समर्पयेत् । एवं कृते विधाने च विघ्नः कोऽपि न जायते ॥' अत्र मूलं मृग्यम् ॥

कुष्ठिमृतौ तु यमः—'मृतस्य कुष्ठिनो देहं निखनेद्गोष्ठभूमिषु । वासरत्रितयं पश्चादुद्धृत्यान्यत्र तं दहेत् ॥ न गङ्गाप्लवनं कार्यं निक्षेपे विधिरुच्यते । षडब्दव्रतपूर्णेन विधिनान्त्यं क्रतुं चरेत् ॥ ततोऽस्थिसंचयं तस्य गङ्गायां प्रक्षिपेत्सुधीः । मासिमासि ततः कुर्यान्मासि श्राद्धानि पार्वणान् ॥ इत्येतत्कुष्ठिमरणे कथितं शास्त्रकोविदैः ॥' शुद्धितत्वे भविष्ये—'शृणु कुष्ठिगणं विप्र उत्तरोत्तरतो गुरुम् । विचर्चिका तु दुश्चर्मा चर्चरीयस्तृतीयकः ॥ विकर्चूर्व्रणताम्रौ च कृष्णश्चेते तथाष्टकम् ॥' इत्युक्त्वा 'मृते तु प्रापयेत्तीर्थमथवा तरुमूलकम् । न पिण्डं नोदकं कार्यं नच दानक्रियां चरेत् ॥ षण्मासीयस्त्रिमासीयो मृतः कुष्ठी कदाचन । यदि स्नेहाच्चरेद्दाहं यतिचान्द्रायणं चरेत् ॥' अकृतप्रायश्चित्तकुष्ठयादिदाहे इदं प्रायश्चित्तम् ॥ अतएव कुनख्यादिवत्कुष्ठिनोऽपि द्वादशरात्रं शूलपाणिनोक्तम् । अतएवान्यदीयकुष्ठिनो मरणान्तमाशौचमुक्तं कौर्मे—'क्रियाहीनस्य मूर्खस्य महारोगिण एवच । यथेष्टाचरणस्याहुर्मरणान्तमशौचकम् ॥' महारोगास्तु—'वातव्याध्यश्मरीकुष्ठमेहोदरभगन्दराः । अर्शांसि ग्रहणीत्यष्टौ महारोगाः प्रकीर्तिताः ॥' इति ॥

रजस्वलायास्तु वृद्धशातातपः—'रजस्वलायाः प्रेतायाः संस्कारादीनि नाचरेत् । ऊर्ध्वं त्रिरात्रात्स्नातां तां शवधर्मेण दाहयेत् ॥' अतः प्रक्षाल्य काष्ठवद्दग्ध्वा त्र्यहोर्ध्वं दहेत ॥ संकटे तु मदनरत्ने स्मृत्यन्तरे—'उदक्या सूतिका वापि मृता स्याद्यदि तां तदा । आशौचे त्वनतिक्रान्ते दाहयेदन्तरा यदि । उद्धृतेन तु तोयेन स्नापयित्वा तु मन्त्रतः । आपोहिष्ठेति तिसृभिर्हिरण्यवर्णाश्चतसृभिः । पवमानानुवाकेन यदन्तीति च सप्तभिः । ततो यज्ञपवित्रेण गोमूत्रेणाथ ते द्विजाः ॥ स्नापयित्वाऽन्यवसनेनाच्छाद्य शवधर्मतः । दाहादिकं ततः कुर्यात्प्रजापतिवचो यथा ॥' यज्ञपवित्रमापो अस्मानिति मिताक्षरायाम् । पञ्चभिः स्नापयित्वा तु गव्यैः प्रेतां रजस्वलाम् । वस्त्रान्तरावृतां कृत्वा दाहयेद्विधिपूर्वकम् ॥' गृह्यकारिकायाम्—'अन्तरिक्षमृता ये च वह्नावप्सु प्रमादतः । उदक्या सूतिका नारी चरेच्चान्द्रायणत्रयम् ॥ ततो यवपिष्टेनानुलिप्याष्टोत्तरशतं शूर्पोदकैः संस्नाप्य भस्मगोमयमृत्कुशोदकपञ्चगव्यशुद्धोदकैरापोहिष्ठापावमानीभिः संस्नाप्यान्यवस्त्रे धृते दहेदिति भट्टाः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अत्र प्रायश्चित्तमाह बौधायनः—'उदक्यासूतिकामृत्यौ चरेच्चान्द्रायणत्रयम् ।' इति। सूतिकायास्तु मिताक्षरायाम्—'सूतिकायां मृतायां तु कथं कुर्वन्ति याज्ञिकाः । कुम्भे सलिलमादाय पञ्चगव्यं क्षिपेत्ततः ।। पुण्यर्ग्भिरभिमन्त्र्यापो वाचा शुद्धिं लभेत्ततः । तेनैव स्नापयित्वा तु दाहं कुर्याद्यथाविधि ।। अब्लिङ्गाभिर्मन्त्रिताभिर्वामदेव्याभिरेव च ।। अन्यैश्च वारुणैर्मन्त्रैःसंस्नाप्य विधिना दहेत् ।। गृह्यकारिकायाम्—'सूतिकामरणे प्राप्ते सर्वौषध्यनुलेपनम् । असूतकी तु संस्पृष्टः शूर्पाणां तु शतं क्षिपेत् ।।' प्रायश्चित्ते विशेषस्तत्रैव—'सूतिका तु यदा साध्वी विस्नाता मरणं गता । त्रिवर्षपूर्णपर्यन्तं शुध्येत्कृच्छ्रेण सर्वदा ।।' इदं चाद्यत्र्यहे ।। 'सूतिका तु यदा नारी रजसा तु परिप्लुता । म्रियते चेत्तु सा नारी द्विवर्षं कृच्छ्रमाचरेत् ।।' इदं द्वितीयत्र्यहे ।। सूतिका तु यदा साध्वी विस्नाता मरणं गता । अब्दं कृच्छ्रेण शुद्धयेत व्यासस्य वचनं यथा ।।' इदं तृतीयत्र्यहे । अत्राशक्तौ पक्षान्तरमुक्तं तत्रैव—'सूतिका तु यदा नारी विस्नाता मरणं गता । त्रिषण्णवदिनादर्वागेकाब्देन विशुद्धयति ।।' उर्ध्वं तु—'सूतिका तु यदा नारी प्राणांश्चैव परित्यजेत् । मासमेकावधिं यावत्त्रिभिः कृच्छ्रैर्विशुद्धयति ।।'

गर्भिणीमृतौ मदनरत्ने शौनकः—'गर्भिण्युदक्यासंस्कारं शिशुसंस्कारमेव च । प्रवक्ष्यामि समासेन शौनकोऽहं द्विजन्मनाम् ।। गर्भिणीमरणे प्राप्ते गोमूत्रेण जलैः सह । आपोहिष्ठादिभिर्मन्त्रैः प्रोक्ष्य भर्ता समास्थितः । प्रेतं श्मशाने नीत्वाऽथोल्लिख्य सव्योदरं ततः । पुत्रमादाय जीवंश्चेत्स्तनं दत्त्वा सुताय तु ।। यस्ते स्तनः शशय इत्यृचा ग्रामे निधाय च । उदरं चाव्रणं कुर्यात्पृषदाज्येन पूर्य च ।। मृद्भस्मकुशगोमूत्रैरापोहिष्ठादिभिस्त्रिभिः । स्नाप्य चाच्छाद्य वासोभिः शवधर्मेण दाहयेत् ।।' तत्रैव षडशीतिमते गद्यानि—'गर्भिण्यां मृतायां दक्षिणशिरसं निधाय तस्या नाभिरन्ध्रात्सव्यमुदरं चतुरङ्गुलं हिरण्यगर्भः समवर्ततेति छित्त्वा गर्भश्चेदप्राणस्तं प्रक्षाल्य निखनेत्स यदि जीवन् जीव त्वं मम पुत्रक इत्युक्त्वा क्षेत्रिये त्वेति पञ्चभिः स्नापयित्वा हिरण्यमन्तर्धाय भूमौ निधाय व्याहृतिभिरभिमन्त्र्य यस्ते स्तनः शशय इति स्तनं पाययित्वा शिशुं ग्रामं प्रापयेत् । गर्भच्छेदस्थले शतायुधायेति पञ्चाहुतीर्हुत्वा प्राणाय स्वाहा पूष्णे स्वाहेत्यनुवाकाभ्यां व्याहृत्या वाज्यं हुत्वा भिन्नमुदरं सूत्रेण संग्रथ्य घृतेनानुलिप्य ब्राह्मणाय तिलान् गां भूमिं सुवर्णं दद्यादथ यथोक्तेन कल्पेनन दहेत्' ।। बौधायनेन तु शतायुधायेति पञ्चहोमानन्तरं प्रयासाय यासाय वियासाय संयासायोद्यासाय शुचे शोकाय तप्यते तपत्यै ब्रह्महत्यायै सर्व-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्मै इति स्वाहान्तैराहुतयोप्यधिका उक्ताः। गृह्यकारिकायाम्—'यदा गर्भवती नारी सशल्यां संस्थिता भवेत्। कुक्षिं भित्त्वा ततो शल्यं निर्हरेद्यदि जीवति॥ प्रमीतं निखनेत्तं तु प्रायश्चित्तमतः परम्। सा त्रयस्त्रिंशता कृच्छ्रैः शुद्ध्यते शल्यदोषतः॥ सगर्भदहने तस्या वर्णजं वधपातकम्। प्रायश्चित्तं चरित्वा तु शुद्ध्यन्ति पापकारिणः॥ दग्ध्वा तु गर्भसंयुक्तां त्रिरब्दं कृच्छ्रमाचरेत्॥

अथान्वारोहणं स्त्रीणामात्मनो भर्तुरेव च। सर्वपापक्षयकरं निरयोत्तारणाय च॥ अनेकस्वर्गफलदं मुक्तिदं च तथैव च। जन्मान्तरे च सौभाग्यधनपुत्रादिवृद्धिदम्।' देशकालौ स्मृत्वाऽरुन्धतीसमाचारत्वस्वर्गलोकमहीयमानत्वमनुष्यलोमसमसंख्याब्दावच्छिन्नस्वर्गवासभर्तृसहितचतुर्दशेन्द्रावच्छिन्नकालिकक्रीडमानत्वमातृपितृश्वशुरकुलत्रयपूतत्वब्रह्मघ्न-मित्रघ्नकृतघ्नपतिपूतत्वपत्यवियोगकामा भर्तृज्वलच्चितारोहणं करिष्ये। अनुगमने तु फलमुल्लिख्यान्वारोहणं करिष्ये इत्युक्त्वा हरिद्राकुङ्कुमाञ्जनादियुतशूर्पाणि सुवासिनीभ्यो दद्यात्। मन्त्रस्तु—'लक्ष्मीनारायणो देवो बलसत्वगुणाश्रयः। गाढं सत्वं च मे देयाद्वायनकैः परितोषितः॥ सोपस्कराणि सूर्पाणि वायनकैः संयुतानि च। लक्ष्मीनारायणप्रीत्यै सत्वकामा ददाम्यहम्॥' अग्नेः समीपमागत्य पञ्चरत्नानि पल्लवे। नीलाञ्जनं तथा बध्वा मुखे मुक्ताफलं न्यसेत्॥ ततोऽग्निप्रार्थनं कुर्वात् मन्त्रेणानेन मिश्रितम्। 'स्वाहासंश्लेषनिर्विण्ण सर्वगोत्र हुताशन॥ सत्वमार्गप्रदानेन नय मां भर्तुरन्तिकम्॥' ततोऽग्नावाज्येनाग्नये तेजोधिपतये, विष्णवे सत्वाधिपतये, कालाय धर्माधिपतये, पृथिव्यै लोकाधिष्ठात्र्यै, अद्भ्यो रसाधिष्ठात्रीभ्यः, वायवे बलाधिपतये, आकाशाय सर्वाधिपतये, कालाय धर्माधिष्ठात्रे, अद्भ्यः सर्वसाक्षिणीभ्यः, ब्रह्मणे वेदाधिपतये, रुद्राय श्मशानाधिपतये च हुत्वाग्निं प्रदक्षिणीकृत्य दृषदमुपलां च संपूज्य पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वाग्निं प्रार्थयेत्। 'त्वमग्ने सर्वभूतानामान्तश्चरसि साक्षिवत्। त्वमेव देव जानीषे न विदुर्यानि मानुषाः॥ अनुगच्छामि भर्तारं वैधव्यभयपीडिता। सत्वमार्गप्रदानेन नय मां भर्तुरन्तिकम्॥' मन्त्रमुच्चार्य शनकैः प्रविशेच्च हुताशनम्॥ गौडास्तु—'इमा नारीरविधवा' इति, 'ॐ इमाः पतिव्रताः पुण्याः स्त्रियो या याः सुशोभनाः। सह भर्तुः शरीरेण संविशन्ति विभावसुम्॥' इति च विप्रः पठेदित्याहुः। कातरां तु—प्रेतोत्तरे सुप्तां देवरः शिष्यो वा उदीर्ष्वेति द्वाभ्यामुत्थापयेत्। एतन्महिमा मिताक्षरादौ ज्ञेयः।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पृथ्वीचन्द्रोदये स्कान्दे—'अनुव्रजति भर्तारं गृहात्पितृवनं मुदा। पदेपदेऽश्वमेधस्य फलं प्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥' यत्त्वङ्गिराः—'या स्त्री ब्राह्मणजातीया मृतं पतिमनुव्रजेत्। सा स्वर्गमात्मघातेन नात्मानं न पतिं नयेत् ॥' इति। यच्च व्याघ्रपात्—'न म्रियेत् समं भर्त्रा ब्राह्मणी शोककर्शिता। न ब्रह्मगतिमाप्नोति मरणादात्मघातिनी ॥' इति, तत् पृथक्चितिपरम्। 'पृथक्चितिं समारुह्य न विप्रा गन्तुमर्हति। अन्यासां चैव नारीणां स्त्रीधर्मोऽयं परः स्मृतः ॥' इत्युशनसोक्तेः।

पृथक्चिस्तु क्षत्रियादिपरा। तद्विधिर्ब्राह्मे—'देशान्तरे मृते पत्यौ साध्वी तत्पादुकाद्वयम्। निधायोरसि संशुद्धा प्रविशेज्जातवेदसम् ॥ ऋग्वेदवादात्साध्वी स्त्री न भवेदात्मघातिनी। त्र्यहाशौचे निवृत्ते तु श्राद्धं प्राप्नोति शाश्वत् ॥' इमा नारीरविधवा इति ऋग्वेदवादः। त्र्यहाशौचमन्वारोहणपरमिति स्मार्ताः। निषेधवाक्यानि प्रायश्चित्तार्थं मृतेन पतितेन वा सह मरणनिषेधपराणीत्यप्याहुः। अस्थिदाहे पलाशदाहे वा न पृथक्चितिदोषः। अङ्गत्वेन स्थानापत्त्या वा शरीरतुल्यत्वात्। यत्तु—'ब्रह्मघ्नो वा कृतघ्नो वा मित्रघ्नो वा भवेत्पतिः। पुनात्य विधवा नारी तमादाय मृता तु या ॥' इति हारीतीयम्, तत्पतितदाहादिनिषेधेन सहगमनस्य दूरतोपास्तत्वादर्थवादमात्रमिति पृथ्वीचन्द्रः। जन्मान्तरीयपापवता सह मरणे नोद्धार इति स्मार्तगौडाः। शुद्धितत्त्वे व्यासः—'दिनैकगम्यदेशस्था साध्वी चेत्कृतनिश्चया। न दहेत्स्वामिनं तस्या यावदागमनं भवेत् ॥' तत्रैव भविष्ये—'तृतीयेऽह्नि उदक्याया मृते भर्तरि वै द्विजाः। तस्यानुमरणार्थाय स्थापयेदेकरात्रकम् ॥ एकां चितिं समासाद्य भर्तारं यानुगच्छति। तद्भर्तुर्यः क्रियाकर्ता स तस्याश्च क्रियां चरेत् ॥ एतद्दशाहान्तम्। 'यश्चाग्निदाता प्रेतस्य पिण्डं दद्यात्स एव हि।' इति वायवीयोक्तेः। आपस्तम्बः—'चितिभ्रष्टा तु या नारी मोहाद्विचलिता भवेत्। प्राजापत्येन शुध्येत तस्माद्वै पापकर्मणः ॥' तथा—'अन्वारोहे तु नारीणां पत्युश्चैकोदकक्रियाम्। पिण्डदानक्रियां तद्वच्छ्राद्धं प्रत्याब्दिकं तथा ॥ अन्वारोहे कृते पत्न्या पृथक्पिण्डांस्तिलाञ्जलीन्। पृथक्शिले न कुर्वीत तद्यादेकशिले तथा ॥' अन्यत्प्रागुक्तम्।

इदं गर्भिणीबालापत्यासूतिकारजस्वलाव्यभिचारिणीभिर्न कार्यम्। 'स्वैरिणीनां गर्भिणीनां पतितानां च योषिताम्। नास्ति पत्याग्निसंवेशः पतितौ हि तथा उभौ ॥' इति मदनरत्ने स्मृतिसंग्रहोक्तेः। मदनरत्ने बृहस्पतिः—बालसंवर्धनं मुक्त्वा बालापत्या न गच्छति। व्रतोपवास-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नियता रक्षेद्गर्भं च गर्भिणी ॥' तृतीयपादे 'रजस्वला सूतिका च' इति पृथ्वीचन्द्रोदये गौडीयशुद्धितत्त्वे च पाठः। तत्रैव बृहन्नारदीयेपि—'बालापत्या च गर्भिण्यो ह्यदृष्टऋतवस्तथा। रजस्वलाराजसुते नारोहन्ति चितां तु ताः ॥' इति। अत्र—'पतिव्रता सुसंदीप्तं प्रविशेद्या हुताशनम्।' इति भारतात्, 'ऋग्वेदवादात्साध्वी स्त्री' इति ब्राह्माच्च पतिव्रतानामेवाधिकारो नं दुर्वृत्तानाम्। यत्तु 'अवमत्य च याः पूर्वं पतिं दुष्टेन चेतसा। वर्तन्ते याश्च सततं भर्तृणां प्रतिकूलतः॥ तत्रानुमरणं काले याः कुर्वन्ति तथाविधाः। कामात्क्रोधाद्भयान्मोहात्सर्वाः पूता भवन्त्युत॥' इति भारतम्, तत् कैमुतिकन्यायेन स्तावकमिति पृथ्वीचन्द्रः। ब्राह्मण्या एकचितिरेव न पृथक्चितिः। क्षत्रियादीनां पृथगेका वेति कल्पतरुरत्नाकरमदनपारिजातादयः। शुद्धिचिन्तामणौ चैवम्। तत्रान्वारोहणे भर्तुः शौचमध्ये तदूर्ध्वं वा कृते त्रिरात्रमध्ये एव दशपिण्डाः। सहगमने तु भर्तुः शौचतुल्यमाशौचं पिण्डदानं च। 'अन्वितायाः प्रदातव्या दश पिण्डास्त्र्यहेण तु। स्वाम्याशौचे व्यतीते तु तस्याः श्राद्धं प्रदीयते॥' इति शुद्धितत्त्वे शूलपाणौ च पैठीनसिस्मृतेः। 'संस्थितं पतिमालिङ्ग्य प्रविशेद्या हुताशनम्। तस्याः पिण्डादिकं देयं क्रमशः पतिपिण्डवत्॥' इति शूलपाणिशुद्धितत्त्वधृतव्यासोक्तेः। अन्यत्प्रागुक्तम्। यदा तु रजस्वलापि पत्नी मृते पत्यौ देशकालवशात्तदैवानुगच्छति न शुद्धिं प्रतीक्षते तत्र विधिः देवयाज्ञिकनिबन्धे—'यदा स्त्रिया मुदक्यायां पतिः प्राणान्समुत्सृजेत्। द्रोणमेकं तण्डुलानामवहन्याद्विशुद्धये॥ मुसलाघातैस्तदसृक् स्रवते योनिमण्डलात्। विरजस्कां मन्यमाना स्वे चित्ते तदसृक्क्षयम्॥ दृष्ट्वा शौचं प्रकुर्वीत पञ्चमृत्तिकया पृथक्। त्रिंशद्विंशतिर्दश च गवां दत्वा त्वहःक्रमात्॥ विप्राणां वचनाच्छुद्धा समारोहेद्धुताशनम्। नारीणां सरजस्कानामियं शुद्धिरुदाहृता॥' अत्र श्राद्धादौ निर्णयः पूर्वमुक्तः॥

इति श्रीभट्टकमलाकरकृते निर्णयसिन्धावन्त्यकर्मनिर्णयः॥

अग्निप्रवेशाशक्तौ तु विष्णुः—'मृते भर्तरि ब्रह्मचर्यं तदन्वारोहणं च' इति। ब्रह्मवैवर्ते—'सहानुगमनं शस्तं वैधव्यस्याथ पालनम्।' यत्तु तत्रैव—'कलौ नान्या गतिः स्त्रीणां सहानुगमनादृते।' इति, तद्ब्रह्मचर्याशक्यत्वपरम्। तथा च मनुः—'ब्रह्मचर्यं चरेद्वापि प्रविशेद्वा हुताशनम्। काशीखण्डेपि—'पत्यौ मृतेऽपि या योषिद्वैधव्यं पालयेत्क्वचित्। सा पुनः प्राप्य भर्तारं स्वर्गलोकं समश्नुते॥ अनुयाति न भर्तारं यदि

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दैवात्कथंचन । तत्रापि शीलं संरक्षेच्छीलभङ्गात्पतत्यधः ।। तद्वैगुण्यादपि स्वर्गात् पतिः पतति नान्यथा । तस्याः पिता च माता च भ्रातृवर्गस्तथैव च ।।'

अथ विधवाधर्माः । मदनरत्ने स्कान्दे—'विधवाकबरीबन्धो भर्तृबन्धाय जायते । शिरसो वपनं तस्मात्कार्यं विधवया सदा ।। एकाहारः सदा कार्यो न द्वितीयः कदाचन । मासोपवासं वा कुर्याच्चान्द्रायणमथापि वा ।। पर्यङ्कशायिनी नारी विधवा पातयेत्पतिम् । नैवाङ्गोद्वर्तनं कार्यं स्त्रिया विधवया क्वचित् गन्धद्रव्यस्य संभोगो नैव कार्यस्तया पुनः । तर्पणं प्रत्यहं कार्यं भर्तुस्तिलकुशोदकैः ।। तत्पितुस्तत्पितुश्चापि नामगोत्रादिपूर्वकम् ।।' इदमपुत्रापरमिति मदनपारिजातः । 'नाधिरोहेदनड्वाहं प्राणैः कण्ठगतैरपि । कञ्चुकं न परीदध्याद्वासो न विकृतं वसेत् ।। वैशाखे कार्तिके माघे विशेषनियमं चरेत् ।। प्रचेताः-ताम्बूलाभ्यञ्जनं चैव कांस्यपात्रे च भोजनम् । यतिश्च ब्रह्मचारी च विधवा च विवर्जयेत् ।।' श्राद्धादौ तु विशेष प्रागुक्तः । यत्तु बौधायनः—'संवत्सरं प्रेतपत्नी मधु मांसं विवर्जयेत् ।। अधः शयीत षण्मासानिति मौद्गल्यभाषितम् ।।' इति तदसवर्णापरमित्यपरार्कः ।।

अथ संन्यासः। याज्ञवल्क्यः-'वनाद्गृहाद्वा कृत्वेष्टिं सार्ववेदसदक्षिणाम् । प्राजापत्यां तदन्ते तानग्नीनारोप्य चात्मनि ।। अधीतवेदो जपकृत्पुत्रवानन्नदोऽग्निमान् ।। शक्त्या च यज्ञकृन्मोक्षे मनः कुर्यात्तु नान्यथा ।।' एतदाश्रमसमुच्चयपक्षे । जाबालश्रुतौ त्वन्येपि पक्षा उक्ताः । यदि चेतरथा ब्रह्मचर्यादेव प्रव्रजेद्गृहाद्वा वनाद्वा । अथ पुनरव्रती वा स्नातको वास्नातको वोत्सन्नाग्निको वा यदहरेव विरजेत्तदहरेव प्रव्रजेत्' इति । अङ्गिराः--'प्रव्रजेद्ब्रह्मचर्याद्वा प्रव्रजेद्वा गृहादपि । वनाद्वा प्रव्रजेद्विद्वानातुरो वाथ दुःखितः ।।' आतुरो मुमूर्षुः । दुःखितश्चौरव्याघ्रादिभीतः । भारते—'आतुराणां च संन्यासे न विधिर्नैव च क्रिया । प्रैषमात्रं समुच्चार्य संन्यासं तत्र पूरयेत् ।।' जाबालश्रुतावपि— 'यद्यातुरः स्यान्मनसा वाचा वा संन्यसेत्' इति । अत्र विप्रस्यैवाधिकारः 'ब्राह्मणाः प्रव्रजन्ति' इति जाबालश्रुतेः। 'आत्मन्यग्नीन्समारोप्य ब्राह्मणः प्रव्रजेद्गृहात् ।' इति मनूक्तेश्चेति विज्ञानेश्वरादयः । वृद्धयाज्ञवल्क्योऽपि—'चत्वारो ब्राह्मणस्योक्ता आश्रमाः श्रुतिचोदिताः । क्षत्रियस्य त्रयः प्रोक्ता द्वावेको वैश्यशूद्रयोः ।।' इति । माधवस्तु-'ब्राह्मणः क्षत्रियो वाथ वैश्यो वा प्रव्रजेद्गृहात् ।' इति कौर्माद्युक्तेर्वर्णत्रयस्याप्यधिकारः । पूर्ववाक्यं तु काषायदण्डादिनिषेधार्थम् ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'मुखजानामयं धर्मो यद्विष्णोर्लिङ्गधारणम् । राजन्यवैश्ययोर्नेति दत्तात्रेयमुनेर्वचः ॥' इति बौधायनोक्तेरिति पक्षान्तरमाह । तत्त्वं तु कुटीचकादिपरमेव तदिति । योऽपि 'संन्यासं पलपैतृकम्' इति कलौ निषेधः सोऽपि त्रिदण्डादिपर इत्युक्तं प्राक् ।

सच संन्यासश्चतुर्धेत्याह हारीतः—'कुटीचको बहूदको हंसश्चैव तृतीयकः । चतुर्थः परमो हंसो यो यः पश्चात्स उत्तमः ॥' आद्यः पुत्रादिना कुटीं कारयित्वा तत्र गृहे वा वसन् काषायवासाः शिखोपवीतत्रिदण्डवान् बन्धुषु स्वगृहे वा भुञ्जान आत्मज्ञो भवेत् । एतदत्यन्ताशक्तपरम् । द्वितीयस्तु बन्धून् हित्वा सप्तागाराणि भैक्षं चरन् पूर्वोक्तवेषः स्यात् । हंसस्तु पूर्वोक्तवेषोऽप्येकदण्डः । 'एकं तु वैणवं दण्डं धारयेन्नित्यमादरात् ।' इति स्कान्दात् । विष्णुरपि—'यज्ञोपवीतं दण्डं च वस्त्रं जन्तुनिवारणम् । तावान् परिग्रहः प्रोक्तो नान्यो हंसपरिग्रहः ॥' चतुर्थोऽपि स्कान्दे—'परहंसस्त्रिदण्डं च रज्जुं गोवालनिर्मिताम् । शिखां यज्ञोपवीतं च नित्यं कर्म परित्यजेत् ॥' अयमप्येकदण्ड एव । ये तु शिखोपवीतादित्यागनिषेधास्ते कुटीचकादिपराः । यत्तु मेधातिथिः—'यावन्न स्युस्त्रयो दण्डास्तावदेकेन वर्तयेत् ।' इति, तदपि तत्परमेव । यच्चात्रिः—'चतुर्धा भिक्षवः प्रोक्ताः सर्वे चैव त्रिदण्डिनः ।' इति,—तद्वाग्दण्डादिपरं न यष्टिपरम् । 'वाग्दण्डोऽथ मनोदण्डः कर्मदण्डस्तथैव च । यस्यैते नियता दण्डाः स त्रिदण्डीति चोच्यते ॥' इति मनूक्तेः । तस्मात्परमहंसस्यैकदण्ड एव । सोऽप्यविदुषः । विदुषस्तु सोऽपि नास्ति । 'न दण्डं न शिखां नाच्छादनं चरति परमहंसः' इति महोपनिषदुक्तेः । 'ज्ञानमेवास्य दण्डः' इति वाक्यशेषाच्च । यत्तु यमः—'काष्ठदण्डो धृतो येन सर्वाशी ज्ञानवर्जितः । स याति नरकान् घोरान् महारौरवसंज्ञितान् ॥' इति, तद्वैराग्यं विना जीवनार्थसंन्यासपरम् । 'एकदण्डं समाश्रित्य जीवन्ति बहवो नराः । नरके रौरवे घोरे कर्मत्यागात्पतन्ति ते ॥' इति स्मृतेः । यच्चाश्वमेधिके—'एकदण्डी त्रिदण्डी वा शिखामुण्डित एव वा । काषायमात्रसारोऽपि यतिः पूज्यो युधिष्ठिर ॥' इति । तस्यापि पूर्वोक्तव्यवस्था ज्ञेया ।

अथ तद्विधिः । बौधायनः—'कृत्वा श्राद्धानि सर्वाणि पित्रादिभ्योऽष्टकं पृथक् । वापयित्वा च केशादीन् मार्जयेन्मातृका इमाः ॥' सर्वाणीति स्वस्य नवश्राद्धषोडशश्राद्धादि कृत्वेत्यर्थः । स्मृत्यर्थसारेऽपि—'एकोद्दिष्टविधानेन कुर्याच्छ्राद्धानि षोडश । अग्निमान्पार्वणेनैव विधिना निर्वपेत्स्वयम् ॥' इति । कात्यायनः—'कृच्छ्रांस्तु चतुरः कृत्वा पावनार्थमना-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

श्रमी। आश्रमी चेत्तप्तकृच्छ्रं तेनासौ योग्यतां व्रजेत् ॥' बौधायनः–'सदैवमार्षकं दिव्यं पित्र्यं मातृकमानुषे। भौतिकं चात्मनश्चान्ते अष्टौ श्राद्धनि निर्वपेत् ॥' अत्र क्रममाह हेमाद्रौ शौनकः—'देवश्राद्धे ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा देवताः। आर्षे देवर्षिब्रह्मर्षिक्षत्त्रर्षयः, देवर्षिक्षत्त्रर्षिमनुष्यर्षयो वा।' मरीच्यादिऋषय इति संन्यासपद्धतौ, तच्चिन्त्यम्। दिव्ये वसुरुद्रादित्याः। मानुषे सनकसनन्दनसनातनाः। भूतश्राद्धे पृथिव्यादिभूतानि चक्षुरादिकरणानि चतुर्विधो भूतग्रामश्चेति तिस्रः। पित्र्ये पित्रादित्रयो मातामहाश्च। मातृके मात्रादयस्तिस्रः। आत्मश्राद्धे आत्मपितृपितामहा देवताः। आत्मश्राद्धे परमात्मदैवत्यमिति संन्यासपद्धतौ। तच्चिन्त्यम्। सर्वत्र च नान्दीमुखत्वं विशेषणं ज्ञेयम्। सर्वत्र पिण्डदानम्। युग्मा विप्राः। दक्षक्रतू सत्यवसू वा विश्वेदेवौ। अन्यन्नान्दीश्राद्धवदिति हेमाद्रिः॥ स्मृत्यर्थसारे–'केशश्मश्रुलोमनखं वापयित्वोपकल्पयेत्। दण्डं जलं पवित्रं च शिक्यं पात्रं कमण्डलुम्॥ आसनं कौपीनमाच्छादनं कन्थां पादुके इति दश पञ्च वा। एतच्च पूर्वेद्युर्नान्दीमुखं कृत्वा परेद्युः पुण्याहवाचनं कृत्वा कार्यमिति शौनकः।

बौधायनः—'त्रीन्दण्डानङ्गुलीस्थूलान्वैणवान् मूर्धसंमितान्। एकादश नव द्वित्रिचतुःसप्तान्यपर्वकान् ॥ वेष्टितान्कृष्णगोवालरज्ज्वा तु चतुरङ्गुलान्। एको वा तादृशो दण्डो गोवालसदृशो भवेत्॥ अनग्निरग्निमुत्पाद्य नित्येन विधिना ततः॥' पृष्टोदिविविधानेनेत्यर्थः। 'स्वाग्नावेवाग्निमान्कुर्यादपवर्गोक्तमादितः। आज्यं पयो दधीत्येतत्त्रिवृद्वा जलमेव वा। ॐभूरित्यादिना प्राश्य रात्रिं चोपवसेत्ततः। अथादित्यास्तमयात्पूर्वमग्नीन्विहृत्य सः॥ आज्यमग्नौ गार्हपत्ये संस्कृत्यैतेन च स्रुचा। पूर्णयाहवनीये तु जुहुयात्प्रणवेन तत्॥ ब्रह्मान्वाधानमेतत्स्यादग्निहोत्रे हुते ततः। संस्तीर्य गार्हपत्यस्य दर्भानुत्तरतोऽत्र तु॥ पात्राण्यासाद्य दर्भेषु ब्रह्मायतन एव तु। जागृयाद्रात्रिमेतां तु यावद्ब्राह्मो मुहूर्तकः॥ अग्निहोत्रं स्वकाले तु हुत्वा प्रातस्तनं ततः। इष्टिं वैश्वानरीं कुर्यात्प्राजापत्यामथापि वा॥' जाबालश्रुतौ—'तद्धैके प्राजापत्यामेवेष्टिं कुर्वन्ति तदु तथा न कुर्यादाग्नेयीमेव कुर्यात्पश्चात् त्रैधातवीयामेव कुर्यात्' इत्युक्तम्। तेनात्र विकल्पः। अत्राहुः—'त्रेताग्नेः प्राजापत्या।' तद्वाक्यशेषेऽग्नीनिति बहुत्वश्रुतेः। 'एकाग्नेस्त्वाग्नेयी' इति। अनाहिताग्नेरिष्टिस्थाने वैश्वानर आग्नेयो वा चरुरिति माधवः। कात्यायनः—'आत्मन्यग्नीन्समारोप्य वेदिमध्ये स्थितो हरिम्। ध्यात्वा हृदि त्वनुज्ञातो गुरुणा प्रैषमीरयेत्॥' कपिलः–

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

'विधिवत्प्रेषमुक्त्वाथ त्रिरुपांशु त्रिरुच्चकैः। अभयं सर्वभूतेभ्यो मत्तः स्वाहेत्यपो भुवि ॥ निनीय दण्डशिक्यादि गृहीत्वाथ बहिर्व्रजेत्॥' बौधायनः—'सखे मेत्यादिना दण्डं येन देवाः पवित्रकम्। यदस्य पारे शिक्यं तु पात्रं व्याहृतिभिस्तथा॥ युवासुवासाः कौपीनं गृहीत्वा बान्धवांस्त्यजेत्।'

अथ क्रमः। तत्र संन्यासेऽधिकारसिद्धयर्थं स्वस्य नवश्राद्धषोडशश्राद्धसपिण्डनानि साग्निः पार्वणान्यनग्निस्त्वेकोद्दिष्टविधिना कृत्वाऽनाश्रमी चेत्कृच्छ्रचतुष्टयं अन्यस्तु तप्तकृच्छ्रं कृत्वोदगयने एकादश्यां वा साग्निरमावास्यायां पौर्णमास्यां चतुर्दश्यां वा यथा पर्वणि प्राजापत्या स्यात्। तत्र देशकालौ स्मृत्वा परमहंसादिसंन्यासग्रहणं करिष्य इति संकल्प्य गणेशं संपूज्य पुण्याहं वाचयित्वा मातृकापूजां वृद्धिश्राद्धं च कृत्वाऽस्तमयात्प्रागौपासनं समिध्य। आहिताग्निस्तु गार्हपत्यं, विधुरोऽग्निहोत्री तु त्रिकाण्डमण्डनोक्तदिशा कुशपत्न्या सह पवमानेष्ट्यन्तं पूर्णाहुत्यन्तं वाधानं कुर्यात्। ब्रह्मचारी चेल्लौकिके विधुरश्चेद्व्याहृतिभिः प्रणवेन चाग्निमाधायान्वग्निरुषसामित्यानीय पृष्टोदिवीति निधाय तेनैव समिध्य तत्सवितुस्तां सवितुर्विश्वानि देव इति तिस्रः समिधोऽभ्यादध्यात्। एवमग्नौ सिद्धे कक्षोपस्थवर्ज्यं वपनं कृत्वा पयोदधियुतमाज्यमपो वा ॐभूःसावित्रीं प्रविशामि तत्सवितुर्वरेण्यमिति प्राश्याचम्य, पुनरादाय ॐ भुवःसावित्रीं प्रविशामि भर्गो देवस्य धीमहीति द्वितीयम्, ॐस्वःसावित्रीं प्रविशामि धियो यो नः प्रचोदयादिति तृतीयम्, समस्तया चतुर्थं, ॐभूर्भुवःस्वःसावित्रीं प्रविशामि। तत्सवितु० यात् इति। संन्यासपद्धतौ तु त्रिवृदसीति प्रथमं, प्रवृदसीति द्वितीयं, विवृदसीति तृतीयं प्राश्यापःपुनन्त्विति जलं प्राश्य सावित्रीप्रवेश उक्तः। तत आवाहनीयं विहृत्य ब्राह्मणमुपवेश्याज्यं संस्कृत्य चतुर्द्वादश वा गृहीत्वा समित्पूर्वमोंस्वाहा परमात्मन इदमिति हुत्वोपवसेत्। ततः सायंहोमं वैश्वदेवं च कृत्वा अग्नेरुदक्कुशानास्तीर्य दण्डादीनि दश पञ्च वासाद्य ब्रह्मासने कृष्णाजिनोपविष्टो रात्रौ जागरं कृत्वा प्रातर्होमानन्तरं प्राजापत्यांवैश्वानरीं वा कृत्वा ऋत्विग्भ्यः सर्वस्वं ब्रह्मणे च मधुपूर्णं तैजसपात्रं दत्वा दारुपात्राण्याहवनीयेऽश्ममृन्मयानि च जले क्षिपेत्। कृष्णाजिनं त्वाददीत ॥ अनाहिताग्निस्तु वैश्वानरमाग्नेयं वा चरुं हुत्वा पात्राण्यग्नौ क्षिप्त्वा भूर्भुवःस्वरित्यपः स्पृष्ट्वा तरत्समन्दीति जप्त्वा विप्रान्संभोज्य पुण्याहं वाचयित्वा अत्र वा वपनं कृत्वा हैमरूप्यकुशजलैः स्नात्वा पुरुषाय चरुं कृत्वा प्राणायस्वाहेति पञ्चाज्याहुतीर्हुत्वा पुरुषसूक्तेन प्रत्यृचं माज्यं चरुं च जुहुयात्।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

अत्र विरजाहोमं केचिदाहुः । यथोक्तं शिवगीतासु—'जुहुयाद्विरजामन्त्रैः प्राणापानादिभिस्ततः । अनुवाक्रान्तमेकाग्रः समिदाज्यचरून्पृथक् ॥ आत्मन्यग्नीन्समारोप्य यातेअग्नेति मन्त्रतः । भस्मादायाग्निरित्याद्यैर्विमृज्याङ्गानि संस्पृशेत् ॥ पापैर्विमुच्यते सत्यं मुच्यते नात्र संशयः ॥' यथा--'प्राणापानव्यानोदानसमाना मे शुध्यन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयास ँ स्वाहा ॥' सर्वत्र लिङ्गोक्तदेवताभ्य इदमिति त्यागः । वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतोबुद्ध्याकूतिसंकल्पा मे शुध्यन्तां ज्योति० । त्वक्चर्ममांसरुधिरमेदोमज्जास्नायवोऽस्थीनि मे शुध्यन्तां ज्योति० । शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्घाशिश्नोपस्थपायवो मे शुध्यन्तां ज्योतिरहं० । उत्तिष्ठ पुरुष हरितपिङ्गललोहित देहिदेहि ददापयिता मे शुध्यन्तां ज्योति० । पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशो मे शुध्यन्तां ज्योति० । शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा मे शुध्यन्तां ज्योति० । मनोवाक्कायकर्माणि मे शुध्यन्तां ज्योति० । अव्यक्तभावैरहंकारैर्ज्योति० । आत्मा मे शुध्यन्तां० । अन्तरात्मा मे शुध्यन्तां० । परमात्मा मे शुध्यन्तां० ॥ क्षुधे स्वाहा । क्षुत्पिपासाय स्वाहा । विविध्यै स्वाहा । ऋग्विधानाय स्वाहा । कषोत्काय स्वाहा । क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहं । अभूतिमसमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे पाप्मान ँ स्वाहा । अन्नमयप्राणमयमनोमयविज्ञानमयानन्दमयमात्मा मे शुध्यन्तां ज्योति० ॥ ततः स्विष्टकृदादि हुत्वा ब्रह्मणे हिरण्यमाज्यपात्रं धेनुं च दत्वा संमासिञ्चत्वित्युपतिष्ठेत । अत्र केचिदनग्नेः सावित्रीप्रवेशं पूर्णाहुतिं चाहुः ।

ततो याते अग्ने यज्ञिया तनूरिति त्रिस्त्रिरेकैकं जिघ्रन्नात्मन्यग्नीन् समारोप्य गुरवे सर्वस्वं दत्वा 'यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै । तं ह देवमात्मबुद्धिप्रकाशं मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये ॥' इत्युपस्थाय दक्षिणं जान्वाच्य पादावुपसंगृह्याधीहि भगवो ब्रह्मेति वदेत् । ततो गुरुरात्मानं ब्रह्मरूपं ध्यात्वा शङ्खं द्वादशप्रणवैरभिमन्त्र्य तेन शिष्यमभिषिच्य शन्नो मित्र इति शान्तिं पठित्वा तच्छिरसि हस्तं दत्वा पुरुषसूक्तं जप्त्वा मम व्रते हृदयं ते दधामीति च जप्त्वोदङ्मुखः प्रणवार्थमनुसंदधद्दक्षिणे कर्णे प्रणवमुपदिश्य तदर्थं च पञ्चीकरणाद्यवबोध्य अयमात्मा ब्रह्म, तत्त्वमसि, प्रज्ञानं ब्रह्मेत्याद्युपदिशेत् । तदर्थं च वदेत् । ततो नाम दद्यात् । ततः शिष्यस्तेनोपदिष्टो हरिं स्मरन्नूर्ध्वबाहुस्तिष्ठन् देवान्साक्षिणः कृत्वा भूर्भुवःस्वः संन्यस्तं मयेति त्रिरुपांशु त्रिरुच्चैस्त्रिरित्युच्चैश्चोक्त्वा, जलसमीपं गत्वा स्नात्वा अभयं सर्वभूतेभ्यो मत्तः स्वाहेति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

त्रिरञ्जलिं क्षिप्त्वा, युवा सुवासा इति काषायं कौपीनं वासश्च परिधाय, सखे मां गोपायेति मुख्यं वैणवं पालाशं बैल्वमौदुम्बरं वा दण्डं गृह्णीयात्। अत्र पुत्रकामो गृहस्थः शङ्खेन पुरुषसूक्तेन दण्डमभिषिच्य दद्यादित्याचारः। ततः शिखामुत्पाट्य ॐभूःस्वाहेत्यग्नौ जले वा हुत्वा, तथैवोपवीतं हुत्वा, येन देवाः पवित्रेणेति जलपवित्रं, यदस्य पार इति शिक्यं, साविच्या कमण्डलुं, सप्तव्याहृतिभिर्भोजनपात्रमिदं विष्णुरित्यासनं बृसीं वा गृहीत्वा। भूस्तर्पयामीति व्यस्तसमस्ताभिर्महर्नम इति तर्पयित्वा, भूः स्वधों भुवः स्वधोंस्वः स्वधोंभूर्भुवःस्वर्महर्नमः स्वधेति पितॄंस्तर्पयित्वा, उदुत्यं चित्रं तच्चक्षुर्हंसःशुचिषन्नमो मित्रस्येति स्नात्वा सुरभिमतीभिरापोहिष्ठेति हिरण्यवर्णाभिः पावमानीभिर्व्याहृतिभिश्च मार्जयित्वा अष्टोत्तरशतवारमघमर्षणं प्राणायामांश्च कृत्वा, ॐभूर्भुवःसुवरिति च पठित्वा, नमःसवित्र इति सूर्यं चोपस्थाय, पुनः स्नात्वा जङ्घे क्षालयित्वा, ओमिति ब्रह्मोमितीदं सर्वमोमिति ब्रह्म वा एष ज्योतिर्य एव वेदो य एष तपति वेद्यमेवैतद्य एष वेदो यद्वनमस्तीति जपित्वा, जपेदिति ॥अष्टसहस्रं गायत्रीं।

अथ यतिधर्माः। प्रातरुत्थाय ब्रह्मणस्पते इति जपित्वा, दण्डादीनि मृदं च निधाय मूत्रपुरीषयोर्गृहस्थचतुर्गुणं शौचं कृत्वाऽऽचम्य पर्वद्वादशीवर्ज्यं प्रणवेन दन्तधावनं कृत्वा तेनैव मृदा बहिः कटिं प्रक्षाल्य जलतर्पणवर्ज्यं स्नात्वा जङ्घे प्रक्षाल्य वस्त्रादीनि गृहीत्वा मार्जनान्तं कृत्वा केशवादिनमोन्तनामभिस्तर्पयित्वा, ॐभूस्तर्पयामीत्यादिव्यस्तसमस्तव्याहृतिभिर्महर्जनस्तर्पयामीति तर्पयेत्। ॐभूःस्वाहेति स्वाहाशब्दान्तैः स्वधाशब्दान्तैश्चैभिरेव पुनस्तर्पयेदिति केचित्। तत आचम्याञ्जलिना प्रणवेन जलमादाय व्याहृतिभिरुद्धृत्य गायत्र्या त्रिःक्षिप्त्वा गायत्रीं जपेत्। उदिते सूर्ये प्रणवेन व्याहृतिभिर्वार्घ्यं त्रिर्दत्वा मित्रस्य चर्षणीत्याद्यैः पूर्वोक्तसौरीभिरिदं विष्णुस्त्रिर्देवो ब्रह्मजज्ञानमिति चोपस्थाय, सर्वभूतेभ्यो नम इति प्रदक्षिणमावर्तते। ततो नत्वा, आदित्याय विद्महे सहस्राक्षाय धीमहि। तन्नः सूर्यः प्रचोदयादिति त्रिर्जपेत्। एवं त्रिकालं विष्णुपूजां ब्रह्मयज्ञं च कुर्यात् ॥

अथ भिक्षा। 'विधूमे सन्नमूसले व्यङ्गारे भुक्तवज्जने। कालेऽपराह्णे भूयिष्ठे नित्यं भिक्षां यतिश्चरेत् ॥' इत्युक्ते काले उद्वयमिति चतसृभिरादित्यमुपस्थाय तेनैक्यं ध्यात्वा आकृष्णेनेति प्रदक्षिणं कृत्वा 'ये ते पन्थाः' इति जप्त्वा योसौ विष्ण्वाख्य आदित्ये पुरुषोऽन्तर्हृदि स्थितः। सोऽहं

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

नारायणो देव इति ध्यात्वा प्रणम्य तम् ॥ त्रिदण्डं दक्षिणे त्वङ्गे ततः संधाय बाहुना । पात्रं वामकरे क्षिप्त्वा श्लेषयेद्दक्षिणेन तु ॥' इति बौधायनोक्तदिशा त्रीन्पञ्च सप्त वा गृहान् गत्वा भवत्पूर्वं भिक्षां याचित्वा, पूर्णमसि पूर्णं मे भूया इत्यागत्य शुचिरन्नं प्रोक्ष्य, ॐ भूःस्वधा नम इत्यादिव्यस्तसमस्तव्याहृतिभिः सूर्यादिदेवेभ्यो भूतेभ्यश्च भूमौ क्षिप्त्वा भुक्त्वा प्रणवेन षोडशप्राणायामान्कुर्यादिति संक्षेपः ॥ गौतमव्याख्यायां भृगुः- 'इतिहस्ते जलं दत्वा भैक्ष्यं दद्यात्पुनर्जलम् । भैक्ष्यं पर्वतमात्रं स्यात्तज्जलं सागरोपमम् ॥' अत्र सर्वत्र मूलं माधवापरार्कमदनरत्नस्मृत्यर्थसारादौ ज्ञेयम् ।

कण्वः—'एकरात्रं वसेद्ग्रामे नगरे पञ्चरात्रकम् । वर्षाभ्योऽन्यत्र वर्षासु मासांस्तु चतुरो वसेत् ॥' जाबालश्रुतौ—'शून्यागारदेवगृहतृणकुटीवल्मीकवृक्षमूलकुलालशालाग्निहोत्रगृहनदीपुलिनगिरिकुहरनिर्झरस्थण्डिलेष्वनिकेतनः' इति । मात्स्ये—'अष्टौ मासान्विहारः स्याद्यतीनां संयतात्मनाम् । एकत्र चतुरो मासान्वार्षिकान्निवसेत्पुनः ॥ अविमुक्तप्रविष्टानां विहारस्तु न विद्यते ॥' अत्रिः—'भिक्षाटनं जपं स्नानं ध्यानं शौचं सुरार्चनम् । कर्तव्यानि षडेतानि सर्वथा नृपदण्डवत् ॥ मञ्चकं शुक्लवस्त्रं च स्त्रीकथां लौल्यमेव च । दिवास्वापं च यानं च यतीनां पतनानि षट् ॥ आसनं पात्रलोभश्च संचयः शिष्यसंग्रहः । दिवास्वापो वृथाजल्पो यतेर्बन्धकराणि षट् ॥' दक्षः—'नाध्येतव्यं न वस्तव्यं न श्रोतव्यं कथंचन । यतिपात्राणि मृद्वेणुदार्वलाबुमयानि च ॥' मदनरत्ने अत्रिः- 'पित्रर्थं कल्पितं पूर्वमन्नं देवादिकारणात् । वर्जयेत्तादृशीं भिक्षां परबाधाकरीं तथा ॥' बृहस्पतिः—'न तीर्थवासी नित्यं स्यान्नोपवासपरो यतिः । न चाध्ययनशीलः स्यान्न व्याख्यानपरो भवेत् ॥' एतद्वेदार्थभिन्नपरम् । अत्रिः—'स्नानं सुरार्चनं ध्यानं प्राणायामो बलिस्तुतिः । भिक्षाटनं जपः संध्यां त्यागः कर्मफलस्य च ॥' एते यतिधर्मा इत्यर्थः । अन्येऽपि माधवमिताक्षरादौ ज्ञेयाः । यतिधर्मसमुच्चये—'न स्नानमाचरेद्भिक्षुः पुत्रादिनिधने श्रुते । पितृमातृक्षयं श्रुत्वा स्नात्वा शुद्ध्यति साम्बरः ॥'

अथ यतिसंस्कारः स्मृत्यर्थसारे—[संन्यसेद्ब्रह्मचर्याद्वा संन्यसेच्च गृहादपि । वनाद्वा प्रव्रजेद्विद्वानातुरो वाथ दुःखितः ॥ आतुराणां च संन्यासे न विधिर्नैव च क्रिया । प्रेषमात्रं च संन्यास आतुराणां विधीयते ॥ उत्पन्ने संकटे घोरे चौरव्याघ्रादिगोचरे । भवभीतस्य संन्यासमङ्गिरा मनुरब्रवीत् ॥ यद्यातुरः स्यान्मनसा वाचा वा संन्यसेद्द्विजः ॥' इति जाबाल-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

श्रुतिः । 'आतुराणां च संन्यासे न विधिर्नैव च क्रिया । प्रेषमात्रं समुच्चार्य संन्यासं तत्र कारयेत् ॥ संन्यस्तोऽहमिति ब्रूयात्सवनेषु त्रिषु क्रमात्। त्रिवारं च त्रिलोकात्मा शुभाशुभसुधाद्रवे ॥ यत्किंचिद्बाधकं कर्म कृतमज्ञानतो मया। प्रमादालस्यदोषाद्यत्तत्तत्संत्यक्तवानहम् ॥ एवं संत्यज्य भूतेभ्यो दद्यादभयदक्षिणाम् । पद्भ्यां कराभ्यां विहरन्नाहं वाक्कायमानसैः ॥ करिष्ये प्राणिनां हिंसा प्राणिनः सन्तु निर्भयाः ॥' इत्यातुरस्य स्वशक्त्याऽवस्थानुरूपमङ्गलभूतप्रेषोच्चारणादियथाशास्त्रं मनसा वाचा वा कुर्वतस्तावतैव कृच्छ्रचान्द्रायणनान्दीश्राद्धनखकृन्तनादीनि कृत्वा संन्यासपूर्तिरिति प्रतीयते । अङ्गिराः—'षष्टिः कुलान्यतीतानि षष्टीनामधिकानि च । कुलान्युद्धरते प्राज्ञः संन्यस्तमिति यो वदेत् ॥' विष्णुः—'एकरात्रोषितस्यापि यतेर्या गतिरुच्यते । न सा शक्या गृहस्थेन आतुरोऽपि च संन्यसेत् ॥ संन्यस्तमिति यो ब्रूयात्प्राणैः कण्ठगतैरपि । त तत्क्रतुशतैः पुण्यं प्राप्तुं शक्नोति मानवः ॥ मनुः—'यो दत्वा सर्वभूतेभ्यः प्रव्रजत्यभयं गृहात् । तस्य तेजोमया लोका भवन्ति ब्रह्मवादिनः ॥' अथ श्रौत्यातुरस्य विलम्बितस्य 'प्रेषमात्रं समुच्चार्य संन्यासं तत्र पूजयेत्' इति । अत्र मात्रत्वोपसंभवादङ्गकलापाव्यापकत्वेनाप्युपपत्तौ कर्तुर्यागत्यागकलापव्यावृत्तस्यैकत्वानुपपत्तेः कृच्छ्रनान्दीश्राद्धविरजाहोमादिकर्तुमशक्तस्यातुरस्य विद्यमानाग्नेरिष्टदेवतायै पूर्णाहुतिं हुत्वा असौ स्वर्गाय लोकाय स्वाहेति आहवनीये दारुमयानि पात्राणि प्रज्वाल्य मृण्मयान्यप्सु प्रक्षिप्य संमासिञ्चतु मरुत इत्युपस्थाय याते अग्ने इत्यनेन हस्तं प्रताप्य आत्मन्यग्निं समारोप्य सर्वप्रायश्चित्तपूर्वकं सप्तपञ्चकेशान् विसृज्य वाप यित्वा यथाविधि स्नात्वा आतुरसंन्यासं कुर्यात् ॥

अथातुरसंन्यासविधिः । अपां समीपे गत्वा तिथ्याः स्मरणपूर्वकं स्नानसंध्यावन्दनादि कृत्वा देशकालौ संकीर्त्य ममाशेषदुःखनिवृत्तिनिरतिशयानन्दप्राप्तिपरमपुरुषार्थप्राप्तये च परमहंससंन्यासं करोमीति संकल्पयेत्। तत्र प्रधानानि । प्रेषोच्चारप्रणवोपदेशमहावाक्यानि । ततः संन्यासोचितं क्षौरं कृत्वा पूर्ववत्सप्तपञ्चकेशान् विसृज्य स्नात्वाचम्य पात्रेण तोयमादाय उपस्पृश्य दक्षिणेन पाणिनाऽप्सु जुहोति । एष वाग्नेर्योनिर्यः प्राणं गच्छस्वाहा । इति प्रथमाहुतिः । आपो वै सर्वा देवताः सर्वाभ्य एवैनं देवताभ्यो जुहोमि स्वाहा । इति द्वितीया । ततो हुतशेषं आशुःशिशान इत्यनुवाकेनाभिमन्त्र्य पुत्रेषणा वित्तेषणा लोकेषणा मया त्यक्ताः स्वाहेति प्रथमां पिबेत् । ॐ ॐ भुभुर्वः स्वरोम् मया संन्यस्तं स्वाहेति

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

द्वितीयां पिबेत्। अभयं सर्वभूतेभ्यो मत्तः स्वाहेति तृतीयां पिबेत्। ततोऽन्यत्तोयमञ्जलिपूर्णमादाय प्रागादिदिक्षु प्रत्येकं निनयेत्। ॐ भूः सावित्रीं प्रवेशयामि, ॐ भुवः सावित्रीं प्रवेशयामि, ॐ स्वः सावित्रीं प्रवेशयामि, ॐ भूर्भुवस्वः सावित्रीं प्रवेशयामि, इति सावित्रीप्रवेशं कृत्वा अथोर्ध्वबाहुः सूर्याभिमुखो भूत्वा ॐ भूः संन्यस्तं मया, ॐ भुवः संन्यस्तं मया, ॐ स्वः संन्यस्तं मया, ॐ भूर्भुवः स्वः संन्यस्तं मयेति प्रैषोच्चारं ब्रूयात्। एवं मन्द्रमध्योच्चैस्त्रिरुक्त्वा तूष्णीं शिखां निकृत्य स्नात्वाचम्य यज्ञोपवीतमुद्धृत्याञ्जलिना गृहीत्वा भूः स्वाहेति अप्सु हुत्वा दिगम्बरो भूत्वा पुत्रैषणावित्तैषणालोकैषणातो मुक्तोऽहमिति ब्रूयात्। अत ऊर्ध्वं न पुत्रगृहं गच्छेत्। मृते च पुरुषसूक्तेन विष्णुबुद्ध्याभिषिञ्चीत संस्कारमेव कुर्यात्। एवं विरक्तस्यातुरस्य स्वस्थस्य संन्यासविहिताङ्गेषु यन्मन्त्रानुष्ठाने शक्तिर्यथाविधिस्तदनुष्ठानपूर्वकं प्रधानं प्रैषोच्चारणमात्रं मत्वा संन्यासयुक्तिरिति श्रवणात्। तदुत्तरकालमेव मृतस्योपदेशविकलस्यापि खननसंस्कारमेव कुर्यात्। जीवतश्चेच्छिखां यज्ञोपवीतं च नित्यक्रियाविधिवद्विसृज्य दण्डकाषायवस्त्रादीनि वादाय यतिधर्मानेवानुतिष्ठेत्। सद्गुरुमन्विष्य तदुपदेशं गृहीत्वा स्वधर्मनिष्ठो भवेत्। अयमर्थो विद्वत्संमतः प्रयोक्तव्यः। इत्यातुरसंन्यासः। 'सर्वसङ्गनिवृत्तस्य ध्यानयोगरतस्य च। न तस्य दहनं कार्यं नाशौचं नोदकक्रिया॥' तथा—'कुटीचकं तु प्रदहेत्पूरयेत्तु बहूदकम्। हंसो जले तु निक्षेप्यः परहंसं प्रपूरयेत्॥' पालाशमूले नदीतीरेऽन्यत्र वा गन्धपुष्पालंकृतं शवं वाद्यघोषेण नीत्वा दण्डमात्रं व्याहृतिभिः खात्वा सप्तव्याहृतिभिस्त्रिः प्रोक्ष्य दर्भानास्तीर्य नवघटे पञ्चरत्नोदकं क्षिप्त्वा नारायणः परं ब्रह्मेत्यभिमन्त्र्य तेनैव संस्नाप्याष्टाक्षरेण वस्त्रगन्धपुष्पधूपदीपान् दत्वा, विष्णो हव्यं रक्षस्वेति शवं गर्ते निधाय 'इदं विष्णुः' इति दक्षिणहस्ते दण्डं 'अम्भस्य पारे' इति सव्ये शिक्यं 'येन देवाः पवित्रेण, इति मुखे जलपवित्रं साविञ्योदरे पात्रं 'भूमिः श्वभ्रे' ति गुह्ये कमण्डलुं निधाय 'चित्ति स्रुक्' इति दशहोत्राभिर्मन्त्रयेदिति विश्वादर्शटीकायां स्मृत्यर्थसारे च। वृहच्छौनकस्तु—'यतिं पुरुषसूक्तेन स्नापयित्वाऽवटं ततः। प्रणवेनाष्टवारं तं प्रोक्षयेदथ सर्वतः॥ विष्णो हव्यं रक्षस्वेति यजुषा प्रणवेन च। गर्ते प्रेतं विनिक्षिप्य चेदं विष्णुर्विचक्रमे॥ इति मन्त्रेण दण्डं तु दद्याद्दक्षिणहस्तके। मूर्धानं भूर्भुवः स्वश्चेत्युक्त्वा शङ्खेन भेदयेत्॥ गर्तं पुरुषसूक्तेन लवणेन प्रपूरयेत्। सृगालश्वादिरक्षार्थं सम्यग्गर्तं प्रपूर-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

येत् ॥' इति । कुटीचकस्य तु दाहः कार्यः । यथा सर्वं प्राग्वत्कृत्वाऽग्निं प्रज्वाल्य साग्नेर्दक्षिणकरे उपावरोहेत्यवरोह्य निर्मथ्य वा गर्ते चितिं कृत्वाग्निनाग्निः समिध्यते इत्यग्निं दत्वा सावित्र्या प्रणवेन वा दहेत् । ततोष्टशतं प्रणवं नारायणः परं ब्रह्मेति जप्त्वा सशिरः प्रणवव्याहृत्या गायत्र्या तद्भस्मास्थीनि तीर्थे क्षिप्त्वा स्नानाच्छुचिः । नास्यान्यदौर्ध्वदेहिकम् । त्रिदण्डग्रहणादेव प्रेतत्वं नैव जायते ।' इति उशनःस्मृतेः । एकादशेह्नि पार्वणं तदपि त्रिदण्डिनः । हंसपरमहंसादीनां पार्वणादिकमपि न कार्यम्' इति शूलपाणिः । श्राद्धचिन्तामणौ दत्तात्रेयः—'एकोद्दिष्टं जलं पिण्डमाशौचं प्रेतसत्क्रियाम् । न कुर्याद्वार्षिकादन्यद्ब्रह्मीभूताय भिक्षवे ॥ प्रेतक्रियथैकोद्दिष्टनिषेधे सिद्धे पुनस्तद्ग्रहणमाब्दिकपरम् । तेन तत्पार्वणमेव । त्रिदण्डिनां द्वादशे नारायणबलिः । तद्विधिरन्यश्च विशेषः प्रागुक्त इत्यलं बहुना ॥

एवं निरूपितमिदं गहनं तु धर्मतत्त्वं विचार्य वचनैश्च नयैश्च सम्यक् । तद्दोषदृष्टिमपहाय विवेचनीयं विद्वद्भिरित्यविरतं प्रणतोस्मि तेषु ॥ १ ॥ मया सद्वासद्वा यदिह गदितं मन्दमतिना किमेतच्छक्यं वाध्यवसितुमपि स्वल्पमतिना । तदेवं यत्किंचिद्गदितमिह विख्यातमहिमा प्रतापोऽयं सर्वो विकसति तु पित्रोश्चरणयोः ॥ २ ॥ यो भाट्टतन्त्रगगनार्णवकर्णधारः शास्त्रान्तरेषु निखिलेष्वपि मर्मभेत्ता । योऽत्र श्रमः किल कृतः कमलाकरेण प्रीतोऽमुनास्तु सुकृती बुधरामकृष्णः ॥ ३ ॥ श्रीभट्टरामेश्वरसूरिसूनुश्रीभट्टनारायणसूरिसूनोः । श्रीरामकृष्णस्य सुतः कृतीमं व्यधान्निबन्धं कमलाकराख्यः ॥ ४ ॥ नानानिर्णयवत्त्वान्निर्णयसिन्धुःप्रोच्यतां विबुधाः । निर्णयसरोजवत्त्वान्निर्णयकमलाकरोप्यस्तु ॥ ५ ॥ वसुऋतुऋतुभूमिते १६६८ गतेऽब्दे नरपतिविक्रमतोथ याति रौद्रे । तपसि शिवतिथौ समापितोऽयं रघुपतिपादसरोरुहेऽर्पितश्च ॥ ६ ॥ जगति सकलविद्यासिन्धुमुष्टिंधयानां परभणितिपरीक्षा युज्यते सज्जनानाम् । तदिह मम निबन्धे दूषणं भूषणं वा यदि भवति विदग्धैस्तद्धव्यवश्यं विमृश्यम् ॥

इति श्रीमत्पदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणश्रीमद्रामेश्वरभट्टसूरिसूनुनारायणभट्टसुतविद्वन्मुकुटहीराङ्कुरश्रीरामकृष्णभट्टात्मजदिनकरभट्टानुजकमलाकरभट्टकृते निर्णयसिन्धौ तृतीयः परिच्छेदः

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE.

अथ परिशिष्टम्

(वरकर्तृकनान्दीश्राद्धविचारः)

विवाहे नान्दीश्राद्धानुष्ठानं प्रथमपदार्थ इत्युक्तं, तच्च तस्मिन्दिने ततः पूर्वं दशभ्यो दिवसेभ्यः पूर्वं वाऽनुष्ठातुं शक्यत इत्युक्तम् । तच्च प्रथमविवाहे वरपित्रा करणीयम् । तत्र यदि पितुः पिता जीवेत्तदा वरपिता स्वपितामहादिभ्यो दद्यात् । पितामहस्य जीवने प्रपितामहादिभ्यस्त्रिभ्यः । एवं मातृपितामह्यादिजीवने मातामहप्रमातामहादिजीवनेऽपि कर्तव्यम् । एवञ्च वरपिता स्वकुलद्वयेऽपि जीवति तमतिक्रम्य तत ऊर्ध्वं त्रिभ्यस्त्रिभ्यो दद्यादिति सिध्यति । द्वितीयविवाहादौ वरः स्वयमेव कुर्यात्। तत्र स्वपितुरभावे तमारभ्य त्रिभ्यो दद्यात् । स्वपितुर्जीवने तु पितामहमारभ्य त्रिभ्यो दद्यात् । एवं मात्रादावपि द्रष्टव्यम् । कन्यायां अपि वरपितृवज्ज्ञेयम् ।

उद्वाहे पुत्रजनने पित्र्येष्ट्यां सौमिके मखे । येभ्य एव पिता दद्यात्तेभ्यो दद्यात्स्वयं सुतः ।। वृद्धौ तीर्थे च संन्यस्ते ताते च पतिते सति । तीर्थे ब्राह्मण आयाते षडेते जीवतः पितुः । येभ्य एव पिता दद्यात्तेभ्यो दद्यात्स्वयं सुतः ।। इति वचनात् ।

कन्याविवाहे वरस्य प्रथमविवाहे च द्वयोः पितुरभावे अन्येन भ्रात्रादिना कन्या पितरं वरं पितरं चारभ्य त्रिभ्यो देयं न स्वपितृभ्यः— 'स्वपितृभ्यः पिता दद्यात्सुतसंस्कारकर्मसु । पिण्डा नोद्वहनात्तेषां तस्याभावे तु तत्क्रमात्' इति वचनात् ।

केचित्तु—पितृवर्गे मातृवर्गे तथा मातामहस्य च । जीवेत्तु यदि वर्गाद्यस्तं वर्गं तु परित्यजेत्' इतिन्यायमत्राप्यतिदिशन्ति । तदयुक्तम् ।यद्येवं 'येभ्य एव पिता दद्यात्'इति वृद्धौ तीर्थे चेति च वाक्यस्य वृद्धिश्राद्धप्रकरणपठितस्य निरालम्बनत्वापत्तेः । एवमेव सर्वदेशेषु शिष्टाचाराच्च । इदं वचनं तीर्थगयामहालयादिश्राद्धविषयकं तत्रैव वर्गाद्यपुरुषजीवने तद्वर्गपरिवर्जनस्य सर्वशास्त्रसंमतत्वात् । तत्रापि पक्षद्वयम्—वर्गादिजीवने घटदाने एव तद्वर्गपरित्यागः पिण्डदाने तर्पणे च जीवन्तं परित्यज्य ततस्त्रिभ्य उद्देश्यत्वमित्येकः पक्षः । एवं च गया-महालयादौ कर्तुः पितृजीवनेऽधिकार एव नास्ति, मातृजीवने तद्वर्गं परित्याज्यान्यासां घटदानम्। पिण्डदानतर्पणयोस्तु प्रमातामहादीनामुद्देश्यत्वम् , एवं मातामह्यादिष्वपि बोध्यम् । अयमेव पक्षो देशेष्वधिकतया प्रचलति ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

द्वितीयपक्ष-मातृजीवने श्राद्धे चटदाने पिण्डदाने तर्पणे चेति त्रिष्वपि पितामह्यादीनां पृथगुद्देश्यत्वं नास्ति किन्तु स्वपतिभिः सहैव मातामहजीवने तद्वर्गपरित्यागः मातामह्यादीनां द्वारलोपात्सुतराम भावः मातामह्यादिजीवने सपत्नीकानां प्रमातामहानामुद्देश्यत्वम् ।

विधवाकर्तृकनान्दीश्राद्धे तु तत्पितृवर्गस्पतिवर्ग इतिवर्गद्वयस्यैवोद्देश्यत्वं न तु चतुर्णां वर्गाणाम् 'स्वभर्तृ प्रभृतिस्त्रिभ्यः स्वपितृभ्यस्तथैव च । विधवा कारयेच्छ्राद्धं यथाकालमतन्द्रिता इति वचनात् 'चत्वारः पार्वणाः प्रोक्ता विधवायाः सदैव हि । स्वभर्तृश्वशुरादीनां मातापित्रोस्तथैव च । ततो मातामहानां च श्राद्धदानमुपक्रमेत्' इतिवचनं तु पार्वणमात्रविषयं न तु नान्दीश्राद्धविषयमिति ।

(मृतवृषस्य संस्कारविचारः)

अथ कश्चिदुत्सृष्टवृष स्वायुषः क्षयेन कालकवलितोऽभूत् । तच्छवस्य प्रतिपतिकरणे ग्रामव्यवहानुसारिणि कलिकालप्रभावान्वितचर्मकारैरस्वीकृते तथैव शवस्थितौ दुर्गन्धादिदोषभयेन तज्जन्यग्रामनिवासिभिः कतिपयैर्वैश्यजातीयैः संहत्य तच्छवप्रतिपत्तिकरणं निश्चित्य स्वयमेव ग्रामाद्बहिर्नीत्वा देशीयरीत्यानुसारेण निखननादिकमनुष्ठितम् ।

ततोऽन्ये कतिपयजनास्तान् निन्दितकर्मकारितयाऽधिक्षिपन्ति । एवं स्थिते शास्त्रस्ते निन्दितकर्मानुष्ठातारो नवेति प्रश्ने उत्तरम्—धर्मार्थे परोपकारबुद्ध्या तैः शवनिर्हरणस्य तत्संस्कारस्य च ब्राह्मणो नैव दुष्यति । वोढा चैवाग्निदाता च सद्यः स्नात्वा विशुध्यति' इति निर्णयसिन्धौ धर्मार्थं शवनिर्हारप्रसङ्गेनापरार्कधृतवृद्धपराशरोक्तेः, अत्र वचने ब्राह्मणपदमुपलक्षणमिति तट्टीकायां रत्नमालायाम् । एवमग्निदानेत्युपलक्षणं संस्कारकर्तुः पूर्वार्द्धे संस्कारपदोपादानात् । एवञ्च धर्मार्थं वृषभशववोढारस्तत्खननादिकर्तारश्च न दोषभाज इति ।

(छायादानविचारः)

दीयतां राजशार्दूल छायादानं विशेषतः । दद्यात्ते प्रीतये राजन् कृष्णां धेनुं पयस्विनीम्'इतिशनिग्रहशान्तिकर्मणि विहितं छायादानं यद्यङ्गत्वेन विहितं यदि वा कर्मसमृध्यर्थमुभयथाऽपि तदाज्येनैव कर्तव्यं छायादानस्येति 'कांस्यपात्रे स्थिताज्यं च आत्मरूपं निरीक्ष्य तु । ससुवर्णं तु योदद्यात्सर्वविघ्नोपशान्तये' इत्यादिवचनात्कांस्यपात्रं सुवर्णमाज्यम् । तत्र च स्वस्वरूपनिरीक्षणमित्यङ्गचतुष्टयमाज्यस्थाने तैलग्रहणे आज्यरूपाङ्गाभावात् अङ्गहीनं छायादानं भवेत् । यथा सोमयागाद्यङ्गभूतदीक्षणीयेष्टेः ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

स्वाङ्गसहितस्यैवानुष्ठानं तत्र केनाप्यङ्गेन न्यूनायां दीक्षणीयेष्टौ ज्योतिष्टोमाद्यङ्गत्वं न सेत्स्यतीति यथासिद्धं तद्वदेवात्रापि स्वाङ्गसहितस्यैव छायादानस्य प्रधानोपकारकत्वं भवति। अतः शनिप्रीत्यर्थं तैलस्यावश्यकत्वेऽपि पृथगेव तस्य दानं कर्तव्यं न तु छायादाने तदन्तर्भाव्यम्। अतएव शनिग्रहदानविधौ छायादानात्पृथगेव तैलदानं शनिमूर्तिसहितं पृथक्त्वेन च विहितम्। अतश्च शनिग्रहशान्तावाज्येन यच्छायादानं परम्परागतमनुष्ठीयते तदेवसाधु नान्यदिति निर्णयामः।

ऊनमासिकादिश्राद्धविचारः

अथ षोडशमासिकेषु— ऊनमासिक-ऊनषाण्मासिक- ऊनाब्दिकविषये शास्त्रे मतभेदो दृश्यते। तत्र 'मृतेहनि तु कर्तव्यम्' इतिवचनानुसारेण मासिकं क्षयाहे भवति। तच्चाशौचान्ते एकादशाहे अनुष्ठीयते। एवं 'मृतेऽहनि तु कर्तव्यं प्रतिमासं तु वत्सरम्' इत्युक्त्या आब्दिकस्यापि क्षयाह एव कालः तस्याप्यशौचान्ते एकादशाहे आद्यश्राद्धेन सह तन्त्रेणानुष्ठानम्। एतत्पक्षे मासिकस्य प्रथमाब्दिकस्य चैकादशाहे एवानुष्ठानात् 'एकद्वित्रिदिनैरूने' इतिवचनानुसारेण ऊनमासिकस्य माससमाप्तेः पूर्वमेकादिन्यूने दिवसे अनुष्ठानमिति। आब्दिकस्याप्यब्दपूर्तेः एकादिन्यूने दिवसे अनुष्ठानम्। एवं षाण्मासिकस्यापि षष्ठमासारम्भदिने अनुष्ठानात् ऊनषाण्मासिकस्य च मासोनदिने अनुष्ठानम्। इति मासिकम्, ऊनमासिकम्, षाण्मासिकम्, ऊनषाण्मासिकम्, द्वादशमासिकम्, ऊनाब्दिकं चेते क्रमः पर्यवस्यतीति प्रथमप्रकारः।

'आद्यश्राद्धं क्षयेहनि' 'मासादौ मासिकं कार्यमाब्दिकं वत्सरे गते' इतिलौगाक्षिवचनानुसारेण। द्वितीयमासारम्भदिने प्रथममासिकस्य द्वितीयवर्षारम्भदिने प्रथमासिकस्य चानुष्ठानं प्राप्नोति। तन्मते षाण्मासिकमपि सप्तममासारंभदिने अनुष्ठेयत्वेन प्राप्नोतीति ततः पूर्वतनेषु दिवसेषु ऊनमासिक-ऊनषाण्मासिक-ऊनाब्दिकानां क्रमेणानुष्ठानमिति। एतत्पक्षे— ऊनमासिक-ऊनषाण्मासिक- मासिक- ऊनाब्दिक-आब्दिक-शब्दानां तत्तत् श्राद्धे ऊहः कार्य इति।

(फाल्गुनशुक्लपूर्णिमानिर्णयः)

फाल्गुनीपूर्णिमा पूर्वदिने ३६।१९ अनन्तरं प्रवर्तते परदिने ३१।२६ यावद्वर्तते। तत्र होलिकादाहः कदा कार्य इति संशये-परदिने पूर्णिमायाः सन्ध्याकालेऽल्पावशिष्टत्वात् ग्रस्तोदय चन्द्रग्रहणसत्वाच्च सर्वेषामेव वर्णानां सूतकं राहुदर्शने" इतिवचनेन उपरागकाले क्रियान्तरस्याननुष्ठेयत्वदर्शनात्

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

पूर्वस्मिन्नेव दिने धर्मशास्त्रोक्तं नाडीपञ्चकात्मकंभद्रामुखं वर्जयित्वा द्वाचत्वारिंशद्घटिकोत्तरं होलादाहः कार्यः न तु परदिने प्रदोषकाले पूर्णिमासत्त्वेऽपि प्रतिपादिता तस्या ग्रहणदूषितत्वात्"अथपरेन्हि ग्रस्तोदयस्तदा पूर्वदिने भद्रावर्जं रात्रौ चतुर्थयामे विष्टिपुच्छे वा होलिका कार्या,ग्रहोत्तरं प्रतिपत्सत्त्वात्तत्पूर्वं च दिवा होला निषेधात्" इतिनिर्णयसिन्धौत्पूर्वंदिन कर्तव्यत्वस्यैव प्रतिपादनात्। यत्तु तत्रैव"वस्तुतस्तु" इत्यादिना द्वितीयेऽन्हिकर्तव्यता तत्र च हेतुतया"सर्वेषामेववर्णानां सूतकं राहुदर्शने। स्नात्वा कर्माणि कुर्वीत "इति वचनमुत्तरार्द्धशेषतया व्याख्यातं तन्न युक्तम् पराहूपरागसमये उपरागप्रयुक्तजपदानहोमादिक्रियातिरिक्तस्य सर्वस्यापि कर्मणो धर्मशास्त्रेषु निषेधात् होलिकादाहस्य च तन्निषेधान्तः पातित्वेन तस्य ग्रहणकालेऽनुष्ठानाप्रवृत्तेः। अतएव निर्णयसिन्धुव्याख्यात्रा कृष्णं भट्टेनापि"पूर्णपक्षे स्वरसंसूचयन्नेवाह वस्तुतस्त्वति" इतिव्याचक्षाणेन प्रथमदिनकर्तव्यतापक्ष एवाभ्युपगतः।अतश्च यद्यपि प्रथमदिने न प्रदोषरूपमुख्याकाललाभः तथापि गौणकालस्य सत्वात् द्वितीयदिने च मुख्यकालस्य प्रदोषस्य ग्रहणदुष्टत्वेन वनिषेधाक्रान्तत्वात् निषिद्धकालग्रहणपेक्षया गौणकालग्रहणस्यैव समुचितत्वेन पूर्णदिने चतुर्दश्यामेव द्विचत्वारिंशदण्डोत्तरं होलिकादाहः कार्य इति युक्तं प्रतीमः।

(श्रावणशुक्लपूर्णिमानिर्णयः)

श्रावणीपूर्णिमा परेद्युः ३।१८ दण्डपरिमिता पूर्वेद्युः ०।४७ एतत्पलेभ्योऽनन्तरं प्रवर्तते। कस्मिन् दिने उपाकर्मानुष्ठेयमित्युपस्थिते संशये यजुर्वेदिनां प्रथमदिन एव कर्तव्यता प्रतीयते। हेमाद्रिनिर्णयसिन्ध्वादिपर्यालोचनया। तथाहि—

उदये सङ्गवस्पर्शे श्रुतौ पर्वणि चार्कभे।

कुर्युर्नभस्युपाकर्म ऋग्यजुः सामगाः क्रमात्—इति वचनेन उदयसङ्गवोभयव्यापित्वे पर्वादिकं कर्मणो मुख्यः काल उपाकर्मण इत्यवगम्यते, तदभावे उदयसंबन्धाभावेऽपि यस्मिन्दिने पर्वणः सङ्गवकालसंबन्धो वर्तते तस्मिन्नेव दिनेऽनुष्ठेयम्।तच्चास्मिन्वर्षे प्रथमदिन एव वर्ततेन तु द्वितीयदिवसे।

यद्यपि प्रथमदिने चतुर्दशीसंबन्धोऽस्ति पर्वणः (स च "संप्राप्तवान् श्रुतीर्ब्रह्मा पर्वण्यौदयिके पुनः। अतो भूतदिने तस्मिन्नोपाकरणमिष्यते" इति निषिद्धः) तथापि न संबन्धमात्रं दोषावहं किन्तु तत्र तत्र तिथ्यन्त-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

वेधस्यैव धर्मशास्त्रेषु दोषावहत्वं श्रूयते वेधश्च "त्रिभिर्मुहूर्तैर्विध्यन्ति" इतिवचनबलात् मुहूर्तत्रयरूपदण्डषट्कपरिमितकालसंबन्धात्मक एवेत्य-वगम्यते। प्रकृते तु द तथास्ति अतो न चतुर्दशीवेधसंबन्धनिमित्तो दोषः पूर्वदिने। "पर्वण्यौदयिके कुर्युः श्रावणीं तैत्तिरीयकाः" इति मदनरत्नधृतबह्वृचपरिशिष्टबलादपि पूर्वदिन एव कर्तव्यता प्रतीयते तत्रहि पर्वण औदयिकत्वं नाम न उदयकालमात्रसंबन्धः तस्य "श्रावणी पौर्णमासी तु सङ्गवात्परतो यदि। तदैवौदयिकी ग्राह्या नान्यदौदयिकी भवेत्" घटीपरिमितः कालः सङ्गवादूर्ध्वपर्वणि औदयीकमिति प्राहुर्मु-नयस्तिथिचिन्तकाः" (औदयीकमितिदीर्घ आर्षः) इत्यादिवचनैर्विशेषे पर्वव्यवस्थापनात्। एवं च औदयिके पर्वणियजुर्वेदिनानुपाकर्मानुष्ठानं विदधतो मदनरत्नकारस्य मतेनापि द्वितीयस्मिन् दिवसे पर्वणः संगव-सम्बन्धाभावेन औदयिकत्वासिद्धः पूर्वस्मिन्नेवदिने तादृशत्वात्पर्वणः पूर्वदिवस एवोपाकर्मानुष्ठानं सिध्यति। अतश्च हेमाद्रिमदनरत्नादिसर्व-निबन्धकृन्मतेनापि सर्वयजुर्वेदिनामुपाकर्म पूर्वस्मिन्दिन एव कर्तव्यं शास्त्रसम्मतम्।

रक्षाबन्धनस्य तु पूर्वस्मिने भद्रायोगात् उपाकर्मरक्षाबन्धनयोरङ्गाङ्गि-भावस्य गृह्यनिबन्धकाराद्यनभिमतत्वात् परेद्युरेवानुष्ठानमिति निर्णयः।

(एकादशीनिर्णयः)

यदा पूर्वदिने घटिकात्रयं यावद्दशमी तत एकादशी, अनन्तरं दिवसे च एकघटिकापर्यन्तमेकादशी तदुपरि द्वादशी तृतीयदिवसे च ०।१४ पर्यन्तमेव द्वादशी, अस्यां दशायामेकादश्युपवासः कदा कार्य इति संशये-द्वादशी तु त्रयोदश्यां कलामात्रापि दृश्यते। द्वादशद्वादशीर्हन्ति पूर्वस्यां पारणं कृतम्। पारणाहे न लभ्येत द्वादशी कलयाऽपि चेत्। तदानीं दशमी विद्धाप्युपोष्यैकादशीतिथिः। इत्यादिनिर्णयसिन्धुवचननिचयेन यस्मिन्दिने सूर्योदयानन्तरं कलामात्रमपि द्वादशी तस्मिन्नेवदिने पारणा, तत्पूर्वस्मिन्दिन उपवास एकादशीप्रयुक्त इत्यवगमात्। शेषैकादश्युपमेव एकादश्युपवासः कर्तव्य इति भाति।

(नवरात्रपारणानिर्णयः)

आश्विनशुक्ल नवमी षष्टिदण्डा, द्वितीयदिने च वृद्ध्या २३ पर्यन्तं गता, अनन्तरं दशमी तदनन्तरदिनेऽपि ३४ यावद्दशमी तत्र नवरात्र पारणा कदा कर्तव्येति सन्देहे सञ्जाते पूर्वदिने शेषनवम्यन्तरं दशमोला-

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

भात् दशम्यामेव पारणविधानात् 'यदा दिनद्वये नवमी तदा उपोष्य तिथ्यन्ते पारणा' इतिनिर्णयसिन्धुवाक्यात् 'अथ नवमी षष्टिदण्डा द्वितीयदिने शेषयुक्ता दशमी तत्रापि नवम्यायुक्तदशम्यामेव विसर्जनपारणे इतिधर्मसिन्धुवचनाच्च नवमीविद्धदशम्यामेव पारणम् न तु शेषदशम्याम् पूर्वदिने कर्मकालपर्याप्ततिथिलाभात् द्वितीयदिने तदभावान्नवमीवेधस्य क्वचिदपि निषेधश्रवणाच्चेति युक्तं पश्यामः ।

मधुपर्कविषयेविचारः

विवाहे वरदात्रे रेकशाखत्वे मधुपर्कविषये न विवादः भिन्नशाखत्वे तु यजमानशाखयैव मधुपर्कः कर्तव्य इति जयन्तप्रभृतयः। अस्यैव पक्षस्य सर्वदेशेषु भूयान् प्रचारःयुक्तं चैतत् । अत्र यजमानस्य कर्तृकत्वात् कर्तृ-शाखयैव कर्मानुष्ठानस्योचितत्वात् "यः स्वशाखां परित्यज्य परशाखां समाश्रयेत् । अप्रमाणमृषिं कृत्वा सोऽन्धे तमसि मज्जति।। इतिपरशाखया कर्मानुष्ठानेदोषश्रवणात्।शाखान्तरेणानुष्ठाने तच्छाखीयमन्त्राणां यजमानादिनाऽनध्येयत्वदशायामेतदर्थमध्ययनकल्पनागौरवापत्तेः। अत्र स्वशाखी चेद्वरो न स्यात्कस्मै देया सुकन्यका । स्वगृह्योक्तविधानेन दद्यात्तो परशाखिने। पूजयेन्मधुपर्केण स्वशाखाविधिना वरम्। आकन्यादानपर्यन्त पिता कुर्यात्स्वशाखतः" इतिगदाधरमिश्रकृतटीकाधृतवचनान्यत्रानुकूलानि ।

परन्तु केचिद्ग्रन्थकाराःपक्षमिमं निषिध्य वरशाखयैवमधुपर्कं लिखन्ति तत्र प्रमाणमपि ददति--'अर्च्यस्य या भवेच्छाखा तच्छाखागृह्यचोदितः । मधुपर्कः प्रदातव्यो ह्यन्यशाखेऽपि दातरि" (आश्व० गृह्य) इति । केचित्तु वचनस्यास्य सोमयागपरत्वं मन्वानास्तत्रैवार्च्यशाखया मधुपर्कः। अन्यत्र तु यजमानशाखया तुलादानजलाशयोत्सर्गादौ तु विकल्प इति वदन्ति । यथोचितमत्र ग्राह्यमिति। अद्यत्वे तु अर्च्यस्य यच्छाखीय कर्म तच्छाखया मधुपर्कं कुर्वन्ति यायजूकाः। तत्तगृह्योक्तविधिना विष्टराद्यर्हणं ततः' इति-जगन्नाथकारिकावचनात्। तद्युक्तमयुक्तं वेति विचारणायमिति। नारायण-भट्टादयस्तु अयुक्तमित्याहुः । यतः मधुपर्कार्हेषु स्नातकराजमातुलादिषु कर्माभावेन एतस्यासंभवात् क्वचिदधीयमानशाखायाः क्वचिच्च कर्मसब-न्याग्रहणे वैरूप्यापत्तेः । तेन स त्रैकरूपेण अधीयमानशाखयैव मधुपर्कं ऋत्विजो वृत्त्वा मधुपर्कमाहरेत्" इत्याश्वलायनसूत्रात् । संपूज्य मधुपर्केण ऋत्विजः कार्म कारयेत् । अपूज्य कारयन् कर्म किल्बिषेणैव युज्यते । इतित्रिस्वप्रयोगचिन्तामणिधृतविश्वामित्र वचनाच्च । सोमयागातिरिक्त-स्थलेऽपि मधुपर्को वैकल्पिकः-इति ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

सङ्क्रान्तिदिने उपाकर्मनिर्णयः

कस्मिंश्चिद्वर्षे यदि पौर्णमासीसमाप्त्यनन्तरमर्द्धरात्रादधस्तात्संक्रान्तिर्भवति तदा तद्दिने प्रातरारभ्य विद्यमानायां संक्रान्त्यस्पृष्टायां पौर्णमास्यामुपाकर्म न करणीयमिति निर्णयसिन्धुकारमतम् । तथाहि तदीयग्रन्थे श्रवणयुतदिने संक्रान्त्यादौ तु उपाकर्म न कुर्वन्ति क्रमात्सामर्ग्यजुर्विदः । ग्रहसङ्क्रान्तियुक्तेषु हस्तश्रवणपर्वसु । इतिहेमाद्रौ निषेधात् । पञ्चम्यादयो ग्राह्याः इत्युपक्रम्य एतेन ग्रहणसङ्क्रान्तिकाले श्रवणसत्वे एव निषेधः नार्वागिति मूर्खशङ्कापरास्ता ग्रहविशिष्टानां हस्तश्रवणपर्वणां प्रत्येकं निषेधे तद्युतोपाकर्मनिषेधे च विशिष्टोद्देशे वाक्यभेदात् पञ्चम्यां संक्रान्तौ निषेधाभावापत्तेश्च तेनार्धरात्रात्पूर्वं ग्रहसङ्क्रमसत्वे एवोपाकर्मनिषेधः तद्योगे एव इत्यन्तेन उपसंहृतं निर्णयसिन्धुमतानुसारेण धर्मसिन्धावपि ग्रहणसंक्रान्तियोगश्चोपाकर्मसन्धिन्यहोरात्रे भविष्यन्मध्यरात्रात्पूर्वमतीत मध्यरात्रादूर्ध्वं चेति यामाष्टके विद्यमानश्रवणनक्षत्रपूर्णिमादितिथिस्पृष्टोऽप्युपाकर्मदूषकः इत्युक्तम् । यद्यपि पञ्चम्यां संक्रान्तियोगे उपाकर्मनिषेधकं वचनं नोपलभ्यते तथापि निर्णयसिन्धुकारैर्वाक्यभेदभिया कल्पितेन सामान्यवाक्येन तत्र निषेधः स्वीक्रियते ननु ग्रहणसङ्क्रान्तौ सामान्येन उपाकर्मनिषेधकवचनं वर्त्तते तथाहि हेमाद्रिमदनपालधृतास्मृतिः—

सङ्क्रान्तौ ग्रहणे चैव सूतके मृतके तथा ।
गणस्नानं न कुर्वीत नारदस्य वचो यथा ॥ इति ।

एवं च सामान्यवचनेन पञ्चम्यां संक्रान्तावुपाकर्म निषेधः स्पष्ट एवेति चेतन्न हेमाद्रिणा अस्य विशेषवचनेनैकवाक्यता स्वीकारात् अस्य वाक्यस्य सामान्यतः संक्रान्तिदिने उपाकर्मनिषेधकत्वस्वीकारे निर्णयसिन्धुकारमते—

संक्रान्तिर्ग्रहणं वाऽपि यदि पर्वणि जायते ।
तन्मासे हस्तयुक्तायां पञ्चम्यां वा तदिष्यते ॥
संक्रान्तिर्ग्रहणं वाऽपि पौर्णमासी यदा भवेत् ।
उपाकृतिस्तु पञ्चम्यां कार्या वाजसनेयिभिः ॥ इत्यादि ।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

बनारस के सुप्रसिद्धतम पुस्तक विक्रेता का पता—
बाबू ठाकुरप्रसाद गुप्त बुकसेलर,
राजादरवाजा, ब्राञ्च-कचौड़ीगली, बनारस सिटी।

त्रिगुणेश्वर

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

हमारे यहाँ की अन्य प्रकाशित पुस्तकें

माधवनिदान भाषा टीका	४)
माघमास माहात्म्य भाषा टीका	३)
कुण्डलीफार्म (जन्मपत्र)	१) सैकड़ा
चाणक्यनीति	।।।)
गरुडपुराण भाषाटीका	३।)
गीताभाषा सचित्र	२।।)
गीत-गोविन्द	१।।)
गोपाल सहस्रनाम	।।)
गयामाहात्म्य भाषाटीका	१।।)
घरेलू पशु चिकित्सा	।।)
घरेलू वैद्य	।।)
नारीधर्मविधान स्त्री शिक्षोपयोगी	४)
बालबोध	।।)
जातकाभरण भाषाटीका	६)
अनन्तव्रतकथा भा० टी०	।=)
ऋषिपञ्चमी व्रतकथा भा० टी०	।≡)
एकोद्दिष्टश्राद्ध पद्धति भा० टी०	।=)
पार्वणश्राद्धपद्धति भा० टी०	।=)

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

दुर्गासप्तशती मूल ६४ पेजी	।।।)
धातुरूपावली	।≡)
हरतालिकाव्रतकथा भा० टी०	।≡)
बैसाखमास माहात्म्य भा० टी०	३)
कर्मविपाकभाषा टीका	३।।)
कार्तिकमाहात्म्य भाषा टीका	३)
दुर्गा १६ पेजी भाषाटीका	३)
दुर्गा १६ पेजी मूल जिल्द	२।।)
दुर्गा ३२ पेजी साँची	१)
बृहद् स्तोत्र रत्नाकर	४)
मनुस्मृति भा० टी०	४)
मुहूर्तचिन्तामणि भा० टी०	३)
शीघ्रबोध भा० टी०	१)
सारस्वत व्याकरण	।।।=)
ब्रह्मानन्द भजन माला	१।।)

पुस्तक मिलने का पता—

बाबू ठाकुरप्रसाद गुप्त बुकसेलर,

राजादरवाजा ब्रांच-कचौड़ीगली, बनारस सिटी।

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

त्रिगुणेश्वर

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection

Digitization by Agam Nigam Digital Preservation Trust, Chandigarh. Funding by IKS-MoE

CC-0. All India Ayurvedic Congress (A.I.A.C), Dhanwantri Bhawan New Delhi Collection